चरमश्रुतकेवलिश्रीभद्रबाहुस्वामिविरचितः
पार्श्वचन्द्रगच्छीयश्रीब्रह्मऋषिरचितजनहितावृत्तिसहितः
अज्ञातकर्तृकबालावबोधत्रयसमेतः

# श्रीदशाश्रुतस्कन्धः

चरमश्रुतकेवलिश्रीभद्रबाहुस्वामिविरचितः
पार्श्वचन्द्रगच्छीयश्रीब्रह्मऋषिरचितजनहितावृत्तिसहितः
अज्ञातकर्तृकबालावबोधत्रयसमेतः

# श्रीदशाश्रुतस्कन्धः

✤ प्रेरका आशीर्वाददातारश्च ✤

तपागच्छाधिपति–परमपूज्याचार्यदेव–

**श्रीरामसूरीश्वराणां(डहेलावाले)**

शिष्यरत्न–पूज्यपादाचार्यदेवेश–

**श्रीजगच्चन्द्रसूरीश्वराः**

✤ प्रकाशिका ✤

**आचार्यश्रीसुरेन्द्रसूरीश्वरजैनतत्त्वज्ञानशाला**

अहमदाबाद–सुरत

ग्रन्थः – **श्रीदशाश्रुतस्कन्धः**

वृत्तिकारः – **पार्श्वचन्द्रगच्छीयश्रीब्रह्मऋषिः**

प्रेरक–आशीर्वाददातारश्च – **प.पू.आ. श्रीजगच्चन्द्रसूरीश्वराः**

आवृत्तिः – प्रथमा

प्रकाशनवर्षः – वि.सं. 2080, ई.स. 2024

प्रतयः – 750

पृष्ठाः – 96 + 408

मूल्य – ₹ 700/-

ISBN : 978-81-965608-5-0
JSBN : SURAJ0013

प्राप्तिस्थानानि – (१) **आचार्यश्रीसुरेन्द्रसूरीश्वरजैनतत्त्वज्ञानशाला**
12, श्रेयांसनाथ सोसायटी, धरणीधर देरासर के पीछे,
वासणा, अहमदाबाद 380007
9512234311
www.jaintatvagyanshala.org
jaintatvagyanshala@gmail.com

(२) **आचार्यश्रीसुरेन्द्रसूरीश्वरजैनतत्त्वज्ञानशाला**
A-103/104, वासुदर्शन रेसीडेन्सी, RTO की गली में,
पाल, सुरत

मुद्रक : **भरत ग्राफिक्स**, अहमदाबाद. 8905851988, 9925020106

LastŚrutakevali-ŚrīBhadrabāhusvāmi's

# ŚRĪDAŚĀŚRUTASKANDHAḤ

with

Pārśvacandragacchīya-ŚrīBrahmaṛṣhi's Janahitā Commentary
& Three Bālāvabodhas of Unknown Author

✤ Guidance & Blessings ✤

**ĀCĀRYA VIJAYA JAGACCANDRASŪRI MAHARĀJA**
**the disciple of his holiness**
**ĀCĀRYA VIJAYA RĀMASŪRĪŚVARAJĪ MAHARĀJA**
**(Ḍahelāvāle)**

✤ Publisher ✤

**ĀCĀRYA SURENDRASŪRĪŚVARAJĪ JAINA**
**TATTVAGYĀNŚĀLĀ**
**Ahmedabad-Surat**

**Title** : **ŚRĪDAŚĀŚRUTASKANDHAḤ**
**Commentary** : **Janahitā Commentary & Three Bālāvabodhas**
**Commentator** : **Pārśvacandragacchīya-ŚrīBrahmaṛṣhi**
**Guidance** : **ĀCĀRYA VIJAYA JAGACCANDRASŪRI MAHARĀJA**
**Edition** : First
**Publication Year** : Samvata 2080, 2024 AD
**Copies** : 750
**Pages** : 96 + 408
**Price** : ₹ 700/-

**ISBN** : 978-81-965608-5-0
**JSBN** : SURAJ0013

**Distributors** : (1) **Acarya Surendrasurisvaraji Jaina Tattvagyanshala**
12, Shreyansnath Society, Behind Dharnidhar Temple,
Vasna, Ahmedabad 380007.
9512234311
www.jaintatvagyanshala.org
jaintatvagyanshala@gmail.com

(2) **Acarya Surendrasurisvaraji Jaina Tattvagyanshala**
A-103/104, Vasudarshan Residency, In RTO Street,
Pal, Surat.

**Type Setting** : Bharat Graphics - 8905851988, 9925020106

पूज्य गुरुदेव आचार्य श्रीमद् विजय

**जगच्चन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. (डहेलावाले)**

के करकमल में सादर सविनय

**समर्पण...**

## श्रुतभक्ति के अनुमोदक

प्रस्तुत प्रकाशन का कार्य जिनकी छत्रछाया में सम्पन्न हुआ

ऐसे **श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ प्रभु** की निश्रा में

**प.पू.आ. श्री जगच्चन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. (डहेलावाले)**

के वि.सं. २०८० के चातुर्मास के उपलक्ष में

इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु

**संघवी देवकरण मूलजी जैन दहेरासर तीर्थ पेढी**

तथा

**श्री मलाड श्वे. मू. पू. जैन संघ**

**मलाड–मुम्बई**

के ज्ञानद्रव्य से सम्पूर्ण आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है ।

**हार्दिक अनुमोदना !**

– प्रकाशक

# पू. गुरुदेव आचार्य श्रीमद् विजय जगच्चन्द्र सूरीश्वरजी म.सा. (डहेलावाले) के आशीर्वचन

॥ શ્રી જુગચંદ્રલાલ પાર્શ્વનાથાય નમો નમઃ ॥

॥ નમો નમઃ શ્રી સુરેન્દ્ર રામસૂરયે ॥

દશાશ્રુતસ્કંધ

જૈન આગમના બે ભેદ ૧ અંગપ્રવિષ્ટ અને ૨ અંગબાહ્ય

૧ અંગપ્રવિષ્ટ-માં ૧૨ અંગ આવે

૨ અંગબાહ્યમાં - જાતિના સંબંધ થી આગમનો સમાવેશ થાય

અંગબાહ્યના પણ બે ભેદ પડે ૧ આવશ્યક - ૨ અનાવશ્યક. અનાવશ્યક અતિરિક્ત

૧ કાલિક - ઉત્તરાધ્યયન આદિ

૨ ઉત્કાલિક - દશવૈકાલિક આદિ

દશાશ્રુતસ્કંધનો ક્રમ પણ કાલિક સૂત્રમાં આવે - કાલગ્રહણની વિધિ પૂર્વક નિયત કાલમાં જે ગુરુમુખે લગાય તે કાલિક કહેવાય

છ છેદસૂત્રોમાં દશાશ્રુતસ્કંધનો અન્તર્ભાવ થાય, સાધુજીવનને આચારમાર્ગનું જ્ઞાન, અનવદ્ય માર્ગનું સૂચન કરનારા, તેમજ થયેલા અતિચાર ખંડનના પ્રાયશ્ચિત્તો બતાવનાર, છેદસૂત્રો અતિગોપનીય - ગીતાર્થ ગુરુની સંમતિ - અનુજ્ઞા પ્રાપ્ત સાધુ જ જેનો અભ્યાસ કરી શકે એવા છે પૈકી આ ગ્રંથને વાંચતા - વંચાવતા રીસ ગ્રંથ ન હોઈ અસ્તુલામાં જાય થતાં આ ગ્રંથરત્ન ઉપર રીસા ગ્રંથ શોધવાનો પ્રયાસ કરતા અને અહોવાંચિ ચારગર પૂ. વાચંયમી કૃત રીસ ગ્રંથ ઉપલબ્ધ થતાં પ્રાચીન પ્રતિ તેનું સંશોધન - સંપાદનનો જાજ્વલ્ય પ્રયત્ન મુનિ ગોયમચન્દ્ર વિ. એ પ્રારંભ્યો અને તેના ફલ સ્વરૂપે આ ગ્રંથ આપના હસ્તકમલમાં શોભી રહ્યો છે.

જો કે આ ગ્રંથના પ્રત્યેક વિષયો અન્ય ગ્રંથો - શાસ્ત્રોમાં સ્પષ્ટ રીતે બતાવ્યા હોઈ તેવા કોઈ ગોપનીય વિષયો જણાયા નથી તથાપિ પરંપરાની મર્યાદાને અનુસારે આ ગ્રંથ ગીતાર્થ અનુજ્ઞા પ્રાપ્ત પૂજ્યો જ અભ્યાસ કરે તે ઇચ્છનીય છે.

મુનિવર આવી શ્રુતોપાસના સહાયકારક બનતા રહે તેવી શુભભાવના સહ શુભાશી.

આ. જગચંદ્રસૂરિ

આ. સુ ૫ / ૨૦૮૦
ઈ. સ. મોરા હેરાલ્ડ
મહાડ (વેસ્ટ) - મુંબઈ

# ग्रन्थानुक्रमः


| क्रमाङ्कः | | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| 1. | प्रकाशकीय | 11 |
| 2. | प्रस्तावना | 12-51 |
| 3. | प्रतिपरिचय | 52-76 |
| 4. | विषयानुक्रमः | 77-93 |
| 5. | श्रीदशाश्रुतस्कन्धः सवृत्तिः | 1-255 |
| 6. | बालावबोधविभागः | 257-392 |
| 7. | परिशिष्टानि | 393-407 |

# प्रकाशकीय निवेदन

श्रीदशाश्रुतस्कन्ध की अद्यावधि अप्रकाशित श्री ब्रह्ममुनि द्वारा रचित जनहिता वृत्ति एवं तीन टबार्थ का प्रकाशन हमारी सुरेन्द्रसूरीश्वरजी जैन तत्त्वज्ञानशाला के तत्त्वावधान में करते हुए हमें अतीव आनन्द की अनुभूति हो रही है ।

अनन्त उपकारी श्री महावीर स्वामी ने जीवमात्र के कल्याण के लिए देशना दी । गणधर भगवंतों ने उसे सूत्र रूप में गूंथा, जिन्हें आगम कहा जाता है । वर्तमान में 45 आगमों में से एक ग्रन्थ है दशाश्रुतस्कन्ध । इस ग्रन्थ में साधु और श्रावकों के आचार का वर्णन है । प्रसिद्ध 'कल्पसूत्र' का समावेश भी इस आगम में आठवें पर्युषणाकल्प अध्ययन के रूप में है । यह एक विशिष्ट छेदसूत्र है, जिसकी रचना भद्रबाहु स्वामीजी ने की थी । इस ग्रन्थ के रहस्यों को समझने के लिए संस्कृत भाषा में अब तक कोई प्राचीन टीका प्रगट नहीं थी । इस प्रकाशन में पार्श्वचन्द्र गच्छ के मुनि श्री ब्रह्म ऋषि द्वारा रचित जनहिता वृत्ति को प्रथम बार प्रकाशित किया जा रहा है । टीका के साथ ही गुजराती भाषा में तीन टबों को भी प्रगट किया जा रहा है । इससे जिज्ञासु वर्ग इस ग्रन्थ के रहस्यों को आसानी से समझ सकेंगे । अभ्यासी विद्यार्थियों को उपयोगी होने वाले चार परिशिष्ट भी इस प्रकाशन में जोड़े गए हैं । इस तरह श्रीसंघ में अभी तक जिस व्याख्या साहित्य का अभाव था, उस साहित्य को प्रकाशित करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष हो रहा है ।

जिनकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से यह ग्रन्थ वृत्ति-टबा-परिशिष्ट सहित पुस्तक रूप में तैयार किया गया, ऐसे गुरुदेव पू. आचार्य श्री जगच्चन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. ने हमें इस ग्रन्थ के प्रकाशन की सम्मति प्रदान की, उसके लिए हम अत्यन्त ऋणी हैं । उनका उपकार कभी नहीं भूलाया जा सकता । इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए हस्तप्रतियाँ प्रेषित करने वाले सभी ज्ञानकेन्द्रों को भी हम धन्यवाद देते हैं । तथा अन्य रूप से भी अपना योगदान देने वाले सभी सहयोगियों का भी हम कृतज्ञ भाव से स्मरण करते हैं एवं धन्यवाद देते हैं, जिसके कारण यह कार्य सम्पन्न हो रहा है । इस ग्रन्थ के अधिकारी अध्येता एवं जिज्ञासु विद्वानों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा, यह निर्विवाद है ।

हितेश सवाणी
ट्रस्टी
आ. सुरेन्द्रसूरि जैन तत्त्वज्ञानशाला

# प्रस्तावना

## भूमिका

सभी धर्म किसी-न-किसी ग्रन्थ को प्रमाण रूप से स्वीकार करते हैं क्योंकि परम्परा चलाने में शास्त्रों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है । वैदिक परम्परा में जो स्थान वेद का है, बौद्ध परम्परा में जो स्थान त्रिपिटक का है, ईसाई धर्म में जो स्थान बाइबल का है, इस्लाम धर्म में जो स्थान कुरान का है, वही स्थान जैन परम्परा में आगमों का है । शास्त्रों के महत्त्व को नजर के सामने रखकर प्रत्येक परम्परा के अनुयायिओं ने शास्त्रों को टिकाने के अथक प्रयत्न किए हैं । उन्हें नष्ट करने वालों को आशातनाओं का भय भी दिखाया गया है । जैन धर्म में तो इन आशातना का बहुत ही विस्तृत स्वरूप देखा जाता है । ज्ञान के किसी भी साधन को नष्ट करना आशातना है, फलतः जैन व्यक्ति अन्य धर्म के शास्त्रों को भी नष्ट नहीं करता । यदि मुस्लिम धर्म में भी ऐसे दोषों की योजना की गई होती तो नालंदा जैसे विश्वविद्यालय नष्ट नहीं होते । शास्त्र-सुरक्षा के इन प्रयत्नों से ही शास्त्रों का महत्त्व सिद्ध होता है ।

जैन वाङ्मय में आगम साहित्य की गरिमा सबसे अधिक है । वैदिक परम्परा के अनुसार वेद नित्य हैं । भिन्न-भिन्न ऋषियों ने अपने साधना बल से उन वेदों को जानकर व्यक्त किया है इसलिए उन ऋषियों को वेद का रचयिता नहीं किन्तु द्रष्टा कहा जाता है । इससे ठीक विपरीत जैन और बौद्ध धर्म में मुख्य उपदेष्टा एक ही हैं । तीर्थंकर देशना देते हैं अर्थात् अर्थ के प्ररूपक तीर्थंकर हैं, उन अर्थों को गणधर भगवंत सूत्र रूप में गूँथ लेते हैं ।[1] इससे वेद तथा जैन-बौद्ध परम्परा में मुख्य दो भेद प्रतीत होते हैं - 1. वेदों के द्रष्टा कोई एक ऋषि विशेष नहीं हैं जबकि जैन और बौद्ध धर्म में मुख्य उपदेष्टा एक ही हैं । 2. वेदों को शब्द से नित्य माना जाता है जबकि जैन धर्म में आगमों को शब्द से नहीं किन्तु अर्थ से नित्य माना जाता है ।

तत्कालीन राजकीय नीति, सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति, लौकिक रीति-रिवाज, भाषा आदि को जानने के लिए भी इस आगम साहित्य का अध्ययन अनिवार्य है । अतः यह आगम साहित्य अमूल्य ऐतिहासिक धरोहर है ।

## आगमों का वर्गीकरण

जैन साहित्य का प्राचीनतम भाग आगम हैं । साध्वाचार का पुष्ट आधार आगम हैं । आचारांग में आगम शब्द का प्रयोग जानने के अर्थ में हुआ है - 'आगमेत्ता आणवेज्जा'[2] जानकर आज्ञा करे । आवश्यक चूर्णि[3] में आप्त पुरुष के वचन को आगम कहा गया है । राग-द्वेष और मोह से रहित पुरुष आप्त हैं, उनकी वाणी आगम है । अनुयोगद्वार वृत्ति[4] में गुरु परम्परा से प्राप्त ज्ञान को आगम कहा है अथवा जिसके द्वारा जीवादि पदार्थों का सम्पूर्ण ज्ञान होता है, वह आगम है । इस तरह हम देख सकते हैं कि आगम शब्द पहले ज्ञान, फिर वाणी और बाद में शास्त्र अर्थ में भी प्रयुक्त होने लगा । अलबत्त, तात्पर्य तो सबका समान ही है ।

आगमों का सबसे प्राचीन वर्गीकरण समवायांग सूत्र में प्राप्त होता है । वहाँ 12 अंग आगम और 14 पूर्व का वर्णन किया गया है[5] । दिगम्बर आम्नाय के षट्खंडागम ग्रन्थ की धवला टीका[6] में आगम के दो भेदों का उल्लेख है - अंगबाह्य और अंगप्रविष्ट । अंगबाह्य के वे सामायिक आदि 14 भेद मानते हैं और अंगप्रविष्ट के 12 अंग स्वरूप 12 भेद माने हैं ।

अंगबाह्य आगमों का उल्लेख स्थानांग में प्राप्त होता है[7] लेकिन अंगबाह्य ग्रन्थों की सबसे बड़ी तालिका नंदीसूत्र[8] में उपलब्ध होती है । स्थानांग के साथ-साथ नंदी-अनुयोग में एक वर्गीकरण और भी है - अंगप्रविष्ट-अंगबाह्य,

आवश्यक-आवश्यक व्यतिरिक्त और कालिक-उत्कालिक । लेकिन फिर भी नंदी और अनुयोगद्वार, दोनों के वर्गीकरण में कुछ भेद है । नंदीसूत्र[9] के अनुसार भेद-प्रभेद की आकृति निम्नलिखित होगी -

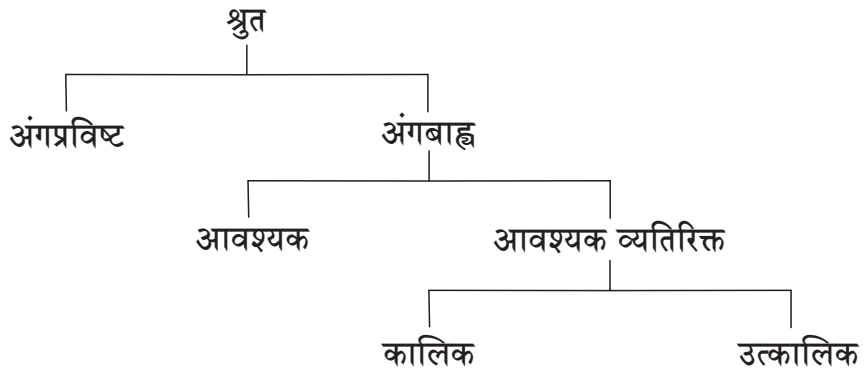


अनुयोगद्वार[10] के अनुसार भेदों का रेखाचित्र बनाने पर वह ऐसा होगा -

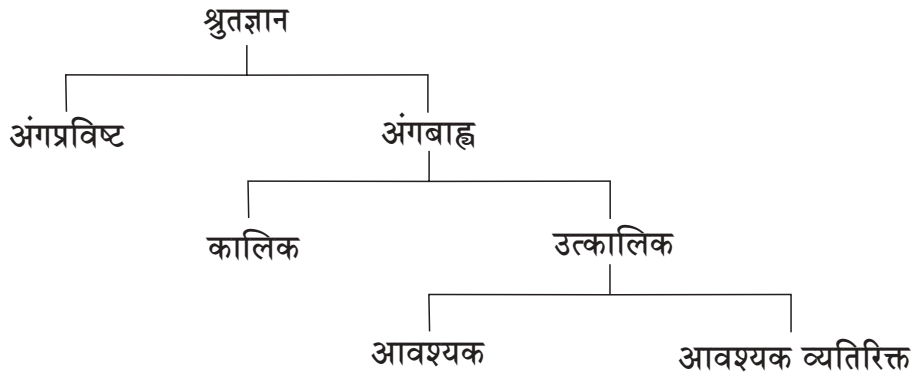


आर्यरक्षित सूरि म. ने सम्पूर्ण श्रुतज्ञान को चार अनुयोगों में विभक्त किया था, जिसका उल्लेख आवश्यक निर्युक्ति में मिलता है - चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग, गणितानुयोग, द्रव्यानुयोग[11] । इनके अलावा भी आगमों के लौकिक आगम-लोकोत्तर आगम, सूत्रागम-अर्थागम-उभयागम, आत्मागम-अनन्तरागम-परम्परागम इत्यादि वर्गीकरण भी किए गए हैं[12] ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि श्वेताम्बर आम्नाय में पहले मात्र गणधर कृत 12 अंग ही आगम माने जाते थे । बाद में अंग आगमों के आधार पर स्थविर आचार्यों द्वारा रचे गए या पूर्व से निर्यूढ किए गए ग्रन्थों का भी आगमों में समावेश कर लिया गया । दिगम्बर आम्नाय में इससे ठीक विपरीत मान्यता है कि अंग आगम संपूर्ण नष्ट हो चुके हैं । फलतः वे आचार्य कुन्दकुन्द आदि द्वारा रचित ग्रन्थों को आगम मानते हैं ।

वर्तमान काल में श्वेताम्बर मूर्तिपूजक सम्प्रदाय में 45 आगम मान्य हैं, जिनका वर्गीकरण इस प्रकार है - 11 अंग, 12 उपांग, 6 छेदसूत्र, 4 मूलसूत्र, 10 प्रकीर्णक, 2 चूलिका । स्थानकवासी-तेरापंथ सम्प्रदाय में 10 प्रकीर्णक, महानिशीथ और पंचकल्प / जीतकल्प रूप 2 छेदसूत्र तथा पिंडनिर्युक्ति, इन 13 आगमों को छोड़कर 32 आगम प्रमाण मानते हैं ।

## छेदसूत्र नामकरण

आगमों के वर्गीकरण को देखते हुए सहज ही प्रश्न उठता है कि प्राचीन वर्गीकरणों में छेदसूत्र जैसा कोई विभाग

नहीं था तो 'छेदसूत्र' संज्ञा कबसे रूढ़ हुई ? प्राचीन आगमों में 'छेदसूत्र' का कहीं भी उल्लेख नहीं है । 'छेदसूत्र' संज्ञा का सबसे प्रथम उल्लेख आवश्यक निर्युक्ति[13] में प्राप्त होता है । निर्युक्तिकार ने लिखा है कि 'महाकल्पसूत्र और सभी छेदसूत्र कालिक सूत्र हैं । इनका समावेश चरणकरणानुयोग में होता है ।' इससे इतना तो निश्चित है कि आवश्यक निर्युक्ति के रचना समय तक 'छेदसूत्र' संज्ञा रूढ़ होने लगी थी । प्राचीन वर्गीकरण में छेदसूत्र संज्ञा भले ही न हो किंतु छेदसूत्र आगमों का उल्लेख तो प्राप्त है ही । समवायांग, स्थानांग, नन्दी वगैरह आगमों में दशा-कल्प-व्यवहार विषयक उल्लेख हैं ही ।

छेदसूत्रों के लिए एक और पारिभाषिक संज्ञा का उल्लेख मिलता है - पदविभागसामाचारी । निशीथ-कल्पादि में कहे गए प्रायश्चित्त के पदों के विभाग विषयक सामाचारी को पदविभाग सामाचारी कहा जाता है[14] । 'छेदसूत्र' संज्ञा की तरह ही 'पदविभाग सामाचारी' शब्द का उल्लेख भी आवश्यक निर्युक्ति[15] में है । कई विद्वानों ने पहले पदविभाग सामाचारी संज्ञा होने के बावजूद पुनः छेदसूत्र संज्ञा देने के कारणों पर विमर्श किया है । इस विषय में ऐसा प्रतीत होता है कि 'पदविभाग सामाचारी' यह सामाचारी की संज्ञा है और 'छेदसूत्र' उसका निरूपण करने वाले ग्रन्थों की संज्ञा है । जैसे ओघ सामाचारी का निरूपण करने वाला ग्रन्थ ओघनिर्युक्ति है, वैसे ही पदविभाग सामाचारी का निरूपण करने वाले ग्रन्थ छेदसूत्र हैं । अभिधेय और अभिधायक शास्त्र के अभेद उपचार से हरिभद्रसूरि म. आदि वृत्तिकारों ने 'पदविभागसामाचारी छेदसूत्राणि'[16] ऐसा कहा होगा ।

छेदसूत्र संज्ञा की अन्वर्थता पर अनेक दृष्टियों से विद्वानों द्वारा विचार किया गया है -

1. वर्तमान में छेदोपस्थापनीय चारित्र जीवन पर्यन्त होता है इसलिए इन प्रायश्चित्त सूत्रों का सम्बन्ध छेदोपस्थानीय चारित्र के साथ होने से उन्हें छेदसूत्र संज्ञा दी गई है ।
2. छेदसूत्र पूर्वों से निर्यूढ किए गए हैं । पूर्वों से छिन्न यानि पृथक् किए जाने के कारण उन्हें छेदसूत्र कहा गया है ।
3. वर्तमान काल में दिया जाने वाला उत्कृष्ट प्रायश्चित्त छेद है । फलतः प्रायश्चित्त सूत्रों का नामकरण छेदसूत्र हो गया ।
4. इन प्रायश्चित्त सूत्रों का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है । इनकी व्याख्या विभागदृष्टि-छेददृष्टि से की गई होने से इन्हें छेदसूत्र कहा जाता है ।

इस प्रकार छेद शब्द का सम्बन्ध छेदोपस्थानीय चारित्र, छिन्न शब्द, छेद प्रायश्चित और विभाग दृष्टि के साथ जोड़ा गया है । लेकिन इसके अलावा एक और सम्भावना है कि दिगम्बर आम्नाय के छेदपिण्ड[17] नामक ग्रन्थ में प्रायश्चित्त के पर्यायवाची नाम दिए हैं । उनमें से एक पर्यायवाची है - छेद । अतः सम्भव है कि प्रायश्चित्त सूत्रों को 'छेदसूत्र' संज्ञा दे दी गई हो क्योंकि छेदसूत्र मूलतः तो प्रायश्चित्त सूत्र ही हैं ।

प्रायश्चित्त द्वारा चारित्र में लगे अतिचारों की शुद्धि होती है इसलिए छेदसूत्र को उत्तमश्रुत भी कहा गया है ।[18] छेद शब्द की सार्थकता इसी में निहित है ।

## दशाश्रुतस्कन्ध ग्रन्थ

दशाश्रुतस्कन्ध छेदसूत्रों में प्रथम है । आगमों में अनेक स्थल पर छेदसूत्र के नाम प्राप्त होते हैं[19], उनमें दशा का नाम सर्वप्रथम होता है । चूर्णिकार[20] ने तो इस ग्रन्थ को छेदसूत्र में प्रमुख सूत्र कहा है ।

इस ग्रन्थ के तीन नाम प्राप्त होते हैं - दशा, आचारदशा और दशाश्रुतस्कन्ध । दस अध्ययन का प्रतिपादक ग्रन्थ होने से इसे 'दशा' कहा जाता है । नंदीसूत्र, पाक्षिक सूत्र आदि में इसका दशा नाम से ही उल्लेख है । इस ग्रन्थ का मुख्य विषय आचार है, अतः 'आचार दशा' नाम भी सार्थक है । स्थानांग सूत्र[21] में दस अध्ययन वाले आगमों की सूचि में इस ग्रन्थ का उल्लेख आचारदशा नाम से ही हुआ है । चूर्णिकार[22] ने भी आचार दशा नाम का उल्लेख किया है । सभी हस्तादर्शों[23] के अंत में भी आचार दशा नाम ही लिखा है । वर्तमान में प्रचलित नाम 'दशाश्रुतस्कन्ध' है । वृत्तिकार ने इस नाम की व्युत्पत्ति की है[24] । दस दशाओं का एक श्रुतस्कन्ध होने से इसे दशाश्रुतस्कन्ध कहा जाता है । 'दशाकल्प' ऐसा एक पर्यायवाची नाम भी उन्होंने दिखाया है ।

यहाँ एक भ्रम का निरास करना आवश्यक है । चूर्णि में दशा, श्रुत और स्कन्ध पद की निक्षेप पद्धति से व्याख्या की है । इससे किसी को ऐसा भ्रम हो सकता है कि चूर्णिकार को ग्रन्थ का नाम 'दशाश्रुतस्कन्ध' अभिप्रेत है किन्तु ऐसा नहीं है । दशा शब्द तो निर्युक्ति[25] में है । दशा ग्रन्थ के अनुयोग का प्रारम्भ करते हुए चूर्णिकार प्रश्न करते हैं कि क्या यह दशा एक अंग है या अनेक अंग हैं, एक श्रुतस्कन्ध है या अनेक श्रुतस्कन्ध हैं, एक अध्ययन है या अनेक अध्ययन हैं, एक उद्देश है या अनेक उद्देश हैं ? इसके उत्तर में प्राप्त होता है कि दशा एक या अनेक अंग नहीं है, एक श्रुतस्कन्ध है, अनेक अध्ययन हैं तथा एक या अनेक उद्देश नहीं है ।[26] अतः दशा, श्रुत, स्कन्ध और अध्ययन शब्द के निक्षेप तो वे ग्रन्थ के अनुयोग के लिए करते हैं, ग्रन्थ का नाम 'दशाश्रुतस्कन्ध' होने से नहीं । ग्रन्थ का नाम तो वे निर्युक्ति 5 की चूर्णि में आचारदशा ही लिखते हैं । इतना स्पष्ट है कि ग्रन्थ का मूल नाम दशा या आचारदशा ही है । किन्तु वृत्तिकार के समय तक 'दशाश्रुतस्कन्ध' नाम प्रचलित हो चुका था ।

यह ग्रन्थ अंगबाह्य आगम है, कालिक सूत्र है, छेदसूत्र है । चार अनुयोग की दृष्टि से इसका समावेश चरणकरणानुयोग में होता है[27] क्योंकि इस ग्रन्थ में साधु और श्रावक के आचार का संक्षिप्त वर्णन है[28] । सूत्रागम-अर्थागम-उभयागम इत्यादि अन्य वर्गीकरणों में इसका समवतार सुगम होने से पाठकगण स्वयं कर सकते हैं ।

## ग्रन्थकार और रचनाकाल

इस ग्रन्थ के रचयिता चौदह पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी हैं । दशा-कल्प-व्यवहार, इन तीनों छेदसूत्र के कर्ता वे ही हैं । अलबत्त तीनों में से किसी भी ग्रन्थ में आदि से लेकर अन्त तक ग्रन्थकार ने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है लेकिन निर्युक्ति, चूर्णि आदि सभी परवर्ती व्याख्याओं में इन ग्रन्थों के कर्ता निर्विवाद रूप से चौदह पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी कहे गए हैं । निर्युक्तिकार यहाँ प्रथम निर्युक्ति में ही कहते हैं कि दशा-कल्प-व्यवहार के कारक, अंतिम सकल श्रुतज्ञानी ऐसे भद्रबाहु स्वामी को मैं वन्दन करता हूँ[29] । चूर्णिकार ने भी इसी बात का समर्थन किया है[30] । आगमप्रभाकर मुनिराज श्री पुण्यविजय जी म. ने भी लिखा है कि छेदसूत्रों के प्रणेता चौदह पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी हैं, इसमें कोई विसंवाद नहीं है[31] ।

यहाँ एक और उल्लेखनीय बाबत यह है कि भद्रबाहु स्वामी ने इस ग्रन्थ को प्रत्याख्यान नामक नौवें पूर्व से निर्यूढ किया है । चूर्णिकार इस बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि नौवें प्रत्याख्यान पूर्व में से असमाधिस्थानक नामक प्राभृत से प्रथम असमाधिस्थान नामक दशा निर्यूढ की गई है । इसी तरह अन्य दशाएँ भी सदृश नाम वाले प्राभृत से निर्यूढ की गई हैं[32] ।

'पूर्व में से इस ग्रन्थ का निर्यूहण क्यों किया गया ?' यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है । चूर्णिकार इसका सुंदर

समाधान देते हैं । अवसर्पिणी काल में जीवों के आयुष्य, बल, सत्त्व, उत्साहादि हीन होते हैं । शरीर के बल और वीर्य के अभाव से पढ़ने में श्रद्धा नहीं होती, उत्साह नहीं होता[33] । अतः भद्रबाहु स्वामी को ऐसी चिंता हुई कि पूर्वगत साहित्य का विच्छेद होने पर साधु विशोधि को प्राप्त नहीं कर पाएँगे[34] । इसलिए जीवों के अनुग्रह के लिए ही उन्होंने पूर्व से दशा-कल्प-व्यवहार रूप छेदसूत्रों का निर्यूहण किया, आहार-उपधि-शय्यादि की प्राप्ति के लिए अथवा यश-कीर्ति-प्रशंसा के लिए नहीं ।[35]

ग्रन्थ के कर्ता (या निर्यूढ करने वाले) निश्चित होने से ग्रन्थ का रचनाकाल भी निश्चित हो जाता है । चतुर्दश पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी प्रभु महावीर के निर्वाण के प्रायः 150 से 170 वर्ष पश्चात् हुए हैं । अतः इन छेदसूत्रों का रचनाकाल भी वीर संवत् 170 के आसपास निश्चित होता है । पाश्चात्त्य विद्वानों ने भी इनका रचना काल ईस्वी पूर्व चौथी शती के अन्त में ही माना है[36] ।

ग्रन्थ विषयक बाह्य परिचय के बाद अब अभ्यन्तर परिचय की ओर चलते हैं...

## दशाश्रुतस्कन्धः आन्तर परिचय

इस ग्रन्थ के आन्तर परिचय में मुख्यतया तीन बिन्दुओं का वर्णन करना अभिप्रेत है -

1. ग्रन्थ की भाषा 2. वर्ण्य विषय 3. रचना शैली

जैन आगमों की मूल भाषा अर्धमागधी कही गई है । प्रभु महावीर ने अर्धमागधी भाषा में ही देशना दी थी[37] और गणधर भगवन्तों ने भी द्वादशांगी की रचना अर्धमागधी में की थी लेकिन समय-समय पर अनेक कारणों से उस भाषा में भी परिवर्तन हो गया है, किया गया है[38] । वर्तमान में उपलब्ध पाठ में इस ग्रन्थ की भाषा सरल और सुगम है किन्तु कहीं-कहीं बहुत लम्बे समासों का प्रयोग भी किया गया है (जैसे-14 स्वप्न का वर्णन आदि) ।

ग्रन्थ की रचनाशैली गद्य-पद्य मिश्रित है । इसमें कुल 10 अध्ययन हैं, जिन्हें दशा कहा जाता है । इन्हें कुल 470 सूत्रों में विभाजित किया गया है । बीच-बीच में 82 गाथाएँ हैं । कुछ गाथाओं का स्वरूप तो संग्रहणी गाथा जैसा है, जिसमें कुछ विषयों का संकलन किया गया है । जैसे-14 स्वप्न के नाम (सू. 132 गा. 19), गणधर भगवंत के नाम (सू. 254 गा. 21) इत्यादि । कुछ सूत्र प्रश्नोत्तर शैली में रचे गए हैं लेकिन इनमें भंते-गोयमा जैसे संबोधन नहीं है[39] । मूल सूत्र 2116 श्लोक प्रमाण हैं ।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि इस ग्रन्थ में साधु और श्रावकों के आचार का वर्णन संक्षेप में किया गया है । यहाँ 10 अर्थाधिकार होने से 10 अध्ययन हैं अर्थात् 10 विषयों का वर्णन 10 अध्ययनों में किया गया है । उनका सारांश इस प्रकार है -

1. **प्रथमदशा असमाधिस्थान अध्ययन –** जिनका सेवन या आचरण करने से असमाधि उत्पन्न होती है, वे असमाधिस्थान हैं । यहाँ 20 असमाधिस्थान का वर्णन किया गया है । जैसे- जल्दी-जल्दी चलना, बड़ों के सामने बोलना, पीठ पीछे निन्दा करना, कलह करना इत्यादि ।

2. **द्वितीयदशा शबल अध्ययन –** जिनके सेवन से चारित्र शबल होता है, चितकबरा होता है, उन्हें शबल कहा जाता है । इस अध्ययन में ऐसे 21 शबल का वर्णन है । जैसे- हस्तकर्म करना, आधाकर्मी भोजन करना, रात्रिभोजन करना इत्यादि ।

3. **तृतीयदशा आशातना अध्ययन –** यहाँ गुरु प्रति होने वाली 33 आशातनाओं का वर्णन है । जैसे- गुरु के आगे चलना, बैठना या खड़े रहना, विहार या विचार भूमि से आकर गुरु से पहले आलोचना करना इत्यादि ।

4. **चतुर्थदशा गणिसम्पदध्ययन –** इस अध्ययन में आचार्य भगवन्त की आठ सम्पदाओं का वर्णन किया है- 1. आचार सम्पदा 2. श्रुतसम्पदा 3. शरीर सम्पदा 4. वचन सम्पदा 5. वाचन सम्पदा 6. मति सम्पदा 7. प्रयोग सम्पदा 8. संग्रहपरिज्ञा सम्पदा । इसके पश्चात् आचार्य और शिष्य की चार-चार विनयप्रतिपत्ति का वर्णन है । आचार्य की विनयप्रतिपत्ति- 1. आचार विनय 2. श्रुत विनय 3. विक्षेपणा विनय 4. दोषनिर्घातना विनय । शिष्य की विनयप्रतिपत्ति- 1. उपकरण उत्पादनता 2. साहल्यता 3. वर्णसंज्वलनता 4. भारप्रत्यारोपणता । उपर्युक्त सम्पदाओं के वर्णन से हम समझ सकते हैं कि शास्त्रकारों ने आचार्य को कितनी जवाबदारी सौंपी है । केवल व्याख्यान करना या प्रभावकता ही आचार्य पद की योग्यता नहीं है । उनके पास तथाविध उत्कृष्ट ज्ञान, आचार, मति (धारणा क्षमता), वादलब्धि भी होना चाहिए । साथ-ही-साथ शिष्यों को श्रुत कैसे पढ़ाना, उनके दोष कैसे दूर करना, कषाय कैसे शान्त करना इत्यादि भी आना चाहिए ।

5. **पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थान अध्ययन –** समिति-गुप्ति में स्थित श्रमण-श्रमणियों को ध्यान करते हुए 10 चित्त के समाधिस्थान उत्पन्न हो सकते हैं । जैसे- संज्ञीज्ञान, स्वप्नदर्शन, जातिस्मरण इत्यादि ।

6. **षष्ठदशा उपासकप्रतिमा अध्ययन –** प्रतिमा यानि अभिग्रह विशेष । साधना के सोपान चढ़ते हुए साधक जिन अभिग्रहों को धारण करता है, उन्हें प्रतिमा कहा जाता है । श्रावक अवस्था में इस तरह साधना के 11 स्तर माने गए हैं, जिन्हें उपासक प्रतिमा कहते हैं । इस अध्ययन में 11 उपासक प्रतिमाओं का विस्तृत वर्णन है ।

7. **सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमा अध्ययन –** श्रावक अपने राग-द्वेष के बन्धनों को क्रमशः शिथिल करते हुए जब 11 उपासक प्रतिमाओं के पार पहुँच जाता है, तब वह मुनि अवस्था को प्राप्त करता है । मुनि अवस्था में भी साधना के 12 स्तर माने गए हैं । इस अध्ययन में 12 भिक्षु प्रतिमाओं का वर्णन है ।

8. **अष्टमदशा पर्युषणाकल्प अध्ययन –** इस अध्ययन में पहले जिनेश्वर परमात्मा के चरित्र, उनके अन्तराल और स्थविरावलि है । तत्पश्चात् पर्युषणा में पालन की जाने वाली सामाचारी का वर्णन है । यह अध्ययन वर्तमान में 'कल्पसूत्र' नाम से प्रचलित है । इस अध्ययन का नाम 'कल्पसूत्र' प्रसिद्ध हो जाने से ही वस्तुतः जो कल्पसूत्र 'कप्पो' था, उसका नाम 'बृहत्कल्पसूत्र' पड़ा ।

9. **नवमदशा मोहनीयस्थान अध्ययन –** यहाँ 30 मोहनीय स्थानों का वर्णन है, जिनके आचरण से जीव को महामोहनीय कर्म का बन्ध होता है । जैसे- किसी को पानी में डूबाकर मारना, अग्नि जलाकर मारना, स्वयं तपस्वी या ब्रह्मचारी न होने पर भी लोक में तपस्वी या ब्रह्मचारी रूप से ख्याति फैलाना इत्यादि ।

10. **दशमदशा निदानस्थान अध्ययन –** इस अध्ययन में नौ प्रकार के निदान का वर्णन है- 1. निर्ग्रन्थ द्वारा पुरुष के भोगों का निदान । 2. श्रमणी द्वारा स्त्री के भोगों का निदान । 3. मुनि द्वारा स्त्री के भोगों का निदान । 4. श्रमणी द्वारा पुरुष के भोगों का निदान । 5.6.7. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थी द्वारा दिव्य भोगों का निदान । 8. श्रावक बनने का निदान । 9. मुनि बनने का निदान । इन निदान का दुष्फल जानकर श्रमण-

श्रमणियों को निदान रहित संयम की आराधना करनी चाहिए । कदाचित् निदान हो गया हो तो उसकी आलोचना कर प्रायश्चित्त से शुद्धि करनी चाहिए ।

इस सारांश द्वारा हम समझ सकते हैं कि यहाँ लगभग आठ अध्ययनों में तो साधु की सामाचारी और आचार का ही वर्णन है, केवल एक छठे उपासकप्रतिमा अध्ययन में श्रावकों के आचार का वर्णन है जबकि नौवें अध्ययन में बताए गए मोहनीय स्थानों में से कुछ श्रावक सम्बन्धी हैं, कुछ साधु सम्बन्धी हैं । यहाँ वर्णित किए गए आचारों की विचारणा हेय-उपादेय रूप से भी कर सकते हैं । असमाधिस्थान, शबल, आशातना, मोहनीयस्थान और निदानस्थान, इतने अध्ययनों में हेय आचारों का वर्णन है जबकि गणिसम्पदा, चित्तसमाधिस्थान, उपासक प्रतिमा, भिक्षुप्रतिमा और पर्युषणाकल्प अध्ययन में उपादेय आचारों का वर्णन है । ग्रन्थ के इस अभ्यन्तर परिचय से हम ग्रन्थ की उपादेयता समझ सकते हैं ।

प्रथम चार अध्ययनों में सीधे ही प्रश्नोत्तर रूप में अध्ययन के मुख्य विषय का वर्णन है । पाँचवें और नौवें अध्ययन में प्रभु महावीर का आगमन, समवसरण, देशना आदि का संक्षिप्त वर्णन है । पाँचवें अध्ययन में प्रभु महावीर के निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों का विस्तार से वर्णन किया गया है तथा 10 चित्तसमाधिस्थान पहले गद्य में बताकर पुनः उनका वर्णन पद्य में भी किया गया है । छठे अध्ययन में उपासक प्रतिमा से पहले अक्रियावादी का विस्तृत वर्णन किया गया है । फिर क्रियावादी का वर्णन करके उपासक प्रतिमाओं का वर्णन किया गया है । सातवें अध्ययन में भिक्षु की प्रथम प्रतिमा का विस्तारपूर्वक वर्णन करके शेष 11 प्रतिमाओं में केवल पहली प्रतिमा से विशेष भेद ही बताया गया है । आठवाँ पर्युषणाकल्प अध्ययन तो सुप्रसिद्ध ही है । नौवें अध्ययन में सभी तीस मोहनीय स्थानों का वर्णन पद्य शैली में ही है । दसवें अध्ययन में श्रेणिक राजा की प्रभु महावीर प्रति भक्ति, श्रेणिक-चेलणा का देशना में गमन इत्यादि का विस्तृत वर्णन है । सातवें अध्ययन के अंत में भिक्षु प्रतिमा का सम्यग् पालन नहीं करने वाले और पालन करने वाले भिक्षुओं को क्रमशः हानि और लाभ का विधान किया गया है जबकि पाँचवें, आठवें, नौवें और दसवें अध्ययन के अन्त में क्रमशः चित्तसमाधिस्थान, सामाचारी के पालन, मोहनीय स्थान के वर्जन और निदान शल्य के त्याग का फल दिखाया गया है । मोहनीय स्थान के सेवन और निदान से होने वाले अहित का विधान तो उस-उस प्रत्येक स्थान में ही हो गया है । सामाचारी में अनेक जगह 'आयरिया पच्चवायं जाणंति' का विधान है ।

## मूल सूत्र के कुछ विशेष बिन्दु

मनुष्यत्व के मुख्य दो पहलू हैं - हृदय और बुद्धि । हृदय का विषय भावना है और बुद्धि का विषय तर्क । शास्त्र अध्ययन करते हुए एक ओर जहाँ हृदय भावित होता है, वहीं दूसरी ओर बुद्धि तर्क करती है, तुलना करती है । इस ग्रन्थ पर भी तुलनात्मक दृष्टि डालने से अनेक ऐसे स्थल ख्याल आते हैं, उनमें से कुछ विशेष बिन्दु यहाँ प्रस्तुत हैं-

**1. अन्य ग्रन्थों से विषय साम्य –** इस ग्रन्थ में वर्णित किए गए विषय अन्य ग्रन्थों में भी प्राप्त होते हैं । कुछ-कुछ तो पूरे अध्ययन ही समान रूप से अन्यत्र भी हैं तो कुछ अध्ययनों का अमुक या तमुक भाग अन्य ग्रन्थ में प्राप्त होता है । 20 असमाधिस्थान, 21 शबल और 33 आशातना रूप प्रथम तीन अध्ययन समवायांग सूत्र[40] में समान रूप से प्राप्त होते हैं । आठ गणिसंपदाओं का नामोल्लेख स्थानांग सूत्र[41] में भी है । 10 चित्तसमाधिस्थान और 30 मोहनीय स्थान सम्पूर्णतया इसी स्वरूप में समावायांग सूत्र[42] में उपलब्ध हैं । 11

उपासक प्रतिमा और 12 भिक्षु प्रतिमा का समवायांग[43] में मात्र नामोल्लेख है किन्तु उपासक प्रतिमा के उपोद्घात में कहे गए अक्रियावादी का स्वरूप सूत्रकृतांग सूत्र[44] में समानतया प्राप्त होता है । प्रभु महावीर के पाँच कल्याणकों का वर्णन आचारांग[45] के द्वितीय श्रुतस्कन्ध में है । चित्तसमाधिस्थान और निदानस्थान अध्ययनों के उपोद्घात पर औपपातिक सूत्र का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है । पर्युषणाकल्प अध्ययन पर भी औपपातिक सूत्र का प्रभाव है । यहाँ उल्लेखनीय बाबत यह है कि असमाधिस्थान के क्रम या स्थान में कुछ परिवर्तन अवश्य हैं तथा उनकी तुलना अन्य विद्वानों द्वारा की जा चुकी है ।

**2. दशा या अध्ययन –** ग्रन्थों में विषयानुसार विभागीकरण करके प्रत्येक विभाग को एक नाम या संज्ञा देने की रीति प्राचीन समय से ही चली आ रही है । किसी ग्रन्थ में इस विभाग को 'अध्याय' कहते हैं, जैसे भगवद्गीता के अध्याय । अंग्रेजी भाषा में इसे Chapter कहा जाता है । साहित्यिक क्षेत्र में इसे उल्लास, प्रकाश, सर्ग या पर्व कहा जाता है, जैसे- काव्यप्रकाश, त्रिषष्टि आदि । नाटक में अंक कहलाता है । जैन आगमों में प्रायः 'अध्ययन' शब्द प्रचलित है, जैसे- आचारांग आदि । जैनों के पूर्वगत साहित्य में वस्तु, प्राभृत, प्राभृतप्राभृत आदि संज्ञाएँ थीं, ऐसे उल्लेख मिलते हैं । लेकिन कुछ आगमों में अलग-अलग संज्ञाएँ भी देखने को मिलती हैं । जैसे- प्रज्ञापना में पद, जीवाभिगम में प्रतिपत्ति, भगवती में शतक इत्यादि । इस ग्रन्थ में विभाग की संज्ञा 'दशा' प्रचलित है किन्तु इस पर कुछ विचार करने की आवश्यकता है । निर्युक्तिकार ने तो जहाँ दस अध्ययन को इकट्ठा करना हो, वहीं 'दशा' शब्द का प्रयोग किया है, एक-एक विभाग को अध्ययन ही कहा है[46] । दशा शब्द का प्रयोग सभी जगह बहुवचन में ही मिलता है, जैसे- दसाओ [पक्खी सूत्र], दसासु [दशा. नि.1], दसाणं अणुओगो [दशा. चू.पृ.3] आदि । चूर्णिकार भी दस अध्ययन के समूह अर्थ में ही दशा शब्द का प्रयोग करते हैं किन्तु एक-एक विभाग को अध्ययन ही कहते हैं । जैसे- आयारदसातो [दशा. चू.पृ.5], तत्थ पढमं अज्झयणं असमाहिट्ठाणं [दशा.चू.पृ.6], आसादणज्झयणं पण्णत्तं [दशा.चू.पृ.19] इत्यादि । टीकाकार ने भी अध्ययन संज्ञा का ही प्रयोग किया है । जैसे- व्याख्यातं शबलनामकं द्वितीयमध्ययनम् [दशा.सू. 7-9 वृत्ति] इत्यादि । यहाँ तक कि स्वयं सूत्रकार ग्रन्थ के अन्त में कहते हैं- आजातिस्थान नामक अध्ययन की प्ररूपणा की[47] । अतः ऐसा प्रतीत होता है कि दस अध्ययन का समूह होने से ग्रन्थ का नाम दशा रखा गया तथा समूहवाची होने से उसका प्रयोग बहुवचन में ही होने लगा एवं प्रत्येक विभाग को अध्ययन कहने की ही परम्परा रही ।

**3. आचार संपदा और आचार विनय में भेद –** चौथे गणिसम्पदा अध्ययन में आचार्य की आठ सम्पदा अन्तर्गत आचार सम्पदा (सू.13) का वर्णन है । तत्पश्चात् आचार्य को गच्छ से उऋण होने के लिए बताए गए चार प्रकार के विनय के अन्तर्गत आचार विनय (सू.21) का वर्णन किया गया है । यहाँ प्रश्न होता है कि आचार्य की आचार सम्पदा दिखाने के बाद पुनः आचार विनय दर्शाने की क्या आवश्यकता है ? विचार करने पर ऐसा समाधान प्राप्त होता है कि सम्पदा और विनय में कुछ भिन्नता है । सम्पदा आचार्य के गुण स्वरूप है जबकि विनय उनके कार्य रूप है अर्थात् सम्पदा में वे स्वयं कैसे होते हैं, इसका वर्णन है तथा विनय में वे शिष्यों को क्या शिक्षा देते हैं, इसका वर्णन है । आचार्य स्वयं आचार का चुस्तता से पालन करते हैं, यह उनकी आचार सम्पदा है तथा वे शिष्यों को भी आचार पालन की शिक्षा देते हैं, यह आचार विनय है । श्रुतसम्पदा और श्रुतविनय में भी उपर्युक्त रीति से ही भेद समझ लेना चाहिए ।

**4. नक्षत्र प्राचीन, राशि अर्वाचीन –** प्रभु वीर के चरित्र में उनके जीवन की मुख्य छह घटनाओं के नक्षत्र का

उल्लेख है (दशा. 8-100), जबकि वर्तमान में प्रचलित ज्योतिष शास्त्र में अधिकतर फलकथन राशियों पर आधारित है । भारत के प्राचीन ज्योतिष शास्त्रों में कहीं भी राशि का उल्लेख नहीं मिलता है । भारत के उपलब्ध ज्योतिष साहित्य में वेदांग ज्योतिष नामक ग्रन्थ सबसे प्राचीन माना जाता है (रचनाकाल ई.पू. 6ठी या 7वी शती) । उसके बाद वाले महाभारत आदि ग्रन्थों में भी राशियों का कोई उल्लेख नहीं है । जैन ज्योतिष में तो ज्योतिष देवों के जो मूल 5 भेद माने गए हैं (सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारा), उनमें ही राशि का कोई स्थान नहीं है । सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष करण्डक आदि जैन ज्योतिष के ग्रन्थों में भी राशि की कोई जानकारी नहीं दी है ।

राशियों का मूल प्राचीन बेबीलोन संस्कृति में है (ई. पू. 2000 से 500 वर्ष तक मेसोपोटेमिया, वर्तमान में प्रायः इजिप्त देश के आसपास यह बेबीलोन संस्कृति विद्यमान थी) । वहाँ से इन राशियों को यूनानी संस्कृति ने अपनाया । तत्पश्चात् शकद्वीप के ब्राह्मणों द्वारा इन राशियों का ज्ञान भारत में आया[48] । निम्नलिखित प्रमाण भी उपर्युक्त बात की ही पुष्टि करते हैं -

(i) 12 राशियों के नामों का यूनानी नामों पर से संस्कृत में अनुवाद किया गया है । वराहमिहिर (ईस्वी छठी शती) को यूनानी ज्योतिष का अच्छा ज्ञान था[49] । उन्होंने यूनानी राशि नामों से भारत में क्रिय, ताबुरि आदि नाम गढ़े थे किन्तु ये राशि नाम प्रसिद्ध नहीं हुए । इन नामों से संस्कृत में अनुदित मेष, वृषभ आदि नाम प्रसिद्ध हो गए ।

(ii) भारतीय साहित्य, पुराण आदि में कृत्तिका, रोहिणी, व्याध आदि नक्षत्र-तारों के बारे में काफी रोचक कथाएँ मिलती हैं किन्तु राशियों के बारे में कोई आख्यान नहीं मिलते । यूनानी साहित्य में राशियों से सम्बन्धित आख्यान भी मिलते हैं ।

(iii) राशियों के आधार पर फलित कथन की प्रणाली भी मूल बेबीलोन (या खल्दियाई) संस्कृति की देन है । राशियों के साथ-साथ ही फलित ज्योतिष का भी भारत में आगमन हुआ और भविष्य कथन उत्सुकता का विषय होने से ही नक्षत्र की अपेक्षा राशि और उन पर आधारित फलित ज्योतिष भारतभर में प्रसिद्ध हो गया । कुछ विद्वानों का मत है कि फलित ज्योतिष के विशालकाय ग्रन्थ रचने वाले वराहमिहिर स्वयं शकद्वीप के ब्राह्मण थे, जिनके पूर्वज भारत में आकर बस गए थे । प्राचीन भारतीय ज्योतिष में गणित ज्योतिष ही मुख्य था, फलित ज्योतिष नहीं । वेदांग ज्योतिष, चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति आदि प्राचीन ग्रन्थों में गणित ही बताया गया है । प्रभु के चरित्र में फलकथन स्वप्न आधारित किया गया है, ज्योतिष के आधार पर नहीं । अलबत्त, नक्षत्रों के आधार पर भी दिनों को शुभ-अशुभ मानने की प्रथा तो थी ही[50] ।

(iv) एक राशि = सवा दो नक्षत्र । यदि राशि और नक्षत्र, दोनों पद्धतियों का विकास भारत में ही हुआ होता तो ऐसा अपूर्णांक समीकरण बैठाने की क्या आवश्यकता थी ? इस समीकरण से भी ऐसी अर्थापत्ति निकाल सकते हैं कि नक्षत्र पद्धति भारत में प्रचलित थी । फिर राशि पद्धति फलित ज्योतिष के कारण अधिक प्रसिद्ध हो जाने से ऐसा अपूर्णांक समीकरण बिठाना पड़ा ।

इस पूरी चर्चा का सार इतना है कि प्राचीन भारत में नक्षत्र पद्धति प्रचलित थी । तत्पश्चात् बेबीलोन-यूनानी संस्कृति के राजाओं द्वारा (प्रायः) ईस्वी सन् की प्रथम शताब्दि[51] में आक्रमण के साथ-साथ राशि पद्धति और फलित ज्योतिष का आगमन भारत में हुआ ।

यहाँ एक और उल्लेखनीय बाबत यह है कि भारत की तरह ही चीनी, अरबी और यूनानी ज्योतिष में भी नक्षत्र

पद्धति मिलती है । अर्थात् भारत, चीन, अरब और यूनान चारों जगह स्वतन्त्र रूप से नक्षत्र पद्धति का विकास हुआ था[52] ।

**5. नक्षत्र एवं तारों का सम्बन्ध –** जैन ज्योतिष में ज्योतिष देवों के 5 प्रकार स्वीकार्य हैं - सूर्य चन्द्र ग्रह नक्षत्र तारा । इन सभी देवों के विमान अलग-अलग हैं, जो हमें आकाश में घूमते हुए दिखाई देते हैं । चूंकि इन सबके विमान पृथक्-पृथक् हैं तो नक्षत्र देवों के विमान भी स्वतन्त्र हैं । आधुनिक विज्ञान में इससे ठीक विपरीत मान्यता है । उसमें नक्षत्र और तारों में कोई भेद नहीं है । कुछ तारों या तारा समूह को ही नक्षत्र कहा जाता है । जैन शास्त्रों और विज्ञान की इन मान्यताओं की तुलना करने पर कुछ प्रश्न उपस्थित होते हैं -

(i) सभी नक्षत्रों के संस्थान कहे गए हैं[53], जिन्हें देखकर आकाश में उनकी पहचान की जाती है । जैन शास्त्रों के हिसाब से ये संस्थान क्या नक्षत्र विमानों के संस्थान हैं ? जैसे- हस्त नक्षत्र का आकार हाथ जैसा कहा गया है । इसका मतलब क्या ऐसा समझना कि हस्त नक्षत्र के विमान का आकार हाथ जैसा है ?

(क) यदि नक्षत्र विमान का संस्थान ही हम ऐसा मानेंगे तो आकाश में देखकर नक्षत्र को कैसे पहचानेंगे क्योंकि हमें तो नक्षत्र विमान भी तारे की तरह मात्र बिन्दु रूप ही दिखाई देता है ?

(ख) पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी दोनों नक्षत्रों का संस्थान अर्धपल्यंक कहा है । दोनों नक्षत्र मिलकर आकाश में पूरे पल्यंक का आकार रचते हैं । तो यहाँ क्या ऐसा समझना कि ये दो नक्षत्र विमान आकाश में हमेशा जुड़े रहते हैं ?

(ii) इससे भी महत्त्वपूर्ण प्रश्न दूसरा है । आगमों में ही नक्षत्रों के तारे की संख्या भी बताई गई है, जो निम्नलिखित कोष्ठक में दी जा रही है -

| | **नक्षत्र** | **तारे**[54] |
|---|---|---|
| 1. | आर्द्रा चित्रा स्वाति | 1 |
| 2. | पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्रपदा | 2 |
| 3. | मृगशीर्ष पुष्य ज्येष्ठा अभिजित् श्रवण अश्विनी भरणी | 3 |
| 4. | अनुराधा पूर्वाषाढा उत्तराषाढा | 4 |
| 5. | रोहिणी पुनर्वसु हस्त विशाखा धनिष्ठा | 5 |
| 6. | आश्लेषा कृत्तिका | 6 |
| 7. | मघा | 7 |
| 8. | मूल | 11 |
| 12. | रेवती | 32 |
| 13. | शतभिषा | 100 |

इन तारों की संख्या से क्या समझना ? टीकाकार अभयदेवसूरि म.[55] ने तो इसे ही नक्षत्र का स्वरूप कहा है ।

(iii) एक चन्द्र के परिवार में नक्षत्र 28 और तारे तो 66975 करोड़ करोड़ कहे गए हैं । अतः यदि तारों को नक्षत्रों के बीच विभाजित किया जाए तो एक नक्षत्र में हजारों कोटाकोटि तारे होंगे । इसकी जगह केवल

एक, दो, पाँच या सौ तारे क्यों कहे गए ?

(iv) एक और ध्यानार्ह मुद्दा यह है कि आर्द्रा, चित्रा और स्वाति नक्षत्र में तो एक ही तारा कहा गया है । इसका तात्पर्य क्या समझना ? इनमें एक तारा नक्षत्र से भिन्न है या उस एक तारे को ही नक्षत्र कहा गया है ?

यहाँ प्रसंग संगति से यह वर्णन करना भी उचित होगा कि विज्ञान के अनुसार नक्षत्रों की उत्पत्ति कैसे हुई ? नक्षत्रों की उत्पत्ति समझने के लिए हमारी कल्पना को उस काल में ले जाना होगा, जब मनुष्यों के पास काल मापने के कोई साधन नहीं थे । इससे किसी भी घटना (जैसे- किसी बालक का जन्म वगैरह) को कितना समय हुआ, यह जानने में कठिनाई होती थी । अतः उस काल के मनुष्य समय मापने के लिए कुछ उपाय खोजने लगे । जब उन्होंने आकाश में देखा तो पता चला कि चन्द्र पहले दिन एक तारे के पास था तो दूसरे दिन दूसरे तारे के पास । तीसरे दिन चन्द्र तीसरे तारे के पास पहुँच गया । इस तरह उन्होंने देखा कि 28वें दिन चन्द्र पुनः उसी तारे के पास आ गया, जिस तारे के पास वह पहले दिन था । अतः उन्होंने 27 तारों को उनके आसपास के तारों के साथ मिलाकर उनमें कुछ आकारों की कल्पना की और उन 27 तारासमूह[56] के भिन्न-भिन्न नाम रख दिए । ये तारासमूह ही नक्षत्र कहलाए । जैसे- 5 तारों से मिलकर हाथ की आकृति बनती थी इसलिए उस तारासमूह का हस्त नक्षत्र नाम रखा गया । इस तरह आकाश के 27 भाग सहज ही हो गए । तत्पश्चात् क्रमशः मास, वर्ष आदि गणित का विकास हुआ एवं घटिका आदि कालमापक यन्त्र भी बनाए गए । इस तरह विज्ञान में तारों और नक्षत्रों में मात्र संज्ञाभेद है । सूर्य एवं चन्द्र के मार्ग में आने वाले कुछ तारों या तारासमूह को नक्षत्र संज्ञा दे दी गई है ।

यह विज्ञान का मत है । इसमें वर्णन किए गए नक्षत्रों के आकार एवं तारों की संख्या जैन शास्त्रों में बताए गए संस्थान एवं तारों की संख्या से बहुत कुछ मेल खाती है । किन्तु जैन शास्त्रों में ही अन्यत्र नक्षत्र एवं तारों को भिन्न भी कहा है । उनके विमान, आयुष्य, ऋद्धि, गति आदि भी भिन्न कही गई है । यदि हम विज्ञान को स्वीकारेंगे तो शास्त्र के इन वर्णन में आपत्ति होगी । यहाँ तो सिर्फ विचार पेश किए जा रहे हैं, निर्णय तो विद्वज्जन करें ।

**6. हस्तोत्तरा उर्फ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र –** प्रभु महावीर के च्यवन, जन्म आदि उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में हुए एवं निर्वाण स्वाति नक्षत्र में हुआ (सू. 8-100) । यहाँ मुख्यतया इस नक्षत्र के नाम सम्बन्धी चर्चा करना अभिप्रेत है । वेद में इन (पूर्वा या उत्तरा) फाल्गुनी का अर्जुनी नाम प्राप्त होता है[57] । यहाँ सूत्रकार इसे 'हस्तोत्तरा' नक्षत्र कहते हैं । वृत्तिकार[58] ने इसके दो अर्थ किए हैं - हस्त नक्षत्र से जो उत्तर दिशा में है अथवा हस्त नक्षत्र जिसके उत्तर (= बाद) में है, वह उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र । प्राचीन जैन ग्रन्थ सूर्यप्रज्ञप्ति आदि में इस नक्षत्र का नाम उत्तराफाल्गुनी ही प्राप्त होता है । अतः यहाँ प्रश्न होता है कि ग्रन्थकार ने इसका हस्तोत्तरा नाम से क्यों उल्लेख किया ? यहाँ दो सम्भावनाएँ प्रतीत होती हैं -

(i) पहली, सम्भव है कि ग्रन्थकार के समय तक इस नक्षत्र का नाम उत्तराफाल्गुनी प्रसिद्ध न हुआ हो, इसे हस्तोत्तरा नाम से ही पहचाना जाता हो !

(ii) अथवा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के एकदम अन्तिम भाग को दर्शाने के लिए ग्रन्थकार ने हस्तोत्तरा शब्द का प्रयोग किया हो ।

अलबत्त, इस बाबत में सम्भावना ही प्रगट की गई है, निर्णय तो अन्य-अन्य ग्रन्थों के अवलोकन द्वारा हो सकता है ।

**7. प्रभु महावीर के आनुवांशिक गुण –** कल्पसूत्र की प्रसिद्ध बात है कि प्रभु ने सोम ब्राह्मण को आधा देवदूष्य ही दिया । वहाँ 'प्रभु द्वारा आधा वस्त्र ही देने का कारण क्या ?' इस विषयक विभिन्न मत दिए गए हैं । उनमें से एक मत है कि प्रभु पहले ब्राह्मण कुल के गर्भ में पधारे थे, तत्पश्चात् गर्भसंक्रमण [दशा. सू. 8-128] द्वारा क्षत्रियकुल में जन्म लिया । उस ब्राह्मण कुल के संस्कार वश प्रभु ने आधा वस्त्र ही दान में दिया ।

यह बात आधुनिक विज्ञान द्वारा भी सिद्ध होती है । आनुवांशिक गुण तो किसी भी व्यक्ति में DNA से आते हैं और DNA रज एवं वीर्य द्वारा सन्तान में संक्रमित होता है । तत्पश्चात् गर्भवती स्त्री द्वारा किए गए आहारादि से उस बालक पर होने वाले वातावरण के प्रभाव को बदला जा सकता है किन्तु DNA से आने वाले आनुवांशिक गुणों (एवं रोगों) को नहीं बदला जा सकता । स्त्री की रज पुरुष के वीर्य द्वारा फलित होने पर गर्भ निष्पन्न होता है । प्रभु महावीर के वृत्तान्त में ये रज और वीर्य दोनों ब्राह्मण कुल के ही थे क्योंकि उनके गर्भ की निष्पत्ति तो देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में हुई थी । अतः प्रभु में DNA ब्राह्मण कुल से आया था, जिसके फलस्वरूप आनुवांशिक गुण भी प्रभु में ऋषभदत्त ब्राह्मण एवं देवानन्दा ब्राह्मणी के ही आए होंगे । जैसे- बालक का देखाव, चेहरा वगैरह उसके माता या पिता से मिलता है । (लोकव्यवहार में ऐसा कहा जाता है कि यह बालक इसके पापा या मम्मी पर गया है ।) इसी तरह सम्भव है कि प्रभु के देखाव में भी ऋषभदत्त ब्राह्मण या देवानन्दा ब्राह्मणी से साम्य हो !

**8. प्रभु महावीर का गुणनिष्पन्न नाम –** प्रभु के गर्भकाल दरम्यान माता-पिता के राज्य में धन-धान्यादि की अभिवृद्धि होने से प्रभु का नाम वर्धमान रखा गया (सू. 201) । यहाँ प्रभु के नामकरण की वर्तमान प्रचलन के साथ तुलना करने का उपक्रम है । वर्तमानकाल में प्रायः जन्म राशि के अनुसार नाम रखे जाते हैं किन्तु उपरोक्त चर्चाओं में यह सुस्पष्ट किया जा चुका है कि उस काल में राशि का प्रचलन तो था ही नहीं । आरम्भसिद्धि आदि ग्रन्थों में नक्षत्रों के चरण अनुसार अक्षर बताए गए हैं, जैसे- अश्विनी नक्षत्र के चार चरण में क्रमशः चु चे चो ला । यहाँ विशेष ध्यान देने योग्य वात यह है कि प्रभु का नाम नक्षत्र के अनुसार भी नहीं है । ऐसी सम्भावना प्रतीत होती है कि उस काल में नक्षत्रों के आधार पर भी नाम रखने की प्रथा नहीं होगी । ऐसे विशिष्ट महापुरुषों के नाम प्रायः गुणनिष्पन्न ही रखे जाते होंगे ।

**9. काल निर्देश –** इस ग्रन्थ में प्रभु महावीर आदि के कल्याणकों के वर्णन के अवसर पर काल का निर्देश किया गया है । उनमें से प्रभु महावीर के पाँच कल्याणक और गर्भ संक्रमण के काल को हम संक्षेप में निम्नलिखित तालिका से समझ सकते हैं -

| प्रभु महावीर के पाँच कल्याणक का समय | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| **सूत्र क्रमांक** | **घटना** | **ऋतु** | **मास** | **पक्ष** | **तिथि/नक्षत्र** | **विशेष** |
| 101 | देवानन्दा माता की कुक्षि में च्यवन | ग्रीष्म | चौथा | आठवां | अषाढ शुक्ल 6 उत्तराफाल्गुनी | अवसर्पिणी के चौथे आरे में 75 वर्ष और साढ़े 8 मास शेष, मध्यरात्रि |
| 128 | त्रिशला माता की कुक्षि में गर्भसंक्रमण | वर्षा | तीसरा | पाँचवां | आश्विन कृष्ण 13 उत्तराफाल्गुनी | मध्यरात्रि |

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 191 | जन्म कल्याणक | ग्रीष्म | पहला | दूसरा | चैत्र शुक्ल 13 उत्तराफाल्गुनी | मध्यरात्रि, प्रथम चन्द्रयोग, सभी ग्रह उच्चस्थान में, पृथ्वी-पवन-दिशाएँ आदि सभी अनुकूल |
| 209 | दीक्षा कल्याणक | हेमन्त | पहला | पहला | मृगशीर्ष कृष्ण 10 उत्तराफाल्गुनी | पूर्वगामी छाया, प्रमाणप्राप्त पोरसी, सुव्रत दिवस, विजय मुहूर्त |
| 218 | केवलज्ञान कल्याणक | ग्रीष्म | दूसरा | चौथा | वैशाख शुक्ल 10 उत्तराफाल्गुनी | पूर्वगामी छाया, प्रमाणप्राप्त पोरसी, सुव्रत दिवस, विजय मुहूर्त |
| 221 | निर्वाण कल्याणक | वर्षा | चौथा | सातवां | कार्तिक कृष्ण 15 (अमावास्या) स्वाति | चन्द्र नामक द्वितीय संवत्सर, प्रीतिवर्धन मास, नन्दिवर्धन पक्ष, अग्निवैश्य दिवस, देवानन्दा या निरति रात्रि, नाग करण, सर्वार्थसिद्ध मुहूर्त, अर्च लव, सिद्ध स्तोक, सुप्त प्राण |

इस काल निर्देश के सम्बन्ध में कुछ विशिष्ट बिन्दु यहाँ प्रस्तुत हैं -

(i) जन्म कल्याणक का महत्त्व- प्रभु के पाँच कल्याणक में से केवल जन्म कल्याणक में ही सभी ग्रह उच्च स्थान में कहे गए हैं । जन्म कल्याणक के समय पर शुभ शकुन उपस्थित होते हैं, ऐसा वर्णन है । इससे ऐसा सिद्ध होता है कि प्रभु के जन्म कल्याणक का विशिष्ट महत्त्व पूर्व काल से ही चला आ रहा है ।

(ii) प्रथम चन्द्रयोग- जन्म कल्याणक के समय प्रथम चन्द्रयोग होने का निर्देश ग्रन्थकार ने किया है । यह चन्द्र योग नक्षत्र के साथ होने वाले चन्द्र के योग से भिन्न है । वृत्तिकार[59] ने इसके दो अर्थ किए हैं - (a) चन्द्र का बल प्रधान होने पर अथवा (b) चन्द्र की होरा होने पर । इन अर्थ में थोड़ी तकलीफ है । चन्द्र की होरा का सम्बन्ध राशि पद्धति से है । राशि के अर्धभाग ($15^0$) को होरा कहा जाता है । तथा यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि प्राचीन भारत में राशि पद्धति प्रचलित नहीं थी । इसलिए दूसरा अर्थ संगत नहीं होगा । प्रथम अर्थ में चन्द्र का बल कहा गया है किन्तु तीर्थंकर भगवन्त के जन्म समय तो सभी ग्रह बलवान होते हैं, यहाँ चन्द्रबल को पृथक् कहने की क्या आवश्यकता है ? इस तरह दोनों अर्थों से यहाँ पूर्ण समाधान नहीं होता है । शायद इसीलिए वृत्तिकार ने आगे लिखा है कि बुद्धिमान[60] पुरुष को वृद्ध आचार्यों के उपदेश अनुसार अन्य प्रकार से इसका अर्थ समझ लेना चाहिए ।

(iii) इसी तरह निर्वाण कल्याणक में चन्द्र नामक द्वितीय संवत्सर निर्दिष्ट किया है । अर्थात् एक युग के पाँच संवत्सरों में से दूसरे चन्द्र संवत्सर के चौथे मास में प्रभु का निर्वाण हुआ । तत्पश्चात् 3 वर्ष और साढ़े 8 मास तक चौथा आरा प्रवर्तमान रहा । उस युग के साथ ही चौथा आरा भी समाप्त हुआ और पाँचवें आरे का प्रारम्भ हुआ । निर्वाण कल्याणक के अलावा अन्य कल्याणकों में संवत्सर का उल्लेख नहीं है ।

(iv) निर्वाण कल्याणक का समय बताते हुए ग्रन्थकार ने मास, पक्ष, दिवस, रात्रि, मुहूर्त, लव, स्तोक और प्राण के नामों का उल्लेख किया है । अन्य किसी भी कल्याणक में ऐसा उल्लेख नहीं है । प्राण तक के सूक्ष्म काल का वर्णन अपने आप में अद्भूत है ।

(v) ग्रन्थकार ने प्रायः सभी जगह तिथि के साथ पक्ष शब्द रखा है । जैसे- छट्ठीपक्खेणं इत्यादि । निर्वाण कल्याणक की व्याख्या में वृत्तिकार[61] ने इस पक्ष शब्द के तीन अर्थ किए हैं- (a) दिन का पश्चाद् भाग = रात्रि अथवा (b) कार्तिक बहुल पक्ष का चरम भाग = अमावस्या अथवा (c) अमावास्या का अंतिम भाग । पक्ष शब्द की इन सभी व्याख्याओं में पश्चाद् भाग या अन्तिम भाग ही समान दिख रहा है ।

(iv) निर्वाण कल्याणक की अमावास्या तिथि को पंद्रहवीं तिथि कहा गया है । इसका कारण तो स्पष्ट ही है कि पूर्वकाल में पूर्णिमान्त मास प्रचलित था और अभी गुजरात में अमान्त मास प्रचलित है । अतः ऐसा सम्भव है कि जबसे अमान्त मास प्रचलित हुआ होगा, तबसे पूर्णिमा को 15 और अमावास्या को 30 लिखने का प्रचलन हुआ होगा ।

**10. भस्मकराशि ग्रह –** जैन ज्योतिष और जैनेतर ज्योतिष में एक मुख्य भेद यह है कि जैनेतर ज्योतिष में सूर्य-चन्द्र को ग्रह कहा गया है जबकि जैन शास्त्रों में सूर्य-चन्द्र को ग्रह नहीं माना गया है । जैन ज्योतिष में ग्रह-नक्षत्र-तारों को चन्द्र का परिवार कहा गया है । एक चन्द्र के परिवार में 88 ग्रह बताए गए हैं । जैनेतर ज्योतिष में मुख्य 9 ग्रह बताए गए हैं ।

जैन ज्योतिष में दर्शाए गए 88 ग्रहों में से अधिकतर ग्रहों के नाम भी प्रसिद्ध नहीं हैं । उनकी स्थिति आदि के बारे में भी कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होते । ऐसा ही एक अप्रसिद्ध ग्रह है- भस्मकराशि या भस्मराशि ग्रह । इस ग्रह की विशिष्टता यह है कि इसका उल्लेख पर्युषणाकल्प अध्ययन के मूलसूत्र (226) में प्राप्त होता है । ग्रन्थकार ने इसे महाग्रह कहा है । उसी सूत्र से इस ग्रह के स्वभाव और स्थिति का भी पता चल जाता है । यह ग्रह क्षुद्र अर्थात् क्रूर स्वभाव वाला है तथा इसकी स्थिति 2000 वर्ष प्रमाण है । जिस रात्रि में प्रभु निर्वाण को प्राप्त हुए, उसी रात्रि में यह ग्रह प्रभु के जन्मनक्षत्र में संक्रान्त हुआ । इस क्रूर ग्रह की इस संक्रान्ति का फलकथन भी किया गया है, जो प्रसिद्ध ही है । इस तरह हमें इस अप्रसिद्ध ग्रह के स्वभाव, स्थिति, संक्रान्ति और फल का उल्लेख मिलता है ।

यहाँ इस ग्रह की वर्तमान में प्रचलित ज्योतिष के साथ तुलना प्रस्तुत है । वर्तमान में यह ग्रह कौन-सा है ? कहाँ है ? वर्तमान में तो 2000 वर्ष की स्थिति वाला कोई ग्रह नजर में नहीं आता । इस ग्रह के सम्बन्ध में दो सम्भावनाएँ प्रतीत होती हैं-

(i) छायाग्रह- वर्तमान में प्रचलित ज्योतिष शास्त्र में कई सारे छायाग्रह माने गए हैं । छायाग्रह उन्हें कहते हैं जो वास्तविक ग्रह नहीं होते अर्थात् आकाश में उस ग्रह के स्थान में कोई वास्तविक अवकाशी पिण्ड देखने को नहीं मिलता किन्तु गणित के आधार से इन बिन्दुओं का स्थान निश्चित किया जाता है । जैसे- राहु-केतु । प्रचलित खगोल शास्त्र[62] में राहु-केतु कोई वास्तविक ग्रह नहीं हैं, वे काल्पनिक बिन्दु हैं । चन्द्र की भ्रमणकक्षा (Orbit) सूर्य के मार्ग (क्रान्तिवृत्त / Elliptic orbit) को जिन दो स्थानों पर काटती है (Moon nodes), उन्हें ही राहु-केतु माना गया है । ऐसे देखा जाए तो ये वास्तविक ग्रह नहीं हैं क्योंकि राहु-केतु के स्थान पर टेलीस्कोप (Telescope) द्वारा भी कोई अवकाशी पिण्ड नहीं दिखाई देता है किन्तु फलकथन में ये दो बिन्दु (काल्पनिक होने के बावजूद भी) बहुत महत्त्वपूर्ण होने से इन्हें ग्रह की तरह ही जन्मकुंडली में रख दिया जाता है । ऐसे अनेक छायाग्रह ज्योतिष शास्त्र में प्रचलित हैं । इनके अन्य उदाहरण हैं- गुलिक मान्दि भ्रातृसहम आदि । केरल में आज भी गुलिक को कुण्डली में स्थान दिए

बिना फलकथन नहीं होता । इस पूर्वभूमिका के साथ मूलविषय का अनुसन्धान करते हैं । भस्मराशि ग्रह के बारे में प्रथम सम्भावना ऐसी लगती है कि यह कोई वास्तविक ग्रह न होकर छायाग्रह हो सकता है तथा गणित के आधार से इसका स्थान निश्चित किया जाता होगा ।

(ii) लघुग्रह- मंगल (Mars) और गुरु (Jupiter) ग्रह के बीच में सैकड़ों लघुग्रह (Asteroids) हैं । सम्भव है कि भस्मराशि ग्रह उनमें से कोई एक लघुग्रह हो । यद्यपि इन लघुग्रहों को आँख से नहीं देखा जा सकता है, यह भी एक ध्यानार्ह बाबत है । ग्रन्थकार ने इस ग्रह को क्षुद्रात्मा कहा है । यहाँ क्षुद्र का अर्थ क्रूर दिया है किन्तु शुद्र का अर्थ लघु भी हो सकता है । अतः क्षुद्रात्मा का अर्थ लघु स्वरूप वाला ग्रह भी हो सकता है । यहाँ एक शंका हो सकती है कि यदि क्षुद्रात्मा से ग्रंथकार को लघुग्रह अर्थ अभिप्रेत है तो उन्होंने इसे महाग्रह क्यों कहा ? इसका समाधान ऐसे हो सकता है कि इसकी 2000 वर्ष जितनी लम्बी स्थिति होने से इसे महाग्रह कह दिया हो । संक्षेप में, क्षुद्रात्मा = लघुग्रह और महाग्रह = दीर्घस्थिति वाला ग्रह ।[63]

अलबत्त, यह सब सम्भावना के तौर पर ही कहा गया है । इस ग्रह की 2000 वर्ष जितनी दीर्घ स्थिति को देखते हुए कहना मुश्किल है कि यह ग्रह क्या होगा ? इतनी दीर्घ स्थिति वाले ग्रह की कल्पना भी दुष्कर है ।

इस ग्रह से सम्बन्धित एक और महत्त्वपूर्ण मुद्दा इसकी संक्रान्ति है । ग्रन्थकार ने लिखा है कि प्रभु के निर्वाण के दिन ही यह ग्रह प्रभु के जन्म नक्षत्र में संक्रान्त हुआ । वृत्तिकार[64] ने कहा है कि यहाँ नक्षत्र शब्द से राशि ही लेना चाहिए और जन्म नक्षत्र में संक्रान्ति का अर्थ जन्मराशि में संक्रान्त हुआ, ऐसा समझना चाहिए । नक्षत्र और राशि का अन्तर तो सभी को सुविदित ही है । एक राशि में सवा दो नक्षत्र का समावेश होता है । गाणितिक आंकड़ों में यदि कहें तो एक नक्षत्र में 13 अंश 20 कला ($13^0 20'$) होते हैं जबकि एक राशि में 30 अंश ($30^0$) होते हैं । उपर्युक्त चर्चाओं में यह तो स्पष्ट हो चुका है कि ग्रन्थ रचना के समय तक भी राशियों का प्रचलन भारत में नहीं था तो यहाँ 'नक्षत्र' शब्द का अर्थ 'राशि' कैसे कर सकते हैं ? दूसरे तरीके से विचारा जाए तो यदि ग्रन्थकार को नक्षत्र शब्द से राशि ही अभिप्रेत है तो वे सूत्र में ही राशि शब्द लिख सकते थे, उन्होंने नक्षत्र शब्द ही क्यों लिखा ?

जो भी हो, प्रभु के निर्वाण को 2500 से भी ज्यादा वर्ष हो चुके हैं और इस भस्मराशि ग्रह की स्थिति तो 2000 वर्ष ही है । अतः अभी हम इतना अनुमान कर सकते हैं कि वर्तमान में यह ग्रह सम्भवतः हस्त नक्षत्र में होना चाहिए [और वृत्तिकार के मत से तुला राशि में होना चाहिए] ।

**11. युग की अवधारणा –** प्रभु का निर्वाण युग के द्वितीय चन्द्र नामक संवत्सर में हुआ था । इस प्रसंग संगति से यहाँ युग के विषय में कुछ मननीय और कुछ विचारणीय चर्चा प्रस्तुत है ।

जैन शास्त्रों में एक युग 5 वर्ष का माना गया है । 5 वर्ष में से तीसरे और पाँचवे वर्ष में एक-एक मास अधिक होता है इसलिए इन वर्ष को अभिवर्धित कहा जाता है । शेष तीन वर्षों का आधार चन्द्र की गति होने से उन्हें चन्द्र वर्ष कहा जाता है । इस तरह जैन शास्त्रों के एक युग में पाँच वर्ष इस क्रम से होते हैं- चन्द्र चन्द्र अभिवर्धित चन्द्र अभिवर्धित । सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष करण्डक वगैरह जैन ग्रन्थों में इस युग के आधार पर ही ज्योतिष चक्र का गणित प्रस्तुत किया गया है ।

इस युग की अन्य-अन्य शास्त्रों से तुलना करने के लिए यह उपक्रम है । अन्य शास्त्रों में वर्णित युग देखने से

पहले हम 'युग मानने की आवश्यकता क्यों पड़ी ?' इस बात को समझ लेते हैं ।[65]

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि ज्योतिष शास्त्र की शुरुआत फलकथन के लिए नहीं हुई थी किन्तु काल को मापने के लिए हुई थी । काल को मापने के लिए किसी शाश्वत आधार की जरुरत थी इसलिए हमारे पूर्वज (अति पूर्वज) मनुष्यों ने आकाश में घूमते हुए ज्योतिष पिण्डों को काल मापने के लिए आधार बनाया । दिन और रात उन्हें प्रतिदिन स्पष्ट ज्ञात होते थे लेकिन आयुष्य मापना वगैरह सामाजिक कार्यों के लिए यह ईकाई बहुत छोटी है । तब उन्होंने दूसरी ईकाई के लिए चन्द्र की हानि-वृद्धि को आधार बनाया । चन्द्र की हानि-वृद्धि भी उन्हें रोज दिखती थी । अतः एक पूर्णिमा से दूसरी पूर्णिमा तक के समय को मास कहा गया । [संस्कृत भाषा का मास् शब्द = चन्द्र ।]

उस समय मनुष्य जाति कृषि प्रधान थी तथा कृषि के लिए ऋतुओं का ज्ञान अत्यावश्यक है । फलतः ऋतुओं के ज्ञान के लिए 'वर्ष' नामक ईकाई का आयोजन किया गया । [वर्ष = वर्षा, बारिश] एक वर्षा ऋतु के आरंभ से दूसरी वर्षा ऋतु के आरंभ को 'वर्ष' कहा गया ।

इस तरह मास चन्द्र आधारित हो गया और वर्ष सूर्य आधारित हो गया क्योंकि मास पूर्णिमा-से-पूर्णिमा माना था और वर्ष ऋतु के आधार पर गिना जाता था तथा ऋतुएँ सूर्य आधारित होती हैं । लेकिन कुछ सालों के लेखे-जोखे से यह स्पष्ट हो गया कि 12 मास का वर्ष मानने से ऋतुएँ पीछे रह जाती हैं । ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि वस्तुतः चन्द्र मास 29.5 दिन का है और सौर वर्ष 365.24 दिन का लेकिन उन पूर्वजों ने मास 30 दिन का माना था और वर्ष (12×30=) 360 दिन का । अतः बीच-बीच में अधिक मास मानने की व्यवस्था अस्तित्व में आई ।

इस तरह अहोरात्र, मास और वर्ष, इन तीनों के बीच सम्बन्ध खोजने के प्रयासों के साथ ही ज्योतिषशास्त्र के जटिल गणित की शुरुआत हुई । एक ऐसे कालखण्ड को खोजने का प्रयास किया जाने लगा, जिसमें इन तीनों ईकाईयों का सम्बन्ध बराबर बैठ जाए । वह कालखण्ड समान रूप से हमेशा पुनरावर्तित होता रहे । उसमें कोई सुधार न करना पड़े । इस कालखण्ड को ही 'युग' संज्ञा दी गई ।

कालज्ञान का कितना महत्त्व था, इसका अंदाज इसी बात से हम लगा सकते हैं कि प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं में पुरोहित (या पुरोहित स्थानीय ज्ञाति) को सूर्य-चन्द्रादि की गति से काल जानकर ऋतुओं, ग्रहणों आदि की आगाही करने का कार्य सौंप दिया गया था । राजसभाओं में इन पुरोहितों का बड़ा महत्त्व होता था ।

युग के थोड़े और कठिन गणित में जाने से पहले हम युग विषयक अलग-अलग मान्यताओं को देख लेते हैं-

(i) बेबीलोन संस्कृति का युग[66] (प्रायः ई. पू. 1000-800 वर्ष)- बेबीलोन के ज्योतिषियों ने ग्रहणों की भविष्यवाणी करने के लिए 223 चान्द्र मास (18 वर्ष और लगभग 11 दिन) के 'सारॉस्' नामक युग का आविष्कार किया था । ऐसे एक युग में ग्रहणों का जैसा सिलसिला चलता है, वैसा ही दूसरे युग में भी चलता है ।

(ii) मनुस्मृति का युग[67]- मनुस्मृति में ब्रह्मा के एक दिन को कल्प कहा गया है । एक कल्प में 14 मनु होते हैं और एक मनु में 71 युग (महायुग) होते हैं । इस तरह 14 मनु में कुल (14×71=) 994 युग हुए । 6 युग मनुसन्धि (या मन्वन्तर) के रूप में माने हैं अर्थात् मनु के बीच-बीच में माने हैं । इस प्रकार एक

कल्प में कुल (994+6=) 1000 युग माने हैं । एक युग (महायुग) में भी चार छोटे युग होते हैं- कृतयुग (सत् युग) त्रेतायुग द्वापरयुग कलियुग । इन चार युगों की कालावधि 4:3:2:1 के अनुपात (ratio) में क्रमशः 1728000, 1296000, 864000 और 432000 वर्ष हैं । अतः एक युग में 4320000 (तेतालीस लाख बीस हजार) वर्ष होते हैं । प्रत्येक युग के अन्त में सृष्टि और प्रलय की भी मान्यता है ।

(iii) वेदांग ज्योतिष में युग[68] (प्रायः ई. पू. 500 वर्ष)- वेदांत ज्योतिष में 5 वर्ष का युग माना गया है । 5 साल में 62 चान्द्र मास होते हैं अर्थात् 2 मास अधिक हो जाते हैं । वर्ष करीब 366 दिन का होता है ।

(iv) जैन युग (प्रायः ईस्वी की प्रथम शती)- जैन शास्त्रों में भी वेदांग ज्योतिष की तरह ही 5 वर्ष का युग कहा गया है, जिसका वर्णन इस लेख के प्रारम्भ में किया जा चुका है ।

(v) आर्यभट युग[69] (ईस्वी की पाँचवीं शती)- आर्यभट ने एक कल्प में 14 मनु और 1 मनु में 72 युग माने हैं । इस तरह एक कल्प में कुल (14×72=) 1008 युग होते हैं । एक युग 4320000 साल का चुना है । एक युग को चार युगपाद (छोटे युग) में विभाजित किया है । प्रत्येक युगपाद 1080000 वर्ष प्रमाण होता है ।

मनुस्मृति और आर्यभट के युगों में मुख्य दो भेद हैं - (a) मनुस्मृति में मनु के बीच-बीच में मनुसन्धि या मन्वन्तर काल्पनिक हैं, 1000 की संख्या को पूर्ण करने के लिए माने गए हैं जबकि आर्यभट की युग पद्धति में मनुसन्धि का कोई स्थान नहीं है । एक मनु पूर्ण होने के बाद तुरन्त दूसरा मनु शुरु हो जाता है ।

(b) मनुस्मृति में चार छोटे युग को समान कालावधि का नहीं कहा है जबकि आर्यभट ने समान कालावधि कही है । अलबत्त, प्रस्तुत चर्चा में तो 4320000 वर्ष के युग (= महायुग) का ही प्रयोजन है, जिसका प्रमाण दोनों में समान कहा गया है ।

अब पुनः मूल मुद्दे पर आते हैं [गणित का थोड़ा High Dose] अहोरात्र, मास और वर्ष के बीच समुचित सम्बन्ध स्थापित करना ज्योतिष गणित की एक प्रमुख समस्या रही है । सैकड़ों वर्षों से इनके समीकरण बिठाने का प्रयास किया जा रहा है । सबसे मुख्य आशय यही था कि मास और वर्ष के साथ ऋतुओं का सुमेल बैठ जाए । इन तीनों ईकाई का मेल बिठाना कितना कठिन है, इसे एक उदाहरण से समझते हैं । वेदांग ज्योतिष और जैन शास्त्रों में 5 वर्ष का युग चुनकर बताया है कि एक युग में 62 चान्द्र मास, 60 सौर मास, 1830 दिन और 1860 तिथियाँ (= चान्द्र दिन) होते हैं । इस व्यवस्था से चान्द्र मास करीब 29.516 दिन का पड़ता है और वर्ष करीब 366 दिन का । जबकि आधुनिक यन्त्रों से मापा गया चान्द्र मास करीब 29.53 दिन का होता है और वर्ष 365.25 दिन का । अतः स्पष्ट है कि 5 वर्ष के युग में भी दिवस, मास और वर्ष का जो सम्बन्ध स्थापित किया है, वह स्थूल है ।[70]

दिवस, मास और वर्ष का मेलाप कराने में सबसे बड़ी बाधा यही है कि सूर्य-चन्द्र आदि की कुदरती गतियाँ पूर्णांक में नहीं, अपूर्णांक में हैं । अपूर्णांक में भी दशमलव (decimal) के बाद अत्यन्त लम्बे आंकड़े तक उनका गणित पहुँच जाता है । जैसे- चान्द्र मास का मान 29.5305881 दिन अथवा 29 दिन 12 घंटे 44 मिनिट 2.8 सेकंड है । वर्ष का प्रमाण 365.25636042 दिन या 365 दिन 6 घंटे 9 मिनिट 9.5 सेकंड ! कितनी हद तक अपूर्णांक हिसाब ![71] अतः कितने वर्ष बाद मास और वर्ष, दोनों एक साथ पूर्ण होंगे, यह

निश्चित तौर पर जानना बहुत कठिन है ।

यहाँ एक बात अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि वर्तमान काल में LASER वगैरह के उपकरणों से मास, वर्ष आदि का निश्चित प्रमाण जानना और उनका गणित करना काफी सरल हो गया है किन्तु प्राचीन काल के खगोलविद् गणितज्ञ तो आकाश में देखकर यह सब गणित स्वयं करते थे ।

युग का गणित करने में सबसे बड़ी कठिनाई भी यही है और युग मानने का कारण भी यही है कि मास और वर्ष एक साथ प्रारम्भ होकर एक साथ खत्म नहीं होते । 5 वर्ष के युग में भी दिवस-मास-वर्ष का सम्बन्ध बराबर नहीं बैठा तो इस सम्बन्ध को ज्यादा बेहतर बनाने के लिए बाद वाले ज्योतिर्विद् गणितज्ञों ने अधिकाधिक लम्बे युग चुने । बेबीलोन के खगोलविदों ने 18 वर्ष लम्बा युग माना । आर्यभट ने तो 4320000 वर्ष लम्बा युग माना, जिससे अपूर्णांक में सूक्ष्म गणित के अत्यधिक निकट पहुँचा जा सके । आर्यभट आधुनिक मान के कितने नजदीक पहुँच गए थे, इस बात का अंदाज हम निम्नलिखित तालिका से लगा सकते हैं-

| आर्यभटीय और आधुनिक मान की तुलना | | | |
|---|---|---|---|
| **क्रम** | **ईकाई**[72] | **आर्यभट के अनुसार मान** | **आधुनिक मान** |
| 1. | नाक्षत्र दिन | 23 घण्टे 56 मिनिट 4.1* सेकंड | 23 घण्टे 56 मिनिट 4.091 सेकंड |
| 2. | नाक्षत्र मास | 27.32167 दिन | 27.32166 दिन |
| 3. | वर्ष | 365.25868 दिन | 365.25636 दिन |
| 4. | चान्द्र मास | 29.530818 | 29.530588 |
| * जिन अंकों में अन्तर है, उन्हें रेखांकित किया है । | | | |

इससे आगे आर्यभट ने उनके एक युग (4320000 वर्ष) में कितने अधिक मास, क्षय तिथि, चन्द्र-सूर्यादि की परिक्रमा वगैरह होंगे, इन सबके प्रमाण दर्शाए हैं ।[73] हमें 29.516 (5 वर्ष के युग में चान्द्र मास के प्रमाण) और 29.5308 (आर्यभट के अनुसार चान्द्र मास के प्रमाण) में बहुत ज्यादा अन्तर नहीं लगता है किन्तु इनमें कितना बड़ा अन्तर पड़ जाएगा, इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि 5 वर्ष की युग पद्धति के अनुसार 110 वर्ष के कालखण्ड में 44 अधिक मास होंगे और आर्यभट के अनुसार लगभग 40 । मात्र 110 वर्ष के कालखण्ड में ही 4 अधिक मास का अन्तर पड़ जाएगा !

अलबत्त, एक ध्यानार्ह मुद्दा यह भी है कि आर्यभट के गणित अनुसार भी दशमलव (decimal) के बाद तीसरे आंकड़े (3rd digit) में आधुनिक मान से फर्क है । अतः भले ही हजार-दो हजार सालों में उनके वर्ष आदि का ऋतुओं से अन्तर मालूम नहीं पड़ता है किन्तु कुछ अधिक हजारों साल बाद तो उसमें भी फर्क अवश्य ज्ञात होगा । सूर्य-चन्द्रादि की अपूर्णांक गतियों को देखते हुए हम समझ सकते हैं कि एकदम सचोट पंचांग बनाना कितना दुष्कर है । (अपूर्णांक की भी कुछ तो हद होती है !!)

संक्षेप में, इस चर्चा के सार रूप में हम निम्नलिखित बिन्दुओं को याद रख सकते हैं -

(i) ज्योतिष शास्त्र का शुभारम्भ काल मापने के लिए हुआ था ।

(ii) चन्द्र को मास का आधार बनाया गया और सूर्य को वर्ष का आधार बनाया गया ।

(iii) कृषिप्रधान समाज में ऋतुओं का ज्ञान अत्यावश्यक था ।

(iv) वर्ष में 12 मास और 1 मास में 30 दिन (या तिथि) मानने से ऋतुएँ पीछे रह जाती थी ।

(v) अहोरात्र, मास और वर्ष का समुचित सम्बन्ध बिठाने के लिए युग की अवधारणा की गई ।

(vi) सूर्य-चन्द्रादि की गतियाँ अपूर्णांक में होने से कुछ वर्षों बाद ज्ञात होता था कि एक युग में भी ऋतुओं और वर्ष में फर्क पड़ जाता है ।

(vii) अत्यन्त लम्बे अपूर्णांक के अत्यधिक समीप पहुँचने के लिए अधिकाधिक लम्बे युगों का गणित किया गया ।

(viii) आर्यभट का 4320000 वर्ष लम्बा युग आधुनिक मान के अत्यन्त निकट हैं ।

FYI-(i) आर्यभट के अनुसार वर्तमान कल्प में (14 में से) 6 मनु, (7वें मनु के 72 युगों में से) 27 युग तथा (एक युग के चार छोटे युगों में से) 3 युगपाद अर्थात् कृतयुग, त्रेतायुग और द्वापरयुग बीत चुके हैं । महाभारत युद्ध के अन्तिम दिन गुरुवार को द्वापरयुग खत्म हुआ था[74] ।

(ii) वर्तमान कलियुग का प्रारम्भ 18 फरवरी 3102 ई.पू. शुक्रवार को हुआ था[75] । (अर्थात् महाभारत का युद्ध 17 फरवरी 3102 ई.पू. को समाप्त हुआ था । इससे नेमिनाथ प्रभु-कृष्ण महाराजा का काल आज से मात्र 5126 वर्ष पूर्व बैठता है ।)

(iii) आर्यभट के अनुसार युग के प्रारम्भ में सभी ग्रह मेष राशि के शून्य अंश पर एकसाथ होते हैं[76] ।

(iv) आर्यभट ने युग, वर्ष, मास और दिवस सबकी शुरुआत चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से मानी है[77] जबकि जैन शास्त्रों में श्रावण बहुल प्रतिपदा से मानी गई है[78] । [इस विधान से निम्नलिखित निष्कर्ष निकल सकते हैं - (a) आर्यभट ने ग्रीष्मऋतु से आदि मानी है जबकि जैन शास्त्रों में वर्षाऋतु प्रथम मानी है ।

(b) आर्यभट ने अमान्त मास माना है, जैन शास्त्रों में पूर्णिमान्त मास माना है ।

(c) आर्यभट का जन्म विदर्भ देश में माना गया है[79] । वहाँ आज भी चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को गुड़ी पड़वा नाम से वर्षारम्भ उत्सव मनाया जाता है ।]

इस लेख को आर्यभट के ही श्लोकार्ध से समाप्त करना चाहूँगा, जिसका भावार्थ जैन शास्त्रों को भी सम्मत ही है -

कालोऽयमनाद्यन्तो ग्रहभैरनुमीयते क्षेत्रे ।। [आर्यभटीय 3.11]

यह काल अनादि-अनन्त है (किन्तु लोकव्यवहार के लिए) आकाश में ग्रह और नक्षत्रों (की गति) द्वारा मापा जाता है ।

**12. ऋषभदेव प्रभु के कल्याणक –** प्रस्तुत ग्रन्थ में ऋषभदेव प्रभु को चतुरुत्तराषाढ और अभिजित्पञ्चम कहा है (सू.288) अर्थात् ऋषभदेव प्रभु के चार कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र में और पाँचवां निर्वाण कल्याणक अभिजित् नक्षत्र में हुआ है । यहाँ इस विधान की जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति ग्रन्थ के साथ तुलना करना अभिप्रेत है । जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति में ऋषभदेव प्रभु को पंच-उत्तराषाढ और अभिजित्-षष्ठ कहा है[80] अर्थात् वहाँ ऋषभदेव प्रभु के पाँच कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र में और छठा निर्वाण कल्याणक अभिजित् नक्षत्र में कहा है । इसका कारण यह है

कि जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में ऋषभदेव प्रभु के राज्याभिषेक की भी विवक्षा की गई है इसलिए वहाँ चार कल्याणक के साथ राज्याभिषेक मिलाकर कुल पाँच उत्तराषाढ कहा गया है ।

अलबत्त, एक ध्यानार्ह मुद्दा यह भी है कि राज्याभिषेक कोई कल्याणक नहीं किन्तु उत्तराषाढा नक्षत्र में ही यह प्रसंग होने से उत्तराषाढा नक्षत्र के चार कल्याणकों के साथ इसकी विवक्षा भी कर दी गई है । जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के वृत्तिकार ने स्पष्ट किया है कि जिस घटना में आसन कम्पायमान होने से अवधिज्ञान का प्रयोग करके सभी इन्द्र उपस्थित होते हैं, वही कल्याणक है तथा राज्याभिषेक में ऐसा नहीं होता है । अतः प्रभु वीर के गर्भसंक्रमण की तरह राज्याभिषेक कल्याणक नहीं है[81] ।

**13. पर्युषण पर्व की आराधना –** पर्युषणा का अर्थ है (परि + उषणा) सर्व प्रकार से रहना[82] । इसका तात्पर्य यह है कि पूर्वकाल में साधु-साध्वी चातुर्मास के प्रारम्भ में ही पूरे चार मास के लिए वसति की याचना नहीं करते थे किन्तु 5 दिन के लिए ही वसति की याचना करते थे । इस तरह 5-5 दिन की वृद्धि करते हुए 50वें संवत्सरी के दिन शेष 70 दिन वसति में रहने की अनुज्ञा लेते थे[83] । अतः सर्व प्रकार से रहना यानि पूरे 70 दिन रहना । पर्युषणा की यह सामाचारी है कि प्रभु महावीर से लेकर आचार्य-उपाध्याय आदि सभी साधु-साध्वी वर्षाऋतु का प्रारम्भ होने के 50वें दिन पर्युषणा करते थे अर्थात् 70 दिन एक ही वसति में रहते थे [सू. 322-329] । ग्रन्थकार ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि योग्य वसति मिले तो पर्युषणा करना (अर्थात् विहार बन्द कर एक ही स्थान में रहना) 50 दिन पहले भी कल्पता है किन्तु 50वीं रात्रि का उल्लंघन करना नहीं कल्पता है[84] । वृत्तिकार ने तो और भी कड़क विधान करते हुए कहा है कि यदि साधु ने किसी कारणवश वसति न मिलने से संवत्सरी प्रतिक्रमण किसी वृक्षमूल में (पेड़ के नीचे) किया हो तो शेष 70 दिन भी वहीं करना चाहिए[85] । संवत्सरी प्रतिक्रमण के बाद विहार करना कल्पता नहीं है[86] ।

वर्तमान में तो ऐसी भी एक परम्परा देखने में आती है कि साधु-साध्वी भगवन्त आसपास के क्षेत्रों में पर्युषण पर्व की आराधना कराने आठ दिन के लिए जाते हैं और संवत्सरी पर्व के बाद ही विहार करके पुनः अपने स्थान पर आते हैं । अतः यह एक शोध का विषय है कि चातुर्मास स्थल पर ही सभी आराधना करने की पुरानी परम्परा कब तक चालू रही और मात्र पर्युषण कराने की यह परम्परा कबसे शुरु हुई ?

**14. अन्तिम अध्ययन का नाम –** दसवें अध्ययन में नौ निदान का वर्णन है । इस अध्ययन का मूल नाम, जैसा मूलसूत्र (दशा. सू. 10-470) से ही स्पष्ट है, आयातिट्ठाण अध्ययन है । 'आयातिट्ठाण' शब्द के संस्कृत में दो रूपान्तर हो सकते हैं - आजातिस्थान और आयतिस्थान । आजाति का अर्थ है संसार । आजातिस्थान यानि संसार का स्थान अर्थात् पुनः संसार में उत्पन्न होने के स्थान । निदान से जीव पुनः संसार में भटकता है इसलिए निदान को आजातिस्थान कहा जाता है । निर्युक्तिकार ने आयातिट्ठाण का रूपान्तर आजातिस्थान किया है (आयतिस्थान रूपान्तर वृत्तिकार ने किया है, ऐसा आगे कहा जाएगा) । उन्होंने आजाति शब्द की निक्षेप पद्धति से व्याख्या की है[87] । तत्पश्चात् 'किन दोषों से श्रमण पुनः संसार में भटकता है ?' ऐसा सम्बन्ध जोड़कर निदान शब्द के एकार्थक दिखाकर उसके भी निक्षेप किए हैं[88] ।

चूर्णिकार ने भी पूर्व अध्ययन से इस अध्ययन का सम्बन्ध जोड़ते हुए 'आजातिस्थान' नाम का ही उल्लेख किया है[89] । परन्तु वृत्तिकार ने कहीं भी आजातिस्थान नाम का उल्लेख नहीं किया है । पूर्व अध्ययन के साथ सम्बन्ध जोड़ते हुए भी उन्होंने 'निदान' शब्द को ही मुख्यता दी है । अध्ययन की समाप्ति में भी 'निदानस्थान नामक अध्ययन समाप्त हुआ' ऐसा लिखा है । मात्र अन्तिम सूत्र की व्याख्या में मूलसूत्र के अनुरोध से 'आयतिस्थान'

रूपान्तर की व्याख्या की है[90] । अतः ऐसा प्रतीत होता है कि वृत्तिकार के समय तक इस अध्ययन का नाम 'आजातिस्थान' की जगह 'निदान स्थान' नाम ही प्रसिद्ध हो गया होगा । इस प्रस्तुत प्रकाशन में भी इसी कारण से शीर्षक में निदानस्थान नाम ही रखा गया है ।

इस तरह ग्रन्थ विषयक विशेष बिन्दु समाप्त हुए । इस ग्रन्थ के व्याख्या साहित्य में अभी तक चार व्याख्याएँ ज्ञात हैं - 1. निर्युक्ति 2. चूर्णि 3. ब्रह्मर्षिकृत जनहिता वृत्ति 4. श्री मतिकीर्तिगणि कृत वृत्ति । इनमें से निर्युक्ति और चूर्णि तो प्रकाशित हो चुकी है । ब्रह्मर्षि मुनि कृत जनहिता वृत्ति को यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है । श्री मतिकीर्तिगणि रचित वृत्ति अप्रकाशित है, जिसकी हस्तप्रत 500 से अधिक पृष्ठ की है । इनके अलावा गुजराती जैसी देशी भाषा में अनेक बालावबोध और टबे भी मिलते हैं । उनमें से एक टबार्थ और दो बालावबोध का इस प्रकाशन में समावेश किया है । यहाँ पहले हम वृत्तिकार का परिचय देखने के बाद वृत्ति की ओर आगे बढ़ेंगे ।

## वृत्तिकार श्री ब्रह्म ऋषि (ब्रह्मर्षि मुनि)

वृत्तिकार श्री ब्रह्म ऋषि अपनी सांसारिक अवस्था में चौलुक्य वंश के राजपुत्र थे । इनका जन्म वि.सं. 1568 में मार्गशीर्ष शुदि 15 (पूर्णिमा) के दिन मालवा के आजणोठ गाँव में हुआ था । इनके पिता सोलंकी राजा पद्मराय थे । माता का नाम सीतादे था । इनका सांसारिक नाम ब्रह्मकुंवर था । सं. 1576 में ये अपने बड़े भाई धनराज के साथ द्वारिका की यात्रा के लिए गए थे । वहाँ से गिरनार जाकर रंगमण्डन ऋषि के पास दोनों भाई ने दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा के समय ब्रह्म मुनि की उम्र आठ वर्ष के आसपास ही थी ।

एकदा पाटण में इनकी बरदराज ऋषि से भेट हुई, जिन्होंने पार्श्वचन्द्रसूरि म. के गुरु साधुरत्न पण्डित के गुरु पुण्यरत्न (मुनि ?) के पास दीक्षा ली थी । इन बरदराज ऋषि के साथ धनऋषि और ब्रह्मऋषि ने दक्षिण में विचरण किया । अभ्यास के बाद विजयनगर की सभा में इन्होंने दिगम्बरों को भी पराजित किया था । तब वहाँ राजा ने बदरराज ऋषि को सूरिपद देकर विजयदेवसूरि नाम रखा । विजयदेवसूरि ने पार्श्वचन्द्र मुनि को सूरिपदवी दी, जिनके नाम से पार्श्वचन्द्र (या पायचंद) गच्छ प्रसिद्ध हुआ । विजयदेवसूरि ने ही ब्रह्मऋषि को भी आचार्य पद देकर उनका विनयदेवसूरि नाम रखा ।

सं. 1602 में वैशाख शुक्ल 3 को बुरहानपुर में विनयदेवसूरि ने सुधर्मगच्छ नाम से भिन्न सामाचारी की स्थापना की । इन्होंने सूर्योदय अनुसार तिथि का त्याग किया तथा पक्खि और चौमासी आराधना पृथक् की । कडवागच्छ के साधुओं ने इनका समर्थन किया था । विजयगच्छ के क्षमासागरसूरि भी इनकी सामाचारी में आ गए थे । सं. 1636 में इन्होंने श्रीपुर (शिरपुर) अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ प्रभु की यात्रा की थी । वि.सं. 1646 में ये बुरहानपुर में कालधर्म को प्राप्त हुए । इनके विनयकीर्तिसूरि नामक शिष्य थे । सं. 1646 में ही मनजी ऋषि ने 'विनयदेवसूरि रास' की रचना की थी, जिसमें इनके जीवन चरित्र का वर्णन है ।[91]

इनकी कृतियों पर भी एक दृष्टिपात करते हैं । दशाश्रुतस्कन्ध की प्रस्तुत जनहिता वृत्ति के सिवाय इन्होंने जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र पर भी वृत्ति रची है, जिसका उल्लेख इन्होंने दशाश्रुतस्कन्ध की वृत्ति में भी किया है[92] । इससे ज्ञात होता है कि जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति ये दशाश्रुतस्कन्ध की वृत्ति के पहले ही रच चुके थे । जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति में इन्होंने स्वयं को चौलुक्य वंश का राजपुत्र और पार्श्वचन्द्रसूरि का शिष्य कहा है । जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति इन्होंने अणहिलवाड में रची थी और उसका संशोधन विजयदेवसूरि ने स्वयं किया था । तदुपरान्त

पक्खिसूत्र की वृत्ति भी इनकी एक विशिष्ट रचना है । इसके अलावा इनके द्वारा अनेक भाष, चौपाई, सज्झाय, स्तवन, कुलक, प्रासंगिक काव्य आदि रचे गए हैं । जैन गुर्जर कविओ भा. 1 में इनकी लगभग 20 कृतियों का परिचय दिया है ।

इनकी रचनाओं को देखने पर सबसे पहले इनका विशाल वांचन/अध्ययन हमें सहज ही ख्याल में आता है । अनेक आगमों के आधार पर इन्होंने चरित काव्यों की रचना की है । उत्तराध्ययन के 36 अध्ययन की सज्झाय, लोकनालि बालावबोध वगैरह उदाहरण भी इसी बात की पुष्टि करते हैं । दशावृत्ति के अध्ययन से भी यह पता लग सकता है कि वृत्ति में इन्होंने यत्र-तत्र अनेक स्थल पर आगम, चूर्णि, प्राचीन वृत्ति आदि के पाठों के उद्धरण लिखे हैं ।

इनकी भाषाशैली भी हमारा ध्यान अवश्य खींचती है । संस्कृत भाषा पर तो इनकी पकड़ व्यवस्थित थी ही किन्तु काव्यों में देशी गुर्जर भाषा भी प्रौढ़ और प्रभावशाली है । प्रस्तुत वृत्ति की बात करें तो इसमें इनकी संस्कृत भाषा सरल और स्पष्ट है । प्रायः कहीं भी लम्बे समासों का प्रयोग इन्होंने नहीं किया है । वृत्ति के अन्त में इन्होंने कोई प्रशस्ति नहीं लिखी है, जिससे इनकी गुरु परम्परा, रचनाकाल आदि की जानकारी नहीं मिलती है । इस तरह वृत्तिकार का परिचय हुआ । अब वृत्ति का परिचय...

## ब्रह्मऋषि कृत जनहिता वृत्ति

ब्रह्मऋषि ने जनहिता वृत्ति रचकर बहुत उपयोगी कार्य किया है क्योंकि दशाश्रुतस्कन्ध पर प्रायः कोई प्राचीन वृत्ति या विवरण संस्कृत भाषा में नहीं है । हरिभद्रसूरि म. से लेकर मलयगिरि म. तक के काल में अनेक आगमों पर विशालकाय वृत्तियाँ रची गई किन्तु यह ग्रन्थ प्रायः इनसे अछूता रह गया लगता है । अभी तक इस ग्रन्थ पर उस कालखण्ड की कोई व्याख्या ज्ञात नहीं है । इसकी प्राचीन व्याख्या में फक्त चूर्णि है, जो प्राकृत भाषा में है । अतः यह वृत्ति मन्दमति जीवों के लिए बहुत उपयोगी है । ग्रन्थ के मंगलाचरण में तीर्थंकर जिन, महावीरस्वामी, गौतमस्वामी और स्वयं के गुरुदेव को श्लोकबद्ध नमस्कार करने के बाद वृत्तिकार ने भी यही कहा है कि यद्यपि चूर्णिकार द्वारा इस ग्रन्थ की व्याख्या की गई है तथापि वह अल्प अक्षर वाली होने से मन्दमति जीवों को उपकार करने में असमर्थ है । अतः मेरे द्वारा कुछ विस्तारपूर्वक इस ग्रन्थ की व्याख्या की जा रही है । इससे वृत्तिकार का प्रयोजन भी स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने उपकार-अनुग्रह के लिए वृत्ति की रचना की है ।

अनुबन्ध चतुष्टय दिखाने के बाद वृत्ति में पंच नमस्कार की विस्तृत व्याख्या की गई है । तत्पश्चात् वृत्तिकार ने मूलग्रन्थ की व्याख्या प्रायः चूर्णि के अनुसार ही की है लेकिन निर्युक्ति की व्याख्या नहीं की है ।

वृत्तिकार ने अपनी वृत्ति में अनेक प्रासंगिक विषयों को भी समा लिया है । जैसे - मंगलवाद (सू. 1), पंच नमस्कार की व्याख्या (सू. 1), पाक्षिक पौषध (सू. 34), षष्टितन्त्र के 60 पदार्थ (सू. 108), शक्रस्तव में परतीर्थिकों का खण्डन (सू. 115), चार निक्षेप की सार्थकता (सू. 115), सूर्याभ वर्णक (सू. 160), 24 धान्य - 4 प्रकार के धन (सू. 183), गर्भस्थ शिशु के रोग (सू. 190), ग्रहों के उच्चस्थान (सू. 191), जिनजन्ममहोत्सव (सू. 193), नट आदि कलाविद् (सू. 196, 209), दीक्षा कल्याणक का वर्णन (सू. 208-212), 72 कला - 64 कला - 100 शिल्प (सू. 293), श्रमणोपासक का वर्णन (सू. 464), महावीर प्रभु का वर्णन (सू. 390) । कहीं-कहीं वृत्तिकार ने अत्यन्त रसप्रद साहित्यिक वर्णन किया है, जैसे- आम्रपेशिका

= इसे देखते ही मुँह में पानी छूटता है (सू. 452) । इससे वृत्ति का दार्शनिक-साहित्यिक-सामाजिक आदि दृष्टि से महत्त्व तो बढ़ता ही है, साथ-ही-साथ वाचक को वृत्ति का अध्ययन करते हुए विभिन्न रसों का आस्वाद मिलता है ।

इस वृत्ति की अनेक हस्तप्रतों में से मात्र दो हस्तप्रतों में ही ग्रन्थाग्र है । एक प्रति में ग्रन्थाग्र 5152 लिखा है तो दूसरी प्रति में 5150 ग्रन्थाग्र लिखा है ।

## जनहिता वृत्ति के विशेष बिन्दु

इस वृत्ति का सम्पादन करते हुए कुछ विशेष बिन्दु ध्यान में आए हैं । मूलग्रन्थ के विशेष बिन्दुओं में भी कहीं-कहीं वृत्तिकार का मत दिखा दिया गया है । कुछ बिन्दु यहाँ प्रस्तुत हैं -

**1. अन्य ग्रन्थों से वृत्ति की समानता –** जैसे मूल ग्रन्थ में अन्य ग्रन्थों से समानता बताई गई है, वैसे ही वृत्ति में भी अनेक स्थल अन्य टीकाओं से समान हैं । 20 असमाधिस्थान, 21 शबलस्थान और 30 मोहनीयस्थान की टीका समवायांग सूत्र[93] की अभयदेवसूरि कृत वृत्ति के साथ प्रायः समान है । छठे अध्ययन में अक्रियावादी के वर्णन की टीका भी प्रायः सूत्रकृतांग सूत्र[94] की शीलांकाचार्य कृत वृत्ति के साथ समान है । आठवें पर्युषणाकल्प अध्ययन की टीका पर कल्पसूत्र की किरणावली टीका का बहुत प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । इसी तरह पाँचवें और दसवें अध्ययन के उपोद्घात की टीका पर भी औपपातिक सूत्र की अभयदेवीय वृत्ति का प्रभाव है । इसके अलावा ग्रन्थ की उत्थानिका आचारांग की शीलांकीय वृत्ति, अनुबन्ध चतुष्टय प्रज्ञापना सूत्र की मलयगिरीय वृत्ति, पंचनमस्कार की व्याख्या भगवती सूत्र की अभयदेवसूरि कृत वृत्ति और चार निपेक्ष की चर्चा (सू. 115) उत्तराध्ययन सूत्र की बृहद्वृत्ति[95] के साथ समान है । इससे वृत्तिकार के विशद अध्ययन की पुष्टि होती है । अनेक आगमों और उनकी व्याख्याओं का इन्होंने विस्तृत अभ्यास किया था ।

**2. विभिन्न मतों का समन्वय –** इस वृत्ति में विभिन्न मतों का समन्वय करने का प्रयास किया गया है । जैसे-शास्त्र लेखन के विषय में दो मत प्रचलित हैं । एक मत से महावीर प्रभु के निर्वाण के 980 वर्ष बाद शास्त्रों का लेखन किया गया तो दूसरे मत से 993 वर्ष बाद । इन मतों का समन्वय करते हुए वृत्तिकार कहते हैं कि प्रभु के 980 वर्ष बाद शास्त्र लेखन प्रारम्भ किया गया और 993वां वर्ष तो लेखन की समाप्ति का वर्ष है । अतः बुद्धिमान पुरुषों को यहाँ विरोध नहीं समझना चाहिए क्योंकि प्रत्येक सूत्र के स्मरण पूर्वक शास्त्रों को लिखते हुए, विच्छिन्न ग्रन्थ (सूत्रों) को जोड़ते हुए और संशोधन करते हुए इतना काल व्यतीत हुआ, ऐसा समझना चाहिए[96] ।

अन्य भी बहुत सारे स्थल पर वृत्तिकार ने ऐसा लिखा है कि पाठान्तर में या विभिन्न मतों में विरोध का उद्भावन नहीं करना चाहिए । जैसे -

(i) पर्युषणाकल्प अध्ययन कुछ पुस्तकों में संक्षिप्त लिखा है, कुछ में विस्तृत । यहाँ कल्पसूत्र की पुस्तक पृथक् होने से दशाश्रुतस्कन्ध के पुस्तकों में उसे संक्षिप्त कर दिया है तथा विस्तार भी भद्रबाहु स्वामी ने ही किया है क्योंकि ग्रन्थकार स्वतन्त्र होने से कहीं विस्तार करते हैं तो कहीं केवल संक्षिप्त पाठ की स्थापना करते हैं । अतः यहाँ विरोध अर्थ का प्रचार नहीं करना चाहिए (सू. 100) ।

(ii) स्वप्नवर्णक बहुत सारे हस्तादर्शों में दिखता ही नहीं है । जिन प्रतियों में दिखता है, उनमें भी संक्षिप्त-विस्तृत आदि अनेक पाठान्तर हैं । तथा चूर्णिकार ने स्वप्नों की व्याख्या नहीं की है । इसलिए हमने

(वृत्तिकार ने) पूर्वाचार्य की वृत्ति अनुसार इसकी व्याख्या की है । न्यूनाधिक पद देखने से विरोध नहीं समझना चाहिए क्योंकि विस्तार करने में तो भद्रबाहु स्वामी स्वतन्त्र हैं तथा संक्षिप्त लिखने में उन-उन लेखकों की अलस वृत्ति ही कारण है (सू. 145) ।

यहाँ उल्लेखनीय बाबत यह है कि स्थानकवासी[97] और तेरापंथ[98] सम्प्रदाय आठवें पर्युषणाकल्प अध्ययन को विच्छिन्न मानते हैं और वर्तमान में उपलब्ध पाठ को प्रक्षिप्त मानते हैं । इसमें उनका तर्क यही है कि निर्युक्ति-चूर्णि में स्वप्नवर्णक आदि बहुत कुछ अंश की व्याख्या नहीं है तथा स्थविरावली भी प्रायः शास्त्र लेखन के काल में जोड़ी गई है । इस विषय में मुनिश्री पुण्यविजयजी[99] ने भी ऊहापोह किया है, जो द्रष्टव्य है ।

(iii) स्थविरावली में बहुत सारे पाठभेद मिलते हैं, तथा उन स्थविरों की शाखा, कुल वगैरह अभी विद्यमान नहीं हैं अथवा अन्य नाम में तिरोहित हो चुके हैं । इसलिए पाठनिर्णय करना सम्भव नहीं है । अतः यहाँ बहुश्रुत ही प्रमाण हैं । (सू. 305-320)

समन्वय वृत्ति से वृत्तिकार का श्रद्धा पक्ष प्रगट होता है क्योंकि समन्वय का प्रयास वही कर सकता है, जिसे पूर्वाचार्य और परम्परा पर श्रद्धा हो ।

**3. संवत्सरी पर्व –** वर्तमान में संवत्सरी पर्व की आराधना चतुर्थी को होती है लेकिन पूर्वकाल में पंचमी के दिन थी । कालकाचार्य भगवन्त ने पंचमी की आराधना चतुर्थी में परिवर्तित की । इस विषय में वृत्तिकार ब्रह्म ऋषि का मत है कि संवत्सरी की आराधना चतुर्थी को नहीं, पंचमी के दिन ही करनी चाहिए । इस मत के पीछे वे तर्क देते हैं कि कालकाचार्य ने तो विशिष्ट कारण से इस पर्व की आराधना चतुर्थी को की थी इसलिए वह आपवादिक आचरणा थी तथा अपवाद एक बार होता है, हमेशा नहीं होता । अपवाद को ही उत्सर्ग बना देना श्रेयस्कर नहीं है । अतः प्रभु की आज्ञानुसार संवत्सरी पर्व पंचमी को ही होना चाहिए । अपने मत की पुष्टि में इन्होंने बृहत्कल्प भाष्य की एक गाथा भी उद्धृत की है, जिसका भावार्थ है कि 'जिनेश्वर परमात्मा की आज्ञा ही बलवान है, आचार्य की आज्ञा नहीं' । पंचमी की चतुर्थी करने में तो आचार्य भ. की आज्ञा भी नहीं है, उन्होंने तो मात्र कारणवश आचरण किया था, आज्ञा नहीं की थी । (सू. 245, 324-329)

हम पहले वृत्तिकार के जीवन चरित्र में भी देख चुके हैं कि इन्होंने सुधर्मगच्छ नाम से भिन्न सामाचारी का प्रवर्तन किया था । इससे इनका तार्किक पक्ष प्रगट होता है । ये वृत्तिकार एक तरफ तार्किक भी थे तो दूसरी ओर इनमें समन्वय वृत्ति भी थी । इस तरह वृत्तिकार में (भीम-कान्त) दोनों गुणों का मेल लक्षित होता है ।

इस तरह वृत्ति के विशेष बिन्दु समाप्त हुए । इस प्रकाशन में एक टबार्थ और दो बालावबोध को भी शामिल किया गया है । अतः अब उनका परिचय देखते हैं ।

## टबार्थ और बालावबोध

आज विद्यार्थियों की सुगमता के लिए अनेक ग्रन्थों के हिंदी, गुजराती, अंग्रेजी आदि प्रचलित भाषाओं में अनुवाद, भाषान्तर और विवेचन प्रगट किए जाते हैं लेकिन अनुवाद करने की शुरुआत अर्वाचीन काल में ही नहीं हुई है, मध्यकालीन युग (प्रायः 600-700 वर्ष पूर्व) से ही अनुवादों की शुरुआत हो चुकी थी । तत्कालीन श्रमण आदि संघ ने अनेक आगमों के स्तवन-सज्झाय रूप काव्य भी बनाए और देशी गुर्जर भाषा में अनुवाद भी लिखना प्रारम्भ किए । इन अनुवादों को टबा, टबार्थ, बालावबोध वगैरह नाम दिए गए । अनेक आगमों पर

आज टबे, बालावबोध वगैरह उपलब्ध हैं । कुछ टबे स्वयं के अभ्यास के लिए तो कुछ शिष्यादि के पठनार्थ लिखे गए ।

प्रस्तुत ग्रन्थ पर भी अनेक टबे उपलब्ध हैं । इस प्रकाशन में एक टबार्थ और दो बालावबोध को प्रगट किया जा रहा है । तीनों टबों के कर्ता अज्ञात हैं । तीनों का रचनाकाल भी अज्ञात है । तीनों में आठवें पर्युषणाकल्प अध्ययन की संक्षिप्त वाचना ही है । इन तीनों का परिचय क्रमशः इस प्रकार है -

**1.2. बालावबोध (1,2) –** ये दोनों बालावबोध लगभग समान ही हैं । दोनों में सूत्रार्थ के अलावा कुछ अन्य चर्चाएँ भी हैं । असमाधिस्थान, आशातना आदि में दोष के कारण भी दिखाएँ हैं । कुछ-कुछ प्रासंगिक चर्चाएँ भी हैं । जैसे- गुरु से पहले आचमन नहीं करने की विधि (सू. 8-9), चातुर्मास करने योग्य क्षेत्र के 13 गुण (सू. 20), रात्रिभोजन के दोष (सू. 61), 11 उपासक प्रतिमा की विधि (सू. 67), 12 भिक्षु प्रतिमा की कालावधि (सू. 70), आचमन विधि (सू. 87) । इनमें से कुछ-कुछ चर्चा दूसरे बालावबोध में है ही नहीं, बाकी चर्चाओं में भी कुछ न्यूनाधिकता है । यहाँ उल्लेखनीय बाबत है कि इनमें से कई चर्चाएँ जनहिता वृत्ति में नहीं है । कई जगह आगमों के नाम का अतिदेश भी किया है, मतान्तर भी बताए हैं, उदाहरण भी लिखे हैं । इन दोनों बालावबोध की प्रति में ग्रन्थाग्र नहीं लिखा है । यदि किसी व्यक्ति को कुछ विस्तारपूर्वक ग्रन्थ का अर्थ पढ़ना हो तो उसे ये बालावबोध बहुत उपयोगी हो सकते हैं ।

**3. टबार्थ –** प्रारम्भ में एक श्लोक द्वारा वर्धमान जिन को नमस्कार करके दशाकल्प नामक सूत्र का टबार्थ लिखने की प्रतिज्ञा की गई है । तत्पश्चात् जनहिता वृत्ति के अनुसार किन्तु संक्षेप में दशाश्रुतस्कन्ध का शब्दार्थ, उसके दस अर्थाधिकार और पंच नमस्कार का अर्थ बताकर टबार्थकार ने सीधे सूत्र की व्याख्या शुरु कर दी है । पूरे टबार्थ में सूत्रार्थ के अलावा अन्य कोई चर्चा, उद्धरण वगैरह नहीं है । यह टबार्थ मात्र मूलसूत्र के अनुवाद की गरज सार सकता है । इस टबार्थ की तीनों हस्तप्रतों के अन्त में अलग-अलग ग्रन्थाग्र लिखा है । सबसे प्राचीन प्रतीत होने वाली प्रत में सूत्रार्थ मिलाकर 1561 ग्रन्थाग्र लिखा है । दूसरी प्रत में सूत्र का 2200 और कुल 2900 ग्रन्थाग्र कहा है । तीसरी प्रति में सूत्र का 800 और टबार्थ का 1700 ग्रन्थाग्र लिखा है । स्पष्ट है कि 2200 ग्रन्थाग्र वाली प्रत में बारसासूत्र की 1200 गाथा सहित ग्रन्थाग्र लिखा है जबकि शेष दो प्रति में बारसासूत्र को छोड़कर लगभग 800 श्लोक प्रमाण सूत्र कहा है । टबार्थ का ग्रन्थाग्र भी दो प्रतों में लगभग 700 है और एक में 1700 है, अतः यहाँ लेखकदोष ही प्रतीत होता है ।

बालावबोध और टबे का परिचय समाप्त होने के बाद इस प्रस्तावना में ग्रन्थ सम्बन्धी एक ही शीर्षक शेष है - सांस्कृतिक सामग्री ।

## दशाश्रुतस्कन्ध ग्रन्थ अन्तर्गत सांस्कृतिक सामग्री

ग्रन्थों के विषयों का वर्णन करते हुए उनमें तत्कालीन सामाजिक-राजकीय परिस्थिति, लौकिक रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि बहुत कुछ सांस्कृतिक सामग्री भी ग्रन्थ में गूंथा जाती है, जिससे हम तत्कालीन संस्कृति का चित्र समझ सकते हैं । अतः ये आगम विषय की दृष्टि से भले ही मात्र जैनों के लिए प्रमाण हैं लेकिन सांस्कृतिक दृष्टि से तो वैश्विक स्तर पर अमूल्य धरोहर हैं । प्रस्तुत ग्रन्थ में भी सांस्कृतिक सामग्री की कमी नहीं है । इस ग्रन्थ के अन्तर्गत सांस्कृतिक सामग्री का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है -

**1. दण्डपद्धति (सू. 45–46) –** पूर्वकाल में प्रचलित दण्ड पद्धतियों का परिचय हमें इस ग्रन्थ में मिलता है ।

बड़े अपराधों में बड़े दण्ड दिए जाते थे, जिनका परिचय निम्नलिखित है - दण्ड देना, मुण्डन करना, तर्जना करना, ताड़ना करना, सांकल से बांधना, बेड़ी से बांधना, लकड़ी के खोड़े में बांधना, जेल में डालना, हाथ-पैर और गले में जंजीरे डालकर सिकोड़ना-मोड़ना, हाथ काटना, पैर काटना, कान-नाक-होठ काटना, सिर काटना, (मुरव=) शरीर को तलवार द्वारा एकदम बीच में से काटना, जनोइ वगैरह के आकार में काटना, जिंदा रहे हुए ही हृदय बाहर निकालना, इसी तरह आँख बाहर निकालना, दाँत निकालना, अण्डकोश निकालना, जीभ खींचना, कूएँ-पर्वत आदि में लटकाना, वृक्षादि पर लटकाना, गोबर के कंडे वगैरह से घिसना, आम का रस निकालने की तरह निचोड़ना, शूली में पिरोना यानि गुदा में शूली डालकर मुख से बाहर निकालना, शूली से भेदन करना यानि छाती में शूली डालकर पीठ से बाहर निकालना, घाव लगाकर नमक छिड़कना, तीक्ष्ण घास से शरीर छीलना, सिंह की पूंछ से बांधना (लिंगछेद करना), अण्डकोश काटकर उसी के मुँह में डालना, चटाई में लपेटकर आग से जलाना, मांस के काकणी (सिक्के) जितने टुकड़े करके उसे ही खिलाना, भोजन-पानी बन्द करना, यावज्जीव बन्धन में डालना ।

सामान्य अपराधों में इस तरह के दण्ड किए जाते थे - शिशिर ऋतु में ठंडेगार पानी में डुबाना, गर्म पानी-तेल या कांजी से शरीर को तपाना, अंगारों से शरीर पर दाग लगाना, नेतर-चाबुक-लता या रस्सी से कोड़े मारना, लकड़ी-दण्ड-हड्डी-ढेफे-मुट्ठी या खप्पर से मारना ।

चूर्णि[100] से हमें निम्नलिखित जानकारी अधिक मिलती है- बेड़ी या सांकल से जेल के बाहर भी बांधा जाता था, जैसे- मालव देश में दास भाग न जाए इसलिए उसे बेड़ी या सांकल से बांधकर रखते थे । इसलिए बेड़ी या सांकल से बांधने को चारक बन्धन से पृथक् कहा है । जेल में जू, मकोड़े, खटमल आदि कीटकों से बहुत पीड़ा होती थी । चोर के हाथ-पैर छेदे जाते थे । राज्यविरुद्ध अपराध करने वाले गुप्तचर-दूत आदि के कान-नाक-होठ छेदे जाते थे । स्त्रियों का मस्तक छेदा जाता था । पारदारिक पुरुष का लिंग छेदा जाता था । सिंहपुच्छितक का अर्थ वृत्तिकार ने सिंह की पूंछ से बांधना किया है लेकिन चूर्णिकार ने लिंगछेदन अर्थ कहा है । जब सिंह और सिंहनी सम्भोग के बाद अलग होते हैं, तब दोनों ओर के खिंचाव से सिंह का लिंग भग्न हो जाता है, ऐसी प्रचलित मान्यता से लिंगछेदन को सिंहपुच्छितक कहा जाता है । सूत्र के अन्यतर शब्द से शुनक कुंभीपाक आदि अन्य भी दण्ड समझ लेना चाहिए ।

**2. वासघर और शय्या (सू. 131) –** त्रिशला रानी के वासगृह और शय्या के वर्णन से हम तत्कालीन राजा-रानी-नगरसेठ वगैरह धनाढ्य लोगों के शयनगृह का चित्र कल्पनाचक्षु से देख सकते हैं । त्रिशला रानी का वासभवन बाहर से चूने वगैरह द्रव्यों द्वारा धवलित किया हुआ और पाषाण आदि द्वारा घिसकर कोमल किया हुआ था । अंदर दीवालों पर सुंदर चित्रकर्म था । छत पर आश्चर्यकारी चंदरवा था । तलभाग अत्यन्त सम अर्थात् जरा भी ऊँचा-नीचा नहीं था । पाँचों वर्ण के मणि वहाँ जटित थे, स्वस्तिक बनाए हुए थे तथा विविध चित्रों से युक्त था । कालागरु वगैरह सुगन्धी द्रव्यों की जलती हुई धूप से पूरा कक्ष ऐसा महक रहा था, मानो वह कक्ष स्वयं गन्धद्रव्य की गुटिका या कस्तूरी हो ।

शय्या की गादी इतनी कोमल थी कि पैर रखते ही अंदर धँस जाता था, मानो गंगा नदी के रेतीले तट पर पैर रखा हो । गादी एक सन या कपास के पट से आच्छादित थी । उस पर रक्तांशुक वस्त्र बिछाया था । उसका स्पर्श आजिनक (चर्ममय वस्त्रविशेष), रुई, छूर (वनस्पति विशेष) या मक्खन जैसा कोमल था । शय्या का भी सुगन्धी पुष्पों के चूर्ण से उपचार किया गया था । सिर और पैर दोनों तरफ तकिये थे, जिससे शय्या दो तरफ

से ऊँची तथा मध्य में नत-गम्भीर थी । इनके अलावा शय्या पर शरीर प्रमाण लम्बा एक तकिया था, जिसे सालिंगन कहा जाता था ।

**3. नगर की साज-सज्जा (सू. 195) –** पूर्व काल में राजपुत्र के जन्म आदि राष्ट्रीय त्यौहारों पर उत्सव के लिए नगर की कैसी साज-सज्जा की जाती थी, उसका एक चित्रण क्षत्रियकुंड नगर की सजावट से मिल सकता है । नगर के मध्य भाग (मुख्य चौक) और बाह्य भागों में कचरा साफकर गोबर से लिम्पन किया जाता था और गन्धोदक छींटा जाता था । सभी मुख्य मार्ग, चौराहे, तिराहे, दुकानों के मार्ग और गलियों में कचरा दूरकर जल का छंटकाव करते थे (जिससे धूल न उड़े) । अनेक जगह कालागरु वगैरह सुगन्धी द्रव्यों की जलती हुई धूप से नगर महक उठता था, मानो पूरा नगर स्वयं गन्ध द्रव्य की गुटिका या कस्तूरी हो । अनेक रंगों से सुशोभित और सिंह, गरुड आदि के चित्रों से लक्षित ध्वज और पताकाओं को (नगरद्वार, कंगूरे, किल्ले वगैरह पर) लहराया जाता था । नगर में अनेक स्थलों पर नट, नर्तक आदि कलाकार अपना-अपना कौशल बताते थे । उन्हें देखने वाले लोगों के बैठने के लिए दो-दो मंजिल के मंच (गुजराती में माचड़े) बांधे जाते थे । उनमें पहले मंजिल को मंच और दूसरे मंजिल को अतिमंच कहा जाता था ।

[प्रत्येक घर की सज्जा -] गोबर वगैरह से घर (और आंगन) लींपे जाते थे । सेटिका, चूने वगैरह से दीवारों को धवलित किया जाता था । कहीं चंदरवे बांधे जाते थे । कहीं पुष्पमालाओं के समूह या गोल पुष्पचक्र दीवारों पर ऊपर से नीचे तक लटकाए जाते थे । कहीं दीवारों पर गोशीर्ष चन्दन, रक्त चन्दन आदि से हथेली के थापे लगाए जाते थे । घरों में मंगल रूप चन्दन कलश रखे जाते थे । प्रत्येक द्वार पर चन्दनमाला या तोरण बांधे जाते थे । पाँचों वर्ण के सुगन्धी पुष्पों के पुंज हाथ से भूमि पर सजाए जाते थे ।

इस सजावट की तुलना वर्तमान से करने पर हम समझ सकते हैं कि गोबर का लिम्पन आज छोटे गाँवों के सिवाय प्रायः बन्द हो गया है । गोशीर्ष चन्दन या रक्त चन्दन का स्थान कुंकुम या कंकु ने ले लिया है । भूमि पर रंगोली बनाई जाती है ।

**4. व्यायाम (सू. 159) –** शरीर की स्वस्थता के लिए व्यायाम अत्यावश्यक है । व्यायाम पाँच प्रकार का दिखाया गया है -

(i) 'योग्य'- सबसे पहले व्यायाम के 'योग्य' होने के लिए कुछ कसरतों का पुनरावर्तन किया जाता है । [यहाँ 'योग्य' से Warm up Exercise प्रतीत होती है ।]

(ii) वल्गन- वल्गन यानि तेज़ रफ्तार से दौड़ना और कूदना । व्यायामशाला में एक स्तम्भ होता है । कसरतबाज व्यक्ति दूर से सरपट दौड़ता हुआ आता है और उछलकर स्तम्भ पर चढ़ता है ।

(iii) व्यामर्दन- दो व्यक्ति परस्पर एक-दूसरे के बाहु आदि अंग को मोड़ते हैं ।

(iv) मल्लयुद्ध- कुस्ती करना ।

(v) करण- अंगों को (भंग=) मोड़ने के विशेष प्रकार, जो मल्लशास्त्र में प्रसिद्ध हैं । इस प्रकार के व्यायाम से व्यक्ति अंग-प्रत्यंग से सर्वथा श्रान्त हो जाता है । पूर्वकाल के राजा-महाराजा भी ऐसा व्यायाम नित्य करते थे, ऐसा अनुमान सिद्धार्थ राजा के व्यायामशाला गमन के वर्णन से हम लगा सकते हैं । आज ऐसे व्यायाम में रस लेने वाले बहुत अल्प हैं । कुछ युवा जिम में जाते हैं, जहाँ अलग-अलग मशीनों से कसरत करते हैं।

**5. स्नान और शृंगार विधि (सू. 43, 159–160, 436) –** सिद्धार्थ राजा की स्नान विधि से हम समझ सकते हैं कि पूर्वकाल में स्नान से पहले अभ्यंगन और उन्मर्दन (सम्बाधन) किया जाता था । इसलिए स्नान और शृंगार विधि को चार चरण में विभाजित करते हैं- (i) अभ्यंगन (ii) उन्मर्दन (या सम्बाधन) (iii) स्नान (iv) शृंगार । प्रत्येक चरण का संक्षिप्त वर्णन क्रमशः देखते हैं -

(i) अभ्यंगन- अभ्यंगन यानि मालिश करना । अभ्यंगन में दो विषय हैं- (a) जिससे अभ्यंगन किया जाता था, उस स्निग्ध पदार्थ को अभ्यंग कहते थे, (b) अभ्यंगन करने वाले पुरुष ।

(a) अभ्यंग द्रव्य- अभ्यंगन के लिए तेल जैसे स्निग्ध पदार्थ का उपयोग किया जाता था । ये अभ्यंग द्रव्य रस-रुधिर आदि धातु की विषमता को दूरकर समानता करने वाले, अग्नि प्रदीप्त करने वाले, उन्माद बढ़ाने वाले, मांस की पुष्टि करने वाले, बल की वृद्धि करने वाले और सभी इन्द्रिय तथा गात्रों में आह्लाद करने वाले होते थे । अभ्यंग द्रव्य के उदाहरण में शतपाक और सहस्रपाक तेल कहे हैं । जिस तेल को अन्य-अन्य औषधियों के साथ सौ बार पकाया जाता था अथवा जो तेल सौ कार्षापण से बनता था, वह शतपाक तेल कहलाता था । इसी तरह एक हजार बार पकाए गए अथवा एक हजार कार्षापण से बनने वाले तेल को सहस्रपाक तेल कहते थे । आदि शब्द से घी, कपूर वगैरह द्रव्यों का ग्रहण करना है ।

(b) अभ्यंगन करने वाले पुरुष- अभ्यंगन और उन्मर्दन करने वाले पुरुष अभ्यंगनादि कर्म में निष्णात, अवसरोचित प्रयोग करने वाले, 72 कलाओं में निपुण, वाक्पटु और अपूर्व विज्ञान ग्रहण करने की शक्ति वाले होते थे । उनके हाथ-पैर के तल अत्यन्त सुकोमल होते थे । वे जितना तेल मालिश से शरीर में उतारते थे, उतना ही तेल पुनः बाहर निकालने में भी समर्थ थे ।

(ii) उन्मर्दन- अभ्यंगन (मालिश) के बाद उन्मर्दन किया जाता था । उन्मर्दन (या सम्बाधन) यानि मसाज करना, शरीर दबाना । अभ्यंगन करने वाले पुरुष ही शरीर की मसाज भी कर देते थे । इस उन्मर्दन से त्वचा और रोम में तो सुख होता ही था किन्तु मांस और अस्थि तक भी सुख का अनुभव होता था । ऐसी सम्बाधना से व्यायाम द्वारा जनित परिश्रम दूर हो जाता था । तत्पश्चात् राजा मज्जनगृह में प्रवेश करते थे ।

(iii) स्नान- स्नानगृह में सभी ओर से जाली वाला अर्थात् छिद्र युक्त भित्ति वाला रमणीय स्नान मण्डप होता था । उसमें स्नानपीठ, जिस पर राजा बैठते थे, अनेक मणि और विविध रचनाओं से शोभित होता था । राजा, पुष्पोदक, गन्धोदक, उष्णोदक, समशीतोष्ण उदक तथा स्वाभाविक पानी से स्नान कर सुकुमाल स्पर्श वाले, सुगन्धी और रक्त वर्ण के मखमली वस्त्र से शरीर पोंछते थे ।

(iv) शृंगार- फिर बहुमूल्य वस्त्र पहनकर त्वचा के रंग में निखार लाने वाले लोध्र (वृक्ष विशेष के फूल से बनने वाला रंग द्रव्य) आदि वर्णक या कषाय द्रव्य लगाते थे । गोशीर्ष चन्दन आदि का विलेपन कर सुगन्धी द्रव्य छिटकते थे । तत्पश्चात् सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, भुजाओं पर बाजूबंध, वक्षस्थल पर एकसर-तीन सर वाले हार वगैरह, कमर में सुवर्णमय कंदोरा, अंगुलि में मुद्रिका, हाथ में वीरवलय आदि आभूषण पहनते थे ।

इसी प्रकार चेलणा रानी के शृंगार का भी वर्णन है । स्नान के बाद वे चीनांशुक नामक श्रेष्ठ वस्त्र पहनती थीं । फिर दुकूल वृक्ष की वल्क (छाल) से बना उत्तरीय वस्त्र पहनकर पैरों में नुपूर (पायल), कमर में मणि की मेखला, हाथ में कड़े, अंगुली में अंगुठी, कण्ठ में एक सर-तीन सर वाले हार वगैरह, कान में कुण्डल आदि अलंकार धारण करती थीं । सभी ऋतुओं के सुगन्धी पुष्पों की माला पहनती थीं ।

एक उल्लेखनीय बाबत यह है कि राजा-रानी रक्षा और मंगल के लिए स्नान के बाद बलिकर्म और कौतुक करते थे ।

यह तो राजा, रानी, राजपुत्र, नगरसेठ आदि धनाढ्य व्यक्तियों का क्रम था । सामान्य प्रजाजन तो अभ्यंगन आदि के बिना ही स्नानादि नित्य कर्म करते थे[101] । वर्तमान काल से उपर्युक्त स्नान और शृंगार विधि की तुलना करने पर इतना स्पष्ट होता है कि आज कुदरती रंग द्रव्यों और चन्दनादि विलेपन का स्थान रासायनिक प्रक्रियाओं से बने क्रीम वगैरह ने ले लिया है ।

**6. यान-वाहन की तैयारी (सू. 433) –** पूर्वकाल में राजा-महाराजा रथ में बैठकर यात्रा करते थे । हाथी पर बैठकर युद्ध करने के भी उल्लेख मिलते हैं । यदि लम्बी सफर पर परदेश जाना होता था या जंगल में आखेट करने जाते थे, तब घुड़सवारी भी करते थे । राजा के रथ को यात्रा के लिए कैसे तैयार करते थे, उसका चित्र हमें श्रेणिक राजा के वर्णन में से प्राप्त होता है ।

यान और वाहन, दोनों शब्द पर्यायवाची प्रतीत होते हैं किन्तु दोनों में भेद है । जो किसी पशु या मनुष्य द्वारा खींचा जाता है, उसे यान कहते हैं, जैसे- रथ, बैलगाड़ी वगैरह । जो यान को खींचता है-वहन करता है, उसे वाहन कहा जाता है । पूर्वकाल में बैल, ऊँट, हाथी, घोड़े, गधे आदि अनेक पशुओं और गुलाम मनुष्यों का उपयोग वाहन रूप में किया जाता था ।

राजा से रथ को तैयार करने का आदेश पाकर यानशालिक यानशाला में जाता था । यान का निरीक्षण करके उन्हें ऊपर वाले स्थान से नीचे उतारता था । नीचे उतारकर यान की प्रमार्जना करता था अर्थात् धूल साफ करता था । फिर उसे यानशाला के बाहर ले जाता था । यानशाला के बाहर एक जगह स्थापित कर उनके आच्छादक वस्त्र को हटाता था । फिर यान को अलंकार और आभूषण से सुशोभित करता था ।

तत्पश्चात् वह वाहनशाला में जाता था । वाहन (प्रस्तुत सन्दर्भ में बैल) का निरीक्षण करके उनकी प्रमार्जना करता था अर्थात् धूल दूर करता था । धूल साफ करके उन्हें आस्फालित करता था अर्थात् पीठ थपथपाकर उन्हें उत्तेजित करता था । फिर मक्खी-मच्छर आदि से रक्षा करने के लिए ओढ़ाए गए वस्त्र को हटाता था । वस्त्र हटाकर उन्हें अलंकार और आभूषण से सजाता था । फिर यान के साथ रस्सी वगैरह से जोड़कर उन्हें मार्ग पर लाता था । तत्पश्चात् अंकुश या चाबुक तथा बैलगाड़ी हाँकने वाले गाड़ीवान, दोनों को एकसाथ नियोजित कर जहाँ (श्रेणिक) राजा थे, वहाँ उपस्थित होता था ।

उपर्युक्त वर्णन की तुलना वर्तमान काल के साथ करने पर हम इतना समझ सकते हैं कि पूर्वकाल में वाहन कोई जीवन्त पशु या मानव ही हो सकता था लेकिन अब तो यान्त्रिक इंजन आ चुके हैं ।

**7. राजा की सवारी (सू. 160, 436-437) –** विशिष्ट उत्सवों में पूर्वकाल के राजा चतुरंगिणी सेना और समस्त अन्तःपुर के साथ सजधजकर सवारी पर निकलते थे । श्रेणिक राजा की सवारी के वर्णन से हमें तत्कालीन राजाओं के ठाठमाठ की झलकियाँ मिलती हैं ।

उपर्युक्त स्नान और शृंगार करके राजा अनेक गणनायक, दण्डनायक, माण्डलिक राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, मंत्री, महामन्त्री, गणक, दौवारिक, अमात्य, चेट, पीठमर्द, नागर, निगम, श्रेष्ठी, सेनापति, इभ्य, सार्थवाह, दूत और सन्धिपाल वगैरह राजपुरुषों के साथ मज्जनगृह से बाहर निकलकर उपस्थानशाला में आता था । गणनायक = अनेक लोकसमुदाय के नायक, दण्डनायक = तन्त्रपाल, ईश्वर =युवराज या अणिमादि ऐश्वर्य

से युक्त पुरुष, तलवर = खुश होकर राजा ने जिसे सुवर्ण पट्ट दिया हो, कौटुम्बिक = कुछ कुटुम्बों के स्वामी या गाँव के सरपंच, गणक = ज्योतिषी या भाण्डागारिक (कोठार का रक्षक), दौवारिक = द्वारपाल, अमात्य = राज्य के अधिष्ठायक, मन्त्री = सचिव, महामन्त्री = मन्त्रिमण्डल में प्रधान, चेट = दास, पीठमर्द = राजा के आसपास रहने वाले सेवक या मित्र, नागर = राज्य के कर विभाग के अधिकारी, निगम = न्यायाधीश या वणिक्, श्रेष्ठी = जो लक्ष्मी देवी से अध्यासित सुवर्ण पट्ट मस्तक पर पहनता हो, सेनापति = राजा द्वारा नियुक्त चतुरंगी सेना का नायक, इभ्य = जिसके धन से हाथी ढँक जाए, सन्धिपाल = राज्य की सीमा की सुरक्षा रखने वाले ।

रानी भी तैयार होकर चिलात, बर्बर, द्रविड, सिंहल, अरब, बहल, मुरुण्ड, शबर आदि अनेक देशों में उत्पन्न दासियों, कंचुकि और द्वारपालिका के समूह से घिरी हुई उपस्थानशाला में आती थी । तत्पश्चात् राजा-रानी दोनों रथ में बैठते थे ।

अब राजसवारी के विभिन्न तबक्कों को क्रमिक रूप से देखते हैं -

(i) सबसे आगे अष्टमंगल प्रस्थान करते थे ।

(ii) फिर चामर से युक्त और वायु से फरकती हुई दिव्य वैजयन्ती पताका प्रस्थान करती थी ।

(iii) उनके पीछे बहुत सारे दास-दासी-कर्मकर और पदाति सैन्य से घिरा हुआ पादपीठ युक्त सिंहासन प्रस्थान करता था ।

(iv) तत्पश्चात् क्रमशः तलवार, लट्ठ, भाले, धनुष्य, चामर, पाश (घोड़े वगैरह को बांधने का साधन), पुस्तक, फलक, पीठ (आसन विशेष), वीणा, तेल के भाजन, ताम्बूल के भाजनों को हाथ में लिए हुए सेवक चलने लगे ।

(v) उनके बाद दण्ड वाले, मुण्डन किए हुए, शिखाधारी, जटाधारी, मोर वगैरह के पंख धारण करने वाले, हास्य करने वाले, डमरु बजाने वाले, चाटुकार, कन्दर्प (कामोत्तेजक क्रीडा) करने वाले, कौत्कुचिक (भाट चारण) चलने लगे । ये तलवार आदि लेकर चलने वाले और दण्ड आदि वाले बोलते हुए, गाते हुए, नाचते हुए, हँसते हुए, जय-जय शब्द बोलते हुए, क्रीडा (करतब) करते हुए चल रहे थे ।

(vi) फिर विशाल, उत्तुंग और धवल दाँत वाले 108 हाथी चले ।

(vii) उनके पीछे जातिमान, चपल और उत्तम गति वाले 108 अश्व चले ।

(viii) फिर छत्र, चामर, पताका, तोरण और घुंघरियों के समूह से अलंकृत 108 रथ चलने लगे ।

(ix) तत्पश्चात् देव समान ऋद्धि वाले और छत्र-चामर युक्त राजा चतुरंगी सेना के साथ चलने के लिए उद्यत हुए । राजा के आगे अश्व सेना, दोनों ओर हस्तिसेना तथा पीछे रथ चलने लगे ।

(x) उनके पीछे अन्य राजपुरुषों के रथ और अन्य वाहनों ने प्रस्थान किया ।

राजा के निम्नलिखित पाँच चिह्न प्रमुख माने जाते थे - खड्ग, छत्र, मुकुट, पादुका और चामर ।

उपर्युक्त राजसवारी के उपलक्षण से आज भी कुछ नगरों में विविध देव-देवियों की विशिष्ट रथयात्राएँ निकलती हैं । जैसे- जगन्नाथपुरी की रथयात्रा, अमदावाद में अषाढ़ी बीज की रथयात्रा, उज्जैन में महाकाल की सवारी आदि ।[102]

**8. दस दिवस की कुल मर्यादा (सू. 197-201) –** महावीर प्रभु के जन्म निमित्त सिद्धार्थ राजा दस दिन की कुलमर्यादा का पालन करते हैं । उसके वर्णन से हमें तत्कालीन पुत्र जन्मोत्सव की रूपरेखा मिलती है । राजा अपने समस्त अन्तःपुर के साथ सज्ज होते थे । अपनी सर्व ऋद्धि, समृद्धि, बल, वाहन आदि के साथ उत्सव मनाते थे । नगर में शंख, पटह, मुरज, मृदंग, दुन्दुभि आदि अनेक वाद्यों की महाध्वनि और उसकी प्रतिध्वनि गुंज उठती थी । राज्य में शुल्क, कर माफ कर दिए जाते थे । क्रय-विक्रय का निषेध कर दिया जाता था । नट, नर्तक, गणिका आदि के नाटक-प्रेक्षणक रखे जाते थे । दस दिन में राजा अनेक याग (= देवपूजा) कराते थे और दान देते थे ।

जन्म के तीसरे दिन नवजात शिशु को चन्द्र-सूर्य के दर्शन कराए जाते थे, कहीं दर्पण दिखाया जाता था । छठे दिन धर्मजागरिका करते थे । 11वें दिन सभी अशुचिकर्म समाप्त होने पर 12वें दिन सभी मित्र-ज्ञाति-स्वजन-परिजन आदि को आमन्त्रित कर भोजन कराया जाता था तथा नाम की उद्‌घोषणा की जाती थी ।

यहाँ एक ध्यानपात्र बाबत है कि यह तत्कालीन मगध देश में सिद्धार्थ राजा के कुल की स्थिति है । ऐसी मर्यादाएँ कुल और देश के भेद से भिन्न-भिन्न हो सकती हैं ।

**9. बारिश के लिए घर का परिकर्म (सू. 323) –** चातुर्मास में बारिश का प्रारम्भ हो, उसके पहले घरों में परिकर्म किया जाता था, जिससे घर में पानी न टपके, पानी का जमाव न हो, पनक फूग उत्पन्न न हो । इस विषय को पढ़ते हुए एक मुद्दा ध्यान में रखना आवश्यक है कि यह परिकर्म राजमहल जैसे पक्के मकानों के लिए आवश्यक नहीं था किन्तु उन कच्चे मकानों के लिए आवश्यक था, जिनकी दीवारें मिट्टी या कच्ची ईंटों की होती थी, भूमि पर फर्श नहीं लगा होता था तथा छत नलिकाओं (गुजराती में नळिए) की होती थी । घर का परिकर्म भी तीनों स्तर पर होता था - छत, भूमि और दीवार ।

छत पर आवश्यकतानुसार नलिकाएँ बदली जाती थी । घास से ढँका जाता था या घास का छज्जा बनाया जाता था । भूमि को घिसकर या खड्डे पूरकर समान किया जाता था । गोबर से लिम्पन किया जाता था । आंगन में पानी निकलने के क्यारे/नीक व्यवस्थित बनाए जाते थे । घर की वाड़ भी पुनर्व्यवस्थित की जाती थी । दीवालों पर भी गोबर को लींपा जाता था और चूना लगाकर धवलित किया जाता था (जिससे फूग न लगे) । धूप से घर को वासित करते थे । चटाई या सादड़ी से घर को ढँक देते थे ।

इस तरह बारिश के पहले घर का परिकर्म करने में बहुत आरम्भ-समारम्भ होता था । यह तो सर्वविदित है कि पूर्वकाल में साधु चातुर्मास के प्रारम्भ में ही पूरे चार मास की अनुज्ञा नहीं लेते थे परन्तु 5-5 दिन बढ़ाकर 50वें संवत्सरी के दिन शेष 70 दिनों की अनुज्ञा लेते थे । इस 5-5 दिन की वृद्धि के पीछे भी यही कारण था कि यदि साधु पूरे चार मास की अनुज्ञा लेंगे तो शय्यातर वसति का परिकर्म साधु के निमित्त से ही करेगा । तथा शय्यातर यह भी जान जाएगा कि 'इस बार वर्षा अच्छी होने वाली है' तो वह खेत-खलिहानों को भी कृषि के लिए तैयार करने लगेगा । ये सभी आरम्भ-समारम्भ साधु के निमित्त से होते इसलिए साधु केवल 5-5 दिन की ही अनुज्ञा लेते हैं । 50 दिनों में शय्यातर ये सभी परिकर्म स्वयं के लिए कर लेगा, तब साधु शेष 70 दिन रहने की अनुज्ञा लेते थे ।

**10. जनस्थान (सू. 425) –** इस ग्रन्थ में कुछ जनस्थानों का भी उल्लेख मिलता है- आराम = जहाँ माधवीलता के मण्डप आदि में दंपति क्रीड़ा करते हैं, उद्यान = पुष्प-फल से समृद्ध अनेक वृक्षों से व्याप्त तथा उत्सव आदि

में बहुत लोगों से परिभोग्य बगीचा, आवेशन = जहाँ बहुत लोग आते हैं जैसे- लोहकार, कुम्भकार आदि के स्थान, आयतन = देवों के मंदिर के आसपास बनाए हुए कक्ष, देवकुल = मंदिर, सभा-प्रसिद्ध है, प्रपा = पानी देने के स्थान (प्याऊ), पण्यशाला = जहाँ किराया देकर ठहरा जा सके वैसी धर्मशाला या गोदाम, पण्यापण = दुकान, यानशाला = जहाँ यान बनाए जाते हैं, सुधाकर्मान्त = जहाँ शराब का परिकर्म किया जाता है, वाणिज्यकर्मान्त = जहाँ व्यापार के लिए लोग मिलते हैं, काष्ठर्मान्त = जहाँ बेचने के लिए या पानी से बचाने के लिए काष्ठ रखा जाता है, इसी तरह दर्भकर्मान्त = घास का गोदाम, वर्ध्रकर्मान्त = चमड़े का गोदाम, वल्लजकर्मान्त = सन की छाल से बने कपड़े का गोदाम, अंगारकर्मान्त = कोयले का गोदाम ।

उपर्युक्त सांस्कृतिक सामग्री के अलावा भी ग्रन्थ में अन्य भी कुछ ऐसे बिन्दु हैं, जिन्हें सांस्कृतिक सामग्री में रखा जा सकता है, जैसे- साधु की सामाचारी का ज्ञान हमें इस ग्रंथ से होता है, पूर्वकाल में कितने प्रकार के पानी वापरे जाते थे (सू. 343 आदि), महावीर प्रभु का विहार-समवसरण-देशना, गर्भपालन (सू. 190) आदि परन्तु ये सभी बातें लगभग प्रसिद्ध होने से इन्हें यहाँ नहीं लिखा है । इस तरह ग्रन्थ के अन्तर्गत सांस्कृतिक सामग्री का परिचय पूर्ण हुआ ।[103]

## कुछ प्रस्तुत प्रकाशन के बारे में....

पूज्य गुरुदेव की व्यस्तता के बीच भी किसी-न-किसी ग्रन्थ पर पाठ या वाचना सतत चलती रहती है । इसी क्रम में वि. सं. 2077, ई. स. 2021 में योगोद्वहन के बाद दशाश्रुतस्कन्ध ग्रन्थ पू. गुरुदेव के पास ही पढ़ने का सौभाग्य मिला । उस समय इस ग्रन्थ का निर्युक्ति और चूर्णि सहित मात्र एक ही प्रकाशन उपलब्ध था । चूर्णि एकदम संक्षिप्त और प्राकृत भाषा में होने से पदार्थों को समझने में बहुत कठिनाई हुई । अतः ऐसी भावना हुई कि यदि इस ग्रन्थ पर संस्कृत में कोई प्राचीन टीका हो तो उसका प्रकाशन अभ्यासु वर्ग को बहुत उपयोगी होगा । पू. गणिवर्य श्री शीलचन्द्रविजयजी म.सा. के सामने यह भावना प्रगट की तो उन्होंने तुरन्त ही कोबा, श्रुतभवन-पूना, गीतार्थगंगा, बाबुभाई सरेमलजी आदि ज्ञानकेन्द्रों का सम्पर्क कराकर दशाश्रुतस्कन्ध के व्याख्या साहित्य की जानकारी हासिल की । एक प्राचीन टीका की हस्तप्रत उपलब्ध थी - ब्रह्मऋषि कृत जनहिता टीका । वृत्ति की हस्तप्रतों की Print हाथ में आते ही लिप्यन्तर प्रारम्भ किया । सबसे पहले K और A1 प्रत उपलब्ध हुई थी । इसलिए उन दो हस्तप्रतों के आधार पर ही लिप्यन्तर किया । फिर तो अन्य दस हस्तप्रतियाँ प्राप्त हुई । इस तरह कुल 12 हस्तप्रतियों का उपयोग इस सम्पादन में किया गया है, जिनका परिचय 'प्रति परिचय' शीर्षक के अन्तर्गत दिया है ।

12 हस्तप्रत में से पाठान्तर का संकलन करना भी कठिन कार्य था लेकिन पू. गुरुदेव ने इसे एकदम सरल बना दिया । गुरुदेव सहित 12 मुनि भगवन्त अलग-अलग हस्तप्रत लेकर बैठते, गुरुदेव पढ़ते जाते और किसी भी प्रति में कोई पाठान्तर हो तो उन-उन मुनि भगवन्त के कहने पर पाठान्तर तुरन्त लिख लिया जाता । इस तरह सभी को टीका अध्ययन भी हो गया और पाठान्तरों का संकलन भी । आठवां पर्युषणाकल्प अध्ययन तो 12 में से मात्र 3 हस्तप्रतों में है इसलिए उसके पाठान्तर का संकलन तो अलग से ही कर लिया गया ।

इस ग्रन्थ के लिप्यन्तर का प्रारम्भ April-2021 में जगवल्लभ पार्श्वनाथ प्रभु की छत्रछाया में देवकरण मूलजी उपाश्रय, मलाड में हुआ था । उस समय तो चैत्री ओली की आराधना करके विहार करना निश्चित था किन्तु कोरोना वायरस की द्वितीय लहर से यहीं लगभग 50 दिन की स्थिरता हुई । फलतः इस ग्रन्थ का अधिकतर

लिप्यन्तर और पाठान्तर संकलन का कार्य भी यहीं समाप्त हो गया था तथा आज इस ग्रन्थ की प्रस्तावना आदि सहित सम्पूर्ण प्रकाशन भी यहीं जगवल्लभ प्रभु की निश्रा में हो रहा है ।

लिप्यन्तर और पाठनिर्णय करते हुए अनेक अनुभव हुए । अनेक स्थल ऐसे आए, जहाँ पाठ का निर्णय करने में कुछ घण्टों से लेकर दिनों तक का समय लगा । कहीं-कहीं तो एकदम अपरिचित धातु रूप या शब्द आने से भी अटकना पड़ा । इसका एक उदाहरण है- आस्तिघ्नुते (सू. 115 वृत्ति) । हस्तप्रत में 'घ्नु' की जगह 'घ्र' भी पढ़ा जाता है । 'घ्र' सही हो तो यह पहले, दूसरे वगैरह गण का धातुरूप हो सकता है । 'घ्नु' पढ़ने पर दूसरे, पाँचवें वगैरह गण का धातु होने की सम्भावना है । इस तरह शब्द और धातुरूप की अनेक सम्भावनाओं में से एक-एक सम्भावना दूर करते हुए अन्त में निकला 5वें (धातुपाठ अनुसार 4थे) गण का आ+स्तिघ् धातु, वर्तमाना, 3/1 । इस तरह सम्पादन कार्य आगे बढ़ते हुए अनेक दुविधाएँ अनुभव में परिणत होती गई तथा शंकाएँ पाठ-निर्णय में तब्दील होती गई और यह कार्य आज इस मुकाम पर पहुँचा है । अतः यह सम्पादन श्रीसंघ के करकमलों में प्रस्तुत करते हुए अतीव हर्ष हो रहा है ।

इस प्रकाशन की सम्पादन पद्धति के कुछ बिन्दुओं का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है -

(i) पुराने सम्पादनों में सूत्र क्रमांक नहीं दिए गए थे । इस प्रकाशन में वह कमी पूर्ण हो रही है । यहाँ मुनिश्री पुण्यविजयजी की तरह ही सूत्र के क्रमांक देने का प्रयास किया है, जिससे यह सम्पादन Standard बन सकता है । अलबत्त, आठवें अध्ययन के सूत्रों का विभाजन मुनिश्री पुण्यविजयजी द्वारा दिए गए सूत्रक्रमांक के अनुसार ही स्वीकारा गया है ।

(ii) अनेक ग्रन्थों के पूर्व प्रकाशनों में ऐसा देखा है कि मूलसूत्र का पाठ कुछ और होता है तथा वृत्ति की व्याख्या कुछ और । इस सम्पादन में मूलसूत्र के पाठ को वृत्ति के अनुसार ही रखा गया है । प्रचलित पाठ को वृत्ति के अनुसार बदला भी गया है क्योंकि वृत्तिकार के सामने वैसा ही पाठ होगा, जैसी उन्होंने व्याख्या की है । कल्पसूत्र (8वें अध्ययन) में भी अनेक स्थल पर इस प्रकाशन में पुण्यविजयजी के सम्पादन से भिन्न पाठ है । अलबत्त, जहाँ-जहाँ पाठ बदला है, उन सबका संकलन टिप्पणी में कर लिया गया है ।

(iii) टिप्पणी में जहाँ 'मुद्रित' लिखा है, वहाँ अभयचन्द्र सूरीश्वरजी (तत्कालीन पंन्यास) म.सा. द्वारा सम्पादित निर्युक्ति और चूर्णि सहित दशाश्रुतस्कन्ध की मुद्रित पुस्तक समझनी चाहिए । तथा 8वें अध्ययन की टिप्पणी में जहाँ मुद्रित लिखा है, वहाँ मुनिश्री पुण्यविजयजी म. द्वारा सम्पादित कल्पसूत्र की मुद्रित पुस्तक समझनी चाहिए ।

पाठकगण को एक और सूचना देना अनिवार्य लगता है कि वृत्तिकार पार्श्वचन्द्र गच्छ के होने से इस वृत्ति में कुछ स्थल ऐसे भी हैं, जहाँ तपागच्छ की सामाचारी से भिन्न प्ररूपणा है, इस बात को ध्यान में रखकर विद्यार्थी इस वृत्ति का अध्ययन करें ।

इस प्रकाशन में वाचकों की सुगमता के लिए चार परिशिष्ट बनाए गए हैं, जिनका परिचय निम्नलिखित है -

1. प्रथम परिशिष्ट- इस परिशिष्ट में मूलसूत्र के बीच-बीच में रही हुई 82 गाथा का अकारादि क्रम है ।

2. द्वितीय परिशिष्ट- इसमें वृत्ति के उद्धृत पाठों को अकारादि क्रम से रखा गया है । वृत्ति में इन पाठों को Italic Style में रखा है ।

3. तृतीय परिशिष्ट- इसमें टबे के उद्धरणों को अकारादि क्रम से रखा है । टबे में इन पाठों को Italic Style में रखा है ।

4. चतुर्थ परिशिष्ट- यहाँ वृत्ति और टबे में आए हुए विशेष नामों की अकारादि क्रम से सूचि है लेकिन कल्पसूत्र के देवानन्दा, त्रिशला, वर्धमान आदि नाम प्रसिद्ध होने से उनका इस सूचि में समावेश नहीं किया है । विशेष नामों को सभी जगह भिन्न Font Style में रखा गया है ।

लिप्यन्तर प्रारम्भ करते हुए मन में अत्यन्त हर्षित हो रहा था कि इस कार्य से संघ में एक बड़ा अभाव दूर हो जाएगा लेकिन आगे बढ़ते हुए पता चला कि वृत्तिकार ने मात्र मूलसूत्र की व्याख्या की है, निर्युक्तियों की व्याख्या तो की ही नहीं । अतः अन्त में इतना कहना चाहूँगा कि इस ग्रन्थ की निर्युक्ति सहित विस्तृत व्याख्या अभी भी अन्वेषणीय है ।


## ऋण स्वीकार

* जिनकी छत्रछाया में ग्रन्थ का लिप्यन्तर और संशोधन हुआ, ऐसे **मलाड तीर्थाधिपति श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान** को कोटिशः नमन ।

* जिनकी दिव्य कृपा अविरत बरस रही है, ऐसे **दादागुरुदेव तपागच्छाधिपति परम पूज्य आचार्यभगवन्त श्रीमद्विजय रामसूरीश्वरजी महाराजा (डहेलावाले)** के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन-नमन ।

* जिनके मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद से सभी कार्य सरलतया सम्पन्न होते हैं, ऐसे **गुरुदेव पूज्यपाद आचार्य भगवन्त श्री जगच्चन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा** के चरणों में अनन्तशः वन्दनावली ।

* पाठान्तर संकलन के कार्य में सहायता देने वाले पू. गुरुदेव, आ.श्री कल्पयशसूरिजी म., शीलचन्द्रविजयजी म., विश्वचन्द्रविजयजी म., चन्द्रयशविजयजी म., विरागचन्द्रविजयजी म., प्रकाशचन्द्रविजयजी म., विनीतचन्द्रविजयजी म., कुमुदचन्द्रविजयजी म., जिनचन्द्रविजयजी म., मनकचन्द्रविजयजी म., निर्ग्रन्थचन्द्रविजयजी म. का परिश्रम भी वन्दनार्ह है ।

* वृत्ति एवं बालावबोध की हस्तप्रतियाँ उपलब्ध कराने के लिए जिन्होंने अथक परिश्रम उठाया, अनेक पत्र व्यवहार किए एवं बार-बार Follow up लिए, ऐसे **वडील गुरुबन्धु प.पू. गणिवर्यश्री शीलचन्द्रविजयजी म.सा.** को वन्दन ।

* जिन्होंने पाठ निर्णय बाबत में अनेक शंकाओं के उपयुक्त समाधान दिए और सम्पादन विषयक महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ की, ऐसे **प.पू. गणिवर्य श्री त्रैलोक्यमण्डनविजयजी म.सा.** को सादर नमन ।

* द्वितीय टबे का लिप्यन्तर जिन्होंने समयसर किया, ऐसे **मुनिराज श्री जिनचन्द्रविजयजी म.** को भी नमन।

* हस्तप्रतों की पृच्छा के शीघ्र प्रत्युत्तर देने वाले और संक्षिप्त विधि द्वारा ही हस्तप्रति की pdf का सम्प्रेषण करने वाले ज्ञानभण्डार के प्रेरक गुरुभगवन्त, ट्रस्टी गण एवं संचालक पदाधिकारी भी धन्यवाद के पात्र हैं । (ज्ञानभण्डार के नाम प्रतिपरिचय में लिखे हैं ।)

* जिन्होंने इस ग्रन्थ का सुंदर टाईप सेटींग कराया एवं समयसर प्रूफ करेक्शन किए, ऐसे **श्री जिनेशभाई (भरत ग्राफिक्स)**भी धन्यवाद के अधिकारी हैं ।

## मैं क्षमाप्रार्थी हूँ

हस्तप्रतियों से ग्रन्थ सम्पादित करने का यह मेरा प्रथम प्रयास है । इस क्षेत्र में मुझे कोई अनुभव या अभ्यास नहीं है । तथा संशोधन तो निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है इसलिए ऐसा दावा कोई नहीं कर सकता है कि यह सम्पादन सम्पूर्ण शुद्ध है । प्रस्तावना में भी जो विशेष चर्चाएँ लिखी हैं, उनमें शास्त्रकारों के अनादर या अवहेलना का ज़रा भी भाव नहीं है । ये विशेष बिन्दु मात्र मन्थन करने के लिए लिखे हैं, खण्डन के लिए नहीं । यहाँ मात्र विचार पेश किए हैं, तुलना की है लेकिन निर्णय गीतार्थ विद्वान ही कर सकते हैं । अतः जानते-अजानते इस सम्पादन में कोई पाठ रह गया हो, कोई पाठ शास्त्रकारों के आशय से विरुद्ध छप गया हो या कुछ पाठ अधिक हो गया हो तथा प्रस्तावना में भी शास्त्र और शास्त्रकारों की आशातना हो जाए, ऐसा कोई शब्दप्रयोग कर दिया हो या पूरे सम्पादन में कोई भी मुद्रण दोष रह गया हो तो मैं सकल संघ समक्ष क्षमायाचना करता हूँ । मध्यस्थ विद्वान क्षतियों की ओर मेरा ध्यान अवश्य खींचें, ऐसी नम्र विनति ।

भाद्रपद शुक्ल पंचमी, 2080 — गुरुकृपाकांक्षी
8 सितम्बर 2024 — गोयमचन्द्रविजय
देवकरण मूलजी जैन मोटा देरासर, मलाड.

## सन्दर्भ


1. अत्थं भासति अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं [आ.नि.92] ।
2. आचा. 1-5-4-164 ।
3. आगमो णाम अत्तवयणं [आव.चू.भा. 1 पृ. 28] ।
4. 'गुरुपारम्पर्येणागच्छतीत्यागमः, आ समन्ताद् गम्यन्ते ज्ञायन्ते जीवादयः पदार्था अनेनेति वा आगमः' [अनु. सू. 467 वृत्ति] ।
5. दुवालसंगे गणिपिडगे पण्णत्ते [सम.सू. 136] ।

   चोद्दस पुव्वा पण्णत्ता [सम.सू. 14(1)] ।
6. अत्थाहियागारो दुविहो-अंगबाहिरो अंगपइट्ठो चेदि [षट्खंडागम सू.2 धवला] ।
7. सुयनाणे दुविहे पन्नत्ते, तं जहा-अंगपविट्ठे चेव अंगबाहिरे चेव [स्था.सू. 2-1-60(21)] ।
8. नंदीसुत्तं सू. 78-82 ।
9. वही ।
10. अनुयोगद्वार सू. 3-5 ।
11. देविंदवंदिएहिं महाणुभागेहि रक्खिअज्जेहिं ।

    जुगमासज्ज विभत्तो अणुओगो तो कओ चउहा ।। [आ.नि. 774] ।
12. आगमे दुविहे पण्णत्ते । तं जहा- लोइए य लोगुत्तरिए य [अनु. सू. 467] । अहवा आगमे तिविहे पण्णत्ते । तं जहा- सुत्तागमे य अत्थागमे य तदुभयागमे य । अहवा आगमे तिविहे पण्णत्ते । तं जहा- अत्तागमे अणंतरागमे परंपरागमे य [अनु. सू. 470] ।
13. जं च महाकप्पसुयं जाणि अ सेसाणि छेअसुत्ताणि ।

    चरणकरणाणुओगो त्ति कालियत्थे उवगयाणि ।। [आ.नि. 777]
14. निशीथकल्पाद्यभिहितप्रायश्चित्तपदविभागविषया पदविभागसामाचारी [अनु.सू. 206 वृत्ति] ।
15. सामायारी तिविहा ओहे दसहा पयविभागे [आ.नि. 665] ।
16. आवश्यक निर्युक्ति 665 हारिभद्रीय वृत्ति ।
17. पायच्छित्तं छेदो मलहरणं पावणासणं सोही ।
    पुण्णं पवित्तं पावणामिदि पायछित्तनामाइं ।। [छेदपिण्ड गा.3] ।
18. छेयसुयमुत्तमसुयं [नि.भा. 6184]
19. दसाओ कप्पो ववहारो णिसीहं महाणिसीहं [नं.सू. 82] ।
20. इमं पुण छेयसुत्तपमुहभूतं ति [दशा.चू.पृ. 3] ।
21. दस दसाओ पन्नत्ताओ, तं जहा... आयारदसाओ [स्था.सू. 10-755] ।

22. इमातो आयारदसातो [दशा. नि. 5 चूर्णि] ।

23. समत्तातो आयारदसाओ [दशा. 10-470] ।

24. दशाध्ययनप्रतिपादको ग्रन्थो दशा, स चासौ श्रुतस्कन्धश्चेति दशाश्रुतस्कन्धः । दशाकल्प इति वा पर्यायनाम [दशा. पू. 1 वृत्ति] ।

25. दसासु कप्पे य ववहारे [दशा.नि. 1] ।

26. दसाणं अणुओगो । दसाओ णं किं अंगं अंगाइं, सुतक्खंधो सुतक्खंधा, अज्झयणं अज्झयणाणि, उद्देसो उद्देसा ? दसाओ नो अंगं नो अंगाइं, सुतक्खंधो नो सुतक्खंधा, नो अज्झयणं अज्झयणाणि, णो उद्देसो णो उद्देसा । तम्हा दसा निक्खिविस्सामि, सुयं निक्खिविस्सामि, खंधं निक्खिविस्सामि, अज्झयणाणि निक्खिविस्मामि [दशा.नि. 1 चूर्णि] ।

27. इह चरणकरणाणुओगेण अधिकारो [दशा.चू.पृ. 3] ।

28. आयारो साहूण सावयाण य संखेवेण वण्णिज्जति [दशा.नि. 5 चूर्णि] ।

29. वंदामि भद्दबाहुं पाईणं चरिमसयलसुयनाणिं ।
सुत्तस्स कारगमिसिं दसासु कप्पे य ववहारे ।। [दशा.नि. 1] ।

30. देखें दशा.नि. 1 चूर्णि ।

31. छेदसूत्रोना प्रणेता चतुर्दशपूर्वविद भगवान् भद्रबाहुस्वामी छे, ए विषे कोई पण जातनो विसंवाद नथी - बृहत्कल्प सूत्र की प्रस्तावना भा. 6, पृ. 22 ।

32. दिट्ठिवायातो नवमातो पुव्वातो असमाधिट्ठाणपाहुयातो असमाधिट्ठाणं एवं सेसाओ वि सरिसनामेहिं पाहुडेहिं निज्जूढाओ [दशा.नि. 6 चूर्णि] ।

33. सरीरबलविरियस्स अभावा पढिउं सद्धा नत्थि, संघयणाभावा उच्छाहो न भवति [दशा.नि. 6 चूर्णि] ।

34. भद्दबाहुस्स... चिंता समुप्पन्ना 'पुव्वगते वोच्छिन्ने मा साहू विसोधिं ण याणिस्संति' त्ति काउं अतो दसा-कप्प-ववहारा निज्जूढा [दशा.चू.पृ. 8]।

35. अतो अणुग्गहत्थं, ण आहारुवधिसेज्जादिकित्तिसद्दनिमित्तं [दशा.नि. 6 चूर्णि] ।

36. देखें जैन साहित्य का बृहद् इतिहास भा. 1 प्रस्तावना पृ. 53, 54 ।

37. भगवं च णं अद्धमागधाए भासाए धम्ममातिक्खति [सम.सू. 34(22)] ।

38. देखें कल्पसूत्र प्रस्तावना, ले. मुनिश्री पुण्यविजयजी पृ. 4-6 ।

39. देखें अनुयोगद्वार सूत्र प्रस्तावना पृ. 23, प्रका. सुरेन्द्रसूरीश्वरजी जैन तत्त्वज्ञानशाला ।

40. देखें समवायांग सूत्र 20, 21 और 33 ।

41. देखें स्थानांग सू. 8-601 ।

42. देखें समवायांग सूत्र 10 और 30 ।

43. देखें समवायांग सूत्र 11 और 12 ।

44. देखें सूत्रकृतांग सूत्र 2-2-713 ।

45. देखें आचारांग सूत्र 2-3-15-733 आदि ।

46. **दसाणं** पिंडत्थो एसो मे वण्णिओ समासेणं ।
एत्तो **एक्केकंपि** य **अज्झयणं** कित्तइस्सामि ।। [दशा.नि. 8]

47. परूवेति आयातिट्ठाणं णामं अज्जो अज्झयणे [दशा. 10-470] ।

48. देखें आकाशदर्शन पृ. 34 ले. गुणाकर मूले प्र. राजकमल प्रकाशन ।

49. म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम् (यवन या यूनानी लोग म्लेच्छ हैं, उनमें यह ज्योतिष शास्त्र सम्यक् रूप से स्थित है)- वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता ।

50. सम्राट अशोक के अभिलेख में ब्राह्मणों और श्रमणों को दान देने के लिए पुष्यनक्षत्र वाला दिन शुभ बताया गया है - आकाश दर्शन पृ. 33 ।

51. देखें आकाश दर्शन पृ. 332 ।

52. देखें आकाश दर्शन पृ. 31 ।

53. देखें ज्योतिष्करण्डक गा. 126-129 ।

54. देखें समवायांग सूत्र 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 11, 32, 100 (क्रमशः) ।

55. पूर्वभद्रपदानक्षत्रस्वरूपमाह [स्था.सू. 121 वृत्ति] ।

56. 28वें अभिजित् नक्षत्र का गणित वगैरह कठिन होने से उसे यहाँ गौण किया है ।

57. अघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्युह्वते ।। [ऋग्वेद 10-85-13]

58. हस्तादुत्तरस्यां दिशि वर्तमानत्वात् हस्त उत्तरो यासां वा ता हस्तोत्तरा उत्तराफाल्गुन्यः [दशा. 8-100 वृत्ति] ।

59. प्रधाने चन्द्रयोगे चन्द्रबले... प्रथमायां चान्द्र्यां होरायां [दशा.सू. 8-191 वृत्ति] ।

60. अन्यथा वा सुधिया वृद्धोपदेशाद् भावनीयम् [दशा.सू. 8-191 वृत्ति] ।

61. दिनापेक्षया पश्चाद्भाविनी रात्रिः अथवा चरमा रजनी पक्षान्तर्वर्तिनी रात्रिरमावास्या रात्रिरित्यर्थः अथवा चरमा रजनी रात्रेश्चरमभागः अमावास्यारात्रेः पर्यन्तकालः [दशा.सू. 8-221 वृत्ति] ।

62. यहाँ वर्तमान में प्रचलित ज्योतिष शास्त्र और खगोल शास्त्र के अनुसार यह तुलना की जा रही है । बाकी जैन शास्त्रानुसार राहु-केतु आदि वास्तविक ग्रह ही हैं, यह तो सुस्पष्ट है । सभी ग्रह देवों के विमान हैं ।

63. यह सब एक सम्भावना के तौर पर प्रस्तुत किया है । इसमें ग्रंथकार का आशय ही प्रमाण है । सूत्र के अर्थ को बदलने का आशय तनिक भी नहीं है ।

64. जन्मनक्षत्रं जन्मराशौ सङ्क्रान्तः । अत्र च नक्षत्रशब्देन राशिरेव [दशा.सू. 8-226 वृत्ति] ।

65. देखें पुस्तक-आर्यभट पृ. 13-14 ले. गुणाकर मूले प्रका. राजकमल प्रकाशन ।

66. वही पृ. 19 ।

67. वही पृ. 62 ।

68. वही पृ. 24 ।

69. वही पृ. 63 ।

70. वही पृ. 24 ।

71. देखें पुस्तक मेथेमेजिक पृ. 135-136 ले. नगेन्द्र विजय ।

72. देखें आर्यभट पृ. 62 ।

73. देखें वही पृ. 94-95 ।

74. वही पृ. 143 ।

75. वही पृ. 37 और पृ. 63 ।

76. वही पृ. 93 ।

77. युगवर्षमासदिवसाः समं प्रवृत्तास्तु चैत्रशुक्लादेः [आर्यभटीय 3.11] ।

78. देखें ज्योतिष करण्डक गा. 52-53 एवं वृत्ति ।

79. देखें आर्यभट पृ. 41-42 ।

80. उसभे णं अरहा पंचउत्तरासाढे अभीइछट्ठे होत्था, तंजहा... उत्तरासाढाहिं रायाभिसेअं पत्ते [जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र 2-85] ।

81. तदेव हि कल्याणकं यत्राऽऽसनप्रकम्पप्रयुक्तावधयः सकलसुरासुरेन्द्रा जीतमिति विधित्सवो युगपत् ससम्भ्रमा उपतिष्ठन्ते, न ह्ययं षष्ठकल्याणकत्वेन भवता निरूप्यमाणो राज्याभिषेकस्तादृशस्तेन वीरस्य गर्भापहार एव नायं कल्याणकम्... प्रथमतीर्थेशराज्याभिषेकस्य जीतमिति शक्रेण क्रियमाणस्य देवकार्यत्वलक्षणसाधर्म्येण समाननक्षत्रजाततया च प्रसङ्गेन तत्पठनस्यापि सार्थकत्वात् [ज.प्र. 2-85 शान्तिचन्द्रोपाध्यायकृतवृत्तिः] ।

82. परि-सामस्त्येन उषणा-निवासः [दशा.सू. 8-322 वृत्ति] ।

83. एत्थ उ पणगं पणगं कारणियं जाव सवीसई मासो [दशा.नि. 71] ।

सा आषाढशुक्लपौर्णमास्यां पञ्चपञ्चदिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपदसितपञ्चम्याम् [दशा. 8-324 वृत्ति] ।

84. अंतरा वि य से कप्पइ पज्जोसवित्तए, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए [दशा. 8-329] ।

85. पञ्चाशति प्राक्तनेषु दिनेषु तथाविधवसत्यभावादिकारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति परं भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदयम् [सम.सू. 70 वृत्ति] ।

86. यदा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां संवत्सरप्रतिक्रमणं कृतं तत ऊर्ध्वं तु न कल्पते विहर्तुं [दशा.सू. 8-324 वृत्ति] ।

87. देखें दशाश्रुतस्कन्ध निर्युक्ति 131 ।

88. देखें दशाश्रुतस्कन्ध निर्युक्ति 138-139 ।

89. संबंधो जो मोहणिज्जट्ठाणे वट्टति सो आयातिठाणे संसारे वट्टति [दशा.चू.पृ. 120] ।

90. देखें दशा. 10-470 वृत्ति ।

91. देखें जैन गुर्जर कविओ भा. 1 पृ. 321 ।

92. देखें दशाश्रुतस्कन्ध सू. 8-288 वृत्ति पृ. 175 ।

93. देखें समवायांग सू. 20, 21, 30 वृत्ति ।

94. देखें सूत्रकृतांग सू. 2-2-713 वृत्ति ।

95. देखें उत्तराध्ययन 1-1 बृहद्वृत्ति ।

96. देखें दशाश्रुतस्कन्ध सू. 8-245 वृत्ति ।

97. देखें त्रीणि छेदसूत्राणि पृ. 67-72 ।

98. देखें दसाओ पृ. 149 प्रका. जैन विश्व भारती, लाडनूं ।

99. देखें कल्पसूत्र की प्रस्तावना पृ. 9-10-11 ले. पुण्यविजयजी म.सा. प्रका. साराभाई मणिलाल नवाब ।

100. देखें दशाश्रुतस्कन्ध चूर्णि पृ. 58-59 ।

101. देखें अनुयोगद्वार सूत्र प्रस्तावना पृ. 40, प्रका. सुरेन्द्रसूरि जैन तत्त्वज्ञानशाला ।

102. इस लेख में औपपातिक सूत्र और उसकी टीका की भी सहायता ली है ।

103. अनुयोगद्वार सूत्र भा. 1 प्रस्तावना, प्रका. सुरेन्द्रसूरि जैन तत्त्वज्ञानशाला में दिखाई सांस्कृतिक सामग्री को यहाँ पुनरावर्तित नहीं किया है ।

# प्रतिपरिचय

इस टीकाग्रन्थ के सम्पादन में विविध स्रोतों से प्राप्त बारह हस्तप्रतों का उपयोग किया गया है, जिनका सामान्यतः परिचय निम्नलिखित है -

**1. B प्रति –** यह प्रति पूनास्थित भांडारकर इन्स्टीट्यूट की है । इसका क्रमांक 271 है । इसमें 162 पत्र हैं । प्रत्येक पृष्ठ पर 13 पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में 38-40 अक्षर हैं । इस प्रति की मुनिश्री जंबूविजयजी म. सा. द्वारा कराई गई Scan copy हमें कोबा से प्राप्त हुई है, जिसकी माहिती श्रुतप्रेमी श्री बाबुभाई सरेमलजी ने दी थी ।

प्रारम्भः ॥र्द0॥ सिद्धिरस्तु ॥ यथास्थिताशेष...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्त(सं) ॥छ। तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका ।छ॥ श्रीरस्तू(स्तु) शुभं भवतु ॥ कल्याणमस्तू(स्तु) ॥छ ॥श्री॥छ॥छ॥ ग्र.5152

यह प्रति लिखने के बाद पुनः किसी के द्वारा check की गई है । गलती वाले स्थानों पर कहीं काली स्याही से ही अक्षरों को काट दिया गया है तो कहीं अन्य रंगद्रव्य का प्रयोग किया गया है । सुधारे हुए या छूटे हुए पाठों को Margin में लिखा गया है । इस प्रति में ताड़पत्र में रस्सी डालने की परंपरा का अनुसरण करके प्रत्येक पत्र के मध्य में फूल की आकृति ✚ में जगह छोड़ी गई है । इस प्रति का अंदाजित समय 16वीं शताब्दि का उत्तरार्ध या 17वीं शती का पूर्वार्ध है ।

**2. LI प्रति –** यह शेठ आणंदजी कल्याणजी जैन पुस्तक भंडार, लींबडी की लिंता-204 संज्ञक प्रति है । इसके पत्र 183 हैं । इसमें प्रतिपृष्ठ 13 पंक्तियाँ एवं प्रतिपंक्ति 34 से 36 अक्षर हैं । इसकी पू. मुनिश्री जंबूविजयजी म.सा. की प्रेरणा से की गई Scan copy हमें कोबा से प्राप्त हुई है ।

प्रारम्भ : ॥र्द0॥ सिद्धिरस्तु ॥ यथास्थिताशेष...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानकाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥छ॥ तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका सम्पूर्णा ॥छ॥ श्रीर्भूयात् ॥छ॥ श्रीरस्तु ॥

इस प्रति में लेखन समयादि का उल्लेख न होने से निश्चित काल अज्ञात है लेकिन अनुमानित समय 16वीं शती का उत्तरार्ध या 17वीं सदी का पूर्वार्ध है क्योंकि इस प्रति में भी प्रत्येक पत्र के मध्य में फूल की आकृति में जगह छोड़ी गई है ।

**3. K प्रति –** आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर, कोबा की इस प्रति का क्रमांक 11559 है । इसमें पत्र संख्या 1 से 85 है । प्रत्येक पृष्ठ पर 13-14 पंक्ति एवं प्रत्येक पंक्ति में 45-48 अक्षर हैं । यह प्रति त्रिपाठ शैली में लिखी गई है, जिसमें बीच में मूल सूत्र एवं ऊपर-नीचे टीका है । इस प्रति की Soft copy हमें कोबा से ही प्राप्त हुई है ।

प्रारम्भ : (टीका) ॥र्द0 ॐ नमः । श्रीशारदायै नमः ॥ यथास्थिताशेष...

(मूल) ॥र्द0॥ नमो सिद्धेभ्यः नमो परमगुरुभ्यः ॥ णमो अरिहंताणं...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥1॥ ॥सम(संव)त् 1903। श्रावणकृष्णपक्षे ती(ति)थौ सप्तम्यां सनीवासरे ।छ॥

इस प्रति की प्रशस्ति में यह स्पष्ट है कि प्रति का लेखन श्रावण वद 7, शनिवार, सं. 1903 को पूर्ण हुआ

था लेकिन यह शंकास्पद है, इसका विश्लेषण आगे किया जाएगा ।

**4. M4 प्रति –** यह प्रति श्रीमोहनलालजी जैन श्वेतांबर कागदीय हस्तलिखित ग्रंथ भंडार, सुरत की है, जिसका ग्रंथांक 322 है । इसके पत्र 85, प्रतिपृष्ठ 12-13 पंक्ति एवं प्रतिपंक्ति अक्षर 45-48 हैं । यह प्रति भी त्रिपाठ शैली में लिखी है । इस प्रति की Scan copy हमें मोहनलालजी भंडार से ही प्राप्त हुई है ।

आदि : (टीका) ॥र्द0 ॐ नमः ॥ श्रीशारदायै नमः ॥ यथास्थिताशेष...

(मूल) ॥र्द0॥ नमो सिद्धेभ्यः नमो परमगुरुभ्यः ॥ णमो अरिहंताणं...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥

इस प्रति का काल अनुमानतः 19वीं शती का अंत या 20वीं शती का प्रारम्भ है ।

**5. M3 प्रति –** यह प्रति श्रीमोहनलालजी ग्रंथ भंडार, सुरत की है । इसका ग्रंथांक 107 है । पत्र 85, प्रतिपृष्ठ 13-14 पंक्ति एवं प्रत्येक पंक्ति में 45-48 अक्षर हैं । त्रिपाठ शैली है । इस प्रति की Soft copy भी मोहनलालजी भंडार से ही प्राप्त हुई है ।

आदि : (मूल) ॥र्द0॥ नमो सिद्धेभ्यः न्मो(नमो) परमगुरुभ्यः ॥

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥

इस प्रति का समय भी 19वीं शती का अंत या 20वीं शती का प्रारम्भ प्रतीत होता है ।

**6. M1 प्रति –** श्रीमोहनलालजी ग्रंथ भंडार, सुरत की इस प्रति का ग्रंथांक 108 है । पत्र संख्या 85, प्रत्येक पृष्ठ पर पंक्ति 13-14 एवं प्रतिपंक्ति 45-48 अक्षर हैं । यह प्रति भी त्रिपाठ शैली में लिखित है । इसकी Soft copy मोहनलालजी भंडार से ही प्राप्त हुई है ।

आदि : (टीका) ॥र्द0॥ ॐ नमः । श्रीशारदायै नमः ॥ यथास्थिताशेष...
(मूल) ॥र्द0॥ नमो सिद्धेभ्यः नमो परमगुरुभ्यः ॥

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥1॥
॥सम(संव)त् 1803 श्रावणमासे कृष्णपक्षे ती(ति)थौ सप्तम्यां सिनीवारे ॥छ॥

इस प्रति की प्रशस्ति अनुसार इस प्रति का लेखनसमय सं. 1803 की श्रावण वद 7 तिथि है परन्तु यह शंकित है, ऐसा आगे तुलना में स्पष्ट होगा ।

**7. LD1 प्रति –** यह प्रति अहमदाबाद स्थित लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर की है । इसका क्रमांक 81439 है । इसमें 66 पत्र हैं । प्रत्येक पृष्ठ पर 15-17 पंक्तियाँ हैं एवं प्रतिपंक्ति 36-52 अक्षर हैं । इस प्रति का लेखन भी त्रिपाठ शैली में किया गया है । इसकी Scan copy हमें LD इन्स्टीट्यूट से ही प्राप्त हुई है ।

आदि : (टीका) ॐ नमः ॥ यथास्थिता...

(मूल) नमो सिद्धेभ्यः ॥ नमो परमगुरुभ्यः ॥...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥छ॥ तत्समाप्तौ समाप्तो(प्ता) चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका । छ। श्रीर्भूयात् ॥ संवत् 1872 वर्षे वैसाख सुदि अष्टम्यां भोमवासरे लिपीकृतं श्रीसवाईजैननगरमध्ये ॥ श्रीजिनधर्मानुरक्ततराचन्द्रेण लिपीकृतम् श्रीशुभं भवतु

॥ लेखकपाठकयोः श्रीसङ्घ[ः] सदा जयतु कल्याणं भवतु ॥श्री॥

प्रति की प्रशस्ति से यह स्पष्ट है कि ताराचन्द्र नामक श्रद्धालु ने यह प्रति सवाईनगर में सं. 1872 की वैशाख सुद अष्टमी को समाप्त की थी ।

**8. LD2 प्रति –** यह प्रति भी लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर की है, जिसका क्रमांक 58311 है । इसमें पत्र 63, प्रतिपृष्ठ 15-19 पंक्ति एवं प्रत्येक पंक्ति में 45-50 अक्षर हैं । त्रिपाठ शैली में लिखित इस प्रति की Soft copy हमें LD इन्स्टीट्यूट से ही प्राप्त हुई है ।

प्रारम्भ : (टीका) श्रीपारश्वनाथाय नमः यथास्थिता...

(मूल) श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ [णमो अरिहंताणं णमो सि]द्धाणं...

अन्त : (मूल) छ इति श्रीदशाश्रुतस्कन्धसम्पूर्णम् सूत्रम् संवत् 1911रा वर्षे मिती पोस सुद प्रतिपदा 1 तिथौ लि. । श्रीमंम्मोइविंदरे श्रीमद्बृहत्खरतरगच्छयः छः ॥श्रीकल्याणमस्तु ॥

(टीका) इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥ तत्समाप्तौ समाप्तो(प्ता) चेयं श्रीदसाश्रुतस्कन्धटीका : इति श्रीदसाश्रुतटीकासम्पूर्णम् ॥ संवत् 1911रा मिती पौष-शुक्ल-प्रतिपदातिथौ श्रीमत्-बृहत्खरतरगच्छे पूज्यश्रीश्री108 श्रीजिनचन्द्रसूरिशाखायां वा. दयाभक्तिजीगणिस्तच्छि-[ष्य] पं.प्र.श्री108 श्रीगुणभद्रजीगणिस्तच्छि[ष्य] पं.प्र.श्री 108श्रीक्षान्तिभक्तिजी-गणिस्तच्छि[ष्य] पं. सुगणसुन्दरजीमुनिः चिरं गंगारामलिखितं श्रीमदम्मम्मोईविंदरमध्ये श्रीबृहत्खरतरगच्छ-श्रीसङ्घाग्रहेणेदम् । पुस्तकानि लि(ले)खकपाठकयोर्चि(श्चि)रं नन्दन्तु

यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा तो(ता)दृशं लिख(खि)तं मया ।
यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥1॥

छ ॥ श्रीसुभं भवतु ॥ छ ॥ श्रीकल्याणमस्तु ॥ छ ॥ श्रीसुभम् ॥

प्रति के लेखक-समय-स्थानादि प्रशस्ति में ही स्पष्ट हैं । अंत में लेखक ने अशुद्धि का दोष स्वयं को नहीं देने की प्रार्थना भी की है ।

**9. A1 प्रति –** यह प्रति आहोर स्थित श्रीराजेन्द्र जैनागम भंडार की है । इसका पोथी क्र. 67 एवं प्रति क्र. 472 है । इसमें पत्र 79 हैं, प्रत्येक पृष्ठ पर 13-15 पंक्तियाँ एवं प्रतिपंक्ति 43-50 अक्षर हैं । त्रिपाठ शैली में लिखित इस प्रति की Scan copy हमें श्रुतप्रेमी श्रावक श्रीबाबुभाई सरेमलजी की ओर से प्राप्त हुई है ।

आदि : (टीका) ॥र्द0॥ ॐ नमः ॥सिद्धिरस्तु । यथास्थिताशेष...

(मूल) ॥र्द0॥ श्रीवीतरागाय नमः नमो अरिहंताणं...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमनिदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥ तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका ॥छ॥

यद्यपि इस प्रति के अंत में लेखनकालादि का कोई उल्लेख नहीं है तथापि प्रति के 49B पृष्ठ पर सातवीं दशा पूर्ण होने के बाद मूलसूत्र वाले मध्यभाग में 'संवत 1671 वर. कार्त. सु. 15 रवौ' ऐसा उल्लेख है, जिससे यह फलित होता है कि इस प्रति का लेखन वि.सं. 1671 की कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा, रविवार के आसपास हुआ है । लेकिन अक्षर के मरोड़ आदि से यह प्रति सत्रहवीं शताब्दि जितनी प्राचीन प्रतीत नहीं होती है । विशेष आगे कहा जाएगा ।

**10. A2 प्रति –** श्रीराजेन्द्र जैनागम भंडार, आहोर की इस प्रति का पोथी क्र. 67 एवं प्रति क्र. 476 है । इसमें 86 पत्र, प्रत्येक पृष्ठ पर 13-14 पंक्ति एवं प्रतिपंक्ति 47-50 अक्षर हैं । इसे त्रिपाठ शैली में लिखा गया है । इस प्रति की Soft copy हमें श्रुतसेवी श्रावक श्रीबाबुभाई सरेमलजी से प्राप्त हुई थी ।

प्रारम्भ : (टीका) ॥ए र्द0॥ ॐ नमः सिद्धिरस्तु यथास्थिता...

(मूल) ॥ए र्द0॥ श्रीवीतरागाय नमः नमो...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमनिदानस्थानाख्या(ख्य)मध्ययनं समाप्तम् ॥ तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका ॥छ॥ सम(संव)त् 1962का मी(मि) मीगसर वदि 7 वार अदीतवार ॥ शुभं भवतु ॥ श्रीकल्याणमस्तु ॥ ॥श्रीरस्तु॥

इस प्रति के 54B पृष्ठ पर A1 प्रति की तरह ही सातवीं दशा की समाप्ति के बाद 'संवत 1671 वर.कार्त. सा(सु). 15 रवौ' ऐसा उल्लेख है लेकिन प्रशस्ति में प्रति का लेखन सं. 1962 की मार्गशीर्ष कृष्ण सप्तमी, रविवार के दिन पूर्ण हुआ, यह सुस्पष्ट है ।

**11. M2 प्रति –** यह प्रति श्रीमोहनलालजी जैन श्वेताम्बरीय कागदीय हस्तलिखित ग्रंथ भंडार, सुरत की है । इसका ग्रंथांक 106 है । इसमें 86 पत्र हैं । प्रतिपृष्ठ 11-14 पंक्तियाँ एवं प्रत्येक पंक्ति में 44-52 अक्षर हैं । यह प्रति Soft copy रूप में हमें मोहनलालजी भंडार से ही प्राप्त हुई थी ।

प्रारम्भ : (टीका) ॥ए र्द0॥ ॐ नमः ॥ सिद्धिरस्तु यथास्थिता...

(मूल) ॥ए र्द0॥ श्रीवीतरागाय नमः नमो...

अन्त : इति ब्रह्मविरचितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमनिदानस्थानाख्या(ख्य)मध्ययनं समाप्तम् ॥ तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका ॥छ॥ सम(संव)त् 1957 का मी(मि)ति काति व. 14 बार सोमा(मवा)रे ॥

इस प्रति के 54B पृष्ठ पर त्रिपाठ के मध्यभाग में 'संवत् 1671 वर. कार्त. सा(सु). 15 रवौ' ऐसा उल्लेख होने पर भी प्रति का काल प्रशस्ति से सं. 1957 निश्चित है ।

**12. Kh प्रति –** खंभात स्थित आचार्य श्रीमद्विजयकमलसूरीश्वर शास्त्रसंग्रह की इस प्रति का ग्रंथांक 3_34 है । इसमें 200 पत्र, प्रतिपृष्ठ 16-17 पंक्ति एवं प्रत्येक पंक्ति में 34-42 अक्षर हैं । इस प्रति की Scan copy हमें प.पू.पं.प्र. श्रीवैराग्यरतिविजयजी म.सा. की प्रेरणा से श्रुतभवन संशोधन केन्द्र, पूणे द्वारा प्राप्त हुई है ।

प्रारम्भ : (टीका) ॥ए र्द0॥ सिद्धिरस्तु यथास्थिता...

(मूल) ॥ए र्द0॥ ॐ नमो वीतरागाय ॥ नमो...

अन्त : (मूल) इति श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रं सम्पूर्णम् ॥1॥ ग्रन्थाग्रं 2116

(टीका) इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् ॥1॥ छ॥ ग्रन्थाग्रं{थ} 5150 सर्वसङ्ख्या 7266 कुल संवत् 1982का मी(मि) असाड कृष्ण 1 बार रविवार ली(लि)पीकृतं लेखक अरजुनदास शर्मा मु. सुरबंदर-रेवासी-नागोरमध्ये-

त्रिपाठ शैली में लिखित यह प्रति अत्यंत शुद्ध है । किसी ने पुनः संशोधित कर इस प्रति में भूल सुधारने के लिए सफेद द्रव्य का प्रयोग किया है ।

इन 12 हस्तप्रतियों में से नौ प्रतियों (K-M1-M2-M3-M4-LD1-LD2-A1-A2) में तो आठवें पर्युषणाकल्प

अध्ययन की संक्षिप्त वाचना ही है , मात्र 3 प्रतियों में ही आठवें अध्ययन की सम्पूर्ण टीका है । तीन प्रतों में से भी दो प्रतों (B-LI) में तो सूत्र है ही नहीं, मात्र टीका ही है । अतः सम्पूर्ण मूलसूत्र सहित वृत्ति तो एकमात्र Kh प्रत में ही है ।

## 12 हस्तप्रतियों की तुलना

इन सभी प्रतियों में विविध पाठभेद होने के बावज़ूद सामान्यतया इन प्रतियों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं - प्रथम वर्ग = LI-B-Kh-A1-A2-M2, द्वितीय वर्ग = K-M1-M3-M4-LD1-LD2 । इस वर्गीकरण का कारण यह है कि इन प्रतियों में पाठभेद और भूल, दोनों समान हैं । जैसे- प्रथम वर्ग की सभी प्रतियों में प्रत्येक अध्ययन की आदि में मंगलाचरण किया है लेकिन द्वितीय वर्ग की प्रतियों में नहीं । सू. 42 की वृत्ति में 'ऽसत्पर्वदिनोपवासश्च' की जगह द्वितीय वर्ग की सभी प्रतियों में समान भूल है - 'ऽसत्यवादिनोपशमश्च' । द्वितीय वर्ग की प्रतों में अनेक पाठ छूटे हुए भी हैं, जो टीका में '→←' चिह्न के बीच रखे गए हैं ।

प्रथम वर्ग में भी A1-A2-M2 इन तीन प्रतों का कुल अलग पड़ जाता है क्योंकि इन तीनों प्रतों में त्रिपाठ के मूलसूत्र वाले मध्य भाग में सात अध्ययन पूर्ण होने के बाद 'सं. 1671 कार्त. सु. 15 रवौ' समान रूप से लिखा है । इससे अनुमान होता है कि ये तीनों प्रतियाँ सं. 1671 की किसी प्रति से लिखी गई हैं । इनमें A2 और M2 प्रति को विशेष ध्यान से देखने पर तो आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रहा जा सका । इन दोनों प्रतों के प्रत्येक पत्र में अक्षर-से-अक्षर समान लिखा है । M2 प्रति के 54B पत्र में दर्शयति पद के 'दर्श' तक लिखा है तो A2 प्रति के भी उसी पत्र में वहीं तक लिखा है । उस पंक्ति में दर्शयति पद पूरा किया जा सकता था तो भी नहीं किया है । दोनों प्रतियों के पत्र 22A की अन्तिम पंक्ति में एक ओली का पाठ लिखा है । यह पाठ मूलसूत्र का छूटा हुआ पाठ है, जो इनकी मूल प्रति में ओली में लिखा होगा । A1 प्रति में यह पाठ मूलसूत्र वाले मध्यमभाग में ही है । अतः यहाँ दो सम्भावनाएँ प्रतीत होती हैं - (i) M2 प्रति किसी अन्य प्रति से copy-to-copy लिखी होगी, फिर उससे A2 प्रति भी copy-to-copy लिखी गई अथवा (ii) M2-A2 दोनों प्रतियाँ किसी एक ही प्रति से copy-to-copy लिखी गई है । A1 प्रति में भी ऐसी कुछ लाक्षणिकताएँ हैं लेकिन इन सभी की मूल प्रति खोजने योग्य है ।

इसी तरह का आश्चर्य द्वितीय वर्ग की K-M1-M3-M4 प्रतियों का अध्ययन करते हुए भी होता है । चारों प्रतियाँ एक ही कुल की हैं, ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है । K-M1-M3 प्रतियाँ तो copy-to-copy समान हैं, यावत् लिपिकार को लिखने में एक अक्षर बच गया तो उसे नीचे अन्तिम पंक्ति में लिखकर पत्र पूर्ण किया है । K प्रति में 61B पत्र पर टीका का कुछ छूटा हुआ पाठ Margin में लिखा है, वह पाठ शेष तीन प्रतियों में टीका के त्रिपाठ में ही सुव्यवस्थित हो गया है । K और M1 प्रति में तो प्रशस्ति में लेखन की तिथि और वार भी समान ही लिख दिया है, मात्र संवत् में भेद है किन्तु वह भी लेखक दोष ही प्रतीत होता है । इससे दो सम्भावनाएँ निकलती हैं - (i) K और M1 प्रति एक साथ ही लिखी गई होगी अथवा (ii) M1 प्रति K प्रति से लिखी गई होगी ।

इस तरह सभी प्रतियों की विविध लाक्षणिकताएँ देखने पर सामान्यतया दो वर्गों में विभाजित 12 प्रतियाँ कुल छह भिन्न-भिन्न कुल या प्रवाहों की प्रतीत होती हैं - 1. K-M1-M3-M4, 2. A1-A2-M2, 3. LD1, 4. LD2, 5. Kh, 6. B-LI ।

## बालावबोध एवं टबार्थ की हस्तप्रतियों का परिचय

प्रथम बालावबोध एवं द्वितीय बालावबोध की एक-एक हस्तप्रति तथा टबार्थ की तीन हस्तप्रतियों का उपयोग

सम्पादन कार्य में किया गया है, जिनका सामान्य परिचय निम्नलिखित है -

**1. बालावबोध (1) –** इस प्रति का राधनपुर ज्ञानभण्डार में क्रमांक 192 है, जिसकी Zerox copy हमें श्रुतप्रेमी श्री बाबुभाई सरेमलजी की ओर से प्राप्त हुई थी । इसमें कुल 33 पत्र हैं । प्रत्येक पत्र में लगभग 23-24 पंक्ति एवं प्रतिपंक्ति करीब 60-72 अक्षर हैं । इसके अन्त में कर्ता या लेखक सम्बन्धी कोई जानकारी नहीं है।

आरम्भ : (बालावबोध) ॥र्द0॥ श्रीदशाश्रुतखंध सूत्रार्थ...

(सूत्र) ॥र्द0॥ श्रीजिनेभ्यो नमो नमः णमो अरिहंताणं...

अन्त : (बालावबोध) एतले आचारदशा नामे दशासुतखंध संपूर्ण थयुं ॥

(सूत्र) इति श्रीदशाश्रुत्स(त)खन्ध सम्पूर्ण ॥

**2. बालावबोध (2) –** यह प्रति भी राधनपुर ज्ञानभण्डार की है, जिसका क्र. 193 है । यह प्रति भी हमें श्री बाबुभाई सरेमलजी की ओर से प्राप्त हुई है । इसमें कुल 40 पत्र हैं । प्रत्येक पत्र में 21-22 पंक्तियाँ हैं एवं प्रतिपंक्ति प्रायः 60-72 अक्षर हैं । विशेष इतना है कि इस प्रति की प्रशस्ति में इसके लेखक वगैरह के साथ इसकी मूल प्रति की भी जानकारी दी गई है । सं. 1936 में माघ वद 2 को लींबोडी गाँव में लिखी हुई प्रति पर से यह प्रस्तुत प्रति सं. 1989 में भादरवा वद 5, रविवार के दिन नागोर में लिखी गई थी । यह प्रति सेठ श्री हजारीमलजी मगलचंदजी मालु, बीकानेर वालों ने लिखवाई होगी या लिखी होगी । इस प्रति के प्रथम पत्र में विविध रचनाएँ भी की गई हैं ।

प्रारम्भ : (बालावबोध) ॥र्द0॥ ॐ नमः सिद्धं ॥ श्री दशाश्रुतखंध...

(सूत्र) ॥ श्रीसर्वज्ञाय नमः ॥ णमो अरिहंताणं...

अन्त : (बालावबोध) सं. 1936रा माघ कृष्ण द्वितीयायां लींबोडी पडतसु लीखाई छै ॥

(सूत्र) इति श्री दशाश्रुतस्कंधसूत्र समाप्तम् ॥ श्रीकल्याणमस्तु ॥ संवत 1989रा मिती भाद्रवा बदी 5 अदीतवार नागोर मध्ये ॥ श्रीरस्तु ॥ सेठ श्री हजारीमलजी मगलचंदजी मालु बीकानेर ॥

**3. टबार्थ (3) –** इस टबार्थ के सम्पादन में कुल तीन प्रतियों का उपयोग किया है किन्तु मुख्य एक ही प्रति को रखा गया है, जो सबसे पहले प्राप्त हुई थी । उसमें कुछ पत्र कम होने से अन्वेषण करने पर अन्य दो प्रतियाँ प्राप्त हुई, इनसे उस टबार्थ को पूर्ण किया गया ।

(i) इसकी मुख्य प्रति श्रीविजय लावण्यसूरीश्वर चित्कोष की है, जो हमें गीतार्थ गंगा की ओर से प्राप्त हुई थी । इसमें कुल 67 पत्र हैं किन्तु सभी आगे-पीछे हैं । प्रत्येक पत्र में 18-19 पंक्तियाँ एवं प्रतिपंक्ति 28-34 अक्षर हैं । इसके लेखक आदि की कोई माहिती नहीं है ।

प्रारम्भ : (टबार्थ) ॥र्द0॥ श्रीजिनाय नमः ॥ श्रीवर्द्धमानं...

(सूत्र) णमो अरिहंताणं...

अन्त : (टबार्थ) एतलै दशाश्रुतस्कंधनौ सूत्र अर्थ समाप्तमिदं ॥ सूत्रार्थ मिली ग्रंथाग्र 1561 थइ संख्या श्री॥श्री॥

(सूत्र) इति श्रीदशाश्रुतस्कंध दसमज्झयणं सूत्रार्थ संपूर्णः ॥समाप्तम्॥श्रीरस्तु ॥श्री॥श्री

(ii) इस टबार्थ की द्वितीय प्रति श्री हेमचन्द्राचार्य ज्ञानमंदिर, पाटण की है, जिसका डाबड़ा क्र. 281 ग्रन्थ क्र. 13388 है । इसमें कुल 70 पत्र हैं । प्रत्येक पत्र में लगभग 15 पंक्तियाँ एवं प्रतिपंक्ति 35-50 अक्षर

हैं । इसकी प्रशस्ति से स्पष्ट है कि यह प्रति सं. 1786 में कार्तिक कृष्ण 2, सोमवार को देवलीया ग्राम काठीयावाड़ में लिखी गई थी । इसके लेखक ऋषि जसराजजी के शिष्य मुनि लखमीचंदजी थे, जिन्होंने ऋषि रूपचंदजी के पठनार्थ यह प्रति लिखी थी । इसमें लेखक ने शक संवत् का भी उल्लेख किया है तथा अपनी पाटपरम्परा भी लिखी है । मूलसूत्र का ग्रंथाग्र 2200 लिखा है तथा टबार्थ सहित ग्रंथाग्र 2900 लिखा है ।

आरम्भ : (टबार्थ) ॥र्द0॥ श्रीवर्द्धमानं...

(सूत्र) ॥र्द0॥ नमो अरिहंताणं...

अन्त : (सूत्र) इती(ति) श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्र संपूर्ण शुभं भवतु कल्याणमस्तु श्रीरस्तु मंगलं भवतु वाचमान च(चि)रं नंदि(द)तु लेखकपाठकजयोर्भ(भ)वतु ॥छ॥ यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं ल(लि)खितं मया । यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोसो(षो) न दीयते ॥1॥ संवत 1786 वर्ष शाके 1651 प्रवर्तमाने मासो तममासे कार्तिकमासे कृष्णपक्षे तिथौ 2 द्वितीया सोमवासरे सोराष्टदेशे काठीयावाडि मध्ये देवलीयाग्रामे ल(लि)पीकृतं पू. ऋषिश्री5 जसराजजी तत् शि.मु. लखमीचंद ल(लि)पीकृतं ॥

(टबार्थ) इती(ति) दशाश्रुतस्कंध सूत्र ग्रंथाग्र थ 2200 सर्व मलीनइ 2900 नो सरवालो छइ. ए श्रुत भणे गुणे तेहनें कल्याणकारी मंगलीक सदा सर्वदा होय लेखकपाठकने जयो भवतु. छ. जेहवुं में पुस्तकमां दीठुं ता. तेहवुं लख्यु छइ पछे शुद्ध छे किवाऽशुद्धि छइ मुझने दोस देशो मा 1. श्री6श्री आचार्यजी पूज्य ऋषिश्री6 वरसिघजी ततशिष्य पूज्य ऋषि श्री5 हीरजीजी तत् शिष्य पूज्य ऋषि श्री 5 वीरजीजी तत् शिष्य पूज्य ऋषि श्री5 मानाजी तत शिष्य पू. ऋषि श्री5 जसराजजी तत शिष्य ऋषि श्री5 देवचंदजी तत् शि. ऋ. श्री5 नानगजी ततशिष्य से गुरुभक्त ऋ. श्री5 रुपचंद पठनार्थं

उपर्युक्त पाटपरम्परा का रेखाचित्र इस प्रकार बनेगा -

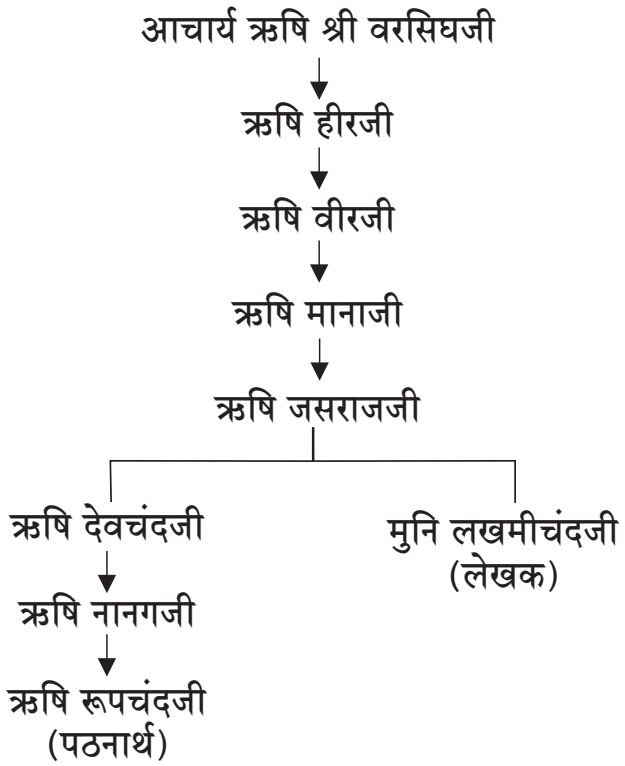


(iii) इस टबार्थ की तृतीय प्रति भी श्री हेमचन्द्राचार्य ज्ञानमंदिर, पाटण से प्राप्त हुई है, जिसका डाबड़ा क्र.

380 ग्रन्थ क्र. 17977 है । इसमें कुल 33 पत्र हैं । प्रत्येक पत्र में प्रायः 21 पंक्तियाँ एवं प्रतिपंक्ति 50-54 अक्षर हैं । इसकी प्रशस्ति से भी स्पष्ट है कि यह प्रति सं. 1827 में आसो शुक्ल पूर्णिमा, गुरुवार के दिन धनेसर नगर में लिखी गई थी । यह प्रति मूला ऋषिजी के पठनार्थ पू. जयगोपाल स्वामीजी के शिष्य पगर मधूर (?) द्वारा लिखी गई थी । इसमें सूत्र का ग्रंथाग्र 800 एवं टबार्थ का ग्रंथाग्र 1700 लिखा है ।

प्रारम्भ : (टबार्थ) ॥र्द0॥ श्रीजिनाय नमः ॥ वर्द्धमानं...

(सूत्र) ॥र्द0॥ णमो अरिहंताणं...

अन्त : (सूत्र) इति श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्र संपूर्णम् ॥ श्री लिख(खि)तं श्रीश्रीश्रीश्री श्रीपूज्य जयगोपाल स्वामिजी ततशिष्य पगरमधूर लिखं (?) पूज्य मूला ऋषिजी पठनार्थे शुभं भूयात् ॥ संवत् अठारासय 27 अश्वनमासे शुक्लपक्षे तिथौ पूर्णिमा बृहस्पतिवासरे शुभं भवति कल्याणं भवति मंगलं भवति लेखकपाठकयौ(योः) । जादसं (यादृशं) पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं लिखितं मया । यद् शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥1॥ श्रीपूज्य के शिष्यनै पुस्तक लिखी परधान । पढत सुणत गुण उपजे धनेसर नगर सुथान (?) ॥2॥ श्री श्री श्री श्री

(टबार्थ) एतलइ दशाश्रुतस्कंधनउ टबउ संपूर्ण थयउ । सूत्र ग्रंथाग्रं थ 800 टबउ 1700 संख्या शुभं भवति ॥

इन दो प्रतियों के लेखक श्रीपूज्य यानि यतिपरम्परा के ऋषि प्रतीत होते हैं ।

सम्पादन कार्य पूर्ण होने के बाद उपर्युक्त प्रतियों के अलावा अन्य अनेक ज्ञानभण्डारों से प्रतियाँ उपलब्ध होने लगी, जैसे- डहेला का उपाश्रय, Asiatic Society, पू.आ. श्री मुनिचन्द्रसूरि म. आदि, लेकिन सम्पादन कार्य पूर्ण हो जाने से इन प्रतियों के पाठान्तरादि का संकलन नहीं करने में मात्र मेरा प्रमाद या आलस्य ही कारण है ।

उपर्युक्त सभी ज्ञानभण्डारों ने हस्तप्रतियों की पृच्छा के शीघ्र प्रत्युत्तर दिए एवं संक्षिप्त विधि से हस्तप्रतियों को उपलब्ध कराया । अतः इन सभी ज्ञानभण्डारों के प्रेरक गुरु भगवन्त, ट्रस्टीगण एवं संचालक पदाधिकारियों को एक बार पुनः धन्यवाद देते हुए यह प्रतिपरिचय समाप्त करता हूँ ।

# प्रति-A1

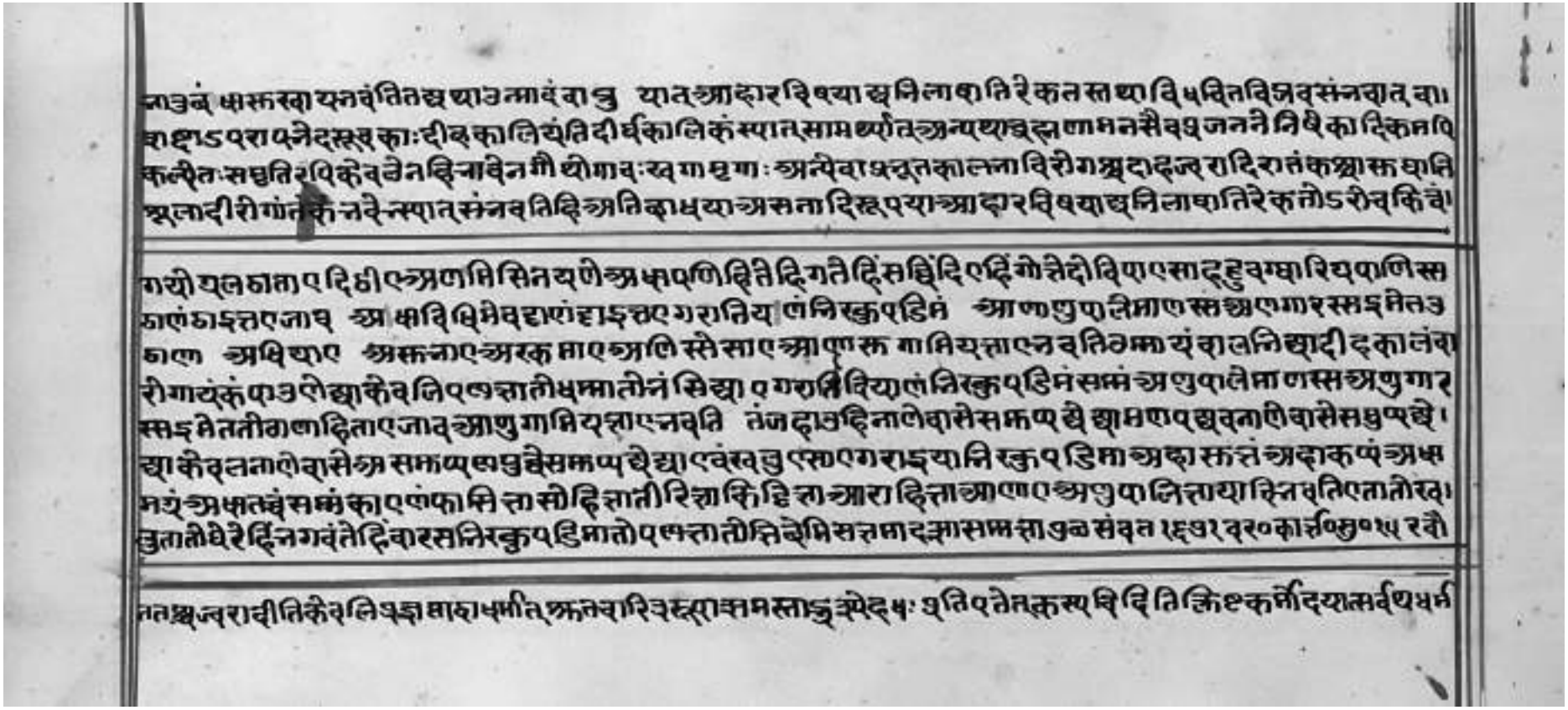

# प्रति-A2

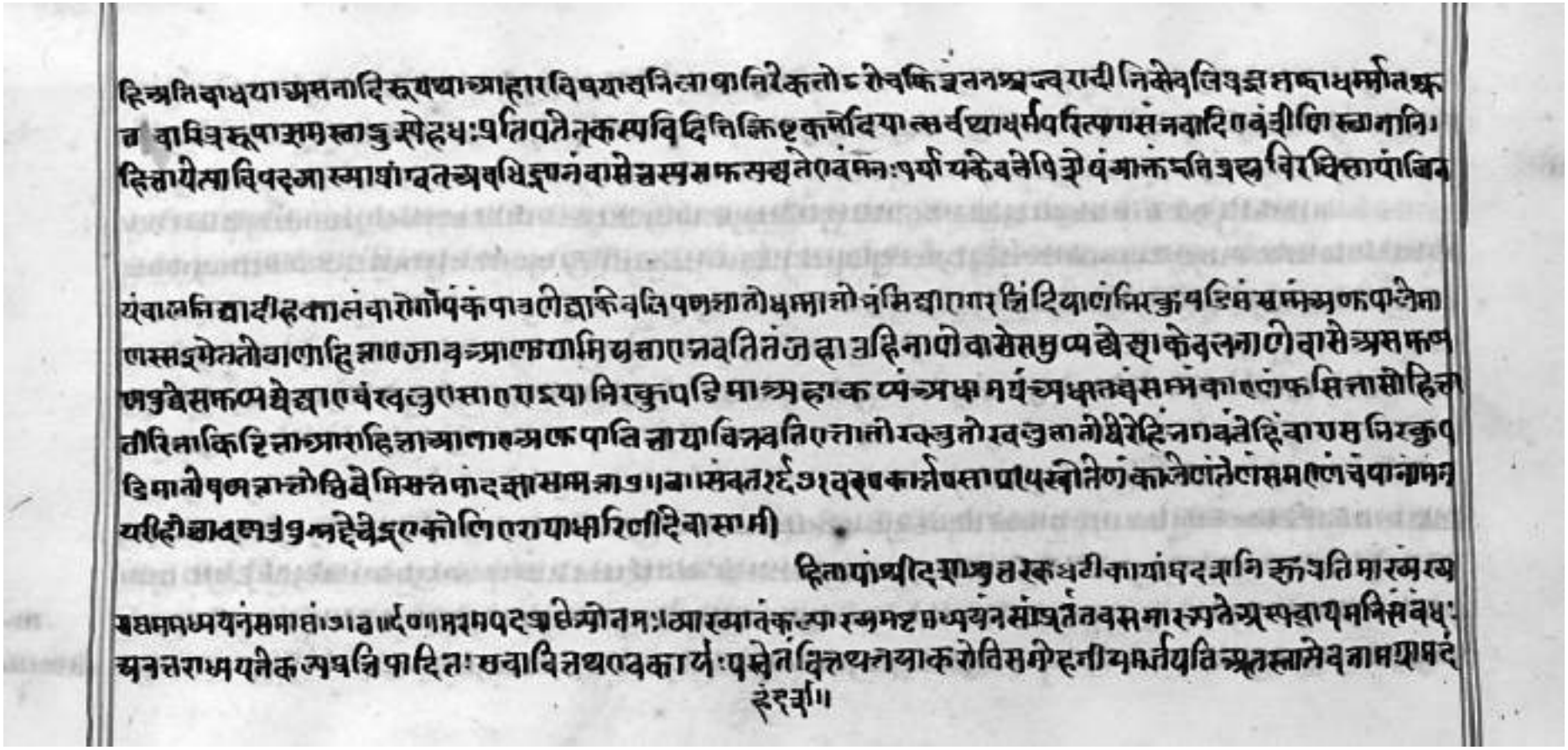

# बालावबोध-1

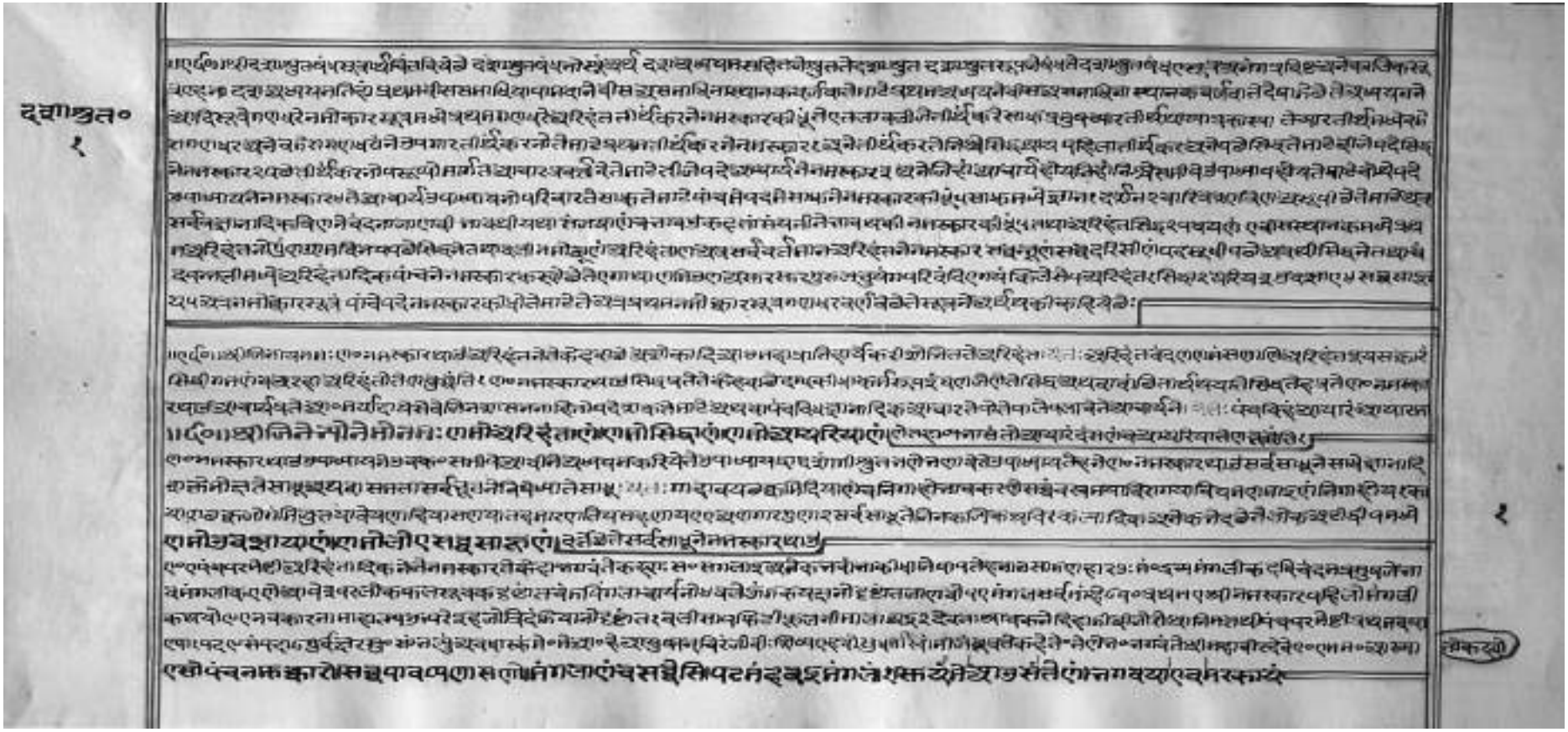

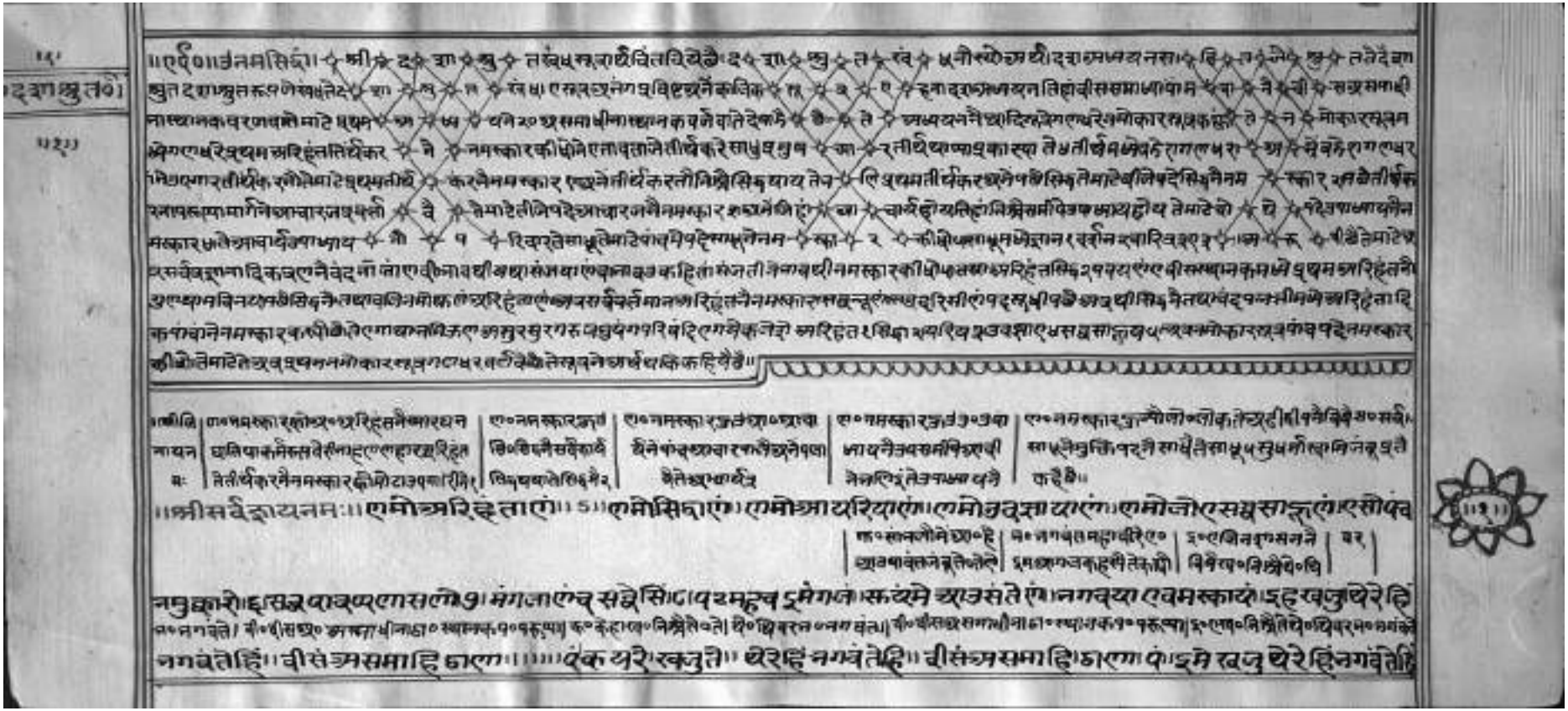

# प्रति-K

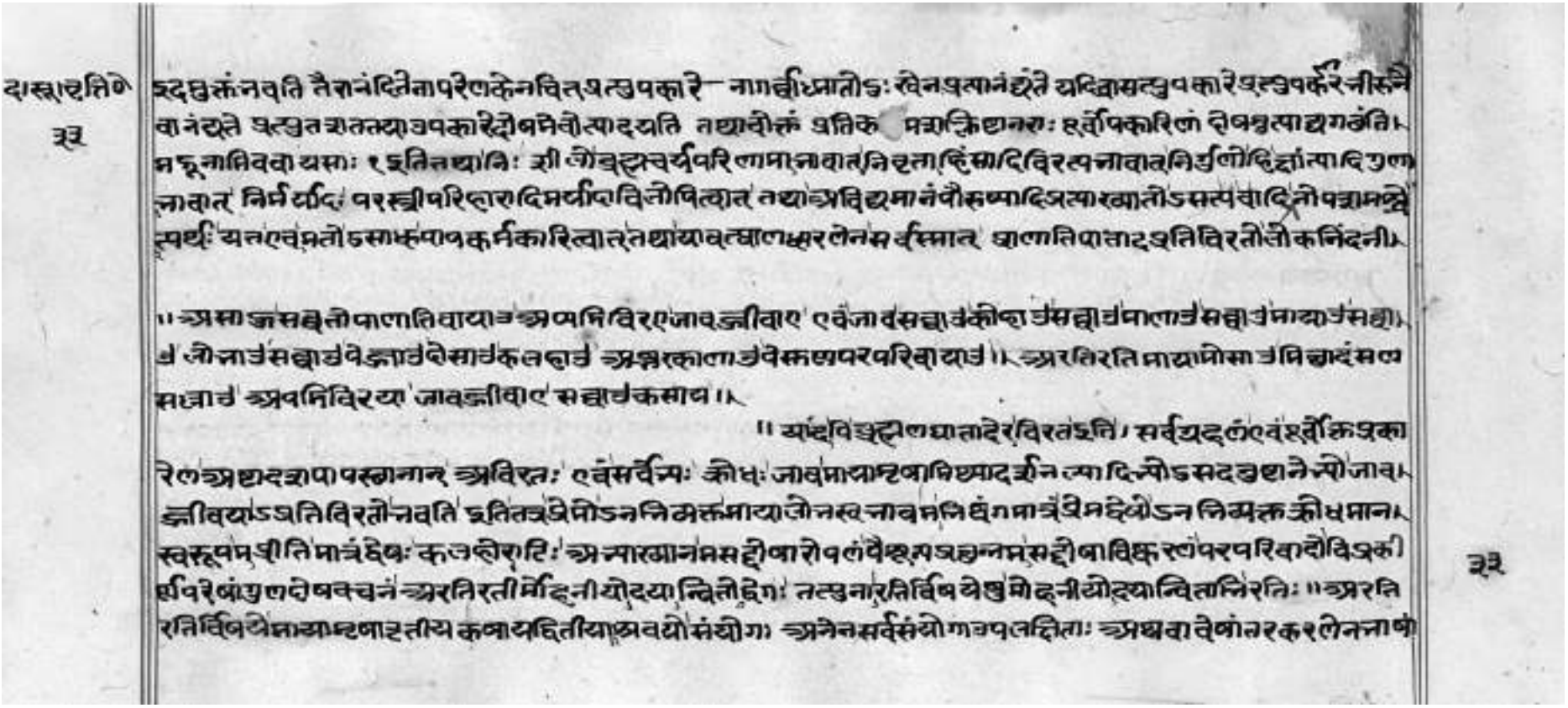

# प्रति-Kh



॥ ॐ नमो वीतरागाय ॥ नमो अरहंताणं ॥

# प्रति-LD1

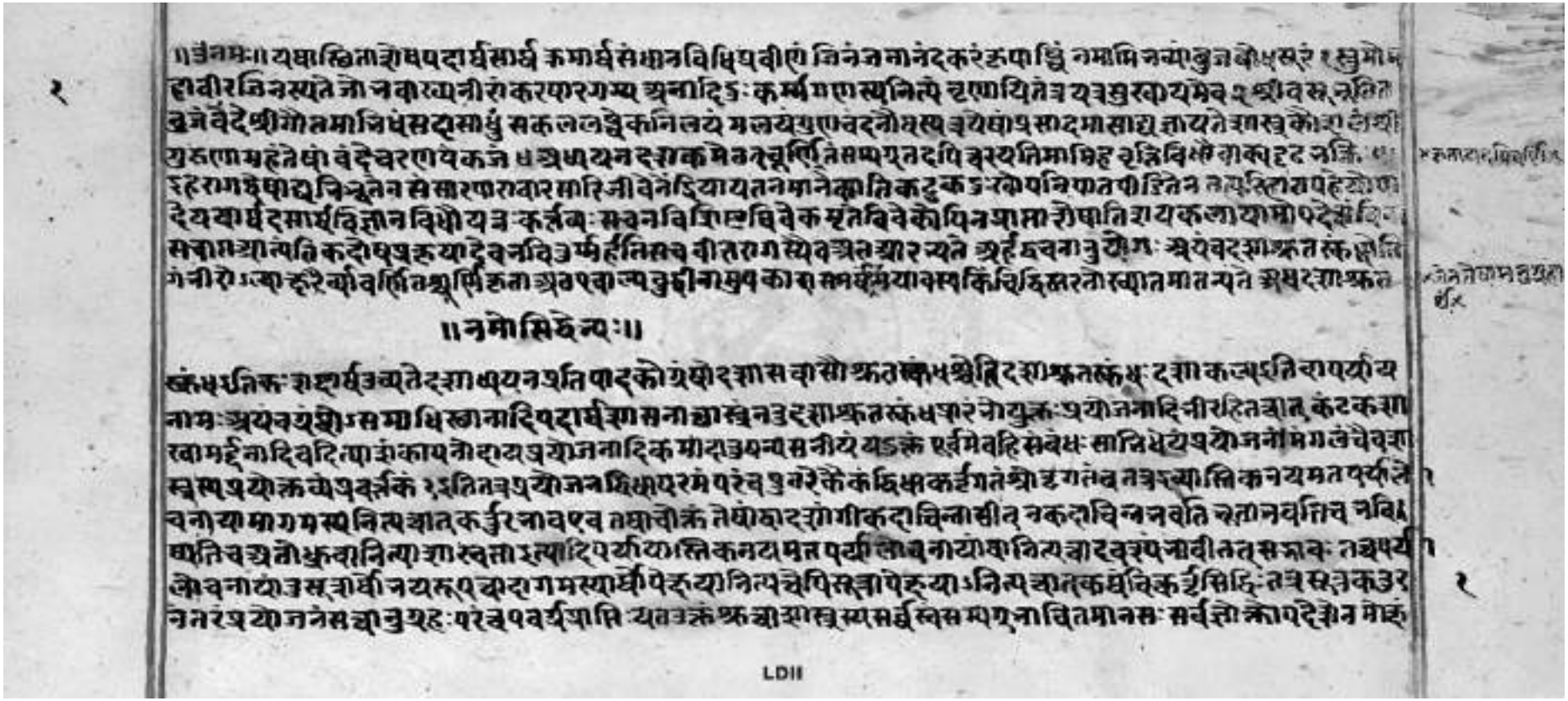

॥नमोसिद्धेभ्यः॥

LDII

# प्रति-L।



तीरहितत्वात् कंटकशारवामर्दनादिवदित्याशंक्यापनोदायप्रयोजनादिकमादावुपन्यसनीयं॥ यदुक्तं॥ प्र
योजनवदिसंबंध सान्निध्यंप्रयोजनं मंगलंविवक्षाशास्त्रस्य प्रयोक्तव्यंप्रवर्त्तकं १ इति तत्रप्रयोजनंद्विप्र
परमरंच पुनरेकैकंद्विप्रकारंगतं आद्यगतंच तत्रद्रव्यास्तिकनयमतपर्यालोचनायामागमस्यनित्यत्वात्
कर्त्तृरसावएव तथावाक्तं निषाद्यशंगीकदाचिन्नासीत् नकदाचिन्नभवति नकदाचिन्नभविष्य ति ता
भवतिच भविष्यतिच आताभवतीत्याद्यग्रन्थ ती इत्यादि पर्यायास्तिकनयमतपर्यालोचनायांनि
त्यत्वादवश्यंभावीततसद्भाव तत्रपर्यालो चनायांसूत्रार्थोसयरूपत्वादागमस्यार्थोपेक्षयानि
त्यत्वेपिसूत्रापेक्षयानित्यत्वात् कर्त्ता विवक्षितसिद्धि तत्रसूत्रकर्त्तुरनंतरंप्रयोजनंसत्वा
स्तुयह परंपरंप्राप्तिः यतउक्तं ऋचाशा स्त्रस्यसंबंधे सम्यग्भावितमानसा सर्वज्ञोक्तोपदे
देशान मोक्षंगच्छंतिमानव १ साधुशास्त्रोपदे शान संसारादधिमज्जतः अनुग्रहातिग्रहःसत्वान् स
यातिपरमागति २ तदर्थप्रतिपादकस्यार्हत किंप्रयोजनमितिचेत् उच्यते नकिंचित कृतकृत्यत्वाज्जगव
तः प्रयोजनमंतरेणार्थप्रतिपादनप्रयासानिरर्थकइतिवत् नतस्यतीर्थकरनामकर्मविपाकोदयप्रभव
त्वात् उक्तंच तंचकहंचेइज्जइ अगिलाएधम्मदेसणाएउ इति आद्यएमनंतरप्रयोजनंविवक्षि
तशास्त्रपरिज्ञानं परमोक्षावाप्ति तद्धिविवक्षितंशास्त्रमर्थत सम्यगवगम्यसंसाराद्विरज्यात विरक्ताश्च

2A

# प्रति-LD2



॥श्रीपार्श्वनाथाय नमः॥ अथ श्रीनाभेयादयः सार्थं क्रमाद्यसंख्यानजिनेश्वरीणां जिनेश्वरानादिकरकृपाभिनमामि नमोऽनु
लोमसूर १ स्तुमोमहावीरजिनस्यतेनोनवाख्यातीराकारपारगस्य २ अनादिकर्मणस्यनित्यत्वेपितस्यत्वस्फरवाद्यमेनु
स्थीवस्तुनितनुजेवदेश्रीगौतमाभिधं सदासाधुसकलतत्त्वैकनिलयमतयेगुरुवदेनोयस्य ३ एषोयसारमासाद्य ज्ञायते
ज्ञानस्वकोज्ञानश्रीगुरुणामहनेषावदेवरणपकजे ४ अध्ययनदशकमेतत् कृतिकृतमपदपिवलिनिसम्यग् तदपितस्यवि
नामिहहत्तिविशेराकृष्टहृदन्तिः पञ्चरागद्वेषाद्यभिन्नतेनसंसारपारावारसंसारिजीवेनेडियाप्रतनमानमानेकानिकृ
कृतःस्वोपनीपातपीडितेनतत्परिहारायदेयोपादेयार्थदेसार्थविज्ञानविशेषत्नः कर्तव्यः सचनविशिष्टविवेकमृते विवेको
पिनशक्यः शेषानिशयकलायामोयदेवीनास्वाप्यतेनिकदोषजकुस्पादेवनवचमाकृतिस्मवितारागस्यैवज्ञानस्यते
ज्ञानर्द्धिवनानुयोगःअथवदशाश्रुतस्कन्धोतिगन्निरोऽस्याक्षरेभावपितस्य ज्ञानकृतानुएवात्मचविनामुपकारसमर्थ्यतेन
तेषामनुग्रहार्थं मयाबुस्यकिंचिद्विस्तरतोमानमात्मत् अथदशाश्रुतस्कन्धस्तिकः ग्रन्थोऽभिधीयते दशाध्ययनवतिनियादकोग्रथो दश
सञ्ज्ञाश्चाश्रुतस्कन्धश्चेती दशाश्रुतस्कन्धः दशाकाततिवापर्यायनामः अथवग्रथोऽसमाधिस्थानादिपदार्थग्रासनाल

॥श्रीगुरुभ्योनमः॥

स्यनतुदशाश्रुतस्कन्धप्रारंभोयुक्तः प्रयोजनादिभिरहितत्वात् कटकवारवामहनादिवदित्याशंकापनोदायप्रयोजनादि
कमाहाचार्यप्रसनीयवक्तुं स्तुवमेवहीस्तुवः सोभिधेयप्रयोजनमंगलवेवशास्त्रस्यप्रयोक्तव्यप्रवर्तकरहितत्वप्रयोज
नहिंद परमपरस्वतुतरेकेकभिधेयकरणतश्चिगतत्वे तत्रऽआस्तिकनयमतेपर्यायोत्पत्तिनायागमस्यनित्यत्वाकर्तृर
भवएवतथावोक्तं तेषांद्रव्यंगीकदम्बीनासीत् नकदाचिलभवति नचलभवतिवक्तवीष्यतीत्यत्रा तोऽनुवानीत्यात्मस्व
लाइत्यादिपर्यायास्तिकनयमतपर्यायोत्पत्तिनायावनीत्यत्वादवस्थानावीतिस्वभाव तत्वपर्यायोत्पत्तिनायाद्यस्वार्थीन
यरूपात्वादगम्यथापिहयानित्यत्वेपिस्वरूपेक्षंनित्यत्वा कथंचित्कत्वसिद्धिःस्वकस्वरूपेनतरप्रयोजनंसत्वानुयद्
परत्वपरस्यप्रसिद्धिः यदोक्तं श्रुत्वाशास्त्रस्यसर्वस्वं सम्यग्भावितमानसः सर्वदोक्तोपदेशेन मोक्षंगच्छतिमानवः १ तदर्थप्रतिपाद
कस्यार्हतः किंप्रयोजकमित्यिवत्रव्यतेनकिंचित्कृपाकृतत्वाज्जगवतः प्रयोजनमंतरेणार्थप्रतिपादनप्रयासोनिरर्थकोतिवे

LDII AKP

# प्रति-M1



श्री मोहनलालजी जैन श्वेतांबर कागदीय हस्तलिखित ग्रंथ भंडार सुरत

# प्रति-M2



॥ एहि ॥ श्रीवीतरागायनमः नमोअरिहंताणं नमोसिद्धाणं नमोआयरियाणं नमोउवज्झायाणं नमोलोएसव्वसा
हूणं ॥ सुयंमेआउसंतेणं भगवयाएवमक्खायं इहखलुथेरेहिं

इहखल्वित्यादि इहेतिलोकेप्रवचनेवाखलुवा

क्यालंकारेअवधारणेवाक्षरणेवाततइहैवजिनप्रवचनेएवस्थाविरैर्गणधरैर्भगवद्भिःएवमेश्वर्यादियुक्तैर्विज्ञाति इतिविज्ञा
तिसंख्यातिअसमाहिठाणाइतिअमानोनाःप्रतिषेधेनसमाधयोऽसमाधयःअसमाधीनांस्थानानिअसमाधिस्थानानियेष
सेवितेषुसत्सुआत्मनःपरस्यवाउभयोर्वाइहपरत्रचउभयत्रसमाधयोनवंतितानिअसमाधिस्थानानिअसम
माधि॥

# प्रति-M3

# प्रति-M4



योगश्चूर्णिसंग्रहादिकश्चरणकरणाद्योगश्चाचारादिकः सर्वेकत्वष्टकादिभेदैर्भिन्नो ज्ञेयोऽतिविस्तरभ
यानेदर्शितन्यते अत्रचरणकरणाद्योगेनाधिकारोऽतस्तदुक्तयते अत्रचामीदृशा अर्थाधिकारा भवंति तद्यथा असमाधी
१ सबलत्रं २ आसातणा ३ गणिगुणसंपदा ४ समाधी ५ सावगद ६ निरुक्त ७ पडिमा ८ पज्जो ९ मोहो १० विवाणं ११ उत्तु
काऽर्थाधिकाराः साधतं सूत्रागमेऽस्खलितादिगुणलक्षणोपेतं सूत्रमुच्चारणीयं लक्षणमिदं अष्टगुणमहत्वती सा
दोसविरहिअं जत्तलक्षणजुत्तं अठहियगुणेहिं उववेयं। मिणादिमज्झिदणमो अरिहंताणमिणादि अस्य
च संहितादिक्रमेणव्याख्या कार्यमिदाय संहिताच ।१। पदच्छेद २ पदार्थ ३ पदविग्रहः ४ चालना ५ प्रसि
द्धि ६ षट्विधं विधं विधिलक्षणं १ संहिताज्ञारितेव पदादि।
पदविस्तरः स्वयमुद्यः अर्थयो। ॥णमो अरिहंताणं॥ जगत्वेवनमइतिनैपातिक
पदनमः करचरणमस्तकस्कंध लिंगनरूपोनमस्कारनव
त्यर्थः केनेऽत्याह अर्हद्भ्यः अमरवरनिर्मिताशोकादि
महाप्रातिहार्यरूपांपूजामर्हतीत्यर्हंतः यदाह अरिहंतिवंदणनमंसणाणि अरहंतिसयसक्कारंसिद्धिगमणंच
अरहा अरहंतालेणकुव्वंति १ अतस्तेभ्यः इहचत्वारोऽर्थाः दृष्टाकृतशीलवशात् अथवा अरहंताणं अरहो
तर्यः कोऽर्थः अविद्यमानंरहएकांतसूपोरेशो अंतश्चमध्यंगिरिगुहादीनांसर्वदिनयासमस्तसंसारस्य
पश्चनत्वस्यानारेनयेषांते रहोतस्तेभ्यः अथवा विद्यमानोरथस्परदनः सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतो
तश्चमध्यं विनाशोजरा इहपलक्षणभूतोयेषांते अरयोतास्तेभ्यः अथवा अरहंताणंति। क्वचिदपाठक्रिमगमद्भ

# टबार्थ प्रथम प्रति

# टबार्थ द्वितीय प्रति

# टबार्थ तृतीय प्रति

# विषयानुक्रमः


| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | **प्रथमदशा असमाधिस्थानाध्ययनम्** | **१** |
| १ | असमाधिस्थानानां निर्देशसूत्रम् | १ |
| | टीकाया मङ्गलाचरणम् | १ |
| | दशाश्रुतस्कन्धस्य शब्दार्थः | २ |
| | प्रयोजनं कर्तुः श्रोतुश्च | २ |
| | अर्हतो देशनायां प्रयोजनम् | २ |
| | अभिधेयं सम्बन्धश्च | ३ |
| | मङ्गलस्य प्रयोजनम् | ३ |
| | त्रिविधं मङ्गलम् | ३ |
| | मङ्गलशब्दव्युत्पत्तिः | ४ |
| | ग्रन्थस्यानुयोगः | ४ |
| | अर्थाधिकाराः | ४ |
| | सूत्रस्य व्याख्यायाश्च लक्षणम् | ५ |
| | 'नमो अरिहंताणं' पदस्य व्याख्या | ५ |
| | 'नमो सिद्धाणं' पदस्य व्याख्या | ५ |
| | 'नमो आयरियाणं' पदस्य व्याख्या | ६ |
| | 'नमो उवज्झायाणं' पदस्य व्याख्या | ६ |
| | 'नमो लोए सव्वसाहूणं' पदस्य व्याख्या | ६ |
| | 'सुयं मे आउसंतेणं' इत्यस्य व्याख्या | ८ |
| | असमाधिस्थानपदस्य व्याख्या | ८ |
| | 'आउसंतेणं' पदस्य अर्थान्तराणि | ९ |
| २-३ | असमाधिस्थानानां प्रश्ननिवर्चनसूत्रे | १० |
| | विंशति-असमाधिस्थानानां व्याख्या | १० |
| | **द्वितीयदशा शबलाध्ययनम्** | **१४** |
| ४-६ | शबलविषयकसूत्राणि | १४ |
| | शबलस्य व्याख्या | १४ |
| | अतिक्रमादीनां स्वरूपम् | १४ |
| | एकविंशतिशबलानां व्याख्या | १४ |
| | **तृतीयदशा आशातनाध्ययनम्** | **१८** |
| ७-९ | आशातनाविषयकसूत्राणि | १८ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | आशातनाशब्दस्य व्युत्पत्तिः | १९ |
| | **चतुर्थदशा गणिसम्पदध्ययनम्** | **२४** |
| १०-१२ | गणिसम्पद्विषयकसूत्राणि | २४ |
| १३ | आचारसम्पदाया वर्णनम् | २४ |
| | प्रश्नसूत्रस्य प्रयोजनम् | २४ |
| | शिष्यस्य योग्यत्वम् | २४ |
| | उपधानशब्दस्य व्याख्या | २५ |
| | चतसृणामाचारसम्पदां व्याख्या | २५ |
| १४ | श्रुतसम्पदाया निरूपणम् | २६ |
| १५ | शरीरसम्पदाया निरूपणम् | २६ |
| १६-१७ | वचन-वाचनासम्पदावर्णनम् | २७ |
| १८ | मतिसम्पदो व्याख्या | २८ |
| १९ | प्रयोगमतिसम्पदायाश्चातुर्विध्यम् | ३० |
| | द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावैर्वस्तुनो विचारणम् | ३० |
| २० | सङ्ग्रहपरिज्ञायाः प्ररूपणम् | ३१ |
| २१ | आचार्यस्यानृणीभवनाय विनयप्रतिपत्त्यः | ३२ |
| २२ | आचारविनयस्य चातुर्विध्यम् | ३२ |
| २३ | श्रुतविनयस्य वर्णनम् | ३३ |
| २४ | विक्षेपणाविनयस्य निरूपणम् | ३३ |
| २५ | दोषनिर्घातनाविनयस्य चातुर्विध्यम् | ३४ |
| २६ | अन्तेवासिनश्चतुर्विधा विनयप्रतिपत्तिः | ३५ |
| २७ | उपकरणोत्पादनतायाश्चातुर्विध्यम् | ३५ |
| २८ | साहल्यताया वर्णनम् | ३६ |
| २९ | वर्णसञ्ज्वलनताया व्याख्या | ३६ |
| ३० | भारप्रत्यारोपणतानिरूपणम् | ३७ |
| | **पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थानाध्ययनम्** | **३९** |
| ३१-३३ | चित्तसमाधिस्थानविषयकसूत्राणि | ३९ |
| | भगवतो महावीरस्वामिनो नगरे आगमनं यावत् समवसरणम् पुनः मङ्गलोपचारविषयकप्रश्नोत्तरम् | ३९ |
| ३४ | भगवतो महावीरस्य देशना | ४० |
| | निर्ग्रन्थानां विशेषणानि | ४० |
| ३५ | दश चित्तसमाधिस्थानानि | ४२ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| ३६ | पद्यैर्दशचित्तसमाधिस्थानानां वर्णनम् (गा. १–१७) | ४३ |
| | **षष्ठदशा उपासकप्रतिमाध्ययनम्** | **४८** |
| ३७–३९ | उपासकप्रतिमाविषयकसूत्राणि | ४८ |
| | अक्रियावादिनः स्वरूपम् | ४८ |
| ३९–४० | अक्रियावादिनः प्रज्ञा | ४८ |
| ४१–४२ | अक्रियावादिनो मनोवृत्तिः | ५० |
| ४३–४४ | अक्रियावादिनो वर्तनम् | ५२ |
| | पापस्थानानां वर्णनम् | ५२ |
| | कामाङ्ग–वाहन–परिग्रहादीनां वर्णनम् | ५३ |
| ४५–४६ | अक्रियावादिनो दण्डपद्धतिः | ५५ |
| ४७–४८ | अक्रियावादिनः कर्म | ५६ |
| ४९–५० | अक्रियावादिनो भवान्तरे गतिः | ५७ |
| ५१ | नरकवर्णनम् | ५८ |
| ५२ | नरकवेदनावर्णनम् | ५९ |
| ५३ | अक्रियावादिनः संसारे भ्रमणं दुर्लभबोधित्वं च | ६० |
| ५४–५६ | क्रियावादिनः स्वरूपम् | ६० |
| ५७ | प्रथमोपासकप्रतिमाया निरूपणम्–सत्यधर्मरुचिः | ६१ |
| | शीलव्रतादीनां वर्णनम् | ६१ |
| ५८ | द्वितीयोपासकप्रतिमाया निरूपणम्–शीलव्रतादीनि | ६१ |
| ५९ | तृतीयप्रतिमाया निरूपणम्–सामायिकं देशावकाशिकं च | ६१ |
| | पौषधव्रतवर्णनम् | ६२ |
| ६० | चतुर्थोपासकप्रतिमाया निरूपणम् – पौषधः | ६२ |
| ६१ | पञ्चमप्रतिमाया वर्णनम्–स्नानरात्रिभक्तत्यागो दिवा ब्रह्मचारी च | ६२ |
| ६२ | षष्ठोपासकप्रतिमाया निरूपणम्–सम्पूर्णब्रह्मचर्ययुक्तता | ६३ |
| ६३ | सप्तमप्रतिमाया वर्णनम्–सचित्ताहारत्यागः | ६३ |
| ६४ | अष्टमप्रतिमाया निरूपणम्–आरम्भत्यागः | ६३ |
| ६५ | नवमप्रतिमाया निरूपणम्–प्रेष्यारम्भत्यागः | ६३ |
| ६६ | दशमप्रतिमाया निरूपणम्–उद्दिष्टभक्तत्यागः कल्प्यभाषे च | ६४ |
| ६७ | एकादशप्रतिमाया निरूपणम्–श्रमणभूतत्वम् | ६४ |
| | **सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमाध्ययनम्** | **६७** |
| ६८–७० | भिक्षुप्रतिमाविषयकसूत्राणि | ६७ |
| | अष्टम्यादिप्रतिमानां सङ्ख्याविरोधनिरासः | ६७ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | रात्रिन्दिवाशब्दस्य तात्पर्यम् | ६७ |
| ७१ | प्रथमप्रतिमाया वर्णनम्–प्रतिमाप्रतिपन्नस्य तितिक्षा | ६७ |
| ७२ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य आहारविषयकाभिग्रहः | ६८ |
| | दत्तिप्रमाणम् | ६८ |
| | अतिथ्यभ्यागतयोर्विशेषः | ६८ |
| ७३ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य त्रयो गोचरकालाः | ६९ |
| ७४ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य षड्विधा गोचरचर्या | ६९ |
| ७५ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्याप्रतिबद्धविहारः | ७० |
| | नगर–निगम–खेट–कर्बट–पत्तन–पट्टन–द्रोणमुखा–ऽऽकरा–ऽऽश्रम–सम्बाध–राजधानी–मडम्बानां वर्णनम् | ७० |
| ७६ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य चतस्रो भाषाः | ७१ |
| | याचनी–पृच्छन्य–ऽनुज्ञापनी–व्याकरीभाषाणां वर्णनम् | ७१ |
| ७७ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य कल्प्यास्त्रय उपाश्रयाः | ७१ |
| ७८ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य कल्प्यास्त्रयः संस्तारकाः | ७१ |
| ७९–८० | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य स्थानविधिः | ७१ |
| ८१ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य गमनविधिः | ७२ |
| ८२–८३ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य कण्टकादीनां प्राणादीनां चाविशोधनम् | ७२ |
| ८४ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य सूर्यास्तानन्तरमविहरणम् | ७२ |
| | जलशब्दस्य पारिभाषिकार्थः | ७३ |
| | स्नेहकायस्य रक्षणम् | ७३ |
| | दुर्ग–निम्न–विषय–पर्वत–पर्वतदुर्ग–गर्ता–दरीणां वर्णनम् | ७३ |
| | प्रभातवर्णनम् | ७३ |
| ८५ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्यानन्तरितायां पृथिव्यामशयनं प्रतिलेखिते च स्थण्डिले परिष्ठापनम् | ७४ |
| ८६ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य सरजस्केन कायेनानिष्क्रमणम् | ७४ |
| | स्वेद–जल्ल–मल–पङ्कानां वर्णनम् | ७४ |
| ८७ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्याचित्तजलेनापि हस्तादीनामधावनम् | ७४ |
| ८८ | प्रतिमाप्रतिन्नस्य दुष्टपशावाऽऽपतति सत्यप्रत्यवसर्पणमदुष्टे चाऽऽपतति प्रत्यवसर्पणम् | ७५ |
| ८९ | प्रतिमाप्रतिपन्नस्य छायाऽऽतपयोरध्यासनम् | ७५ |
| ९० | भिक्षुप्रतिमा कथं पालिता स्यात् | ७५ |
| ९१ | सप्तमासिकीं प्रतिमां यावद् दत्तिवृद्धिः | ७५ |
| ९२ | प्रथमा सप्तरात्रिन्दिवा प्रतिमा–तस्यां तपोऽभिग्रह उपसर्गश्च | ७६ |
| ९३–९४ | द्वितीया तृतीया च सप्तरात्रिन्दिवा प्रतिमा | ७६ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| ९५ | अहोरात्रिकप्रतिमायामभिग्रहः | ७६ |
| ९६ | एकरात्रिकप्रतिमाया वर्णनम् | ७७ |
| ९७ | एकरात्रिकप्रतिमामननुपालयतस्त्रीण्यहितस्थानानि | ७७ |
| ९८ | एकरात्रिकप्रतिमां पालयतस्त्रीणि हितस्थानानि | ७७ |
| ९९ | एकरात्रिकप्रतिमा कथमनुपालिता स्यात् ? | ७८ |
| | **अष्टमदशा पर्युषणाकल्पाध्ययनम्** | **७९** |
| १०० | महावीरस्वामिनः पञ्च कल्याणकानि | ७९ |
| | पर्युषणाकल्पस्य शब्दार्थः | ७९ |
| | जिनचरितकथनस्य प्रयोजनम् | ७९ |
| १०१ | महावीरस्वामिनश्च्यवनकल्याणकम् | ८० |
| १०२ | महावीरस्वामिनस्त्रिज्ञानोपेतत्वम् | ८२ |
| | देवानां च्यवनज्ञापकचिह्नानि | ८२ |
| १०३ | देवानन्दायाः स्वप्नदर्शनम् | ८२ |
| १०४ | चतुर्दश स्वप्नाः (गा. १८) | ८२ |
| १०५ | देवानन्दाया ऋषभदत्तब्राह्मणाय स्वप्नकथनं फलपृच्छा च | ८३ |
| | पुनरुक्तिः कदा दोषाय न भवति ? | ८३ |
| १०६ | ऋषभदत्तस्य स्वप्नानां फलनिश्चयः | ८४ |
| | मति-बुद्धि-स्मृति-प्रज्ञासु विशेषः | ८४ |
| १०७-१०९ | स्वप्नानां फलकथनम् | ८४ |
| | लक्षण-व्यञ्जनयोर्विशेषः | ८५ |
| | मानोन्मानप्रमाणानां वर्णनम् | ८५ |
| | वेद-पुराण-निघण्टु-षष्टितन्त्रादिशास्त्रानां परिचयः | ८६ |
| | षष्टितन्त्रस्य षष्टिः पदार्थाः | ८६ |
| ११०-१११ | देवानन्दायाः सन्तुष्टिः | ८८ |
| ११२ | शक्रस्य वर्णनम् | ८८ |
| ११३ | शक्रस्य परिवारः | ८९ |
| | महिषीशब्दस्य विशिष्टार्थः | ८९ |
| | अष्टानामग्रमहिषीणां नामानि | ८९ |
| | शक्रस्य तिसृणां पर्षदानां प्रयोजनम् | ८९ |
| | सप्तानामनीकानां प्रयोजनम् | ९० |
| | आत्मरक्षकदेवानां प्रयोजनम् | ९० |
| | पौरपत्य-स्वामित्व-भर्तृत्व-महत्तरकत्वा-ऽऽज्ञेश्वरसेनापत्यानां विशेषः | ९० |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| ११४ | शक्रस्य भगवतो गर्भतया दर्शनम् | ९१ |
| | शक्रस्यावधिज्ञानस्य विषयः | ९१ |
| | कटक-त्रुटित-केयूर-मुकुट-कुण्डलाद्याभरणानां वर्णनम् | ९१ |
| | अञ्जलिमुद्राया वर्णनम् | ९२ |
| ११५ | शक्रस्तवः | ९२ |
| | अद्वैतमतनिरासः | ९२ |
| | भगशब्दस्य द्वादशार्थाः | ९३ |
| | तीर्थङ्कराणां विशेषणानां सार्थकत्वम् | ९३ |
| | ज्ञान-दर्शनयोर्विशेषः | ९५ |
| | वैशेषिकमुक्तस्य खण्डनम् | ९६ |
| | पुनरुक्तिः कदा दोषाय न भवति ? | ९६ |
| | महावीरस्तुतेस्तस्मिन्नवसरे निरर्थकतायाः शङ्का समाधानं च | ९६ |
| | भावनिक्षेपमानिनां शब्दनयवादिनां निरासः | ९६ |
| | वस्तुमात्रस्य चतूरूपव्यवस्थितिः | ९७ |
| | नामनयस्य मतः | ९७ |
| | स्थापनानयस्य स्थापनम् | ९८ |
| | द्रव्यनयस्य तर्कः | ९८ |
| | भावनयस्य मतः | ९८ |
| | परमार्थतोऽशेषनयानां सापेक्षत्वम् | ९९ |
| | प्रतिमाद्याराधनाया सार्थकत्वम् | ९९ |
| ११६-११८ | शक्रस्य सङ्कल्पो हरिणेगमेषेः शब्दापनं च | १०० |
| | अन्त्य-प्रान्त-तुच्छादिकुलानां वर्णनम् | १०० |
| | उग्र-भोग-राजन्यादिकुलानां वर्णनम् | १०० |
| | जाति-कुलयोर्विशेषः | १०१ |
| | दशाऽऽश्चर्याः | १०१ |
| ११९-१२३ | शक्रस्य हरिणेगमेषिं प्रत्याज्ञा | १०२ |
| १२४-१२६ | गर्भसङ्क्रमणं हरिणेगमेषेराज्ञाप्रत्यर्पणं च | १०२ |
| | द्वितीयवैक्रियसमुद्घातस्य प्रयोजनम् | १०४ |
| | समुद्घातेन ग्राह्यपुद्गलानां विषये शङ्का समाधानं च | १०४ |
| | देवानां गतेः वर्णनम् | १०४ |
| | गर्भसङ्क्रमणस्य चातुर्विध्यम् | १०४ |
| १२७ | महावीरस्वामिनस्त्रिज्ञानोपेतत्वम् | १०५ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| १२८–१२९ | महावीरस्वामिनो गर्भसङ्क्रमणकालः | १०५ |
| १३०–१३१ | त्रिशलायाः स्वप्नदर्शनम् | १०६ |
| | त्रिशलाया वासगृहस्य शय्यायाश्च वर्णनम् | १०६ |
| १३२ | स्वप्नवर्णनम्–प्रथमो गजः (गा. १९) | १०७ |
| | प्रथमस्वप्नेऽपवादः | १०७ |
| १३३ | द्वितीयस्वप्नो वृषभः | १०८ |
| १३४ | तृतीयस्वप्नः सिंहः | १०८ |
| १३५ | तुरीयस्वप्नः श्रीदेवी | १०९ |
| १३६ | पञ्चमस्वप्नः पुष्पदाम | १११ |
| १३७ | षष्ठस्वप्नश्चन्द्रः | १११ |
| १३८ | सप्तमस्वप्नः सूर्यः | ११२ |
| | मासानुसारेण सूर्यस्य किरणाः | ११३ |
| १३९ | अष्टमस्वप्नो ध्वजः | ११३ |
| १४० | नवमस्वप्नः पूर्णकलशः | ११४ |
| १४१ | दशमस्वप्नः पद्मसरः | ११४ |
| १४२ | एकादशस्वप्नः क्षीरसागरः | ११५ |
| १४३ | द्वादशस्वप्नो विमानवरपुण्डरीकः | ११६ |
| १४४ | त्रयोदशस्वप्नो रत्नराशिः | ११७ |
| १४५ | चतुर्दशस्वप्नो निर्धूमाग्निः | ११७ |
| १४६ | त्रिशलाया जागरणम् (गा. २०) | ११८ |
| १४७–१४९ | सिद्धार्थराज्ञे स्वप्नकथनं फलपृच्छा च | ११८ |
| १५०–१५२ | सिद्धार्थस्य फलकथनम् | ११९ |
| १५३–१५४ | त्रिशलायाः सन्तुष्टिः | १२० |
| १५५ | त्रिशलायाः शेषरात्रिजागरणम् | १२१ |
| १५६ | सिद्धार्थराज्ञः कौटुम्बिकपुरुषेभ्य आदेशः | १२१ |
| १५७ | पुरुषैरुपस्थानशालायाः सज्जीकरणमादेशस्य प्रत्यर्पणं च | १२१ |
| १५८ | सिद्धार्थस्य प्रभातेऽभ्युत्थानम् | १२२ |
| १५९ | सिद्धार्थस्य व्यायामशालायां गमनम् | १२२ |
| | शतपाकतैलस्य वर्णनम् | १२३ |
| १६० | सिद्धार्थस्य मज्जनगृहे गमनं स्नानमलङ्करणं च | १२४ |
| | स्नानपीठस्य स्नानोदकस्य च वर्णनम् | १२४ |
| | अलङ्काराणां वर्णनम् | १२५ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | गणनायक–दण्डनायक–राजेश्वर–तलवर–माडम्बिक–कौटुम्बिक–मन्त्रि–महामन्त्रि– | |
| | गणक–दौवारिका–ऽमात्य–चेटादीनां वर्णनम् | १२६ |
| १६१ | सिद्धार्थस्योपस्थानशालायां गमनम् | १२७ |
| | यवनिकाया वर्णनम् | १२७ |
| १६२–१६३ | स्वप्नलक्षणपाठकानां शब्दापनम् | १२८ |
| १६४–१६६ | स्वप्नलक्षणपाठकानामागमनम् | १२८ |
| | बलिकर्म–कौतुकादीनां वर्णनम् | १२८ |
| | द्विविधमेकतो मेलनम् | १२९ |
| | वन्दित–पूजित–सत्कारित–सन्मानितानां विशेषः | १२९ |
| १६७ | स्वप्नलक्षणपाठकेभ्यः स्वप्नकथनं फलपृच्छा च | १२९ |
| १६८ | स्वप्नलक्षणपाठकैः फलनिश्चयः | १३० |
| १६९–१७४ | स्वप्नफलकथनम् | १३० |
| १७५–१७६ | सिद्धार्थराज्ञः सन्तुष्टिः प्रीतिदानं च | १३१ |
| १७७–१७९ | सिद्धार्थराज्ञा त्रिशलायै फलकथनम् | १३१ |
| १८०–१८१ | त्रिशलायाः स्वभवनगमनम् | १३१ |
| १८२ | तिर्यग्जृम्भकदेवैर्निधानानां निक्षेपः | १३२ |
| | शृङ्गाटक–त्रिक–चतुष्क–चत्वर–चतुर्मुख–महापथादीनां वर्णनम् | १३२ |
| १८३–१८४ | भगवतः प्रभावाद् कुलस्य धनादिभिर्वर्द्धनेन नामकरणसङ्कल्पः | १३३ |
| | चतुर्धा धनस्य वर्णनम् | १३३ |
| | चतुर्विंशतिधान्यानां नामानि | १३३ |
| | राज्य–राष्ट्र–बल–वाहन–कोशादीनां वर्णनम् | १३४ |
| १८५ | भगवतो गर्भे निश्चलत्वम् | १३४ |
| १८६ | त्रिशलायाः शोकः | १३४ |
| १८७–१८८ | भगवतः कम्पनं त्रिशलाया हर्षः | १३५ |
| १८९ | भगवतोऽभिग्रहः | १३५ |
| | अभिग्रहस्य कालः | १३५ |
| १९० | त्रिशलाया गर्भपरिवहनम् | १३५ |
| | वातादिदोषैः गर्भस्य रोगाः | १३६ |
| १९१ | महावीरस्वामिनो जन्मकल्याणकम् | १३६ |
| | ग्रहाणामुच्चस्थानानि | १३७ |
| १९२–१९३ | देव–देवीनामागमनं हिरण्यादीनां वर्षा च | १३७ |
| | षट्पञ्चाशद्दिक्कुमारीणामागमनं महिमविधानं च | १३८ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | शक्रसिंहासनकम्पनं शक्रस्तवश्च | १३९ |
| | सुघोषाघण्टायास्ताडनम् | १३९ |
| | पालकविमानस्य वर्णनम् | १३९ |
| | शक्रस्य पञ्चरूपविकुर्वणा | १३९ |
| | मेरौ जिनस्य जन्माभिषेकः | १३९ |
| | जिनस्य जनन्याः समीपे स्थापनम् | १४० |
| | प्रियभाषितादास्या राज्ञो वर्धापनम् | १४० |
| | प्रियभाषिताया दासत्वापनयनम् | १४० |
| १९४–१९६ | सिद्धार्थराज्ञा बन्दिमोचनं नगरभूषणं च | १४१ |
| १९७ | सिद्धार्थराज्ञा दशदिवसस्थितिपतिता | १४२ |
| | शङ्ख–पणवादिवाद्यानां वर्णनम् | १४३ |
| १९८–१९९ | सिद्धार्थराज्ञा यागादिकृत्यानि प्रीतिभोजनं च | १४३ |
| | स्थितिपतिताया वर्णनम् | १४४ |
| | मित्र–ज्ञाति–निज–स्वजनादीनां वर्णनम् | १४४ |
| २००–२०१ | भगवतो नामकरणम् | १४४ |
| २०२ | भगवतस्त्रीणि नामधेयानि | १४५ |
| २०३–२०७ | भगवतः स्वजनानां नामधेयानि | १४५ |
| २०८ | लोकान्तिकदेवैर्विज्ञप्तिः | १४६ |
| | भगवतो मातापितॄणां भवान्तरगतौ मतान्तराणि | १४७ |
| | भगवतो गृहे भावमुनित्वम् | १४७ |
| | लोकान्तिकदेवानां वर्णनम् | १४८ |
| २०९–२११ | महावीरस्वामिनो महाभिनिष्क्रमणम् | १४८ |
| | नारक–देव–तीर्थकराणामभ्यन्तरावधिः | १४९ |
| | वरवरिकाया वर्णनम् | १४९ |
| | भगवतः स्नानं विलेपनं च | १५० |
| | चन्द्रप्रभाशिबिकाया वर्णनम् | १५० |
| | शाङ्खिक–चाक्रिक–लाङ्गलिकादीनां वर्णनम् | १५१ |
| | दिवस–पक्ष–मास–ऋत्वादीनां वर्णनम् | १५२ |
| २१२ | महावीरस्वामिनो दीक्षाकल्याणकम् | १५३ |
| | पञ्चमुष्टिकलोचः सामायिकप्रतिपत्तिश्च | १५४ |
| | कस्तीर्थकरः कतिभिः सह प्रव्रजितः ? | १५४ |
| २१३ | महावीरस्वामिनश्चीवरधारित्वं पाणिपतद्ग्रहत्वं च | १५४ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| २१४ | महावीरस्वामिनस्तितिक्षा | १५४ |
| २१५ | महावीरस्वामिनो गुणाः | १५५ |
| | समिति–गुप्तीनां वर्णनम् | १५५ |
| | सप्तदशप्रकारः संयमः | १५५ |
| २१६ | महावीरस्वामिनो द्रव्य–क्षेत्र–काल–भावैरप्रतिबद्धत्वम् | १५६ |
| | क्षेत्र–खल–नभो–गृहा–ऽङ्गणानां वर्णनम् | १५७ |
| | समया–ऽऽवलिका–ऽऽनप्राण–स्तोकादिकालमानानां वर्णनम् | १५७ |
| | भय–हास्य–प्रेम–द्वेषादिभावानां वर्णनम् | १५७ |
| २१७ | महावीरस्वामिनश्चर्या | १५७ |
| २१८ | महावीरस्वामिनः केवलज्ञानकल्याणकम् | १५८ |
| | क्षमा–ऽऽर्जव–मार्दवादीनां भावानां वर्णनम् | १५८ |
| | शुक्लध्यानस्य चत्वारो भेदाः | १५९ |
| २१९ | महावीरस्वामिनः सर्वज्ञत्वम् | १५९ |
| | द्रव्य–पर्याययोरविष्वग्भावः | १५९ |
| | आगति–गति–स्थिति–च्यवनो–पपातानां वर्णनम् | १५९ |
| | जीवानामेकसमय एकयोगवर्तित्वम् | १५९ |
| | जीवेषु योगमार्गणा | १६० |
| | गुण–पर्याययोर्भेदः | १६० |
| २२० | महावीरस्वामिनश्चतुर्मासकप्रमाणम् | १६० |
| | अस्थिकग्रामस्य नामकरणम् | १६० |
| | भगवत एकत्रानन्तरितचतुर्मासद्वयस्याकरणम् | १६० |
| | पापानगर्या नामकरणम् | १६१ |
| | भगवतो दीक्षापर्यायः | १६१ |
| २२१ | महावीरस्वामिनो निर्वाणकल्याणकम् | १६१ |
| | सौगतमतस्य निरासः | १६१ |
| | युगस्य वर्णनम् | १६१ |
| | चन्द्रसंवत्सरस्य प्रमाणम् | १६१ |
| २२२–२२३ | देव–देवीनामागमनम् | १६२ |
| २२४ | इन्द्रभूतेः केवलज्ञानम् | १६२ |
| २२५ | गणराजभिर्द्रव्योद्योतः | १६२ |
| २२६–२२८ | भस्मराशिग्रहस्य सङ्क्रमणं फलं च | १६३ |
| | भस्मराशिग्रहस्य स्थितिः | १६३ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| २२९-२३० | कुन्थ्वादीनामुत्पत्तिर्निर्ग्रन्थैरनशनम् | १६३ |
| २३१-२३४ | भगवतः श्रमण-श्रमणी-श्रावक-श्राविकासम्पदाः | १६३ |
| २३५-२३७ | भगवतश्चतुर्दशपूर्वि-अवधिज्ञानि-केवलज्ञानिनां सम्पदाः | १६४ |
| | ज्ञान-दर्शनयोः पृथक्समयभावित्वम् | १६४ |
| २३८-२३९ | भगवतो वैक्रिय-विपुलमतिलब्धिमतां सम्पदा | १६४ |
| | ऋजुमति-विपुलमत्योर्विशेषः | १६५ |
| | मनःपर्यायज्ञाने दर्शनाभावः | १६५ |
| २४०-२४१ | भगवतो वादि-सिद्धिसम्पदा | १६५ |
| २४२ | भगवत अनुत्तरौपपातिकसम्पदा | १६५ |
| | अनुत्तरवासिदेवानां वीतरागप्रायत्वं गत्यागती च | १६५ |
| २४३ | भगवतो द्विविधाऽन्तकृद्भूमिः | १६६ |
| २४४ | महावीरस्वामिनो निर्वाणम् | १६६ |
| २४५ | कल्पसूत्रस्य लेखनकालः | १६७ |
| | स्थविरावल्या भद्रबाहुकृतत्वम् | १६७ |
| | पर्युषणायाश्चतुर्थ्यां प्रवर्तनम् | १६७ |
| | वाचनान्तरस्य समन्वयः | १६७ |
| | पर्युषणायाः पञ्चम्यामेव श्रेयस्करत्वम् | १६८ |
| २४६ | पार्श्वनाथस्य पञ्च कल्याणकानि | १६८ |
| २४७-२४८ | पार्श्वनाथस्य च्यवनकल्याणकम् | १६८ |
| | पुरुषादानीयशब्दस्यार्थः | १६८ |
| २४९ | पार्श्वनाथस्य जन्मकल्याणकम् | १६९ |
| २५०-२५१ | पार्श्वनाथस्य दीक्षाकल्याणकम् | १६९ |
| २५२ | पार्श्वनाथस्य तितिक्षा | १६९ |
| २५३ | पार्श्वनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकम् | १६९ |
| २५४ | पार्श्वनाथस्य गणधराः (गा. २१) | १६९ |
| | गणधरसङ्ख्यायां मतान्तरं तस्य समन्वयश्च | १७० |
| २५५ | पार्श्वनाथस्य श्रमणादीनां सम्पदाः | १७० |
| २५६ | पार्श्वनाथस्य द्विविधाऽन्तकृद्भूमिः | १७० |
| २५७ | पार्श्वनाथस्य अगारादिपर्याया निर्वाणकल्याणकं च | १७० |
| २५८ | पार्श्वनाथाद् ग्रन्थस्य लेखनकालः | १७० |
| २५९ | नेमिनाथस्य पञ्च कल्याणकानि | १७१ |
| २६०-२६३ | नेमिनाथस्य च्यवन-जन्म-दीक्षा-केवलज्ञानकल्याणकानि | १७१ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| २६४ | नेमिनाथस्य गणधरादिसम्पदाः | १७२ |
| २६५ | नेमिनाथस्य द्विविधाऽन्तकृद्भूमिः | १७२ |
| २६६ | नेमिनाथस्य गृहस्थादिपर्याया निर्वाणकल्याणकानि च | १७२ |
| २६७ | नेमिनिर्वाणाद् ग्रन्थस्य लेखनकालः | १७२ |
| २६८–२८७ | जिनान्तरालानि | १७३ |
| २८८ | ऋषभनाथस्य पञ्च कल्याणकानि | १७४ |
| | जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तेर्मतान्तरं समाधानं च | १७५ |
| २८९–२९१ | ऋषभदेवस्य च्यवन–जन्मकल्याणके | १७५ |
| २९२ | ऋषभदेवस्य पञ्च नामधेयानि | १७५ |
| २९३ | ऋषभदेवस्य कुमारादिपर्याया दीक्षाकल्याणकं च | १७६ |
| | लेखादिद्वासप्ततिकलाः | १७६ |
| | स्त्रीणां चतुःषष्टिः कलाः | १७६ |
| | शिल्पानां कर्मणां च शतभेदाः | १७७ |
| | शिल्प–कर्मणोर्विशेषः | १७८ |
| | ऋषभदेवस्य चतुर्मुष्टिलोचः | १७८ |
| २९४ | ऋषभदेवस्य केवलज्ञानकल्याणकम् | १७८ |
| २९५ | ऋषभदेवस्य गणधरादिसम्पदाः | १७८ |
| २९६ | ऋषभदेवस्य द्विविधाऽन्तकृद्भूमिः | १७९ |
| २९७ | ऋषभदेवस्य गृहस्थादिपर्याया निर्वाणकल्याणकं च | १७९ |
| २९८ | ऋषभदेवाद् ग्रन्थस्य लेखनकालः | १७९ |
| | ऋषभदेवस्य निर्वाणमहोत्सवः | १७९ |
| २९९–३०० | महावीरस्वामिनो गणधरा गणाश्च | १८० |
| ३०१ | इन्द्रभूति–सुधर्मस्वामिनोर्दीर्घायुष्कत्वम् | १८१ |
| ३०२ | सुधर्मस्वामिन अपत्यानि | १८१ |
| ३०३ | महावीरस्वामितो यशोभद्रसूरिं यावत्स्थविरावली | १८१ |
| ३०४ | यशोभद्रसूरेरग्रतः सङ्क्षिप्तवाचना | १८२ |
| ३०५–३२० | विस्तरवाचनातः स्थविरावली (गा. २२–३५) | १८२ |
| | कुल–गण–शाखानां विशेषः | १८६ |
| | वैशेषिकदर्शनस्योत्पत्तिः | १८६ |
| | आर्यसमितैः प्रवचनप्रभावना | १८६ |
| ३२१ | पद्यैः स्थविरवन्दनम् (गा. ३६–४३) | १८७ |
| ३२२–३२३ | पर्युषणायाः कालो हेतुश्च | १८७ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | दशधा कल्पः | १८८ |
| ३२४–३२९ | गणधरादिभिः पर्युषणा | १८८ |
| | पर्युषणाया द्वैविध्यम् | १८९ |
| | गृहिणामज्ञातपर्युषणाया वर्णनम् | १८९ |
| | गृहिज्ञातपर्युषणाया वर्णनम् | १८९ |
| | अवग्रहे पञ्चपञ्चदिनवृद्धिः | १८९ |
| | जघन्य–मध्यमोत्कृष्टावग्रहः | १८९ |
| | अभिवर्धितवर्षे पर्युषणा | १९० |
| | चतुर्थ्यां पर्युषणायाः खण्डनम् | १९० |
| | द्रव्य–क्षेत्र–काल–भावस्थापना | १९० |
| ३३० | वर्षावासे कल्प्योऽवग्रहः | १९० |
| ३३१ | वर्षावासे भिक्षार्थं कल्प्यं क्षेत्रम् | १९० |
| | नदीलङ्घनस्य विधिः | १९१ |
| | जलस्य त्रय अवगाहास्तत्र विधिश्च | १९१ |
| ३३२–३३४ | वर्षावासेऽशनादिकग्रहणविधिः | १९१ |
| ३३५ | वर्षावासेऽरोगाणं विकृतित्यागः | १९२ |
| | विकृतित्यागे प्रयोजनम् | १९२ |
| | मद्यादिचतुष्कस्य ग्रहणे प्रयोजनम् | १९२ |
| | मद्यादीनामन्तःपरिभोगः | १९२ |
| | विकृतेर्द्वैविध्यम् | १९२ |
| | सञ्चयिकासञ्चयिकविकृतीनां वर्णनम् | १९३ |
| ३३६ | ग्लानार्थं विकृतिग्रहणविधिः | १९३ |
| ३३७ | वर्षावासे वसतिग्रहणविधिः | १९३ |
| ३३८–३४२ | वर्षावासे तपोऽनुसारेण साधोराहारविधिः | १९४ |
| ३४३–३४८ | वर्षावासे तपोऽनुसारेण पानकविधिः | १९५ |
| | उत्स्वेदिम–संस्वेदिमादिजलानां वर्णनम् | १९५ |
| ३४९ | वर्षावासे साधूनां दत्तिविषयकाभिग्रहः | १९६ |
| ३५० | वर्षावासे सप्तगृहान्तराणां त्यागः | १९६ |
| | सप्तगृहान्तराणां मतान्तराणि | १९६ |
| ३५१ | पाणिपात्रस्य वृष्टौ भिक्षाया निषेधः | १९७ |
| ३५२–३५३ | पाणिपात्रस्यानाच्छादिते स्थाने भोजननिषेधोऽपवादश्च | १९७ |
| ३५४ | पात्रधारिणः प्रलम्बवृष्टौ भिक्षाया निषेधोऽपवादश्च | १९७ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | अल्पवृष्टौ भिक्षायाः कारणानि प्रावरणं च | १९७ |
| ३५५ | स्थित्वा वर्षायां सत्यां वृक्षमूलादौ गमनं कल्याकल्प्यं च | १९८ |
| | पूर्वायुक्ताहारे द्वावनादेशौ हेतुश्च | १९८ |
| ३५६ | निरन्तरवर्षायां सूर्यास्तात्पूर्वं वसतावागमनम् | १९९ |
| ३५७–३५९ | विकटगृहादौ कथं स्थेयम् ? | १९९ |
| | साधोरेकाकित्वं कथं स्यात् ? | १९९ |
| ३६० | अभणितेनान्यार्थमशनादेरग्रहणम् | २०० |
| | अभणितेनाशनादेरानयने दोषाः | २०० |
| ३६१–३६२ | आर्द्रेण कायेनाशनादेरभोजनम् | २०० |
| | सप्तस्नेहायतनानां वर्णनम् | २०० |
| ३६३ | अष्टसूक्ष्माणां प्रतिलेखनम् | २०० |
| ३६४–३७१ | प्राण–पनक–बीज–हरित–पुष्पा–ऽण्ड–लयन–स्नेहसूक्ष्माणां यतना | २०० |
| | अष्टसूक्ष्माणां प्रकारा वर्णनं च | २०१ |
| ३७२ | आचार्यादीनापृच्छ्यैव भिक्षार्थं गमनम् | २०२ |
| | आचार्योपाध्यायस्थविरप्रवर्तकादीनां वर्णनम् | २०२ |
| | प्रवर्तकेन ज्ञानादिषु प्रवर्तनम् | २०२ |
| | अनापृच्छ्य भिक्षार्थं गतानां दोषाः | २०२ |
| ३७३ | सर्वेषां प्रयोजनानामापृच्छ्यैव कर्तव्यत्वम् | २०२ |
| | गुरुकुलवासस्य महिमा | २०३ |
| ३७४–३७७ | विकृतिग्रहण–चिकित्सा–तपः–संलेखनादीनामापृच्छ्यैव कर्तव्यत्वम् | २०३ |
| | वैद्यौषधपरिचारकरोगिणां गुणाः | २०३ |
| | अनापृच्छ्य तपःकरणे प्रत्यपायाः | २०३ |
| | संलेखनायाः स्वरूपम् | २०४ |
| | अनापृच्छ्य संलेखनाकरणे प्रत्यपायाः | २०४ |
| ३७८ | वस्त्रादीनामातापनार्थमन्येषां भलापनम् | २०४ |
| | भलापनं विना बहिर्गमनादौ दोषाः | २०४ |
| ३७९ | वर्षावासे शय्यासनानामभिग्रहः | २०५ |
| | अनभिगृहीतसाधोर्दोषाः | २०५ |
| ३८० | वर्षावासे तिस्र उच्चारप्रश्रवणभूमयस्तासां प्रयोजनं च | २०६ |
| ३८१ | वर्षावासे त्रयाणां मात्रकाणां ग्रहणम् | २०६ |
| | मात्रकाणां प्रयोजनम् | २०६ |
| ३८२ | पर्युषणायां लोचकरणम् | २०६ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| | केशस्थापने दोषाः | २०७ |
| | क्षुरेण मुण्डापने दोषाः | २०७ |
| | क्षुरकर्तर्योर्मुण्डापने प्रायश्चित्तम् | २०७ |
| ३८३ | पर्युषणायाः परमधिकरणस्याकरणम् | २०७ |
| ३८४ | पर्युषणायां क्षमापना | २०८ |
| | कषायस्य फलम् | २०८ |
| ३८५ | वर्षावासे त्रयाणामुपाश्रयाणां ग्रहणम् | २०८ |
| | उपाश्रयाणां प्रमार्जनविधिः | २०९ |
| ३८६ | भिक्षागमनात्पूर्वं दिशाकथनम् | २०९ |
| ३८७ | वर्षावासे गमनपरिमाणम् | २०९ |
| ३८८ | सामाचारीपालनफलम् | २१० |
| ३८९ | स्वमनीषिकापरिहारार्थं भगवदुपदेशपारतन्त्र्यस्य कथनम् | २१० |
| | सूत्राणां सार्थकत्वविषयकशङ्काः समाधानानि च | २११ |
| | सूत्ररचना तस्याश्च प्रयोजनम् | २११ |
| | **नवमदशा मोहनीयस्थानाध्ययनम्** | **२१३** |
| ३९० | महावीरस्वामिनश्चम्पायामागमनं समवसरणं देशना च | २१३ |
| | महावीरस्वामिनो वर्णनम् | २१३ |
| ३९१ | महावीरस्वामिनो मोहनीयस्थानविषयकदेशना | २१३ |
| ३९२ | प्रथमं मोहनीयस्थानं – वारिणि जीवानां मज्जनम् (गा. ४४) | २१४ |
| ३९३ | द्वितीयं स्थानं – प्राणिनां स्रोतोरोधनम् (गा. ४५) | २१४ |
| ३९४ | तृतीयं स्थानं – धूमेन हिंसा (गा. ४६) | २१४ |
| ३९५ | चतुर्थं स्थानं – शीर्षस्फोटनम् (गा. ४७) | २१४ |
| ३९६ | पञ्चमं स्थानं – शीर्षवेष्टनम् (गा. ४८) | २१५ |
| ३९७ | षष्ठं स्थानं – मायया हत्वोपहसनम् (गा. ४९) | २१५ |
| ३९८ | सप्तमं स्थानं – मायया स्वस्य दुराचाराणां छादनम् (गा. ५०) | २१५ |
| ३९९ | अष्टमं स्थानं – स्वकृतदुश्चेष्टितस्य परस्मिन्नारोपः (गा. ५१) | २१५ |
| ४०० | नवमं स्थानं – सभायां जानतोऽपि सत्यामृषाभाषणम् (गा. ५२) | २१५ |
| ४०१ | दशमं स्थानं – नायकस्य दाराणां भोगानां च विदारणम् (गा. ५३–५४) | २१६ |
| ४०२ | एकादशं स्थानं – अकुमारस्यापि 'कुमारोऽह'मिति कथनम् (गा. ५५) | २१६ |
| ४०३ | द्वादशं स्थानं – अब्रह्मचारिणोऽपि 'ब्रह्मचार्यह'मिति मायामृषया कथनम् (गा. ५६–५७) | २१६ |
| ४०४ | त्रयोदशं स्थानं – निश्रादातृराजादेर्वित्ते लोभः (गा. ५८) | २१७ |
| ४०५ | चतुर्दशं स्थानं – येनेश्वरीकृतस्तस्येर्ष्ययाऽन्तरायकरणम् (गा. ५९–६०) | २१७ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| ४०६ | पञ्चदशं स्थानं – स्वस्य भर्तुर्विहिंसनम् (गा. ६१) | २१७ |
| ४०७ | षोडशं स्थानं – बहुतरयशसो नायकस्य हननम् (गा. ६२) | २१७ |
| ४०८ | सप्तदशं स्थानं – बहुजनानां नेतुर्हननम् (गा. ६३) | २१८ |
| ४०९ | अष्टादशं स्थानं – संयतस्य धर्माच्च्यावनम् (गा. ६४) | २१८ |
| ४१० | नवदशं स्थानं – जिनानामवर्णवादः (गा. ६५) | २१८ |
| ४११ | विंशतितमं स्थानं – मोक्षपथस्यापकारोऽन्येषां विपरिणमनं च (गा. ६६) | २१८ |
| ४१२ | एकविंशतितमं स्थानं – आचार्योपाध्यायानां खिंसनम् (गा. ६७) | २१९ |
| ४१३ | द्वाविंशतितमं स्थानं – आचार्यादीनामप्रत्युपकारोऽप्रतिपूजा च (गा. ६८) | २१९ |
| ४१४ | त्रयोविंशतितमं स्थानं – अबहुश्रुतस्यापि 'वाचकोऽह'मिति श्लाघा (गा. ६९) | २१९ |
| ४१५ | चतुर्विंशतितमं स्थानं – अतपस्विनोऽपि तपसा स्वश्लाघा (गा. ७०) | २१९ |
| ४१६ | पञ्चविंशतितमं स्थानं – समर्थस्यापि ग्लानानामनुपकारः (गा. ७१–७२) | २१९ |
| ४१७ | षड्विंशतितमं स्थानं – तीर्थनाशाय कथाधिकरणयोजनम् (गा. ७३) | २२० |
| ४१८ | सप्तविंशतितमं स्थानं – श्लाघार्थं वशीकरणादिप्रयोगकरणम् (गा. ७४) | २२० |
| ४१९ | अष्टाविंशतितमं स्थानं – मानुष्यकादिभोगेष्वतृप्तिः (गा. ७५) | २२० |
| ४२० | एकोनत्रिंशत्तमं स्थानं – देवानामवर्णवादः (गा. ७६) | २२० |
| | दुर्लभबोधित्वस्य पञ्च स्थानानि | २२१ |
| ४२१ | त्रिंशत्तमं स्थानम् – अपश्यतोऽपि 'देवादीनहं पश्यामी'ति वदनम् (गा. ७७) | २२१ |
| ४२२ | मोहनीयस्थानानामुपसंहारो वर्जनोपदेशस्तत्फलं च (गा. ७८–८१) | २२१ |
| ४२३ | अध्ययनस्योपसंहारः (गा. ८२) | २२२ |
| | **दशमदशा निदानस्थानाध्ययनम्** | **२२४** |
| ४२४–४२६ | राजगृह–श्रेणिक–चेलणानां वर्णनम्, श्रेणिकेन कौटुम्बिकपुरुषेभ्यो महावीरस्वामिनेऽवग्रहस्यानुज्ञापनार्थमादेशः | २२४ |
| | आरामोद्यानाऽऽवेशनाऽऽयतनादीनां वर्णनम् | २२५ |
| | श्रेणिकस्य 'भिंभिसार' इति नामकरणम् | २२६ |
| ४२७ | कौटुम्बिकपुरुषैर्महत्तराणामादेशज्ञापनम् | २२६ |
| ४२८–४३० | महत्तरैः श्रेणिकाय भगवदागमनस्य निवेदनम् | २२७ |
| | सिङ्घाटक–त्रिक–चतुष्क–चत्वरादीनां वर्णनम् | २२८ |
| ४३१ | श्रेणिकस्य भगवत्स्तुतिः प्रीतिदानं राजगृहनगरस्य विभूषणं च | २२९ |
| | राजगृहनगरालङ्करणस्य वर्णनम् | २३० |
| ४३२ | श्रेणिकेन चतुरङ्गिसेनायाः सन्नाहकारणम् | २३१ |
| | धर्मयानस्य व्याख्या | २३१ |
| ४३३ | यानशालिना यानवाहनयोः सज्जीकरणम् | २३१ |

| सूत्राङ्कः | विषयः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| ४३४-४३५ | श्रेणिकेन चेलणायै भगवदागमनकथनम् | २३२ |
| ४३६ | चेलणायाः सज्जीभवनम् | २३३ |
| ४३७ | श्रेणिकेन चेलणया सह भगवत्पर्युपासनम् | २३४ |
| | श्रेणिकस्य शोभायात्राया अनुक्रमः | २३५ |
| | समवसरणे पर्षदानामुपविष्टत्वम् | २३६ |
| ४३८ | भगवतो देशना पर्षदायाः प्रतिगमनं च | २३६ |
| ४३९-४४० | निर्ग्रन्थनिर्ग्रन्थीनां सङ्कल्पः | २३६ |
| ४४१ | महावीरस्वामिनः प्रश्नः साधूनामुत्तरश्च | २३८ |
| ४४२-४४५ | प्रथमनिदानस्वरूपम् - निर्ग्रन्थस्य ऋद्धिमत्पुरुषविषयकनिदानम् | २३८ |
| ४४६-४४८ | द्वितीयनिदानस्वरूपम् - निर्ग्रन्थ्या ऋद्धिमत्स्त्रीत्वस्य निदानम् | २४३ |
| ४४९-४५१ | तृतीयनिदानस्वरूपम् - निर्ग्रन्थस्य स्त्रीत्वस्य निदानम् | २४४ |
| ४५२-४५४ | चतुर्थनिदानस्वरूपम् - निर्ग्रन्थ्याः पुरुषत्वस्य निदानम् | २४५ |
| ४५५-४५७ | पञ्चमनिदानस्वरूपम् - निर्ग्रन्थस्य निर्ग्रन्थ्या वा दिव्यभोगानां निदानम् | २४६ |
| | मानुष्यकभोगानां स्वरूपम् | २४७ |
| ४५८-४६० | षष्ठनिदानस्वरूपम् | २४७ |
| | अरण्यवासिनां तापसानां वर्णनम् | २४८ |
| ४६१-४६२ | सप्तमनिदानस्वरूपम् - दर्शनश्रावकत्वस्य निदानम् | २४९ |
| ४६३-४६५ | अष्टमनिदानस्वरूपम् - देशविरतश्रावकत्वस्य निदानम् | २५० |
| | देशविरतश्रावकस्य वर्णनम् | २५० |
| ४६६-४६७ | नवमनिदानस्वरूपम् - श्रमणत्वस्य निदानम् | २५२ |
| ४६८ | अनिदानस्य फलम् | २५३ |
| ४६९ | निदानस्वरूपश्रवणात् निर्ग्रन्थैरालोचनम् | २५४ |
| ४७० | अध्ययनस्योपसंहारः | २५४ |
| | **बालावबोधविभागः** | **२५७** |
| १. | दशाश्रुतस्कन्ध बालावबोध (१) | २५९ |
| २. | दशाश्रुतस्कन्ध बालावबोध (२) | ३०७ |
| ३. | दशाश्रुतस्कन्ध टबार्थ (३) | ३६२ |
| | **परिशिष्टानि** | **३९३** |
| १. | प्रथमं परिशिष्टम् - मूलसूत्रान्तर्गतगाथानामकारादिसूचिः | ३९५ |
| २. | द्वितीयं परिशिष्टम् - टीकान्तर्गतोद्धरणानामकारादिसूचिः | ३९८ |
| ३. | तृतीयं परिशिष्टम् - बालावबोधान्तर्गतोद्धरणानामकारादिसूचिः | ४०४ |
| ४. | चतुर्थं परिशिष्टम् - टीकान्तर्गतविशेषनाम्नामकारादिसूचिः | ४०५ |

चरमश्रुतकेवलिश्रीभद्रबाहुस्वामिविरचितः

पार्श्वचन्द्रगच्छीयश्रीब्रह्मऋषिरचितजनहितावृत्तिसहितः

# श्रीदशाश्रुतस्कन्धः

श्रीब्रह्मर्षिविरचितजनहितासञ्ज्ञकटीकया विभूषितः

# श्रीदशाश्रुतस्कन्धः

## प्रथमदशा असमाधिस्थानाध्ययनम्

**नमो अरिहंताणं ।।**
**नमो सिद्धाणं ।।**
**नमो आयरियाणं ।।**
**नमो उवज्झायाणं ।।**
**नमो लोए सव्वसाहूणं ।।**
**[एसो पंच नमुक्कारो**
**सव्वपावप्पणासणो ।**
**मंगलाणं च सव्वेसिं**
**पढमं हवइ मंगलं ।।]**

**[सू. 1]सुतं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं वीसं असमाहिट्ठाणा पन्नत्ता ।**

[ज.1] ॥ ॐ नमः[1]। सिद्धि[2]रस्तु ॥[3]

यथास्थिताशेषपदार्थसार्थक्रमार्थसन्धानविधिप्रवीणम् ।
जिनं जनानन्दकरं कृपाब्धिं नमामि भव्याम्बुजबोधसूरम् ॥1॥ [उपेन्द्रवज्रा]

स्तुमो महावीरजिनस्य तेजो भवाख्यनीराकरपारगस्य ।
अनादिदुःकर्मगणस्य नित्यं तृणायितं यस्य[4] सुखापमेव[5] ॥2॥ [उपेन्द्रवज्रा]

श्रीवसुभूतितनुजं वन्दे श्रीगौतमाभिधं सदा साधुम् ।
सकललब्ध्येकनिलयं मलयं गुणचन्दनौघस्य ॥3॥ [आर्या]

येषां प्रसादमासाद्य[6] जायते शास्त्रकौशलम् ।
श्रीगुरूणामहं तेषां वन्दे चरणपङ्कजम् ॥4॥ [अनुष्टुप्]

अध्ययनदशकमेतत् चूर्णिकृता यदपि वर्णितं सम्यग् ।
तदपि त्वरयति मामिह वृत्तिविधौ वाक्यदृढभक्तिः ॥5॥ [आर्या]

---

1 'ॐ नमः' LD2–LI–Kh–B प्रतिषु नास्ति ।

2 'सिद्धिरस्तु' K-LD1-LD2 प्रतिषु नास्ति ।

3 LD2 प्रतौ 'श्रीपार्श्वनाथाय नमः' इत्येव मङ्गलम् । K प्रतौ 'श्रीशारदायै नमः' इत्यस्ति ।

4 'यत्र सु°'इति K-LD1-LD2-A1-A2-B ।

5 '°खायमे°' इति K-LD1-LD2 ।

6 '°द्य ज्ञाय°' इति K-LD1-LD2 ।

इह रागद्वेषाद्यभिभूतेन संसारपारावारसारिजीवेनेन्द्रियायतनमानसानेकातिकटुकदुःखोपनिपातपीडितेन तत्परिहाराय हेयोपादेयपदार्थसार्थविज्ञानविधौ यत्नः कर्त्तव्यः । स च न विशिष्टविवेकमृते । विवेकोऽपि न प्राप्ताशेषातिशयकलापाप्तोपदेशं विना । स चाप्त आत्यन्तिकदोषप्रक्षयादेव भवितुमर्हति । स च वीतरागस्यैव। अत आरभ्यते अर्हद्वचनानुयोगः । अयं च दशाश्रुतस्कन्धोऽतिगम्भीरोऽल्पाक्षरैर्व्या-वर्णितश्चूर्णिकृता । अत एवाल्पबुद्धीनामुपकारासमर्थः । तेन तेषामनुग्रहार्थं मया तस्य किञ्चिद्विस्तरतो व्याख्यानमातन्यते ।

अथ दशाश्रुतस्कन्ध इति कः शब्दार्थ ? उच्यते, दशाध्ययनप्रतिपादको ग्रन्थो दशा, स चासौ श्रुतस्कन्धश्चेति दशाश्रुतस्कन्धः दशाकल्प इति वा पर्यायनाम । अयं च ग्रन्थोऽसमाधिस्थानादिपदार्थशासना-च्छास्त्रम् । ननु दशाश्रुतस्कन्धप्रारम्भोऽयुक्तः प्रयोजनादिभी रहितत्वात् कण्टकशाखामर्द्दनादिवदित्याशङ्का-पनोदाय प्रयोजनादिकमादावुपन्यसनीयम्, यदुक्तम् –

*पूर्वमेव*[1] *हि सम्बन्धः साभिधेयं प्रयोजनम् ।*
*मङ्गलं चैव शास्त्रस्य प्रयोक्तव्यं प्रवर्त्तकम् ॥* इति ।

तत्र प्रयोजनं द्विधा - परमपरं च, पुनरेकैकं द्विधा - कर्तृगतं श्रोतृगतं च । तत्र द्रव्यास्तिकनयमत-पर्यालोचनायामागमस्य नित्यत्वात् कर्तुरभाव एव, तथा चोक्तम् – *नैषा द्वादशाङ्गी कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्न भवति न कदाचिन्न भविष्यति, भूता भवति च भविष्यति च, अतो ध्रुवा नित्या शाश्वती [नं.सू.118]* इत्यादि । पर्यायास्तिकनयमतपर्यालोचनायां चानित्यत्वादवश्यम्भावी तत्सद्भावः । तत्त्वपर्यालोचनायां तु सूत्रार्थोभयरूपत्वादागमस्यार्थापेक्षया नित्यत्वेऽपि सूत्रापेक्षयाऽनित्यत्वात् कथञ्चित्कर्तृसिद्धिः । तत्र सूत्रकर्तुरनन्तरं प्रयोजनं सत्त्वानुग्रहः, परं त्वपवर्गप्राप्तिः । यत उक्तम् –

*श्रुत्वा शास्त्रस्य सर्वस्वं सम्यग्भावितमानसः ।*
*सर्वज्ञोक्तोपदेशेन मोक्षं गच्छन्ति मानवाः ॥*

*साधुशास्त्रोपदेशेन संसारोदधिं मज्जतः ।*
*अनुगृह्णाति यः सत्त्वान् स याति परमां गतिम् ॥*

तदर्थप्रतिपादकस्यार्हतः किं प्रयोजनमिति चेत् ? उच्यते, न किञ्चित् कृतकृत्यत्वाद्भगवतः । प्रयोजन-मन्तरेणार्थप्रतिपादनप्रयासो निरर्थक इति चेत् ? न, तस्य तीर्थकरनामकर्म्मविपाकोदयप्रभवत्वात्[2], उक्तं च –*तं च कहं वेइज्जइ ? अगिलाए धम्मदेसणाए उ [आ.नि. 183]* इति । श्रोतॄणामनन्तरं प्रयोजनं विवक्षितशास्त्रपरिज्ञानं, परं मोक्षावाप्तिः । ते हि विवक्षितं शास्त्रमर्थतः सम्यगवगम्य संसाराद्विरज्यन्ते। विरक्ताश्च सन्तः संसाराद्विनिर्ज्जिगमिषवः संयमाध्वनि यथागमं सम्यक्प्रवृत्तिमातन्वते । प्रवृत्तानां च

1 '°मेवेह स°' इति A1–A2 ।

2 'प्रभावात्' इति A2 ।

संयमप्रकर्षवशत उपजायते सकलकर्मक्षयान्निश्रेयसावाप्तिरिति । उक्तं च –

*सम्यग्भावपरिज्ञानाद्विरक्ता भवतो जनाः ।*
*क्रियासक्ता ह्यविघ्नेन गच्छन्ति परमां गतिम् ॥* इति ।

अभिधेयमसमाधिस्थानादि, तच्च प्राक्प्रदर्शितनामव्युत्पत्तिसामर्थ्यमात्रादवगतम् । सम्बन्धो द्विधा– उपायोपेयभावलक्षणो गुरुपर्वक्रमलक्षणश्च । तत्राऽऽद्यस्तर्कानुसारिणः प्रति, स चैवम् – अर्थतो भगवता वर्द्धमानस्वामिना असमाधिस्थानपरिज्ञानपरमार्थ उक्तः, सूत्रतो द्वादशस्वङ्गेषु गणधरैस्ततोऽपि मन्दमेधसामनुग्रहायातिशायिभिः प्रत्याख्यानपूर्वादुद्धृत्य पृथग् दशाध्ययनत्वेन व्यवस्थापितः ।

अयं च दशाकल्पः सम्यग्ज्ञानहेतु[1]त्वेन परम्परया मुक्तिपदप्रापकत्वात् श्रेयोभूतः । अतो मा भूदत्र विघ्न इति विघ्नविनायकोपशान्तये शिष्याणां मङ्गलबुद्धिपरिग्रहाय च स्वतो मङ्गलभूतस्याप्यस्य शास्त्रस्याऽऽदिमध्यावसानेषु मङ्गलमभिधातव्यम्, यदुक्तम् –

*श्रेयांसि बहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि ।*
*अश्रेयसि प्रवृत्तानां क्वापि यान्ति विनायकाः॥* इति ।

तत्राऽऽदिमङ्गलमविघ्नेन शास्त्रपारगमनार्थं, मध्यमङ्गलमवगृहीतशास्त्रस्थिरीकरणार्थं, अवसान[2]मङ्गलं शिष्य[3]प्रशिष्यपरम्परया शास्त्रस्याव्यवच्छेदनार्थम् । उक्तं च –

*तं मंगलमाईए मज्झे पज्जंतए य सत्थस्स ।*
*पढमं सत्थ[4]त्थाविग्घपारगमणाय निद्दिट्ठं ॥ [वि.भा. 13]*

*तस्सेव य थिज्जत्थं मज्झिमयमंतिमंपि तस्सेव ।*
*अवोच्छित्तिनिमित्तं सिस्सपसिस्साइवंसस्स ॥ [वि.भा. 14]*

तत्राऽऽदिमङ्गलं *'नमो अरिहंताण'*मित्यादिना, इष्टदेवनमस्कारस्य परममङ्गलत्वात्, उक्तं च –*मङ्गलं द्विधा–नतिरूपं स्तुतिरूपं चेति । तदप्येकैकं त्रिविधं कायिकं वाचिकं मानसिकं चेति ।* तत्रेदं नतिरूपं त्रिविधमपि । ननु कायिकवाचिके स्तोऽत्र मानसिकं तु नोपलभ्यते, अतः किमर्थं तदङ्गीकार इति चेन्मैवम्, अत्र द्वितयमपीदं मानसिकसूचकं ज्ञेयं यतः द्वयमप्येतत् तदैव सार्थकं यदा अभिप्रायपूर्वकं भवेदन्यथोपयोगशून्यं न हि विवक्षितार्थप्रसाधकं भवतीति प्रकृतं प्रतन्यते । मध्यमङ्गलं तु पर्युषणाकल्पः प्रथमसूत्रादारभ्य यावत्स्थविरावलीपरिसमाप्तिः । अवसानमङ्गलं दशमाध्ययनप्रान्ते एवं *तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे*[5] *जाव बहूणं समणाणं[दशा. 10-470]* इत्यादिना भगवतो नामोत्कीर्त्तनं

1 '°हेतु°' पदं नास्ति LI–Kh ।

2 '°सानं म°' इति LI ।

3 '°प्रतिशि°' इति M1–M3–M4–K–LD2 । '°प्रशिष्य°' इति नास्ति M2 ।

4 'सव्वत्था°' इति LD2 ।

5 '°रे रायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए ब°' इति Kh–A1–A2–M2–LI ।

यथार्थपदार्थप्रकाशकत्वख्यापनं च, तस्यापि परममङ्गलरूपत्वादिति । अथ कथं सकलमेवेदं शास्त्रं मङ्गलभूतमुच्यते ? निर्जरार्थत्वात् तपोवत्, निर्ज्जरार्थता च सम्यग्ज्ञानरूपत्वात् । उक्तं च –

*जं अन्नाणी कम्मं खवेइ बहुआहिं वासकोडीहिं ।*
*तं नाणी तिगुत्तो खवेइ ऊसासमित्तेण ॥ [बृ. भा. 1170]* इति ।

अथ मङ्गलशब्दव्युत्पत्तिरुच्यते–*उखनखणखवखमखेत्यादि दण्डकधातुः [सि. हे. धा. 63-90]* मगिर्गत्यर्थो धातुरतस्तस्यालच्प्रत्ययान्तस्य मङ्गच[1]तेऽधिगम्यते साध्यते[2] यतो हितमनेन तेन कारणेन मङ्गलम् । अथवा मङ्ग इति धर्म्मस्तं लाति-आदत्ते इति मङ्गलम्, तथा चास्मिन् ग्रन्थे मनसि भावतः परिणमति सति समुपजायते[3] सुविशुद्धसम्यग्दर्शनादिको भावधर्मः । उक्तं च –

*मंगिज्जएहिगम्मइ जेण हियं तेण मंगलं होइ ।*
*अहवा मंगो धम्मो तं लाति तयं समादत्ते ॥[वि.भा. 22]* इति ।

यदि वा मां गालयत्यपनयति भवादिति मङ्गलम् । अथवा मथ्नाति विनाशयति शास्त्रपारगमनविघ्नान्, गमयति प्रापयति शास्त्रस्थैर्यं लालयति च श्लेषयति तदेव शिष्यप्रतिशिष्यपरम्परायामिति मङ्गलम् । यद्वा मन्यतेऽनपायसिद्धं गायन्ति पदपद्धतिप्रतिष्ठितं लान्ति वाऽव्यवच्छिन्नसन्तानाः शिष्यप्रतिशिष्यादयः शास्त्रमस्मिन्निति मङ्गलम् । मा भूद्गलो-विघ्नो गालो वा नाशः शास्त्रस्य चेति मङ्गलमित्यादि । शेषं त्वाक्षेपपरिहारादिकमन्यतोऽवसेयमिति । तदेवं प्रयोजनादित्रिकं मङ्गलं चोपदर्शितम् ।

अधुनाऽनुयोगः प्रारभ्यते – अनुयोग इति कः शब्दार्थः ? उच्यते, सूत्र पाठादनु – पश्चात्सूत्रस्यार्थेन सह योगो घटनाऽनुयोगः, सूत्राध्ययनात् पश्चादर्थकथनमिति भावना । यद्वाऽनुकूलोऽविरोधी सूत्रस्यार्थेन सह योग इति । अथवा अणोर्वा लघीयसः सूत्रस्य महताऽर्थेन योगोऽणुयोगः । स चोपक्रमादिभिर्द्वारैर्बहुधा उक्तो निर्युक्तिकारेणातस्तत एव व्यासोऽवसेयः । सङ्क्षेपतस्तु श्रुतज्ञानानुयोगश्चतुर्द्धा, तद्यथा – धर्म्मकथानुयोगो १, गणितानुयोगो २, द्रव्यानुयोगश्चरणकरणानुयोगश्चेति ३-४ । तत्र धर्म्मकथानुयोग उत्तराध्ययनादिकः, गणितानुयोगः सूर्यप्रज्ञप्त्यादिकः, द्रव्यानुयोगः पूर्वाणि सम्मत्यादिकश्च, चरणकरणानुयोगश्चाऽऽचारादिकः । स चैकत्वपृथक्त्वादिभेदैर्निर्युक्तितो ज्ञेयोऽतिविस्तरभिया नेह प्रतन्यते । अत्र च[4] चरणकरणानुयोगेनाधिकारोऽतः स एव कथ्यते ।

अत्र चामी दशार्थाधिकारा भवन्ति, तद्यथा –

*असमाही1 सबलत्तं2 आसायणं3 गणिगुणा4 मणसमाही5 ।*
*सावगभिक्खुपडिमा6-7 कप्पो8 मोहो9 नियाणं 10च ॥ [दशा. नि.7]*

---

1 'मङ्गते' इति A1–A2–B–M2 ।

2 'साध्यते' इति नास्ति LD1–LD2 ।

3 '°ते वि°' इति LD1–LD2 ।

4 'च' नास्ति K–LD1–LD2–M1–M3–M4 ।

इत्युक्ता अर्थाधिकाराः । साम्प्रतं सूत्रानुगमेऽस्खलितादिगुणलक्षणोपेतं सूत्रमुच्चारणीयम् । लक्षणं त्विदम्–

*अप्पग्गंथमहत्थं बत्तीसादोसविरहियं जं च ।*
*लक्खणजुत्तं सुत्तं अट्ठहि य गुणेहिं उववेय॥[आ. नि. 860]*मित्यादि ।

तच्चेदम् - **'नमो अरिहंताण'**मित्यादि । अस्य च संहितादिक्रमेण व्याख्या कार्या । स चायम् –

*संहिता1 च पदं2 चैव पदार्थः3 पदविग्रहः4 ।*
*चालना5 च प्रसिद्धि6श्च षड्विधं विद्धि लक्षणम् ॥*

संहिता तूच्चारितैव, पदादिपदविस्तरः स्वयमूह्यः । अर्थयोजना त्वेवम् – **नम** इति नैपातिकं पदम् । नमः -करचरणमस्तकसुप्रणिधानरूपो नमस्कारो भवत्वित्यर्थः । केभ्यः ? इत्याह – **अर्हद्भ्यः**, अमरवरनिर्मिताशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हन्तीत्यर्हन्तः । यदाह –

[1]*अरहंति वंदणनमंसणाणि अरहंति पूयसक्कारं ।*
*सिद्धिगमणं च अरहा अरहंता तेण वुच्चंति ॥ [आ. नि. 921]*

अतस्तेभ्यः । इह चतुर्थ्यर्थे षष्ठी प्राकृतशैलीवशात् । अथवा **'अरहंताणं'** अरहोन्तर्भ्यः, कोऽर्थः ? अविद्यमानं रह -एकान्तरूपो देशोऽन्तश्च-मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया समस्तवस्तुस्तोमगतप्रच्छन्न-त्वस्याभावेन येषां तेऽरहोन्तरस्तेभ्यः । अथवाऽविद्यमानो रथः- स्यन्दनः सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतोऽन्त-श्च-विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषां ते अरथान्तास्तेभ्यः । अथवा **'अरहंताणं'**ति क्वचिदप्यासक्तिमगच्छद्भ्यः क्षीणरागत्वात् । अथवा अरह[2]द्भ्यः प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसम्पर्केऽपि वीतरागत्वादिकं स्वं[3] स्वभावमत्यजद्भ्यः । **'अरिहंताणं'**ति पाठान्तरम्, तत्र कर्म्मारिहन्तृभ्यः । आह च –

*अट्ठविहंपि य कम्मं अरिभूयं होइ सयलजीवाणं ।*
*तं कम्ममरिहंता अरिहंता तेण वुच्चंति ॥ [आ. नि. 920]*

**'अरुहंताण'**मित्यपि पाठान्तरम्, तत्राऽरोहद्भ्यः अनुपजायमानेभ्यः क्षीणकर्म्मबीजत्वादाह च –

*दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।*
*कर्म्मबीजे तथा दग्धे नारोहति भवाङ्कुरः ॥ [त.का. 8]*

नमस्करणीयता चैषां भवभीतानां परमपद[4]प्रदर्शकत्वेन परमोपकारित्वादिति ।

तथा **'नमो सिद्धाण'**मिति सितं–बद्धम् अष्टप्रकारं कर्म्मेन्धनं ध्मातं–दग्धं जाज्वल्यमानशुक्लध्यानानलेन यैस्ते निरुक्तविधिना सिद्धाः । अथवा *षिधु गता[पा.धा.भ्वादि 47]*विति वचनात् सेधन्ति स्म-अपुनरावृत्त्या

1 'अरिहं°' इति K–A1–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

2 '°हयद्भय' इति K–Kh–A1–A2–M1–M2–M3–M4 । s

3 'स्व'मिति नास्ति A2–M2–M3–LD2 ।

4 '°दपुरपथप्र°' इति व्या.प्र.वृत्तौ ।

निर्वृत्तिपुरीमगच्छ[1]न्, अथवा *षिधु संराद्धा[पा.धा.दिवादि 86]*विति वचनात् सिद्ध्यन्ति स्म निष्ठितार्था भवन्ति स्म, अथवा *षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये चे[पा.धा.भ्वादि 48]*ति वचनात् सेधन्ति स्म-शासितारोऽभूवन् माङ्गल्यरूपतामनुभवन्ति स्मेति सिद्धाः । अथवा सिद्धा-नित्या अपर्यवसानस्थितिकत्वात् प्रख्याता वा भव्यैरुपलब्धगुणसन्दोहत्वादाह च –

*ध्मातं सितं येन पुराणकर्म्म यो वा गतो निर्वृतिसौधमूर्ध्नि ।*
*ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमङ्गलो मे ॥*

अतस्तेभ्यो नमः । नमस्करणीयता चैषामविप्रणाशकत्वात् ।

तथा **'नमो आयरियाण'**मिति आ-मर्यादया [2]तद्विषयविनयरूपया चर्यन्ते-सेव्यन्ते जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरित्याचार्याः । उक्तं च –

*सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो गच्छस्स मेढिभूओ य ।*
*गणतत्ति विप्पमुक्को अत्थं वाएइ आयरिउ त्ति ॥*

अथवा आचारो-ज्ञानाचारादिः पञ्चधा, आ-मर्यादया वा चारो-विहार आचारः, तत्र साधवः स्वयं करणात्प्रभाषणात्प्रदर्शनाच्चेत्याचार्याः । अथवा आ–ईषत् अपरिपूर्णा इत्यर्थः, चारा[3]-हैरिका ये ते आचारा चारकल्पा इत्यर्थः, युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणा विनेया, अतस्तेषु साधवो यथावच्छास्त्रार्थोपदेशकतयेत्याचार्याः । अतस्तेभ्यः । नमस्यता चैषामाचारोपदेशकतयोपकारित्वात् ।

**'नमो उवज्झायाण'**मिति उप- समीपमागत्य अधीयते *इङ् अध्ययने[पा.धा. अदादि 36]* इति वचनात्, पठ्यते *इण् गता[पा.धा. अदादि 35]*विति वचनाद्वा, अधि–आधिक्येन गम्यते, *इक् स्मरणे [पा.धा. अदादि 37]* इति वचनाद्वा स्मर्यते सूत्रतो जिनप्रवचनं येभ्यस्ते , उपाध्यायाः । अथवा उपाधानमुपाधिः-सन्निधिस्तेनोपाधिना उपाधौ वा आयो-लाभः श्रुतस्य येषां; उपाधीनां वा विशेषणानां प्रक्रमाच्छोभनानामायो – लाभो येभ्यः ; अथवा आधीनां – मनःपीडानामायो-लाभ आध्यायः, अथवा अधियां-कुबुद्धीनामायो-लाभः अध्यायः, अथवा अध्यायो-दुर्ध्यानम्, उपहतः अध्याय आध्यायो वा यैस्ते उपाध्यायास्तेभ्यः । नमस्यता चैषां सुसम्प्रदायायातजिनवचनाध्यापनतो विनयनेन भव्यानामुपकारित्वादिति ।

**'नमो लोए सव्वसाहूण'**मिति साधयन्ति ज्ञानादिशक्तिभिर्मोक्षमिति साधवः । समतां वा सर्वभूतेषु ध्यायन्तीति निरुक्तन्यायात्साधवः । साहायकं वा संयमकारिणां साधयन्तीति साधवः । सर्वे च ते सामायिकादिविशेषणाः प्रमत्तादयः पुलाकादयो जिनकल्पिकप्रतिमाकल्पिकयथालन्दकल्पिकपरिहार-विशुद्धिकल्पिकस्थविरकल्पिकस्थिति[4]कल्पिककल्पातीतभेदाः प्रत्येकबुद्धस्वयम्बुद्धबुद्धबोधितभेदा

1 '°गमन्' इति K–M1–M3–M4–LI ।

2 '°याऽऽप्तविष°' इति K – M3 ।

3 '°रा हेरि°' इति K–LD1–M1–M2–M3–A2 ।

4 °स्थितकल्पिकस्थितास्थितक°' इति व्या.प्र.वृत्तौ ।

भारतादिभेदाः सुषमदुःषमादिविशेषिता वा साधवः सर्वसाधवः, **सर्व**ग्रहणं च सर्वेषां गुणवतां विशेषनमनीयताप्रतिपादनार्थम् । इदं चार्हदादिपदेष्वपि [1]बोद्धव्यं न्यायस्य समानत्वात् । अथवा सर्वेभ्यो जीवेभ्यो हिताः सार्व्वास्ते च ते साधवश्च सार्व्वसाधवः । सार्वस्य वाऽर्हतो, न तु[2] बुद्धादेः साधवः। सर्वान् वा शुभयोगान् साधयन्ति-कुर्वन्ति सार्वान् वाऽर्हतः साधयन्ति, तदाज्ञा[3]करणादाराधयन्ति, प्रतिष्ठापयन्ति दुर्नयनिराकरणादिति सर्वसाधवो वा । अथवा श्रव्येषु श्रवणार्हेषु वाक्येषु अथवा सव्यानि-दक्षणान्यनुकूलानि यानि कार्याणि तेषु साधवो- निपुणाः श्रव्यसाधवः सव्यसाधवो वा । अतस्तेभ्यः। **'नमो लोए सव्वसाहूणं'** तत्र सर्वशब्दस्य देशसर्वतायामपि दर्शनादपरिशेषसर्वतोपदर्शनार्थमुच्यते **लोके** मनुष्यलोके, न तु गच्छादौ चेति सर्वसाधवस्तेभ्यो नम इति । एषां च नमनीयता मोक्षमार्गसहायककर-णेनोपकारित्वात् । आह च –

*असहायसहायत्तं करंतिमे संजमं करंतस्स ।*
*एएण कारणेणं णमामहं [4]सव्वसाहूणं ॥ [ आ.नि. 1005 ]*

ननु यद्ययं सङ्क्षेपेण नमस्कारस्तदा सिद्धसाधूनामेव युक्तस्तद्ग्रहणेऽन्येषामप्यर्हदादीनां ग्रहणाद्, यतोऽ-र्हदादयो न साधुत्वं व्यभिचरन्ति । अथ विस्तरेण तदा ऋषभादिव्यक्तिसमुच्चारणतोऽसौ वाच्यः स्यादिति ? नैवम्, यतो न साधुमात्रनमस्कारेऽर्हदादिनमस्कारफलमवाप्यते मनुष्यमात्रनमस्कारे राजा-दिनमस्कारफलवदिति । 'कर्त्तव्यो विशेषतोऽसौ प्रतिव्यक्तितो' नासौ वाच्योऽशक्यत्वादिति । ननु यथाप्रधानन्यायमङ्गीकृत्य सिद्धादिरानुपूर्वी युक्ताऽत्र सिद्धानां सर्वथा कृतकृत्यत्वेन सर्वप्रधानत्वात् ? नैवम्, अर्हदुपदेशेन सिद्धानां ज्ञायमानत्वात्, अर्हतामेव च तीर्थप्रवर्तनेनाऽत्यन्तोपकारित्वादित्यर्हदादेरेव सा । नन्वेवमाचार्यादेः सा प्राप्नोति, क्वचित्काले आचार्येभ्यः सकाशादर्हदादीनां ज्ञायमानत्वादिति ? अत एव च तेषामत्यन्तोपकारित्वात् ? नैवम्, आचार्याणामुपदेशदान[5]सामर्थ्यमर्हदुपदेशत एव, न हि स्वतन्त्रा आचार्यादय उपदेशतोऽर्थज्ञापकत्वं प्रतिपद्यन्ते, अतोऽर्हन्त एव परमार्थेन सर्वार्थज्ञापकाः; तथाऽर्हत्परिषद्रूपा एवाऽऽचार्यादयोऽतस्तान्नमस्कृत्यार्हन्नमस्करणमयुक्तम् । उक्तं च –*ण य कोइवि परिसाए पणमित्ता पणमई रन्नो[आ.नि.1021]* इति वचनात् पूर्वमर्हतामेव युक्तो नमस्कार इति स्थितम् । अयं च पञ्चनमस्कारो मङ्गलरूपत्वादादावुपन्यस्तः, यत उक्तमावश्यके –

*एसो [6]पंच नमोक्कारो सव्वपावप्पणासणो ।*
*मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥* इति वचनात् ।

---

1 'बोध्यं न्या°' इति LI ।

2 'तु बौद्धा°' इति K–M1– M3–M4–LD1–LD2–Kh ।

3 '°ज्ञाया क°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2–B ।

4 '°मामिहं' इति A1 ।

5 '°शनासा°' इति LI ।

6 'एसो पंच नमोक्कारो' एतावानेव पाठः K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

अत्र च मङ्गलपरिग्रहे पदपञ्चकोपन्यासः, अन्यथाऽऽवश्यकावसरे सम्पूर्णोऽपि पठ्यत इत्यविरोधः। यत एतत्पदपञ्चकमन्यपदोपलक्षणं न तु अपरपदनिषेधपरं यतः काकेभ्यो दधि रक्ष्यतामित्यादौ दध्युपघातकयावत्परत्वं ग्राह्यमिति कृतं प्रसङ्गेन, प्रकृतं प्रस्तूयते ।

इत्थं कृतमङ्गलोपचारो भूयोऽपि मङ्गलगर्भितं गुणलक्षणोपेतं सूत्रं दर्शयति । तच्चेदं[1] प्रथमसूत्रम् – **'सुयं[2] मे आउसंतेण'**मित्यादि । व्याख्या – श्रूयते तदिति **श्रुतं,** प्रतिविशिष्टार्थप्रतिपादनफलं वाग्योगमात्रं भगवता निसृष्टमादाय श्रवणकोटरप्रविष्टं क्षायोपशमिकभावपरिणामाविर्भावकारणं श्रुतमित्युच्यते । श्रुतमाकर्णितमवधारितमितियावत् । अनेन स्वाहङ्कारव्युदासः । **मया** इत्यात्मनिर्देशः । आयुरस्यास्तीति आयुष्मान् तस्य सम्बोधनं **आयुष्म**न्निति शिष्यामन्त्रणम् । कः कमेवमाह ? सुधर्मस्वामी जम्बूनामानम् । किं तच्छ्रुतम् ? इत्याह⇒[3]**तेने**ति त्रिजगत्प्रतीतेन, अनेन भुवनभर्तुः परामर्शः, **भगवता**ऽष्टमहाप्रातिहार्य-रूपसमग्रैश्वर्यादियुक्तेन, उक्तं च –

*ऐश्वर्यस्य समग्रस्य रूपस्य यशसः श्रियः ।*
*धर्मस्याथ प्रयत्नस्य षण्णां भग इतीङ्गना ॥*

इति वचनात्, ⇐ वर्द्धमानस्वामिनेत्यर्थः **एव**मित्यमुना वक्ष्यमाणन्यायेनाऽऽख्यातं सकलजन्तुभाषाभिव्याप्त्या कथितम्,⇒[4]उक्तं च -

*देवा दैवीं नरा नारीं शबराश्चापि शाबरीम् ।*
*तिर्यञ्चोऽपि हि तैरश्चीं मेनिरे भगवद्गिरम् ॥* ⇐इति ।

किम् ? अत आह - **इह खलु** इत्यादि । **इहे**ति लोके प्रवचने वा **खलु**र्वाक्यालङ्कारे अवधारणे वा, तत इहैव जिनप्रवचन एव **स्थविरै**र्गणधरै**र्भगवद्भि**ः परमैश्वर्यादियुक्तै**र्विंशति**रिति विंशतिसङ्ख्यानि ⇒[5]**'असमाहिठाणाइं'**ति *अमानोनाः प्रतिषेधे*, न समाधयोऽसमाधयः असमाधीनां स्थानानि⇐ **असमाधिस्थानानि** येष्वा[6]सेवितेषु सत्सु आत्मनः परस्य उभयोर्वा इह परत्र उभयत्रासमाधयो भवन्ति तानि असमाधिस्थानानि असमाधिपदानि असमाधिभेदरूपाणीति यावत् । तत्र समाधिर्द्विधा - द्रव्ये भावे च । तत्र द्रव्यसमाधिः द्रव्येण माधुर्यादिगुणान्वितेन हेतुभूतेन स्वास्थ्यमुपजायते, तदेव समाधिहेतुत्वात्समाधिरिति। भावसमाधिस्तु ज्ञानदर्शनचारित्राणां स्वस्वरूपाविरोधेनावस्थानं स भावसमाधिर्ज्ञातव्यः । नञर्थोल्लेखस्तु

---

1 लक्षणं चेदम्–
*अप्पगंथमहत्थं बत्तीसादोसविरहियं जं च ।*
*लक्खणजुत्तं सुत्तं अट्ठहि य गुणेहिं उववेय॥[आ. नि. 88]*मित्यादि ।
इति अधिकः पाठः Kh–B–LI ।

2 अत्रेदं सूत्रं सम्पूर्णमस्ति Kh–A1–A2–M2–LI–B ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः K-LD1-LD2–M1-M3-M4 प्रतिषु नास्ति ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2–M1-M3-M4 प्रतिषु ।

5 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2–M1-M3-M4 प्रतिषु ।

6 '°ष्वासक्तेषु' इति LI ।

पूर्वमेव विहितः । **'पन्नत्ता'** इति **प्रज्ञप्तानि** प्ररूपितानि भगवतः सकाशे श्रुत्वा ग्रन्थत उपरचितानीत्यर्थः । अत्र च श्रुतमित्यनेनावधारणाभिधायिना यथावधारितमेव अन्यस्मै प्रतिपादनीयमित्याह, अन्यथाऽभिधाने प्रत्युतापायसम्भवात्, ⇒[1]उक्तं च –

*किं एत्तो पावयरं ? जमणहिगयधम्मसब्भावो ।*
*अन्नं कुदेसणाए कट्टयरागंमि पाडेइ त्ति ॥*

मया इत्यनेनार्थतोऽनन्तरागमत्वमाह । भगवता इत्यनेन वक्तुः केवलज्ञानादिगुणवत्त्वसूचकेन प्रकृतवचसः प्रामाण्यं ख्यापयितुं वक्तुः प्रामाण्यमाह, वक्तृप्रामाण्यमेव हि वचनप्रामाण्यनिमित्तम्, यदुक्तम् - *पुरुषप्रामाण्यमेव शब्दे दर्पणसङ्क्रान्तमुखमिवोपचारादभिधीयते ।* तेनेति च गुणवत्त्वप्रसिद्ध्यभिधानेन प्रस्तुताध्ययनस्य प्रामाण्यनिश्चयमाह, सन्दिग्धे हि वक्तुर्गुणवत्त्वे वचसोऽपि प्रामाण्यं सन्दिह्येतेति । समुदायेन तु आत्मौद्धत्यपरिहारेण गुरुगुणप्रभावनापरैरेव विनेयेभ्यो देशना विधेया, एतद्भक्तिपरिणामे च विद्यादेरपि फलसिद्धिः, यदुक्तम्– *आयरियभत्तिराएण विज्जा मंता य सिज्झंति ।* अथवा आयुष्मन्निति च प्रधानगुणनिष्पन्नेनाऽऽमन्त्रणवचसा गुणवते शिष्यायाऽऽगमरहस्यं देयं, नागुणवत इत्याह, तदनुकम्पाप्रवृत्तेरिति, उक्तं च –

*आमे घडे निहत्तं जहा जलं तं घडं विणासेइ ।*
*इय सिद्धंतरहस्सं अप्पाहारं विणासेइ ॥ [नि.भा. 6243]*

आयुश्च प्रधानो गुणः, सति तस्मिन्नव्यवच्छित्तिभावात् । अथवा 'आउसंतेणं'ति भगवद्विशेषणम्, आयुष्मता भगवता चिरजीविनेत्यर्थः, मङ्गलवचनमेतत् । यद्वा आयुष्मतेति परार्थप्रवृत्त्यादिना प्रशस्तमायुर्धारयता, न तु मुक्तिमवाप्यापि तीर्थनिकारादिदर्शनात्पुनरिहाऽऽयातेन, यथोच्यते कैश्चित् –

*ज्ञानिनो धर्मतीर्थस्य कर्तारः परमं पदम् ।*
*गत्वाऽऽगच्छन्ति भूयोऽपि भवं तीर्थनिकारतः ॥*

एवं हि अनुन्मूलितनिःशेषरागादिदोषत्वात्तद्वचसोऽप्रामाण्यमेव स्यात्, निःशेषोन्मूलने हि रागादीनां कुतः पुनरिहाऽऽगमनं सम्भवति ? यदि वा 'आवसंतेणं'ति मयेत्यस्य विशेषणम्, तत आङिति गुरुदर्शितमर्यादया वसता, अनेन तत्त्वतो गुरुमर्यादावर्तित्वरूपत्वाद्गुरुकुलवासस्य तद्विधानमर्थत उक्तं ज्ञानादिहेतुत्वात्तस्य, उक्तं च –

*णाणस्स होइ भागी थिरयरतो दंसणे चरित्ते य ।*
*धन्ना आवकहाए गुरुकुलवासं न मुंचंति ॥ [वि. भा. 3459]*

अथवा 'आमुसंतेण' आमृशता भगवत्पादारविन्दं भक्तितः करतलयुगादिना स्पृशता, अनेनैतदाह- अधिगतसमस्तशास्त्रेणापि गुरुविश्रामणादि[2]विनयकृत्यं न मोक्तव्यम्, उक्तं हि –

---

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2-M1-M3-M4 प्रतिषु ।

2 '°दिदानेन यतितव्यं वि°' इति अधिकः पाठः A2प्रतौ ।

*जहाहि अग्गी जलणं नमंसे णाणाहुइमंतपयाभिसित्तं ।*
*एवायरियं उवचिट्ठइज्जा अणंतणाणोवगतोऽवि संतो ॥ [दश.9-1-11]त्ति ।*

यद्वा 'आउसंतेणं'ति प्राकृतत्वेन तिङ्व्यत्ययादाजुषमाणेन-श्रवणविधिमर्यादया गुरून् सेवमानेन, अनेनाप्येतदाह⇐विधिनैवोचितदेशस्थेन गुरुसकाशाच्छ्रोतव्यम्, ⇒[1]आह च –

*निद्दाविगहापरिवज्जिएहिं गुत्तेहिं पंजलिउडेहिं ।*
*भत्तिबहुमाणपुव्वं उवउत्तेहिं सुणेयव्वं ॥ [आ.नि. 707 ]*

इति वचनात्, न तु यथाकथञ्चिद् गुरुविनयभीत्या गुरुपर्षदुत्थितेभ्यो वा सकाशात्, यथोच्यते- *परिसुट्ठियाण पासे सुणेइ सो विणयपरिभंसि त्ति ।* ⇐

'स्थविरैर्विंशतिः असमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि' तत्र किं स्थविरैः अन्य[2]पुरुषविशेषादपौरुषेयागमात् स्वतो वा? तत्रोच्यते, भगवतः सकाशादेवावगम्य तैरधिगम्य प्रज्ञप्तानि । 'थेरेहिं' ति कथनात् ज्ञानस्थविरैरित्यावेदितं भवति, न तु जातिपर्यायस्थविरैः । जातिपर्यायस्थविरत्वेऽपि श्रुतस्थविरा एव प्रज्ञापयितुं समर्था भवन्ति इति कृतं प्रसङ्गेन । इत्युक्त उद्देशः ।

**[सूत्र 2] कयरे खलु थेरेहिं भगवंतेहिं वीसं असमाहिट्ठाणा पन्नता ?**

[ज. 2] पृच्छामाह – **'कयरे'**इत्यादि । **कतराणि** किमभिधानानि तान्यनन्तरसूत्रोद्दिष्टानि, **खलु**र्वाक्यालङ्कारे, शेषं प्राग्वदिति ।

**[सूत्र 3] इमे खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं वीसं असमाहिट्ठाणा पन्नत्ता, तं जधा–[1] दवदवचारियावि भवति[2] अपमज्जियचारियावि भवति [3] दुपमज्जियचारियावि भवति [4] अतिरित्तसेज्जासणिए ।**

[ज.3] निर्देशमाह–**इमानि** अनन्तरं वक्ष्यमाणत्वाद् हृदि परिवर्तमानतया प्रत्यक्षाणि **तानि** इति, यानि त्वया पृष्टानि, शेषं पूर्ववत् । **तद्यथे**त्युदाहरणोपन्यासार्थः ।

[1] **'दवदवचारियावि भवति'***द्रु गतौ[पा.धा. भ्वादि 969]* यो हि द्रुतं द्रुतं संयमात्मविराधनानिरपेक्षो व्रजन्नात्मानं प्रपतनादिभिरसमाधौ योजयति । अन्यांश्च सत्त्वान् घ्नन्नसमाधौ योजयति, सत्त्ववधजनितेन च कर्मणा परलोकेऽप्यात्मानमसमाधौ योजयति, अतो द्रुतगन्तृत्वमसमाधिकारणत्वादसमाधिस्थानम् । एवमन्यत्रापि यथायोगमवसेयम् । **च**शब्दाद्भुञ्जानो भाषमाणः प्रतिलेखनां च कुर्व्वन् आत्मविराधनां संयमविराधनां च प्राप्नोति । **अपि**ग्रहणात्तिष्ठन् आकुञ्चनप्रसारणादिकं वा द्रुतं द्रुतं कुर्व्वन् पुनः पुनरनवलोकयन्नप्रमार्ज्जयन् आत्मविराधनां संयमविराधनां च प्राप्नोति । शब्दार्थस्तु भावित एव । ननु स्थानशयनादिषु द्रुतत्वनिषेधे सति किमर्थं गमनमेवोपन्यस्तम् ? उच्यते, यतः पूर्वमीर्यासमितिस्ततोऽन्या इति हेतोः पूर्वं गमनमेव मुख्यत्वेनोपात्तमिति ।

---

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2-M1-M3-M4 प्रतिषु ।

2 '°न्यतः पु°' इति A1-A2-LI-Kh-M2 ।

[2] तथा **'अपमज्जिय'त्ति** अप्रमार्जितअवस्थाननिषीदनशयनोपकरणनिक्षेपोच्चारादिपरिष्ठापनं च करोति ।

[3] तथा **दुःप्रमार्जितचारी ।**

[4]तथा **'अतिरित्तसेज्जासणिए'**त्ति अतिरिक्ता-अतिप्रमाणा शय्या-वसतिरासनानि च-पीठिकादीनि यस्य सन्ति सोऽ**तिरिक्तशय्यासनिकः** । स चातिरिक्तायां शय्यायां घङ्कशालादिरूपायामन्येऽपि कार्पटिकादय आवासयन्तीति तैः सहाधिकरणसम्भवादात्मपरावसमाधौ योजयतीति । एवमासनाधिक्येऽपि वाच्यमिति ।

**[5] रातिणियपरिभासी [6] थेरोवघाइए [7] भूतोवघातिए [8] संजलणे**[1] **।**

[5] तथा **'रायणियपरिभासि'**त्ति **रात्निकपरिभाषी** आचार्यादिपूज्यगुरुपरिभवकारी, अन्यो वा महान् कश्चिज्जातिश्रुतपर्यायैर्वृद्धः शिक्षयति तं परिभवति- अवमन्यते जात्यादिभिर्मदस्थानैः, अथवा

*डहरो अकुलीणोत्ति य दुम्मेहो दमगमंदबुद्धित्ति ।*
*अवि अप्पलाभलद्धी सीसो परिभवति आयरियं ॥ [बृ.भा. 772]* इति ।

एवं च गुरुं परिभवन्[2] आज्ञोपपातं वा कुर्व्वन् आत्मानमन्यांश्चासमाधौ योजयत्येव ।

[6] तथा '[3]**थविरोवघाइ'**त्ति स्थविरा- आचार्यादिगुरवः, तान् आचारदोषेण शीलदोषेणावज्ञादिभिर्वोप-हन्तीत्येवंशीलः स एवं चेति **स्थविरोपघातिकः** ।

[7] तथा **'भूतोवघातिते'**त्ति भूतान्येकेन्द्रियादीनि, तानि उपहन्तीति **भूतोपघातिकः** । प्रयोजनमन्तरेण ऋद्धिरससातागौरवैर्वा विभूषानिमित्तं वा आधाकर्मादिकं वाऽपुष्टालम्बनेऽपि समाददानः, अन्यद्वा तादृशं किञ्चित् भाषते वा करोति येन भूतोपघातो भवति ।

[8] तथा **'संजलणे'**त्ति सञ्ज्वलतीति सञ्ज्वलनः प्रतिक्षणं रोषणः, स च तेन क्रोधेनात्मीयं चारित्रं सम्यक्त्वं च हन्ति दहति वा ज्वलनवत् । तथा

**[9] कोहणे [10] पिट्ठीमंसेयावि भवइ [11] अभिक्खणं अभिक्खणं ओहारित्ता**[4] **[12] णवाइं अधिकरणाइं अणुप्पण्णाइं उप्पादइयावि**[5] **भवइ ।**

[9] **'कोहणे'**त्ति **क्रोधनः**, सकृत् क्रुद्धोऽत्यन्तक्रुद्धो भवति, अनुपशान्तवैरपरिणाम इति भावः ।

---

1 '°लणकोहाणुबंधी [9] पिट्ठीमंसेयावि भवइ [10] अभिक्खणं अभिक्खणं ओधारित्ता [11] णवाइं अधिकरणाइं अणुप्पण्णाइं उप्पाइयावि भवइ [12] पोराणाइं अधिकरणाइं खामितविउसविताइं उदीरित्ता भवइ [13] अकाले सज्झायकारियावि भवइ [14] ससरक्खपाणिपादे [15] सद्दकरे [16] झंझकरे [17] कलहकरे [18] अ°'इति K-M1 - M3-M4-LD1-LD2 ।

2 ' °भवेत् आ°' इति A1-A2-M2 ।

3 ' °था थेरो°' इति Kh-M2-M3-A1 ।

4 '°त्ता भवइ ।' इति मुद्रिते ।

5 '°या भ°' इति A1-A2-M2-Kh ।

[10] तथा **'पिट्ठीमंसिय'**त्ति **पृष्ठिमांसाशिकः**, पराङ्मुखस्य परस्यावर्णवादकारी अगुणभाषीति भावः। स चैवं कुर्वन् आत्मपरोभयेषां च इह परत्र चासमाधौ योजयत्येव । **अपि**शब्दात्साक्षादवर्णान् वक्ति इति ज्ञेयम् ।

[11] तथा **'अभिक्खण'**मिति **अभीक्ष्णम् अभीक्ष्णमवधारयिता** शङ्कितस्याप्यर्थस्य निःशङ्कितस्ये-'वैवमेवाऽय'मित्येवं वक्ता । अथवा **अवहारयिता** परगुणानामपहारकारी यथा तथा दासादिकमपि परं तथा भणति–'दासस्त्वं चौरस्त्व'मित्यादि ।

[12] तथा **'णवाइ'**मित्यादि **नवानामनुत्पन्नानामधिकरणानां** कलहानाम् **उत्पादयिता** । तांश्चोत्पादयन् आत्मानं परं चासमाधौ योजयति । ⇒[1] यथा –

*तावो भेदो अयसो हाणी दंसण-चरित्त-णाणाणं ।*
*साधुपदोसो संसारवद्धणो साधिकरणस्स ॥[बृ.भा.2708, नि.भा.2787]*

*अतिभणिय अभणिए वा तावो भेदो चरित्तजीवाणं ।*
*रूवसरिसं ण सीलं जिम्हंति अयसो चरति लोए ॥[नि.भा.2788]*

*चत्तकलहो वि ण पढति अवच्छलत्ते य दंसणे हाणी ।*
*जह कोवादिविवड्ढी तह हाणी होति चरणे वि ॥[बृ.भा. 2711, नि.भा.2790]*

*जं अज्जियं समीखल्लएहिं तवणियमबंभमइएहिं ।*
*मा हु तयं छड्डेहिह बहुतवं सागपत्तेहिं ॥*⇐

अथवा नवानि अधिकरणानि [2]यन्त्रादीनि, तेषां नवानां चोत्पादयिता ।

**[13] पोराणाइं अधिकरणाइं खामितविउसमियाइं उदीरेत्ता भवइ [14] अकाले सज्झायकारिया वि भवति [15] ससरक्खपाणिपादे [16] सद्दकरे ।**

[13] **'पोराणाइ'**मिति **पुरातनानां** कलहानां **क्षमितव्यवसितानां** मर्षितत्वेनोपशान्तानां पुन**रुदीरयिता भवति** ।

[14] तथा **'अकाले सज्झाये'**त्यादि **अकाले स्वाध्यायकारकाः** । तत्र कालः उत्कालिकसूत्रस्य दशवैकालिकादिकस्य सन्ध्याचतुष्टयं त्यक्त्वाऽनवर[3]तं भणनस्य कालिकस्य पुनराचाराङ्गादिकस्योद्घाटापौरुषीं यावद्भणनम्,अवसानयामं च दिवसस्य निशायाश्चाद्यन्तयामं च त्यक्त्वा अपरस्त्वकाल एव । अकाले स्वाध्यायकरणे दूषणानि तु बृहत्कल्पवृत्तितोऽवसेयानि, नेह विस्तरत्वात् उक्तानि ।

[15] तथा **'ससरक्खे'**त्यादि **सरजस्कपाणिपादो** यः सचेतनादिरजोगुण्डितेन हस्तेन दीयमानां भिक्षां

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2-M1-M3-M4 प्रतिषु ।

2 'यन्त्रादीनि' नास्ति A2-M2 ।

3 '°वरं तं' इति K-LD1-LD2–M1-M3-M4 ।

गृह्णाति, तथा यो हि स्थण्डिलादौ सङ्क्रामन्न पादौ प्रमार्ष्टि, अथवा यस्तथाविधकारणे सचित्तादिपृथिव्यां कल्पादिनाऽनन्तरितायामासनादि करोति, स सरजस्कपाणिपाद इति । स चैवं कुर्वन् संयमे असमाधिना आत्मानं संयोजयति ।

[16] तथा **'सद्दकरे'**त्ति **शब्दकरः**, सुप्तेषु लोकेषु प्रहरमात्रादूर्द्ध्वं रात्रौ महता शब्देनोल्लापस्वाध्यायादिकारको गृहस्थभाषाभाषको वा वैरात्रिकं वा कालग्रहणं कुर्वन् महता शब्देनोल्लपति । दोषाश्चेहोत्तराध्ययनवृत्ते-रवसेयाः ।

**[17] भेदकरे[1] झंझकरे [18] कलहकरे असमाहिकारए [19] सूरप्पमाणभोईए [20] एसणासमिए असमिए यावि भवइ ।**

**एते[2] खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं वीसं असमाहिट्ठाणा पन्नत्ता त्ति बेमि । पढमा दसा सम्मत्ता ॥**

[17] **'भेदकरे'**त्ति येन येन कृतेन गच्छस्य भेदो भवति तत्तदातिष्ठते । **'झंझकरे'**त्ति तत्करोति येन गणस्य मनोदुःखमुत्पद्यते तद्भाषते वा ।

[18 ] तथा **'कलहकरे'**त्ति आक्रोशादिना येन कलहो भवति, तत्करोति । स चैवङ्गुणयुक्तो हि असमाधिस्थानं भवति इति वाक्यशेषः ।

[19] तथा **'सूरप्पमाणभोजी'**त्ति **सूरप्रमाणभोजी**, सूर्योदयादस्तसमयं यावदशनपानाद्यभ्यवहारी । उचितकाले स्वाध्यायादि न करोति, [3]प्रतिप्रेरितो रुष्यति । अजीर्यति च बह्वाहारेऽसमाधिः सञ्जायत इति दोषाः[4] ।

[20] तथा **'एसणासमिए असमिए यावि भवति'** त्ति एषणायां समितश्चापि संयुक्तोऽपि[5] नानेषणां परिहरति प्रतिप्रेरितश्चासौ साधुभिः सह कलहायते । अनेषणीयमपरिहरन् जीवोपरोधे वर्तते । एवं चात्मपरयो-रसमाधिकरणादसमाधिस्थानमिदं विंशतितममिति ।

**'एवं खल्वि'**त्यादि **एव**मित्यनन्तरोक्तेन विधिना, **खलु**र्वाक्यालङ्कृतौ, शेषं व्याख्यातार्थमिति । **'त्ति बेमि'इतिः** परिसमाप्तावेवमर्थे वा, एतानि असमाधिस्थानानि अनेन वा प्रकारेण **ब्रवीमि** गणधरादिगुरूपदेशतो, न तु स्वोत्प्रेक्षयेत्युक्तोऽनुगमः । नयप्रस्तारस्त्वन्यतोऽवसेयः । इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुत-स्कन्धटीकायामसमाधिस्थाननामकं प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥

1 'भेदकरे' इति सर्वास्वपि प्रतिषु नास्ति तथापि टीकाकारेण व्याख्यातमिति कृत्वाऽत्र पाठः स्वीकृतः ।

2 'एवं ख°' इति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

3 'प्रति°' इति नास्ति K-M1-M3-M4 ।

4 'दोषः' इति K-LD1-LD2-M1-M3-M4-Kh ।

5 'नानैष°' इति A1-A2-LI-B ।

# द्वितीयदशा शबलाध्ययनम्

**[सूत्र 4] सुतं मे आउसंतेणं भगवता एवमक्खातं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता ।**

**[सूत्र 5] कयरे खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता?**

**[सूत्र 6] इमे खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता, तंजहा –[1] हत्थकम्मं करेमाणे सबले [2] मेहुणं पडिसेवमाणे सबले [3] रातीभोयणं भुंजमाणे सबले [4] आहाकम्मं भुंजमाणे सबले [5] रायपिंडं भुंजमाणे सबले ।**

[ज.4-6][1] व्याख्यातमसमाधिस्थानाख्यं प्रथममध्ययनम् । इदानीं द्वितीयं व्याख्यायते । अस्य चायमभिसम्बन्धः- इहाऽनन्तराध्ययने असमाधिस्थानानि उक्तानि । तानि चाऽऽसेवमानः शबलो भवति, अथवा शबलत्वस्थानेषु वर्तमानस्यासमाधिर्भवति । अतोऽसमाधिस्थानपरिहरणाय शबलस्थानानि शबलत्वकारणानि परिहर्तव्यानि, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्यास्य शबलाध्ययनस्य व्याख्या प्रस्तूयते ।

**'सुयं मे आउसंतेण'**मित्यादि व्याख्या प्राग्वत् । नवरं शबलं-कर्बुरं चारित्रं यैः क्रियाविशेषैर्निमित्तभूतैर्भवति ते शबलास्तद्योगात् साधवोऽपि[2] शबला इति व्यपदिश्यन्ते । तत्र शबलो द्रव्यभावभेदाद् द्विधा । तत्र द्रव्यस्यानुपयुक्तत्वाद्भावशबलेनेहाधिकारः । स चैवम्-एकैकस्मिन्नपराधपदे मूलगुणवर्जे[3] आधाकर्मादौ अतिक्रमो व्यतिक्रमोऽतिचारोऽनाचारश्च, ततः सर्वैरप्येतैः शबलो भवति । तत्रातिक्रमादीनां स्वरूपमिदं यथा – आधाकर्मादिदोषवस्तुपरिभोगनिमन्त्रणे कृते सति तत्प्रतिश्रवणे प्रथमः, तदर्थं मार्गे द्वितीयः, तत्र गृहीते तृतीयः, भोजनार्थं कवलग्रहणे सति चतुर्थः । एवं यथार्हप्रतिसेवान्तरे[4]ष्वप्यूह्यम् । मूलगुणेषु तु आदिमैर्भङ्गैस्त्रिभिः शबलो भवति, चतुर्थभङ्गेन तु सर्वभङ्गः । तत्राचारित्री एव भवति शुक्लपट्टदृष्टान्तवत्। यथा शुक्लः पट एकस्मिन् देशे मलिनो भवति तदा तावन्मात्र एव धाव्यते, यदा च सर्वोऽपि मलिनो भवति तदा तु सर्वोऽपि स क्षारादिभिः सन्मिश्रः कृत्वा धाव्यते, यतो मलिनः पटः शोभतेऽपि न, अथ च शीतत्राणमपि न भवति; एवं चारित्रपटोऽपि देशसर्वमलिनः सन् मोक्षसाधको न भवति इति कृतं प्रसङ्गेन, प्रस्तुतमनुसरामः ।

[1] **'तद्यथा हत्थकम्मं करेमाणे सबले'**त्ति **हस्तकर्म्म** वेदविकारविशेषे **कुर्वन्**, उपलक्षणत्वात्कारयन्ननुजानन् वा **शबलो** भवतीत्येकः ।

[2] तथा **मैथुनं प्रतिसेवमानो**ऽतिक्रमव्यतिक्रमातिचारैस्त्रिभिः प्रकारैः दिव्यादि त्रिविधं **शबलो** भवति। अनाचारेऽनालम्बनस्तत्सेवी तु विराधक एव, सालम्बनः परवशादिना यतनया सेवमानो भवति शबलः।

---

1 अत्र 'नमः श्रीसर्वविदे' इति मङ्गलाचरणं Kh-B-LI-M2-A1-A2प्रतिषु ।

2 '°ऽपि' नास्ति M1-M3-M4-K ।

3 '°वर्जि-आ°' इति K-M1-M3-M4-LD1 ।

4 '°वादिष्व°' इति M3 ।

आलम्बनानि तु छेदग्रन्थटीकादिभ्योऽवसेयानि, परं तत्रापि *न वि किंचि अणुन्नाय[बृ.भा. 3330]*-मितिवचनात् नोपदेशप्रवर्तकोऽत एव शबलः ।

[3] तथा **रात्रिभोजनं** दिवा गृहीतं दिवा भुक्तमित्यादिभिश्चतुर्भङ्गकैरतिक्रमादिभिश्च **भुञ्जानः शबलः ।** एवं सालम्बनं यतनया सन्निध्यादिसेव्यपि ।

[4] तथा **'आधाकम्म'**मिति आधया–साधुप्रणिधानेन यत्सचेतनमचेतनं क्रियते अचेतनं वा पच्यते चीयते वा गृहादिकम् ऊयते वा वस्त्रादिकं **तदाधाकर्म भुञ्जानः शबलः** ।

[5] तथा **'रायपिंडे'**त्ति **राजपिण्डो** नृपाहारः ।

**[6] कीयं पामिच्चं अच्छिज्जं अणिसिट्ठं आहट्टु दिज्जमाणं भुंजमाणे सबले [7] अभिक्खणं पडियाइक्खित्ताणं[1] भुंजमाणे सबले [8] अंतो छण्हं मासाणं गणातो गणं संकममाणे सबले [9] अंतो मासस्स तयो दगलेवे करेमाणे सबले [10] अंतो मासस्स ततो माइट्ठाणे करेमाणे सबले ।**

[6] **'कीय'**मिति **क्रीतं** द्रव्यादिना, साध्वर्थमुद्धारानीतं **प्रामित्यम्**, आच्छेद्यतेऽनिच्छतोऽपि पुत्रादेः सकाशात्साधुदानाय गृह्यते त**दाच्छेद्यं** नानुज्ञातं सर्वस्वामिभिः साधुदानाय **इत्यनिसृष्टं** भक्तम् **आहृत्य दीयमानं** स्वस्थानात् साध्वर्थमभिमुखमानीय दानं भक्तादेः, उपलक्षणत्वात्परिवर्तनादिकमपीह द्रष्टव्यम्, **तद्भुञ्जानः ।**

[7] **'अभिक्खणं'**ति **अभीक्ष्ण**मसकृत्**प्रत्याख्याया**शनादि **भुञ्जानः** ।

[8] **'अंतो'**त्ति **अन्तः षण्णां**[2] **मासाना**मेकतो **गणा**दन्यं **गणं सङ्क्रामन् शबलो** निरालम्बन इत्यर्थः । सालम्बनस्तु ज्ञानादिपुष्टालम्बनयुक्तो गणान्तरं सङ्क्रामेत् ।

[9] तथा **'अंतो'**त्ति **अन्तर्मासस्य त्रीन् उदकलेपान् कुर्वन्** उदकलेपश्च नाभिप्रमाणजलावगाहनमिति ।

[10] तथा **'अंतो'**त्ति **अन्त**र्मध्ये **मासस्य त्रीणि मायास्थानानि** तथाविधप्रयोजनमन्तरेणातिगूढमातृस्थानानि, स्थानानि-भेदाः, **कुर्वन्** ।

**[11] सागारियपिंडं भुंजमाणे सबले [12] आउट्टियाए पाणाइवायं करेमाणे सबले [13] आउट्टियाए मुसावायं [3]वदमाणे सबले [14] आउट्टियाए अदिन्नादाणं गेण्हमाणे सबले [15] आउट्टियाए अणंत[4]रियाए पुढवीए ट्ठाणं वा[5] निसीहियं वा चेतेमाणे सबले ।**

[11] तथा सागारिको वसतिदाता, तत्पिण्डम् ।

---

1 'णं' नास्ति K–M1–M3–M4-LD1-LD2 ।

2 'षण्मासा°' इति K–M1–M3–M4 ।

3 सर्वास्वपि प्रतिषु 'वदमाणे' इत्यस्य स्थाने 'करेमाणे' इत्येव पाठः तथापि टीकाकारेण 'वदमाणे' इति पाठ एव व्याख्यातः।

4 '°तरहिता°' इति सर्वास्वपि प्रतिषु ।

5 अत्र 'सेज्जं वा' इत्यधिकः पाठः K–Kh-M1–M3–M4–LD1 ।

[12] तथा '**आउट्टियाए पाणातिवायं करेमाणे सबले**'त्ति आकुट्टिर्नाम जानन् करोति आपद्रहितो वा यत्करोति । पृथिवीगुण्डितेन हस्तादिना भिक्षां गृह्णाति, उदकक्लिन्नाभ्यां वा हस्ताभ्यां भिक्षां गृह्णाति, अग्निसंश्लिष्टं वाऽऽहारं गृह्णाति, आत्मानं परं च वायुना वीजयति, सचित्तफलबीजं कन्दादिकं वा गृह्णाति, द्वीन्द्रियादिसंसक्ते पथि व्रजति, तन्मिश्रमाहारादिकं वा गृह्णाति । एवं सर्वत्र आकुट्या इत्युपेत्येति द्रष्टव्यम् ।

[13] तथा '**आउट्टि**'ति **आकुट्या मृषावादं वदन्** ।

[14] तथा **आकुट्या अदत्तादानं गृह्णन्** ।

[15] तथा **आकुट्या अनन्तरितायां पृथिव्यां स्थानं वा नैषेधिकीं वा चेतयन्** कायोत्सर्गं स्वाध्यायभूमिं वा कुर्वन्नित्यर्थः ।

**[16] एवं ससणिद्धाए पुढवीए ससरक्खाए पुढवीए [17] एवं आउट्टियाए चित्तमंताए सिलाए चित्तमंताए लेलूए कोलावासंसि वा दारुए जीवपइट्ठिए सअंडे सपाणे सबीए सहरिए सउस्से सउदगे[1] सोत्तिंग-पणग-दग-मट्टिय-मक्कडा-संताणए तहप्पगारं ठाणं वा सिज्जं वा निसीहियं वा चेतेमाणे सबले [18] आउट्टियाए मूलभोयणं वा कन्दभोयणं वा खंधभोयणं वा तयाभोयणं वा पवालभोयणं वा पत्तभोयणं वा पुप्फभोयणं वा फलभोयणं वा बीयभोयणं वा हरियभोयणं वा भुंजमाणे सबले [19]अंतो संवच्छरस्स दस उदगलेवे करेमाणे सबले [20] अंतो संवच्छरस्स दस माइट्ठाणाइं करेमाणे सबले [21] आउट्टियाए सीतोदग[2]-उग्घारिएणं हत्थेण वा मत्तेण[3] वा दव्विए भायणेण वा असणं वा ह पडिग्गाहेत्ता भुंजमाणे सबले ।**

**एते[4] खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता त्ति बेमि । बितिया दसा सम्मत्ता ।।**

[16] तथा **एव**माकुट्या **सस्निग्धायां पृथिव्याम्** एवं **सरजस्कायां पृथिव्याम्** ।

[17] **आकुट्या 'चित्तमंताए'**त्ति चित्तं जीवलक्षणम् तदस्त्यस्यामिति चित्तवती सचित्ता सजीवेत्यर्थः तस्याम्। एवंविधायां **शिलायां** शिला नाम महत्प्रमाणः पाषाणः । एवं सर्वत्र, नवरं '**लोलु**'इति लोष्टो लोकप्रसिद्धः, **स्त्रीत्वं** प्राकृतत्वात्; '**कोलावासंसि**'त्ति कोला घुणाः, तेषामावासः कोलावासस्तस्मिन्कोलावासे; **दारौ** काष्ठे **जीवप्रतिष्ठिते** द्वीन्द्रियादिजीवाश्रयीभूते; '**सअंडे**'त्ति सह अण्डैर्वर्तत इति साण्डं तस्मि**न्साण्डे**, अण्डानि कीटिकादीनाम्; तथा '**सपाणे**'त्ति सह प्राणैर्वर्तत इति सप्राणस्तस्मिन् **सप्राणे,** प्राणा दीन्द्रियादयः; तथा '**सबीए**'त्ति सह बीजैर्वर्तत इति सबीजम्, तस्मिन् **सबीजे**, बीजानि नीवारशामाकादीनि; तथा '**सहरिए**'त्ति सह हरितैर्वर्तत इति सहरितम्, तस्मिन् **सहरिते**, हरितानि दूर्वाप्रवालादीनि; '**सओसे**'त्ति सहावश्यायेन वर्तत इति सावश्यायम्, तस्मिन् **सावश्याये**,

1 'सउदगे' इति Kh प्रत्यामेव ।

2 '°गवग्घा°' इति मुद्रिते ।

3 'मत्तेण वा' इति नास्ति K-M1-M3-M4-LD1 ।

4 'एवं ख°' इति LD2 ।

अवश्यायो नाम त्रेहः; तथा **'सउदगे'**त्ति सह उदकेन वर्त्तत इति सोदकम्, तस्मिन् **सोदके**, उदकं भौमान्तरिक्षभेदादनेकप्रकारम्; तथा **'सोत्तिंगे'**त्यादि सहोत्तिङ्गपनकोदकमृत्तिकामर्कटसन्तानेन सह वर्तत इति सोत्तिङ्गपनकोदकमृत्तिकामर्कटसन्तानम्, तस्मिन्**सोत्तिङ्गपनकोदकमृत्तिकामर्कटसन्ताने**, तत्रोत्तिङ्गः-पिपीलिकासन्तानकः, पनको-भूम्यादौ उल्लीविशेषः, उदकमृत्तिका-अचिरादप्कायार्द्रीकृता मृत्तिका, मर्कटसन्तानको-लूतातन्तुजालम्; तदेवम्भूते स्थाने इति गम्यम्, तत्र **स्थानं** कायोत्सर्ग उपवेशनं वा **'सेज्जं व'**त्ति **शयनम्**, **'निसीहियं व'**त्ति स्वाध्यायस्थानं कुर्वन् **शबलः** ।

[18] तथा **'आउट्टियाए मूले'**त्यादि मूलानि प्रतीतानि, तेषां भोजनं-भक्षणं परिभोगो वा **मूलभोजनम्**, एवं **कन्दभोजनं** कन्दा उत्पलकन्दादयः, 'खंधभोजनं'[1],त्वक् पिप्पलादीनां, प्रवालानि करीरादीनाम्, पत्राणि ताम्बूलपत्राणि नागवल्यादीनाम्, फलानि आम्रादीनाम्, बीजानि शाल्यादीनाम्, हरितानि पत्रशाकादीनाम्, **'भुंजमाणे'**त्ति भोजनं कुर्वन् **शबलः** ।

[19] तथा **'अंतो'**त्ति **अन्त**र्मध्ये **संवत्सरस्य दशोदकलेपान् कुर्वन् ।**

[20] तथा **'अंतो'**त्ति **अन्तः संवत्सरस्य दश मायास्थानानि कुर्वन् ।**

[21] तथा **'आउट्टीए'**त्ति **आकुट्या शीतोदकव्याप्तेन हस्तेन** गलज्जलबिन्दुना **मात्रकेण वा दर्व्या वा भाजनेन वा । 'असणं वा ह्र'** इति अत्र ह्रशब्दोपादानात् 'अशनं वा' इत्यनेन पदेन सह पदचतुष्टयस्य सूचा[2] कृता तानि चामुनि – ⇒ [3]अशनं पानं खादिमं स्वादिमम् । ⇐ तत्र अशनमोदनादि१, पानं द्राक्षापानादि२, खादिमं खर्जूरफलादि३, स्वादिमं सुण्ठ्यादि४ । **'वा'** सर्वत्र समुच्चये । **प्रगृह्य भुञ्जानः शबल** इत्येकविंशतितमः । **'एवं खल्वि'**त्यादिनिगमनवाक्यं पूर्ववदेव । इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां दशाश्रुतस्कन्धटीकायां शबलनामकं द्वितीयमध्ययनं समाप्तम् ।

## ॥ द्वितीयमध्ययनं समाप्तम् ॥

---

1 'खंधभोजनं' नास्ति A1–A2–M2–LI-B ।

2 'सूचना कृ°' इति A1–A2 ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2–M1-M3-M4 प्रतिषु ।

# तृतीयदशा आशातनाध्ययनम्

**[सूत्र 7] सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खायं–इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ ।**

**[सूत्र 8] कतराओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नताओ ?**

**[सूत्र 9] इमा खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ, तं जधा –**

**[1] सेहे रातिणियस्स पुरतो गंता भवति आसादणा सेहस्स । [2] सेहे रायणियस्स पक्खओ [1]गंता भवति आसायणा सेहस्स । [3] सेहे रायणियस्स आसन्नं गंता भवति आसायणा सेहस्स । [4] एवं एएणं अभिलावेणं सेहे रातिणियस्स पुरओ चिट्ठइत्ता भवति आसायणा सेहस्स । [5] सेहे राईणियस्स सपक्खं चिट्ठइत्ता भवति आसायणा सेहस्स । [6] सेहे रायणियस्स आसन्नं चिट्ठइता भवति आसादणा सेहस्स। [7] सेहे रायणियस्स पुरतो निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [8] सेहे रायणियस्स सपक्खं निसीयत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [9] सेहे रायणियस्स आसन्नं निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [10] [2]सेहे रायणियेण सद्धिं बहिया वियारभूमिं निक्खंते समाणे[3] पुव्वामेव सेहतराए आयामति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्स । [11] सेहे रायणिएण सद्धिं बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा निक्खंते समाणे तत्थ पुव्वामेव सेहतराए आलोएति पच्छा रायणिए आसायणा सेहस्स । [12] केइ रायणियस्स पुव्वं संलवत्तए सिया तं पुव्वामेव सेहतराए आलवति पच्छा रातिणिए आसायणा सेहस्स । [13] सेहे रातिणियस्स रातो वा विआले वा[4] वाहरमाणस्स 'अज्जो केइ सुत्ते ? के जागरे ?' तत्थ सेहे जागरमाणे रातिणियस्स अपडिसुणेत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [14] सेहे असणं वा ह्र पडिग्गहित्ता तं पुव्वामेव सेहतरागस्स आलोएइ पच्छा रायणियस्स आसादणा सेहस्स । [15] सेहे असणं वा ह्र पडिगाहेत्ता पुव्वामेव सेहतरागस्स पडिदंसेति पच्छा रायणियस्स[5] आसादणा सेहस्स । [16] सेहे असणं वा ह्र पडिग्गाहेत्ता तं पुव्वामेव सेहतरागं उवणिमंतेति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्स । [17] सेहे रायणिएण सद्धिं असणं वा ह्र पडिग्गाहेत्ता तं रायणियं अणापुच्छित्ता जस्स जस्स इच्छइ तस्स तस्स खद्धं खद्धं तं दलयइ आसादणा सेहस्स । [18] सेहे राइणिएण सद्धिं असणं वा ह्र आहारेमाणे तत्थ सेहे खद्धं खद्धं डाअं डाअं ऊसढं ऊसढं रसितं रसियं मणुण्णं मणुण्णं मणामं मणामं निद्धं निद्धं लुक्खं लुक्खं आहारेत्ता भवइ आसादणा सेहस्स । [19] सेहे रायणियस्स वाहरमाणस्स अपडिसुणित्ता भवइ आसादणा**

---

1 'पक्खओ' इत्यस्य स्थाने 'सपक्खं' इत्येव पाठः सर्वास्वपि प्रतिषु तथापि टीकाकारेण व्याख्यात इति कृत्वा स एव पाठः स्वीकृतः ।

2 '[10] एवं एएणं अभिलावेणं से°' इति Kh–K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

3 'तत्थ' इति अधिकः पाठः सर्वास्वपि प्रतिषु ।

4 'वियाले वा' इति K–Kh–LD1 प्रतिष्वेव ।

5 'पच्छा रायणियस्स' इति Kh प्रतावेव ।

**सेहस्स । [20] सेहे रायणियस्स वाहरमाणस्स तत्थगते चेव पडिसुणेत्ता भवति आसायणा सेहस्स । [21] सेहे रायणियस्स किं ति वत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [22] सेहे रायणियं तुमं ति वत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [23][1]सेहे रायणियस्स खद्धं खद्धं वत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [24] सेहे रायणियं तज्जाएण तज्जातं पडिहंता भवइ आसादणा सेहस्स । [25] सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स [2]जहा इत्थं न भवइ इत्थं च भवति आसायणा सेहस्स । [26] सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स नो सुमरसीति वत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [27] सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स णो सुमणा भवति आसादणा सेहस्स । [28] सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स परिसं भेत्ता भवति आसायणा सेहस्स । [29] सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स कहं आच्छिंदित्ता भवति आसायणा सेहस्स । [30] सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स तीसे परिसाए अणुट्ठिताए अभिन्नाए अवुच्छिन्नाए अव्वोगडाए दोच्चंपि तच्चंपि तमेव कहं कहेत्ता भवति आसादणा सेहस्स । [31] सेहे रायणियस्स सेज्जासंथारगं पाएणं संघट्टित्ता हत्थेणं अणणुण्णवेत्ता गच्छति आसादणा सेहस्स । [32] सेहे रायणियस्स सेज्जा-संथारए चिट्ठइत्ता वा निसीइत्ता वा तुयट्टित्ता वा भवइ आसायणा सेहस्स । [33] सेहे रायणियस्स उच्चासणंसि वा समासणंसि वा चिट्ठइत्ता वा निसीयित्ता वा तुयट्टित्ता वा भवति आसादणा सेहस्स ।**

**एताओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ त्ति बेमि । तइया दसा सम्मत्ता ।।**

[ज.7-9] [3]व्याख्यातं शबलनामकं द्वितीयमध्ययनम् । साम्प्रतं तृतीयमारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः– इहानन्तराध्ययने शबला उक्ताः । ते चाऽऽशातनाशीलस्यैव भवन्ति । अतोऽत्र ता एव व्याख्यायन्ते, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्याऽऽदिसूत्रम्– **'सुयं मे आउसंतेण'**मित्यादि व्याख्या प्राग्वत् । **'तेत्तीस'**मित्यादि त्रयस्त्रिंशत्सङ्ख्याकाः **'आसायणाउ'**त्ति आयस्य- सम्यग्दर्शनाद्यवाप्तिलक्षणस्य शातना- खण्डना **आशातना**, अथवा *स्वदस्वर्द आस्वादने [पा.धा.भ्वादि 18-19]* इत्येतस्य धातो रूपं भवति आस्वादना । आ-समन्तात् स्वादना मिथ्यात्वदलिकानामि**त्यास्वादनाः** । इहाकारणे रत्नाधिकस्याऽऽचार्यादेः शिक्षकेनाऽऽशातनाभीरुणा सामान्येन पुरतो गमनादि न कार्यम्, कारणे तु मार्गापरिज्ञानादौ ध्यामलदर्शनादौ च विपर्ययः । सर्वत्र सामाचार्या(र्य)नुसारेण स्वबुद्ध्याऽऽलोचनीयः ।

---

1 'सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स इति एवं ति वत्ता [न] भवति आसायणा. २३ । सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स नो सुमणा भवति आसायणा. २४ । सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स परिसं भेत्ता भवति आसादणा सेहस्स २५ । सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स कहं आच्छिंदित्ता भवति आसादणा सेहस्स २६ । सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स तीसे परिसाए अणुट्ठिताए अभिन्नाए अवोच्छिन्नाए अवोगडाए दोच्चंपि तच्चंपि तामेव कहं कहेत्ता भवति आसादणा सेहस्स २७ । सेहे रातिणियस्स सिज्जासंथारगं पाएणं संघट्टित्ता हत्थेणं अणुण्णवेत्ता गच्छति आसादणा सेहस्स २८ । सेहे रातिणियस्स सिज्जासंथारए चिट्ठित्ता वा २९ निसीइत्ता वा ३० तुयट्टित्ता वा भवति आसादणा सेहस्स ३१ । सेहे राइणियस्स उच्चासणंसि वा ३२ समासणंसि वा ३३ चिट्ठित्ता वा निसीइत्ता वा तुयट्टित्ता वा आसादणा सेहस्स ।' इति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

2 '°स्स इति एवं ति वत्ता न भ°' इति K-M1-M2-M3-M4-LD1-LD2-A1-A2-मुद्रिते ।

3 अत्र 'नमः श्रीभगवते' इति मङ्गलाचरणं Kh-B-LI-M2-A1-A2 प्रतिषु ।

[1] **'तद्यथा सेहे'** इत्यादि **शैक्षो**ऽल्पपर्यायो **रात्निकस्य** बहुपर्यायस्य **'पुरतो'**त्ति अग्रतो **गन्ता भवति** इत्येव**माशातना शैक्षस्ये**त्येवं सर्वत्र । तथाह्यग्रतो न गन्तव्यमेव विनयभङ्गादिदोषप्रसङ्गात् । गच्छति चेदाशातना ।

[2] तथा **'पक्खउ'**त्ति **शैक्षो रात्निकस्य पक्षतः** पार्श्वतो यथा भवति तथा समश्रेण्या गच्छति । पक्षाभ्यामपि गन्ता आशातनावानेवातः पक्षाभ्यामपि न गन्तव्यम्, उक्तदोषप्रसङ्गादेवेति ।

[3] **'आसन्न'**त्ति पृष्ठतोऽप्यासन्नं निकटतरमतीव **गन्ता भवति**, तदा **आशातना** । अत्र निःश्वासक्षुत्श्लेष्मकरणपातादयो दोषाः, ततश्च यावता भूभागेन गच्छत एते न भवन्ति तावता गन्तव्यमित्येवमक्षरगमनिका कार्या ।

[4-6] एवं **'सेहे'**त्ति **'चिट्ठइत्ता'** इति **स्थाता भवति**, एवं **पक्षतः** एव**मासन्नः** ।

[7-9] **पुरतो निषीदयिता भवति** तदा **आशातना**, एवं पार्श्वतः, पृष्ठतः ।

[10] तथा **'बहिय'**त्ति **बहिर्विचारभूमौ** कायचिन्तार्थं **निःक्रान्तस्य सतः** पूर्वतरमादावेवाऽऽचमति **शिष्यस्य पश्चाद्रात्निकः**, तदा **आशातना शैक्षस्य** ।

[11] तथा एवं **पूर्वमालोचयति**, अत्र **'विहारभूमि'**त्ति चैत्यवन्दनाद्यर्थं गतः सन् ईर्यापथिकीप्रतिक्रान्तानन्तरं गमनागमनमिति गम्यते, **पश्चादा**चार्यस्तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[12] तथा **रात्निकस्य कश्चित्पूर्वमालपनीयः स्यात्** भवेत्, **तं पूर्वमेव शिष्यः** स्वयमेवाऽऽलपति **पश्चाद्रात्निकः** तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[13] तथा **'राओ व'**त्ति **रात्रौ 'वियाले व'**त्ति **विकाले व्याहरतः** – **'को जागर्ती**ति' पृच्छतः **तत्र** तस्मिन्नवसरे **जाग्रत् शिष्यः 'राइणियस्स'**त्ति **रात्निकस्य** वच इति गम्यते, **'अपडिसुणेत्ता'** इति जाग्रत् अपि अध्याहार्यम्, **अप्रतिश्रोता भवति**, तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[14] तथा **'असणं व'**त्ति ह्रशब्दोपादानात् अशनं पानं खाद्यं स्वाद्यमिति पदचतुष्टयमुपादेयं **'पडिगाहेत्ता'** इति **प्रतिगृह्य** गृहस्थादेः सकाशादिति गम्यते **'त'**मिति **त**दशनादिकं **पूर्वमेव** आचार्यस्य समीपे अनालोच्यैव **'सेहतरागस्स'**त्ति **शिष्यतरस्य** पुरत इति गम्यम्, **आलोचयती**ति, **पश्चा**दिति तदनु **'रायणियस्स'**त्ति **रात्निकस्या**ऽऽचार्यस्य पुरत आलोचयतीति गम्यम्, तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[15] तथा एवमुपदर्श्य दर्शयित्वेति ।

[16] तथा एव**मुपनिमन्त्रयति** त्वयेदं भुज्यते[1] इत्येवं रूपं कथयति ।

[17] तथा **'रातिणिएणं सद्धि'**मिति **रात्निकेन सार्द्ध**मुपलक्षणत्वादन्येन वा केनचित्तथारूपेण साधुना सार्द्धं स्वयं वा [2]**रात्निकमनापृच्छ्य 'त'**मिति **त**दशनादिकं **यस्मै यस्मै** स्वेच्छया दातु**मीहते तस्मै तस्मै**

1 'भुज्येत इ°'A1 ।

2 'वा' नास्ति K–LD1–LD2–M1–M2–M3 ।

तन्मध्यात् '**खद्धं खद्धं**'ति प्रचुरं प्रचुरं **ददाति, आशातना शिष्यस्य** ।

[18] तथा एवं '**भुंजमाणे**'त्ति **रात्निकेन सार्द्धं भुञ्जानः तत्र** शिष्यः स्वयम् आहारयतीत्युत्तरेण सह योगः । कथम्भूतम् ? इत्याह –'**खद्धं खद्धं**'ति प्रचुरं सलवणं वा, '**डागं डागं**' ति पत्रशाकः वृन्ताकचिर्भटिकाचनकादि, '**ऊसढं**'ति वर्णगन्धरसोपेतम्, '**रसियं**'ति **रसालं** दाडिमाम्रादि प्रासुकम्, '**मणुण्णं मणुण्णं**'ति मनस इष्टं **मनोज्ञं** स्वभावत एव मनोनुकूलम्, '**मणामं मणामं**'ति मनसा अम्यते-गम्यत इति **मनोमं** कुतोऽपि रसप्रकर्षान्मनोमम्, '**निद्धं निद्धं**'ति स्नेहावगाढम्, '**लुक्खं लुक्खं**'ति स्नेहवर्जितं किञ्चिद्रूक्षमपि प्रियं भवति भ्रष्टचनकादिवत्, तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[19] तथा **शिष्यो रात्निकस्य व्याहरतो** वचोऽप्रतिश्रोता **भवति**, तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[20] तथा एवं **व्याहरतः** '**तत्थगए**'त्ति **तत्र गतः** शय्यादौ स्थित एव **प्रतिश्रोता भवति**, तदा **आशातना शिष्यस्य** । यदा तूत्थाय भणति 'किमादेशं दत्थ भदन्त' इति विनीततया वक्ति, तदाऽनाशातना ।

[21] तथा ''**किं**'**ति वत्ता भवइ**'त्ति गुरुणा व्याहूतेन शिष्येण 'मस्तकेन वन्दे' इति वक्तव्ये '**किं** भणसी'ति **वक्ता भवति**, तदा **आशातना शिष्यस्य** ।

[22] तथा **रात्निकं** प्रति '**तुमं**'ति प्रेरितो वैयावृत्त्यादौ भाषते 'त्वमेव किमिति न करोषि?' तदा गुरुर्वक्ति 'त्वमालसिकोऽसि' । तदा स प्रतिभणति 'त्वमेवालसिकः' । एवं वदत **आशातना** भवति **शिष्यस्य** ।

[23] तथा '**खद्धं**'ति **रात्निकं** प्रति तत्समक्षं वा बृहता शब्देन खरकर्कश**निष्ठुरं वक्ता** भाषयिता भवति तदा **आशातना** ।

[24] तथा **रात्निकं** '**तज्जातेणं तज्जातं**'ति तस्माद् ग्लानादेः सकाशाज्जातं तज्जातं प्रयोजनमिति शेषः, तेन **तज्जातेन तज्जात**मेवोक्तानुवादरूपेण प्रतिहन्ता भवति तत्कार्यविनाशको भवति । यथा –'त्वमेवं ग्लानाद्यर्थमानयाहारादिकम्', तदा स भणति 'त्वमेवानय' । 'मा कुरु पादादिधावनम्' तदा वक्ति 'त्वमेव मा कुर्वि'ति प्रतिवक्ति । इत्यादिप्रकारैः प्रतिहन्ता भवति, तदा **आशातना शिष्यस्य** । अवसन्नादिकारणे विनयपूर्वकं तत्तदकरणे न आशातना ।

[25] तथा एवं **रात्निकस्य** धर्म**कथां** व्याख्यानादिरूपां **कथयतः** तदन्तराले वदति, **यथा** इत्युपदर्शने, 'एतत्त्वं कुतो वदसि, इत्थं न भवति यथा[1] त्वं वदसि, इत्थं च भवति यथाऽहं व्याकरोमि' इति वदतो हि शिष्यस्य आशातना भवति यतोऽमी दोषाः – पूर्वमेवं भाषणेऽविनयः, आचार्ये वाऽप्रत्ययो भवति लोकानाम्, लोकोऽपि यथार्थमर्थं प्रतीतिपूर्वकं न गृह्णाति, पार्श्वस्थादिकोऽपि कोऽपि भणति यथा 'किमिदं[2] नटपठितवद्धेतुविकलं वदसी'ति । इत्यादयो दोषास्तस्मान्न व्याख्यानान्तरालेऽप्रतीतिजनकं वाक्यं प्रष्टव्यम् ।

---

1 'यत्त्वं व°' इति A2 ।

2 '°दं तव(नट)पठितत्वं [ये]न हेतु°' इति A1प्रतौ ।

[26] तथा '**णो सुमरसी**'ति **रात्निकस्य** धर्म**कथा**दि **कथयतो**ऽन्तराले वदति '**न स्मरसि** त्वमेनमर्थं यथार्थं' तदा **आशातना** ।

[27] तथा '**णो सुमणे**'त्ति **रात्निकस्य** धर्म**कथां कथयतो नो सुमना भवति**, गुरावन्य[1]मनस्कतां भजति सति नानुमोदयति गुरोरनुयोगं यथा 'अहो! कीदृशां शोभनां कथयन्ति आचार्याः' । नोपबृंहते[2] श्रोतुः श्रद्धामिति ।

[28] तथा '**परिसं भेत्त**'त्ति गुरोर्धर्म**कथां कथयतः** पर्षद्भेद[3]यति यथा 'भिक्षावेला वर्तते साम्प्रतम्, उद्देशसमुद्देशाऽनुज्ञा-सूत्रपौरुषी-अर्थपौरुष्यादेर्वेलाऽस्ति प्रस्तुत'मित्यादि । अथवा पर्षत्कर्णमूले समागत्य वदति यथा'ऽसौ पार्श्वस्थो वर्तते वाङ्मात्रेणैव वदति, परं करोति न स्वयं किञ्चिद्दुःकरं तपःप्रभृति' । तत्र च केचन धर्मं गृह्णन्तः प्रव्रजन्तो राजादयो वा भद्रका भवन्तोऽप्रतीतिविशेषान्न[4] तं धर्मं तथा प्रतिपद्यन्ते । यतोऽमी दोषास्ततो न पर्षद्भेदो विधेयः सुकुलोद्भवेनेति ।

[29] तथा **शिष्यो रात्निकस्य कथां कथयतः 'कहं अच्छिंदित्त**'त्ति कथाम् आच्छेत्ता भवति तदा **आशातना** यथा 'उत्तिष्ठतेदानीं, पुनः समयान्तरे वक्तव्य'मित्युक्त्वा श्रोतॄणां रसभङ्गं करोति । दोषाश्च पर्षदप्रतीत्यादयः स्वयमूह्याः ।

[30] **शिष्यो रात्निकस्य** धर्म**कथां कथयतः अनुत्थिताया**मेव **तस्यां पर्षदि 'अभिण्णाए**'त्ति भेदमप्राप्तायाः श्रोतुमभिमुखायाः एव '**अवोच्छिण्णाए**'त्ति यावदेकोऽपि तिष्ठति '**अव्वोगडाए**'त्ति अविसंसृतायां '**दोच्चं पि तच्चंपि**'त्ति द्वित्रिचतुर्वारं **तामेवार्थकथां** वा **कथयिता भवति**, 'अयमप्यधिकारस्तस्य सूत्रस्ये'ति च वदति । दोषाश्चेहार्थाप्रतीत्यादयोऽवगन्तव्याः ।

[31] तथा '**सेहे**'त्यादि **शिष्यो रात्निकस्य शय्या-संस्तारकं पादेन** चरणेन **सङ्घट्टयित्वे**त्युत्तरेण सह योगः । तत्र शय्या-सर्वाङ्गीणा संस्तारकश्चार्द्धतृतीयहस्तप्रमाणः, अथवा शय्या-यत्र भूमौ गुरूणां नियतं शयन[5]स्थानं संस्तारको- विदलकाष्ठमयो वा, अथवा शय्यैव संस्तारकः शय्यासंस्तारकः । अथवा शय्यायां संस्तारकः शय्यासंस्तारकः । '**हत्थेणं**'ति समाहारत्वादेकवचनं **हस्ताभ्यां**, शीर्षे अकृताभ्यामिति गम्यम्, **अननुज्ञापयिता** भवति[6] अमर्षयिता इत्यर्थः । उक्तं च –

*संघट्टित्ता काएणं तहा उवहिणामवि ।*
*खमेह अवराहं मे वएज्ज न पुणो त्ति य ॥ [ दश. 9-2-18]*[7]

---

1 'गुरवेऽन्य°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

2 '°हतो श्रो°' इति LI–A1–A2– M2 ।

3 '°द्भेदं करोति' इति A1–A2– M2–Kh–LI–B ।

4 '°न्न तद्धर्मं' इति LD1-LD2-A1-A2-M2-Kh ।

5 '°नस्थलं सं°' इति A1-A2-M2-LD1-Ld2-LI ।

6 'असमर्पयि°' इति K-Kh-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

7 एतदुद्धरणं नास्ति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

तदा **आशातना शिष्यस्य** । दोषाश्चाविनयपरिभवा[1]दय इह वाच्याः ।

[32] तथा **'सेहे'** इत्यादि **शिष्यो रात्निकस्य**[2] शय्यायां संस्तारके वा **स्थाता** वा **निषीदयिता** वा भवति तदा **आशातना शिष्यस्य तुयट्टिता वा**[3] ।

[33] तथा **'सेहे'** इत्यादि **शिष्यो** रात्निकसत्कस्याऽऽसनस्य उपलक्षणत्वात्छयनस्यापेक्षया **'उच्चासने'** द्रव्यत उच्चैर्भावतस्तु बहुमूल्ये **'चिट्ठइता'** इत्यादि पूर्ववत्, तदा **आशातना शिष्यस्य** । **'एताउ'**त्ति **इमा** अनन्तरोक्ता **आशातनाः**, शेषं प्राग्वत् । इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां[4] श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकाया-माशातनानामकं तृतीयमध्ययनं समाप्तम् ।

## ।। तृतीयमध्ययनं समाप्तम् ।।

---

1 '°रितापाद°' इति A2-M2 ।

2 '°कसत्कस्य°' इति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

3 'तुयट्टित्ता वा' इति नास्ति L1-Kh-B-A1-A2-M2 ।

4 'श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां' इति नास्ति M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

# चतुर्थदशा गणिसम्पदध्ययनम्

**[सू. 10] सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खातं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसंपदा पन्नत्ता ।**

**[सू. 11] कयरा खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसंपदा पन्नत्ता ?**

**[सू. 12] इमा खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसंपदा पन्नत्ता ? तं जधा– [1] आयारसंपदा [2] सुतसंपदा [3] सरीरसंपदा [4] वयणसंपदा [5] वायणासंपदा [6] मतिसंपदा [7] पओगमतिसंपदा [8] संग्गहपरिण्णा णामं अट्ठमा ।**

[ज.10-12] [1]व्याख्यातमाशातनानामकं तृतीयमध्ययनम् । साम्प्रतं चतुर्थमारभ्यते । अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः –इहानन्तराध्ययने आशातना उक्तास्ताश्च रात्निकस्य सम्भवन्ति । स च रात्निकः कीदृशो भवति ? यश्चेमाभिरष्टभिर्गणिसम्पद्भिरुपपेतोऽतस्ता एवात्रोच्यन्त इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्याध्ययन-स्येदमादिसूत्रम् – **'सुयं मे आउसंतेण'**मित्यादि व्याख्या प्राग्वत् । **'अट्ठ'त्ति** अष्टौ विधाः- प्रकाराः[2] यासां ता अष्टविधाः । **'गणिसंपय'**त्ति गुणानां गणोऽ[3]स्यास्तीति गणिराचार्यस्तस्य सम्पद इव सम्पदो **गणिसम्पदः, प्रज्ञप्ताः** प्ररूपितास्तद्यथा–**[1] आचारसम्पत् [2] श्रुतसम्पत् [3] शरीरसम्पत् [4] वचनसम्पत् [5] वाचनासम्पत् [6] मतिसम्पत् [7] [4]प्रयोगमतिसम्पत् [8] सङ्ग्रहपरिज्ञा[5]सम्पत् ।**

**[सू.13]से किं तं आयारसंपदा ? आयारसंपदा चउविहा पन्नत्ता, तं जहा–[अ]संयमधुवयोगजुत्ते यावि भवति, [आ]असं[6]पगहियप्पा, [इ]अणियतवित्ती, [ई]वुड्ढसीले यावि भवति, से तं आयार–संपदा ।**

[ज.13] अत्र च प्रत्येकमष्टौ गणिसम्पदो वर्णयिष्यति । तदेवमुपन्यस्ताः प्रकाराः । साम्प्रतं तद्गतं सूत्रं⇒[7]वक्तव्यम् । तत्र प्रथमं सम्पद्गतमिदमादिसूत्रम्⇐ **'से किं तं [8]आयारसंपया'** इति । अथास्य सूत्रस्य कः प्रस्तावः ? उच्यते, प्रश्नसूत्रमिदम् ⇒[9]एतच्चादावुपन्यस्तमिदं ज्ञापयति – पृच्छतो मध्यस्थस्य बुद्धिमतोऽर्थिनो भगवदर्हदुपदिष्टतत्त्वप्ररूपणा कार्या, न शेषस्य । तथा चोक्तम् –*'मध्यस्थो बुद्धिमान्न्यायी श्रोता पात्रमिति स्मृतः'* इति पात्रं योग्योऽधिकारी वोच्यते । सर्वजग-ज्जन्तुनिवहहितायाभ्युत्थिता आचार्यास्तद्गुणविशेषणविशिष्टस्यैवाल्पाक्षरमसन्दिग्धं पारावारस्येवातितरां

---

1 अत्र 'नमः श्रीसिद्धेभ्यः' इति मङ्गलं B-LI-Kh-A1-A2-M2 ।

2 '°धाः अष्टप्र°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

3 '°णो यस्या°' इति K–M1–M3–M4 ।

4 '[7] संयोगसं°' इति A1–A2–M2 ।

5 '°ज्ञानस°' इति K–A1–A2 –M1–M3–M4 ।

6 '°संग°' इति K–M1–M2–M3–M4– A1–A2 –LD1–LD2 ।

7 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

8 'तं गणिसं°' इति K–M1–M2–M3–M4– A1–A2 –LD1–LD2–LI–B ।

9 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

गूढाशयं भवाम्बोध्युत्तारणप्रवरपोत[1]समानमहार्थरूपं श्रीजिनागमं सम्प्रदर्शयन्ति । स एव सम्यग् रक्षति, तद्विपरीतस्तु नाशयति, यत उक्तं च –*आमे घडे[नि.भा. 6243]* इत्यादि । ततोऽयोग्यस्यागमार्थो न देयोऽकृतोपधानाद्यनुष्ठानस्य च । यत उक्तं स्थानाङ्गे–*चत्तारि अवायणिज्जा पन्नत्ता, तंजहा- अविणीए विगइपडिबद्धे अविउसियपाहुडो मायी[स्था.4-3-326]* । तत्र *विगइपडिबद्धे* इत्यस्यार्थः अनुपधानकारीति । ननूपधानमिति कोऽर्थः ? उच्यते, उपष्टभ्यते श्रुतमनेनाऽऽचाम्लादितपोविशेषरूपेण च योगविधिनेति यावत् अधीयते, तदुपधानम् । ततश्च य एवंविधानुष्ठानयुतो भवति, तस्यैवार्थसूत्रभेदाच्छ्रुतं देयमिति ज्ञापितं भवतीति कृतं प्रसङ्गेन, प्रकृतमनुसरामः । ⇐

तत्र **'से'**शब्दो मागधदेशीप्रसिद्धो निपातस्तत्रशब्दार्थेऽथशब्दार्थे वा द्रष्टव्यः । स च वाक्योपन्यासार्थः । **'कि'**मिति परप्रश्ने । **'तं'**ति तावदिति द्रष्टव्यम् । तच्च क्रमोद्योतने । तत एष समुदायार्थः – तिष्ठन्तु श्रुतसम्पदादीनि प्रष्टव्यानि, वाचः क्रमवर्तित्वात् आचारसम्पदनन्तरं च तेषामुपन्यस्तत्वात् । तत्रैतावदेव तावत्पृच्छामि किमाचारसम्पदिति ? अथवा प्राकृतशैल्या *'अभिधेयवत् लिङ्गवचनानि योजनीयानी'*ति न्यायादेवं द्रष्टव्यम् – तत्र का तावदाचारसम्पदिति ?

एवं सामान्येन केनचित्प्रश्ने कृते सति भगवान् गुरुः शिष्यवचनानुरोधेनाऽऽदरार्थे किञ्चिच्छिष्योक्तं प्रत्युच्चार्य आह –**'चउव्विहा पन्नत्ता'** इति । अनेन चागृहीतशिष्याभिधानेन निर्वचनसूत्रेणैतदाचष्टे – न सर्वमेव सूत्रं गणधरप्रश्नतीर्थङ्करनिर्वचनरूपं, किन्तु किञ्चित्तथा किञ्चिदन्यथाऽपि, बाहुल्येन तु तथारूपम्, [2]यत उक्तम् –

*अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणं ।*
*सासणस्स हियट्ठाए ततो सुत्तं पवत्तती॥[आ.नि. 92]*त्यादि ।

तत्राऽऽचारसम्पच्चतुर्विधा **प्रज्ञप्ता** प्ररूपिता । यदा तीर्थकरा एवं निर्वक्तारस्तदा अयमर्थोऽवसेयोऽन्यैरपि तीर्थकरैः, यदा पुनरन्यः कश्चिदाचार्यस्तन्मतानुसारी तदा तीर्थकरगणधरैरिति । चातुर्विध्यमेवोपदर्शयति – **'तं जहा' तद्यथे**ति वक्ष्यमाणभेदकथनप्रकाशनार्थः । ननु पूर्वमेव 'कयरा खलु अट्ठविहा गणिसंपदा' इत्यनेन पृष्टमेवेति किमर्थं पुनः 'से किं त'मित्यादिना पृच्छति, पुनरुक्तत्वात् ? उच्यते, सामान्यतः सम्पद्विषयः पूर्वप्रश्नः, द्वितीयस्तु तद्विषयभेदान्तरज्ञापनविषय इति समुच्चयविशेषविवक्षायां न विरोध इत्यलं प्रसङ्गेन। प्रस्तुतमुपश्रूयते –**[अ] संयमध्रुवयोगयुक्तश्चापि भवति [आ] असम्प्रगृहीतात्मा [इ] अनियतवृत्तिः [ई] वृद्धशीलश्चापि भवति ।**

[अ] तत्राऽऽचारो नाम प्रथममङ्गम्, तस्मिन् अधीते दशविधः श्रमणधर्मो ज्ञातो भवति । तस्माद्‌आचाराङ्गं यो भणति सूत्रतोऽर्थतश्च तत्सम्पद्युक्तो भवति यः स आचारसम्पत् । स च **'संयमे'**त्यादि । संयमो नाम चरणम्, तस्य ये ध्रुवा अवश्यं कर्तव्यत्वात् योगाः प्रतिलेखनाप्रमार्जनास्वाध्यायादयः, तैर्युक्तो भवति ।

---

1 '°तपात्रस°' इति Kh ।

2 '°म् उक्तं च–'अत्थ भासइ अरहा'इति वचनात्, त°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

अथवा संयमः सप्तदशप्रकारः *पञ्चाश्रवाद्विरमण[प्र.र.172]*मित्यादिकः, तस्मिन् ध्रुवो–नित्यो योगो–व्यापारो यस्य स **संयमध्रुवयोगयुक्तः** । अथवा संयमे ध्रुवो-नित्यो योग-उपयोगो यस्य स संयमध्रुवयोगयुक्तः । **च**शब्दात् ज्ञानादिष्वपि नित्योपयोगः । **अपि**शब्दग्रहणात्परमपि योजय[1]ति इत्येका ।

[आ] असम्प्रगृहीतः अनुत्सेकवानात्मा यस्य सो**ऽसम्प्रगृहीतात्मा**, निरभिमान इत्यर्थः । यथा – अहमाचार्यो बहुश्रुतस्तपस्वी सामाचारीकुशलो जात्यादिमान्वा, इत्यादिमदरहितः ।

[इ] अनियता – अनिश्चिता वृत्तिर्व्यवहरणं विहारो वा यस्य सो**ऽनियतवृत्ति**र्यथा –*गामे एगराइं नगरे पंचराइं[दशा. 8-217]* इत्यादिका । अथवा निकेतं नाम गृहम्, तत्र वृत्तिर्वर्तनं यस्य स निकेतवृत्तिः, न निकेतवृत्तिरनिकेतवृत्तिः । अथवा चतुर्थादितपोविशेषैरेषणासमितियोगेन च निकेतवृत्तिः, परिचितगृहेष्वगन्ता इति ।

[ई] **वृद्धशीलो** निभृतशीलः अचञ्चलशील इति यावत् । **अपि**ग्रहणाद्वृद्धेषु ग्लानादिषु सम्यग्वैयावृत्त्यादिकरण-कारापणयोरुद्युक्तो भवति एवंविधः । अथवा वृद्धशीलता वपुषि मनसि च निभृतस्वभावता निर्विकारतेति यावत् । **'सेत्त'**मित्यादि **सै**षा **आचारसम्प**च्चतुर्विधा ।

**[सू. 14] से किं तं सुयसंपदा ? सुयसंपदा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा –[अ] बहुसुते यावि भवइ, [आ] परिचियसुते यावि भवति, [इ]विचित्तसुते यावि भवइ,[ई]घोसविसुद्धिकारए यावि भवइ, से तं सुयसंपदा ।**

[ज.14] एवंविधाचारविशिष्टस्य श्रुतं भवति दीयमानं च यथोक्तं गृह्णाति, सा श्रुतसम्पत् । तां पिपृच्छिषुरिदमाह –**'से किं त'**मित्यादि । अथ का सा श्रुतसम्पत् ? सूरिराह –**श्रुतसम्पच्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा – [अ] बहुश्रुतश्चापि भवति, [आ] परिचितसूत्रः, [इ] विचित्रसूत्रः, [ई] घोषविशुद्धिकारकः ।**

[अ] तत्र **बहुश्रुतो** युगे युगे प्रधानः श्रुतेन । एतावता यस्मिन् काले यावानागमो भवति, तस्मिन् काले तावन्तं सम्पूर्णं हेत्वर्थयुक्त्यादिभिर्जानाति, युगप्रधानागम इति भावः । **च**शब्दात् बहुचारित्रः । **अपि**शब्दाद्बहुपर्यायः, स चैवम् – जघन्यतः पञ्चवार्षिकः, उत्कर्षतः एकोनविंशतिवर्षपर्यायः ।

[आ] **परिचितसूत्रः**– उत्क्रमक्रमवाचनादिभिः स्थिरसूत्र अस्खलितागमः ।

[इ] **विचित्रसूत्रः**– स्वपरसमयादिपर्यायैर्जानाति । अथवा अर्थेन विचित्रं बह्वर्थविचारणायुक्तं जानाति। अथवा उत्सर्गापवादैः सामान्यविशेषैर्वा विचित्रं जानाति स विचित्रसूत्रः ।

[ई] **घोषविशुद्धिकारकः** – घोषा- उदात्तादयः, तेषां शुद्धिर्घोषशुद्धिः, विशेषेण शुद्धिर्विशुद्धिः, तां करोतीति घोषविशुद्धिकारकः, यतः स्वयं घोषशुद्धिमान् अन्यानपि तथैव स्वरशुद्धिकारकः । **'सेत्तं'** पूर्ववत् ।

**[सू. 15] से किं तं सरीरसंपदा ? सरीरसंपदा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [अ]आरोहपरिण्णाहसंपुन्ने**[2]

---

1 '°जति' इति A1 ।

2 '°संपत्ते या°' इति Kh–LD2 । '°संपन्ने' इति M2–A1–A2–मुद्रिते ।

**यावि भवति, [आ]अणोतप्पसरीरे, [इ]थिरसंघयणे, [ई]बहुपडिपुण्णिंदिए यावि भवइ, से तं सरीरसंपदा ।**

[ज.15] साम्प्रतं शरीरबलवत एव श्रुतं चतुर्विधं भवति । अतः शरीरसम्पदमेव पिपृच्छिषुरिदमाह –**'से किं त'**मित्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तम् । सूरिराह–**शरीरसम्पच्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा – [अ] आरोहपरिणाहसम्पूर्णश्चापि भवति, [आ] एवमनवत्राप्यशरीरः, [इ] स्थिरसंहननः, [ई] बहुप्रतिपूर्णेन्द्रियः ।**

[अ] इह च आरोहो–दैर्घ्यं, परिणाहो– विस्तारस्ताभ्यां सम्पूर्णः **आरोहपरिणाहसम्पूर्णः** । **चापि**शब्दा-वन्याङ्गसुन्दरत्वख्यापकाविति, यत उच्यते लौकिकैरपि–*यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति ।*

[आ] अनवत्राप्यम् अवत्रपणं-लज्जनं यस्य सोऽयमनवत्राप्यः । अथवा अपत्रापयितुं लज्जयितुमर्हः शक्यो वाऽवत्राप्यो–लज्जनीयो, न तथाऽनवत्राप्यः, यतो हीनशरीरस्तु लज्जोत्पादको भवति ।

[इ] **स्थिरसंहननः** – दृढसंहननो बलवत्तरशरीरः । एवंविधश्च तपःप्रभृतिषु शक्तिमान् भवति ।

[ई] बहुपरिपूर्णानि इन्द्रियाणि यस्य स **बहुप्रतिपूर्णेन्द्रियो**ऽनुपहतचक्षुरादिकरणः । एवंविधश्च सर्वार्थसाधनपरो भवतीति । **'सेत्त'**मित्यादि पूर्ववत् ।

**[सू.16] से किं तं वयणसंपदा ? वयणसंपदा चउविहा पन्नत्ता, तं जहा– [अ]आदिज्जवयणे यावि भवइ, [आ]महुरवयणे यावि भवइ,[इ]अणिस्सियवयणे यावि भवइ, [ई] असंदिद्धवयणे[1] यावि भवइ, से तं वयणसंपदा ।**

[ज.16] शरीरश्रुतसम्पद्युक्तस्यैव प्रायो वचनसम्पद्भवति । अतस्तां पिपृच्छिषुरिदमाह – **'से किं त'**मित्यादि व्यक्तम् । सूरिराह –**वचनसम्पच्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा – [अ] आदेयवचनश्चापि भवति, [आ] एवं मधुरवचनः, [इ] अनिश्रितवचनः, [ई]असन्दिग्धवचनः ।**

[अ] तत्राऽऽ**देयवचनः** सकलजनग्राह्यवाक्यः । श्रोतारः श्रुत्वा तद्वाक्यं प्रमाणं कुर्वन्ति । **चापि**शब्दा-वादेशान्तरदानेऽपि न कोऽपि तद्वाक्यमन्यथा करोतीति द्योतकः ।

[आ] मधुरं-रसवद् यदर्थतो विशिष्टार्थवत्तया अर्थावगाढत्वेन शब्दतश्चाप्यपरुषत्वसौस्वर्यगाम्भीर्यादि-गुणोपेतत्वेन श्रोतुराह्लादमुपजनयति, तदेवंविधं वचनं यस्य स तथा ।

[इ]**अनिश्रितवचनो** रागादिना वाक्यकालुष्यवर्जितः ।

[ई] **असन्दिग्धवचनः** परिस्फुटवाक्यः यद् ब्रूते तत्सर्वैरपि सन्देहरहितं बुध्यते । एवंविधस्य वाक्यश्रवणान्न संशये पतन्ति । **'सेत्त'**मित्यादि प्राग्वत् ।

**[सू.17] से किं तं वायणासंपदा ? वायणासंपदा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [अ]विजयं[2] उद्दिसति, [आ]विजयं वाएति, [इ]परिनिव्वावियं वाएति, [ई]अत्थनिज्जा[3]वए यावि भवति[4], से तं वायणासंपदा ।**

1 '°इ फुडव°' इति सर्वास्वपि प्रतिषु तथापि टीकाकारेण 'असन्दिग्धवचनः' इति व्याख्यातम् अतः 'असंदिद्ध' इति पाठः स्वीकृतः ।

2 '°हा–उद्दिसति विजयं, वि°' इति मुद्रिते ।

3 '°निज्जव°'इति K–M1–M2–M3–A1 –A2–M4–मुद्रिते ।

4 '°वि वाएइ°' इति मुद्रिते ।

[ज.17]अधुना एवंविध एव [1]शिष्येभ्यो वाचनां दातुं समर्थो भवतीति वाचनासम्पदं प्रश्नयितुमाह – **'से किं त'**मित्यादि कण्ठ्यम् । गुरुराह –**'वायणे'**त्यादि । **वाचनासम्पच्चतुर्द्धा प्रज्ञप्ता – [अ] विदित्वोद्दिशति, [आ] विदित्वा समुद्दिशति, [इ] परिनिर्वाप्य[2] वाचयति, [ई] अर्थनिर्यापकश्चापि भवति ।**

[अ]–[आ] तत्र **विदित्वोद्दिशति विदित्वा समुद्दिशति** इति ज्ञात्वा पारिणामिकत्वादिगुणोपेतं शिष्यं यद्यस्य योग्यं तस्य तदेवोद्दिशति, यथा – 'योगविधिक्रमेण सम्यग्योगेनाधीष्वै'वमुद्दिशति । समुद्दिशति वा यथा –'योगसामाचार्यैव स्थिरपरिचितं कुर्विद'मिति वदतीति । अन्यथा अपारिणामिकादावपक्व-घटनिहितजलोदाहरणतो[3] दोषसम्भवात् । अथवा अम्लभाजने वा निक्षिप्तं क्षीरं विनश्यति, एवमयोग्ये दत्तं सूत्रं विनश्यतीति ।

[इ] परीति सर्वप्रकारं निर्वापयतो, निरो निर्द्दग्धादिभृशार्थदर्शनात् भृशं गमयते । पूर्वदत्ताऽऽलापकादि सर्वात्मना स्वात्मनि परिणमयतः शिष्यस्य सूत्रगताशेषविशेषग्रहणकालं प्रतीक्ष्य शक्त्यनुरूपप्रदानेन प्रयोजकत्वमनुभूय **परिनिर्वाप्य वाचयति** सूत्रं प्रददाति ।

[ई] अर्थः सूत्राभिधेयं वस्तु तस्य, निरिति भृशं, यापना- निर्वाहणा । पूर्वापरसाङ्गत्येन स्वयं ज्ञानतोऽन्येषां च कथनतो निर्गमयति-निर्यापयतीति निर्यापकः । **चापि**शब्दौ विचारादिद्योतकौ । **'सेत्त'**मित्यादि सुगमम् ।

**[सू.18] [1] से किं तं मतिसंपदा ? मतिसंपदा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [अ] उग्गहमतिसंपदा, [आ] ईहामती, [इ] अवायमती, [ई] धारणामती ।**

**[2] से किं तं उग्गहमती ? उग्गहमती छव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i] खिप्पं उगिण्हति, [ii] बहु उगिण्हति, [iii] बहुविहं उगिण्हइ, [iv] धुवं उगिण्हइ, [v] अणिस्सियं उगिण्हइ, [vi] असंदिद्धं उगिण्हइ, से तं उग्गहमती ।**

**[3] एवं ईहामतीवि ।**

**[4] एवं अवायमती ।**

**[5] से किं तं धारणामती ? धारणामती छव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i] बहुं धरेति, [ii] बहुविधं धरेइ, [iii] पोराणं धरेति, [iv] दुद्धरं धरेति, [v] अणिस्सियं धरेइ, [vi] असंदिद्धं धरेति, से तं धारणामती, से तं मतिसंपदा ।**

[ज.18] साम्प्रतं जात्या मत्या चोपपेत उत्पन्नप्रतिभो भवति आचार्यः । जातिग्रहणाद्विशिष्टजातिमत एव विशिष्टबुद्धिसम्भव इति दर्शितं भवति । अन्यथा हि परतीर्थिकैराक्षिप्तः प्रत्युत्तरासमर्थश्चेत्तदा तादृशं दृष्ट्वा विप्रतिपत्तिं गच्छेयुः अभिनवश्रद्धालवोऽपि चेति मतिसम्पत्प्रश्नयितुमिदमाह – **'से किं त'**मित्यादि

1 'शिष्याणां वा°'इति A1–A2–M2 ।

2 '°र्वापयति, अ°'इति K–M1–M3–M4 ।

3 '°रणेन दो°'इति A1–A2–M2 ।

प्रश्नसूत्रं व्यक्तम् । भगवानाह –**मतिसम्पच्चतु**[1]**र्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा– [अ] अवग्रहमतिसम्पद्, [आ] एवम् ईहा, [इ] अपायः, [ई] धारणा ।**

[अ] तत्र सामान्यार्थस्य अशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यरूपादेरवग्रहणमवग्रहः । स चासौ मतिसम्प**च्चा-वग्रहमतिसम्पद्** । एवमन्या अपि । नवरम् ईहा तदर्थविशेषालोचनं, प्रक्रान्तार्थविशेषनिश्चयोऽपायः, अवगतार्थस्याविच्युतिस्मृतिवासना धारणा ।

साम्प्रतमवग्रहमतिसम्पद्भेदान् जिज्ञासुरिदं प्रश्नयति – **'से किं त'**मिति व्यक्तम् । सूरिराह – **षड्विधा** षट्प्रकारा **प्रज्ञप्ता । तद्यथा – [i] क्षिप्रमवगृह्णाति, [ii] बहुकमवगृह्णाति, [iii] बहुविधमवगृह्णाति, [iv] ध्रुवमवगृह्णाति, [v] अनिश्रितमवगृह्णाति, [vi] असन्दिग्धमवगृह्णाति** । तत्र

**[i] क्षिप्र**मिति शीघ्रमुच्चारितमात्रमेव पृच्छद्भिः शिष्यैरवगृह्णाति अथवा परवादिभिः पृच्छद्भिरेवोच्चारितमात्र-मवगृह्णाति, यथाऽप्रतिभानामनिग्रहस्थानादिदोषा न सम्भवन्ति उक्तानुवादेन च वादेऽपराजितत्वं भवति ।

**[ii] बहु**मिति एकवारमुक्तानि पञ्च षट् ग्रन्थशतानि धारयति ।

**[iii] बहुविध**मिति लिखति, धारयति, मनसि सङ्ख्यां गणयति च मुखेनान्यदाख्यानमप्यन्तराले कथयति, अनेकैश्चोच्चारित**मवगृह्णाति** । एवं च यथा लोकोक्त्या अष्टविधानिनो दशविधानिनश्चोच्यन्ते तथा करोतीति ।

**[iv] ध्रुव**मिति न कदापि विस्मारयति सकृत्पठितमपि, यथाश्रुतमवगृह्णाति । एवं च प्रज्ञावान् लोके प्रशस्यते प्रत्युत्तरादिविधाने च समर्थो भवति इति ।

**[v] अनिश्रितं** नाम पुस्तकादिनिरपेक्षमेव पठति **अवगृह्णाति** च । अथवा एकवारं श्रुतं पुनर्यदा कश्चिदनूद्य वदति तदैव वक्तुं समर्थो भवति, [2]नान्यथा एवंविधो न भवति किन्तु स्मारणनिरपेक्ष एव भवतीति ।

**[vi] असन्दिग्धं** नाम सन्देहवर्जितम्, तम्[3] अवगृह्णाति, न तु यत्र तत्र साशङ्कम् । एवंविधश्च स्वयं निःसन्देहत्वादन्यानपि निःसन्देहतया प्रज्ञापयिता भवति ।

[आ] **एव**मित्थ**मीहामतिसम्पत्** क्षिप्रमवगृह्णातीत्यादिषट्प्रकारा ज्ञेया ।

[इ] **एव**मित्यमुनैव क्रमेण षट्प्रकारा **अवायमतिसम्पद**पि वर्णनीया ।

[ई] अधुना धारणामतिसम्पदं जिज्ञासुः परिपृच्छति –**'से किं त'**मित्यादि सुकरं प्रश्नसूत्रम् । गुरुराह –**'छव्विहे'**त्यादि व्यक्तम् । **तद्यथा – [i] बहु धारयति, [ii] बहुविधं धारयति, [iii] पुराणं धारयति, [iv] दुर्द्धरं धारयति, [v] अनिश्रितं धारयति, [vi] असन्दिग्धं धारयति** । इति षडपि पदानि व्यक्तानि। नवरं **'पोराणं'**ति पुराणं जीर्णं प्रभूतकालपठितम्, तदपि यथाश्रुतं **धारयति** । यदा पृच्छ्यते,

---

1 '°तुर्धा प्र°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2–LI - B ।

2 'नान्य वा एवंविधाने भ°' इति A1–A2 ।

3 'तम्' इति नास्ति LI–B–M1–M3–M4 ।

तदा धारणासमर्थत्वात् सर्वं वदति । 'दुद्धरं'ति दुर्द्धरं दुःखेन धर्तुं शक्यं नयगमभङ्गगुपिलं **धारयति** । '**सेत्त**'मित्यादिनिगमनवाक्यं व्यक्तमिति ।

**[सू.19] से किं तं पयोगमति[1]संपदा ? पयोगमतिसंपदा चउव्विधा पन्नत्ता, तं जहा– [अ]आतं विदाय वादं पयुंजित्ता भवइ, [आ]परिसं विदाय वादं पयुंजित्ता भवइ, [इ]खेत्तं विदाय वादं पयुंजित्ता भवइ, [ई]वत्थुं विदाय वादं पयुंजित्ता भवइ, से तं पयोगमतिसंपदा ।**

[ज.19] इदानीं मतिसम्पत्समन्वित एव प्रयोगसम्पद्योग्यो भवतीति प्रयोगमतिसम्पदं जिज्ञासुरिदं पृच्छति –'**से किं त**'मित्यादि प्रश्नसूत्रं कण्ठ्यम् । गुरुराह –**प्रयोगमतिसम्पच्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा –[अ] आत्मानं विज्ञाय वादं प्रयुङ्क्ता भवति, [आ] पर्षदं विज्ञाय वादं प्रयुङ्क्ता भवति, [इ] क्षेत्रं विज्ञाय वादं प्रयुङ्क्ता भवति, [ई] वस्तु विज्ञाय वादं प्रयुङ्क्ता भवति ।**

[अ] तत्र **आत्मानं** वादादिव्यापारकाले 'किममुं प्रतिवादिनं जेतुं मम शक्तिरस्ति नवे'ति 'विदाय'त्ति *विद् ज्ञाने[पा.धा.अदादि 54]* जानीते ततो **वाद**मिति धर्मं कथयितुं वादं वा कर्तुं प्रयुङ्क्ता इति आत्मानं वादं प्रति[2]योजयिता भवति ।

[आ] एवं **पर्षदं** यथा 'किमियं पर्षत् सौगता साङ्ख्या अन्या वा? तथा प्रतिभादिवती तदितरा वे'ति अथवा *जाणिया अजाणिया दुव्वियड्ढा वा[नं.सू.7(2)]* । क्वचित् 'पुरिसं वे'ति, तत्र पुरुष एवैतादृशो वाच्यः ।

[इ] **क्षेत्रं 'विदाये**'ति 'किमिदं क्षेत्रं मायाबहुलं ऋजुपरिणतं वा?' तथा 'साधुभिरभावितं भावितं वा नगरादी'ति ज्ञात्वा वादं प्रयुङ्क्ता भवति, अन्यथा हि तत्स्वरूपापरिज्ञाने सहसा वादकरणे पराजयप्रसङ्गात् ।

[ई] **वस्तु 'विदाये**'ति 'किमिदं राजामात्यादि सभासदादि वा वस्तु दारुणं वा भद्रकमभद्रकं वे'ति? परवादिप्रभृति बह्वागममल्पागमं वा? अथवा वस्तुशब्दादुपलक्षिता द्रव्य-क्षेत्र-काल-[3]वस्त्वादयः, तान् विदाय **वाद**मिति उपलक्षणत्वात्सामाचारीप्रभृति **प्रयुङ्क्ता भवति** । तत्र द्रव्यम् – इदमनुष्ठानादि कर्तुं स किं बालग्लानादिको निर्वाहयितुं वा समर्थो भविष्यति न वेति? क्षेत्रमिदं किं मासकल्पचतुर्मासकल्पादिकरणयोग्यं भवति न वेति? कालं विदाय – किमयं कालस्तथाविधोग्रतपःकरणाय युक्तो भवति न वेति? अथवा इदमिदानीं कर्तव्यमित्येवम् । वस्तु–बाल–ग्लान–दुर्बल–क्षपक–आचार्योपाध्याय–राजर्षि–वृषभ-गीतार्थादि विदाय तथाविधादेशदानाहारोपधिशय्यादि यथोचितं प्रयुङ्क्ता भवति । एवंविधज्ञानयुक्तो यथोचितकार्येषु प्रवर्तमानो न गणस्य द्वेष्यो भवतीति ।

'**सेत्त**'मित्यादि पूर्ववत् ।

---

1 '°गसंपदा ? पयोगसं°' इति सर्वास्वपि प्रतिषु ।

2 'प्रयो°' इति A1–A2–M2 ।

3 '°लभावव°' इति K–LD1–M1–M3–M4 ।

**[सू.20] से किं तं संगह-परिण्णा ? संगह-परिण्णा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा- [अ] बहुजणपायोग्गताए वासावासासु खेत्तं पडिलेहित्ता भवइ, [आ]बहुजणपायोग्गताए पाडिहारिय-पीढ-फलग-सेज्जासंथारयं ओगेण्हित्ता भवइ, [इ]कालेणं कालं समाणइत्ता भवइ, [ई]अहागुरुं संपूइत्ता भवति, से तं संगहपरिण्णा[1] ।**

[ज.20] अधुना प्रयोगमतिसम्पत्समन्वितस्यैव सङ्ग्रहपरिज्ञाकौशल्यं भवति । अतस्तामेव[2] प्रश्नयितुमाह –**'से किं त'**मित्यादि व्याख्यातार्थम् । सूरिराह–**सङ्ग्रहपरिज्ञा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा – [अ] बहुजनप्रायोग्यतया वर्षावासेषु क्षेत्रं प्रतिलेखयिता भवति, [आ] बहुजनप्रायोग्यतया प्रतिहारदूर्वादि अवग्रहीता भवति, [इ] काले कालं सन्मानयिता भवति, [ई] यथागुरु सम्पूजयिता भवति ।**

[अ] तत्र बहवो जनाः बहुजनाः प्रस्तावात्साधवः, अथवा बहुसङ्ख्याको जनो बहुजनो जातावेकवचनम्, तत्रापि स एवार्थः । तस्य प्रायोग्यं योग्यमिति तस्य भावो बहुजनप्रायोग्यता, तया **बहुजनप्रायोग्यतया** करणभूतयेति । **'वासावासासु'**त्ति वर्षासु-वर्षाकाले वर्षो-वृष्टिर्वर्षावर्षो, वर्षासु वा आवासो–ऽवस्थानं वर्षावासस्तस्मिन्, स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात् । **क्षेत्रं** बालवृद्धदुर्बलग्लानक्षपकाचार्यादीनां तथा योगवाहिनामितरेषां चाऽऽहारादिमिलनयोग्यं स्थण्डिलादिगुणोपेतं बृहत्कल्पानुसारतो ज्ञेयम् । **तत्प्रतिलेखयिता** शेषकाले गवेषयिता **भवति** । तदप्रतिलेखने स्थितानां पीठाहारादिसङ्कीर्णतादिदोषप्रसङ्गात् । ननु वर्षाग्रहणमिति किमर्थम्, शेषकालेऽपि तत्प्रतिलिख्यत एवेति चेत् ? उच्यते, अन्यस्मिन् कालेऽन्यत्रापि गम्यते, परं वर्षासु तु न तथेति तद्ग्रहणम् ।

[आ] तथा **बहुजनप्रायोग्यतया 'पडिहारिए'**त्ति प्रतिहरः-प्रत्यर्पणं प्रयोजनमस्येति प्रातिहारिकं पीठमासनं, पट्टकादिफलकमवष्टम्भनफलकं काष्ठविशेषः शय्या-वसतिः शयनं वा-यत्र प्रसारितपादैः सुप्यते, संस्तारको-लघुतरशयनमेव । एतेषा**मवग्रहीता भवति** । इदमपि वर्षावासे एव, यतश्चतुर्मासकमध्ये एवं वृद्धसामाचारी ⇒[3] दृश्यते – न्यूनोदरतादितपःकरणं पर्युषणाकल्पकर्षणं विकृति[4]परित्यागो विशेषकारणमन्तरा पीठफलकादिसंस्तारकादानम् उच्चारादिमात्रकसङ्ग्रहणं लोचकरणं शैक्षाप्रव्राजनं प्राग्गृहीतभस्मडगलादिपरित्यजनमन्येषां तु ग्रहणं द्विगुणवर्षोपग्रहोपकरणधरणम् इत्यादि⇐ अग्रे कल्पाध्ययने स्वयमेव वक्ष्यति सूत्रकार इति कृतं प्रसङ्गेनेति ।

[इ] **काले** यथोचितप्रस्तावे एव स्वाध्यायोपधिसमुत्पादनप्रत्युपेक्षणाध्यापनभिक्षादिकरणात्मं **कालम्** अनुष्ठानं **सन्मानयिता** स्वस्थाने आदरकरणेन प्रतिपत्तिकर्ता **भवति** ।

[ई] **यथागुरु**मिति येन गुरुणा प्रव्राजितो यस्य पार्श्वे वा पठितः, तं गुरुं **सम्पूजयिता** इति स्वयमाचार्यत्वे प्राप्तेऽपि मा एतेषां विनयहानिर्भवत्विति कृत्वा अभ्युत्थानवन्दनक-आहारोपधि-पथि विश्रामणाचरण-

---

1 अत्र 'संपदा' इति पदमधिकमस्ति मुद्रिते ।

2 '°स्तान्येव°' इति A1 प्रतौ ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

4 '°कृतेः प°' इति M1–M2–M3–M4–LD1–LD2–A1–A2 ।

संवाहनाशुश्रूषादिभिर्विनयहेतुभिः 'सम्' सम्यग् यथा भवति तथा पूजयिता भवति, न पुनः प्राप्तप्रतिष्ठः स्तब्धो भवतीति । **'सेत्त'**मित्यादि निगमनवाक्यं व्यक्तार्थम् ।

**[सू.21] आयरिंतो अंतेवासी इमाए चउविधाए विणयपडिवत्तीए विणयेत्ता निरिणत्तं गच्छइ, तं जहा– [अ] आयारविणयेन, [आ] सुयविणयेन, [इ] विक्खेवणाविणयेणं, [ई] दोसनिग्घायणाविणएणं ।**

[ज.21] साम्प्रतं एवंविधेनाऽऽचार्येण अनृणीभवनाय शिक्षाः शिक्षयितव्याः । तदाह –**'आयरिउ'**इत्यादि । **आचार्यः** आङित्यभिव्याप्त्या मर्यादया वा स्वयं पञ्चविधाचारं चरत्याचारयति इत्याचार्यः पूर्वोक्तगुणयुक्तो वा । **'अंतेवासि'**त्ति अन्ते-समीपे वस्तुं चारित्रक्रियया[1] वस्तुं शीलमेषामित्यन्तेवासिनः, तान् । **'इमाए'**त्ति **अनया**ऽनन्तरवक्ष्यमाणया चतुःसङ्ख्यया, विनयस्य प्रतिपत्तिः प्रारम्भोऽङ्गीकार इति यावत् विनयप्रतिपत्तिस्तया **विनयप्रतिपत्त्या 'विणयित्वा'**शिक्षयित्वा अनृणीभवति यदा आचार्येण गच्छोद्धारकरणसमर्थोऽन्यः कोऽपि शिष्यो विनयितो भवति, तदा स अनृणीभवति । सार्णस्तु लोकेऽपि गर्हितो भवति निन्दापात्रमित्यर्थः ।

स चतुर्द्धा शिक्षयति । **तद्यथा – [अ] आचारविनयेन, [आ] श्रुतविनयेन, [इ] विक्षेपणाविनयेन, [ई] दोषनिर्घातनया ।**

**[सू.22] से किं तं आयार–विणएणं[2]? आयार–विणएणं चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा–[i] संजम–सामायारियावि भवति, [ii] तव– सामायारियावि भवति, [iii] गणसामायारियावि भवति, [iv] एगल्लविहारसामायारियावि भवति, से तं आयार–विणए ।**

[ज.22] अथ कथमाचारविनयेन शिक्षयति इति पृच्छन्नाह –**'से किं त'**मित्यादि कण्ठ्यम् । गुरुराह –**'आयारविणएण'**मित्यादि । **आचारविनयेने**त्यत्र तृतीयान्तता 'शिक्षयति' अनेन सम्बन्धेनोक्ता । अथवा कोऽसावाचारविनयो?'णं' वाक्यालङ्कारे, **चतुर्विधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा [i] संयमसामाचारी चापि भवति, [ii] एवं तपः, [iii] गणः, [iv] एकल्लविहार–सामाचारी चापि भवति ।**

[i] तत्र संयमः सप्तदशप्रकारस्तस्य, सामाचारीति समाचरणं-समाचारस्तस्य भावो *गुणवचनब्राह्मणादिभ्य [पा.व्या.5-1-124]* इति षिङ्, तस्य च षिट्करणसामर्थ्यात् स्त्रियामपि वृत्तिरिति *षिङ्गोरादिभ्यश्चे[पा. व्या.4-1-41]*ति ङीपि सामाचारी शिक्षयिता ⇒ [3]इति शेषः, भवति । कोऽर्थः? पृथिव्यादिषु सङ्घट्टनपरितापनोपद्रवादि परिहर्तव्यमिति शिक्षयिता भवति । ⇐**चापि**शब्दौ पञ्चाश्रवाद्विरमणाद्यनुक्तार्थ-सङ्ग्राहकौ द्रष्टव्यौ ।

[ii] एवं **तपःसामाचार्यपि** तपः पाक्षिकपौषधिकैः कारयति परैः स्वयं च करोति पाक्षिकादिषु । तपश्चतुर्थादिरूपं द्वादशविधो वाऽत्र तपःप्रकारो यथावसरं द्रष्टव्यः ।

---

1 '°क्रियायां व°' इति M1–M4–A2 ।

2 'णं' इति नास्ति सर्वास्वपि प्रतिषु तथापि टीकाकारेण व्याख्यातमिति कृत्वा पाठे न्यस्तम् । एवमग्रेऽपि बोध्यम् ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

[iii] एवं **गणसामाचार्यपि** गणशब्देन समुदायः साधूनामिति द्रष्टव्यः, तं शिक्षयति । यथा – प्रतिलेखनाप्रस्फोटनादिष्वप्रवर्तमानान् नोदयति, बालदुर्बलग्लानवृद्धादिवैयावृत्त्यादिषु अप्रवर्तमानान् दृष्ट्वा तान् तथा योजयति, स्वयं वा तान् दुःखितान् दृष्ट्वा तत्र प्रवर्तते ।

[v] एकल्लविहारप्रतिमामन्यान् अङ्गीकारयति, तथाविधान् श्रुतसंहननादिसमन्वितान् दृष्ट्वा स्वयं च कृतकृत्यो गणे तथाविधमाचार्यादिकं स्थापयिता विशिष्टानुष्ठानतुलनापरो गीतार्थः सन् तां प्रतिपद्यते । अनेनाऽऽचारेणाऽऽत्मानं परं च विनयति शिक्षयति ।

**[सू.23] से किं तं सुयविणये[1] ? सुयविणए चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा–[i]सुत्तं वाएति, [ii]अत्थं वाएति, [iii]हियं वाएति, [iv]निस्सेसं वाएति, से तं सुतविणए ।**

[ज.23]साम्प्रतमाचारवत एव श्रुतं दीयतेऽतस्तं पृच्छन्नाह –**'से किं त'**मित्यादि व्यक्तम् । गुरुराह– **श्रुतविनयश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा – [i] सूत्रं वाचयति, [ii] अर्थं वाचयति, [iii] हितं वाचयति, [iv] निःशेषं वाचयति ।**

[i] **सूत्रं वाचयति** स्वयं परं च वाचयति ।

[ii] एव**मर्थ**मपि स्वयं **वाचयति** परं श्रावयति ।

[iii] **हितं** नाम यस्य यद्योग्यम्, अथवा इहलोके परदारागमनविरमणादि, परलोके नरकानवाप्त्यादि यथा श्रोतुर्भवति तद्धितम्, **तद्वाचयति** ।

[iv] निःशेषमिति योग्यं शिष्यं दृष्ट्वा निःपावकुटवत् सर्वं **वाचयति**, अपरिशेषं कथयति ।

**'सेत्त'**मित्यादिनिगमनवाक्यं व्यक्तम् ।

**[सू.24] से किं तं विक्खेवणाविणये ? विक्खेवणाविणये चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा– [i] अदिट्ठं वाएति [2]दिट्ठ–पुव्वगत्ताए विणएत्ता भवति, [ii] दिट्ठ–पुव्वगं साहम्मियत्ताए विणएत्ता भवति, [iii] चुतं धम्माओ धम्मे ठावइत्ता भवति, [iv] तस्सेव धम्मस्स हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामियत्ताए अब्भुट्ठेत्ता भवइ, से तं विक्खेवणाविणये ।**

[ज.24] साम्प्रतं विक्षेपणाविनयं प्रश्नयन्नाह –**'से किं त'**मित्यादि व्यक्तम् । गुरुराह⇒[3]**विक्षेपणा–विनयश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा⇐ [i] अदृष्टं वाचयति दृष्ट[4]पूर्वतया विनयिता भवति, [ii] दृष्टपूर्वं साधर्मिकतया विनयिता भवति, [iii] 'चुतं'ति च्युतं धर्माद्धर्मे स्थापयिता भवति, [iv] तस्य धर्मस्य हिताय यावदभ्युत्थाता भवति ।**

---

1 '°एणं ? सुयविणएणं च°' इति A1–A2–M2 ।

2 '°दिट्ठधम्मपु°' इति मुद्रिते ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति LI–B–Kh–M2–A1–A2– LD1–LD2 ।

4 '°ष्टधर्मपू°' इति A1 –A2–M2 ।

[i] तत्र **'अदिट्ठ'**त्ति अदृष्टधर्मं पुरुषं दृष्टधर्मतया वाचयति । धर्मः सम्यग्दर्शनमित्यर्थः । अदृष्टं दृष्टवदिति भावः । पूर्वं- प्रथमं दृष्टो दृष्टपूर्वः, तस्य भावस्तत्ता तया । कोऽर्थः? मिथ्यादृष्टिनमपि भवन्तं पुनः सम्यक्त्वे स्थापयति ।

[ii] **दृष्टपूर्वकं** पुरुषं **साधर्मिकतये**ति समानधार्मिकतया शिक्षयति प्रव्राजयतीति भावार्थः ।

[iii] **च्युतं** भ्रष्टं **धर्मा**च्चारित्रधर्मात् श्रुतधर्माद्वा[1] ज्ञात्वा तं पुनः तस्मिन्नेव **धर्मे** स्थापयति ।

[iv] **तस्यैव** स्थितस्य धर्मे **हिताय**, यथा तस्य चारित्रधर्मस्य श्रुतधर्मस्य वा वृद्धिर्भवति तद्धितं, तस्मै हिताय, यथा अनेषणीयं नादत्ते अन्यमाददानं वारयति, अथवा हिताय भावप्रधानोऽयं निर्देशो हितत्वाय परिणामसुन्दरतायै । **सुखाय** शर्मणे । **क्षमाय** अयमपि भावप्रधानो निर्देशः सङ्गतत्वाय । **निःश्रेयसाय** निश्चितकल्याणाय मोक्षायेत्यर्थः । **आनुगामिकतायै** परम्पराशुभानुबन्धाय अथवा *इहभविए वि णाणे परभविए वि णाणे* इत्यादिभ्योऽ**भ्युत्थाता** आराधनार्थमिति गम्यं, **भवति** । **'सेत्तं'** व्यक्तम् ।

**[सू.25] से किं तं दोसनिग्घायणाविणए ? दोसनिग्घायणाविणए चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा– [i] कुद्धस्स कोहं विणएत्ता भवइ, [ii]दुट्ठस्स दोसं णिगेण्हित्ता भवइ, [iii]कंखियस्स कंखं छिंदित्ता भवति, [iv] आयासुप्पणिहिए भवति, से तं दोसनिग्घायणाविणए ।**

[ज.25] साम्प्रतं दोषनिर्घातनार्थ[2]विनयं पिपृच्छिषुरिदमाह –**'से किं त'**मित्यादि प्रश्नसूत्रं कण्ठ्यम् । गुरुराह – **दोषनिर्घातनाविनयश्चतुर्विधः** चतुःप्रकारः **प्रज्ञप्तः तद्यथा – [i] 'कुद्धस्से'ति क्रुद्धस्य क्रोधं विनयिता भवति, [ii] दुष्टस्य दोषं निगृ(ग्र)हीता भवति, [iii]काङ्क्षितस्य काङ्क्षां व्युच्छेदयिता भवति, [iv] आत्मसुप्रणिधितश्चापि भवति** ।

[i] तत्र **क्रुद्धस्य** किञ्चिन्निमित्तमासाद्योदीर्णक्रोधं मन्युर्लक्षणं मृदुवचनादिभिर्विनयिता अपनेता भवति, क्रोधपरित्यागलक्षणमाचारं वा शिक्षयिता भवति ।

[ii] **दुष्टस्य** कषायविषयपरिणामवतः अहङ्कारद्विष्टस्य वा आचारभावशीलो विनयिता भवति, अथवा दोषापनेता भवति ।

[iii] **'कंखित'**त्ति काङ्क्षितस्य नाम भक्तपानपरसमयपाखण्डमतपरिज्ञानाऽन्यद्व[व]स्तुदर्शनसमुत्पन्नाभिलाषस्य **काङ्क्षां** तत्प्राप्तिरूपां **व्युच्छेदयिता** तदभिलाषं विनयिता भवति प्रापयिता इत्यर्थः । वस्त्वन्तरदर्शनात् तदभिलाषापनेता वा भवति । ⇒ [3]उक्तं च –*संपुण्णमेवं तु भवे गणित्तं जं कंखियाणं पि विणेइ कंखं ।*

[iv] **'आय'**त्ति **आत्मसुप्रणिधितः** कथं सम्भवतीति चेत् ? उच्यते, यदा स्वयमेतेष्वनन्तरोक्तेषु न

1 '°द्वा तान् पु°'इति A1–A2–M2 ।

2 '°नार्थं पि°'इति A1 –A2 ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

प्रवर्तते, तदा स सुप्रणिधित उच्यते । प्रणिधानं वा प्रणिधिः, शोभनो प्रणिधिः सुप्रणिधिः तद्वांश्चापि भवति, आकारान्तत्वं प्राकृतत्वात् । '**सेत्त**'मिति व्यक्तम् ।

**[सू.26] तस्से[1]वंगुणजातीयस्स अंतेवासिस्स इमा चउव्विहा विणयपडिवत्ती भवइ, तं जहा– [अ] उवगरणउप्पायणया [आ] साहिल्लया [इ] वण्णसंजलणता [ई] भारपच्चोरुहणता ।**

[ज.26] एवमाचार्येण विनीतेन शिष्येणाचार्यस्य विनयः कर्तव्यो भवति । तथैवाह –'**तस्स ण**'मित्यादि । **तस्यैवङ्गुणजातीयस्य** शिष्यस्य **इमा**ऽनन्तरं वक्ष्यमाणा चतुःप्रकारा विनयस्य प्रतिपत्तिरङ्गीकारो **विनयप्रतिपत्ति**राचार्यस्येति गम्यते, आख्यायते तीर्थकरगणधरैरिति । **तद्यथा – [अ] उपकरणोत्पादनता, [आ] साहल्लता, [३] वर्णसञ्वलनता, [ई] भारप्रत्यारोपणता ।**

[अ] तत्र उपकुर्वन्ति - शीताऽऽतपादिषु सीदन्तं स्थिरीकुर्वन्तीत्युपकरणानि, तेषामुत्पादन**मुपकरणोत्पादनता**। कोऽर्थः ? उपकरणानि वक्ष्यमाणप्रकारेण उत्पादयतीति ।

[आ] **साहल्लता** सहायकृत्यम् ।

[इ] **वर्णसञ्वलनता** सद्भूतगुणोत्कीर्तनता ।

[ई] भारो नाम गच्छभारस्तस्य आरोपणता ।

**[सू.27] से किं तं उवगरणउप्पायणया ? उवगरणउप्पायणया चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i]अणुप्पण्णाइं उवगरणाइं उप्पाइत्ता भवइ, [ii] पोराणाइं उवगरणाइं सारक्खित्ता भवइ संगोवित्ता भवइ, [iii] परित्तं जाणित्ता पच्चुद्धरित्ता भवइ, [iv] अहाविधि संविभइत्ता भवति, से तं उवकरणउप्पायणया ।**

[ज.27] अथोपकरणोत्पादनतां पृच्छति–'**से किं त**'मित्यादि प्रश्नसूत्रं कण्ठ्यम् । गुरुराह-**चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा** - [i] '**अणुप्पन्नाइं**'ति **अनुत्पन्नानि** पूर्वमप्राप्तानि अपेक्षमाणा**न्युपकरणानि** वस्त्रपात्रादीनि सम्यगेषणादिशुद्ध्या **उत्पादयिता** सम्पादनशीलो **भवति** । यतः स्वयमाचार्यस्योपकरणोत्पादने वाचना-धर्मकथाद्यन्तरायो भवति, अतः शिष्येणैवोपकरणाद्युत्पादनीयम् ।

[ii] '**पोराणाइं**'ति **पुरातनान्युपकरणानि संरक्षिता** उपायेन चौरादिभ्यः अथवा जीर्णानि सीव्यति, [2]काले प्रावृणोति, व्याख्यानचोलपट्टादिकं **सङ्गोपयिता** च अल्पसागारिककरणेन मलिनतारक्षणेन वेति ।

[iii] '**परित्तं**' नाम अल्पोपधिकम् । देशान्तरादागतं साधर्मिकं समीपस्थं वा अन्यगणसत्कं वा सीदन्तं दृष्ट्वा उपकरणैरुद्धर्ता **भवति** ।

[iv] **यथाविधि संविभक्ता भवति** यथाविधि नाम यथारात्निकतया दाता भवति । ग्लानादिकारणे वा

---

1 'तस्स णं एवं°' इति मुद्रिते ।

2 '°ति, व्याख्यानकाले प्रावृणोति चो°' इति Kh ।

तथाविधवस्त्रसङ्ग्राहको भवति । **'सेत्त'**मित्यादि निगमवचनं व्यक्तम् ।

**[सू.28] से किं तं साहिल्लया ? साहिल्लया चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i] अणुलोमवइसहिते यावि भवति, [ii] अणुलोमकायकिरियत्ता, [iii] पडिरूवकायसंफासणया, [iv] सव्वत्थेसु अपरिलोमया, से तं साहिल्लया ।**

[ज. 28] साम्प्रतं साहल्लतां पृच्छति – **'से किं त'**मित्यादि प्रश्नसूत्रं कण्ठ्यम् । गुरुराह–**साहल्लता चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा– [i] अनुलोमवचःसहितश्चापि भवति, [ii] अनुलोमकायक्रियता, [iii] प्रतिरूपकायसंस्पर्शनता, [iv] सर्वार्थेष्वप्रतिलोमता ।**

[i] तत्र **अनुलोमवचःसहितो** यथा - आचार्येण तथाविधकृत्यविचाराद्युक्ते शिष्यो भणति 'एवमेतद् भदन्त! यद्यूयं वदथ' तद्वाक्यश्रद्धानकरणपरो भवति ।

[ii] **अनुलोमकायक्रिया** यथा –पूर्वं शीर्षे विश्रामणां करोति तदनु शेषाङ्गेषु गुरूक्तानुसारेण स्वयं कायेन सम्पादको वा ।

[iii] **प्रतिरूपकायसंस्पर्शनता** यथा – यस्य यावद्रोचते विश्रामणादि तस्य तावत्करोति, न तु गलपतिततया यथा तथा पीडयति ।

[iv] **सर्वार्थेषु** गुरूक्तेषु योग्यायोग्येषु **अप्रतिलोमता** तथाकरणत्वेनाङ्गीकारो, यथा –

*मिण गोणसंगुलीहिं गणेहि वा दंतचक्कलाइं से ।*
*इच्छंति भाणिऊणं कज्जं तु ते एव जाणंति ॥ [उव. 94]*

*कारणविऊ कयाई सेयं कायं वयंति आयरिया ।*
*तं तह सद्दहियव्वं भविअव्वं कारणेण तहिं ॥ [उव.95]*

*मणोगयं वक्कगयं जाणित्तायरियस्स उ ।*
*तं परिगिज्झ वायाए कम्मुणा उववायए ॥ [उत्त.1-43]* इत्यादि ।

**'सेत्त'**मित्यादि निगमनवचः सुकरम् ।

**[सू.29] से किं तं वण्णसंजलणता ? वण्णसंजलणता चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i]आधातच्चाणं वण्णवाई भवति, [ii]अवण्णवातिं पडिहणित्ता भवइ, [iii]वण्णवातिं अणुवूहित्ता भवति, [iv] आयवुड्ढसेवी यावि भवति, से तं वण्णसंजलणता ।**

[ज.29] साम्प्रतं वर्णसञ्ज्वलनतां पिपृच्छिषुरिदमाह –**'से किं त'**मित्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तम् । आचार्य आह –**वर्णसञ्ज्वलनता चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा – [i] याथातथ्यानां वर्णवादी भवति, [ii] अवर्णवादिनं प्रतिहन्ता भवति, [iii] वर्णवादिनम् अनुबृंहयिता भवति, [iv] आत्मवृद्धसेवी चापि भवति ।**

[i] तत्र[1] याथातथ्या नाम ये आचार्यस्य गुणा जात्यादयस्तेषां **वर्णवादी** प्रशंसाकथको **भवति** ।

[ii] अवर्णवादी – आचार्यादीनाम् अयशोवादी यो भवति, तं **प्रतिहन्ता भवति** युक्त्यादिभिस्तं निषेधयिता इत्यर्थः ।

[iii] **वर्णवादिनं** प्रति – आचार्यादीनां गुणग्राहकं प्रति **बृंहयिता** प्रशंसाकर्तुर्हर्षवृद्धिकरो **भवति** । यथा *'जो जाणइ जस्स गुणा*[2] *सो लोए तस्स आयरं कुणइ* तथा

*गुणिनि गुणज्ञो रमते नागुणशीलस्य गुणिनि परितोषः ।*
*अलिरेति वनात् कमलं न दर्दुरस्त्वेकवासेऽपि ॥*

तथा-*गुणिनि गुणज्ञो रमते इतरः कस्तु वराकः ।*
*सरसिजपरिमलरसिको मधुपयुवा न तु काकः ॥*

[iv] आत्मना – स्वयं वृद्धा – आचार्यादयस्तेषां सेवी – इङ्गिताकारैस्तथाविधं ज्ञात्वा कारकः । '**सेत्त**'मित्यादि व्यक्तम् ।

**[सू.30] से किं तं भारपच्चोरुहणता ? भारपच्चोरुहणता चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा– [i] असंगहियं परिजनं संगहिता भवति [ii] सेहं आयारगोयरं गाहित्ता भवति, [iii] साहम्मियस्स गिलायमाणस्स अधाथामं वेतावच्चे अब्भुट्ठेत्ता भवति, [iv] साहम्मियाणं अधिकरणंसि उप्पन्नंसि तत्थ अणिस्सितोवस्सिए[3] अपक्खगाही मज्झत्थभावभूते सम्मं ववहरमाणे तस्स अधिकरणस्स खामणविउसमणताए सया[4] अब्भुट्ठेत्ता भवइ, कहं नु साहम्मिया अप्पसद्दा अप्पझंज्झा अप्पकलहा अप्पतुमंतुमा अप्पकसाया[5] संजमबहुला संवरबहुला समाहिबहुला अपमत्ता संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणा णं एवं च णं विहरेज्जा, से तं भारपच्चोरुहणता ।**

**एसा खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसंपया पन्नत्ता त्ति बेमि । चउत्थिया दसा सम्मत्ता ॥**

[ज.30] साम्प्रतं भारप्रत्यारोपणतां पिपृच्छिषुरिदमाह –**'से किं त**'मित्यादि । आचार्य आह – **भारप्रत्यारोपणता चतुर्विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा– [i] असङ्गृहीतं परिजनं सङ्ग्राहयिता भवति, [ii] शिक्षमाचारगोचरं ग्राहयिता भवति, [iii] साधर्मिकस्य ग्लायमानस्य यथास्थामं वैयावृत्त्ये अभ्युत्थाता भवति, [iv] साधर्मिकाणां** परस्परं **कलहे उत्पन्ने उपशामकतया अभ्युत्थाता भवति ।**

---

1 '°त्र यथा भव्यानामग्रे आ°' इति A1 –A2 ।

2 '°णा इत्या°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

3 '°ए वासिंतो अ°'इति मुद्रिते । '°ए वसितो अ°'इति A1–A2–M2 । '°ए वसिंतो अ°'इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2–Kh । एतस्य पदस्य चूर्णिकृता टीकाकृता च व्याख्या न कृता ।

4 अत्र 'समिय'मिति पदमधिकं मुद्रिते ।

5 'अप्पकसाया' इति नास्ति Kh–M1–M2–M3–M4–A1–A2-मुद्रिते ।

[i] **असङ्गृहीतं** नाम क्रोधादिना गणादेर्बहिर्गच्छन्तं **परिजनं** शिष्यादिकं **सङ्ग्राहयिता** मृदुवचनादिना पुनः स्वशृङ्गाटके रक्षयिता **भवति** ।

[ii] **शिष्य**मव्युत्पन्नमभिनवदीक्षितं वा **'आयार'**त्ति आचारः – श्रुतज्ञानादिविषयमनुष्ठानं कालाध्ययनादि, गोचरो-भिक्षाटनम्, एतयोः समाहारद्वन्द्वः तं **सङ्ग्राहयिता भवति** ।

[iii] **साधर्मिकस्य** समानश्रद्धानसामाचारीकस्य **ग्लायमानस्य** गाढागाढकारणे समुत्पन्ने आहारादि विना सीदतः, **यथास्थामं** यथाशक्त्या **वैयावृत्त्ये** उद्वर्तनभक्तपानानयनदानवैद्योक्तौषधकरणसंस्तारकप्रस्तरण-प्रतिलेखनरूपे **अभ्युत्थाता** आदरपरो भवति ।

[iv] समानधार्मिकाणां साधूनां **'अहिगरणंसि'**त्ति विरोधे **उत्पन्ने** तत्र साधर्मिकेषु; निश्रितं-रागः उपाश्रितं – द्वेषः अथवा निश्रितम्-आहारादिलिप्सा उपाश्रितं – शिष्यकुलाद्यपेक्षा, तद्वर्जितो यः सो**ऽनिश्रितोपश्रितः**; न पक्षं शास्त्रबाधितं गृह्णातीत्**यपक्षग्राही**; अत एव **मध्यस्थभावभूतः** प्रायो यः स तथा स भवेदिति शेषः । **'सम्म'**मिति सम्यक्, व्यवहारं श्रुतादिकं तत्र **व्यवहरन्** प्रवृत्तिं विदधन् न्यायव्यवहारे वा व्यवहरन् तस्योत्पन्नस्याधिकरणस्य विरोधस्य मर्षण**व्यवशमनार्थतया सदा** सर्वकालं **अभ्युत्थाता भवति** । यथा - **कथं** केन प्रकारेण **नु** वितर्के **साधर्मिकाः** साधवो**ऽल्पशब्दा** विगतराटीकाः, अत्राल्पशब्दोऽभाववचनः, **अल्पझञ्झाः** विगततथाविधाशुभवचनाः, **अल्पतुमंतुमाः** अविद्यमानत्वंत्वमिति, स्वल्पापराधिनि अपि 'त्वमेवं पुरा कृतवान् त्वमेवं सदापि करोषी'त्यादि पुनः पुनः प्रलपनं येषां ते तथा वा विगतक्रोधकृतमनोविकारविशेषाः भविष्यन्तीति शेषः, इति भावयन्तो महामुनयः **संयमबहुलाः** संयममाश्रवविरमणादिकं बह्विति बहुसङ्ख्यं यथा भवत्येवं लान्ति–गृह्णन्ति {भिक्खाभिप्रायो} विशुद्धविशुद्धतरं पुनः पुनः संयमं कुर्वन्तीति संयमबहुलाः, मयूरव्यंसकादित्वात् समासो यदि वा बहुलः – प्रभूतः संयमो येषां ते बहुलसंयमाः, सूत्रे पूर्वापरनिपातस्यातन्त्रत्वाद् । अत एव संवर – आश्रवनिरोधस्तेन बहुला बहुलसंवरा वा । तत एव समाधिश्चित्तस्वास्थ्यम्, तद्बहुला बहुलसमाधयो वा। प्रमत्ता-मद्यादिप्रमादयुक्ताः, न प्रमत्ता **अप्रमत्ताः** । **'संजमेणं'**ति संवरेण **'तवस'**त्ति **तपसा** अनशनादिना, चशब्दः समुच्चयार्थो लुप्तोऽत्र द्रष्टव्यः । संयमतपोग्रहणं चानयोः प्रधानमोक्षाङ्गत्वख्यापनार्थम् प्रधानत्वं च संयमस्य नवकर्मानुपादानहेतुत्वेन तपसश्च पुराणकर्मनिर्जरणहेतुत्वेन, भवति चाभिनवकर्मानुपादानात् पुराणकर्मक्षपणात् सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्ष इति । **'अप्पाणं भावेमाणा ण'**मिति **आत्मानं** वासयन्तः । **'एवं'** पूर्वोक्तप्रकारेण **विहरेयु**रिति । **'सेत्त'**मित्यादि व्यक्तम् । **'एसा'** अनन्तरोदिता, शेषं व्यक्तार्थम् । इति श्रीब्रह्मविरचितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां गणिसम्पन्नामकं चतुर्थमध्ययनं समाप्तम् ।

## ।। चतुर्थमध्ययनं समाप्तम् ।।

# पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थानाध्ययनम्

**[सू.31] णमो सुयदेवयाए भगवईए । सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खायं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं दस चित्तसमाहिठाणाइं पन्नत्ताइं ।**

**[सू.32] कतराइं खलु ताइं थेरेहिं भगवंतेहिं दस चित्तसमाहिठाणाइं पन्नत्ताइं?**

**[सू.33] इमाइं खलु थेरेहिं भगवन्तेहिं दस चित्तसमाहिट्ठाणाइं पन्नत्ताइं, तं जहा –**

**तेण कालेणं तेणं समयेणं वाणियगामे नगरे होत्था । एत्थ नगरवण्णओ भाणियव्वो । तस्स णं वाणियग्गाम[1]नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे दूतिपलासए णामं चेइए होत्था । चेइयवन्नतो भाणियव्वो । जितसत्तू राया तस्स णं धारणी देवी, एवं सव्वं समोसरणं भाणितव्वं जाव पुढवीसिलापट्टए सामी समोसढे, परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया ।**

[ज.31-33] व्या[2]ख्यातं गणिसम्पन्नामकं चतुर्थमध्ययनम् । साम्प्रतं पञ्चममारभ्यते । अस्य चायं पूर्वेण सह सम्बन्धः – इह अनन्तराध्ययने समाधिबहुला इत्युक्तम् । इह तु समाधिरेव विस्तरतः प्रदर्शयिष्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्येदमादिसूत्रम् –⇒[3]**'णमो सुयदेवयाए'**इत्यादि । व्याख्या –**नमो**ऽस्तु नमस्कारोऽस्तु **श्रुतदेवतायै** अधिष्ठात्र्यै । उक्तं च –*जीए सुयमहिट्ठिअं सा सुयदेवयत्ति भण्णति* । तस्यै नमोऽस्तु भगवद्वाण्यै, कथम्भूतायै ? **'भगवईए'**त्ति **भगवत्यै** महिमादिगुणयुक्तायै । इति कृतमङ्गलोपचारः सूत्रं व्याख्यानयति⇐**'सुयं मे'**इत्यादि प्राग्वत् । ननु कृत एव मङ्गलोपचारस्तर्हि किमर्थं भूयोऽपि तदुपादानम्, पौनरुक्त्यात् इति चेत् ? उच्यते, *यावच्छङ्कं तदाचरे*दिति वाक्यात्पुनर्नमस्कारेण न पुनरुक्तता शङ्कनीया इति । नवरं चित्तस्य-मनसः समाधिस्थानानि – समाधिपदानीति यावत् **प्रज्ञप्तानि**[4] तद्यथा –**'तेणं कालेणं** ⇒[5]**तेणं समएणं'** इत्यादि । ननु स्थविरैरेवामूनि दश चित्तसमाधिस्थानान्युक्तानीति पूर्वमुक्तम्, किमर्थं तर्हि भूयोऽपि भगवद्वचनानुवादपूर्वकं 'तेणं कालेण'मित्यादि सूत्रमुच्यते ? स्वमनीषिकापरिहारायेदमुक्तं यद्वा स्वयमेव स्थविरैरेवामून्युक्तानि भविष्यन्ति, न पुनस्तीर्थकरैरित्यविश्वासपिशाचीनिराकरणायेदं सूत्रम् ।

तत्र⇐ यस्यां नगर्यां यस्मिन्नुद्याने यथा भगवांस्त्रिलोकीपतिर्दश चित्तसमाधिस्थानानि व्यागृणोति स्म, तथोपदिदर्शयिषुः प्रथमतो नगर्युद्यानाभिधानपुरस्सरं सकलवक्तव्यतोपक्षेपं वक्तुकाम इदमाह –**'तेणं कालेण'**मित्यादि । **'ते'** इति प्राकृतशैलीवशात् **तस्मिन्नि**ति, यस्मिन् समये । भगवान् प्रस्तुतां चित्तसमाधि-

---

1 '°मस्स न°' इति Kh–LD2 । '°मस्स ब°' इति K–M1–M2–M3–M4–A1–A2–LD1 ।

2 अत्र 'नमः श्रीगौतमगुरवे' इति मङ्गलं B–LI–Kh-A1-A2-M2 ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

4 'प्रज्ञप्तानि'पदं नास्ति B-LI-Kh-A1-A2-M2-LD1-LD2 ।

5 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति A2–M2 ।

स्थानवक्तव्यतामचकथत् तस्मिन् समये । **वाणिज्यग्राम** इति नाम्ना **नगरमभवत्** । नन्विदानीमपि तन्नगरं वर्तते, ततः कथमुक्त'मभव'दिति ? उच्यते, वक्ष्यमाणवर्णकग्रन्थोक्तविभूतिसमन्वितं तदैवाभवत् न तु विवक्षितग्रन्थविधानकाले । एतदपि कथमवसेयमिति चेत् ? उच्यते, अयं कालोऽवसर्पिणी, अवसर्पिण्यां च [1]प्रतिक्षणं शुभा[2] भावा हानिमुपगच्छन्ति, एतच्च सुप्रतीतं जिनवचनवेदिनामतो'ऽभव'-दित्युच्यमानं न विरोधभाक् । **'एत्थ' इत्यत्र नगरवर्णको** ज्ञेयः । स चायं –*रिद्धित्थिमियसमिद्धे* ⇒[3] *पमुइयजणजाणवये [औप. सू.1]*⇐इत्यादि औपपातिकग्रन्थप्रतिपादितः समस्तोऽपि वर्णको वाच्यः। स चेह ग्रन्थगौरवभयान्न लिख्यते, केवलं तत एवौपपातिकादवसेयः ।

'**तस्स ण**'मित्यादि **तस्य** वाणिज्यग्राम**नगरस्य बहिरुत्तरपौरस्त्यो** हि उत्तरपूर्वो(व)रूपो दिग्विभाग ईशानकोण इत्यर्थः, एकारो मागधभाषानुरोधतः प्रथमैकवचनप्रभवः यथा *कयरे आगच्छइ दित्तरूवे [उत्त.12-6]* इत्यादौ । ⇒[4]दूतिपलाशमिति **नाम चैत्यमभवत्** । चितेर्लेप्यादिचयनस्य भावः कर्म वा चैत्यम्, तच्च सञ्ज्ञाशब्दत्वाद्देवप्रतिबिम्बे प्रसिद्धम् । ततस्तदाश्रयभूतं यद्देवस्य गृहं, तदप्युपचाराच्चैत्यम् । चैत्यमायतनं तुल्ये तच्चेह व्यन्तरायतनं द्रष्टव्यम्, न तु भगवतामर्हतामायतनम् । **'होत्था' इत्यभवत्** । **'चेइयवण्णओ भाणियव्वो'**त्ति⇐ **चैत्यवर्णको भणितव्यः** । सोऽप्यौपपातिकग्रन्थादवसेयः । ⇒[5]**'जियसत्तू राजा' तत्र** जितशत्रू राजा **'तस्स'**त्ति **तस्य** जितशत्रुराज्ञो धारिणीनाम्नी **देवी** समस्तान्तःपुरप्रधाना भार्या। **'एवं समोसरणं भाणियव्वं**'ति **एव**मित्यमुनौपपातिकग्रन्थानुसारेण **सर्वं** निरवशेषं **समवसरणं** भगवदागमन-परिषन्मिलन-धर्मकथादिरूपं भणनीयं **'जाव पुढविसिलापट्टए समोसढे'** जावत्ति यावत्करणात् *जेणेव वाणियग्गामे नगरे जेणेव दूतिपलासए चेइए जेणेव पुढविसिलापट्टए तेणेव उवागच्छइ* इत्यादि औपपातिकोक्तं पाठसिद्धं सर्वमवसेयम्, सञ्ज्ञामात्रमत्रैव दर्शयति । **पृथिवीशिलापट्टके स्वामी समवसृतः** । **पर्षन्निर्गता** । '**धम्मो कहिउ**'त्ति स्वामिना पर्षदग्रे *अत्थि लोए [औप.सू. 34]*⇐ अस्त्यादिभावप्रदर्शनरूपो **धर्मः कथितः** ।

**[सू.34] अज्जो ! इति समणे भगवं महावीरे समणा निग्गंथा य निग्गंथीओ य आमंतेत्ता एवं वयासी – इह खलु अज्जो ! निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा इरियासमियाणं भासासमियाणं एसणासमियाणं आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमियाणं उच्चारपासवणखेल[6]सिंघाणजल्लपारिट्ठावणितासमिताणं मणसमिताणं वयसमियाणं कायसमियाणं मणगुत्ताणं वयगुत्ताणं कायगुत्ताणं[7] गुत्तिंदियाणं गुत्तबंभयारीणं आयट्ठीणं**

1 'च हानिं प्रतिक्षणं शुभभावादीनि उप° इति A1-M2 ।

2 'शुभभावादीनि हा°' इति A2 ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

5 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठो नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

6 '°लजल्लसिंघाणपा°' इति K–D1–LD2 ।

7 अत्र 'गुत्ताणं' इत्यधिकः पाठो मुद्रिते ।

**आयहिताणं आयजोगीणं[1] आयपरक्कमाणं पक्खियपोसहिएसु समाधिपत्ताणं झियायमाणाणं इमाइं दस चित्तसमाहिट्ठाणाइं असमुप्पन्नपुव्वाइं समुप्पज्जिज्जा ।**

[ज.34] साम्प्रतं विवक्षितं प्रदर्शयति –'**अज्जो**' इति हे **आर्याः**! इत्यामन्त्रणवचनम् । **श्रमणो भगवान्महावीरः श्रमणान्निर्ग्रन्थान् निर्ग्रन्थीश्च आमन्त्रयित्वा एवमवादीत्**–'**इह खलु**' इत्यादि । इह खलु इति निपातौ । '**इह**'त्ति **इहलोके** प्रवचने वा, **खल्व**वधारणे । **निर्ग्रन्थाना**मिति ग्रन्थादान्तरान्मिथ्यात्वादेर्बाह्याच्च धर्मोपकरणवर्ज्याद्धनादेर्निर्गता निर्ग्रन्थाः, तेषां निर्ग्रन्थानाम्, एवं **निर्ग्रन्थीनाम्**, कथम्भूतानाम् ? इत्याह –'**इरियासमियाणं**'ति सम्–एकीभावेन इतिः-चेष्टा समितिः ईर्यायां विषये समितिः शकटादिवाहनाक्रान्तेषु सूर्यरश्मिप्रतापितेषु प्रासुकविविक्तेषु युगमात्रदृष्टिभिर्यतिभिर्गमनं कर्तव्यम्, तद्युक्तास्तेषाम् । एवं **भाषासमितानां** हितमितासन्दिग्धभाषणम्, एषणासमितिर्गोचरगतैः साधुभिः सम्यगुपयुक्तैर्नवकोटीविशुद्धं ग्राह्यम् । '**आयाणे**'त्यादि आदानं-ग्रहणं निक्षेपणा-मोचनं भाण्डमात्रं-सर्वोपकरणम्, मध्ये स्थितो भाण्डमात्रशब्दः काकाक्षिगोलकन्यायेनोभयत्रापि सम्बध्यते, ततश्च भाण्डमात्राद्यादाने निक्षेपणायां च समितिः - प्रेक्षणप्रमार्जनपूर्विका सुन्दरचेष्टा, तया युक्तानाम् । उच्चारादीनां परिष्ठापना-ऽपुनर्ग्रहणतया[2] न्यासः, तत्र भवा परिष्ठापनिका, सा चासौ समितिश्च - प्रत्युपेक्षणादिपूर्वा सच्चेष्टा तया समितानाम्, तत्रोच्चारः – पुरीषं प्रश्रवणं-मूत्रं खेलो-निष्ठीवनं सिङ्घानं - नासिकाश्लेष्मा, जल्लो-मलम्, तेषां परिष्ठापने समितिः[3] । तथा '**मणसमिताणं**'ति मनसा समितानाम्, एवं वाचा कायेनेति च स्यात्तया समितानाम् । '**मणगुत्ताणं**'ति गोपनं गुप्तिस्तया गुप्तानाम्, एवं वचसा कायेन । अत एव **गुप्तेन्द्रियाणां गुप्तब्रह्मचारिणाम्** । भूयः कथम्भूतानाम् ? इत्याह– आयतो-दीर्घकालावस्थितिकत्वान्मोक्षस्तस्यार्थिनस्तेषाम् । '**आत्महितानाम्**' आत्मनो हितमिव हितम् आत्महितम्; हिताहितं च शरीरे आत्मनि च भवति, तत्र शरीरे हिताहितं पथ्यापथ्याहारादिकम्, आत्मनि तु हिंसादिप्रवृत्तिनिवृत्ती, अथवा आत्मनोऽहितानि त्रीणि त्रिषष्टानि पाखण्डिकशतानि, तदपनयनं, तदस्ति येषां ते आत्महिताः, तेषाम् । '**आयजोगीणं**'ति आत्मायत्ताः – स्ववशे वर्तमाना योगा मनोवाक्कायलक्षणा येषां ते आत्मयोगिनः आप्तयोगिनो वा, तेषाम् । तथा '**आयपरक्कमाणं**'ति आत्मार्थं पराक्रमो येषां ते आत्मपराक्रमाः अथवा आत्मना स्वयं पराक्रमो, न तु परवशात् येषां ते आत्मपराक्रमास्तेषाम् । तथा '**पक्खियपोसहिएसु समाहिपत्ताणं**'ति पक्षे भवं पाक्षिकमर्द्धमासिकं पर्व, तत्र पौषधः पाक्षिकपोषधः, सोऽस्ति येषां ते पाक्षिकपौषधिकाः यतश्चूर्णिः – *पक्खियं पक्खियमेव, पक्खिए पोसहो पक्खियपोसहो चाउद्दसि अट्ठमीसु वा[दशा.चू.पृ.43]* । अत्रापि स एवार्थः, यथा–पक्षे-अर्द्धमासे भवं पाक्षिकम्, तत्र पाक्षिके पोषधः पाक्षिकपोषधः । अत्र च नियतं पोषध उपवासरूपः, ⇒[4]यतः श्रीउत्तराध्ययनबृहद्वृत्तौ–

---

1 '°जोतीणं' इति K-M1-M2-M3-M4-A1-A2-LD1-LD2 मुद्रिते ।

2 '°तयोपन्या°' इति A1-A2-M2 ।

3 अत्राधिकः पाठोऽयम् – 'श्रीउत्तराध्ययनोक्तदशगुणस्थण्डिले'A1-A2-LI-B-Kh-M2 ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठो नास्ति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

*सर्वेष्वपि तपोयोगः प्रशस्तः कालपर्वसु ।*
*अष्टम्यां पञ्चदश्यां च नियतं पोषधं वसेत् ॥*

तथा श्रीआवश्यकचूर्णौ–

*सव्वेसु कालपव्वेसु पसत्थो जिणमए तवोजोगो ।*
*अट्ठमिपनरसीसु नियमेण हविज्ज पोसहिओ ॥*

इति वचनात् पाक्षिकेऽवश्यं तपः कार्यम् । उपलक्षणं चैतच्चतुर्दश्यष्टम्योस्तत्रापि तपः कार्यमिति। अत एवोक्तं चूर्णिकृता–*चाउद्दसि अट्ठमीसु वा* । अत्र वाशब्दः समुच्चयार्थे अनुक्तपर्वसङ्ग्राहको व्यावर्णितश्चूर्णिकृता । तत्र⇐ तपोविशेषश्चतुर्थादिरूपस्तेन युक्तानां साधूनां मध्ये **'समाहिपत्ताणं'**ति **समाधिप्राप्तानां** ज्ञानदर्शनचारित्ररूपसमाधिवताम् । **'झियायमाणाणं'**ति धर्मशुक्लं ध्यानं **ध्यायमानानाम्**। **'इमाइं'**ति **इमानि** अनन्तरं[1] वक्ष्यमाणस्वरूपाणि **दश चित्तसमाधिस्थानानि 'असमुप्पण्णपुव्वाइं'**ति **असमुत्पन्नपूर्वाणि** कदाप्यतीतकाले न समुत्पन्नपूर्वाणि इत्यर्थः, **समुत्पद्येरन्निति** शेषः ।

**[सू.35] तं जहा – [1] धम्मचिंता वा से असमुप्पन्नपुव्वा समुप्पज्जेज्जा सच्चं[2] धम्मं जाणित्तए । [2] [3]सण्णिणाणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुपज्जिज्जा अहं सरामि । [3] सुमिणदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए, जाईसरणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा, अप्पणो पोराणियजाई सुमरित्तए । [4] देवदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए । [5] ओहिणाणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा ओहिणा लोयं जाणित्तए । [6] ओहिदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जिज्जा ओहिणा लोयं पासित्तए । [7] मणपज्जवनाणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा अंतो मणुस्स[4]क्खित्तेसु अड्ढातिज्जेसु दीवसमुद्देसु सण्णीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगते भावे जाणित्तए । [8] केवलनाणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुपज्जेज्जा केवलकप्पं लोयालोयं जाणित्तए । [9] केवलदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा केवलकप्पं लोयालोयं पासित्तए । [10] केवलमरणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा सव्वदुक्खपहीणाए ।**

[ज.35] **तद्यथा –**

[1] **'धम्मे'**त्यादि **'से'**त्ति निर्देशे, तस्य एवङ्गुणजातीयस्य निर्ग्रन्थस्य निर्ग्रन्थ्या वा **'धम्मचिंत'**त्ति धर्मो नाम स्वभावः जीवद्रव्याणामजीवद्रव्याणां च, तद्विषया चिन्ता, कथंरूपा ? 'अमी नित्या उतानित्या, रूपिण उतारूपिण ?' इत्यादिरूपा, **'असमुप्पण्णपुव्व'**त्ति प्राग्वत् **सत्यं धर्मं ज्ञातुम्**, अथवा धर्मचिन्ता

1 '°न्तरव°' इति A1–A2–M2 ।

2 'सव्वं ध°' इति K–M1–M2–M3–M4–A1–A2–LD1–LD2– मुद्रिते ।

3 '[2] सुमिणदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहांतच्च सुमिणं पासित्तए [3]जाई°' इति A1–A2–M2 । '[2] सण्णिजाईसरणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहं सरामि । अप्पणो पोराणियजाई सुमरित्तए [3] सुमिणदंसणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए [4]' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2–Kh ।

4 '°स्सखेत्ते अ°' इति मुद्रिते ।

यथा 'सर्वे कुसमया अशोभना अनिर्वाहकाः पूर्वापरविरुद्धाः, अतः सर्वधर्मेषु शोभनतरोऽयं धर्मो जिनप्रणीतः' एवंरूपा इत्येकम् ।

[2] '**सण्णी**'त्यादि सम् - सम्यग् जानातीति सज्ञः, तस्य यत् ज्ञानं **सज्ञिज्ञानं** यथा पूर्वाह्णे गां दृष्ट्वा पुनरपराह्णे प्रत्यभिजानीते असौ गौरिति । '**असमुप्पण्णे**'त्यादि प्राग्वत् । '**अहं सरामीति**' अहं स्मरामीति 'अमुकोऽहं पूर्वभवे आसं सुदर्शनादिव'दिति ।

[3] '**सुमिणे**'त्यादि **स्वप्नदर्शनं** यथा भगवतो वर्द्धमानस्वामिनः प्रज्ञप्त्यां प्रतिपादितं स्वप्नफलं तथा *अथ स्त्रीं वा पुरुषं वा एकां महतीं हयपङ्क्तिं [व्या.प्र.16-6-18]* '**अहातच्चं**'ति यथातथ्यफलं **स्वप्नं द्रष्टुम्, जातिस्मरणम् 'आत्मनः पौराणिकीं जातिं स्मर्तुं'** चिन्ता उत्पद्येत ।

[4] '**देवदंसणे व**'त्ति तपस्व्यसाविति कृत्वा देवाः '**से**' तस्य आत्मानं दर्शयन्ति **दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं दिव्यं देवानुभावं द्रष्टुम्** ।

[5] '**ओहिनाणे वा से**'त्ति **अवधिज्ञानं** शेषं व्यक्तम् ।

[6] [1]**अवधिदर्शनम्** ।

[7] **मनःपर्यवज्ञानम्**, '**अंतो**'त्ति **अन्त**र्मध्ये मनुष्यक्षेत्रस्य **अर्द्धतृतीयेषु द्वीपसमुद्रेषु** जम्बूद्वीपधातकी-खण्डपुष्करार्द्धेषु **सज्ञिनां** मनोलब्धिमताम् एवंविधानां **पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां** पर्याप्तिषट्कसमेतानां मनसि गतान्-व्यवस्थितान् **मनोगतान् भावान्** परिणामस्वरूपान् **ज्ञातु**मिति ।

[8] '**केवलनाणे**' इत्यादि व्यक्तम् । नवरं **केवलकल्प**मिति केवलज्ञानवत् परिपूर्णं सकलस्वांशसम्पूर्णं **लोकालोकं ज्ञातुम्** ।

[9] एवं **केवलदर्शनम्** ।

[10] '**केवलमरणं व**'त्ति केवलज्ञानेन यन्मरणं **केवलमरणं** '**सव्वदुक्खप्पहीणाए**'त्ति सर्वदुःखप्रक्षयार्थम् ।

**[सू.36]**

**ओयं चित्तं समादाय झाणं सम[2]णुपासति ।**
**धम्मे ट्ठिओ अविमणो निव्वाणमभिगच्छइ ॥१॥**

**ण इमं चित्तं समादाय भुज्जो लोयंसि जायति ।**
**अप्पणो उत्तमं ट्ठाणं सण्णीणाणेण जाणइ ॥२॥**

**अधातच्चं तु सुविणं खिप्पं पासइ संवुडे ।**
**सव्वं [3]च ओहं तरती दुक्ख[4]त्तो य विमुच्चइ ॥३॥**

---

1 'देवर्धिदं°' इति K-M1-M2-M2-LD1-LD2 ।

2 'समुप्पज्जति' इति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 । 'समुप्पण्णति' इति A1-A2-M2 ।

3 '°व्वं वा ओ°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

4 '°क्खदो य' इति K-M1-M2-M3-M4-A1-A2-LD1-LD2 - मुद्रिते ।

पंताइं भयमाणस्स विवित्तं सयणासणं ।
अप्पाहारस्स दंतस्स देवा दंसेंति तातिणो ॥४॥

सव्वकामविरत्तस्स खमतो भयभेरवं ।
तओ से ओही भवति संजतस्स तवस्सिणो ॥५॥

तवसा अवहड[1]ऽच्चिस्स दंसणं परिसुज्झति ।
उड्ढमहे तिरियं च सव्वं समणुपस्सति ॥६॥

सुसमाहड[2]लेसस्स अवितक्कस्स भिक्खुणो ।
सव्वओ विप्पमुक्कस्स आया जाणति पज्जवे ॥७॥

जता से णाणावरणं सव्वं होति खयं गयं ।
तता लोगमलोगं च जिणो जाणति केवली ॥८॥

जया से दरि[3]सणावरणं सव्वं होइ खयं गतं ।
तया लोगमलोगं च जिणो पासइ केवली ॥९॥

पडिमाए विसुद्धाए मोहणिज्जे खयं गते ।
असेसं लोगमलोगं च पासंति सुसमाहिए ॥१०॥

जहा य मत्थए[4] सूयी हताए हम्मती तले ।
एवं कम्माणि हम्मंते मोहणिज्जे खयं गते ॥११॥

सेणावतिम्मि णिहते जधा सेणा पणस्सती ।
एवं कम्मा पणस्संति मोहणिज्जे खयं गते ॥१२॥

धूमहीणे जधा अग्गी खीयति से निरंधणे ।
एवं कम्माणि खीयंति मोहणिज्जे खयं गते ॥१३॥

सुक्कमूले जधा रुक्खे [5]सिच्चमाणे ण रोहति ।
एवं कम्मा न रोहंति मोहणिज्जे खयं गते ॥१४॥

जधा दड्ढाण बीयाण न जायंते पुणअंकुरा ।
कम्मबीयेसु दड्ढेसु न जायंति भवांकुरा ॥१५॥

---

1 ‘°हट्टुलेसस्स’ इति सर्वासु प्रतिषु ।

2 ‘°माहितले°’ इति K–Kh–M1–M2–M3–M4–LD1–LD2 – मु. ।

3 ‘से दंस°’ इति मुद्रिते ।

4 ‘°त्थयसूयी ह°’ इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

5 ‘°क्खे सिंचमा°’ इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

**चिच्चा ओरालितं बोंदिं नामगोत्तं च केवली ।**
**आउयं वेयणिज्जं च छित्ता भवति नीरजे ॥१६॥**

**एवं अभिसमागम्म चित्तमादाय आउसो ।**
**सेणिसोधिमुवागम्म आतसोधिमुवे[1]हइ ॥१७॥ त्ति बेमि ।**

**पंचमा दसा सम्मत्ता ॥**

[ज.36] साम्प्रतं गद्योक्तमेवार्थं श्लोकैर्दर्शयति–**'ओयं'**ति **ओजं** नाम रागद्वेषरहितं **चित्त**मुच्यते, शुद्धमेकमेव सम्यक् आदाय-गृहीत्वा, **'झाणं'**ति **ध्यानं** धर्मं, पश्यति-करोति धातूनामनेकार्थत्वात् सम्यक् यथा भवति तथाऽन्यैर्दृष्टम्, अनु-पश्चात्पश्यति पुनः पुनर्वा पश्यति - करोति समनुपश्यति । पुनः कथम्भूतो ? **'धम्मे ठिओ'**त्ति **धर्मे स्थितः** धर्मे-यथार्थोपलम्भके ज्ञानक्रियारूपे स्थितो धर्मे स्थितः । पुनः कथम्भूतः ? **'अविमणो' अविमनाः** परसमयेषु मनो यस्य न याति सोऽविमना अथवा शङ्कादि जिनवचने न करोतीत्यविमनाः । स एवं पूर्वोक्तगुणविशिष्टो **निर्वाणं** कषायदाहोपशमलक्षणं मोक्षं वा **अभिगच्छति**, *य एव गत्यर्थास्त एव ज्ञानार्था* इति वचनात् याति इति गाथार्थः ॥1॥

**'ण इमं'**ति **न** इति प्रतिषेधे **'इमं'**ति **एतत् चित्तं** ज्ञानं सम्यक् आदाय- गृहीत्वा, किं तत् ज्ञानमुच्यते ? जातिस्मरणादि, **भूयो** भूयः **लोके** संसारे **जायते** उत्पद्यते । **आत्मन 'उत्तमं'**ति प्रधानं **स्थानं** 'योऽहं परभवे आसं अमुकत्रैवंरूपम्' अथवा उत्तमः - संयमो मोक्षो वा यत्राज्ञानं कर्म वा न विद्यते, अथवा उत्तमं - श्रेष्ठं निर्वाहकं हितं वा, आत्मनः **तज्जानीते** ॥2॥

**'अहातच्च'**मिति **यथातथ्य**मविसंवादि यत् तत् यथातथ्यमित्युच्यते, यथा च चरमतीर्थकृता दश स्वप्ना दृष्टा **क्षिप्रं** च फलमजनि तथा क्षिप्रफलदं **पश्यति** । संवृतात्मा – निरुद्धाश्रवद्वारः **सर्वं** निरवशेषं, **च**शब्दः स्वगतानेकभेदसूचकः, **ओघं** सन्ततं प्रसृतप्रवाहं संसारसमुद्रमिव समुद्रम् अप्राप्यपारम् एवंविधं **तरति,** न पुनः संसारी भवति । **'दुक्खत्तो य' दुःखात्** दुःखोत्पादकर्मणः शारीरमानसिकाद्वा दुःखात् सांसारिकाद्वा विविधादनेकप्रकारा**न्मुच्यते** इति गाथार्थः ॥3॥

**'पंताइं'**ति **प्रान्तानि** अल्पमूल्यानि जीर्णानि **भजमानस्य** सेवमानस्य **'विवित्तं सयणासणं'**ति **विविक्तं** रहस्यभूतं स्त्रीपशुपण्डकसंसर्गरहितम् अथवा 'विचित्तं'विचिर पृथग्भावे पृथिव्यादिजीवेभ्यः पृथग्भूतानि, तदपि सेवमानस्येति सम्बन्धनीयम् । पुनः कथम्भूतस्य ? **अल्पाहारस्य** ब्रह्मचर्यगुप्तिरक्षणार्थं स्वल्पाहारिणः, **दान्तस्ये**न्द्रियदमनतत्परस्य । एवङ्गुणविशिष्टस्य साधोर्**देवाः** वैमानिका आत्मानं **दर्शयन्ति** यथास्थितं देवस्वरूपयुक्तम् । **'तातिणो'**त्ति आत्मत्राता[2] परत्राता[3] उभयत्राता[4], तस्य ॥4॥

1 '°मुवागए त्ति°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

2 '°त्रायी प°' इति LD1–LD2 ।

3 '°त्रायी उ°' इति LD1–LD2 ।

4 '°त्रायी त°' इति LD1–LD2 ।

**'सव्वकामे'**ति सर्वे च ते कामाश्च सर्वकामाः शब्दादयस्तेभ्यो विरक्तः, [तस्य] **सर्वकामविरक्तस्य** । भयेन भैरवं-रौद्रं **भयभैरवं** सिंहव्याघ्रपिशाचशिवादिकृतं **क्षमतः** सहतः । **ततस्तस्यै**वङ्गुणजातीयस्य **'ओही'**ति **अवधिर्भवति**, पदैकदेशे पदसमुदायोपचारादवधिज्ञानं भवति । कथम्भूतस्य ? **'संयतस्य'** संयमवतः **'तवस्सिणो'**त्ति **तपस्विनः** इति गाथार्थः ॥5॥

**'तवस'**त्ति **तपसा** द्वादशप्रकारेण **अपहृतार्चिषो** निराकृतकृष्णादिलेश्यात्रयस्य **दर्शन**मवधिदर्शनं परिशुद्ध्यति[1] विशुद्धतरं भवति । आह – तेन किं पश्यति ? उच्यते, ऊद्ध्र्वमधस्तिर्यक् **सर्वं** सम्यग् अनुपश्यति । तत्र ऊद्ध्र्वमित्यूद्ध्र्वलोकेऽधोलोके च तथा तिर्यगसङ्ख्येयद्वीपसमुद्रात्मकं लोकं पश्यतीति । कोऽर्थः ? ये तत्र भावाः जीवादयः कर्माणि वा यैर्वा जीवैर्यत्र गम्यते पुद्गलानां च लोके यथा परिणामस्तथा सर्वं सर्वात्मना सर्वासु च दिक्षु ॥6॥

**'सुसमाहडे'**त्यादि सुष्ठ्वतिशयेन समाहृताः – स्वचेतसि स्थापिता लेश्यास्तेजःपद्मशुक्लाख्या येन स सुसमाहृतलेश्यः, तस्य **सुसमाहृतलेश्यस्य** । **'अवितक्कस्स'**त्ति वितर्को नाम ऊहो विमर्श इति पर्यायः, सोऽस्ति विद्यते यस्य स वितर्कः, न विद्यते वितर्को-ऽश्रद्धानक्रियाफलसन्देहरूपो यस्य सोऽवितर्कः तस्य। तथा **'भिक्खुणो'**त्ति भिक्षणशीलो भिक्षुस्तस्य **भिक्षोः** । **'सव्वतो'**त्ति **सर्वतः** सर्वबाह्याभ्यन्तरभेद-भिन्नपरिग्रहात् विविधैर्ज्ञानभावनादिभिः प्रकारैः प्रकर्षेण - परीषहादिसहिष्णुतया मुक्तस्य । एवंविधस्य साधो**रात्मा** जीवो ज्ञानेन मनःपर्यायलक्षणेन **पर्यायान्** जीवस्य मनोगतान् **जानीते** ॥7॥

अथ कीदृशस्य केवलज्ञानं भवति ? तदाह – **'जया से'** इत्यादि । **यदा** यस्मिन्नवसरे **'से'**त्यनिर्दिष्टनाम्नो जीवस्य **ज्ञानावरणं** विशेषावबोधरूपं प्रस्तावात्केवलज्ञानावरणं **सर्वं** निरवशेषं **क्षयं गतं भवति** । ननु केवलज्ञानं तदैवोत्पद्यते यदा सर्वावरणविगमो भवतीत्यर्थादागते किमर्थं सर्वग्रहणमित्याशङ्का ? तत्रोच्यते, सर्वग्रहणं ज्ञानान्तरभेदसूचकं ज्ञेयं यावदावरणविगमे ज्ञानान्तरव्यपदेशो दर्शितः । ततो न निरर्थकताऽऽशङ्कनीया। **'तता'** इति **तदा लोकं** चतुर्दशरज्ज्वात्मकम् **अलोकं चा**नन्तं **जिनो जानाति केवली**, लोकालोकं च सर्वं नान्यतरमेवेत्यर्थः ॥8॥

**'जया'** इत्यादि व्यक्तम् । नवरं दर्शनं सामान्यावबोधरूपम् ॥9॥

**'पडिमाए'**इत्यादि **प्रतिमायां**, सप्तम्यर्थे तृतीया, **विशुद्धायाम्** । प्रतिमा तु द्वादशभिक्षुप्रतिमारूपा अथवा इयमेव रजोहरणपतद्ग्रहधरणरूपा अथवा मोहनीयकर्मविवर्जित आत्मा भवति, सैव प्रतिमाप्रतिरूपता अथवा इहलोकपरलोकानाश्रितत्वेन विशुद्धा प्रतिज्ञा, **मोहनीये** च कर्मणि **क्षयं गते** सति, शेषं व्यक्तम्। नवरं **'सुसमाहिय'**त्ति सुष्ठ्वतिशयेन समाधिताः समाधिमन्तः ॥10॥

**'जहे'**त्यादि **यथा** मस्तके सूची हन्यते करतलेन तदा करतलोऽपि हतो भवति, **एवं कर्माणि हन्यन्ते** *हन् हिंसागत्योः [पा.धा.अदादि 2]* ततो हन्यन्ते घातमाप्नुवन्ति, क्व सति ? **मोहनीये** कर्मणि **क्षयं गते** सति । इति गाथार्थः ॥11॥

---

1 अत्र 'विशुद्धयति' इत्यधिकः पाठः K-M1-M3-M4-LD1 ।

**'सेणावती'**ति **सेनापतौ** कटकनायके **हते** सति **यथा सेना प्रणश्यति एवं कर्माणी**ति सर्वं सुगमम् ॥12॥

'**धूमे**'त्यादि **धूमहीनो यथाग्निः क्षीयते स निरिन्धनो** नाम इन्धनरहितः, **एवं** व्यक्तम् ॥13॥

**'सुक्कमूले'**त्ति **शुष्कमूलो यथा वृक्षः सिच्यमानो न रोहति** न वृद्धिमाप्नोति, **एवं** व्यक्तम् ॥14॥

'**जहा**' इत्यादि यथा दग्धेषु बीजेषु **न जायन्ते** नोत्पद्यन्ते **पुनरङ्कुराः**, तथा **कर्मबीजेष्वि**ति व्यक्तम् ॥15॥

'**चिच्चा**'इत्यादि **त्यक्त्वा औदारिकम्** । बोन्दि नाम शरीरम्, तत्र औदारिकं नाम उदारं-प्रधानं, प्राधान्यं चास्य तीर्थङ्करगणधरापेक्षया, ततोऽन्यस्यानुत्तरसुरशरीरस्याप्यनन्तगुणहीनत्वात्, अथवा उरालं नाम विस्तरवत्, विस्तरवत्ता चास्यावस्थितस्वभावस्य सातिरेकयोजनसहस्रमानत्वात् । चशब्दात्तैजसं कार्मणं च ⇒[1]उक्तं च –*ओरालियतेयाकम्मयाइं सव्वाहि विप्पजहणाहिं विप्पजहति*[2] *[उत्त.29-72]* ⇐ पुन**र्नामगोत्रम्**, तत्र नामयति-गत्यादिपर्यायानुभवनं प्रति प्रवणयति जीवमिति नाम तथा गूयते-शब्द्यते उच्चावचैः शब्दैर्यत् तत् गोत्रम् उच्चनीचकुलोत्पत्तिलक्षणः पर्यायविशेषः, तद्विपाकवेद्यं कर्मापि गोत्रं कार्ये कारणोपचारात्, यद्वा कर्मणोऽपादानविवक्षा – गूयते-शब्द्यते उच्चावचैः शब्दैरात्मा यस्मात्कर्मण उदयात्तद्गोत्रम् । छित्त्वेत्युत्तरेण सह सण्टङ्कः । '**केवली**'ति केवलज्ञानवान् । तथा **'आउय'**मिति एति-आगच्छति च प्रतिबन्धकतां स्वकृतकर्मवाह्यनरकादिकुगतिनिःक्रमितुमनसो जन्तोरित्यायुः अथवा आ-समन्तादेति-गच्छति भवाद्भवान्तरसङ्क्रान्तौ विपाकोदयमित्यायुः, उभयत्राप्यौणादिक उस्प्रत्ययः। तथा '**वेयणिज्जं च**'त्ति **च**कारो भिन्नक्रमदर्शकः, वेद्यते – आह्लादादिरूपेण यदनुभूयते **तद्वेदनीयम्**, अत्र कर्मण्यनीयः । यद्यपि च सर्वं कर्म वेद्यते तथापि पङ्कजादिशब्दवत् वेदनीयशब्दरूढिविषयत्वात्। '**छित्ते**'त्ति आत्मप्रदेशेभ्यः कर्मदलिकान् पातयित्वा भवति **'णीरउ'**त्ति **नीरजाः** कर्मरजोरहितः ॥16॥

**'एव'**मित्यादि **एव**मवधारणे, अभिराभिमुख्ये, समेकीभावे, आङ्मर्यादाभिविध्योः, *गम्लृसृप्लृ गतौ*, सर्व एव गत्यर्था ज्ञानार्था ज्ञेयाः । **अभिसमागम्य** आभिमुख्यं सम्यग् ज्ञात्वेत्यर्थः । किं कर्तव्यमित्याह –**'चित्तमादाय'**त्ति चित्तशब्देन ज्ञानम् **आदाय** गृहीत्वा एतावता रागादिकालुष्यवर्जितं ज्ञानं प्रगृह्य '**आउसो**'त्ति **आयुष्म**न्नित्यामन्त्रणे, एतानि वा दश चित्तसमाधिस्थानानि समादाय किं कर्तव्यम् ? उच्यते, **'सेणिसोधिमुवागम्म'**त्ति **श्रेणिशोधिम् उपागम्य** । श्रेणिर्द्विधा–द्रव्यश्रेणिर्भावश्रेणिश्च । द्रव्यश्रेणिः प्रासादानां श्रेणिर्नाम सोपानपङ्क्तिरुच्यते यया आरुह्यते । भावश्रेणिरपि द्विधा –विशुद्धा अविशुद्धा च । अविशुद्धा संसाराय, विशुद्धा मोक्षाय । तस्याः 'सोधि'रिति शुद्धिः, कर्मणां शुद्धिर्येन भवति, सा शुद्धिरित्यभिधीयते । सोधिग्रहणात् संयमश्रेणिर्गृहीता भवति, उक्तं च – *अकलेवरसेणिमुस्सिआ[उत्त.10-35]* इति । **उपागम्य** ज्ञात्वा, उप सामीप्ये, तां प्राप्य, किं भवति ? उच्यते, आत्मनः शोधिरात्मशोधिस्तां तपसा **'उवेहइ'**त्ति पश्यति, य एवं करोति । **'त्ति बेमि'** पूर्ववत् । इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशचित्तसमाधिस्थानाख्यं पञ्चममध्ययनं समाप्तम् ॥

---

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गत पाठः नास्ति K – M1 – M3 – M4 – LD1 – LD2 ।

2 उत्तराध्ययने 'विप्पजहति' इत्यस्य स्थाने 'विप्पजहित्ता' पाठोऽस्ति ।

# षष्ठदशा उपासकप्रतिमाध्ययनम्

**[सू.37] सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खातं इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कारस उवासगपडिमाओ पण्णत्ताओ ।**

**[सू.38] कयराओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कारस उवासगपडिमाओ पन्नत्ताओ ?**

**[सू.39] इमाओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कारस उवासगपडिमाओ पन्नत्ताओ,**

**तं जहा–अकिरियावादी यावि भवति[1] नाहियवाई नाहियपण्णे नाहियदिट्ठी, नो सम्मावादी, नो नितियावादी, न संति परलोगवादी, णत्थि इहलोए, नत्थि परलोए, णत्थि माता, णत्थि पिता, णत्थि अरहंता, णत्थि चक्कवट्टी, णत्थि बलदेवा, णत्थि वासुदेवा, णत्थि[2] नरया, णत्थि नेरईया, णत्थि सुक्कडदुक्कडाणं फलवित्तिविसेसे, णो सुचिन्ना कम्मा सुचिण्णफला भवंति, नो दुचिन्ना कम्मा दुचिन्नफला भवंति, अफले कल्लाणपावए, नो पच्चायंति जीवा, नत्थि निरयादि[3]ह, नत्थि सिद्धी ।**

[ज.37-39] [4]व्याख्यातं दशचित्तसमाधिस्थानाख्यं पञ्चममध्ययनम् । साम्प्रतं षष्ठमारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः – अनन्तराध्ययने साधुमार्ग उक्तः समाधिस्थानरूपः । तं च श्रुत्वा कश्चित् तदाचरणाक्षमः श्रावकधर्ममपि प्रतिपद्यते । सो धर्मोऽत्र वर्ण्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्याऽध्ययन-स्यादिसूत्रम् –'**सुयं मे**'इत्यादि, व्याख्या पूर्ववत् । नवरं '**उवासगपडिमाउ**'त्ति उपासकाः श्रावकास्तेषां प्रतिमा अभिग्रहविशेषाः **तद्यथा** '**अकिरियवाइ**'त्ति । ननु प्रतिमाधिकारे तु पूर्वं दर्शनप्रतिमास्ति दर्शनं च सम्यक्त्वम्, तदेव पूर्वं वक्तुमुचितम्, किमर्थं तर्हि पूर्वं मिथ्यात्वप्ररूपणमनुपयोगित्वात् ? उच्यते, मिथ्यादर्शनं खलु सम्यग्दर्शनप्रतिपक्षभूतम्, तदपि ज्ञातुमुचितम् । यावन्न तद्धेयतया ज्ञातं तावत्सम्यक्त्वे दार्ढ्यं न भवति । अथवा पूर्वं [5]सर्वजीवानां मिथ्यात्वमेव पश्चात्केषाञ्चित् सम्यक्त्वम्, अतः पूर्वं मिथ्यादर्शनमेवोचितं वक्तुमिति । तद् द्विविधं तद्यथा – आभिग्राहिकमनाभिग्राहिकं च । तत्राभिग्रहिकं नाम कुदर्शनग्रहो यथा नास्ति जीवोऽनित्यो वा जीवः नास्ति वा परलोक इत्यादिरूपः[6] । अनाभिग्रहिकमसञ्ज्ञिनां सञ्ज्ञिनामपि केषाञ्चित् तथाविधज्ञानविकलानां ⇒[7]यतो भव्या अपि केचनाक्रियावादिनोऽभव्याश्चापि। भव्योऽक्रियावादी नियमात्कृष्णपाक्षिक एव । तल्लक्षणमेवमाहुः –

---

1 '°ति णो हियवाई णो हियपण्णे णो हि°' इति A1–A2–M2 ।

2 'णत्थि नरया' इति पाठो नास्ति मुद्रिते ।

3 '°या नत्थि'इति मुद्रिते ।

4 अत्र 'श्रीक्षीणाष्टकर्मणे नमः' इति मङ्गलं B–LI–Kh–A1–A2–M2 ।

5 'सर्व°' इति नास्ति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

6 '°रूपः' इति नास्ति K-LD1-LD2 ।

7 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः नास्ति K-LD1-LD2-M1-M3-M4 ।

*जेसिमवड्ढो पुग्गलपरियट्टो चेव होइ संसारो ।*
*ते सुक्कपक्खिया खलु इयरे पुण कण्हपक्खिया ॥ [श्रा.प्र.72]* इति ।

क्रियावादी च नियमाद्भव्य एव शुक्लपाक्षिकश्च यतः –*अंतो पुग्गलपरियट्टस्स णियमा सिज्जिहिति* सम्यग्दृष्टिर्मिथ्यादृष्टिर्वा भवेत् । अतो युक्तमादौ तदुद्देशकरणमिति । ⇐

तत्र क्रिया – अस्तीत्येवंरूपा, तां वक्तुं शीलमस्येति क्रियावादी, तद्विपरीत**स्त्वक्रियावादी** यतः ये त्वक्रियावादिनस्ते अस्तीतिक्रियाविशिष्टमात्मानं नेच्छन्त्येव, एवंविधो **भवति** । **चापि**शब्दावनुक्तार्थसङ्ग्राहकौ द्रष्टव्यौ । स पुनः कथम्भूतो भवतीति दर्शयति –'**णाहियवादी**'ति **नास्तिकवादी**, नास्त्यात्मा एवंवदनशीलो नास्तिकवादी । एवं **'णाहियपण्णे'**त्ति **नास्तिकप्रज्ञः**, प्रज्ञा हेयोपादेयरूपा, तां नास्तीत्येवंवदनशीलो नास्तिकप्रज्ञः, प्रतिज्ञा वा निश्चयरूपोऽभ्युपगमः । एवं **'नाहियदिट्ठि'**त्ति दृष्टिर्दर्शनं [1]स्वतत्त्वमिति भावः । '**नो सम्मावादी**' **न सम्यग्वादी** मिथ्यादृष्टिरित्यर्थः, ये यथावस्थितं भणन्ति ते सम्यग्वादिनः, तद्विपरीतास्तु मिथ्यावादिनः । '**णो णितियावादी**'त्ति नित्यो-मोक्षो यत्र गतानां पुनरागमनादि नास्ति नित्यतयाऽवस्थितिर्यत्रास्ति तन्निषेधवादी अथवा नियतमनुष्ठानम् । **न सन्ति** परलोकाः-स्वर्गनरकादयः, तद्वादी । स पुनरित्थं 'नास्ति' वदति यथा **नास्तीहलोकः**, 'इहे'ति अयं प्रत्यक्षः, सोऽपि 'नास्ति' । यद्दृश्यते तद्भ्रान्तम्, अन्यथा प्रतिभासते त(य)था भूतसमुदाये न जीवादिकमस्ति तच्च वस्तुतया प्रतिभासत इति भ्रान्तिः । **नास्ति परलोकः**, कोऽर्थः ? परो नाम सुख-दुःखोत्कृष्टभावसंयुतः, सोऽपि नास्ति । '**णत्थि माता, णत्थि पिता**'इति कण्ठ्यम् । तन्निषेधमेवं ते कुर्वन्ति – योऽयं मातृपितृव्यपदेशः स जनकत्वकृतः, जनकत्वाच्च यूकाकृमिगण्डोलकांस्तथाश्रित्य स स्यात्, न चैवम्, तस्मान्न वास्तवो मातृपितृव्यवहार इति ।

'**णत्थि अरहंत**'[2]त्ति अर्हन्तस्तीर्थकराः, शेषपदत्रयं व्यक्तम् । **'नरय'**त्ति नरानुपलक्षणत्वात् तिरश्चोऽपि तथाविधपापकारिणः कायन्ति - आह्वयन्तीति **नरकाः** सीमन्तकादयः । '**णेरईय**'त्ति निर्गतम् अयम्-इष्टफलं कर्म येभ्यस्तेषु भवा **नैरयिकाः** । '**णत्थि सुक्कडे**'त्यादि **नास्ति सुकृतदुःकृतयोः फलवृत्तिविशेषः**, सुकृतं तपःप्रभृति दुःकृतं जीवहिंसादि । '**नो सुचिण्णे**'त्यादि **न सुचीर्णानि** सुष्ठ्वाचरितानि **कर्माणि सुचीर्णफलानि** इष्टफलसाधकानि **भवन्ति** । एवमितरदपि, नवरं व्यत्ययः । '**अफल**'त्ति अयमात्मा **अफलः** फलवर्जितः, क्वेत्याह –**कल्याणप्रापके** वस्तुनि । '**णो पच्चायंति**'त्ति **न प्रत्यायान्ति जीवा** गत्यन्तरसम्भारेणेत्यर्थः । '**णत्थि णिरयादि ह**' अत्र ह्शब्दोपादानात् नारकास्तिर्यञ्चो नरा देवाश्चत्वारो ग्राह्याः । '**णत्थि सिद्धि**'त्ति **नास्ति** न विद्यते **सिद्धिर्**नाम ईषत्प्राग्भारा मुक्तिशिलेति यावत् ।

**[सू.40] से एवं वादी, एवं पण्णे, एवं दिट्ठी, एवं छंदरागमभि[3]णिविट्ठे आवि भवति ।**

---

1 'स्वमतमि°' इति A1 प्रतौ ।

2 '°हंतादि व्य°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

3 '°मतिणि°' इति LD1 – मुद्रिते ।

[ज.40] '**से**'त्ति **स एवंवादी** अनन्तरोक्तप्रकारवादी कथकः । '**पण्णे दिट्ठी**'पूर्ववत् । एवं '**छंदरागे**'त्ति छन्दः स्वाभिप्रायः, रागो नाम स्नेहरागादिकस्तत्राभिनिविष्टः प्रत्यर्पितदृष्टि**र्भवति** ।

**[सू.41] से य भवति महिच्छे, महारम्भे, महापरिग्गहे, अहंमिए, अहम्माणुए, अहम्मसेवी, अहम्मिट्ठे, अधम्मक्खाई, अहम्मरागी, अधम्मपलोई, अधम्मजीवी, अधम्मपलज्जणे, अधम्मसीलसमुदाचारे, अधम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ ।**

[ज.41] '**से य**'त्ति **सो भवति** अनन्तरवक्ष्यमाणस्वरूपो यथा '**महिच्छे**'त्ति महती राज्यविभवपरिवारादि-सर्वातिशायिनीच्छा-ऽन्तःकरणप्रवृत्तिर्यस्य स **महेच्छः** । तथा '**महारंभे**'त्ति महानारम्भो वहनोष्ट्रमण्डलिकागन्त्री-प्रवाहकृषिखण्डपोषणादिको यस्य स **महारम्भः** । यश्चैवम्भूतः स **महापरिग्रहः** धनधान्यद्विपदचतुःपद-वास्तुक्षेत्रादिपरिग्रहवान्, क्वचिदप्यनिवृत्तः । अत एव धर्मेण चरतीति धार्मिकः, न धार्मिकः **अधार्मिकः** । तत्र सामान्यतोऽप्यधार्मिकः स्यादत आह – '**अहम्माणुए**'त्ति धर्मं श्रुतचारित्ररूपमनुगच्छतीति धर्मानुगः, यद्वा धर्मे उक्तलक्षणेऽनुज्ञा-ऽनुमोदनं यस्य सो धर्मानुज्ञः तद्विपरीतस्तु **अधर्मानुज्ञः** तथा '**अधम्मसेवी**'त्ति अधर्म एव सेवितुं शीलमस्ये**त्यधर्मसेवी** । तथा '**अहम्मिट्ठे**'त्ति धर्मः श्रुतरूप एवेष्टो वल्लभः पूजितो यस्य स धर्मिष्टः अथवा धर्मिणामिष्टो धर्मीष्टः, अतिशयेन धर्मी धर्मिष्ठः, तन्निषेधादधर्मिष्टः **अधर्मिष्ठो** वा, यद्वा अधर्मिष्ठो नृशंसकर्मकारित्वादधर्मबहुलः । अत एव '**अहम्मक्खाई**'त्ति न धर्ममाख्यातीत्येवं-शीलो**ऽधर्माख्यायी** अथवा अधर्मात् आख्यातिर्यस्य स अधर्माख्यातिः । तथा **अधर्मरागी** अधर्मे एव रागो यस्य **सोऽधर्मरागी** । तथा '**अहम्मप्पलोइ**'त्ति न धर्ममुपादेयतया प्रलोकयति यः सो**ऽधर्मप्रलोकी** । '**अहम्मजीवी**'त्ति अधर्मेण जीवति – प्राणान् धारयतीति **अधर्मजीवी** । तथा '**अहम्मपलज्जणे**'त्ति न धर्मे प्रज्यति आसज्जति यः सो**ऽधर्मप्ररजनः** यद्वा अधर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यत इत्यधर्मरक्तः, रलयोरैक्यमिति रस्य स्थाने लकारोऽत्र कृत इति । क्वचिद् 'अधम्मपज्जणे'इति पाठः, तत्राधर्मं प्रकर्षेण जनयति-उत्पादयति लोकानामपीति अधर्मप्रजनः । तथा '**अधम्मसीले**'त्ति **अधर्मशीलो**ऽधर्मस्वभावः तथाऽधर्मात्मकः समुदाचारो यत्किञ्चनानुष्ठानं यस्य भवति स **अधर्मशीलसमुदाचारो**, न धर्मात्किमपि भवति तस्यैवाभावादित्येवम् । तथा '**अधम्मेणं चेव**'त्ति **अधर्मेण** चारित्रश्रुतविरुद्धरूपेण **वृत्तिं** जीविकां **कल्पयन्** कुर्वाणो **विहरत्यास्ते** यद्वा अधर्मेण सावद्यानुष्ठानेनैव दहनाङ्कननिर्लाञ्छनादिकेन कर्मणा वृत्तिं-वर्तनं कल्पयन् कुर्वाणो विहरति- कालमतिवाहयति यद्वा अधर्मेणैव वृत्तिं-सर्वजन्तूनां यापनां कल्पयन् इति ॥

**[सू.42] हण छिंद भिन्द वेकत्तए लोहियपाणी [1]पावे चंडा रुद्दा खुद्दा साहस्सिया उक्कंचणवंचण-मायानिअडीकूडसातिसंपयोगबहुला दुस्सीला दुपरिचया[2] दुरणुणेया दुव्वया दुप्पडियानंदा निस्सीले निव्वए[3]**

1 'पावे' इति नास्ति मुद्रिते ।

2 अत्र 'दुचरिया' इति K – M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

3 'निव्वए' इति नास्ति मुद्रिते ।

**निग्गुणे निम्मेरे निपच्चक्खाणपोसहोववासे असाहू ।**

[ज.42] पापानुष्ठानमेव लेशतो दर्शयितुमाह – **'हणे'**त्यादि । स्वत एव हननादिकाः क्रियाः कुर्वाणोऽपरेषामप्येवमात्मकमुपदेशं ददाति । तत्र हननं दण्डादिभिस्तत्कारयति, तथा **छिन्द्धि** कर्णादिकं, **भिन्द्धि** शूलादिना, **विकर्तकः** प्राणिनामजिनापनेता, अत एव **लोहितपाणि**र्मारयित्वा हस्तावप्यप्रक्षालनात्, अत एव **पापः** पापकर्मकारित्वात्, **चण्ड**स्तीव्रकोपा[1]वेशात्, **रौद्रो** नृशंसकर्मकारित्वात्, **क्षुद्रः** क्षुद्रकर्मकारित्वात्, **साहसिकः** सहसा अविमृश्यैव पापकर्मप्रवृत्तत्वात्, अत एव परलोकभयाभावात् असमीक्षितकारी अनालोचितपापकारीति भावः । तथा ⇒ [2]उत्कुञ्चनवञ्चनमायानिकृतिकूटकपटादिभिः सहातिसम्प्रयोगो - गार्ध्यं तेन बहुलः- प्रचुरो यः स तथा⇐ तत्र उत्-ऊद्ध्र्वं कुञ्चनं शूलाद्यारोपणार्थमुत्कुञ्चनम्, वञ्चनं-प्रतारणं तद्यथाऽभयकुमारः चण्डप्रद्योतगणिका[3]भिर्धार्मिकवञ्चनया वञ्चितः, माया–वञ्चनबुद्धिः प्रायो वणिजामिव, निकृतिस्तु बकवृत्त्या कुक्कुटादिकरणेन दम्भप्रधानवणिक्श्रोत्रियसाध्वाकारेण परवञ्चनार्थं गलकर्तकानामिवावस्थानं देशभाषानेपथ्यादिविपर्ययकरणम्, कूटमनेकेषां मृगादीनां ग्रहणाय नानाविधप्रयोगकरणमथवा कूटं कार्षापणतुलाप्रस्थादेः परवञ्चनार्थं न्यूनाधिककरणं, कपटं ⇒[4]यथा आषाढभूतिना नटेनेवापरापरवेषपरावृत्त्याऽऽचार्योपाध्यायसङ्घाटकात्मार्थं चत्वारो मोदका अवाप्ताः । ⇐ एतैरुत्कुञ्चनादिभिः सहातिशयेन सम्प्रयोगो - योगः तेन बहुलः यदिवा सातिशयेन द्रव्येण कस्तूरिकादिना अपरस्य द्रव्यस्य सम्प्रयोगः सातिसम्प्रयोगः तेन बहुलो-ऽतिप्रभूतः । ⇒ [5]उक्तं च सूत्रकृताङ्गचूर्णिकृता –

*सो होइ साइजोगो दव्वं जं छादिअन्नदव्वेसु ।*
*दोसगुणा वयणेसु य अत्थविसंवायणं कुणइ ॥ [सू.चू.2-2-160]* इति ।

तत्सम्प्रयोगबहुलः । ⇐ अपरे तु व्याख्यानयन्ति – उत्कुञ्चनं नाम उत्कोचा, निकृतिर्वञ्चनं प्रच्छादनकर्म, सातिरविस्रम्भः, एतत्सम्प्रयोगबहुलः, शेषं तथैव । एते चोत्कुञ्चनादयो मायापर्याया यथेन्द्रशब्दस्य शक्रपुरन्दरादयः ।

पुनः किम्भूतः ? **'दुस्सीले'**त्ति दुष्टं शीलं स्वभावो यस्य स **दुश्शीलः** । **दुःपरिचय**श्चिरमुपचरि(रं परिचि)तोऽपि क्षिप्रं विसंवदति । दुःखानुनेयो दारुणस्वभाव इत्यर्थः । तथा **'दुव्वए'** दुष्टानि व्रतानि यस्य स तथा, यथा मांसभक्षणव्रतकालसमाप्तौ प्रभूततरसत्त्वोपघातेन मांसप्रदानमन्यदपि नक्तभोजनादिकं तस्य दुष्टं व्रतमिति तथाऽन्यस्मिन् जन्मान्तरेऽहं मधुमद्यमांसादिकमभ्यवहरिष्यामीत्येवमज्ञानान्धो जन्मान्तर-

---

1 '°कोपवशा°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

2 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः Kh–LI–B प्रतिष्वेव ।

3 '°कावत् व°' इति LD1–LD2–K ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतस्य पाठस्य स्थाने LD1–LD2 प्रत्योः'आषाढभूतिवत्'इत्येवं पाठः ।

5 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठः K–LD1–LD2–M1–M3–M4 नास्ति ।

विधिद्वारेण सनिदानमेव व्रतं गृह्णाति । तथा दुःखेन प्रत्यानन्द्यत इति **दुःप्रत्यानन्द्यः**, इदमुक्तं भवति – तैरानन्दितेनापरेण केनचित् प्रत्युपकारेप्सुना गर्वाध्मातो दुःखेन प्रत्यानन्द्यते यदिवा सत्युपकारे प्रत्युपकारभीरुर्नैवाऽऽनन्द्यते प्रत्युत शठतया उपकारे दोषमेवोत्पादयति, तथा चोक्तम् –

*प्रतिकर्तुमशक्तिष्ठा नराः पूर्वोपकारिणाम् ।*
*दोषमुत्पाद्य गच्छन्ति मद्गूनामिव वायसाः ॥* इति ।

तथा **निश्शीलो** ब्रह्मचर्यपरिणामाभावात्, **निर्व्रतो** हिंसादिविरत्यभावात्, **निर्गुणो** हि क्षान्त्यादिगुणाभावात्, **निर्मर्यादः** परस्त्रीपरिहारादिमर्यादाविलोपित्वात्, तथा अविद्यमानः पौरुष्यादिप्रत्याख्यानोऽसत्पर्वदिनोपवासश्चेत्यर्थः । यत एवमतोऽ**साधुः** पापकर्मकारित्वात् ।

**[सू.43] सव्वातो पाणाइवायातो अप्पडिविरए जावज्जीवाए । एवं जाव सव्वाओ कोहाओ सव्वातो माणातो सव्वातो मातातो सव्वातो लोभातो सव्वातो पेज्जातो दोसातो कलहातो अब्भक्खाणातो पेसुण्णपरपरिवादातो अरतिरतिमायामोसातो मिच्छादंसणसल्लातो अपडिविरता जावज्जीवाए । सव्वातो ण्हाणुमद्दणअब्भंगण–कसाय[1]विलेवणसद्दफरिसरसरूवगंधमल्लालंकारातो अपडिविरता जावज्जीवाए। सव्वातो सगड–रह–जाण–जुग–गिल्लि–थिल्लि–सीया–संदमाणिय–सयणासण–जाण–वाहण–भोयणपवित्थरविधीतो अपडिविरता जावज्जीवाए असमिक्खियकारी । सव्वातो आसहत्थि–गो–महिस–गवेलय–दासी–दास–कम्मकरपोरुसातो अपडिविरया जावज्जीवाए । सव्वातो कय–विक्कय–मासद्धमास–रूवग–संववहारातो अपडिविरया जावज्जीवाए । सव्वातो हिरण्ण–सुवण्ण–धण–धन्न–मणि–मोत्तिय–संख–सिलप्पवालाओ अपडिविरया जावज्जीवाए । सव्वाओ कूडतुल–कूडमाणाओ अप्पडिविरया । सव्वाओ आरंभ–समारंभाओ अप्पडिविरया । सव्वाओ करण–कारावणाओ अप्पडिविरया । सव्वातो पयण–पयावणाओ अप्पडिविरया । सव्वातो कुट्टण–पिट्टण[2]–तज्जण–तालण–बंध[3]वह–परिकिलेसातो अपडिविरता जावज्जीवाए । जे यावन्ना तहप्पगारा सावज्जा अबोधिआ कम्मंता कज्जंति परपाणपरि–आवणकडा कज्जंति, ततोवि अ अपडिविरता जावज्जीवाए ।**

[ज.43] तथा यावत्प्राणधारणेन **सर्वस्मात् प्राणातिपातादप्रतिविरतो**, लोकनिन्दनीयादपि ब्राह्मणघातादेरविरत इति सर्वग्रहणम् । **एवं** पूर्वोक्तप्रकारेण **याव**त्करणात् 'सव्वातो मुसावायातो अपडिविरए' इत्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः । तत्र सर्वस्मादपि कूटसाक्षादेरप्रतिविरत इति । तथा सर्वस्मात् स्त्रीबालादेः परद्रव्यापहरणादविरतः । तथा सर्वस्मात्परस्त्रीगमनादेर्मैथुनादविरतः । एवं सर्वस्मात्परिग्रहाद्योनिपोषकादप्यविरतः । एवं सर्वेभ्यः क्रोधमानमायालोभेभ्योऽप्यविरतस्तथा प्रेमद्वेषकलहाभ्याख्यानपैशून्यपरपरिवादारतिरतिमायामृषामिथ्यादर्शनशल्यादिभ्योऽसदनुष्ठानेभ्यो **यावज्जीवयाऽप्रतिविरतो** भवतीति । तत्र

1 '°तो कसायदंतकट्ठण्हाणमद्दणवि°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 '°ट्टणातो त°' इति मुद्रिते ।

3 '°णवधबंधणप°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2–Kh ।

प्रेम – अनभिव्यक्तमायालोभस्वभावमभिष्वङ्गमात्रं प्रेम, द्वेषोऽनभिव्यक्तक्रोधमानस्वरूपमप्रीतिमात्रं द्वेषः, कलहो - राटिः, अभ्याख्यान-मसद्दोषारोपणम्, पैशून्यं – प्रच्छन्नमसद्दोषाविष्करणम्, परपरिवादो-विप्रकीर्णं परेषां गुणदोषवचनम् । अरतिरती अरतिर्मोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगः, तत्पुना रतिर्विषयेषु मोहनीयोदयाच्चित्ताभिरतिः अरतिरती । मायामृषा तृतीयकषायद्वितीयाश्रवयोः संयोगः, अनेन च सर्वसंयोगा उपलक्षिताः, अथवा वेषान्तरकरणेन भाषान्तरकरणेन वा यत्परवञ्चनं तन्मायामृषेति । मिथ्यादर्शनं शल्यमिव विविध-व्यथानिबन्धनत्वान्मिथ्यादर्शनशल्यमिति । तथा सर्वस्मात्स्नानोन्मर्दनाभ्यञ्जनवर्णककषायद्रव्यसंयुक्त-{तथा}विलेपनशब्दस्पर्शरसरूपगन्धमाल्यालङ्कारात् कामाङ्गात् मोहजनितादप्रतिविरतो यावज्जीवयेति – अत्र स्नानादयः शब्दाः प्रसिद्धाः, नवरं वर्णकग्रहणेन वर्णविशेषापादकं लोध्रादिकं परिगृह्यते । ननु पूर्वं तावदभ्यङ्गः पश्चादुन्मर्द्दनं युज्यते पश्चाच्च स्नानम्, ततः कथमादौ स्नानोपन्यासः ? उच्यते, यद्यपि अनुक्रम एवमेव, परं कोऽपि कदाचिदभ्यङ्गमन्तरापि स्नानं कुर्वन् पृष्ठिसंवाहनादि कारयति, तेन न व्यत्ययो दोषावह इति । गन्धाः-कोष्ठपुटादयः, माल्यानि-ग्रथितदामानि, अलङ्काराः-केयूरादयः ।
तथा **सर्वतः** शकटरथादेर्यानविशेषादिकात्प्रतिविस्तरविधेः परिकररूपात् परिग्रहा**दप्रतिविरत** इति । इह च शकटरथादिकमेव यानं शकटरथयानम्, युग्यं पुरुषोत्क्षिप्तमाकाशयानम्, 'गिल्लि'त्ति पुरुषद्वयोत्क्षिप्ता दौल्लिका, 'थिल्लि'त्ति वेगसरादिद्वयविनिर्मितो यानविशेषः, लाटानां यदड्डपल्लाणं रूढं तदन्यविषयेषु थिल्लिरित्युच्यते, तथा शिबिका नाम कूटाकाराच्छादितो जम्पानविशेषस्तथा 'संदमाणिय'त्ति शिबिकाविशेष एव पुरुषायामप्रमाणो जम्पानविशेषो वा, शयनानि-पर्यङ्कादीनि, आसनानि-गब्दिकादीनि, यानानि वाहनानि च पूर्वोक्तान्तःपातीन्येव वेदितव्यानि अथवा यानानि - नौकादीनि, वाहनानि-वेसरादीनि, भोजन-मोदनादिरूपम् । प्रविस्तरो नाम गृहोपस्कर इति । तथा अश्वहस्त्यादिपदानि व्यक्तानि । नवरं दास-आमरणं क्रयक्रीतः, कर्मकरो-लोकहितादिकर्मकरः, पौरुषं-पदातिसमूहः तेभ्योऽ**प्यप्रतिविरतो यावज्जीवये**ति । एतदेवमन्यस्मादपि वस्त्रादेः परिग्रहादुपकरणभूतादविरतः । तथा **सर्वतः** क्रयविक्रयाभ्यां करणभूताभ्यां यो माषकार्द्धमाषकरूपककार्षापणादिभिः पण्यविनिमयात्मकः संव्यवहारस्तस्मादप्यविरतो **यावज्जीवये**ति ।

तथा **सर्वस्मात्**सर्वतः **हिरण्यसुवर्णधनधान्यमणिमौक्तिकशङ्खशिलाप्रवालेभ्योऽप्यप्रतिविरतो यावज्जीवये**ति । तत्र हिरण्यं-रूप्यमघटितस्वर्णमित्येके, सुवर्णं घटितम्, धनं गणिमादि चतुर्द्धा तद्यथा –

*गणिमं जाईफलपूगफलाइ धरिमं तु कुंकुमगुडाई ।*
*मेज्जं चोप्पडलोणाइ रयणवत्थाइ परिच्छिज्जं ॥*

धान्यं चतुर्विंशतिधा यवशाल्यादि, मणयो वैडूर्यचिन्तामणिप्रभृतयः, मौक्तिकानि प्रतीतानि, शङ्खा दक्षिणावर्तादयः, शिलाप्रवालानि विद्रुमाणि, अन्ये त्वाहुः – शिला राजपट्टादिरूपाः, प्रवालं विद्रुमम् । एतेभ्योऽप्यप्रतिविरतो यावज्जीवयेति ।

तथा **कूटतुलाकूटमानाद**विरतस्तथा सर्वतः **सर्वस्मात् आरम्भसमारम्भात्** । तत्रेमौ[1] द्वावपि त्रिप्रकारौ तद्यथा– मानसिकवाचिककायिकभेदात् । तत्र मानसिकौ मन्त्रादिध्यानं परमारणहेतोः प्रथमः तथा समारम्भः परपीडाकरोच्चाटनादिनिबन्धनध्यानम् । वाचिकौ यथा आरम्भः परव्यापादनक्षमक्षुद्रविद्यादिपरावर्तना-सङ्कल्पसूचको ध्वनिरेव, समारम्भः परपरितापकरमन्त्रादिपरावर्तनम् । कायिकौ यथा आरम्भोऽभिघाताय यष्टिमुष्ट्यादिकरणम्, समारम्भः परितापकरो मुष्ट्याद्यभिघातः । तस्मादप्यविरतः ।

तथा सर्वतः कृषिपशुपाल्यादेर्यत् स्वतः करणमन्येन च यत्किञ्चित् कारयति, तस्मादविरतः। उपलक्षण-मनुमतेरप्येतत् । तथा **पचनपाचनतोऽप्यप्रतिविरतः** । तथा सर्वतः सर्वस्मात् कुट्टनपिट्टनतर्जनताडनादिना यः परिक्लेशः प्राणिनाम्, तस्मादप्**यप्रतिविरतः** ।

साम्प्रतमुपसंहरति –**ये चान्ये तथाप्रकाराः** परपीडाकारिणः सावद्याः कर्मसमारम्भाः **अबोधिका** बोध्य-भावकारिणः तथा **परप्राणपरितापनकरा** गोग्रहबन्दीगृहग्रामघातात्मका येऽनार्यैः क्रूरकर्मभिः **क्रियन्ते, ततोऽप्रतिविरता यावज्जीव**[2]**ये**ति ।

**[सू.44] से जहा नामए केइ पुरिसे कल–मसूर–तिल–मुग्ग–मास–निप्फाव–कुलत्थ–आलिसंद–सतीणा**[3]**–परिमंथ–जव एवमाइएहिं अजते कूरे मिच्छादंडं पउंजइ ।**

**एवा**[4]**मेव तहप्पगारे पुरिसज्जाते तित्तिर–वट्टग–लावक–कपोत–कपिंजल–मिय–महिस–वराह**[5]**–गोगोध–कुम्म–सिरीसवादिएहिं अजते कूरे मिच्छादंडं पउंजइ ।**

[ज.44] पुनरन्यथा बहुप्रकारमधार्मिकपदं प्रतिपिपादयिषुराह –**'से जहा णामए'** इत्यादि । **तद्यथे**त्यु-पदर्शनार्थम् । **नाम**शब्दः सम्भावनायाम्, सम्भाव्यतेऽस्मिन्विचित्रे संसारे **केचनै**वम्भूताः **पुरुषाः** ये **कलमसूरतिलमुद्गमाषनिष्पावकुलत्थ–आलिसिन्दकसतीनापरिमन्थकादिषु** पचनपाचनादिक्रियया स्व-परार्थ**मयतः** अयत्नवान् निःकृपः । तत्र कलावृत्तचनकाः- मसूरचनकाः, तिलमुद्गमाषाः प्रतीताः, निष्पावा-वल्लाः, कुलत्थाः–चपलकसदृशाश्चिप्पिटका भवन्ति, आलिसिन्दकाः[-चपलकाः], सतीना-तुवरी, परिमन्थकाः- कृष्णचनकाः । **क्रूरो मिथ्यादण्डं प्रयुञ्जति** मिथ्यैवानपराधिष्वेव दोषमारोप्य दण्डो मिथ्यादण्डस्तं विदधाति ।

तथा **एवमेव** प्रयोजनं विनैव **तथाप्रकारः** पुरुषो निष्करुणो जीवोपघातनिरतः '**तित्तरे**'त्ति **तित्तिरवर्तक–लावककपोतककपिञ्जलमृगमहिषवराहगौगोणकूर्मसरीसृपेषु** जीवनप्रियेषु प्राणिष्**वयतः** क्रूरकर्मा **मिथ्यादण्डं प्रयुञ्जति** ।

---

1 '°त्रैतौ द्वा°' इति K–M1–M3–M4–LD1 ।

2 '°वमिति' इति A1–A2 ।

3 '°परिमंथ°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

4 'एवमे°' इति K–M1–M2–M3–LD1–LD2– मुद्रिते ।

5 '°हगाहगोधकु°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**[सू.45] जावि य से बाहिरिया परिसा भवति, तंजहा– दासेति वा पेसेति वा भतएति वा भाइल्लेति वा कम्मारए ति वा भोगपुरिसेति वा, तेसिंपि य णं अण्णयरगंसि अधालघुसगंसि अवराधंसि सयमेव गरुयं दंडं वत्तेति ।**

**तं जहा– इमं दंडेह, इमं मुंडेह, इमं [1]तज्जेध, इमं तालेध, इमं अद्धुबंधणं करेह, इमं नियलबंधणं करेह, इमं हडिबंधणं करेह, इमं चारगबंधणं करेह, इमं नियलजुयलसंकोडियमोडितं करेह, इमं हत्थछिन्नं करेह, इमं पादछिन्नं करेह, इमं कन्नं, इमं नक्कं, इमं उट्ठं, इमं सीसच्छिन्नयं करेह, इमं मुरवं, इमं वेयच्छेउ, इमं हितउप्पाडियं करेह, एवं नयणदसणवयणजिब्भउप्पाडियं करेह, इमं ओलंबितं करेह, इमं[2] उल्लंबितं करेह, इमं घंसिययं, इमं घोलिततं, सूलाकायतयं इमं सूलाभिन्नं, इमं खारवत्तियं करेह, इमं दब्भवत्तियं, इमं सीहपुच्छितयं, इमं वसभपुच्छतियं, इमं कडग्गिदद्धयं, इमं काकिणिमंसखावितत, इमं भत्तपाणनिरुद्धयं, इमं जावज्जीवबंधणं करेह, इमं अन्नतरेणं असुभेणं कुमारेणं मारेह ।**

[ज.45] तस्य च क्रूरबुद्धेः 'यथा राजा तथा प्रजा'इति प्रवादात्परिवारोऽपि तथाभूत एव भवतीति तथा दर्शयितुमाह –**'जावि य से'** इत्यादि **यापि च तस्य बाह्या पर्षद्भवति**, **तद्यथा दासः** स्वदासीसुतः **प्रेष्यो** हि प्रेषणयोग्यो भृत्यदेश्यः, **भृतको** वेतनेनोदकाद्यानयनविधायी तथा **भागिको** यः षष्ठांशादिलाभेन कृष्यादौ व्याप्रियते, **कर्मकरः** प्रतीतः, तथा नायकश्रितः कश्चि**द्भोगपरः** । तदेवं ते दासादयोऽन्यस्य लघावप्यपराधे गुरुतरं दण्डं प्रयुञ्जन्ति प्रयोजयन्ति च । स च नायक**स्तेषां** दासादीनां बाह्यपर्षद्भूताना**मन्यस्मिन् यथालघावप्यपराधे** शब्दाश्रवणादिके **गुरुतरं दण्डं** वक्ष्यमाणं प्रयुङ्क्ते । **तद्यथा– इमं** दासं प्रेष्यादिकं सर्वस्वापहारेण **दण्डयत** यूयमित्यादि पाठसिद्धम् । नवरं **'अद्धुबंधणं'**ति अपृष्ठबाहुबन्धनम्, निगडानि प्रतीतानि, हडिरिति काष्ठघोटकः, चारको बन्दीप्रभृतीनामवस्थानार्थं गृहविशेषः, इमं निगडयुगलेन सङ्कोचितं – सङ्कोचकरणेन[3] ह्रस्वीकृतं मोटितम्-अङ्गभङ्गेन, मुरवो–मध्यवेधः शरीरस्यासिप्रभृतिकेन, **'वेयच्छेउ'**त्ति ब्रह्मसूत्राद्याकारेण छेदनम्, जीवत एव **हृदयोत्पाटनं**, हृदयमध्यमांसकर्तनम्, **'ओलंबितं'**ति **अवलम्बितं** कूपपर्वतनदीप्रभृतिषु, **उल्लम्बितं** वृक्षादिषु, **घर्षितं** करीषादिना **घोलितं** रसनिःकासनार्थमाम्रवत्, **शूलाप्रोतं** शूलिकारोपितं गुदे प्रोता सती शूली वदने निर्गच्छति, **शूलाभिन्नं** मध्ये विध्यते, **क्षारक्षतिकं** नाम शस्त्रेण छित्त्वा लवणक्षारादिभिः सिच्यते, **दर्भवर्तितं** दर्भेण शरीरविकर्तनम्, सिंहपुच्छे बन्धनम्, **कटाग्निदग्धं** कटान्तर्वेष्टयित्वाऽग्निना दह्यते, काकनिमांसानि कर्तयित्वा कर्तयित्वा खाद्यते, अन्यतरेण भक्तपाननिरोधम्, **इमम् अन्यतरेणाशुभेन** कुत्सितमारेण व्यापादयत यूयम् ।

**[सू.46] जावि य से अब्भिंतरिया परिसा भवति, तं जहा – माताति वा पिताति वा भायाइ वा भगिणित्ति वा भज्जाति वा धूयाति वा सुण्हाति वा तेसिंपि य णं अण्णयरंसि अहालहुसगंसि अवराहंसि सयमेव गरुयं डंडं वत्तेति ।**

---

1 '°मं वज्जे°' इति मुद्रिते ।

2 'इमं उल्लंबितं करेह' इति नास्ति सर्वाषु प्रतिषु ।

3 '°रणात् ह्र°' इति Kh ।

**तं जहा – सीतोदगंसि कायं[1] तो बोलित्ता भवति, उसिणोदगवियडेण कायंसि ओसिंचित्ता भवति, अगणिकायेन कायं [2]उवडहित्ता भवति, जोत्तेण वा वेत्तेण वा नेत्तेण वा कसेण वा छिवाडीए वा लताए वा पासाइं उद्दालित्ता भवति, डंडेण वा अट्ठीण वा मुट्ठीण वा लेलूएण वा कवालेण वा कायं आउडेत्ता भवति ।**

[ज.46] **यापि च** क्रूरकर्मवतोऽभ्यन्तरा **पर्षद्भवति तद्यथा** नाम कश्चित्पुरुषः प्रभुकल्पो मातापितृ-सुहृत्स्वजनादिभिः सार्द्धं परिवसं**स्तेषां** च मातापित्रादीनामन्यतमेनानाभोगतया यथाकथञ्चिल्लघुतमेऽ**प्यपराधे** वाचिके दुर्वचनादिके तथा कायिके हस्तपादादिसङ्घट्टनरूपे कृते सति **स्वयमेवा**ऽऽत्मना क्रोधाध्मातो **गुरुतरं दण्डं** दुःखोत्पादकं **वर्तयति** करोति । **तद्यथा –** शीतोदकविकटे प्रभूते शीते वा शिशिरादौ तस्यापराधकर्तुः **काय**मधो **वोलयिता भवति** । **'उसिणोदगे'**त्ति त**थोष्णोदकविकटेन** कायं शरीर**मपसिञ्चयिता भवति** । तत्र विकटग्रहणादुष्णतैलेन काञ्जिकादिना वा कायमुपतापयिता भवति । त**थाग्निकायेनो**ल्मुकेन तप्तायसा वा **कायमुपदाहयिता** भवति । तथा **योत्रेण वा वेत्रेण** वा खड्गेन[3] वा नेत्रो वृक्षविशेषस्तेन **कसेण त्वचा वा लतया वा**ऽन्यतमेन वा दवरकेन ताडनतस्तस्याल्पा[4]पराधकर्तुः शरीर**पार्श्वाणि 'उद्दालयितुं'**ति चर्माणि लुम्पयितुं **भवति** । तथा **दण्डेन** यष्ट्यादिना वा **अस्थ्ना वा लेलुना** लोष्टेन वा मुष्ट्या वा **कपालेन** वा कर्परेण वा **कायं** शरीरम् **आकोट्टयिता** उपताडयिता **भवति** अत्यर्थं कुट्टयिता वा । तदेवमल्पापराधिन्यपि महाक्रोधदण्डं वर्तयति ।

**[सू.47] तहप्पगारे पुरिसजाते संवसमाणे दुमणा भवंति, तहप्पगारे पुरिसज्जाए विप्पवसमाणे सुमणा भवंति ।**

[ज.47] **तथाप्रकारे पुरुषजाते** एकत्र वसति तत्सहवासिनो मातापित्रादयो **दुर्मनस**स्तदनिष्टाशङ्कया **भवन्ति** मार्जारदर्शने मूषिकावत् । तस्मिंश्च **प्रवसति** देशान्तरं[5] गच्छति गते वा तत्सहवासिनो हि **सुमनसो भवन्ति** ते, एवं यथा मार्जारे प्रवसिते मूषिका विश्वस्ता सुखंसुखेन विचरति एवं तस्मिन्प्रवसिते पौराः प्रातिवेश्मिकाः स्वजनादिकाः सर्वो वाऽन्यो लोको विश्वस्तः स्वकर्मानुष्ठायी भवति ।

**[सू.48] तहप्पगारे पुरिसजाए दंडमासी दंडगुरुए दंडपुरक्खडे अहिये अस्सिं लोयंसि, अहिए परंसि लोयंसि, ते दुक्खेत्ति ते सोयंति एवं जूरेंति तिप्पेंति पिट्टेइ परितप्पंति । ते दुक्खण–सोयण–झुरण–तिप्पण–पिट्टण–परितप्पण–वह– बंध–परिकिलेसाओ अप्पडिविरया भवन्ति ।**

[ज.48] तथाप्रकारश्च पुरुषजातोऽल्पेऽप्यपराधे महान्तं दण्डं कल्पयतीति, एतदेव दर्शयितुमाह – **तथाप्रकारः** स दण्डामृषी दण्डेनामृषतीति **दण्डामृषी**, लोकोऽपि भणति यथाऽमुको वराको राज्ञा कारागारे

1 'कायतो' इति Kh–A1–A2–M2 ।

2 '°यं ऊड°' इति Kh–A1–A2–M2– मुद्रिते ।

3 'खडगेन' इति K–M1–M2–M3–M4–LD1–LD2–Kh–LI–A2 ।

4 '°स्याप°' इति K ।

5 '°न्तरे ग°' इति B ।

क्षिप्तो दण्डित इत्यर्थः । 'दंडपासी'ति वा पाठस्तत्र दण्डस्य पार्श्वं तद्विद्यते यस्यासौ दण्डपार्श्वी । स्वल्पतया स्तोकापराधेऽपि कुप्यति दण्डं च पाटयति तमप्यतिगुरुकमिति दर्शयितुमाह – दण्डेन गुरुको **दण्डगुरुको**, यस्य च दण्डो महान् भवत्यसौ दण्डेन गुरुर्भवति । तथा **दण्डपुरस्कृतः** सदा पुरस्कृतदण्ड इत्यर्थः । स चैवम्भूतः स्वस्य परेषां **चास्मिन् लोके**ऽस्मिन्नेव जन्मनि **अहितः** प्राणिनामहितदण्डापादानात् । तथा **परस्मिन्न**पि जन्मन्यसा**वहित**स्तच्छीलतया चासौ येषां केषाञ्चिदेव येन केनचिन्निमित्तेन **सो**ऽन्येषां दुःखमुत्पादयति, तथा नानाविधैरुपायैस्तेषां शोकमुत्पादयति **शोकयती**त्येवं, **जूरयति** गर्हति **तृप्य(तिप्प)ति** सुखाच्च्यावयत्यात्मानं परांश्च, तथा स वराकोऽपुष्टधर्माऽसदनुष्ठानैः स्वतः पीड्यते परांश्च **पीडयति**, तथा स पापेन कर्मणा **परितप्यते**ऽन्तर्दह्यते परांश्च स परितापयति ।

तदेवमसावसद्वृत्तिः सन् दुःखनशोचनजूरणतिप्पनपीडनो हि प्राणिनां बहुप्रकारपीडोत्पादकतया वधबन्ध-परिक्लेशा**दप्रतिविरतो भवति** ।

**[सू.49] एवामेव ते इत्थि–काम–भोगेहिं मुच्छिता गिद्धा गढिया अज्झोववन्ना जाव वासाइं चउ–पंचमाइं छ–दसमाणि वा अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं भुंजित्ता भोगभोगाइं पसविता वेरायतणाइं संचिणित्ता बहूइं पावाइं कूराइं[1] कम्माइं उसन्नं संभारकडेण कम्मुणा से जहा नामए अयगोलेति वा सिलागोलेति वा उदयंसि पक्खित्ते समाणे उदगतलमतिवतित्ता अहे धरणितलपतिट्ठाणे भवति ।**

**[सू.50] एवामेव तहप्पगारे पुरिसजाए वज्जबहुले धुण्णबहुले पंकबहुले वेरबहुले अप्पत्तियबहुले [2]दंभ–नियडि[3]–साइ–बहुले अयसबहुले उस्सण्णं तसपाणघाती कालमासे कालं किच्चा धरणितलमतिवतित्ता अधे णरग–तल–पतिट्ठाणे भवति ।**

[ज.49-50] स च विषयासक्ततया यत्करोति तद्दर्शयितुमाह – **'एवामेवे'**त्यादि । **एवमेव** पूर्वोक्तस्वभाव एव स निष्कृपो निरनुक्रोशो बाह्याभ्यन्तरपर्षदोरपि कर्णनासावकर्तनादिना दण्डपातनस्वभावः, स्त्रीप्रधानाः कामाः स्त्रीकामाः यदिवा स्त्रीषु मदनकामविषयभूतासु कामेषु च शब्दादिष्विच्छाकामेषु **मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितः अध्युपपन्नः**, एते च शक्रपुरन्दरादिवत्पर्यायाः कथञ्चिद्भेदं वाश्रित्य व्याख्येयाः । एतच्च स्त्रीषु शब्दादिषु च प्रवर्तनं प्रायः प्राणिनां प्रधानं संसारकारणम् । तथा चोक्तम् – *मूलमेयमहम्मस्स महादोससमुस्सय[दश.6-17]*मित्यादि । इह च स्त्रीसङ्गासक्तस्यावश्यम्भाविनी शब्दादिविषया-सक्तिरित्यतः स्त्रीकामग्रहणम् । तत्र चाऽऽसक्तो यावन्तं कालमास्ते तत्सूत्रेणैव दर्शयति –**'जाव वासाइ'**मिति **यावद्वर्षाणि चतुः पञ्च षट्** सप्त वा **दश चाल्पतरं वा** कालं **प्रभूततरं वा कालं भुक्त्वा भोगभोगा**निन्द्रिया-नुकूलान्मधुमद्यमांसपरदारासेवनरूपान्, भोगासक्ततया च परपीडोत्पादनतो **वैरायतनानि** वैरानुबन्धान् **प्रविसूयो**त्पाद्य विधाय, तथा **सञ्चयित्वा** सञ्चित्योपचित्य **बहूनि** प्रभूततरकालस्थितिकानि **क्रूराणि**

1 'कूराइं' नास्ति सर्वासु प्रतिषु ।

2 '°ले दंभ-नियडिअयसबहुले अप्पत्तियबहुले' इति मुद्रिते ।

3 '°डिअसायब°' इति Kh –A1 – A2 – M2 ।

क्रूरविपाकानि नरकादिषु यातनास्थानेषु क्रकचपाटनशाल्मल्यवरोहणतप्तत्रपुपानात्मकानि **कर्मा**ण्यष्ट-प्रकाराणि बद्धस्पृष्टनिधत्तनिकाचनावस्थानि विधाय तेन च सम्भारकृते कर्मणा प्रेर्यमाणस्तत्तत्कर्मगुरुर्नर-कतलप्रतिष्ठानो भवतीति । अस्मिन्नेवार्थे सर्वलोकप्रतीतं दृष्टान्तमाह –**'से जहा नामए'**त्ति **तद्यथा नामायोगोलको** यः पिण्डः **शिलागोलको** वृत्ताश्मशकलं **वोदके प्रक्षिप्तः समानः** सलिलतल**मतिवर्त्या**-तिलङ्घ्या**धो धरणितलप्रतिष्ठानो भवत्य**धुना दार्ष्टान्तिकमाह –**'एवामेवे**'त्यादि । यथासावयोगोलको वृत्तत्वात् शीघ्रमेवाधो या**त्येवमेव तथाप्रकारः पुरुषजात**स्तमेव लेशतो दर्शयति वज्रवद्वज्रं गुरुत्वात्कर्म तद्बहुलस्तत्प्रचुरो बध्यमानकर्मगुरुरित्यर्थः, तथा धूयत इति धूतं-प्राग्बद्धं कर्म तत्प्रचुरः, पुनः सामान्येनाह – पङ्कयतीति पङ्कं-पापं तद्बहुलः, तथा तदेव कारणतो दर्शयितुमाह – **वैरबहुलो** वैरानुबन्धप्रचुरः, तथा **'अप्पत्तियं'**ति मनसो दुःप्रणिधानं तत्प्रधानः, तथा दम्भो मायया परवञ्चनं तदुत्कटः, तथा निकृतिर्माया वेषभाषापरावृत्तिछद्मना परद्रोहबुद्धिस्तन्मयः, तथा **'सातिबहुल'** इति सातिशयेन द्रव्येण परस्य हीनगुणस्य द्रव्यस्य संयोगः सातिस्तद्बहुलस्तत्करणप्रचुरः, तथा क्वचित् 'आसायणबहुले'ति पाठः तत्राशातना पूर्वोक्तार्था पाठसिद्धा तया बहुलोऽतिप्रचुरः, अयशो-अश्लाघा असद्वृत्ततया निन्दा, {यया रत्नप्रभादिकायास्तलमतितिष्ठति} परापकारभूतानि कर्माण्यनुष्ठानानि विधत्ते, तेषु तेषु च कर्मसु करचरणच्छेदनादिष्वयशोभाग् भवति । स एवम्भूतः पुरुषः **'कालमासे'**त्ति स्वायुषः क्षये **कालं कृत्वा** पृथिव्या रत्नप्रभादिकायास्तल**मतिवर्त्य** योजनसहस्रपरिमाणमतिलङ्घ्य **नरकतलप्रतिष्ठानो**ऽसौ **भवति** ।

**[सू.51] ते णं नरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधकारतमसा ववगयगह-चन्द-सूर-नक्खत्त-जोइस-पहा मेद-वसा-मंस-रुहिर-पूय-पडल-चिक्खिल्ल-लित्ताणुलेवणतला असुई विसा[1] परमदुब्भिगंधा काऊअगणिवण्णाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरयस्स वेदणाओ नो चेव णं नरएसु नेरईया निद्दायंति वा पयलायंति वा [2]सुतिं वा रतिं वा धितिं वा मतिं वा उवलभंति ।**

[ज.51] नरकस्वरूपप्ररूपणायाऽऽह –**'ते ण'**मित्यादि । **'ण'**मिति वाक्यालङ्कारे । **ते नरकाः** सीमन्तकादयो बाहुल्यमङ्गीकृत्या**न्तर्हि** मध्यभागे **वृत्ता**काराः, **बहि**र्भागे **चतुरस्रा**काराः । इदं च पीठोपरिवर्तिनं मध्यभागमधिकृत्योच्यते । सकलपीठाद्यपेक्षया त्वावलिकाप्रविष्टा वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रसंस्थानाः पुष्पावकीर्णास्तु नानासंस्थानाः प्रतिपत्तव्याः । **'अहे खुरप्पसंठाणसंठिया'**इति अधोभूमितले क्षुरप्रस्येव प्रहरणविशेषस्य यत्संस्थानमाकारविशेषस्तीक्ष्णलक्षणस्तेन संस्थिताः, तथाहि तेषु नरकावासेषु भूमितले मसृणत्वाभावतः शर्कराप्रचुरे भूभागे पादेषु न्यस्यमानेषु शर्करामात्रसंस्पर्शेऽपि क्षुरप्रेणेव पादाः कृत्यन्ते । **'निच्चंधयारतमसा'**त्ति तमसा **नित्यान्धकाराः**, उद्योताभावतो यत्तमस्तदिह तम उच्यते, तेन **तमसा** नित्यं सर्वकालमन्धकाराः । तत्रापवर्गादिष्वपि नामान्धकारोऽस्ति, केवलं बहिः सूर्यप्रकाशे मन्दतमो भवति,

1 '°ई तीसा°' इति मुद्रिते । '°ई भीमा प°' इति A1–A2–M2 ।

2 'वा सतिं' इति मुद्रिते ।

नरकेषु तीर्थकरजन्मदीक्षादिकालव्यतिरेकेणान्यदा सर्वकालमपि उद्योतलेशस्याभावतो जात्यन्धस्येव मेघच्छन्नकालार्द्धरात्र इव चातीव बहुलतरो वर्तते, तत उक्तं तमसा नित्यान्धकाराः । तमश्च तत्र सदावस्थितमुद्योतकारणानामसम्भवात्, तथा चाह – **'ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा'** व्यपगतः परिभ्रष्टो ग्रहचन्द्रसूर्यनक्षत्ररूपाणामुपलक्षणमेतत् तारारूपाणां च ज्योतिष्काणां पन्था - मार्गो येभ्यस्ते **व्यपगतग्रहचन्द्रसूर्यनक्षत्रज्योतिष्कपन्थाः** । तथा पुनरप्यनिष्टापादनार्थं तेषामेव विशेषणमाह – **'मेयवसे'**त्यादि दुष्कृतकर्मकारिणाम् ते नरकास्तेषां दुःखोत्पादनायैवम्भूता भवन्ति, तद्यथा स्वभावसम्पन्नैर्मेदोवसामांसरुधिरपूयादीनां पटलानि - सङ्घास्तैर्लिप्तानि पिच्छलीकृतान्यनुलेपनप्रधानानि येषां ते तथा, अथवा मेदोवसामांसरुधिरपूतिपटलैर्यच्चिक्खल्लं कर्दमस्तेन लिप्तमुपदिग्धमनुलेपनेन सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन तलं - भूमिका येषां ते **मेदोवसापूतिरुधिरमांसचिक्खल्ललिप्तानुलेपनतलाः** । अत **एवाशुचयो** विष्ठासृक्क्लेदप्रधानत्वात् । अत एव **विश्राः** कुथितमांसादिकल्पकर्दमविलिप्तत्वात् । क्वचित् 'बीभच्छा' इति पाठः, तत्र बीभत्सा दर्शनेऽप्यतिजुगुप्सोत्पत्तेः । एवं **परमदुरभिगन्धाः** कुथितगोमायुकडेवरादप्यसह्यगन्धाः ।

**'काऊअगणिवण्णाभा'**इति लोहे धम्यमाने यादृक्कपोतो बहुकृष्णरूपोऽग्नेर्वर्णः, किमुक्तं भवति ? यादृशी बहुकृष्णवर्णरूपा अग्निज्वाला विनिर्गच्छतीति तादृशी आभा - आकारो येषां ते **कपोताग्निवर्णाभाः** धम्यमानलोहाग्निज्वालाकल्पा इति भावः नारकोत्पत्तिस्थानातिरेकेणान्यत्र सर्वत्राप्युष्णरूपत्वात्, एतच्च षष्ठसप्तमपृथिवीवर्जमवसेयम्, यत उक्तम् –*छट्ठसत्तमीसु णं काऊअगणिवण्णाभा न भवन्ति* । एतादृशास्ते रूपतः, स्पर्शतस्तु कर्कशः कठिनो वज्रकण्टकासिपत्रस्येव स्पर्शो येषां ते तथा । अत एव **'दुरहियासा'**इति दुःखेनाध्यासन्ते सह्यन्ते इति **दुरध्यासाः** किमिति यतस्ते नरकाः पञ्चानामपीन्द्रियार्थानामशोभनत्वा**दशुभाः**, तत्र च सत्त्वानामशुभकर्मकारिणामुग्रदण्डपातिनां वज्रप्रचुराणां तीव्रा अतिदुःसहा वेदनाः शारीराः प्रादुर्भवन्ति । तया च वेदनया अभिभूतस्तेषु **नरकेषु** ते **नारका** नैवाक्षिनिमेषमपि कालं **निद्रायन्ते**, नाप्युपविष्टाद्यवस्था अक्षिसङ्कोचरूपामीषन्निद्रामवाप्नुवन्ति, **श्रुतिं** विशेषज्ञानरूपां **रतिं** चित्ताभिरतिरूपां **धृतिं** विशिष्टसत्त्वरूपां **मतिं** विशेषबुद्धिरूपां **नोपलभन्ते** ।

**[सू.52] तेणं तत्थ उज्जलं [1]तिउलं पगाढं कक्कसं कडुयं चंडं[2] तिव्वं दुक्खं दुग्गं[3] दुरहियासं नरएसु नेरईया निरयवेयणं पच्चणुभवमाणा वियरंति ।**

[ज.52] न ह्येवम्भूतवेदनापीडितस्य निद्रादिलाभो भवतीति दर्शयति – ता**मुज्ज्वलां** तीव्रानुभावनोत्कटां **'तिउलं'**ति त्रीनपि मनःप्रभृतिकान् तुलयति जयतीति त्रितुला ताम्, क्वचिद्विपुलमित्युच्यते तत्र सकलकायव्यापकत्वाद्विपुलाम्, **'पगाढं'**ति प्रकर्षवर्तिनीम्, **'कक्कसं'**ति कर्कशद्रव्यमिव **कर्कशां** दृढामित्यर्थः, **'कडुयं'**ति **कटुकां** नागरादिवत् सकटुकामनिष्टाम्, **'चंडं'**ति **चण्डां** रौद्राम्, **'तिव्वं'**ति

1 '°लं विउ°' इति मुद्रिते ।

2 '°डं रुक्खं दुग्गं तिव्वं दु°' इति मुद्रिते ।

3 '°ग्गं तिक्खं तिव्वं दु°' इति K–Kh–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

**तीव्रां** तिक्तलिम्बादिद्रव्यमिव तीव्राम्, '**दुक्खं**'ति दुःखहेतुकाम्, '**दुग्गं**'ति कष्टसाध्याम्, तथा '**दुरहियासं**'ति **दुरधिसह्यां** वेदयन्तो **विचरन्ति** । अयं तावदयोगोलकपाषाणदृष्टान्तः शीघ्रमधोनिमज्जनप्रतिपादकः प्रदर्शितः ।

**[सू.53] से जहा नामते रुक्खे सिया पव्वयग्गे जाते मूलच्छिन्ने अग्गे गुरुए जतो निन्नं जतो दुग्गं जतो विसमं ततो पवडति, एवामेव तहप्पगारे पुरिसजाते गब्भातो गब्भं जम्मातो जम्मं मारातो मारं दुक्खातो दुक्खं दाहिणगामिए नेरइये किण्हपक्खिते आगमेस्साणं दुल्लभबोधिए यावि भवति, से तं अकिरियावादी यावि भवति ।**

[ज.53] अधुना शीघ्रपातार्थप्रतिपादकमेवापरं दृष्टान्तमधिकृत्याह– **'से जहा णामए'** इत्यादि । **तद्यथा नाम** कश्चिद्वृक्षः **पर्वताग्रे जातो** मूले छिन्नः शीघ्रं यथा **निम्नं पतत्ये**वमसावप्यसाधुकर्मकारी तत्कर्म-वातेरितः शीघ्रमेव नरके पतति । ततोऽ[1]प्युद्वृत्तो **गर्भाद्गर्भ**मवश्यं याति । एवं **जन्मतो जन्म**, **मरणान्मरणम्**, नरकान्नरकम्, '**दुक्खाउ दुक्खं**' **दुःखात्** शारीरमानसोद्भवात् **दुःख**मसातमेवाप्नोति । तथा '**दाहिण**'त्ति दक्षिणस्यां दिशि गमनशीलो **दक्षिणगामुकः**, इदमुक्तं भवति– यो हि क्रूरकर्मकारी साधुनिन्दापरायणसद्दाननिषेधकस्स दक्षिणगामुको भवति, दाक्षिणात्येषु नरकतिर्यग्मनुष्यामरेषूत्पद्यते। तादृग्भूतश्चायमतो दक्षिणगामुक इत्युक्तम् । इदमेवाह –'**णेरइए**' इत्यादि । नरकेषु भवो **नारकः**, कृष्णपक्षोऽस्यास्तीति **कृष्णपाक्षिक**स्तथाऽऽ**गामिनि** काले नरकादुद्वृत्तो **दुर्लभबोधिकश्चा**यं बाहुल्येन **भवति**। इदमुक्तं भवति – दिक्षु मध्ये दक्षिणा दिगप्रशस्ता, गतिषु नरकगतिः, पक्षयोः कृष्णपक्षस्तदस्य विषयान्धस्येन्द्रियानुकूलवर्तिनः परलोकनिःस्पृहमतेः साधुप्रद्वेषिणो दानान्तरायविधायिनो दिगादिकमशस्तं प्राप्नोति । एवमन्यदपि यदशस्तं तिर्यग्गत्यादिकमबोधिलाभादिकं च तद्योजनीयमस्येति । न तस्य किञ्चित्त्राणं भवति ।

**[सू.54] से तं किरियावादी यावि भवति, तं जहा– आहियवादी आहियपन्ने आहियदिट्ठी सम्मावादी नियावादी संति परलोगवादी, अत्थि इहलोगे, अत्थि परलोगे, अत्थि माता, अत्थि पिता, अत्थि अरहंता, अत्थि चक्कवट्टी, अत्थि बलदेवा, अत्थि वासुदेवा, अत्थि सुक्कडदुक्कडाणं फलवित्तिविसेसे, सुचिन्ना कम्मा सुचिन्नफला भवंति, दुचिन्ना कम्मा दुचिन्नफला भवंति, सफले कल्लाणपावए, पच्चायंति जीवा, अत्थि [2]निरयादि ह, अत्थि सिद्धी ।**

**[सू.55] से एवं वादी एवं पन्ने एवं दिट्ठी एवं छंदरागमभिनिविट्ठे आवि भवति ।**

**[सू.56] से भवति महिच्छे जाव उत्तरगामिए नेरइये सुक्कपक्खिते आगमेस्साणं सुलभबोधिए यावि भवति, से तं किरियावादी ।**

---

1 '°तो नरकादप्यु°' इति A1 प्रतौ ।

2 '°त्थि नेरईया देवा सि°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

[ज.54-56] एवं मिथ्यात्वयुक्तजीववर्णनमुक्त्वा यदा कदाचित् सम्यक्त्वमाप्नोति तदा यादृशः स्यात् तथाह –**'से त'**मित्यादि । **स क्रियावादी चापि भवति**, यथा पूर्वं व्याख्यातं तथोत्तरत्रापि व्यत्ययेन व्याख्येयम् । एवं यदा आस्तिको भवति तदा स सम्यग्दृष्टिर्भवति याव**दुत्तरगामिकः शुक्लपाक्षिको** देवादिषु उत्पद्यते, आगामिनि काले च सुलभधर्मप्रतिपत्तिर्भवति ।

**[सू.57] सच्च[1]धम्मरुई यावि भवति । तस्स णं बहूइं सीलव्वत–गुण–वेरमण–पच्चक्खाण–पोसहोव–वासाइं नो सम्मं[2] पट्ठवितपुव्वाइं भवंति । एवं[3] दंसणसावओ । पढमा उवासगपडिमा ॥१॥**

[ज.57] स क्रियावादी **सत्यधर्मरुचिश्चापि भवति** । सद्भ्यो हितः सत्यः, स चासौ धर्मः क्षान्त्यादिकस्तद्रुचिरित्यर्थः । क्वचित् 'सव्वधम्मरुइ' इति पाठः । तत्र धर्मः स्वभाव इत्यनर्थान्तरम् । जीवाजीवयोर्यस्य द्रव्यस्य गतिस्थित्यवगाहनादिकः अथवा सर्वे धर्मा आज्ञाग्राह्या हेतुग्राह्याश्च, तान् श्रद्धत्ते सम्यक्तया मन्यते, परं **तस्य 'ण'**मिति वाक्यालङ्कारे । **'बहूइं सीलव्वये'**त्यादि शीलव्रतान्यणुव्रतानि, गुणा-गुणव्रतानि, विरमणानि-औचित्येन रागादिनिवृत्तयः, प्रत्याख्यानानि-पौरुष्यादीनि, पौषधः अवश्यंतया पर्वदिनानुष्ठानं तत्रोपवासोऽवस्थानं पौषधोपवासः, एषां द्वन्द्वः । एते, **'नो'** निषेधे, **सम्यग्** यथा भवति तथा **प्रस्थापिता भवन्ति**, न स्वचेतसि नियततया कर्तव्यत्वेन व्यवस्थापिता भवन्ति । **एव**ममुना प्रकारेण **दर्शनश्रावको** भवति, दर्शनं नाम सम्यक्त्वम्, तदाश्रित्य श्रावको भवति । ननु तथाविधविरतिं विना कथं श्रावको भवति ? उच्यते, वस्तुतस्तु व्रतान्यपि न सम्यक्त्वं विना भवन्ति, यतः *नत्थि चरित्तं सम्मत्त[4]-वज्जियं [उत्त.28-29]* इत्यादिवचनात् । सम्यक्त्वं व्रतहेतुकमथवा सम्यक्त्वं तु पञ्चसंवरद्वाराणामाद्यं संवरद्वारम् । ततः सम्यक्त्वश्रावको भवत्येवेति नात्र संशयः । इयं च सम्यक् श्रद्धानरूपा **प्रथमा** आद्या **उपासकप्रतिमा** ॥1॥

**[सू.58] अधावरा दोच्चा उवासगपडिमा–सच्चधम्मरुई आवि भवति । तस्स णं बहूइं सीलव्वय–गुण–वेरमण–पच्चक्खाण–पोसहोववासाइं सम्मं पट्ठविताइं भवंति । से णं सामाइयं देसावकासियं नो सम्मं अणुपालित्ता भवति । दोच्चा उवासगपडिमा ॥२॥**

[ज.58] उक्तमाद्यप्रतिमास्वरूपम्, साम्प्रतं द्वितीयप्रतिमास्वरूपमुच्यते –**'अहावरे'**त्यादि । **अथे**त्यानन्तर्ये, **अपरा** अन्या, **उवासगप्रतिमे**त्यादि व्यक्तम् । शीलव्रतादीनि च **प्रस्थापितानि भवन्ति** । एतावता विरतिमान् भवति, परं **स** न **सामायिकं देशावकासिकं** च **सम्यग्** यथा भवत्यतिचाररहितं तथा **नानुपालयिता भवति**। इति **द्वितीया श्रावकप्रतिमा** ॥2॥

**[सू.59] अहावरा तच्चा उवासगपडिमा–सच्चधम्मरुई यावि भवति । तस्स णं बहूइं सीलवय–गुण–**

---

1 'सव्वध°' इति A1–A2–M2–LD1–LD2- मुद्रिते ।

2 '°म्मं पट्ठविताइं भवंति । से णं सामाइयं देसावकासियं नो सम्मं' इति मुद्रिते ।

3 'एवं दंसणसावओ' इति नास्ति Kh–A1–A2–M2- मुद्रिते ।

4 '°त्तं विना इति व°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

**वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासाइं सम्मं पट्ठवियाइं भवंति । से णं सामाइयं देसावगासियं सम्मं अणुपालित्ता भवति । से णं चउद्दसि-अट्ठमि-उद्दिट्ठ-पुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहोववासं नो सम्मं अणुपालित्ता भवति । तच्चा उवासगपडिमा ॥३॥**

[ज.59] **अथापरा तृतीया** सुगमा । नवरं **तस्य बहूनि** व्रतादीनि **प्रस्थापितानि** आत्मनि निवेशितानि **भवन्ति** । '**ण**'मिति वाक्यालङ्कारे । '**चाउद्दसी**'त्ति चतुर्दशी प्रसिद्धा पर्वतिथित्वेन, तथैवाष्टमी पर्वत्वेन प्रख्याता, '**उद्दिट्ठ**'त्ति उद्दिष्टा अमावास्या, पौर्णमासी पूर्णो मासो यस्यां सा पूर्णमासी अथवा पूर्णो माश्चन्द्रमा यस्यां सा पूर्णमासी, तासु एवम्भूतासु धर्मतिथिषु प्रतिपूर्णो यः पौषधो व्रताभिग्रहविशेषस्तं **प्रतिपूर्ण**माहारशरीरसत्कारब्रह्मचर्याव्यापाररूपं पौषधं **नानुपालयिता भवति** । इति **तृतीया उपासक-प्रतिमा** ॥3॥

**[सू.60] अहावरा चउत्था उवासगपडिमा-सच्चधम्मरुई यावि भवइ । तस्स णं बहूइं सीलवय-गुण-वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासाइं सम्मं पट्ठवियाइं भवंति । से णं सामाइयं देसावगासियं सम्मं अणुपालित्ता भवइ । से णं चउदसि जाव सम्मं अणुपालित्ता भवइ । से णं एगराइयं उवासगपडिमं णो सम्मं अणुपालेत्ता भवइ । चउत्था उवासगपडिमा ॥४॥**

[ज.60] **अथापरा चतुर्थी उपासकप्रतिमा 'एगराइय'**मिति यस्मिन् दिने उपवासो भवति तस्मिन् दिवा रात्रौ प्रतिमां प्रतिपद्यते, न च स तां शक्नोति कर्तुमिति चतुर्थी ॥4॥

**[सू.61] अहावरा पंचमा उवासगपडिमा-सच्चधम्मरुई यावि भवति । तस्स णं बहूइं सील जाव सम्मं पडिलेहियाइं भवंति । से णं सामाइयं तहेव से णं चाउद्दसि तहेव से णं एगराइतं उवासगपडिमं सम्मं अणुपालेत्ता भवति । से णं असिणाणए, वियडभोई, मउलिकडे, दिया बंभयारी, रत्तिं परिमाणकडे, से णं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे जहन्नेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं पंच मासे विहरेज्जा । पंचमा उवासगपडिमा ॥५॥**

[ज.61] अथ **पञ्चमी** '**सच्चधम्मे**'त्यादि व्यक्तम् । '**असिणाणे**'ति न स्नाति, स्नानं न करोति । '**वियडभोइ**'त्ति प्रकाशभोजी, न रात्रौ भुङ्क्तेऽप्रकाशे वा यतो ये दोषाः पिपीलिकाद्युपघातरूपाः रात्रौ भवन्ति त एवान्धकारभोजने इति प्रवादः, तेन प्रकाशभोजी भवति । '**मउलिकडे**'त्ति परिधानवाससोऽञ्चलद्वयं कटीप्रवेशनेनावलम्बयति, अग्रे पृष्ठे चोन्मुक्तकच्छो भवतीत्यर्थः । यावन्मासपञ्चकं न परिसमाप्यते, तावद्दिवा **ब्रह्मचारी** । '**से ण**'मित्यादि **स** इत्यनिर्दिष्टनामा **एतद्रूपेण विहारेण** प्रतिमाचरणरूपेण **विचरन् एकाहं** एकदिवसं, **वा**शब्दोऽपरापरभेदसूचकः, एवं सर्वत्र **द्व्यहं त्र्यहं, उत्कर्षतो** यावत्**पञ्च मासां**स्ताव-द्विहरति । तत्रैकाहं यदि अङ्गीकृत्य प्रतिमां स कालं कुर्यात्, असामर्थ्याद्वाऽन्तराले एव त्यजेत् कोऽपि तत उक्तं 'एकाहं वे'त्यादि, इतरथा तु सम्पूर्णापि भवति । पूर्वोक्तप्रतिमाचतुष्टयस्याऽऽचारोऽत्रापि द्रष्टव्यः । दिवा रात्रौ च ब्रह्मचारी भवति । एवमुत्तरत्रापि पूर्वपूर्वतनप्रतिमाचारोऽपि वाच्य इति पञ्चम्युपासकप्रतिमा । क्वचित् 'अहासुत्ता' इत्यादिपाठसूत्रः, 'अहासुत्ता' इति सामान्यसूत्रानतिक्रमेण, 'अहाकप्पा' इति

प्रतिमाकल्पानतिक्रमेण तत्कल्पवस्त्वनतिक्रमेण वा, 'अहामग्गा' इति ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षायोपशमिकभावातिक्रमेण वा, 'अहातच्चा' इति यथातत्त्वं तत्त्वानतिक्रमेण 'पञ्चमासिकी श्रावकप्रतिमा' इति शब्दार्थानतिलङ्घनेनेत्यर्थः, 'जहासम्मं' समभावानतिक्रमेण, 'काएणं'ति न मनोरथमात्रेण 'फासेइ'त्ति उचितकाले विधिना ग्रहणात्, 'पालेइ'त्ति असकृदुपयोगेन प्रतिजागरणात्, 'सोहेइ' शोभयति पारणकदिने गुर्वादिदत्तशेषभोजनकरणात् शोधयति वा अतिचारपङ्कक्षालनात्, 'तीरेइ' पूर्णेऽपि तदवधौ स्तोककालावस्थानात्, 'पूरेइ' सम्पूर्णेऽपि तदवधौ तत्कृत्यपरिमाणपूरणात्, 'किट्टेइ' कीर्तयति पारणकदिने 'इदं चेदं चैतस्याः कृत्यं तच्च मया कृत'मित्येवं कीर्त्तनात्, 'अणुपालेइ'त्ति तत्समाप्तौ तदनुमोदनात्, किमुक्तं भवति ? इत्याह – आज्ञया आराधयतीति । इति पञ्चम्युपासकप्रतिमा ॥5॥

**[सू.62] अहावरा छट्ठा उवासगपडिमा–सच्चधम्म जाव से णं एगराइयं उवासगपडिममणुपालेत्ता भवति । से णं असिणाणए वियडभोई मउलियडे रातोवरातं बंभचारी, सचित्ताहारे से परिणाते न भवति । से णं एतारूवेण विहारेण विहरमाणे जाव जहन्नेण एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे विहरेज्जा । छट्ठा उवासगपडिमा ॥६॥**

[ज.62] **अथापरा षष्ठी उपासकप्रतिमा**, शेषं व्यक्तम् । रात्रिभोजनादुपरतो भवति । '**रातोवरातं**'ति **रात्रौ दिवा** ब्रह्मचर्ययुक्तो भवति । '**सच्चित्ताहारे**' इत्यादि सच्चित्तः सचेतनो जीवसहित इतियावत् । परिज्ञातो परिज्ञया आहारितः सन् कर्मबन्धकारणत्वेन, परं प्रत्याख्यानपरिज्ञयाऽ**प्रत्याख्यातः** । '**एतारूवेण**' पूर्ववत् । एवमुत्तरोत्तरप्रतिमासु मासा वाच्याः, यथासङ्ख्यं मासा इति षष्ठी ॥6॥

**[सू.63] अहावरा सत्तमा उवासगपडिमा–से सच्चधम्म जाव रातोवरातं बंभचारी सचित्ताहारे से परिण्णाते भवति । आरंभे अपरिण्णाते भवति । से णं एतारूवेण विहारेणं विहरमाणे जहण्णेण एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं सत्तमासे विहरेज्जा । सत्तमा उवासगपडिमा ॥७॥**

[ज.63] **अथापरा सप्तमी**, नवरं **परिज्ञातः** प्रत्याख्यातः **आरम्भश्चापरिज्ञातो भवति** करणकारापणा-नुमोदनत्रिविधेनापि करणेन ॥7॥

**[सू.64] अहावरा अट्ठमा उवासगपडिमा–सच्चधम्मरुई यावि भवति । जाव राओवरायं बंभचारी, सचित्ताहारे से परिण्णाए भवति । आरंभे से परिण्णाए भवति । पेस्सारंभे अपरिण्णाए भवति । से एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे जाव एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं अट्ठमासे विहरेज्जा । अट्ठमा उवासगपडिमा ॥८॥**

[ज.64] **अथापरा** अष्टम्यां स्वयं करणमाश्रित्याऽ**ऽरम्भः परिज्ञातो** भवति, **प्रेष्यारम्भो**ऽन्येषामादेशदानतः कारापणान्न[1] निवृत्तः इत्यष्टमी ॥8॥

**[सू.65] अहावरा नवमा उवासगपडिमा–सच्चधम्म जाव रातोवरायं बंभचारी, सचित्ताहारे से परिण्णाए भवति । आरंभे से परिण्णाए भवति । पेस्सारंभे से परिण्णाए भवति । उद्दिट्ठभत्ते से अपरिण्णाते**

1 '°णादनि°' इति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

**भवति । से णं एतारूवेणं विहारेणं विहरमाणे जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं नवमासे विहरेज्जा । नवमा उवासगपडिमा ॥९॥**

[ज.65] नवम्यां तु कारणारम्भः प्रेष्यादिभ्यः **स परिज्ञातो भवति**, **उद्दिष्टभक्तं** तु न परिज्ञातं **भवति** । उद्दिष्टं नाम तदुद्देशेन यत्कृतं तदुद्दिष्टमित्युच्यते । इति नवमी ॥9॥

**[सू.66] अहावरा दसमा उवासगपडिमा–सव्वधम्म जाव पेस्सारंभे से परिण्णाया भवंति । उद्दिट्ठभत्ते से परिण्णाते भवति । से णं खुरमुंडए वा छिहलिधारए वा । तस्स णं आभट्ठस्स वा समाभट्ठस्स वा कप्पंति दुवे भासातो भासित्तए, तं जधा[1]– जाणं वा जाणं अजाणं वा नो जाणं । से एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं दस मासे विहरेज्जा । दसमा उवासगपडिमा ॥१०॥**

[ज.66] दशम्यां तु **उद्दिष्टभक्तं** तेन **परिज्ञातं भवति** । **स** च **क्षुरमुण्डो वा शिखाधारको वा भवति**, यथा परिव्राजकाः शिखामात्रं धरन्ति तथाऽयमपीति । तदा तं प्रति पुत्रादयः तन्मुक्तं किञ्चिद्वस्तुजातमजानानाः पृच्छन्ति – 'किं कृतं तद्वस्तु ?' तदा तेन कथमुत्तरयितव्यास्ते तदाह – '**आभट्ठस्स**' आ-ईषत् 'भट्ठस्स'त्ति देशीवचनात् **भाषितस्य**, प्रत्युत्तरदापनेन पृष्टस्य पुनः पुनर्वा भाषितस्य **कल्पेते** युज्येते **द्वे भाषे भाषितुं** वक्तुमिति, **तद्यथा** – यदि **जानाति** तदा वदति '**अहं जानामि**' यतस्तेषामकथनेऽप्रीतिवशा-दन्तकृदादयोऽपि दोषाः स्युः शङ्कादयो वा दोषा यथा ते ज्ञास्यन्ति 'अनेनैव तद् द्रव्यादि भक्षितम्' । तेन जानामीति वदति । अपरा तु यदि **न जानाति** तदा वदति '**नाहं जानामि**' । एते द्वे भाषे भाषितुं कल्पेते । इति दशमी प्रतिमा ॥10॥

**[सू.67] अधावरा एक्कारसमा उवासगपडिमा–सव्वधम्म जाव उद्दिट्ठभत्ते से णं परिण्णाते भवति । से खुरमुंडे वा लुत्तसिरए वा गहितायारभण्डगनेवत्थे जारिसे[2] समणाणं निग्गंथाणं धम्मे पन्नत्ते तं सम्मं काएणं फासेमाणे पालेमाणे पुरतो जुगमायाए पेहमाणे दट्ठूण तसे पाणे उद्धट्टु[3] पाए रीयेज्जा साहट्टु पायं रीएज्जा वितिरच्छं वा पायं कट्टु रीयेज्जा । सति परक्कमे संजयामेव परिक्कमेज्जा नो उज्जुयं गच्छेज्जा । केवलं से णातए पेज्जबंधणे अव्वोच्छिन्ने भवति । एवं से कप्पति नायवीधिं वित्तए, एत्थ णं से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पच्छाउत्ते भिलंगसूवे, कप्पति से चाउलोदणे पडिगाहित्तए, नो से कप्पति से भिलंगसूवे पडिगाहित्तए । जे से तत्थ पुव्वागमणेण पुव्वाउत्ते भिलिंगसूवे पच्छाउत्ते चाउलोदणे, कप्पति से भिलंगसूवे पडिगाहेत्तए, नो से कप्पति चाउलोदणे पडिगाहित्तए । तत्थ से पुव्वागमणेण दोवि पुव्वाउत्ताइं, कप्पंति से दोवि पडिगाहित्तए । तत्थ से पच्छागमणेणं दोवि पच्छाउत्ताइं, णो से कप्पंति दोवि पडिगाहित्तए । जे से तत्थ पुव्वागमणेणं[4] ⇒पुव्वाउत्तिण्णे से कप्पइ पडिग्गाहित्तए, जे से तत्थ**

---

1 '°धा जाणं अ°' इति मुद्रिते ।

2 '°त्थे जे इमे स°' इति मुद्रिते ।

3 '°द्धट्ठपा°' इति मुद्रिते ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति मुद्रिते ।

**पुव्वागमणेणं पच्छाउत्तिण्णे⇐ से णो कप्पति पडिग्गाहित्तए ।**

**तस्स णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठस्स कप्पति एवं वदित्तए समणोवासगस्स पडिमा-पडिवन्नस्स भिक्खं दलयह । तं चेव एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणं[1] केइ पासित्ता वदिज्जा 'केइ आउसो तुमं' वत्तव्वं सिया? 'समणोवासए पडिमापडिवज्जित्तए[2] अहमंसीति' वत्तव्वं सिया । से णं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं एक्कारस मासे विहरेज्जा । एक्कारसमा उवासगपडिमा ॥११॥**

**एयाओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कारस उवासगपडिमाओ पण्णत्ताओ त्ति बेमि । छट्ठा दसा सम्मत्ता ॥**

[ज.67] '**अहावरे**'त्यादि व्यक्तम् । **लुञ्चितशिरस्को** लुञ्चितशिरोजो वा, शिरसि जाताः शिरोजाः । '**गहियायार**'त्ति गृहीतानि आचारपालनार्थं भाण्डका-न्युपकरणानि पात्ररजोहरणमुखवस्त्रिकादीनि, नेपथ्यं- साधुवेषस्तथाप्रकारवस्त्रादिप्रावरणम्, ततो द्वन्द्वः । तथा '**जारिसे**'त्ति **यादृशः श्रमणानां निर्ग्रन्थानां** बाह्याभ्यन्तरग्रन्थरहितानां **धर्मः** क्षान्त्यादिकः **प्रज्ञप्तः**, तादृशमिति अध्याहार्यम्, **तं** धर्मं **सम्यग्** यथा भवति, **कायेन** न तु मनोरथमात्रेण, **स्पर्शयन् पालयन्** यथाचारं, '**पुरउ**' त्ति **पुरतो**ऽग्रतो **युगमात्रया** शरीरप्रमाणया शकटोद्धिसंस्थितया, दृष्ट्येति वाक्यशेषः, **प्रेक्षमाणः** प्रकर्षेण पश्यन् भूभागम् । तत्र '**दट्ठूण**'त्ति **दृष्ट्वा**, त्रस्यन्तीति त्रसा द्वीन्द्रियादयस्तान्, प्राणान् धरन्तीति प्राणा-जीवाः पतङ्गादयः तान् । '**उद्धट्टु**'त्ति **पाद**मुद्धृत्याग्रतलेन पादपातप्रदेशं वातिक्रम्य **गच्छेत्**, एवं **संहृत्य** शरीराभिमुखमाक्षिप्य **पादं** विवक्षितपादपातप्रदेशादारत एव विन्यस्य उत्क्षिप्य चाग्रभागं पार्ष्णिकया **गच्छेत्**, तथा **तिरश्चीनं** वा **पादं कृत्वा गच्छेत्**, अयं चान्यमार्गाभावे विधिः । **सति** त्वन्यस्मिन् **पराक्रमे** गमनमार्गे संयतः संस्तेनैव **पराक्रमेत** गच्छेन्न **ऋजुने**त्येवं सर्वं साध्वनुगमेन । सर्वं तेन त्यक्तम्, '**केवलं से णाए**'त्ति **ज्ञातीयं** स्वज्ञातिविषयं मातृपितृभ्रातृप्रभृतिविषयं **प्रेमबन्धनमव्युच्छिन्न**मत्रोटितं **भवति** । '**एव**'मित्यादि **एव**मनन्तरवक्ष्यमाणप्रकारेण '**से**' **तस्य** प्रतिमाधरस्य **कल्पते** युज्यते आहारग्रहणकाले '**नायवीथि**'त्ति ज्ञातयः-स्वगोत्रजास्तेषां वीथी-गृहपङ्क्तिस्तत्र प्राप्तः । '**एत्थ ण**'मित्यत्रान्तरे **तस्य** '**पुव्वागमणेणं**'ति प्राकृतत्वात्पदव्यत्ययः, आगमनात्पूर्वकालं अथवा पूर्वं प्रतिमाधर आगतः पश्चाद्दायको राद्धुं प्रवृत्तः इति **पूर्वागमनेन** हेतुना **पूर्वायुक्तस्तन्दुलोदनः कल्पते**, उपलक्षणं चैतत्सर्वौदनानाम् । '**पच्छाउत्ते भिलिंगसूवे**'त्ति पश्चादायुक्तो **भिलिङ्गसूपो न कल्पते** । तत्र पूर्वायुक्तः प्रतिमाधरागमात् पूर्वमेव स्वार्थं गृहस्थैः पक्तुमारब्धः प्रतिमाधरे चागते यः पक्तुमारब्धः स पश्चादायुक्तः । स च न कल्पते उद्गमादिदोषसम्भवात् । पूर्वायुक्तस्तु कल्पते तदभावात् । भिलिङ्गसूपो-मसूरादिदालिः । शेषं कण्ठ्यम् ।

'**तस्स ण**'मिति **तस्य**, '**ण**'मिति वाक्यालङ्कारे, **गृहपतिकुलं पिण्डपानप्रतिज्ञया अनुप्रविष्टस्य** सतः **कल्पते** युज्यते **एवं वक्तुम्,** किं तद् ? इत्याह–'**समणोवासगस्से**'त्यादि । '**श्रमणोपासकस्य प्रतिमाप्रतिपन्नस्य**

---

1 '°माणे णं' इति मुद्रिते ।

2 '°वन्नए' इति मुद्रिते ।

**भिक्षां ददध्वम्**', न पुनर्यथा साधवो गत्वा धर्मलाभमिति वदन्ति तथा स वदति । एनां च प्रतिमां विना 'प्रतिमाप्रतिपन्नस्य भिक्षां ददध्व'मित्यपि न वदति । अतो वस्तुतः प्रतिमां विना न भिक्षामार्गणमुचितं सूत्ररीत्येति ।

'**तं चे**'त्यादि **तं** च श्रमणोपासकं प्रतिमाप्रतिपन्नं **एतद्रूपेण विहारेण विचरन्तं**, **दृष्ट्वा** कश्चिदनिर्दिष्टनामा **वदेत्** 'किमाचारप्रतिपन्न' **आयुष्म**न्नित्यामन्त्रणवचनम्, **त्व**मिति भवान्? **वक्तव्यः स्यात्** । तदा स वदति '**समणोवासए**' इत्यादि व्यक्तं निर्वचनवाक्यम् । अत्रापि पञ्चमप्रतिमाधिकारोक्तानि पदानि 'सम्मं काएण फासेति' इत्यादीनि द्रष्टव्यानि । शेषं पाठसिद्धम् ॥11॥ इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुत-स्कन्धटीकायामेकादशोपासकप्रतिमाख्यं षष्ठमध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ षष्ठमध्ययनं समाप्तम् ॥

# सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमाध्ययनम्

**[सू.68] सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमक्खातं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं बारस भिक्खुपडिमाओ पन्नत्ताओ ।**

**[सू.69] कतराओ खलु थेरेहिं भगवंतेहिं बारस भिक्खुपडिमाओ पन्नत्ताओ ?**

**[सू.70] इमाओ खलु थेरेहिं भगवंतेहिं बारस भिक्खुपडिमाओ पन्नत्ताओ । तं जधा [१] मासिया-भिक्खुपडिमा, [२] दोमासिया भिक्खुपडिमा, [३] तेमासिया भिक्खुपडिमा, [४] चउमासिया भिक्खुपडिमा, [५] पंचमासिया भिक्खुपडिमा, [६] छमासिया भिक्खुपडिमा, [७] सत्तमासिया भिक्खुपडिमा, [८] पढमा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, [९] दोच्चा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, [१०] तच्चा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, [११] अहोरातिन्दिया भिक्खुपडिमा, [१२] एगरातिंदिया भिक्खुपडिमा ।**

[ज.68-70] [1]व्याख्यातं षष्ठमध्ययनम् । साम्प्रतं सप्तममारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः – पूर्वाध्ययने उपासकाभिग्रहविशेषा उक्ताः, इह तु साधवोऽपि विशिष्टाभिग्रहसंयुता भवन्ति । तेऽपि अभिग्रहाः प्रतिमारूपास्ताश्च द्वादश इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्य व्याख्या –**'सुयं मे'** इत्यादि, व्याख्या प्राग्वत् ।

**'बारस भिक्खुपडिमाउ'**त्ति **द्वादश**सङ्ख्याः, उद्गमोत्पादनैषणादिशुद्धभिक्षाशिनो भिक्षवः- साधव-स्तेषां प्रतिमाः प्रतिज्ञा **भिक्षुप्रतिमा**स्ताश्चेमाः **तद्यथा**– [1] **मासिकी भिक्षुप्रतिमा** एवं [2-7] द्वित्रिचतुःपञ्चषट्सप्तमासिकी भिक्षुप्रतिमा, [8] **प्रथमा सप्तरात्रिन्दिवा** सप्ताहोरात्रमाना, [9] एवं **द्वितीया**, [10] **तृतीया**, एतासां चाष्टम्यादिसङ्ख्यात्वे प्रसिद्धे प्रथमत्वं तिसृणां सप्तदिवससङ्ख्यात्वेनोक्तं, तेन न पूर्वसङ्ख्याविरोधः,एवं दश, [11] एकादशी अहोरात्रप्रमाणा **अहोरात्रिकी,** [12] **एकरात्रिन्दिवा** एकरात्रिप्रमाणा, अत्र रात्रिन्दिवाशब्दादपि रात्रिरेव ग्राह्या अन्यथा एकरात्रिकी इत्यस्या(स्य) विरोधात्, पूर्वमहोरात्रिकी इत्यस्याभिधानात् ।

**[सू.71] मासियण्णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाए [2]पीअचियत्तदेहे जे केइ उवस्सग्गा उप्पज्जंति, तं जधा– दिव्वा वा माणुस्सा वा तिरिक्खजोणिया वा, ते उप्पण्णे सम्मं सहति खमति तितिक्खति अधियासेति ।**

[ज.71] इति सङ्क्षेपतो द्वादशभिक्षुप्रतिमाणां स्वरूपमभिधाय सम्प्रति प्रत्येकमाचारविधिमभिधित्सुराह –**'मासियण्ण'**मित्यादि । **मासिकीं भिक्षुप्रतिमां प्रतिपन्नस्य** भिक्षोरयमाचारो भवति इति शेषः । तद्यथा – **'निच्चं वोसट्ठकाए'**त्ति **नित्य**मनवरतं **व्युत्सृष्टकायः** परिकर्मवर्जनात्; प्रीतः - प्रीतिकारी त्यक्तोऽ-नेकपरीषहसहनाद्देहो येन स **त्यक्तप्रीतदेहः,** व्यत्ययः प्राकृतत्वात्; **ये केचन उपसर्गा उत्पद्यन्ते तद्यथा**

---

1 अत्र 'श्रीजगत्प्रभवे नमः' इति मङ्गलं B-LI-Kh-A1-A2-M2 ।

2 'पीअ°' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च तथापि टीकाकारेण व्याख्यातमिति कृत्वा पाठे न्यस्तम् ।

**दैव्या** देवकृताः, **मानुष्याः** मनुष्यकृताः, **तिर्यग्योनिका**स्तिर्यक्कृताः '**ते**' इति **तान्** परीषहान् **उत्पन्नान् सम्यग्** यथा भवति मुखाद्यविकारकरणेन **सहते** भयाभावेन, '**खमति**'त्ति **क्षमति** क्रोधाभावेन, **तितिक्षते** दैन्यानवलम्बनेन, **अध्यासयति** अचलकायतया ।

**[सू.72] मासियण्णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स कप्पति एगा[1] दत्ती भोयणस्स पडिगाहेत्तए एगा पाणगस्स अन्नाउंच्छं सुद्धोवहडं निज्जूहित्ता बहवे दुपयचउप्पयसमणमाहणअतिहिकिवणवणीमए कप्पति से एगस्स भुंजमाणस्स पडिग्गाहेत्तए, नो दोण्हं नो तिण्हं नो चउण्हं नो पंचण्हं, नो गुव्विणीए, नो बालवच्छाए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नो अंतो एलुयस्स दोवि पाए साहट्टु दलमाणीए, नो बाहिं एलुयस्स दोवि पाए साहट्टु दलमाणीए, एगं पादं अंतो किच्चा एगं पादं बाहिं किच्चा एलुयं विक्खंभयित्ता एवं दलयति एवं से कप्पति पडिग्गाहेत्तए, एवं से णो दलयति एवं नो कप्पति पडिग्गाहेत्तए ।**

[ज.72] '**अणगारस्स**'त्ति द्रव्यभावभेदभिन्नागारद्वयवर्जितस्य **कल्पते** युज्यते **एका दत्तिर्भोजनस्या**शनस्य प्रतिग्रहीतुं **एकै**व च **पानीयस्य** । दत्तिप्रमाणं चैवम् –

*हत्थेण व मत्तेण व भिक्खा होति समुज्जती ।*
*दत्ती उ जेत्तिया वारे खिवति होति तत्तिया ॥ [व्यव. भा. 3790]*

'**अन्नाउंछं**'ति **अज्ञातोञ्छं** परिचयाकरणेनाज्ञातः सन् उञ्छं द्रव्यतो गृहस्थगृहोद्धरितं भावतोऽन्यभिक्षुक-वत्तथाविधप्रतिपत्तिं विना दत्तं, न तु ज्ञातस्तद्बहुमतमिति । एतदपि **शुद्धं** उद्गमादिदोषरहितं, न तु तद्विपरीतम्, अथवा शुद्धं नामालेपकृत् । '**उवहडे**'त्ति अन्यस्य भोक्तुकामस्य कृते उपनीतमानीतं भिक्षाचरस्य वा कृते उपनीतं तेन च नेप्सितं दत्तशेषं वा । '**णिज्जूहित्ता**'इति **निर्वर्त्य बहून् द्विपदचतुःपद-श्रमणब्राह्मणकृपणवनीपकान्**, यथैतेषामन्तरायदोषो न भवति तथैते परिहर्तव्याः ; तत्र द्विपदा-मनुष्यपक्षिणः, चतुःपदा-गोमहिष्यादयः श्रमणाः-निर्ग्रन्थशाक्यतापसगैरिकाजीविका इति, ब्राह्मणा भोजनकालोपस्थायिनः, अतिथयस्त्वेवम् –

*तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे त्यक्ता येन महात्मना ।*
*अतिथिं तं विजानीयात् शेषमभ्यागतं विदुः ॥* इति,

कृपणा-दरिद्राः, वनीपका-बन्दिप्रायाः । '**एगस्से**'**ति एकस्य भुञानस्यो**पनीतं **प्रतिग्रहीतुं कल्पते, न द्वयोर्न त्रयाणां न चतुर्णां न पञ्चानाम्,** उपलक्षणं चैतद्बहूनाम्, मा तेषामप्रीतिर्भवेदिति । **नो गुर्विण्या** गर्भवत्याः, यतस्तस्या हस्तेन आहारग्रहणे गर्भस्य पीडा भवति ; जिनकल्पिकप्रतिमाप्रतिपन्नास्तु गर्भवतीं ज्ञात्वा परिहरन्ति, गच्छवासिनस्तु अष्टमनवममासयोः परिहरन्ति । **नो बालवत्साया** हस्ते आहारो ग्रहीतुं कल्पते । **नो दारकं** बालकं **पाययन्त्या**, क्षीरमिति गम्यम् । '**णो अंतो**'त्ति **नोऽन्त**र्मध्ये **एलुकस्यो**म्बर-कस्य[2] **द्वावपि पादौ संहृत्य ददत्याः**, एवं **बहिरेलुकस्य**, कथं तर्हि कल्पते ? इत्याह –'**एग**'मित्यादि।

1 'एगद°' इति मुद्रिते ।

2 अत्र 'देहल्याः' इति टिप्पणी M4 प्रतौ ।

**एकं पादमन्त**र्मध्ये **एकं** च **बहिरु**म्बरकस्य एलुं '**विक्खंभयित्ता**'त्ति **विष्कम्भ्य ददाति**, **एव**ममुनैव विधिना '**से**' **तस्य** साधोः **कल्पते प्रतिग्रहीतुम्**, **एवं** चेन्न **ददाति** तदा **न कल्पते** ।

**[सू.73] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स तओ गोयरस्स काला पन्नत्ता, तं जहा – आदि मज्झे चरिमे । आदि चरेज्जा णो मज्झे चरिज्जा णो चरिमे चरेज्जा, मज्झे चरिज्जा नो आदि चरेज्जा नो चरिमे चरेज्जा, चरिमे चरेज्जा नो आदि चरेज्जा नो मज्झे चरिज्जा ।**

[ज.73] '**मासियण्ण**'मित्यादि, **मासिकीं भिक्षुप्रतिमां प्रतिपन्नस्यानगारस्य त्रयस्त्रिसङ्ख्या** गोचरकालाः, गौरिव चरस्तस्य **कालाः–** प्रस्तावाः **प्रज्ञप्ताः**, **तद्यथा – आद्यः, मध्यः, चरमः** । तेषु एवमनन्तरोक्तविभागेन चरेत् यथा वत्सको रूपवत्याः स्त्रियो रूपादिषु अमूर्च्छितो विचरति किन्तु तदानीताहारादिष्वेव निविष्टचेता तथाऽयमपि भगवान् श्राद्धादिष्वमूर्च्छितः तृतीयपौरुष्यामटति । पूर्वमाद्यभङ्गकस्वरूपं यथा यत्र भिक्षावेलायां भिक्षाचरा नाऽऽयान्ति भिक्षार्थं, तत्र साधुः पूर्वमेव चरति भिक्षार्थम्, अयमाद्यः । द्वितीयस्तु यत्र भिक्षावेलातः पश्चादेवाऽऽयान्ति भिक्षुकाः पूर्वमप्यायान्ति, तत्र साधुना मध्यकाले गन्तव्यम्। यत्र च पूर्वकाले मध्यकाले च भिक्षवो यान्ति भिक्षायै, तत्र साधुना चरमकाले गन्तव्यम् । [1]⇒तथा चोक्तम् –

*पुव्वं वा चरती तेसिं नियट्टचारेसु वा अडति पच्छा ।*
*जत्थ दोण्णि भवे काला चरती तत्थ अतित्थिए ॥ [व्यव. भा. 3840]*

*अण्णारद्धेव अण्णेसु मज्झे चरति संजतो ।*
*गेण्हंत देंतयाणं तु वज्जयंतो अपत्तियं ॥ [व्यव.भा. 3841]*

*जति अण्णे भिक्खायरा मज्झे अडंति तो सो पुव्वं भिक्खं अडति अहवा संणियट्टेसु भिक्खायरेसु पच्छा अडति । जत्थ दो भिक्खवेलातो तत्थ पढमभिक्खवेले अतिक्कंते बितिए भिक्खवेले अप्पत्ते हिंडति,* ⇐ *एवं मज्झे [ दशा. चू.पृ.76] ।*

**[सू.74] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स छव्विधा गोयरचरिया पन्नत्ता, तं जधा – [1] पेला, [2]अद्धपेला, [3] गोमुत्तिया, [4] पयंगविधिया, [5] संबुक्कावट्टा, [6] गंतुं पच्चागता ।**

[ज.74] '**मासियण्ण**'मित्यादि व्यक्तम् । '**छव्विह**'त्ति **षड्विधा** षट्प्रकारा '**गोयरचरिय**'त्ति गोश्चरणं गोचरः, गोचर इव चर्या **गोचरचर्या प्रज्ञप्ता**, **तद्यथा**– [1] **पेटा**, [2] **अर्द्धपेटा**, [3] **गोमूत्रिका**, [4] **पतङ्गवीथिका**, [5] **शम्बूकावर्ता**, [6] **गंतुं प्रत्यागता** ।

[1] तत्र पेटा नाम पेटिका-करण्डिका, सा च प्रायश्चतुःकोणा भवति, तद्वद्या गृहपङ्क्तिः सा पेटेत्यभिधीयते ।

[2] अर्द्धपेटा – पेटाया एवार्द्धमर्द्धपेटा ।

[3] गोमूत्रिका नाम वक्रोलिका गृहपङ्क्तिः ।

---

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठो नास्ति K–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

[4] पतङ्गवीथिका नाम पतङ्गोड्डयनसदृशा, यथा पतङ्गः पुनरुड्डीय स्थानान्तरे तिष्ठति, एवं सोऽपि साधुर्गृहान्तरं मुक्त्वा भिक्षार्थं व्रजति ।

[5] शम्बूकावर्ता नाम शम्बूकः शङ्खस्तद्वदावर्तो यस्यां सा शम्बूकावर्ता । सा च द्विधा यतः⇒[1] सम्प्रदायः- *संबुक्का दुविहा – अब्भिंतरसंबुक्का बाहिरसंबुक्का य, तत्थ अब्भिंतरसंबुक्का णं संखनाभिखेत्तोवमाए आगिईए अंतो आढविति बाहिं नियट्टति, ईयरीए विवज्जओ[उत्त.30-19 वृत्तिः]*⇐ ।

[6] 'आययं गंतुं पच्चायति' तत्रायतं दीर्घं प्राञ्चलमित्यर्थः, तथा च सम्प्रदायः –*तत्थ उज्जुयं गंतूण नियट्टइ [उत्त.30-19 वृत्तिः]* इति ।

**[सू.75] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स जत्थ णं केति जाणति गामंसि[2] वा जाव मडंवंसि वा कप्पति से तत्थ एगरायं वसित्तए, जत्थ केइ न जाणति कप्पति से तत्थेगरातं वा दुरायं वा वत्थए, नो से कप्पति एगरायातो वा दुगरायातो वा परं वत्थए, जे तत्थ एगरायातो वा दुगरायातो वा परं[3] वसति से संतराछेदे वा परिहारे वा ।**

[ज.75] '**जत्थ णं केइ जाणई**'त्यादि, **यत्र** '**ण**'मिति वाक्यालङ्कारे, **कोऽपि** गृहस्थादिको **जानाति** प्रत्यभिजानाति यथाऽयं प्रतिमाप्रतिपन्नः, क्वेत्याह –'**गामंसि वा**' ग्रसति बुद्ध्यादीन् गुणानिति यदिवा गम्यः शास्त्रप्रसिद्धानामष्टादशानां कराणामिति तस्मिन् । **याव**त्करणात् नकरादिपदकदम्बक-⇒[4]परिग्रहः । नात्र करोऽष्टादशप्रकारोऽस्तीति नकरं, तस्मिन् । निगमः प्रभूततरवणिग्वर्गावासः, तस्मिन् । तथा पांशुप्राकारवेष्टितं खेटम्, क्षुल्लप्राकारवेष्टितं कर्बटं कुत्सितनगरं वा । पट्टनं पत्तनं वा, उभयत्रापि प्राकृतत्वेन निर्देशस्य समानत्वात्, तत्र यन्नौभिरेव गम्यं तत्पत्तनं यथा सिंहलः, यत्पुनः शकटैर्घोटकैर्नौभिर्वा गम्यं तत्पट्टनं यथा भरुकच्छम्, उक्तं च–

*पट्टनं शकटैर्गम्यं घोटकैर्नौभिरेव च ।*
*नौभिरेव तु यद्गम्यं पत्तनं तत्प्रचक्षते ॥*

द्रोणमुखं बाहुल्येन जलनिर्गमप्रवेशम् । आकरो हिरण्याकरादिः । आश्रमस्तापसावसथोपलक्षित आश्रयः । सम्बाधो यात्रागतप्रभूतजननिवेशः । राज्ञाऽनया धीयत इति राजधानी, राज्ञः पीठिकास्थानमित्यर्थः । अर्द्धतृतीयगव्यूतान्तर्ग्रामान्तररहितं मडम्बम् । तस्मिन्⇐इति सर्वत्र योज्यम् । '**तत्थ**'त्ति **तत्र** '**एगराइं**'ति **एकरात्रिं** रात्रिग्रहणात् दिवसमपि उषितुं, '**जत्थ**'त्ति **यत्र न कोऽपि** प्रत्यभिजानीते **तत्रैकरात्रिं वा द्विरात्रिं वा उषितुं**, ततः परं '**नो से**' **तस्य न कल्पते** शेषं व्यक्तम् । नवरं '**से संतराछेदे व**' त्ति कियत्कालान्तरे

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतस्य पाठस्य स्थाने K–M1–M3–M4–LD1–LD2 प्रतिषु अयं पाठः-'अब्भिंतरात् बाहिं बाह्यत अभिंतरं गच्छति' ।

2 'गामंसि वा जाव मडंवंसि वा' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु ।

3 'परिव°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः नास्ति K-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

पुनस्तत्रोषितुं कल्पते । '**परिहारे व**'त्ति यत्र स्थितास्तत्स्थानपरिहारे वा त्यागे तत्र कल्पते ।

**[सू.76] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति चत्तारि भासातो भासित्तए, तं जधा – [1] जायणी, [2] पुच्छणी, [3] अणुण्णवणी, [4] पुट्ठस्स वाकरणी ।**

[ज.76] '**चत्तारि भासाउ**'त्ति **चतस्रो भाषा भाषयितुं कल्पन्ते, तद्यथा** – [1] **याचनी** कस्यापि वस्तुविशेषस्य 'देही'ति मार्गणम्, [2] **पृच्छनी** अविज्ञातस्य सन्दिग्धस्य कस्यचिदर्थस्य परिज्ञानाय तद्विदः पार्श्वे, [3] **अनुज्ञापनी** उच्चारपरिष्ठापनतृणडगलभस्मप्रभृतीनाम्, [4] **पृष्टस्य व्याकरी** यथा 'कस्त्वम् ? कौतस्कुत्यः ? किमर्थमागतः ? प्रतिमाप्रतिपन्नोऽन्यो वा ?'इत्यादिपृष्टस्य व्याकरणी प्रत्युत्तरप्रदानरूपा ।

**[सू.77] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो उवस्सया पडिलेहित्तए, तं जधा – अधे आरामगिहंसि वा,अधे वियडगिहंसि वा, अधे रुक्खमूलगिहंसि वा । मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो उवस्सया अणुण्णवेत्तए, तं जधा – अधे आरामगिहं, अधे वियडगिहं, अधे रुक्खमूलगिहं। मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो उवस्सया [1] उवलियत्तए – तं चेव ।**

[ज.77] '**उवस्सया**'इति **उपाश्रया** वसतय इत्यर्थः, **प्रतिलेखयितुम्** । आरामस्याध इति अधआरामम्, अधआरामं च तद्गृहं चेति कर्मधारयः, तस्मिन् । तथा एवं विकटगृहम्, विकटगृहं नाम ग्रामाद्बहिर्वृक्षानामासन्नम् । वृक्षमूले इति वृक्षनिकटतरप्रदेशे इति । '**अणुण्णवित्तए**'इति **अनुज्ञापयितुं** प्रतिलेखनानन्तरमनुज्ञां मार्गयितुम् । '**उवलियति**'त्ति **उपग्रहीतुं** स्थायित्वेनाङ्गीकर्तुमिति ।

**[सू.78] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो संथारगा पडिलेहेत्तए, तं जधा – पुढविसिलं वा कट्ठसिलं वा अधासंथडमेव । मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो संथारगा अणुण्णवित्तए तं चेव । मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स कप्पंति ततो संथारगा उवलियत्तए तं चेव ।**

[ज.78] संस्तारकः प्राग्व्याख्यातस्वरूपः **पृथिवीशिलारूपं काष्ठशिलेति** बृहत्तरकाष्ठपिण्डरूपां **यथासंस्कृतं** चतुष्किकादि । एतदूर्ध्वं शेषं प्राग्वत् ।

**[सू.79] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स इत्थी[2] उवस्सयं हव्वं[3] उवागच्छेज्जा से इत्थिए वा पुरिसे वा, णो से कप्पति तं पडुच्च निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.79] '**इत्थि**'त्ति **स्त्री वा पुरुषो वा** परिचारणार्थं कृत्यान्तरं चोद्दिश्योपाश्रयं प्रति '**हव्वं**'ति शीघ्रमुपागच्छेत् । '**तं पडुच्च**'त्ति **तं** स्त्रीयुगलं **प्रतीत्य** आश्रित्य **नैव कल्पते** निःक्रमितुं वसतेर्बहिः **प्रवेष्टुं** बहिर्भूतप्रदेशादन्तरिति ।[4]

---

1 'उवाइणावित्तए' इति सर्वासु प्रतिषु, टीकाकारेण 'उवलियत्तए' इति पाठः चूर्णितः स्वीकृत इति भाति ।

2 'वा पुरिसे' इति मुद्रिते ।

3 'हव्वं' इति नास्ति मुद्रिते ।

4 चूर्णिकृता इदं सूत्रमित्थं व्याख्यातम् - तां केवलां स्त्रीं स्त्रीयुगलं वा प्रतीत्य न कल्पते निष्क्रमितुं प्रवेष्टुं वा । एवं व्याख्याने कृते सूत्रे इत्थिपदस्य द्विरावृत्तिः सार्थका भवेत् ।

**[सू.80] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स केइ उवस्सयं अगणिकाएण झामेज्जा, णो से कप्पति तं पडुच्च निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.80] '**केइ**'त्ति **कोऽपि उपाश्रयमग्निकायेनाग्निना ध्मायेत** तथापि '**नो से कप्पइ**'त्ति व्यक्तम् । इति स्थानविधिरुक्तः ।

**[सू.81] तत्थ णं केइ[1] वहाए गहाय आगासेज्जा, नो कप्पति तं अवलंबित्तए वा पच्चवलंबित्तए वा, कप्पति से आहारियं रियित्तए ।**

[ज.81] साम्प्रतं गमनविधिमाह– '**तत्थ णं**'ति **तत्र** मार्गे वसत्यादौ ता कश्चिद्वधार्थं **वधनिमित्तं** '**गहाय**'त्ति **गृहीत्वा** खड्गादिकमिति शेषः, **आगच्छेत्**, '**णो अवलंबित्तए वा**' **अवलम्बयितुं** आकर्षयितुं **प्रत्यवलम्बयितुं** पुनः पुनरवलम्बयितुं, **यथेर्यं** ईर्यामनतिक्रम्य गच्छेत्, एतावता छिद्यमानोऽपि नातिशीघ्रं यायादिति ।

**[सू.82] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स पायंसि खाणुं वा कंटए वा हीरए वा सक्करए वा अणुपविसेज्जा, नो से कप्पति नीहरित्तए वा विसोहेत्तए वा, कप्पते से अहारियं रीइत्तए ।**

[ज.82] '**पादंसि**'त्ति **पादे** उपलक्षणत्वादुपधिहस्तादौ वा स्थाणुर्वा, **स्थाणु**र्नाम ठुंठ उच्यते, **कण्टकः** प्रतीतः, **हीरको** नाम सकोणः कर्करिकाविशेषः कर्करा वा, **अनुप्रविशेयुः** । '**नीहरित्तए**'त्ति **निष्कासयितुं**, **विशोधयितुं** शेषावयवाद्यपनेतुं, शेषं प्राग्वत् ।

**[सू.83] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अच्छिंसि वा पाणाणि वा बीयाणि वा रये वा परियावज्जेज्जा, नो से कप्पति नीहरित्तए वा विसोहित्तए वा, कप्पति से आहारियं रिइत्तए ।**

[ज.83] '**अच्छिंसि व**'त्ति **अक्ष्णो**र्नेत्रयोः । '**पाणाणि व**'त्ति **प्राणा** लघुतरका मशकादयः, नपुंसकत्वं प्राकृतत्वात् । **बीजानि** तिलादीनि । **रजः** सूक्ष्मं धूलीरूपम् । '**परियावज्जेज्ज**'त्ति **पर्यापतेत्** लगेत् । तथापीत्यध्याहार्यम् । '**नो से**'त्ति प्राग्वत् । '**नीहरित्तए**'त्ति निःकासयितुमुद्धर्तुं **विशोधयितुं** जलादिधावनेनाऽपनेतुम्, शेषं प्राग्वत् ।

**[सू.84] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स जत्थेव सूरिये अत्थमेज्जा तत्थेव जलंसि वा थलंसि वा दुग्गंसि वा निण्णंसि वा[2] विसमंसि वा पव्वतंसि वा गड्डाए वा दरीए वा कप्पइ से तं रयणीं तत्थेव उवायणावित्तए, नो से कप्पइ पदमवि गमित्तए, कप्पति से कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव [3]उत्थिए सहस्सरस्सिंमि दिणयरे तपसा जलंते पाईणाभिमुहस्स वा पईणाभिमुहस्स वा दाहिणाभिमुहस्स वा उत्तराभिमुहस्स वा अहारियं रीइत्तए ।**

---

1 '°इ बाधाए' इति A1-A2-K–M1-M2-M3-M4-LD1-LD2 ।

2 'वा पव्वतंसि वा विसमंसि' इति मुद्रिते ।

3 'उत्थिए सहस्सरस्सिंमि दिणयरे तेयसा' इति नास्ति मुद्रिते ।

[ज.84] '**जत्थेव सूरिए**'त्ति **यत्रैव**, एवकारोऽवधारणे, नान्यत्रेत्यर्थः वसतिप्रदेशे अरण्यादौ वा **सूर्योऽस्तमेति** अस्तं प्राप्नोति, '**तत्थेव**'त्ति **तत्रैव** वसेत्, क्व ? इत्याह –'**जलंसि वा**' इत्यादि, **जले** जलविषये । ननु जले एव कथमस्तसमये ते यान्ति, उपयोगवत्त्वात्तेषाम् ? उच्यते, अत्र जलशब्देन नद्यादिजलं न गृह्यते किन्तु यत्र तृतीयो यामो दिवसस्य सम्पूर्णो भवति तत्र तेषां जलमेवोच्यते इति समयरीतिः, विशिष्टाभिग्रहत्वात्तेषाम् । स्थविरकल्पिकानां तु न तथेति । अत्रावकाशिकं स्थलं जलमेव भवति, यत्रावश्यायः पतति । तथा चोक्तं श्रीपञ्चमाङ्गे–*अत्थि णं भंते ! सदा समितं सुहुमे सिणेहकाए पवडति ? हंता अत्थि । से भंते ! किं उड्ढे पवडति अहे पवडति तिरिए पवडति ? गो.! उड्ढे वि पवडति अहे वि पवडति तिरिए वि पवडति । जहा से बादरे आउआए अण्णमण्णसमाउत्ते चिरंपि दीहकालं चिट्ठइ, तहा णं से वि? णो तिणट्ठे समट्ठे, से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ [व्या. प्र. 1-6-228तः 230]* । सूक्ष्मस्नेहकाय इति अप्कायविशेषः । तत्रापि काले स्निग्धेतरभावमपेक्ष्य बहुत्वमल्पत्वं चावसेयम्, यदाह –

*पढमचरिमा उ सिसिरे गिम्हे अद्धं तु तासि वज्जेत्ता ।*
*पायं वावि सिणेहाइ रक्खणट्ठा पवेसे वा ॥ [ बृ.भा.521]*

लेपितपात्रमपि न बहिः स्थापयेत् स्नेहादिरक्षणायेति । अत उक्तं 'जलंसि' न तु नद्यादिपानीये । **वा**शब्दा अपरापरभेदसङ्ग्रहार्थाः । '**थलंसि**'त्ति स्थलं नाम अटवी, तत्र । '**दुग्गंसि**'त्ति दुर्गशब्देन गहनम्, निम्नं-गर्तादिकम्, विषमं-निम्नोन्नतम्, पर्वतः प्रसिद्धः, पर्वतदुर्गः-पर्वतनिकटगहनं नितम्बा वा, गर्ता-खड्डा, दरी-गुहा पर्वतकन्दरेतियावत् ।

तत्र **कल्पते तां रजनीं** '**उवायणावित्तए**'त्ति **तत्रैवातिक्रमितुं**, परं '**नो**' नैव '**से**' **तस्य** प्रतिमावतः साधोः **कल्पते पदमपि गन्तुम्**, तत अग्रे इत्यध्याहारः, अपिग्रहणात् अर्द्धपदमपि । '**कप्पति से**' इति **तस्य** '**कल्लं पाउप्पभायाए**' त्ति स्वाप्रादुः प्राकाश्ये, ततः प्रकाशप्रभातायां **रजन्याम्** । **याव**त्करणात् *फुल्लुप्पलकमलकोमले[अनु.सू. 20]*त्यादि पदकदम्बकसङ्ग्रहोऽत्र द्रष्टव्यः । तत्र फुल्लोत्पलकमलकोमलो-न्मीलिते– फुल्लं विकसितं, तच्च तदुत्पलं च फुल्लोत्पलं, तच्च कमलश्च हरिणविशेषः फुल्लोत्पलकमलौ, तयोः कोमलमकठोरमुन्मीलितं दलानां नयनयोश्चोन्मीलनं यस्मिंस्तत्तथा तस्मिन् । अथेति रजनीविभातानन्तरं पाण्डुरे प्रभाते । रक्ताशोकप्रकाशेन किंशुकस्य शुकमुखस्य गुञ्जार्धस्य रागेण सदृशो यः स तथा तस्मिन् । तथा कमलाकरा-ह्रदादयस्तेषु खण्डानि-नलिनीखण्डानि तेषां बोधको यः स कमलाकरखण्ड-बोधकः, तस्मिन् । **उत्थिते** अभ्युद्गते, कस्मिन् ? इत्याह–**सूरे**, पुनः कथम्भूते? इत्याह –'**सहस्सरस्सिंमि दिणयरे' सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति** देदीप्यमाने । '**पाइणे**'त्यादि प्राची नाम पूर्वा तदभिमुखस्य, प्रतीची नाम पश्चिमा तदभिमुखस्य, दक्षिणोत्तरे व्यक्ते ।

**[सू.85] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स णो से कप्पति अणंरिताए पुढवीए निद्दाइत्तए वा पयलाइत्तए वा, केवली बूया आदाणमेयं, से तत्थ निद्दायमाणे वा पयलायमाणे वा हत्थेहिं भूमिं परामुसेज्जा,**

**अधाविधिमेव ट्ठाणं ठाइत्तए निक्खमित्तए वा, उच्चारपासवणेणं उब्बाहिज्जा नो से कप्पइ उगिण्हित्तए वा । कप्पति से पुव्वपडिलेहिए थंडिले उच्चारपासवणं परिट्ठवित्तए तमेव उवस्सयं आगम्म अहाविहिं ठाणं ठावित्तए ।**

[ज.85] '**अणंतरिताए**' त्ति तिरोऽन्तर्द्धाने, न अन्तरितायां **अनन्तरितायां पृथिव्यां** सच्चित्तायामित्यर्थः । **निद्रायितुं** शयनं कर्तुम्, **प्रचलायितुं** प्रचला-निद्रा तां कर्तुं उल्लङ्घयितुं वा । यतः **केवली ब्रूयात्** केवल्येव तान् दोषान् ज्ञातुं वक्तुं वा समर्थः । **आदानं** दोषाणाम्, अथवा कर्मबन्धहेतुत्वादादानमेतत्कर्मो-पादान**मेतदि**ति । कथं कर्मोपादानमिति दर्शयति -**स** प्रतिमाधारकः साधु**स्तत्र** निद्रां कुर्वाणः **प्रचलायमानो वा हस्ताभ्यां भूमिं परामृषेत्** । तर्हि किं कुर्यादित्याह – '**अहाविधि**'मिति **यथाविधिमेव स्थानं स्थातुं** विधिमनतिक्रम्य यथाविधि **निःक्रमितुं**, **उच्चारप्रश्रवणाभ्यामुद्बाध्यते** कदाचित्तदा [नो] '**से**' **तस्य** यत्र तत्रा**वग्रहीतुं** परिष्ठापयितुं च प्रश्रवणादिकं किन्तु **कल्पते** '**से**' **तस्य** पूर्वानुज्ञाते **पूर्वप्रतिलेखिते स्थण्डिले उच्चारं प्रश्रवणं** वा तत्र परिष्ठापयितुम् ।

**[सू.86] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स नो कप्पति ससरक्खेणं काएणं गाहावतिकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा । अह पुणेवं जाणिज्जा ससरक्खे सेअत्ताए वा जल्लताए वा मल्लत्ताए वा पंकताए वा विद्धत्थे से कप्पति गाहावतिकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.86] रजः **स्वेदतया जल्लतया पङ्कतया** '**विद्धत्थो**'[1] इति **विध्वस्तो** विनाशं प्राप्तोऽतिपरिणतोऽचित्तीजात इतियावत्, तदा '**से**' **तस्य कल्पते गृहपतिकुलं भक्ताय वा पानाय वा निःक्रमितुं प्रवेष्टु**[2]मिति । तत्र स्वेदो नाम प्रस्वेदः, जल्लो नाम मलः कठिनीभूतः, मलो हस्तादिघर्षितः, स एव मलो यदा स्वेदेनाऽऽर्द्रो भवति तदा पङ्क इत्युच्यते इति ।

**[सू.87] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स नो कप्पति सीओदयवियडेणं वा उसिणोदयवियडेणं वा हत्थाणि वा पादाणि वा दंताणि वा अच्छीणि वा मुहं वा उच्छोलित्तए वा पधोइत्तए वा णण्णत्थ लेवालेवेण वा भत्तामासेण वा ।**

[ज.87] '**सीओदगविअडेणं**'ति शीतं च तदुदकं च शीतोदकं, तदेव विकटं विगतजीवम् । एवमुष्णोदकविकटम् । **वा**शब्दो विकल्पसूचकः । '**हत्थाणि व**'त्ति **हस्तौ वा**, बहुत्वं नपुंसकत्वं च प्राकृतत्वात् । एवं **पादौ दन्ताः अक्षिणी मुखं वा** '**उच्छोलित्तए**'त्ति उत्सोलनया अयतनया धावयितुं, प्रकर्षेण यतनयापि धावयितुं **प्रधावयितुं । नान्यत्र** वक्ष्यमाणादन्यत्रेत्यर्थः, '**लेवालेवेण वा**' लेपस्य उदकेन पात्रादिधावनरूपस्य, आ-समन्तात् लेपेन आर्द्रतालक्षणेन शरीरे वाऽशुच्यादिलेपेन अथवा

1 क्वचित् 'परिणते' इति पाठस्तत्रापि स एवार्थः इति K–Kh प्रतौ टीप्पणी ।

2 '°वेशयितुमि°' इति A1–A2–M2 ।

शकुनकादिना मुखेनापानेन वा हस्तादिस्पर्शे कृते हस्तादि धाव्यते । एतस्मादन्यत्र तथाविधकारणमन्तरा न धावयेत्पादादिकम् ।

**[सू.88] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स नो कप्पति आसस्स वा हत्थिस्स वा गोणस्स वा महिसस्स वा[1] कोलसुणगस्स वा दुट्ठस्स वा आवडमाणस्स पदमवि पच्चोसक्कित्तए । अदुट्ठस्स आवडमाणस्स कप्पति जुगमित्तं पच्चोसक्कित्तए ।**

[ज.88] '**आसस्से**'त्यादि सुबोधम् । **दुष्टस्याऽऽपतत** आगच्छतो वधाद्यर्थं न कल्पते **पदमपि प्रत्यवसर्पितुम्**। अपिग्रहणादर्द्धपदमपीति । **अदुष्टस्याश्वादेः** स्वभावत एवाऽऽगच्छतः **कल्पते युगमात्रं प्रत्यवसर्पितुम्** । 'माऽयमुन्मार्गे गत्य(त्वा) हरितादिमर्दनं करिष्यती'ति कृत्वा स्वयमेव प्रत्यवसर्पते ।

**[सू.89] मासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स णो कप्पति छायातो सीयंति नो उण्हं इत्तए, उण्हातो उन्हंति नो छायं एत्तए, जं जत्थ जया सिया तं तत्थ अधियासए ।**

[ज.89] '**छायातो**'त्ति **छायातः** शीतकाले **शीतमिति** कृत्वा उष्णे सातपे स्थाने **एतुं** आगन्तुम् । एवमुष्णकाले उष्णमिति कृत्वा शीतमिति । यद्येवं न करोति तदा किं कुर्याद्? इत्याह –'**जं जत्थे**'त्यादि। **यद्यत्र यदा स्यात् तत्** शीतादिकं **तत्र** तस्मिन्नेव स्थाने तदा तस्मिन्नेव शीताद्यवसरे **अध्यासयेत्** ।

**[सू.90] एवं खलु एसा मासिया भिक्खुपडिमा अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं जहासम्मं काएणं फासिया पालिया सोहिया तीरिया पूरिया[2] किट्टिया आराधिता आणाए अणुपालिया भवति ॥१॥**

[ज.90] '**एव**'मित्यादि **एव**मनन्तरोक्तप्रकारेण, **खलु**रवधारणे, '**एसा**' **एषा**नन्तरोक्ता **मासिकी भिक्षुप्रतिमा** '**अहासुत्तं**'त्ति सामान्यसूत्रानतिक्रमेण '**अहाकप्पं**'ति प्रतिमाकल्पानतिक्रमेण तत्कल्पव-स्त्वनतिक्रमेण वा '**अहामग्गं**'ति ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षायोपशमिकभावानतिक्रमेण वा, '**अहातच्चं**'ति **यथातत्त्वं** तत्त्वानतिक्रमेण 'मासिकी भिक्षुप्रतिमे'ति शब्दार्थानतिलङ्घनेनेत्यर्थः '**जहा-सम्मं**'त्ति **यथासाम्यं** समभावानतिक्रमेण, '**काएणं फासिय**'त्ति **कायेन** शरीरेण, न पुनर्मनोरथमात्रेण **स्पृष्टा** उचितकाले विधिना ग्रहणात्, '**पालिय**'त्ति **पालिता** असकृदुपयोगेन प्रतिजागरणात्, '**सोहिया**' इति पारणकदिने गुर्वादिदत्तशेषभोजनकरणात्, **शोधिता** वा अतिचारपङ्कक्षालनात्, '**तीरित्ता**' इति **तीरिता** पूर्णेऽपि तदवधौ स्तोककालावस्थानात्, '**पूरिय**'त्ति सम्पूर्णेऽपि तदवधौ तत्कृत्यपरिमाणपूरणात्, '**किट्टिय**'त्ति **कीर्तिता** पारणकदिने 'इदं चेदं चैतस्याः कृत्यं तच्च मया कृत'मित्येवं कीर्तनात्, '**अणुपालिया**' इति तत्समाप्तौ तदनुमोदनात्, किमुक्तं भवति ? इत्याह–**आज्ञया आराधिता** आज्ञया **अनुपालिता भवति** । इत्युक्तं प्रथमप्रतिमास्वरूपम् ॥1॥

**[सू.91] दोमासियं णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स निच्चं वोसट्ठकाअं चेव जाव दो दत्ती, तेमासियं**

---

1 'वग्घस्स वा वगस्स वा दीवियस्स वा अच्छस्स वा तरच्छस्स वा परासरस्स वा सीयालस्स वा विरालस्स वा केकित्तियस्स वा ससगस्स वा चिक्खलस्स वा सुणगस्स वा' इति अधिकः पाठोऽत्र मुद्रिते किन्तु नास्ति सर्वासु प्रतिषु ।

2 'पूरिया इति' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**तिन्नि दत्तीओ, चाउमासियं चत्तारि दत्तीओ, पंचमासियं पंचदत्तीओ, छमासियं छदत्तीओ, सत्तमासियं सत्तदत्तीओ, जति मासिया तत्तिया दत्तीओ ॥२-७॥**

[ज.91] साम्प्रतं क्रमप्राप्तं द्वितीयादिप्रतिमास्वरूपमुच्यते –'**दोमासिय**'मित्यादि । शेषं प्राग्वत् । नवरं **द्वे दत्ती** भोजनस्य द्वे पानकस्य । एवमेकैकदत्तिवृद्ध्या यावत्सप्तमासिकी सप्तभोजनपानरूपा प्रत्येकम् ॥2-7॥

**[सू.92] पढमा सत्तरातिंदियाणि भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाये जाव अहियासेति । कप्पति से चउत्थभत्तेणं अप्पाणएणं बहिता गामस्स वा जाव उत्ताणियस्स[1] वा पासेलियस्स वा नेसज्जियस्स वा ठाणं ठाइत्तए । [2]तत्थ से दिव्व-माणुस-तिरिक्ख-जोणिया उवस्सग्गा समुप्पज्जेज्जा । ते णं उवस्सग्गा पयलेज्ज वा पवडिज्ज वा, नो से कप्पति पयलित्तए वा पवडित्तए वा । तत्थ से उच्चारपासवणं उब्बाहेज्जा, नो से कप्पति उच्चारपासवणं ओगिण्हित्तए वा, कप्पति से पुव्वपडि-लेहियंसि थंडिलंसि उच्चारपासवणं परिठवित्तए अहाविधिमेव ट्ठाणं ठाइत्तए, एवं खलु एसा पढमा सत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा अहासुयं जाव आणाए अणुपालित्ता भवति ॥८॥**

[ज.92] '**पढमा सत्तराइंदिय**'त्ति **प्रथमा** सप्त रात्रिन्दिवानि-अहोरात्राणि यस्यां सा **सप्तरात्रिन्दिवा** । शेषं पूर्ववत् । '**से चउत्थभत्तेण**'मित्यादि **चतुर्थभक्तेनापानकेन** पानीयपरिवर्जितेन । **बहिर्ग्रामस्ये**त्यादि **यावत्**करणान्नगरादिपदकदम्बकपरिग्रहः । '**उत्ताणियस्स**'त्ति **उत्तानिकस्यो**त्तानशायिनः '**पासेलियस्स**'त्ति पार्श्वशायिनः '**णेसज्जियस्स**'त्ति चेष्टाविकलस्य **स्थानं स्थातुम्** । '**तत्थे**'त्यादि प्राग्वत् । '**ते णं**'ति **ते ण**मित्यत्र वाक्यालङ्कारे '**पयालेज्ज**'त्ति **प्रचालेयुः** स्थानात्**प्रपातेयु**रधःपातनेन । '**एवं**'पूर्ववत् यावदाराधिता भवति ॥8॥

**[सू.93] एवं दोच्चा सत्तरातिंदियावि नवरं दंडातियस्स वा लगंडसाइस्स वा उक्कुडुयस्स वा ट्ठाणं ठाइत्तए सेसं तं चेव जाव अणुपालित्ता भवति ॥९॥**

[ज.93] **एवं द्वितीया सप्तरात्रिन्दिवा, नवरं** षष्ठेन तपसाऽपानकेन **दण्डायतिकस्य लगण्डशायिनः उत्कुटुकस्य** संस्थातुम् । शेषं तथैव ॥9॥

**[सू.94] एवं तच्चा सत्तरातिंदिया भवति । नवरं गोदोहियाए वा वीरासणियस्स वा अंबखुज्जस्स वा ठाणं ठाइत्तए सेसं तं चेव जाव अणुपालित्ता भवति ॥१०॥**

[ज.94] '**एव**'मित्यादि **एवं तृतीया**पि, नवरमष्टमेन तपसाऽपानकेन **गोदुहिका**सनिकस्य **वीरासनिकस्य आम्रकुब्जस्य स्थानं स्थातुम्** ॥10॥

**[सू.95] एवं अहोरातियावि, नवरं छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं बहिता गामस्स वा जाव रायहाणिस्स**

---

1 '°त्ताणगस्स वा पासेल्लगस्स' इति K-MI-M3-M4-LD1- LD2 ।

2 'तत्थ से°' इत्यस्मात् 'जाव' इति पर्यन्तं नास्ति A1-A2-M2 ।

**वा इसिं**[1] **दोवि पाए साहट्टु वग्घारिय-पाणिस्स ट्ठाणं ठाइत्तए । सेसं तं चेव जाव अणुपालित्ता यावि भवति ॥११॥**

[ज.95] **एवमहोरात्रिन्दिवाऽपि** भवति, **नवरं षष्ठेन भक्तेनापानकेन** '**ईसि**'मिति **ईषद् द्वावपि पादौ** '**साहट्टु**'त्ति **संहृत्य** संहृतौ कृत्वा जिनमुद्रयेत्यर्थः '**वग्घारियपाणिस्स**'त्ति प्रलम्बितभुजस्य **स्थानं** कायोत्सर्गलक्षणं स्थातुम् ॥11॥

**[सू.96] एगराइयण्णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाएणं जाव अधियासेति । कप्पति से अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं बहिया गामस्स वा जाव ईसिं पब्भारगतेणं काएणं एगपोग्गलठियाए दिट्ठीए अणिमिसनयणे अधापणिहितेहिं गत्तेहिं सव्विंदिएहिं गुत्ते दोवि पाए साहट्टु वग्घारियपाणिस्स ठाणं ठाइत्ताए । तत्थ से दिव्वमाणुस्सतिरच्छजोणिया जाव अहाविधिमेव ठाणं ठाइत्तए ॥१२॥**[2]

[ज.96] '**एगराइयं**'ति **एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमा**मित्यादि शेषं कण्ठ्यम् । '**एगपोग्गले**'त्यादि एक एव पुद्गल एकपुद्गलस्तत्र स्थिता दृष्टिर्यस्यासावेकपुद्गलदृष्टिस्त**स्यैकपुद्गलस्थितदृष्टेः** '**ईसिं**' **पब्भारगएणं काएणं**'ति ईषत्प्राग्भारः अग्रतो मुखावनतत्वम्, '**अहापणिहितेहिं गाएहिं**'ति **यथाप्रणिहितै**र्यथास्थितै**र्गात्रैः सर्वेन्द्रियैर्गुप्तः**, शेषं कण्ठ्यम् ।

**[सू.97] एगराइयण्णं भिक्खुपडिमं अणणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमे तओ ठाणा अहिताए असुहाए अखमाए अणिस्सेस्साए अणाणुगामियत्ताए भवंति, तं जधा – उम्मायं वा लभेज्जा, दीहकालियं वा रोयातंकं पाउणेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा ।**

[ज.97] '**अणणुपालेमाणस्स**'त्ति **अननुपालयतः अनगारस्या**गाररहितस्य **इमानि त्रीणि स्थानानि**, पुंस्त्वं प्राकृतत्वात् । '**अहियाए**'त्ति **अहिताय**, भावप्रधानोऽयं निर्देशः, अहितत्वाय परिणामासुन्दरतायै । **असुखाया**शर्मणे । **अक्षमाय**, भावप्रधानो निर्देशः, असङ्गतत्वाय । **अनिश्रेयसाय** अनिश्चितकल्याणाय। **अनानुगामिकतायै** परम्पराऽशुभानुबन्धाय **भवन्ति**, तद्यथा – **उन्मादं वा** प्राप्नुयात् आहारविषयाद्यभिलाषाति-रेकतस्तथाविधचित्तविप्लवसम्भवात् । वाशब्दा अपरापरभेदसूचकाः '**दीहकालियं**'ति **दीर्घकालिकं** वा प्रभूतकालभावि रोगश्च-दाहज्वरादिरातङ्कश्चा-ऽऽशुघातिशूलादी **रोगातङ्कं** भवेत्स्यात्, सम्भवति हि अतिबाधया अशनादिरूपया आहारविषयाद्यभिलाषातिरेकतोऽरोचकित्वं ततश्च ज्वरादीति । **केवलिप्रज्ञप्ताद्वा धर्मात्** श्रुतचारित्ररूपात्समस्ताद् **भ्रश्येद**धः प्रतिपतेत्, कस्यचिदतिक्लिष्टकर्मोदयात्सर्वथा धर्मपरित्यागसम्भवादिति ।

**[सू.98] एगराइयण्णं भिक्खुपडिमं सम्मं अणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमे तओ ठाणा हिताए जाव**

---

1 '°सिं पब्भारगतेणं काएणं एगपोग्गलगताए दिट्ठीए अणिमिसनयणे अधापणिहितेहिं गत्तेहिं सव्विंदियेहिं गुत्ते दोवि पाए साहट्टु वग्घारियपाणिस्स ट्ठाणं ठाइत्तए । तत्थ से दिव्वमाणुसतिरिच्छजोणिया जाव अधाविधिमेव ठाणं ठाइत्तए ॥11॥' इति मुद्रिते ।

2 एतत्सूत्रं नास्ति मुद्रिते ।

**आणुगामियत्ताए भवंति, तं जधा – ओधिनाणे वा से समुप्पज्जेज्जा, मणपज्जवनाणे वा से समुप्पज्जेज्जा, केवलनाणे वा से असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा ।**

**[सू.99] एवं खलु एसा एगरातिया भिक्खुपडिमा अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएणं फासित्ता पालित्ता सोहेत्ता तीरेत्ता किट्टेत्ता आराहिया आणाए अणुपालेत्ता यावि भवति ॥१२॥ एताओ खलु तातो थेरेहिं भगवंतेहिं बारस भिक्खुपडिमातो पन्नत्तातो त्ति बेमि । सत्तमा दसा सम्मत्ता ॥**

[ज.98-99] **एवं त्रीणि स्थानानि, हितायेत्यादिपदव्याख्या** प्राग्वत् । **अवधिज्ञानं वा 'से' तस्य समुत्पद्येत**, एवं मनःपर्यायकेवलेऽपि । शेषं व्यक्तम् । इति ब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां द्वादशभिक्षुप्रतिमाख्यं सप्तममध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ सप्तममध्ययनं समाप्तम् ॥

# अष्टमदशा पर्युषणाकल्पाध्ययनम्

**[सू.100] [1]ते णं काले णं ते णं [2]समए णं समणे भगवं महावीरे पंचहत्थुत्तरे होत्था । तं जहा – हत्थुत्तराहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते १ हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए २ हत्थुत्तराहिं जाए ३ हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वईए ४ हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ५ साइणा परिनिव्वुए भयवं ६ ॥**

[ज.100]

स्तुमः श्रीवीरनाथस्य वाणीवैभवमद्भुतम् ।
तमस्तोमच्छिदे भाति भानूपममहर्निशम् ॥

यद्यपीदं महाविज्ञैर्व्याख्यातं पूर्वसूरिभिः ।
क्रमायातं तथाप्येतदुच्यते लेशतो मया ॥

व्याख्यातं सप्तममध्ययनम् । साम्प्रतमष्टममारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः - इहानन्तराध्ययने द्वादश यतिप्रतिमा उक्ताः । ताश्चाप्रतिबद्धविहारिणां भवन्ति । सोऽपि मासाष्टकं यावत् भवति । पर्युषणाकल्पश्चैकत्रैव कार्यस्तैरपि । अतोऽत्र मुख्यतः स एवाभिधास्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातमष्टम-मध्ययनं व्याख्यायते ।

अथ पर्युषणाकल्पेति कः शब्दार्थ ? उच्यते, उष निवासे इत्यागमिको धातुः, परि- सामस्त्येन उषणा-निवासः पर्युषणा, तत्र कल्प-आचारोऽवस्थानगमनतपःप्रभृतिकः इति पर्युषणाकल्पः । अत्र केषुचिदादर्शेषु इदमध्ययनं सङ्क्षेपेणैव लिखितमस्ति केषुचिद्विस्तरतः, तदपि कल्पसूत्रस्य पृथक्पुस्तकापेक्षया सङ्क्षिप्तमेव दृश्यते, विस्तरस्यापि श्रीभद्रबाहुस्वामिभिरेव प्रतिपादनात् स्वतन्त्रत्वाद् ग्रन्थकर्तुः क्वचिद्व्यासः क्वचित्तस्य न्यासः । ततो नात्र विरोधार्थः प्रचारः उद्भावनीयः । तेनेदं निदर्शदृष्टं व्याख्यायते, सङ्क्षिप्तमपि अत्रावतरिष्यति ।

अत्र केषुचिदादर्शेषु मङ्गलपरम्पराविच्छेदार्थं मङ्गलोपनिबन्धभूतः पञ्चनमस्कारो दृश्यते । स चाऽऽदौ व्याख्यात एवेति न पुनर्व्याख्यायते । ननु प्रक्रान्तं परित्यज्य किमर्थमादौ जिनचरितकथनमिति चेत् ? उच्यते, अत्राध्ययने मुख्यतः पर्युषणाकल्पः । स च महत्तमोऽतस्तत्प्रारम्भे युक्तं मङ्गलाचरणम् । तच्च जिनस्थविरावलीकथनव्याजेन कथयन्ति श्रीभद्रबाहुचरणाः, ततो न तत्कथनप्रयासोऽफलः । तत्रापि वर्तमानतीर्थाधिपतित्वेनाऽऽसन्नोपकारित्वात् आदौ श्रीवीरचरितमुच्यते । तच्च सूत्रानुगमे सति भवति । तच्चेदम् - '**ते णं काले ण**'मित्यादि ते इति प्राकृतशैलीवशात् **तस्मिन् काले** वर्तमानावसर्पिण्याश्चतुर्थारकलक्षणे, एवं **तस्मिन् समये** तद्विशेषे यत्रासौ भगवान् देवानन्दायाः कुक्षौ दशमदेवलोकगतपुष्पोत्तरनाम्नो विमानादवतीर्णः । **ण**मितिशब्दो वाक्यालङ्कारे, दृष्टश्चान्यत्रापि णंशब्दो वाक्यालङ्कारार्थो यथा *इमा णं*

1 A1-A2-M2 प्रतिषु अष्टमी दशा नास्ति । K-M1-M3-M4-LD1-LD2 प्रतिषु मुद्रितपुस्तके च इदं सूत्रमेकमेवास्ति । Kh प्रतौ नमस्कारमहामन्त्रपूर्वकं सम्पूर्णं पर्युषणाकल्पाध्ययनमस्ति ।

2 'तेणं कालेणं तेणं समएणं' इति मुद्रिते ।

*पुढवी* इत्यादाविति । द्वितीयोऽपि णंशब्द एवमेव । अथवा सप्तम्यर्थे आर्षत्वात्तृतीया, एवं हेतौ वा, ततस्तेन कालेन तेन समयेन हेतुभूतेनेति व्याख्येयम् । अथ तच्छब्दस्य पूर्वपरामर्शितत्वादत्र तदा किं परामृश्यत इति चेत् ? उच्यते, यौ कालसमयौ भगवता श्रीऋषभस्वामिनाऽन्यैश्च तीर्थकरैः श्रीवर्धमानस्य षण्णां च्यवनादीनां हेतुत्वेन कथितौ तावेवेति ब्रूमः । **श्रमणः** तपस्वी **भगवान्** समग्रैश्वर्यादिगुणयुक्तो **महावीरः** कर्मशत्रुजयादन्वर्थनामा चरमजिनः '**पंचहत्थुत्तरे**'त्ति हस्तादुत्तरस्यां दिशि वर्तमानत्वात् हस्त उत्तरो यासां वा ता हस्तोत्तरा उत्तराफाल्गुन्यः, बहुवचनं बहुकल्याणकापेक्षम्, पञ्चसु च्यवनगर्भापहारजन्म-दीक्षाज्ञानकल्याणकेषु हस्तोत्तरा यस्य स तथा, च्यवनादीनि पञ्चोत्तरफाल्गुनीषु जातानि निर्वाणस्य च स्वातौ सम्भूतत्वादिति भावः । '**होत्थ**'त्ति **अभवत्** । पञ्चहस्तोत्तरत्वमेव तद्यथेत्यादिना भावयति - '**साहरिए**'त्ति **सङ्क्रामितः** । '**मुंडि**'त्ति द्रव्यभाव**मुण्डितः अगारात्** गृहवासान्निःक्रम्येति शेषः, **अनगारितां** साधुतां **प्रव्रजितः** प्रकर्षेण गतः । '**अणंते**' इत्यादि अनन्तार्थविषयत्वात् यद्वा **अनन्त**मन्तरहितमपर्यवसितत्वात् **अनुत्तरं** मत्यादिसमस्तज्ञानातिशायित्वात् **निर्व्याघातं** कटकुड्याद्यप्रतिहतत्वात् **निरावरणं** क्षायिकत्वात् **कृत्स्नं** सकलार्थग्राहकत्वात् **प्रतिपूर्णं** सकलस्वांशसमन्वितत्वात् राकाशशाङ्कमण्डलवत् केवलं सहायविरहितम् अत एव वरं ज्ञानं च दर्शनं चेति ज्ञानदर्शनम्, ततः पूर्वपदाभ्यां कर्मधारयः, तत्र ज्ञानं - विशेषावबोधरूपं दर्शनं - सामान्यावबोधरूपमिति, **समुत्पन्न**मिति सकलावरणविगमादाविर्भूतमिति हृदयम् । **स्वातौ परिनिवृतो भगवान्** ।

**[सू.101] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भयवं महावीरे जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढसुद्धे तस्स णं आसाढसुद्धस्स छट्ठीपक्खेणं महाविजयपुप्फुत्तरपवरपुंडरीयाओ महाविमाणाओ वीसं सागरोवमट्ठिईयाओ[1] अणंतरं चइं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे[2] इमीसे ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए विइक्कंताए सुसमाए समाए विइक्कंताए सुसमदुस्समाए समाए विइक्कंताए दुस्समसुसमाए समाए बहुविइक्कंताए[3] पंचहत्तरीए वासेहिं अद्धनवमेहि य मासेहिं सेसेहिं इक्कवीसाए तित्थयरेहिं इक्खागकुलसमुप्पन्नेहिं कासवगुत्तेहिं दोहि य हरिवंसकुलसमुप्पन्नेहिं गोतमसगुत्तेहिं तेवीसाए तित्थयरेहिं वीइक्कंतेहिं[4] चरिमे तित्थकरे पुव्वतित्थकरनिद्दिट्ठे माहणकुंडग्गामे नगरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आहारवक्कंतीए भववक्कंतीए सरीरवक्कंतीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते ।**

[ज.101] '**जे से गिम्हाणं**'ति **यः स ग्रीष्मस्य**, आर्षे ग्रीष्मशब्दः स्त्रीलिङ्गो बहुवचनान्तश्च, **चतुर्थो मासोऽष्टमः पक्षः**, कोऽसावित्याह-आषाढस्य शुद्धः शुक्लो द्वितीय इत्यर्थः, **तस्याऽऽषाढशुद्धस्य** पक्षस्य या षष्ठी तिथिस्तस्याः 'पक्खेणं'ति दिनरात्रिभ्यामहोरात्रस्योभयपक्षत्वात्, नात्र कृष्णशुक्लपक्षरूपः

---

1 '°ओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अ°' इति Kh-मुद्रिते ।

2 'दाहिणद्धभरहे' इति Kh-मुद्रिते अधिकः पाठः ।

3 'सागरोवमकोडाकोडीए बायालीसवाससहस्सेहिं ऊणियाए' इति अधिकः पाठः Kh-मुद्रिते ।

4 अत्र 'समणे भगवं महावीरे' इति अधिकः पाठः Kh- मुद्रिते ।

चन्द्रमासार्धरूपो ग्राह्यस्तस्य तु पञ्चदशाहोरात्ररूपत्वात्, षष्ठ्या अहोरात्रस्य रात्रौ, 'छट्ठीदिवसेणं' ति क्वचित्पाठः, स च सुज्ञ एव, तत्र च दिवसशब्देन तिथिरुच्यते । '**महाविजये**'त्यादि महान् विजयो यत्र तथाविधं च तत्पुष्पोत्तरसञ्ज्ञकं च तदेव प्रवरेषु श्रेष्ठेषु पुण्डरीकं विमानानां मध्ये उत्तमत्वात् तस्माद्, किम्भूतादित्याह - '**वीसं सागरोवमठिईयाओ**'त्ति विंशतिसागरोपमस्थितिकात् '**अणंतरं चयं चइत्त**'त्ति **अनन्तरम्** अव्यवहितं **च्यवं** च्यवनं **च्युत्वा** कृत्वेत्यर्थः यद्वा अनन्तरं देवभवसम्बन्धिनं चयं-शरीरं त्यक्त्वा विमुच्य '**इहेव**'त्ति देशतः प्रत्यासन्ने, न पुनरसङ्ख्येयत्वाज्जम्बूद्वीपानामन्यत्रेति भावः **भारते वर्षे**, '**इमीसे**'त्ति **अस्या** अधिकृतावसर्पिण्याः **सुषमासुषमायां समायां व्यतिक्रान्तायाम्**, **एवं सुषमायां सुषमादुःषमायां** '**बहु**'त्ति अधिकतरायां '**पंचहत्तरीए वासेहिं**'ति इत्यादौ सप्तम्यर्थे तृतीया, तत्र द्वासप्ततिवर्षाणि भगवत आयुस्तन्निर्वाणानन्तरं च वर्षत्रयं सार्धाश्चाष्टौ मासाः चतुर्थारकः । **एकविंशत्या(त्यां) तीर्थकरेषु इक्ष्वाकुकुलसमुत्पन्नेषु काश्यपगोत्रेषु द्वयोर्हरिवंशसमुत्पन्नयोः** गौतमगोत्रयोः **त्रयोविंशत्या(त्यां) तीर्थकरेषु व्यतिक्रान्तेषु** '**चरिमतित्थयरे**'त्ति वर्तमानचतुर्विंशतिकापेक्षया चरमः, स चासौ तीर्थकरश्चेति द्वन्द्वः(कर्मधारयः) । '**पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठे**'त्ति नितरामतिशयेन भरतप्रश्नाधिकारे दर्शितो निर्दिष्टः, स चैवम् -

*तं वाएइ जिणिंदो एवं नरिंदेण पुच्छिओ संतो ।*
*धम्मवरचक्कवट्टी अपच्छिमो वीरनामो त्ति ॥*

गमनिका - भरतपृष्टो भगवान् तं मरीचिं दर्शयति जिनेन्द्रः एवं नरेन्द्रेण पृष्टः सन् धर्मवरचक्रवर्ती अपश्चिमो वीरनामा भविष्यतीति गाथार्थः । तदेदं श्रुत्वा हर्षभरपूरितचेता भरतो वन्दनार्थं मरीचिमाजगाम वन्दित्वेदमूचे च, तद्यथा -

*नो विअ पारिवज्जं वंदामि अहं इमं च ते जम्मं ।*
*जं होहिसि तित्थयरो अपच्छिमो तेण वंदामि ॥*

गमनिका - नापि च परिव्राजामिदं पारिव्राज्यं वन्दामि अहमिदं च ते जन्म किन्तु भविष्यसि तीर्थकरोऽपश्चिमस्तेन वन्दामीति गाथार्थः ।

*एवण्हं थोऊणं काऊण पयाहिणं च तिक्खुत्तो ।*
*आपुच्छिऊण पियरं विणीयनयरिं अह पविट्ठो ॥*

भरतो भगवन्तमापृच्छ्य विनीतायां प्रविष्ट इत्यर्थः ।

'**कोडालस**'त्ति कोडालैः समानं गोत्रं यस्य स तथा तस्य । '**जालंधरस**'त्ति जालन्धरैः समानं गोत्रं यस्याः सा तथा तस्याः । '**पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि**'त्ति पूर्वरात्रश्चासावपररात्रश्च पूर्वरात्रापररात्रः, स एव काललक्षणः समयो, न तु समाचारादिलक्षणः पूर्वरात्रापररात्रकालसमयस्तत्र मध्यरात्रे इत्यर्थः, इह चाऽऽर्षत्वादेकवचनलोपे पुव्वरत्तावरत्तेत्युक्तम्, अपरात्रशब्दश्चायं अर्धे गते सर्वं गतमिति न्यायादपगता रात्रिरपररात्रः । '**जोगमुवागएणं**'ति अर्थाच्चन्द्रेणेति । '**आहारवक्कंतीए**' इत्यादि **आहारापक्रान्त्या**

देवभवाऽऽहारपरित्यागेन, **भवापक्रान्त्या** देवगतित्यागेन, **शरीरापक्रान्त्या** वैक्रियशरीरत्यागेन, अथवा आहारव्युत्क्रान्त्याऽपूर्वाहारव्युत्पादनेन मनुष्योचिताहारग्रहणेनेत्यर्थः, एवमन्यदपि पदद्वयम् । '**कुच्छिंसि**'त्ति **कुक्षौ** '**गब्भत्ताए**'त्ति **गर्भतया व्युत्क्रान्त** उत्पन्नः ।

**[सू.102] समणे भयवं महावीरे तिण्णाणोवगए आवि होत्था -चइस्सामि त्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुएमि त्ति जाणइ ॥**

[ज.102] '**तिन्नाणोवगए यावि**'त्ति, त्रिज्ञानो ज्ञानत्रयोपेतश्चाप्यभवत्, चापिशब्दावन्यत्रिज्ञान्यपेक्षया विशिष्टतरविषयसूचकौ ज्ञेयौ । '**चइस्सामि**'त्ति **त्यक्षामि** देवशरीरमिति च्यवनं भविष्यत्कालं भगवान् जानाति, यद्यपि देवानां षण्मासावशेषायुषाम्-

*माल्यम्लानिः कल्पवृक्षप्रकम्पः श्रीहीनाशो वाससां चोपरागः ।*
*दैन्यं तन्द्रा कामरागाङ्गभङ्गो दृष्टेर्भ्रान्तिर्वेपथुश्चारतिश्च ॥*

इति भावा जायन्ते तथापि तीर्थङ्करसुरा पुण्योत्कर्षाद्विज्ञानकान्त्यादियुक्ता भवन्तीति, ततो नैतानि च्यवनविज्ञापकानि चिह्नानि भवन्ति किन्तु तथाविधं ज्ञानमेवेति । '**चयमाणे**'त्ति **त्यजमान**स्तु देवशरीरं **न जानाति** च्यवनसमयस्यातिसौक्ष्म्यात् समयस्य च छाद्मस्थिकज्ञानिनामनाकलनीयत्वात् छाद्मस्थिकज्ञानोपयोगस्य च जघन्यतोऽप्यन्तर्मुहूर्तिकत्वात् च्यवनकालं भगवान्न जानाति । च्युतस्तु **जानाति च्युतोऽस्मी**ति पूर्वभवाऽऽयातज्ञानत्रयसद्भावात् ।

**[सू.103] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते तं रयणिं च णं सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा ।**

[ज.103] '**जं रयणिं**'ति **यस्यां रजन्यां** '**सयणिज्जंसि**'त्ति शयनीये निद्राविषयीभूते '**सुत्तजागर**'त्ति **सुप्तजागरा** नातिसुप्ता नातिजाग्रती, अत एवाह - '**ओहीरमाणी ओहीरमाणी**'त्ति वारं वारमीषन्निद्रां गच्छन्तीत्यर्थः, तथा चाहुः श्रीसुधर्मस्वामिचरणाः - *नो सुत्ते सुमिणं पासइ, नो जागरे सुमिणं पासइ, सुत्तजागरे सुमिणं पासइ [व्या. प्र. 16-6-2]* । '**इमेयारूवे**'त्ति **इमान्** स्वप्नानिति सम्बन्धः, एतदेव वर्णितस्वरूपं येषां स्वप्नानां न कविकृतं न्यूनमधिकं वा ते तथा तान् । '**उराले**'त्यादि **उदारान्** प्रधानान्, **कल्याणान्** कल्याणानां शुभसमृद्धिविशेषाणां कारणत्वात् कल्यं वा नीरोगत्वमणयन्ति गमयन्तीति कल्याणास्तानिति, **शिवा**नुपद्रवोपशमनहेतुत्वात्, **धन्यान्** धन्यावहत्वात्, **मङ्गल्यान्** मङ्गले दुरितोपशमे साधुत्वात्, **सश्रीकान्** सशोभानिति, **दृष्ट्वा** जाग्रदवस्था सञ्जाता इति शेषः ।

**[सू.104] तं जहा -**

**गय वसह सीह अभिसेय दाम ससि दिणयरं झयं कुंभं ।**
**पउमसर सागर विमाण भवण रयणुच्चय सिहिं च ॥१८॥**

[ज.104] **तद्यथा गयवसह** गाहा गजवृषभसिंहाः प्रतीताः, अभिषेक इति श्रियाः सत्कः, दाम पुष्पमाला, शशिदिनकरौ प्रख्यातौ, ध्वजं पताका, कुम्भो घटः, पद्मोपलक्षितं सरः, सागरः समुद्रः, विमानं देवानां, भुवनं प्रासादः, रत्नोच्चयो रत्नभृतं स्थालं, शिखी निर्धूमो वह्निः; यो देवलोकादवतरति तन्माता विमानं पश्यति, यस्तु नरकादुद्धृत्योत्पद्यते श्रेणिकादिः तन्माता भवनमिति चतुर्दशैवैते स्वप्नाः विमानभवनयोरेकतरदर्शनात् ।

**[सू.105] तए णं सा देवाणंदा माहणी इमेतारूवे ओराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठा[1] चित्तमाणंदिया पीइमणा परमसोमणसिया हरिसवसविसप्पमाणहियया धाराहयकलंबुयं पिव समुस्ससियरोमकूवा सुमिणोग्गहं करेइ, सुमिणोग्गहं करित्ता[2] उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता जेणेव उसभदत्ते माहणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता उसभदत्तं माहणं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता भद्दासणवरगया आसत्था वीसत्था करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमे एयारूवे ओराले जाव सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा । तं जहा – गय जाव सिहिं च । एएसि णं देवाणुप्पिया ! ओरालाणं जाव चोद्दसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?**

[ज.105] **'हट्ठतुट्ठ'** इत्यादि **हृष्टतुष्टा** अतीव तुष्टा इति भावः अथवा हृष्टा विस्मिता तुष्टा तोषवती, हृष्टा चैवम् - 'अहो ! मया शुभसूचकाः स्वप्ना दृष्टाः', तुष्टा चैवं यथा 'भव्यमभूद्यन्मया एवम्भूताः स्वप्ना अवलोकिताः' । '**चित्तमाणंदिया**' चित्त-मन्तःकरणमानन्दितं-स्फीतीभूतं *टुनदु समृद्धा[सि. हे.धा.312]*विति वचनात् यस्याः सा **चित्तानन्दिता**, सुखादिदर्शनात्पाक्षिको निष्ठान्तस्य परनिपातः, मकारः प्राकृतत्वादलाक्षणिकः, ततः पदत्रयस्य पदद्वयपदद्वयमीलनेन कर्मधारयः । एवंविधा सती '**पीइमणा**' इति प्रीति-राप्यायनं मनसि यस्याः सा **प्रीतिमनाः** स्वप्नेषु बहुमानपरायणा । ततः क्रमेण बहुमानोत्कर्षवशात् '**परमसोमणसिया**'इति शोभनं मनो यस्याः सा सुमनाः, तस्य भावः सौमनस्यं, परमं च सौमनस्यं च परमसौमनस्यं, तत्सञ्जातमस्या इति **परमसौमनस्यिता** । एतदेव व्यक्तीकुर्वन्नाह - '**हरिसवसविसप्पमाणहियया**'इति हर्षवशेन विसर्पत्-विस्तारयायि हृदयं यस्याः सा **हर्षवशविसर्पद्धृदया** । सर्वाणि प्रायश एकार्थिकान्येतानि प्रमोदप्रकर्षप्रतिपादनार्थत्वात्स्तुतिरूपत्वाच्च न दुष्टानि, यदाह -

*वक्ता हर्षभयादिभिराक्षिप्तमनाः स्तुवंस्तथा निन्दन् ।*
*यत्पदमसकृद् ब्रूयात्तत्पुनरुक्तं न दोषाय ॥* इति ।

'**धाराहये**'त्यादि धाराभिर्जलधरधाराभिराहतं यत्कदम्बपुष्पं तदिव समुच्छ्वसितानि रोमाणि कूपेषु - रोमरन्ध्रेषु यस्याः सा तथा । '**सुमिणुग्गहं करेइ**' त्ति स्वप्नानां स्मरणं करोति, विशिष्टफललाभारोग्यराज्यादिकं विभावयतीत्यन्ये । '**उट्ठाए उट्ठेइ**' त्ति उत्थानमुत्था ऊर्ध्वं वर्तनं, तया **उत्तिष्ठति**, इह उट्ठेइ इत्युक्ते

1 'तुट्ठचि' इति Kh- मुद्रिते ।

2 '°त्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलमसंभंताए रायहंससरिसीए गईए जे°' इति Kh-मुद्रिते ।

क्रियामात्रमपि प्रतीयते यथा वक्तुमुत्तिष्ठतेऽतस्तद्व्यवच्छेदार्थम् उत्थयेत्युक्तम् । क्वचित् सयणिज्जाओ उट्ठेइ उट्ठित्ता अतुरियं अचवलं असंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए इति पाठस्तत्रात्वरितं मानसौत्सुक्याभावेन, अचपलं कायतः, असम्भ्रान्तया-अस्खलन्त्या अविलम्बितया-ऽविच्छिन्नया राजहंसगतिसदृश्या गत्या । '**जेणेवे**'त्यादि प्राकृतशैलीवशादव्ययत्वाच्च येनेति यस्मिन्नित्यर्थे द्रष्टव्यम्, **यस्मिन्** दिग्भागे **ऋषभदत्तब्राह्मणो** वर्तते '**तेणेव**'त्ति **तस्मिन्** दिग्भागे **उपागच्छति**, इह वर्तमानकाल-निर्देशस्तत्कालापेक्षया उपागमक्रियाया वर्तमानत्वात्, परमार्थतस्तु उपागतवती इति द्रष्टव्यम् । **उपागम्य** च **ऋषभदत्तं ब्राह्मणं** कर्मतापन्नं '**जएण**'मित्यादि जयः-परैरनभिभूयमानता प्रतापवृद्धिश्च विजयः परेषामसहमानानां परिभवः अथवा जयः स्वदेशे विजयः परदेशे अथवा जयः-सामान्यो विघ्नादिविषयो विजयः-स एव विशिष्टतरः प्रचण्डप्रतिपन्थ्यादिविषयः, **वर्धयति** 'जयेन विजयेन च वर्धस्व त्व'मित्येवमाशिषं प्रयुङ्क्ते स्मेत्यर्थः । **वर्धयित्वा** '**भद्दासण**'त्ति भद्रासनवरं गता या सा तथा । '**आसत्थ**'त्ति **आश्वस्ता** गतिजनितश्रमाभावात्, '**वीसत्थ**'त्ति **विश्वस्ता** सङ्क्षोभाभावात् अनुत्सुका वा। '**करयले**'त्यादि करतलाभ्यां गृहीत- आत्तः करतलगृहीतस्तं, शिरस्यावर्त-आवर्तनं प्रादक्षिण्येन परिभ्रमणं यस्य स शिरस्यावर्तस्तम्, शिरसा प्राप्तमित्यन्ये । **दशनखमञ्जलिं** मुकुलितकमलाकारं **मस्तके कृत्वा** '**एवं वयासि**'त्ति **एवं** वक्ष्यमाणेन प्रकारेण स्वप्नफलवक्तव्यताविषयं प्रश्न**मवादीत्** उक्तवती । कथमुक्तवतीति प्रश्नावकाशमाशङ्क्य यद्वक्तव्यं तदालापकपद्धत्या आह - '**एवं खलु**' इत्यादि **एवम्** अनन्तरं वक्ष्यमाणप्रकारेण, **खलु**र्वाक्यालङ्कारे, **अह**मित्यात्मनिर्देशे । '**देवाणुप्पिया**' इति हे देवानप्यनुरूपं प्रीणातीति देवानुप्रियस्तस्य सम्बोधनं हे **देवानुप्रिय**! । '**किं मन्ये**' इत्यादि मन्ये इति वितर्कार्थे निपातः, **को मन्ये कल्याणफलवृत्तिविशेषो भविष्यति ।**

**[सू.106] तए णं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए धाराहयकलंबुयं पिव समूससियरोमकूवे सुमिणोग्गहं करेइ, करित्ता ईहं अणुपविसइ, ईहं अणुपविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थोग्गहं करेइ, अत्थोग्गहं करेत्ता देवाणंदं माहणिं एवं वयासी ।**

[ज.106] '**एयमट्ठं सोच्चा**'त्ति **एन**मनन्तरोक्त**मर्थं श्रुत्वा** श्रोत्रेणाऽऽकर्ण्य **निशम्य** हृदयेनावधार्य '**सुमिणुग्गहं करेइ**'त्ति **स्वप्नावग्रह**मर्थावग्रहतः तत्र **ईहां** तदर्थपर्यालोचनलक्षणा**मनुप्रविशति** । '**अप्पणो**' त्ति आत्मसम्बधिना **स्वाभाविकेन** सहजेन **मतिपूर्वेणा**ऽऽभिनिबोधिकप्रभवेन **बुद्धिविज्ञानेन** मतिविशेष-भूतौत्पत्त्यादिबुद्धिरूपपरिच्छेदेन अथवा बुद्धिः-साम्प्रतवर्तिनी विज्ञानं - पूर्वापरार्थविभावकमती-तानागतवस्तुविषयप्रज्ञेत्यर्थः, तयोः समाहारेण बुद्धिविज्ञानेन **अर्थावग्रहं** स्वप्नफलनिश्चयं **करोति –**

*मतिरप्राप्तविषया बुद्धिः साम्प्रतदर्शिनी ।*
*अतीतार्था स्मृतिर्ज्ञेया प्रज्ञा कालत्रयात्मिका ॥* इति वचनात्, ततो**ऽवादीत्** ।

**[सू.107] ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा णं० सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरीया आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारगा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा । तं जहा - अत्थलाभो**

**देवाणुप्पिए !, भोगलाभो० पुत्तलाभो० सोक्खलाभो देवाणुप्पिए !, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं देवकुमार[1]सप्पभं दारयं पयाहिसि ।**

[ज.107] '**आरुग्गे**'त्यादि आरोग्यं-नीरोगता तुष्टिः - सन्तोषः दीर्घायुश्चिरजीवित्वम् अर्थलाभ इत्यादि भविष्यतीति शेषः, तत्रार्थो-धनं भोगाः-स्पर्शादयः, उपलक्षणमेतत् कामानामपि, पुत्राः-प्रतीताः, सुखं-चित्ताभिरतिरूपम् । '**एवं खल्वि**'त्यादि एवंरूपादुक्तफलसाधनसमर्थात् स्वप्नाद्दारकं प्रजनिष्यसीति सम्बन्धः, सोपसर्गत्वात्सकर्मकोऽजनि । '**बहुपडिपुन्नाणं**'ति अतिपूर्णेषु, षष्ठ्याः सप्तम्यर्थत्वात्, अर्द्धमष्टमं येषु तान्यर्द्धाष्टमानि तेषु **रात्रिन्दिवेष्व**होरात्रेषु **व्यतिक्रान्तेषु** '**सुकुमाले**'त्यादि सुकुमारौ पाणी पादौ च यस्यासौ सुकुमारपाणिपादः । तथा अहीनानि - अन्यूनानि लक्षणतः प्रतिपूर्णानि-स्वरूपतः पञ्चापीन्द्रियाणि यस्मिंस्तत्तथाविधं शरीरं यस्य सोऽहीनप्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरस्तम् । तथा लक्षणानि - स्वस्तिकचक्रादीनि व्यञ्जनानि-मषतिलकादीनि गुणाः- सौभाग्यादयस्तैरुपपेतो यद्वा सहजं लक्षणं पश्चाद्भवं व्यञ्जनं तेषां यो गुणः - प्रशस्तता तेनोपपेतो - युक्तो यः स तथा तम्, तथा उप अप इत इति शब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनादुपपेत इति स्यात् । '**माणुम्माणपमाणपडिपुन्नसुजातसव्वंगसुंदरंगं**' इति तत्र मानं - जलद्रोणप्रमाणता, कथमिति चेद्? उच्यते, जलस्यातिभृते कुण्डे स्त्रियां पुरुषे वा निवेशिते यज्जलं निस्सरति तद्यदा द्रोणप्रमाणं भवति तदा सा स्त्री पुरुषो वा मानप्राप्त उच्यते, द्रोणमानं चैवम् -

*दो असईओ पसई दो हि य पसई हि सेइया होइ ।*
*चउसेईओ उ कुडओ चउकुडओ पत्थओ होइ ॥*
*चउपत्थमाढयं तह चत्तारि य आढया भवे दो दोणो ।* इति;

तथा उन्मानमर्धभारप्रमाणता, सा चैवम् - तुलायामारोपिता स्त्री पुरुषो वा यद्यर्धभारं तुलति तदा सा स्त्री पुरुषो वा उन्मानप्राप्तोऽभिधीयते, भारमानं चैवम् -

*गुञ्जात्रयेण वल्लः स्यात् गद्याणे ते च षोडश ।*
*पले च दशगद्याणास्तेषां सार्धं शतं मणे ॥*

*मणैर्दशभिरेका च धटिका कथिता बुधैः ।*
*धटीभिर्दशभिस्ताभिरेको भारः प्रकीर्तितः ॥* इति;

तथा प्रमाणं तु स्वाङ्गुलेनाष्टोत्तरशताङ्गुलोच्छ्रिता, तच्चैवम् -

*अष्टशतं षण्णवतिः परिमाणं चतुरशीतिरिति पुंसाम् ।*
*उत्तमसमहीनानां स्वदेहसङ्ख्या स्वमानेन ॥* इति;

1 '°मारोवमं दा°' इति मुद्रिते । 'देवकुमारसप्पभं' नास्ति Khप्रतौ ।

यदाह-

*जलदोणमद्धभारं समुहाइसमूसिओ उ जो नवओ ।*
*माणुम्माणपमाणं तिविहं खलु लक्खणं नेयं ॥*

स्वमुखानि द्वादशाङ्गुलप्रमाणानि नवभिर्गुणितान्यष्टोत्तरशतमङ्गुलानां भवन्ति, शेषपुरुषलक्षणमेतत्, तीर्थकरास्तु विंशत्यङ्गुलमाना भवन्ति, तेषां हि मस्तके द्वादशाङ्गुलमुष्णीषं भवति; ततश्च मानोन्मानप्रमाणैः प्रतिपूर्णान्यन्यूनानि जन्मदोषरहितानि सर्वाणि अङ्गानि - शिरःप्रभृतीनि यानि तैः सुन्दरमङ्गं यस्य स मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गस्तम् । तथा शशिवत्सौम्य आकारो यस्य स तथा तम् । **कान्तं** कमनीयमत एव प्रियं द्रष्टॄणां दर्शनं-रूपं यस्यासौ तथा तम् । अत एव **सुरूपं** शोभनरूपमिति । देवकुमारवत् सती- शोभना प्रभा - कान्तिर्यस्य स देवकुमारसत्प्रभः; ननु देवानां पुत्रा एव न भवन्ति अधातुकशरीरत्वात् तेषां, ततः कथं देवकुमारसत्प्रभः इति ? तत्रोच्यते, यथा असुरकुमाराः तथा अत्रापि कुमारा इति सदा यौवने वर्तमानाः, अतो देवा एव कुमाराः देवकुमाराः, अथवा देवदत्ताः कुमाराः देवप्रभावजा विशिष्टपुण्यवन्तः सुरूपाः इति देवकुमाराः ।

**[सू.108] से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते रिउव्वेयजउव्वेय-सामवेयअथव्वणवेय इतिहासपंचमाणं निघंटुछट्ठाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं चउण्हं वेयाणं सारए पारए धारए सडंगवी सट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोइसामयणे अण्णेसु य बहूसु बंभन्नएसु[1] परिनिट्ठिए यावि भविस्सइ ।**

[ज.108] **'से वि य णं दारए'**इत्यादि **सोऽपि च दारकः उन्मुक्तबालभावः** सञ्जाताष्टवर्षः । **'विण्णाय-परिणयमित्ते'**त्ति विज्ञातं - विज्ञानं परिणतमात्रं यस्य स तथा, क्वचित् विण्णयपरिणयमित्ते त्ति पाठस्तत्र विज्ञ एव विज्ञकः स चासौ परिणतमात्रश्चेति बुद्ध्यादिपरिणामवानेव विज्ञकपरिणतमात्रः, इह मात्रशब्दो बुद्ध्यादि-परिणामस्याभिनवतत्त्वख्यापनपरः । यौवनमेव **यौवनकमनुप्राप्तः** । **'रिउव्वेय'**त्ति इह षष्ठीबहुवचनलोप-दर्शनात् ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्ववेदानामिति दृश्यम्, **'इतिहासपंचमाणं'**ति इतिहासो नाम पुराणं, **'निघण्टुषष्ठानां'** निघण्टुर्नामसङ्ग्रहो अभिधानमालेति यावत्, **साङ्गोपाङ्गानाम्** अङ्गानि-शिक्षाकल्पादीनि उपाङ्गानि - तदुक्तप्रपञ्चनपराः प्रबन्धाः **सरहस्यानामै**दम्पर्ययुक्तानां **चतुर्णा**मपि पूर्वोक्तानां **वेदानां** **'सारए'**त्ति **सारको**ऽध्यापनद्वारेणोदात्तादिस्वरप्रकारसञ्चारकः, स्मारकोऽन्येषां विस्मृतस्य सूत्रादेः स्मारणात्, **पारगः** पर्यन्तगामी, **धारको**ऽधीतान् धारयितुं क्षमो, **वारको**ऽशुद्धपाठनिषेधकः, **'सडंगवी'**ति **षडङ्गवित्** शिक्षादिविचारकः **षष्टितन्त्रविशारदः** षष्टिरर्थास्तन्त्रिता अत्रेति षष्टितन्त्रं कापिलीयं शास्त्रं तत्र पण्डितः, अर्थाश्च षष्टिरित्थं लेशतः - अविद्याविस्मितारागद्वेषाभिनिवेशास्तमोमोहमहामोह[ता]मिस्रान्धतामिस्रसञ्ज्ञाः पञ्चविधपर्यायभेदाः, पञ्चानां बुद्धीन्द्रियाणां पञ्चानां कर्मेन्द्रियाणां मनसश्च यथासङ्ख्यं बाधिर्यकुण्ठता-ऽन्धत्वजडताजिघ्रतामूकत्वकौण्यपङ्गुत्वक्लैब्यौदावर्तोन्मादा इत्येकादशेन्द्रियपाताः, नवविधतुष्टिविपर्ययो-

1 अत्र 'परिव्वायएसु नएसु' इत्यधिकः पाठः Kh-मुद्रिते ।

ऽष्टविधसिद्धिविपर्ययश्चेति सप्तदश बुद्धिवधाः इत्यष्टाविंशतिविधा शक्तिः करुणवैकल्यरूपाः, तथा तुष्टयश्चतस्र आध्यात्मिकाः प्रकृत्युपादानकालभागाख्या अम्भःसलिलओघवृष्टिशब्दवाच्याः, बाह्याः पुनरर्जनरक्षणक्षयभोगहिंसादोषदर्शनहेतुजन्मानो विषयोपरमरूपाः पञ्च ताश्च पारसुपारपारपारअनुत्तमाम्भः-उत्तमाम्भःसञ्ज्ञा इति नव तुष्टयः, अष्टौ च सिद्धयः तत्र आध्यात्मिकाधिभौतिकाधिदैविकलक्षण-दुःखत्रयविघातात्मिकास्तिस्रः सिद्धयो मुख्याः ताश्च प्रमोदमुदितामोदमान(ना){सा}नामभिर्गीयन्ते, तदुपायभूताश्च पञ्च गौण्यः तत्राध्यात्मिकविद्याध्ययनं१ शब्दतोऽर्थज्ञानं२ न्यायेन तत्परीक्षणान्मननं३ गुर्वादिमित्रसुहृत्प्राप्तिः४ विवेकख्यातिलक्षणं ज्ञानं५ चेति, एताश्च गौणसिद्धयस्तारसुतारतारतारम्यकसदा-मुदितसञ्ज्ञाः, अत्र च सिद्धिरुपादेया विपर्ययशक्तितुष्टयस्तु हेया इति सर्वमीलने पञ्चाशद्बुद्धिसमग्रभेदाः दश चूलिकार्था अस्तित्वादयः इति षष्टिः पदार्थाः, *तथा च राजवार्तिकम् -*

*प्रधानास्तित्वमेकत्वमर्थवत्त्वमथान्यथा ।*
*पारार्थ्यं च तथानैक्यं वियोगो योग एव च ॥*

*शेषवृत्तिरकर्तृत्वं चूलिकार्था दश स्मृताः ।*
*विपर्ययः पञ्चविधस्तथोक्ता न चतुष्टयः ॥*

*करणानामसामर्थ्यमष्टाविंशतिधा मतम् ।*
*इति षष्टिः पदार्थानामष्टभिः सह सिद्धिभि॥रिति [सां. कौ. 72]*

एतद्विशेषव्याख्यानं तत्त्वकौमुद्यादिभ्योऽवसेयम् । इह पुनरप्रकृतत्वान्नोच्यते इति प्रकृतमेव प्रस्तुमः ।

'**संखाणे**'त्ति सङ्कलितव्यवकलितादिगणितस्कन्धे सुपरिनिष्ठित इति योगः । '**सिक्खाणे**'त्ति शिक्षामणति प्रतिपादयति शिक्षाणमाचारोपदेशशास्त्रम् । तत्र षडङ्गवेदकत्वमेव व्यनक्ति - '**सिक्खाकप्पे**'त्ति शिक्षा-चाक्षरनिरूपकं शास्त्रं, कल्पश्च-तथाविधयज्ञादिसमाचारप्रतिपादकं शास्त्रमेवेति **शिक्षाकल्पः** तत्र, **व्याकरणे** शब्दलक्षणशास्त्रे, **छन्दसि** पद्यवचननिरूपके, **निरुक्ते** पदभञ्जनेन शब्दनिरुक्तिप्रतिपादके, '**जोइसामयणे**' त्ति *अयवयदण्डकधातुः*, सर्वे गत्यर्था ज्ञानार्था इति ज्योतिषां - ग्रहादीनाम् अये- ज्ञाने ज्योतिःशास्त्रे इत्यर्थः, **अन्येषु च बहुषु** '**बंभणएसु**'त्ति **ब्राह्मणकेषु** वेदव्याख्यानरूपेषु ब्राह्मणसम्बन्धिषु ब्राह्मणहितेषु वा शास्त्रेष्वागमेषु वा '**सुपरिनिट्ठिए यावि**'त्ति सुनिध्मातश्चापि भविष्यति । क्वचित् 'बंभणएसु' इत्यनन्तरं 'परिव्वायएसु नएसु सुपरिनिट्ठिते' इति दृश्यते, तत्र परिव्राजकदर्शनप्रसिद्धेषु नयेष्वाचारेषु न्यायशास्त्रेषु चेति ज्ञेयम् ।

**[सू.109] तं ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउयमंगलकल्लाणकारगा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा ।**

[ज.109] '**तं उरालाण**'मित्यादि तमिति यस्मादेवं **तस्मा**दुदारादिविशेषणाः स्वप्नाः '**तुमे**'त्ति **त्वया दृष्टा** इति निगमनम् । '**इतिकट्टु**' **इति** भणित्वा भूयो भूयोऽ**नुबृंहत्य**नुमोदयति ।

**[सू.110] तए णं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तस्स माहणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु उसभदत्तं माहणं एवं वयासी ।**

**[सू.111] एवमेयं देवाणुप्पिया ! तहमेयं देवाणुप्पिया अवितहमेयं देवाणुप्पिया !, असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया !, इच्छियमेयं देवाणुप्पिया !, पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया!, इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया !, सच्चे णं एसमट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ । ते सुमिणे सम्मं पडिच्छित्ता उसभदत्तेणं माहणेणं सद्धिं ओरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ ।**

[ज.110-111] '**एवमेय**'मित्यादि **एवमेत**दिति पतिवचने प्रत्ययाऽऽविष्करणम् । एतदेव स्फुटयति -'**तहमेयं**'ति **तथैत**द्यथा भवन्तः प्रतिपादयन्ति, अनेनान्वयतस्तद्वचनस्य सत्यतोक्ता । '**अवितहमेयं**'ति अनेन व्यतिरेकाभावतः। '**असंदिद्धमेय**'मित्यनेन सन्देहाभावतः शङ्कायाश्चाविषय इत्यर्थः । अत एव '**इच्छियमेयं**'ति **इष्टम्** ईप्सितं वास्माक**मेतत्** । '**पडिच्छियमेयं**'ति **प्रतीष्टं** प्रतीप्सितं वा युष्मन्मुखात्पतदागृहीतम् अभ्युपगतमित्यर्थः । अत एव '**इच्छियपडिच्छियमेयं**' ति इष्टं प्रतीष्टम् ईप्सितं वा धर्मद्वययोगात् अत्यन्तादरख्यापनाय चैवं निर्देशः । '**सच्चे णं एसमट्ठे**' त्ति सद्भ्यो हितः **सत्यः** प्राणिहितो**ऽयमर्थ** इति । '**इतिकट्टु**'त्ति इति भणित्वा । '**सद्धिं**'ति **सार्धं** '**भोगभोगाइं**'ति भोगार्हा भोगा भोगभोगास्तान्, प्राकृतत्वान्नपुंसकत्वम् ।

**[सू.112] तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे सतक्कतू सहस्सक्खे मघवं पाकसासणे दाहिणड्ढलोगाहिवई बत्तीसविमाणसयसहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अरयंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे नवहेमचारुचित्त[1]कुंडलविलिहिज्जमाणगंडे [2]महड्ढिए महज्जुई महाजसे महाणुभावे महासोक्खे भासुरबोंदी पलंबवणमाले[3] सोहम्मकप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सुहम्माए सभाए सक्कंसि सीहासणंसि निसण्णे ।**

[ज.112] '**तेणं कालेण**'मित्यादि शक्रस्याऽऽसनविशेषस्याधिष्ठाता **शक्रः**, देवानां मध्ये इन्दनात्पर-मैश्वर्ययुक्तत्वा**द्देवेन्द्रः**, देवेषु राजा कान्त्यादिभिर्गुणैरधिकं विराजमानत्वात्, वज्र-कुलिशं पाणावस्येति वज्रपाणिः, असुरादिपुराणां दारणा**त्पुरन्दरः**, शतं क्रतूनां - कार्तिकश्रेष्ठिभवापेक्षया अभिग्रहविशेषाणां श्रमणोपासकपञ्चमप्रतिमारूपाणां वा यस्यासौ **शतक्रतुः**, **सहस्राक्षः** इन्द्रस्य किल मन्त्रिशतानि तदीयानां चाक्ष्णाम् इन्द्रप्रयोजनव्यापृततया इन्द्रसम्बन्धित्वेन विवक्षणात्, मघा-महामेघा देवविशेषा वा वशे सन्त्यस्य स **मघवान्**, पाका-बलवन्तोऽरयस्तान् शास्तीति पाको वा-दानवविशेषस्तं शास्ति **पाकशासनः**, दक्षिणार्धलोकस्याधिपतिर्मेरोर्दक्षिणतः सर्वस्यापि तदाभाव्यत्वात्, द्वात्रिंशतो विमानशतसहस्राणां-विमानलक्षाणामधिपतिः, ऐरावणो गजरूपः सुरविशेषो वाहनं यस्य स तथा, सुराणामिन्द्र आह्लाददायकः

1 अत्र '°चंचल°' इति अधिकः पाठो मुद्रिते ।

2 'महड्ढिए' इत्यस्मादारभ्य 'महासोक्खे' पर्यन्तः पाठो मुद्रिते नास्ति ।

3 '°मालधरे सो°' इति मुद्रिते ।

**सुरेन्द्रः** अथवा शोभना रा-दीप्तिर्येषां ते सुरा-दीप्तिशालिनस्तेष्विन्द्रः-श्रेष्ठः, अरजांसि-निर्मलानि यान्यम्बरवस्त्राणि-स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पवसनानि धरति सो**ऽरजोम्बरवस्त्रधरः**, आलगितौ यथास्थानं निवेशितौ मालामुकुटौ येन स तथा अथवा आलगितं मालामुकुटं यस्य स, नवाभ्यामिव प्रत्यग्राभ्यां हेम्नः सत्काभ्यां चारुभ्यां मनोहराभ्यां चित्राभ्याम्-आश्चर्यकृद्भ्यां कुण्डलाभ्यां विलिख्यमानौ गण्डौ-कपोलौ यस्य स तथा, '**महड्ढिए**' महती ऋद्धिः - समस्तच्छत्रादिराजचिह्नरूपा यस्य, '**महज्जुईए**' महती द्युति-राभरणादिसम्बन्धिनी युतिर्वा- उचितेष्टवस्तुघटनालक्षणा यस्य स **महाद्युति**र्महायुतिर्वा, **महाबलो महायशा महानुभावो महासौख्य** इति व्यक्तम्, भासुरा-दीप्तिमती 'बोंदि' त्ति वपुर्यस्य स तथा, प्रलम्बा वनमाला-भूषणविशेषः पदान्तलम्बिनी पञ्चवर्णा पुष्पमाला वा यस्य स तथा ।

**[सू.113] से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसाहस्सीणं, चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चउण्हं चउरासीए आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाणं देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडु[1]पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ।**

[ज.113] '**से णं**'ति **स** इन्द्रो, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **तत्र** देवलोके विमानावासा विमान एव '**सयसाहस्सीणं**'त्ति आर्षत्वात् स्त्रीत्वं लक्षाणाम् । चतुरशीत्या सामानिकसहस्राणां, तत्र समाने - द्युतिविभवादौ भवा सामानिकाः अध्यात्मादित्वादिकणु, विमानाधिपतिशक्रसदृशद्युतिविभवादिका देवा इत्यर्थः, ते च मातृपितृगुरूपाध्यायमहत्तरवत् सौधर्मेन्द्रस्य पूजनीयाः केवलं सुरलोकाधिपतित्वहीना इति शक्रं स्वामिनं प्रतिपन्नाः । **त्रयस्त्रिंशता** त्रायस्त्रिंशा नाम महत्तरकल्पाः पूज्यस्थानीयास्त्रायस्त्रिंशा मन्त्रिकल्पा वा । चत्वारो लोकपालाः सोमयमवरुणकुबेरा दिक्पालननियुक्ताः । तथा **चाष्टानामग्रमहिषीणाम्**, इह कृताभिषेका देवी महिषीत्युच्यते, ताश्च स्वपरिवारभूतानां सर्वासामपि देवीनामित्यग्र्याः, अग्र्याश्च ता महिष्यश्चाग्र्यमहिष्यस्तासां, कथम्भूतानामित्याह - सपरिवारेण स्वकीयस्वकीयदेवाङ्गनारूपेण वर्तते यास्ताः सपरिवारास्तासाम्, परिकरपरिमाणं च पञ्चमाङ्गादवसेयम्, तासाममूनि नामानि - पद्मा१ शिवा२ शची३ अञ्जू४ अमला५ अपत्सरा६ नवमिका७ रोहिणी८ इति । तथा **तिसृणां पर्षदां**, तिस्रो हि शक्रस्य पर्षदः, तद्यथा - अभ्यन्तरा मध्यमा बाह्या च; तत्र या वयस्यमण्डलीस्थानीया परममित्रसंहतिसदृशी सा अभ्यन्तरपर्षत्; तया सह पर्यालोचितं स्वल्पमपि प्रयोजनं विदधाति, अभ्यन्तरपर्षदा सह पर्यालोचितं यस्यै निवेद्यते 'यथेदमस्माकं पर्यालोचयतां सम्मतमागतं युष्माकमपीदं सम्मतं किं वा ने'ति सा मध्यमा; यस्याः पुनरभ्यन्तरपर्षदा सहाऽऽलोचितं मध्यमया च सह दृढीकृतं करणायैव निरूप्यते 'यथेदं क्रियता'मिति सा बाह्या; ताश्च द्वादशचतुर्दशषोडशसहस्रदेवरूपा यथाक्रममवसेयाः, देवीनां च ताः सप्तषट्पञ्चशतरूपास्तथैवावसेयाः । **सप्तानीकानां** सैन्यानाम्, तानि च सप्त तद्यथा -हयानीकं गजानीकं

1 '°पडहवा°' इति मुद्रिते ।

रथानीकं पदात्यनीकं वृषभानीकं गन्धर्वानीकं नाट्यानीकम्; तत्राऽऽद्यानि पञ्चानीकानि सङ्ग्रामाय कल्पन्ते, गन्धर्वनाट्यानीके तूपभोगाय । अनीकानि स्वस्वाधिपतिव्यतिरेकेण न सम्यक् प्रयोजने समापतिते सत्युपकल्पन्ते, ततः सप्तानीकाधिपतयोऽपि तस्य वेदितव्याः, तथा चाह - **सप्तानामनीकाधिपतीनाम्** । चतुरशीतयश्चतुर्दिशं भावात् आत्मरक्षकदेवसहस्राणाम् अङ्गरक्षकदेवानां षट्त्रिंशत्सहस्राधिकं लक्षत्रयमित्यर्थः, पदसमासश्चैवम् - देवलोकाधिपतेः शक्रस्याऽऽत्मानं रक्षयन्तीत्यात्मरक्षाः *कर्मणोऽणि[सि.हे. 5-3-14]*त्यण्प्रत्ययः, ते च शिरस्त्राणकल्पाः, यथा हि शिरस्त्राणं शिरस्याविद्धं प्राणरक्षकं भवति तथा तेऽप्यात्मरक्षका गृहीतधनुर्दण्डादिप्रहरणाः समन्ततः सप्तानीकाधिपत्यग्रतश्चावस्थायिनो देवलोकाधिपतेः शक्रस्य प्राणरक्षकाः, देवानामपायाभावात् तेषां तथा ग्रहणपुरस्सरमवस्थानं निरर्थकमिति चेत् ? तत्र स्थितिमात्रपरिपालनहेतुत्वात् प्रीतिप्रकर्षहेतुत्वाच्च, तथाहि ते समन्ततः सर्वासु दिक्षु गृहीतप्रहरणा ऊर्ध्वस्थिता अवतिष्ठमानाः स्वनायकशरीररक्षणपरायणाः स्वनायकैकनिषण्णदृष्टयः परेषामसहमानानां क्षोभमापादयन्तो जनयन्ति स्वनायकस्य परां प्रीतिमिति । एते च नियतसङ्ख्याकाः शक्रस्य परिवारभूता देवा उक्ताः । क्वचिदेतानि सर्वाण्यपि पदानि तृतीयान्तानि दृश्यन्ते, प्राकृतत्वात्तत्रापि षष्ठ्यन्तान्येव व्याख्येयानि, अथवा तैः सार्धमित्यपि व्याख्येयम् । ये तु तस्मिन् सौधर्मकल्पे पौरजनपदस्थानीया ये त्वाभियोग्या दासकल्पास्ते चातिभूयांसः, आस्थानमण्डल्यामपि चानियतसङ्ख्याका इति तेषां सामान्यत उपादानमाह - '**अन्नेसिं च**'त्ति **अन्येषां च सौधर्मकल्पवासिनां देवानां** तद्वासिनीनां च **देवीनां** च, '**आहेवच्चं**' ति अधिपतेः कर्म **आधिपत्यं**, रक्षा इत्यर्थः । सा च रक्षा सामान्येनाप्यारक्षकेणेव क्रियते, तत आह - '**पोरेवच्चं**'ति पुरस्य पतिः पुरपतिस्तस्य कर्म **पौरपत्यं**, सर्वेषामात्मीयानामग्रेसरत्वम् इति भावः । तच्चाग्रेसरत्वं नायकत्वमन्तरेणापि स्वनायकनियुक्ततथाविधगृहचिन्तकसामान्यपुरुषस्येव भवति, ततो नायकत्वप्रतिपत्त्यर्थमाह - '**सामित्तं**' स्वामित्वमस्यास्ति इति स्वामी तद्भावः **स्वामित्वं** नायकत्वमित्यर्थः । तदपि च नायकत्वं कस्यचित्पोषकत्वमन्तरेणापि भवति यथा हरिणाधिपतेर्हरिणस्य, तत आह - '**भट्टित्तं**'ति **भर्तृत्वं** पोषकत्वं [1]*डुभृङ् धारणपोषणयो*रिति वचनात्, अत एव **महत्तरकत्वम्** । तदपि च महत्तरकत्वं कस्यचिदाज्ञाविकलस्यापि भवति यथा कस्यचिद्वणिजः स्वदासदासीवर्गं प्रति, तत आह - '**आणाईसरसेणावच्चं**' ति आज्ञया ईश्वरः आज्ञेश्वरः, सेनायाः पतिः सेनापतिः, आज्ञेश्वरश्चासौ सेनापतिस्तस्य कर्म **आज्ञेश्वरसेनापत्यं**, स्वसैन्यं प्रत्यद्भुतमाज्ञाप्राधान्यम् इति तात्पर्यम् । '**कारेमाणे**'त्ति **कारयन्** अन्यैर्नियुक्तकैः पुरुषैः '**पालेमाणे**'त्ति **पालयन्** स्वयमेव । '**महयाहये**'त्यादि महता रवेणेति योगः, अहय इति आख्यानकप्रतिबद्धानीति वृद्धाः अथवा अहतानि अव्याहतानि इति भावः, नाट्यगतवादितानि च तन्त्री-वीणा तला-हस्ततालाः तालाः-कांसिकाः त्रुटितानि-शेषतूर्याणि तथा घनो-घनसदृशो ध्वनिसाधर्म्यात् यो मृदङ्गो-मर्दलः पटुना-दक्षपुरुषेण प्रवादितस्तत एतेषां पदानां द्वन्द्वस्तेषां यो रवस्तेन । **दिव्यान्** देवजनोचितान् अतिप्रधानानित्यर्थः '**भोगभोगाइं**'ति भोगार्हा भोगाः शब्दादयस्तान्, सूत्रे नपुंसकता प्राकृतत्वात्, प्राकृते हि लिङ्गं व्यभिचारि, यदाह पाणिनिः स्वप्राकृतलक्षणे - *लिङ्गं व्यभिचार्यपी*ति, **भुञ्जानो विहरत्यास्ते** ।

1 'डुभृञ् धारणपोषणयोः'इति पाणिनीयधातुपाठे [जुहोत्यादि 5]

**[सू.114] इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणे आभोएमाणे विहरइ, तत्थ णं समणं भगवं महावीरं जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे [1]माहणकुंडग्गामे नगरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए णंदिए परमाणंदिए पीइमणे परमसोमणसिए हरिसवसविसप्पमाणहियए धारा-हयनीवसुरहिकुसुमचंचुमालइयऊससियरोमकूवे वियसियवरकमलनयणवयणे पयलियवरकडगतुडिय-केयूरमउडकुंडलहारविरायंतवच्छे पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरियं चवलं सुरिंदे सीहा-सणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता वेरुलियवरिट्ठरिट्ठ-अंजणनिउणोवियमिसिमिसिंतमणिरयणमंडियाओ पाउयातो ओमुयइ, पाउयातो ओमुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, एगसाडियं उत्तरासंगं करित्ता अंजलिमउलियग्गहत्थे तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ, वामं जाणुं अंचित्ता दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसेइ, तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसित्ता ईसिं पच्चुण्णमइ, पच्चुण्णमित्ता कडगतुडियथंभियाओ भुयाओ साहरइ, कडगतुडियथंभियाओ भुयाओ साहरित्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी ।**

[ज.114] न केवलमास्ते कि**न्त्विमं** प्रत्यक्षतया उपलभ्यमानं **केवलकल्प**मीषदपरिसमाप्तं केवलं केवलज्ञानं केवलकल्पं परिपूर्णतया केवलसदृशमिति भावः, जम्ब्वा रत्नमय्या उत्तरकुरुवासिन्या उपलक्षितो द्वीपो जम्बूद्वीपस्तं **जम्बूद्वीपं** जम्बूद्वीपाभिधानं **द्वीपं विपुलेन** विस्तीर्णेन, तस्य हि शक्रस्यावधिरधः प्रथमां पृथिवीं यावत्तिर्यगसङ्ख्येयान् द्वीपसमुद्रान् इति भवति विस्तीर्णः, तेनाऽऽ**भोगयन् आभोगयन्** परिभावयन् पश्यति, अनेन सत्यप्यवधौ यदि तं ज्ञेयविषयम् आभोगं न करोति तदा न किञ्चिदपि तेन जानाति पश्यति चेत्यावेदितं भवति । '**तत्थ णं समण**'मित्यादि **तत्र** तस्मिन् विपुलेनावधिना जम्बूद्वीपविषयदर्शने प्रवर्तमाने सति, **श्रमणं** श्राम्यति तपस्यति नानाविधमिति श्रमणः, भगः समग्रैश्वर्यादिलक्षणः सोऽस्यास्तीति भगवान् तं भगवन्तम्, *शूरवीर विक्रान्तौ[पा. धा. चुरादि 370-371]* वीरयति कषायान् प्रतिविक्रामति स्मेति वीरः महांश्चासौ वीरश्च महावीरः तम् । **जम्बूद्वीपे भारते वर्षे** ब्राह्मणकुण्डग्रामे नगरे । '**धाराहयनीवे**'त्यादि धाराहतं यन्नीपस्य-कदम्बस्य सुरभिकुसुमं तदिव 'चंचुमालय'त्ति पुलकितोऽत एव 'ऊसवि(सि)यरोमकूवे'त्ति उच्छ्वसितरोमकूपश्च यः स तथा । '**वियसिय**'त्ति विकसिते-विकाशं प्राप्ते वरकमलवन्नयनवदने यस्यासौ विकसितवरकमलनयनवदनः । '**पयलियवरक-डगतुडियकेयूरमउडकुंडलहारविरायंतवच्छे**' त्ति प्रचलितानि वराणि कटकानि- कलाचिकाभरणानि त्रुटितानि-बाहुरक्षिकाः केयूराणि-बाह्वाभरणविशेषरूपाणि मुकुटो-मौलिभूषणं कुण्डले-कर्णाभरणे यस्य स प्रचलितवरकटकत्रुटितकेयूरमुकुटकुण्डलः, हारेण विराजितं वक्षो यस्य स, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः । '**पालंब**'त्ति प्रालम्बो-झुम्बनकं मुक्तामयं प्रलम्बमानं घोलच्च-दोलायमानं यद्भूषण-माभरणं तद्धारयति यः स तथा । विवक्षितक्रियायां बहुमानपूर्वका प्रवृत्तिः ससम्भ्रमो यस्य वन्दनस्य तत् **ससम्भ्रमं** क्रियाविशेषणमेतत्,

1 अत्र 'दाहिणड्ढभरहे' इत्यधिकः पाठो मुद्रिते ।

**त्वरितं** शीघ्रं, **चपलं** सम्भ्रमवशादेव व्याकुलं, यथा भवत्येवम् । सुष्ठ्वतिशयेन राजन्त इति सुरास्तेषा-मिन्द्रः । '**पादपीढाउ**'त्ति **पादपीठात्प्रत्यवरोहति** अवतरतीत्यर्थः । '**वेरुलिये**'त्यादि वैडूर्येण - मध्यवर्तिना वरिष्ठे-प्रधाने रिष्टाञ्जनौ-रत्नविशेषौ ययोस्ते तथा निपुणेन-कुशलेन शिल्पिना 'ओविय'त्ति परिकर्मिते, अत एव 'मिसिमिसिंत'त्ति चिकचिकायमाने मणिभि-श्चन्द्रकान्तादिभिः रत्नैश्च-कर्केतनादिभिर्मण्डिते-भूषिते ये ते तथा, ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयः । **पादुके अवमुञ्चति** '**एगसाडियं**'ति एकः शाटको यस्मिन्नस्ति स एकशाटिकः उत्तरासङ्गो वैकक्षकं **करोति** । '**अंजलि**'त्ति अञ्जलिना अञ्जलिकरणतो मुकुलितौ-मुकुलाकृतीकृतावग्रहस्तौ येन स तथा । **तीर्थकराभिमुखः सप्ताष्टौ पदानि अनुगच्छति**, '**वामं जानुं अंचेइ**'त्ति **आकुञ्चयति**, **दक्षिणजानुं धरणीतले** '**साहट्टु**' त्ति **संहृत्य** निवेश्य '**तिक्खुत्तो**'त्ति **त्रिकृत्वस्त्रीन्** वारान् मूर्धानं मस्तकं **धरणीतले** '**निवेसेइ**'त्ति **न्यस्यति** नमयतीत्यर्थः, '**ईसिं पच्चुण्णमइ**'त्ति **ईषन्मनाक् प्रत्युन्नमति** अवनतत्वं विमुञ्चतीत्यर्थः । '**कडग**'त्ति कटकानि-कङ्कणानि त्रुटितानि-बाहुरक्षिकाः, ताभ्यां स्तम्भिते भुजे '**साहरइ**'त्ति ऊर्ध्वं नयति स्तम्भिकोपमे करोतीत्यर्थः । द्वयोर्हस्तयोरन्योन्यान्तरिताङ्गुलिकयोः सम्पुटरूपतया यदेकत्र मीलनं सोऽञ्जलिस्तम्, करतलाभ्यां परिगृहीतो निष्पादितः करतलपरिगृहीतस्तम्, आवर्तनमावर्तः शिरस्यावर्तो यस्यासौ शिरस्यावर्तः कण्ठेकालादिवदलुक्समासः । तमेव **मस्तके कृत्वा** अथवा शिरसाऽप्राप्तमस्पृष्टम् '**एवं वयासि**'त्ति एवमवादीत् ।

**[सू.115] नमोत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं १ आइगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं २ पुरिसोत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरियाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं ३ लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं ४ अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं ५ धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं ६ दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं ७ जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं ८ सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं ९ । नमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स चरिमतित्थयरस्स पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासइ[1] मे भगवं तत्थगए इहगयं, -ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने ।**

[ज.115] '**नमुत्थु ण**'मित्यादि **नमोऽस्तु** सर्वत्र सम्बध्यते, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, '**अरहंताणं**'ति सर्वत्र प्राकृते चतुर्थ्याः षष्ठी, ततो देवादिभ्योऽतिशयपूजावन्दनाद्यर्हत्वा**दर्हद्भ्यो** नमः, बहुवचनमद्वैतोच्छेदार्थं यतः केषाञ्चिन्मतम् -

*एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः ।*
*एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥*
*एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन ।* इति वचनात् ।

1 '°सउ मे' इति मुद्रिते ।

अत इदं वाक्यम् अर्हद्बहुत्वख्यापकमिति नमस्कर्तुः फलातिशयज्ञापनार्थं चेति, तथा कर्मारिहननादरिहंताणं कर्मबीजाभावे भवेऽप्ररोहादरुहंताणं इति पाठत्रयम् । **भगवद्भ्यः**

*भगोऽर्कज्ञानमाहात्म्ययशोवैराग्यमुक्तिषु ।*
*रूपवीर्यप्रयत्नेच्छाश्रीधर्मैश्वर्ययोनिषु ॥*

इत्यर्कयोनिवर्जं द्वादशार्थभगयुक्तेभ्यः । **आदिकरेभ्यः** आदौ-प्राथम्येन श्रुतधर्ममाचारादिग्रन्थात्मकं स्वस्वतीर्थेष्वादौ करणात् तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयन्तीत्येवं शीला आदिकरास्तेभ्यः । आदिकरत्वाच्चैते किंविशिष्टा इत्याह - **तीर्थकरेभ्यः** तरन्ति संसारसागरं येन तत्तीर्थं तच्च जिनप्रवचनं प्रथमगणधरो वा श्रमणसङ्घो वा, तत्करणशीलत्वात् तीर्थकरास्तेभ्यः । तीर्थकरत्वं च तेषां नान्योपदेशपूर्वकमित्यत आह - **स्वयंसम्बुद्धेभ्यः** स्वयमात्मनैव नान्योपदेशत इत्यर्थः सम्यक्-यथावत् बुद्धा-हेयोपादेयोपेक्षणीयादरणीय-वस्तुतत्त्वं विदितवन्तस्तेभ्यः, सहसंबुद्धाणं वा क्वचित्पाठः तत्र सहात्मनैवेत्यर्थः । स्वयंसम्बुद्धत्वं चामीषां न [1]प्राकृतानां सतां किन्तु पुरुषोत्तमत्वात्, इत्यत आह - **पुरुषोत्तमेभ्यः** पुरुषाणां मध्ये तेन रूपादिना अति-शायित्वादूर्ध्ववर्तित्वादुत्तमाः पुरुषोत्तमास्तेभ्यः, भगवन्तो हि संसारमप्यावसन्तः सदा परार्थव्यसनिन उपसर्जनीभूतस्वार्था उचितक्रियावन्तोऽदीनभावाः कृतज्ञा देवगुरुबहुमानिनो [2]गम्भीराशया इति भवन्ति पुरुषाणामुत्तमास्तेभ्यः । अथ पुरुषोत्तमत्वमेवामीषामुपमात्रयेण समर्थयन्नाह - **पुरुषसिंहेभ्यः** सिंहा इव सिंहाः, पुरुषाश्च ते सिंहाश्चेति पुरुषसिंहाः, कर्मशत्रुषु क्रूरत्वात् परीषहेषु सावज्ञत्वात् उपसर्गेभ्यो निर्भयत्वात् च पुरुषसिंहास्तेभ्यः, लोकेन सिंहे शौर्यमतिप्रकृष्टमभ्युपगतम् अतः शौर्ये स उपमानं कृतः यथा भगवतो महावीरस्य बाल्ये प्रत्यनीकदेवेन भाप्यमानस्याप्यभीतत्वात् कुलिशकठिनमुष्टिप्रहारप्रहतिप्रवर्धमानामर-शरीरकुब्जताकरणाच्चेति । तथा **पुरुषवरपुण्डरीकेभ्यः** कर्मपङ्के जाता दिव्यभोगजलैर्वर्धिता भगवन्त उभयं त्यक्त्वा जगल्लक्ष्मीनिवासास्तिर्यङ्नरामरसेव्याश्च पुण्डरीकवद्वर्धन्त इति पुण्डरीकाणि-धवलकमलानि, वराणि च तानि पुण्डरीकाणि च वरपुण्डरीकाणि, पुरुषा वरपुण्डरीकाणीव पुरुषवरपुण्डरीकाणि तेभ्यः, धवलता चामीषां सर्वाशुभ[3]मलीमसरहितत्वात् । एवं **पुरुषवरगन्धहस्तिभ्यः** वराश्च ते गन्धहस्तिनश्च वरगन्धहस्तिनः, पुरुषा एव वरगन्धहस्तिनः पुरुषवरगन्धहस्तिनः, यथा गन्धहस्तिनो गन्धेनापि समस्तेतरहस्तिनो भज्यन्ते तथा भगवतस्तद्देशविहरणेन ईतिमारिदुर्भिक्षस्वचक्रपरचक्रादीनि दुरितानि पञ्चविंशतियोजनमध्ये नश्यन्तीति पुरुषवरगन्धहस्तिन इत्युच्यन्ते, इत्यत उपमात्रयात् पुरुषोत्तमा अमी अतस्तेभ्यः । न चामी भगवन्तः पुरुषाणामेवोत्तमाः किन्तु सकलस्यापि जीवलोकस्येत्येतद्दर्शयितुमाह - **लोकोत्तमेभ्यः** लोकस्य तिर्यङ्नर-नारकनाकिलक्षणजीवलोकस्योत्तमाश्चतुस्त्रिंशद्बुद्धातिशयाद्यसाधारणगुणगणोपेततया सकलसुरासुरवरनर-निकरनमस्करणीयतया च प्रधाना लोकोत्तमास्तेभ्यः । लोकोत्तमत्वमेवामीषां पुरस्कुर्वन्नाह - **लोकनाथेभ्यः** लोकस्य-सञ्ज्ञिभव्यलोकस्य नाथाः- प्रभवो लोकनाथाः, नाथत्वं च योगक्षेमकारित्वं *योगक्षेमकृन्नाथ* इति

1 'न प्रकृ°' इति Kh ।

2 'गभीरा°' इति Kh ।

3 'भमलर°' इति Kh ।

वचनात्, तच्चामीषामप्राप्तस्य सम्यग्दर्शनादेर्योगकरणेन लब्धस्य च तस्यैव तत्तदुपद्रवाभावापादनेन पालनाच्च लोकनाथास्तेभ्यः । लोकनाथत्वं च तात्त्विकं लोकहितत्वे सति सम्भवतीत्याह - **लोकहितेभ्यः** लोकस्यैकेन्द्रियादिप्राणिगणस्य पञ्चास्तिकस्य वाऽऽत्यन्तिकतद्रक्षाप्रकर्षप्ररूपणेन हितोपदेशात् सम्यक्प्ररूपणतो वा हिता-अनुकूलवृत्तयो लोकहितास्तेभ्यः । यदेतन्नाथत्वं हितत्वं च तद्भव्यानां यथावस्थितवस्तुस्तोमप्रदीपनेन नान्यथेत्याह - **लोकप्रदीपेभ्यः** लोकस्य - देशनायोग्यविशिष्टतिर्यङ्नरामररूपस्य प्रदीपा इव प्रदीपाः, देशनांशुभिर्मिथ्यात्वतिमिरनिराकरणेन प्रकृष्टपदार्थप्रकाशकारित्वात् प्रदीपास्तेभ्यो लोकप्रदीपेभ्यः । इदं च विशेषणं द्रष्टृलोकमाश्रित्योक्तम्, अथ दृश्यलोकमाश्रित्याह - **लोकप्रद्योतकरेभ्यः** लोकस्य - लोक्यत इति लोक इति व्युत्पत्त्या लोकालोकरूपस्य समस्तवस्तुस्तोमस्वभावस्याखण्डमार्तण्डमण्डलमिव निखिलभावस्वभावावभासनसमर्थकेवलालोकप्रवचनप्रभापटलप्रवर्तनेन प्रद्योतं-प्रकाशं कुर्वन्तीत्येवं शीला लोकप्रद्योतकरास्तेभ्योऽथवा लोकस्योत्कृष्टमतेर्गणधरादिभव्यसत्त्वलोकस्य प्रद्योतं-विशिष्टज्ञानशक्तिं तत्क्षणद्वादशाङ्गविरचनानुमेयां कुर्वन्तीति लोकप्रद्योतकरास्तेभ्यः । ननु लोकनाथत्वादिविशेषणयोगिनो हरिहरहिरण्यगर्भादयोऽपि परतीर्थिकमतेन सम्भवन्तीति कोऽमीषां विशेष ? इत्याशङ्कायां तद्विशेषाभिधानायाऽऽह - **अभयदयेभ्यः** सप्तभयहरणादभयं तं दयन्ते-ददतीत्यभयदाः अथवा प्राणान्तोपसर्गकारिष्वपि न भयं दयन्ते इत्यभयदयाः यद्वाऽभया-सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया-कृपा येषां तेऽभयदयाः, हरिहरादयस्तु नैवमिति तेभ्यः । न केवलममी प्राणिनामनर्थपरिहारमात्रं कुर्वन्त्यपि त्वर्थप्राप्तिमपि कुर्वन्तीति दर्शयन्नाह - **चक्षुर्दयेभ्यः** चक्षुरिव चक्षुः-श्रुतज्ञानं शुभाशुभार्थविभागोपदर्शकत्वात्, तद्दयन्ते इति चक्षुर्दयास्तेभ्यः । यथा हि लोके कान्तारगतानां चौरैर्विलुप्तधनानां बद्धचक्षुषां चक्षुर्दत्त्वा वाञ्छितमार्गोपदर्शनेन उपकारी भवति एवमेतेऽपि संसारारण्यवर्तिनां रागादिचौरविलुप्तधर्मधनानां कुवासनाच्छादितसज्ज्ञानलोचनानां तदपनयनेन श्रुतचक्षुर्दत्त्वा निर्वाणमार्गं यच्छन्त उपकारिण इति दर्शयन्नाह - **मार्गदयेभ्यः** मार्गं-सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षपथं दयन्ते इति मार्गदयास्तेभ्यः । यथा हि चक्षुरुद्घाटनं मार्गदर्शनं च कृत्वा चौरादिविलुप्तधनान्निरुपद्रवं स्थानं प्रापयन् परमोपकारी भवत्येवमेतेऽपीति दर्शयन्नाह - **शरणदयेभ्यः** शरणं- त्राणं नानाविधोपद्रवोपद्रुतानां रक्षास्थानं, तच्च परमार्थतो निर्वाणं, तद्दयन्ते [1]दर्शनाद्यासेवनतस्तत्प्राप्तेस्तस्य च तेषां दायकत्वाच्छरणदयास्तेभ्यः । यथा हि लोके चक्षुर्मार्गशरणदानात् दुःस्थानां जीवितं ददात्येवमेतेऽपीति दर्शयन्नाह - **जीवदयेभ्यः** जीवनं-जीवो भावप्राणधारणममरणधर्मत्वमित्यर्थः, तं दयन्ते इति जीवदयाः जीवेषु वा दया येषां ते जीवदयास्तेभ्यः । एवंविधाश्च ते बोधिदानेऽपि समर्था भवन्तीत्येतद्दर्शयितुमाह - **बोधिदयेभ्यः** बोधिं-प्रेत्यसम्यग्धर्मावाप्तिरूपां दयन्ते इति बोधिदयास्तेभ्यः । इदं चानन्तरोक्तविशेषणकदम्बकं भगवतां धर्मात्मकतया सम्पन्नमिति, तां विशेषणपञ्चकेनाऽऽह - **धर्मदयेभ्यः** धर्मं-श्रुतचारित्रात्मकं दुर्गतिप्रपतज्जन्तुधरणस्वभावं दयन्ते-ददते इति धर्मदयास्तेभ्यः । धर्मदयत्वं चामीषां तद्देशनादेवेत्यत आह - **धर्मदेशकेभ्यः** धर्ममुक्तलक्षणं देशयन्तीति धर्मदेशका यथाभव्यमवन्ध्यदेशनातस्तेभ्यः । धर्मदेशकत्वं चामीषां धर्मस्वामित्वे सति, न पुनर्यथा नटस्येति दर्शयन्नाह-**धर्मनायकेभ्यः** धर्मस्य-

1 '°न्ते दाना°' इति Kh ।

क्षायिकज्ञानदर्शनचारित्रात्मकस्य नायकाः-स्वामिनस्तद्वशीकारात्तत्फलप्रकर्षपरिभोगाच्च तेभ्यः । एवंविधाश्च ते रथवाहनेऽपि दक्षाः स्युः, स चेह प्रक्रमाद्धर्मरथ एव, तदेव दर्शयन्नाह - **धर्मसारथिभ्यः** धर्मरथस्य सारथय इव सारथयः, यथा सारथी रथं रथिकमश्वांश्च सम्यक् प्रवर्तयति रक्षति च एवं भगवन्तोऽपि चारित्रधर्माङ्गानां संयमात्मप्रवचनाख्यानां रक्षणोपदेशाद्धर्मसारथयो भवन्ति, तेभ्यः । एवं च रथप्रवर्तनपण्डितः सन् दिग्विजयादिकं कुर्वन् सर्वमपि जनं स्ववशं विदधन् चक्रवर्तित्वमाप्नोतीत्येतद्दर्शयितुमाह - **धर्मवर-चातुरन्तचक्रवर्तिभ्यः** त्रयः समुद्राश्चतुर्थो हिमवान् एते चत्वारः पृथिव्या अन्ताः- पर्यन्तास्तेषु भवाः स्वामितयेति चातुरन्तास्ते च ते चक्रवर्तिनश्च चातुरन्तचक्रवर्तिनः, धर्मेषु वरः धर्मवरः, तत्र विषये चातुरन्तचक्रवर्तिन इव धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्तिनः, यथा हि पृथिव्यां शेषराजातिशायिनश्चातुरन्तचक्रवर्तिनो भवन्ति एवं भगवन्तोऽपि धर्मवरविषये अशेषप्रणेतृषु मध्ये सातिशयत्वात्तथोच्यन्ते तेभ्यः, अथवा कुतीर्थिकधर्मापेक्षया धर्मवरेण, कीदृशेन ? नरकादिचतुर्गत्यन्तकरणात् चतुरन्तेन मिथ्यात्वादिरिपुच्छेदक-त्वाच्चक्रेण वर्तितुं शीलं येषां ते तथेति व्याख्येयम्, तेभ्यः । '**दीवो त्ताण**'मित्यादिभिन्नसम्बन्धानि पदानि चतुर्थ्यर्थे षष्ठ्यन्ततया योज्यानि । तत्र **दीप** इव दीपः समस्तवस्तुप्रकाशकत्वात् द्वीपो वा संसारसागरा-न्तर्गताङ्गिवर्गस्य नानाविधदुःखकल्लोलाभिघातदुःस्थितस्याऽऽश्वासहेतुत्वात् । तथा **त्राण**मनर्थप्रतिहननं तद्धेतुत्वात्त्राणम् । तथा **शरण**मर्थसम्पादनं तद्धेतुत्वाच्छरणम् । तथा '**गइ**'त्ति गम्यते दुःस्थितैः सुस्थितार्थमाश्रीयत इति **गतिः** । '**पइट्ठ**'त्ति प्रतिष्ठन्त्यस्यामिति **प्रतिष्ठा** आधारः संसारगर्ते प्रपततः प्राणिपूगस्येति । कुतस्ते एवंविधा ? उच्यते, सर्वज्ञत्वात्, तदेव निरावरणतया दर्शयितुमाह - **अप्रतिहत-वरज्ञानदर्शनधरेभ्यः** अप्रतिहते-कटकुड्यादिभिरस्खलिते अविसंवादके वा, अत एव क्षायिकत्वाद्वरे-श्रेष्ठे ज्ञानदर्शने- केवलाख्ये विशेषसामान्यबोधात्मके धारयन्तीत्यप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरास्तेभ्यः । अथ कथमेतेषाम् अप्रतिहतसंवेदनत्वं सम्पन्नम् ? अत्रोच्यते, आवरणाभावाद्, एतदेवाऽऽह - **व्यावृत्तछद्मभ्यः** व्यावृत्तं-निवृत्तम् अपगतं छद्म-शठत्वमावरणं वा येषां ते तथा तेभ्यः । माया-आवरणयोश्चाभावो रागादिजयाज्जातोऽमीषामित्यत आह-**जिनेभ्यः** जयन्ति - निराकुर्वन्ति रागद्वेषादिरूपानरीनिति जिनास्तेभ्यः। रागादिजयश्चामीषां तज्जयोपायज्ञानपूर्वक एव भवतीत्येतदाह - **ज्ञायकेभ्यः** ज्ञा(जा)नन्ति छाद्मस्थिकज्ञान-चतुष्टयेनेति ज्ञायकास्तेभ्यः यद्वा जापकेभ्यः तत्रान्यैरपि भव्यसत्त्वै रागादीन् जापयन्ति सदुपदेशादिति जापकाः । अनन्तरं तेषां स्वार्थसम्पदुपाय उक्तः, साम्प्रतं स्वार्थसम्पत्तिपूर्वकपरार्थसम्पादकत्वं विशेषण-षट्केनाऽऽह - **तीर्णेभ्यः** तीर्णा इव तीर्णाः संसारसागरमिति गम्यते ज्ञानादिपोतेनेति तीर्णास्तेभ्यः । तथा तारयन्त्यन्यानप्युपदेशवर्तिन इति तारकास्तेभ्यः । **बुद्धेभ्यः** अज्ञाननिद्राप्रसुप्ते जगति परोपदेशं विनापि स्वसंविदितज्ञानेन जीवादितत्त्वं बुद्धवन्तो बुद्धास्तेभ्यः । **बोधकेभ्यः** जीवादितत्त्वमन्यानपि बोधयन्तीति बोधकास्तेभ्यः । **मुक्तेभ्यः** बाह्याभ्यन्तरग्रन्थबन्धनात्कर्मबन्धनाद्वा मुक्ताः कृतकृत्यास्तेभ्यः । **मोचकेभ्यः** परानपि तस्मान्मोचयितारो मोचकास्तेभ्यः । एतावन्ति विशेषणानि भवावस्थामाश्रित्योक्तानि । अथ सिद्धावस्थामाश्रित्योच्यन्ते - **सर्वज्ञेभ्यः** सर्वं-धर्मास्तिकायादिपदार्थजातं जानन्ति स्वरूपतस्ते सर्वज्ञास्तेभ्यः। **सर्वदर्शिभ्यः** सर्वं पूर्वोक्तमेव पश्यन्तीति सर्वदर्शिनस्तेभ्यः । तत्र जीवस्वाभाव्याद्विशेषप्रधानमुपसर्जनीकृत-

सामान्यमर्थग्रहणं ज्ञानं सामान्यप्रधानमुपसर्जनीकृतविशेषमर्थग्रहणं च दर्शनम् । ततश्च सर्वस्य वस्तुस्तोमस्य विशेषरूपतया ज्ञायकत्वात्सर्वज्ञास्तेभ्यः, सामान्यरूपतया पुनः सर्वं पश्यन्तीति सर्वदर्शिनस्तेभ्यः, न तु मुक्तावस्थायां वैशेषिकपुरुषवद्बुद्ध्यादिगुणोच्छेदेन सम्पन्नजडत्वाः । अत्र च *सव्वाओ लद्धीओ सागारोवओगोवउत्तस्स उववज्जंति, नो अणागारोवओगोवउत्तस्स उववज्जंति* इत्यागमादुत्पद्यते, तत उत्पत्तिक्रमेणैव केवलिनां प्रथमसमये ज्ञानं ततो द्वितीयसमये दर्शनमिति प्रथमं सर्वज्ञेभ्य इति विशेषणं ततः सर्वदर्शिभ्य इति, छद्मस्थानां तु प्रथमं दर्शनं ततो ज्ञानमिति क्रमः । तथा '**सिवमयल**'मित्यादि **शिवं** सर्वोपद्रवरहितत्वात्, **अचलं** स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाव्यपोहात्, **अरुजम्** अविद्यमानरोगं शरीरमनसोरभावात्, **अनन्तम्** अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वात्, **अक्षय**मनाशंसाद्यपर्यवसितत्वात् अक्षतं वा परिपूर्णत्वात्, **अव्याबाधं** परेषामपीडाकारित्वात्, **अपुनरावृत्ति** अविद्यमानपुनर्भवावतारं तस्य बीजभूतकर्माभावात् । सिद्ध्यन्ति-निष्ठितार्था भवन्ति यस्यां प्राणिनः सा सिद्धिर्लोकान्तक्षेत्रलक्षणा, सा चासौ गम्यमानत्वाद्गतिश्च सिद्धिगतिः, सैव नामधेयं-नाम यस्य त**त्सिद्धिगतिनामधेयम्** । तिष्ठन्त्यस्मिन्निति **स्थानं**, व्यवहारतः-सिद्धिक्षेत्रं निश्चयतो-यथावस्थितं स्वस्वरूपं स्थानस्थानिनोरभेदोपचारात् । सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं तत्सम्प्राप्ताः सम्यगशेष-कर्मविच्युत्या प्राप्तास्तेभ्यः । जीवस्वरूपविशेषणान्यपि लोकाग्रे उपचारादेवावसेयानि । आद्यन्तकृतो नमस्कारो मध्यव्यापीति उभयकोटिगृहीतमणिवत्, अतः पर्यन्ते पुनर्नमस्कारमाह - '**नमो जिणाणं जियभयाणं**' ति **नमो जिनेभ्यो** रागद्वेषादिभावरिपुजेतृभ्यः **जितभयेभ्यो** भवप्रपञ्चनिवृत्तेः क्षपितभयेभ्यः । न चात्र पौनरुक्त्यं दोषाय -

*सज्झायझाणतवोसहेसु उवएसथुइपयाणेसु ।*
*संतगुणकित्तणेसु य न हुंति पुणरुत्तदोसा उ ॥ [आ. नि. 1506]* इति वचनात् ।

इत्येवं सामान्येन सर्वभावार्हतां गुणोत्कीर्तनं विधाय पुनरधिकृतं वीरजिनं स्तौति - '**नमुत्थु ण**'मित्यादि **श्रमणस्य** महातपसो, **भगवतः** समग्रैश्वर्यादियुक्तस्य, **महावीरस्य** दिव्याद्युपसर्गेष्वविचलितसत्त्व-तया महान्तमपि पर्वतं मेरुमीरयति स्मेति वा देवैर्महावीर इति प्रतिष्ठितनाम्नः, **आदिकरस्य** प्रथमतया श्रुतधर्मकरणशीलस्य **चरमतीर्थकरस्य पूर्वतीर्थकरनिर्दिष्टस्य**, **यावत्क**रणात् सयंसंबुद्धस्सेत्यादि सिद्धिगइनामधेयं ठाणमित्येतदन्तं दृश्यम् । ननु महावीरगुणानां तस्मिन्नवसरेऽविद्यमानत्वादनर्थकता तद्गुणकथनस्य, वन्ध्यासुतसौकुमार्यशशशृङ्गवक्रतागगनकुसुमसौरभवत् इति चेत्? मैवं, दृष्टान्तवैषम्यमेवात्र दूषणं महावीरजीवस्य गुणाधारभावित्वात् वन्ध्यासुतसौकुमार्यादीनां चाश्रयासिद्धत्वात् । न च तस्मिन्नवसरे न तस्मिंस्तथाविधा गुणाः सन्तीति वाच्यम्, भावित्वात्तस्मिन् तथाविधगुणानां भव्यद्रव्यतीर्थकरत्वाच्चास्य असत्स्वपि वर्तमानकाले गुणेषु भावितथाविधवस्तूनां तत्तद्भावव्यपदेशः यथा *अयं घयकुंभे भविस्सइ अयं महुकुंभे भविस्सइ [अनु. सू. 18]* इति । अतो युक्तमेवास्यापि तीर्थकरगुणवर्णनं वन्दनं च भावतीर्थकरस्येवेति नानर्थकताशङ्कापिशाच्यवकाशः । एवं च सत्यनुयोगद्वारोक्तं निक्षेपचतुष्टयं परमार्थतो भावनिक्षेपाराधनतुल्यफलं प्रमाणं भवति, परं यत्तु मन्यते कैश्चित् यथा भावत एवार्थसिद्धिर्न नामादिभ्यः, ते

च शब्दनयवादिनो भवन्तीति, तथा च तेषां वाग्विलासः - नामस्थापनाद्रव्यरूपाश्च नेन्द्रास्तत्कार्याकरणात् खपुष्पवदिति चेन्नामतोऽप्यर्थसिद्धिस्तदा खपुष्पतोऽपि मकरन्दरसलुब्धालिकुलस्य तृप्तिर्भवेदाकाशकुसुम इति नाम्नस्तत्र विद्यमानत्वात्, स्थापनापि चेत्कार्यकरणसमर्था तदा काष्ठगरुडेनाप्युल्लङ्घ्यते गगनमण्डलम्, द्रव्यमपि चेत्कार्यकरणक्षमं तदा चक्रवर्तीन्द्रियायतनमपि कुर्याद्भूवलयपरिरक्षणम् अथवा जातमात्रोऽपि चक्री चतुःषष्टिसहस्रयुवतीजनेन सह कुर्यात्कामकेलिं कुर्याद्वा बालोऽपि सन्नास्थानस्थितो जनानां नीतिव्यवहारम्, न चैवं दृश्यते नामादीनामुक्तकार्यकरणसामर्थ्यं ततो नैभ्योऽर्थसिद्धिः, भाव एव सर्वत्रार्थसिद्धौ कारणम् इत्यत्र प्रतिविधीयते, नो(ननु) नाम नार्थसिद्धिकारणं तदा देवदत्तेन सह प्रयोजने समुत्पन्ने न तन्नाम ग्राह्यं न तन्मुखाद्याकारोपलक्षणमपि विधेयं न तच्छरीरसविधेऽपि गन्तव्यं यतो न भवन्मते तेभ्योऽर्थसिद्धिः किञ्च गुरुवन्दनश्रद्धया न भूमिमस्तकस्पर्शनमपि विधेयं न तत्र भावगुरवो विद्यन्ते न च तत्र वन्दनावग्रहोऽपि मार्गणीयो गुरूणामेव तत्रासत्त्वात् अवग्रहस्य चान्यत्र विवक्षितस्वरूपत्वात्, गृहवासे निवसतोऽपि तीर्थकरस्य तीर्थकरत्वमित्यपि न प्रमाणीकार्यं तद्गुणानां तदाऽसत्त्वात् । ततो निर्मूलैवेयं नामाद्युत्थापनकदाशङ्केति । ये च मन्यन्ते नाम्नैवार्थसिद्धिर्न स्थापनया, एवमेकैकपरिहारेणैकैकत एवार्थसिद्धिस्तदपि विचार्यमाणं न स्थेयमास्तिघ्नुते यतो वस्तुमात्रस्यापि चतूरूपव्यवस्थितत्वात्, तथा चोक्तं श्रीमदनुयोगद्वारे -

*जत्थ य जं जाणिज्जा निक्खेवं निक्खिवे निरवसेसं ।*
*जत्थ य न विजाणिज्जा चउक्कयं निक्खिवे तत्थ ॥ [अनु. सू. 8]*

तथा चान्यत्राप्युक्तम् -

*यद्व्याख्या वस्तुतत्त्वस्य बोधायैव विधीयते ॥*
*तच्च नामादिरूपेण चतूरूपं व्यवस्थितम् ।*
*नामाद्येकान्तवादानामप्रयुक्तत्वेन संस्थितेः ॥*

तथाहि नामनय आह-

*यतो नाम विना नास्ति वस्तुनो ग्रहणं ततः ।*
*नामैव तद् यथा कुम्भो मृदेवान्यो न वस्तुतः ॥*

तथाहि - यत्प्रतीतावेव यस्य प्रतीतिस्तदेव तत्स्वरूपं यथा मृत्प्रतीतौ प्रतीयमानस्य घटस्य मृदेव रूपं, नामप्रतीतावेव च प्रतीयते वस्तु, न च विना नाम निर्विकल्पकविज्ञानेन च वस्तुप्रतीतिरस्तीति हेतोरसिद्धता सर्वसंविदां वाग्रूपत्वात्, तथा च भर्तृहरिः -

*वाग्रूपता चेद्बोधस्य व्युत्क्रामेतेह शाश्वती ।*
*तत्प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी ॥ [वाक्य. 1-125]*

यदि च नामरूपमेव वस्तु न स्यात् ततश्च तदवगतावपि वस्तुनि संशयादीनामन्यतमदेव स्यात्, तथा च पूज्याः -

*संसयविवज्जओ वाऽणज्झवसाओवि*[1] *वा जहिच्छाए ।*
*होज्जऽत्थे पडिवत्ती न वत्थुधम्मो जया णामं ॥ [वि.भा. 62]*

स्थापनानय आह - स्थापनेत्याकारः, ततश्च

*प्रमाणमिदमेवार्थस्याऽऽकारमयतां प्रति ।*
*नामादि न विनाऽऽकारं यतः केनापि वेद्यते ॥*

तथाहि- नाम्नोऽर्थान्तरे वर्तयितुं शक्यत्वान्न तदुल्लेखेऽप्याकारावभासमन्तरेण नियतनीलाद्यर्थग्रहणमित्याकारग्रहण एव ग्रहात् सिद्धं सर्वस्याऽऽकारमयत्वं, ततो ज्ञानज्ञेयाभिधानाभिधेयादि सकलमाकाराऽऽरूषितमेव संव्यवहारावतारि तद्विकलस्य खपुष्पस्येवासत्त्वात्, उक्तं च पूज्यैः -

*आगारो च्चिय मइसद्दवत्थुकिरियाफलाभिहाणाइं ।*
*आगारमयं सव्वं जमणागारं तयं नत्थि ॥ [वि.भा. 64]*

*न पराणुमयं वत्थुं आगाराभावओ खपुप्फं व ।*
*उवलंभव्ववहाराभावाओ नाणगारं वा*[2] *॥ [वि. भा. 65]*

द्रव्यनय आह -

*यथा नामादि नाऽऽकारं विना संवेद्यते तथा ।*
*नाऽऽकारोऽपि विना द्रव्यं सर्वं द्रव्यात्मकं ततः ॥*

तथाहि - द्रव्यमेव निखिलस्थासकोशकुशूलकुटकपालाद्याकारानुयायि वस्तु सत्त्वात् तस्यैव, तत्तदाकारानुयायिनः सद्बोधविषयत्वात् स्थासकोशाद्याकाराणां कदाचिदनुपलम्भात्, तच्चोत्पादादिसकलविकारविरहितं तथातथाविर्भावतिरोभावमात्रान्वितं सम्मूर्च्छितसर्वभेदनिर्भेदबीजं द्रव्यमगृहीततरङ्गादिप्रभेदस्तिमितसरः-सलिलवत्, आह च -

*दव्वपरिणामा*[3] *मोत्तुं आगारदरिसणं किं तं ।*
*उप्पायव्वयरहितं दव्वं चिय निव्वियारं ति*[4] *॥ [वि.भा.66]*
*आविब्भावतिरोभावमेत्तपरिणामकारणमचिंतं ।*
*निच्चं बहुरूवं पि य नडो व्व वेसंतरावण्णो ॥ [वि.भा. 67]*

भावनय आह -

*सम्यग्विवेच्यमानोऽत्र भाव एवावशिष्यते ।*
*पूर्वापरविविक्तस्य यतस्तस्यैव दर्शनम् ॥*

---

1 '°ओऽहवा°' इति वि.भा. मुद्रिते ।

2 'रं च ॥' इति वि.भा. मुद्रिते ।

3 '°णाममित्तं मोत्तूणाऽऽगा°' इति वि.भा. मुद्रिते ।

4 '°रं तं ॥' इति वि.भा. मुद्रिते ।

तथाहि - भावः पर्यायः, तदात्मकमेव च द्रव्यं, तद्व्यतिरिक्तमूर्तिकं हि तत् दृश्यमदृश्यं वा ? यदि दृश्यं, नास्ति तद्व्यतिरेकेणानुपलभ्यमानत्वात् खरविषाणवत्, न हि वलितमीलितपरीकृतत्रुटितसङ्घटितादिविचित्र-भवनबहिर्भूतमिह सूत्रादि द्रव्यमुपलभ्यमस्ति; अदृश्यमपि नास्ति तत् साधकप्रमाणाभावात् षष्ठभूतवत् । ततः प्रतिसमयमुदयव्ययात्मकं स्वयं भवनमेव भावाख्यमस्ति । उक्तं च -

*भावत्थंतरभूयं किं दव्वं णाम? भावपच्चायं[1] ।*
*भवणं पइक्खणं चिय भावावत्ती विवत्ती य ॥ [वि.भा. 69 ]*

परमार्थस्त्वयम् -

*संविन्निष्टैव सर्वापि विषयादिव्यवस्थितिः ।*
*संवेदनं च नामादिविकलं नानुभूयते ॥*

तथाहि -

*घटोऽयमिति नामैतत् पृथुबुध्नादिनाऽऽकृतिः ।*
*मृद्द्रव्यं भवनं भावो घटे दृष्टं चतुष्टयम् ॥*

*तत्रापि नाम नाकारमाकारो नाम नो विना ।*
*तौ विना नापि चान्योन्यमुत्तरावपि संस्थितौ ॥*

*मयूराण्डरसे यद्वद्वर्णा नीलादयः स्थिताः ।*
*सर्वेऽप्यन्योन्यमुन्मिश्राः तद्वन्नामादयो घटे ॥*

इत्थं चैतत्परस्परसव्यपेक्षतयैवाशेषनयानां सम्यग्नयत्वात्, इतरथोत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सदि*[त.5-29]*ति प्रत्यक्षादिप्रमाणप्रतीतसल्लक्षणानुपपत्तेश्च । किञ्च शब्दादपि घटादेर्नामादिभेदरूपेणैव घटाद्यर्थे बुद्धिपरिणामो जायते इत्यतोऽपि च नामादिचतूरूपतैव सर्वस्य वस्तुनः । उक्तं च -

*नामादिभेयसद्दत्थबुद्धिपरिणामभावओ नियय ।*
*जं वत्थु[2] अत्थि लोए चउपज्जायं तयं सव्वं ॥ [वि. भा. 73]*

ननु समुदिता एवात्र नामादयः फलदा उक्ताः, कथं तर्हि प्रतिमाद्याराधनतोऽर्थसिद्धिरिति चेत् ? उच्यते, प्रतिमाराधनमपि परमार्थतो भावबुद्ध्यैवाऽऽराध्यमानं फलदं, न तु भावशून्यम् । भावश्चाऽऽराधनदशायां कदाचित् भवत्यपि न भवत्यपि च । यदा भवति तदा तु स भाव एव, यदा तु न भवति तदा तत्प्रतिमाप्रतिपत्तितस्तस्यैव भवेत्प्रतिपत्तिः । उक्तं चाऽऽगमे भगवत्पूजावसरे यथा *धूवं दाऊण जिणवराण*मित्यत्र 'जिनवरेभ्यो धूपं दत्त्वा' जिनवरा एवावसातव्याः । तत्पूजया भावजिना एव पूजिता इति नात्र शङ्कावकाशः । एवं च सति द्रव्यतीर्थकराराधनमपि युक्तमेवेत्याराधितो भगवान्महावीरः

1 '°व एवायं' इति वि.भा. मुद्रिते ।

2 '°त्थुमत्थि°' इति वि.भा. मुद्रिते ।

शक्रेण । आराध्यश्च गुणवानेवातस्तद्गुणानामपि भावमङ्गीकृत्य वर्णनं विदधे सौधर्मेन्द्रेण । नामापि च तत्तद्गुणविशिष्टानामाराध्यत एव तदतिरिक्तस्य वस्तुनोऽभावादिति तु प्रपञ्चितमेवेति कृतं प्रसङ्गेन ।

प्रकृतमनुस्रियते '**संपाविउकामस्स**'त्ति यद्यपि भगवतः सिद्धिगतौ कामो नास्ति *मोक्षे भवे च सर्वत्र निःस्पृहो मुनिसत्तम* इति वचनात् तथापि तदनुरूपचेष्टनात्सम्प्राप्तुकाम इव सम्प्राप्तुकामस्तत्रासम्प्राप्त इत्यर्थ-स्तस्य । '**तत्थ गयं**'ति **तत्र** ब्राह्मणकुण्डग्रामे देवानन्दाकुक्षौ स्थितम् । '**इह गए**'त्ति **अत्र** सौधर्मकल्पे स्थितोऽहं **भगवन्तं वन्दे** । कस्मादेवमित्यत आह - '**पासइ मे**'त्ति **पश्यति मां भगवांस्तत्र गत** इह गतं ज्ञानेनेति शेषः, इति हेतोः '**वंदइ**'त्ति पूर्वोक्तस्तुत्या स्तौति **नमस्यति** शिरोनमनेन प्रणमति । 'पासउ'त्ति पाठे पश्यतु मां भगवांस्तत्र गत इह गतं ज्ञानेनेति शेषः, इति स्तौति नमस्यति कायेन मनसा च । **वन्दित्वा नमस्यित्वा** च भूयः सिंहासने वरे '**पुरत्थाभिमुहे**' **पूर्वाभिमुखः सन्निषण्ण** उपविष्टः ।

**[सू.116] तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-न खलु [1]एयं भूयं न एयं भव्वं न एयं भविस्सं, जं णं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छकुलेसु वा दरिद्दकुलेसु वा किविणकुलेसु वा भिक्खायकुलेसु वा माहणकुलेसु वा आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा, एवं खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइण्णकुलेसु वा इक्खागकुलेसु वा खत्तियकुलेसु वा हरिवंसकुलेसु वा अन्नतरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजातिकुलवंसेसु आयाइंसु वा ३ ।**

[ज.116] '**अयमेयारूवे**'इत्यादि **अयमेतद्रूपः** सङ्कल्पः समुदपद्यत, कथम्भूत? इत्याह - **आध्यात्मिकः** आत्मन्यधि अध्यात्मं तत्र भव आध्यात्मिक आत्मविषय इति भावः । सङ्कल्पश्च द्विधा भवति, कश्चित् ध्यानात्मकोऽपरश्चिन्तात्मकस्तत्रायं चिन्तात्मक इति प्रतिपादनार्थमाह - **चिन्तितः**, चिन्ता सञ्जाताऽ-स्येति चिन्तितः चिन्तात्मक इति भावः । सोऽपि कश्चिदभिलाषात्मको भवति कश्चिदन्यथापि, तत्रायमभिलाषात्मकस्तथा चाह - **प्रार्थितः**, प्रार्थनं प्रार्थो णिजन्तत्वादल्प्रत्ययः, प्रार्थः सञ्जातोऽस्येति प्रार्थितः अभिलाषात्मक इति भावः ।

किंस्वरूप ? इत्याह- '**न खल्वि**'त्यादि व्याख्यातार्थम् । '**अन्तकुलेसु चे**'त्यादि **अन्त्यकुलेषु** जघन्यकुलेषु अन्त्यवर्णत्वात् शुद्रकुलेषु वा, **प्रान्तकुलेष्**वधमाधमकुलेषु, **तुच्छकुलेषु** अल्पकुटुम्बेष्वल्पर्द्धिकेषु, **दरिद्रकुलेषु** सर्वथापि निर्धनकुलेषु, **कृपणकुलेष्**वदातृकुलेषु किराटादिषु, **भिक्षुककुलेषु** भिक्षामात्रोपजीविकुलेषु तालाचरादिषु, **ब्राह्मणकुलेषु** प्रतीतेषु । '**आयाइंसु वा ३**' आयातिधातुरागमे जन्मनि प्रयुज्यते, तत **आयासिषु**र्जज्ञिरे **आयान्ति** जायन्ते '**आयाइस्संति**' जनिष्यन्ते । अर्हदादयः शब्दाः प्रतीताः । वासुदेवग्रहणात् प्रतिवासुदेवा अपि द्रष्टव्याः सदृशर्द्धिकत्वान्नोपात्ताः पृथक्त्वेनेति । '**उग्गकुलेसु वा**'इत्यादि आदिदेवेन आरक्षकत्वे ये नियुक्तास्तेषां कुलेषु, '**भोगकुलेसु वा**'भोगा ये तेनैव गुरुत्वेन व्यवहृताः तेषां कुलेषु, राजन्या ये तेनैव वयस्यतयाऽवस्थापिताः तेषां कुलेषु, इक्ष्वाकव आदिदेववंशजाः तेषां कुलेषु, क्षत्रियाश्चातुर्वर्ण्ये

1 'खलु' नास्ति मुद्रिते ।

द्वितीयवर्णभूताः तेषां कुलेषु अथवा क्षत्रियास्तेनैव शेषप्रकृतितया स्थापिता राजकुलीनास्तेषां कुलेषु, '**हरिवंसकुलेसु वा**'इति हरिवर्षक्षेत्रानीतयुगलसमुद्भवसन्ततिषु । **अन्यतरेषु** ज्ञातेत्यादि ज्ञातनागभटमल्लकि-लेच्छकिकौरव्यादिकुलेषु, तत्र ज्ञाताः- श्रीऋषभस्वामिवंशजाः इक्ष्वाकुवंशजा एव, नागा वा-नागवंशजाः, भटाः-शौर्यवन्तो योद्धाः, मल्लकिनो लेच्छकिनश्च राजविशेषास्तेभ्यो विशिष्टतराः, कौरव्याः- कुरुवंशजाः । '**विसुद्धजाइकुलवंसेसु**' जातिर्मातृपक्षः कुलं- पितृसमुत्थम्, विशुद्धे जातिकुले येषु तथाविधा ये वंशाः पुरुषान्वयास्तेषु ।

**[सू.117] अत्थि पुण एसे वि भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं ओसप्पिणीउस्सप्पिणीहिं वीइक्कंताहिं समुप्पज्जति, नामगोत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स अणिज्जिण्णस्स उदएणं जन्नं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छ० दरिद्द० भिक्खाग० किविणकुलेसु वा आयाइंसु वा ३, कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कमिंसु वा वक्कमंति वा वक्कमिस्संति वा, नो चेव णं जोणीजम्मणनिक्खमणेणं निक्खमिंसु वा निक्खमंति वा निक्खमिस्संति वा ।**

[ज.117] '**अत्थि पुणे**'त्यादि **अस्ति पुनरयमपि भावो** भवितव्यतार्थः पदार्थो जातु **समुत्पद्यते** लोके आश्चर्यभूतः- चमत्कारकारी कदाचिद्भवनात्, यत उक्तम् - *दस अच्छेरगा पन्नत्ता, तं जहा -*

*उवसग्ग१ गब्भहरणं२ इत्थीतित्थं३ अभाविया परिसा४ ।*
*कन्हस्स अवरकंका५ ओतरणं चंदसूराणं६ ॥*

*हरिवंसकुलुप्पत्ती७ चमरुप्पाओ य८ अट्ठसयसिद्धा९ ।*
*अस्संजयाण पूआ१० दस वि अणंतेण कालेण ॥ [स्था. 10-777]*

अतोऽयमप्येषां मध्ये गर्भापहारलक्षणो भवत्याश्चर्यकारी कादाचित्कत्वादेतस्य । '**नामगोत्तस्स**'त्ति नाम्नो-नामकर्मणो गोत्रस्य-गोत्रकर्मणो वा अथवा नाम्ना-सञ्ज्ञया गोत्रं-नीचैर्गोत्राख्यं तस्य, '**अक्खीणस्स**'त्ति स्थितेरक्षयात् '**अवेइयस्स**'त्ति **अवेदितस्य** तद्रसस्याननुभूतत्वात्, '**अणिजिण्णस्स**'त्ति **अनिर्जीर्णस्य** तत्प्रदेशानां जीवप्रदेशेभ्योऽपरिशाटनात् । '**नो चेव णं**'ति **नो** नैव, **चेवा**वधारणे, **णं** वाक्यालङ्कारे योन्या जन्मार्थं निःक्रमणेन ।

**[सू.118] तं जीयमेयं तीयपचुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो अंतकुलेहिंतो वा पंत० तुच्छ०दरिद्द०भिक्खाग०किविणकुलेहिंतो वा तहप्पगारेसु उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइन्न० नाय०खत्तिय०हरिवंस० अण्णतरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजातिकुलवंसेसु वा साहरावित्तए । तं सेयं खलु मम वि समणं भगवं महावीरं चरिमतित्थयरं पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावित्तए, जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए**

**गब्भे तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, एवं संपेहित्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणियाहिवइं देवं सद्दावेइ, हरिणेगमेसिं०देवं सद्दावित्ता एवं वयासी ।**

[ज.118] '**जीतमेयं**'ति **जीतम्** आचरितं कल्प इत्येकार्थाः । '**तीयपच्चुपण्णे**'त्यादि अतीतवर्तमाना-नागतानां तीयत्ति वा *अतीतादा*वित्यनेन अकारलोपे तीतमिति सिद्धं ।

'**नायाणं खत्तियाणं**'ति ज्ञाता- इश्वाकुवंशविशेषाः । '**तिसलाए खत्तियाणीए**' गर्भः- पुत्रिकालक्षणः । '**साहरावित्तए**'त्ति **सङ्क्रमयितुम्** । '**हरिणेगमेसिं**'ति हरेरिन्द्रस्य नेगमेषी आदेशप्रतीच्छक इति व्युत्पत्त्या अन्वर्थनामानं **हरिणेगमेषिं** नाम **पदात्यनीकाधिपतिदेवं** '**सद्दावेइ**'त्ति **शब्दापयति** आकारयति, हरेरिन्द्रस्य सम्बन्धी नैगमेषीनामा देव इति केचित् ।

**[सू.119] एवं खलु देवाणुप्पिया ! न एयं भूयं न एयं भव्वं न एयं भविस्सं, जन्नं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंत०पंत० किविण० दरिद्द० तुच्छ० भिक्खागकुलेसु वा आयाइंसु वा ३, एवं खलु अरहंता वा चक्क०बल०वासुदेवा वा उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइन्न०नाय०खत्तिय० इक्खाग० हरिवंसकुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजाइकुलवंसेसु आयाइंसु वा ३ ।**

**[सू.120] अत्थि पुण एस भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं ओसप्पिणिउस्सप्पिणीहिं विइक्कंताहिं समुप्पज्जति, नामगोत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स अणिज्जिन्नस्स उदएणं जन्नं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छकुलेसु वा किविणकुलेसु वा दरिद्द० भिक्खागकुलेसु वा आयाइंसु वा ३, नो चेव णं जोणीजम्मणनिक्खमणेणं निक्खमिंसु वा ३ ।**

**[सू.121] अयं च णं समणे भयवं महावीरे जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते ।**

**[सू.122] तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो वा अंत०पंत०तुच्छ०किविण०दरिद्द०वणीमग० जाव माहणकुलेहिंतो तहप्पगारेसु वा उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइन्न०नाय०खत्तिय०इक्खाग०हरिवंस०अण्णयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजातिकुलवंसेसु साहरावित्तए ।**

**[सू.123] तं गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवसगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहराहि, साहरित्ता मम एयमाणत्तियं खिप्पमेव पच्चप्पिणाहि ।**

**[सू.124] तए णं से हरिणेगमेसी पायत्ताणियाहिवई देवे सक्केणं देविंदेणं देवरन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठे जाव हयहियए करयल जाव त्ति कट्टु एवं जं देवो आणवेइ त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, वयणं पडिसुणित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता उत्तरपुरच्छिमदिसीभागं**

**अवक्कमइ, अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ, वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ । तं जहा–रयणाणं वयराणं वेरुलियाणं लोहियक्खाणं मसारगल्लाणं हंसगब्भाणं पुलयाणं सोगंधियाणं जोइरसाणं अंजणाणं अंजणपुलयाणं रययाणं जायरूवाणं सुभगाणं अंकाणं फलिहाणं रिट्ठाणं अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परियादियति ।**

**[सू.125] परियादित्ता दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ, वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वइ, उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए पसत्थाए[1] तुरियाए चवलाए चंडाए छेयाए[2] जवणाए उद्धुयाए सिग्घाए दिव्वाए देवगईए वीयीवयमाणे वीतीवयमाणे तिरियमसंखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झं मज्झेणं जेणेव जंबुद्दीवे दीवे जेणेव भारहे वासे जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव उसभदत्तस्स माहणस्स गिहे जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता आलोए समणस्स भगवओ महावीरस्स पणामं करेइ, पणामं करित्ता देवाणंदाए माहणीए सपरिजणाए ओसोवणिं दलयइ, ओसोवणिं दलइत्ता असुहे पोग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुहे पोग्गले पक्खिवइ, सुहे पोग्गले पक्खिवित्ता 'अणुजाणउ मे भगवं !'ति कट्टु समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं करयलसंपुडेणं गिण्हइ, समणं भगवं महावीरं गिण्हित्ता जेणेव खत्तियकुंडग्गामे नयरे, जेणेव सिद्धत्थस्स खत्तियस्स गिहे, जेणेव तिसला खत्तियाणी तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तिसलाए खत्तियाणीए सपरिजणाए ओसोवणिं दलयइ, ओसोवणिं दलइत्ता असुहे पोग्गले अवहरइ, असुहे पुग्गले अवहरित्ता सुहे पोग्गले पक्खिवइ, सुहे पुग्गले पक्खिवित्ता समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ। जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ, साहरित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए ।**

[ज.119-125] '**एवं खल्वि**'ति वाक्योपक्रमे '**ममेयमाणत्तियं**' **ममैनामाज्ञप्तिमाज्ञां** चरितार्थीकृत्याऽऽगत्य निवेदयेत्यर्थः । '**सक्केण**'मित्यादि **शक्रेण देवेन्द्रेण देवराज्ञा एवमुक्तः सन् हट्ठे** पूर्ववत् । **यावत्**करणात् तुट्ठे चित्तमाणंदिए इत्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः । '**करयल**'त्ति **यावत्**करणात् परिग्गहियमित्यादिपदानि द्रष्टव्यानि। व्याख्या प्राग्वत् । '**एव**'मिति यथा यूयं वदथ **यत् देवः** स्वामी करणतया ममाऽऽ**ज्ञापयति** आदेशं प्रयच्छति इत्युक्त्वा '**आणाए**'इत्यादि **आज्ञाया** आदेशस्य **वचनं विनयेन** प्रतिशृणोति कर्तुमभ्युपगच्छति अथवा आज्ञायति तदाज्ञां प्रमाणीकृत्य विनयेनाञ्जलिकरणादिना वचनमिन्द्रादेशमिति । '**अंतिआओ**'त्ति समीपात्**प्रतिनिःक्रामति** । '**उत्तरपुरच्छिमं**'ति **उत्तरपौरस्त्यम्** उत्तरपूर्वारूपं दिग्भागमीशानकोणमित्यर्थः '**अवक्कमइ**'त्ति **अपक्रामति** व्रजति । '**वेउव्वियसमुग्घाएणं**'ति **वैक्रियसमुद्घातेन** वैक्रियकरणाय प्रयत्नविशेषेण '**समोहणइ**'त्ति **समवहन्यते** समवहतो भवतीति तात्पर्यम् । समवहतश्चाऽऽत्मप्रदेशान् दूरतो विक्षिपति, तथा चाह - '**संखिज्जाइं जोयणाइं**'ति दण्ड इव दण्ड ऊर्ध्व-अधआयतः शरीरबाहल्यो जीवप्रदेशसमूहस्तं शरीराद्बहिः **सङ्ख्येयानि योजनानि** याव**न्निसृजति** निष्काशयति, निसृज्य तथाविधान्

1 'पसत्थाए' नास्ति Kh-मुद्रिते ।

2 'छेयाए' नास्ति Kh- मुद्रिते ।

पुद्गलान् आदत्ते । एतदेव दर्शयति - **तद्यथा रत्नानां** कर्केतनादीनां१ **वज्राणां**२ **वैडूर्याणां**३ **लोहिताक्षाणां**४ **मसारगल्लानां**५ **हंसगर्भाणां**६ **पुलकानां**७ **ज्योतीरसानाम्**८ **अञ्जनानाम्**९ **अञ्जनपुलकानां**१० **रजतानां**११ **जातरूपाणां**१२ **सुभगानाम्**१३ **अङ्कानां**१४ **स्फटिकानां** १५ **रिष्टानां**१६ योग्यान् **यथाबादरान्** असारान् **पुद्गलान्** परिशातयति, **यथासूक्ष्मान्** सारान् **पुद्गलान् पर्यादत्ते** । **पर्यादाय** च चिकीर्षितरूपनिर्माणार्थं **द्वितीयमपि** वारं **वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्यते समवहन्य** च ईप्सित**मुत्तरवैक्रियं रूपं** करोति । ननु रत्नादीनां प्रायोग्याः पुद्गला औदारिका उत्तरवैक्रियरूपयोग्याश्च पुद्गला ग्राह्याः वैक्रियास्ततः कथमेवमुक्तम् इति चेत् ? उच्यते, इह रत्नादिग्रहणं सारतामात्रप्रतिपादनार्थं, न तु रत्नादीनामेव परिग्रहार्थं, ततो रत्नादीनामिवेति द्रष्टव्यमिति न कश्चिद्दोषः । तत एव**मुत्तरवैक्रियाणि रूपाणि** कृत्वा, अन्ये त्वाहुरौदारिका अपि ते गृहीताः सन्तो वैक्रियतया परिणमन्तीति ।

'**ताए**'त्ति **तया** देवजनप्रसिद्धया **उत्कृष्टया** प्रशस्तविहायोगतिनामोदयात् **प्रशस्तया** शीघ्रसञ्चरणात्, **त्वरितया** त्वरा सञ्जाता अस्या इति त्वरिता तया, प्रदेशान्तराक्रमणमिति, चपलेव विद्युदिव चपला तया, क्रोधाविष्टस्यैव श्रमासंवेदनात् चण्डेव चण्डा तया, '**छेयाए**'त्ति **छेकया** अपायपरिहारनिपुणया, **जवनया** परमोत्कृष्टवेगपरिणामोपेतया **उद्धूतया** वातोद्धूतस्य दिगन्तव्यापिनो रजस इव गतिर्या सा उद्धूता तया, अन्ये त्वाहुरुद्धूतया दर्पातिशयेन, **शीघ्रया** निरन्तरं शीघ्रत्वगुणयोगात्, **दिव्यया** देवलोकोचितया **देवगत्या** '**वीईवयमाणे**'त्ति **व्यतिव्रजन् व्यतिव्रजन्** '**तिरियमसंखिज्जाणं**'ति **तिर्यगसङ्ख्येयानां द्वीपसमुद्राणां मध्यंमध्येने**त्यर्थः, गृहंगृहेण मध्यंमध्येन पदंपदेन सुखंसुखेनेत्यादयः शब्दाश्चिरन्तनव्याकरणेन साधवः प्रतिपादिता इति नायमप्रयोगः । शेषं व्याख्यातार्थम् ।

'**आलोए**'त्ति **आलोके** दर्शनमात्रे **प्रणामं** पञ्चाङ्गप्रणिपातरूपं **करोति**, अञ्जलिना शिरोनमनरूपमित्येके। '**सपरिजणाए**' त्ति सह परिजनेन-स्वपरिकरलक्षणेन वर्तते या सा सपरिजना तस्याः **सपरिजनायाः** । '**ओसोवणिं**'ति **अवस्वापिनीं** दिव्यानुभावरूपां निद्रां **दलयति** । **'असुहे'** त्ति **अशुभान् पुद्गलान्** शरीरस्थितान् विण्मूत्रादीन् **अपहरति** दूरत उत्सारयति, **शुभां**श्चापहृतपुद्गलस्थाने इति गम्यते **पुद्गलान् प्रक्षिपति** इति च तदाऽपहारावसरे वदतीति अध्याहार्यम्, किं तद् ? इत्याह - **अनुजानीध्वम्** अनुज्ञां दद्ध्वं **मे** मां भवतो गृह्णन्तमिति शेषः, हे **भगवन्** ! **इति कृत्वा** '**करयलसंपुडेणं**'ति करौ-हस्तौ तयोस्तलौ-तलिकारूपौ तावेव सम्पुटमिव सम्पुटौ-कृतसम्पुटौ शुक्तिसम्पुटवत् तेनाऽऽधारभूतेनेति **गृह्णाति** । '**अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं**'ति अव्वाबाहं ति भगवतो विशेषणं तत्पीडापरिहारात् अव्वाबाहेणं ति सुखेन संहर्तुरपि पीडाभावात् अथवा 'अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं'ति सुखं सुखेनेत्यर्थः । तथा च भगवतीसूत्रम्-

*हरी णं भंते! णेगमेसी सक्कदूए इत्थीणं गब्भं साहरमाणे किं गब्भाओ गब्भं साहरति1, गब्भाओ जोणिं साहरइ 2, जोणीओ गब्भं साहरइ 3, जोणीतो जोणिं साहरति 4 ? गोयमा ! नो गब्भाओ गब्भं साहरति1, नो गब्भाओ जोणिं साहरइ 2, परामुसिय परामुसिय अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं जोणीओ गब्भं साहरइ 3, नो जोणीओ जोणिं साहरइ 4 । पभू णं भंते ! हरिणेगमेसी सक्कदूए इत्थीगब्भं नहसिरंसि वा रोमकूवंसि वा साहरित्तए वा नीहरित्तए वा ? हंता पहू, नो चेव णं तस्स गब्भस्स किंचि आबाहं वा विबाहं वा उप्पाएज्जा छविच्छेदं पुण करेज्जा ए सुहुमं च णं साहरिज्जा वा नीहरिज्जा वा*

*[व्या. प्र. 5-4-12-13]* इति । अत्र च गर्भाद्गर्भाशयात् गर्भं- गर्भाशयान्तरं संहरति - प्रवेशयति, गर्भं- सजीवपुद्गलपिण्डम् इत्येको भङ्गः 1 । तथा गर्भाद्योनिं- गर्भनिर्गमद्वारं संहरति योन्योदरान्तरं प्रवेशयतीति द्वितीयः 2 । योनितो- योनिद्वारेण निःकाश्य गर्भं संहरति गर्भाशयं, प्रवेशयतीति तृतीयः 3 । योनितो योनिमिति चतुर्थः 4 । निर्वचनसूत्रे तु शेषनिषेधेनेति तृतीयोऽनुज्ञातः । तत्र परामृश्य परामृश्य तथाविधकरणव्यापारेण संस्पृश्य संस्पृश्य । पभू णमित्यादि तत्सामर्थ्यदर्शनसूत्रे नहसिरंसित्ति नखाग्रे, साहरित्तए त्ति प्रवेशयितुं, नीहरित्तए त्ति विभक्तिपरिणामेन नखशिरसो रोमकूपाद्वा निःकाशयितुं, अव्वाबाहम् ईषद्बाधां विबाहं विशिष्टबाधां, छविच्छेयं त्ति गर्भस्य छविच्छेदमकृत्वा नखाग्रादौ प्रवेशयितुमशक्यत्वात्, ए सुहुमं व त्ति इत्येवं लघ्विति कृतं प्रसङ्गेन । '**जामेव दिसं पाउब्भूए**'त्ति **यस्या दिशः** सकाशात्**प्रादुर्भूतः** प्रगटीभूत आगत इत्यर्थः, **तामेव दिशं प्रतिगतः** ।

**[सू.126] उक्किट्ठाए पसत्थाए[1] तुरियाए चवलाए चंडाए[2] छेयाए जवणाए उद्धुयाए सिग्घाए दिव्वाए देवगईए तिरियमसंखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झं मज्झेणं जोयणसय[3]साहस्सीएहिं विग्गहेहिं उप्पयमाणे उप्पयमाणे जेणामेव सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सक्कंसि सीहासणंसि सक्के देविंदे देवराया तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ ।**

**[सू.127] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए यावि होत्था, साहरिज्जिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिज्जमाणे वि जाणइ, साहरिए मि त्ति जाणइ ।**

[ज.126-127] **योजनशतसाहस्रिकाभिर्योजनलक्षलक्षणाभिः** '**विग्गहेहिं**' ति **वीखाभिः उत्पतन्नूर्ध्वं** गच्छन् । '**पच्चपिणइ**'त्ति **प्रत्यर्पयति** ।

**[सू.128] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोयबहुले तस्स णं आसोयबहुलस्स तेरसीपक्खेणं बासीइराइंदिएहिं विइक्कंतेहिं तेसीइमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणे हियाणुकंपएणं देवेणं हरिणेगमेसिणा सक्कवयणसंदिट्ठेणं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवसगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं कुच्छिंसि साहरिए ।**

[ज.128] '**वासाणं**'ति वर्षाकालमासानां श्रावणादीनां मध्ये आश्विनो मासः, पञ्चमः पक्षः आश्विनस्य बहुलः कृष्णस्तस्य आश्विनबहुलस्य पक्षस्य या त्रयोदशी तिथिस्तस्याः पक्षः पश्चार्धं रात्रिरिति भावः। '**अंतर**'त्ति **अन्तराले** रात्रौ वर्तमानस्य । '**हियाणुकंपएणं**'ति हितः शक्रस्य स्वस्य वाऽनुकम्पको, भगवतः

---

1 'पसत्थाए' नास्ति Kh-मुद्रिते ।

2 'चंडाए छेयाए' नास्ति मुद्रिते । 'छेयाए' नास्ति Kh प्रतौ ।

3 '°सय°' इति नास्ति Kh-मुद्रिते ।

अनुकम्पा चेह भक्तिः *आयरियअणुकंपाए गच्छो अणुकंपिओ महाभागो* त्ति वचनात् । ततश्च भक्त इत्यर्थः ।

**[सू.129] समणे भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए आवि होत्था, साहरिज्जिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिज्जमाणे वि[1] जाणइ, साहरिए मि त्ति जाणइ ।**

[ज.129] '**साहरिज्जिस्सामि**'त्ति च्यवनवत् ज्ञेयम्, नवरं '**साहरिज्जमाणे वि जाणइ**' प्रभूततरत्वात् तत्कालस्य आचाराङ्गेऽपि तथैव दर्शनात्, केषुचिदादर्शेषु 'साहरिज्जमाणे नो जाणइ' इति दृश्यतेऽपि जानातीत्येतत्तु बहुसम्मतत्वात् तस्य पुनर्यथा बहुश्रुता यथा वदन्ति तथा प्रमाणम् ।

**[सू.130] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए तं रयणिं च णं सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमे एयारूवे ओराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे तिसलाए खत्तियाणीए हडे त्ति पासित्ता णं पडिबुद्धा । तं जहा – गय उसह० गाहा ।**

**[सू.131] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए तं रयणिं च णं सा तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमियघट्ठमट्ठे विचित्त–उल्लोयचित्त[2]तले मणिरयणपणासियंधयारे बहुसमसुविभत्तभूमिभागे पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजो–वयारकलिए कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघेंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधवरगंधगंधिए गंधव–ट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोयणे उभओ उन्नये मज्झे णयगंभीरे गंगापुलिणवालुउद्दालसालिसए ओयवियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छ[3]यणे सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आयीणगरूयछूरनवणीय[4]तुल्लफासे सुगंधवरकुसुमचुण्णसयणोवयारकलिए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा ।**

[ज.130-131] '**तंसि तारिसगंसि**'त्ति यदेवं वक्ष्यमाणगुणं **तस्मिंस्तादृशके** यादृशमुपचितपुण्यस्कन्धानामुचितं '**वासघरंसि**'त्ति **वासभवने** इत्यर्थः; **अभ्यन्तरतो** भित्तिभागे **सचित्रकर्मणि** चित्रयुक्ते **बाह्यतो** '**दूमिय–घट्ठमट्ठे**'इत्यादि दूमियं-धवलितं घृष्टं-कोमलपाषाणादिना अत एव मृष्टं - मसृणं यत्तत्तथा तस्मिन् । '**विचित्त**'त्ति विचित्रमाश्चर्यकृत् उल्लोचस्य-वितानस्य चित्रं-विविधचित्रयुतं तलमधोभागो यस्मिंस्तथा, 'विचित्तउल्लोयचिल्लियतले'इति पाठे तु विचित्रो-[5]विविधचित्रयुतो हि उल्लोक-उपरिभागो यत्र, चिल्लियं-देदीप्यमानं तलमधोभागो यत्र, ततो विशेषणकर्मधारयः । '**मणिरयणपणासियंधयारे**' इति

1 '°णे नो जा°' इति Kh - मुद्रिते ।

2 '° चित्त°' इति नास्ति मुद्रिते । '°यचिल्लियत°' इति Kh ।

3 '°छन्ने सु°' इति Kh-मुद्रिते ।

4 '°यतूलफा°' इति मुद्रिते । '°यतूलतु°' इति kh ।

5 '°विधवि°' इति B ।

मणयश्चन्द्रकान्ताद्या रत्नानीन्द्रनीलादीनि तैः प्रकर्षेण नाशितो-विनाशं प्रापितोऽन्धकारो यत्र तत्तथा तस्मिन् । तथा बहुसमो-ऽत्यर्थं समोऽनिम्नोन्नतः पञ्चवर्णमणिकुट्टिमकलितः सुविभक्तः- कृतस्वस्तिको भूमिभागो यत्र तत्तथा तत्र । पञ्चवर्णेन सरसेन सुरभिणा मुक्तेन-क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण-पूजया कलिते । कालागरु च-कृष्णागरुः प्रवरकुन्दुरुक्कं च-चीडाभिधानो गन्धद्रव्यविशेषः तुरुष्कं च-सिल्हकं धूपश्च दशाङ्गादिगन्धद्रव्यसंयोगजः इति द्वन्द्वः, एतेषां सम्बन्धी यो धूपनस्य- दह्यमानस्य सुरभिर्यो मघमघायमानोऽतिशयवान् गन्ध उद्धूतः - उद्धूतः तेनाभिराममभिरमणीयं यत्तत्तथा तस्मिन् । तथा सुष्ठुगन्धवराणां - प्रधानवासानां गन्धो यस्मिन्नस्ति तत्सुगन्धवरगन्धिकं तस्मिन् । तथा गन्धद्रव्यगुटिका कस्तूरिका वा गन्धवर्तिस्तद्भूते सौरभ्यातिशयात्तत्कल्पे इत्यर्थः । तथा **तस्मिंस्तादृशके शयनीये** तल्पे। '**सालिंगणे**'त्यादि सहालिङ्गनवर्त्या- शरीरप्रमाणगण्डोपधानेन यत्तत्सालिङ्गनवर्तिकं तस्मिन् । **उभयत** उभौ शिरोऽन्तपादावाश्रित्य '**विब्बोयणे**'त्ति उपधानगण्डुके यत्र तत्तथा तत्र । अत ए**वोभयत उन्नते मध्ये** नतं च तत् गम्भीरं च महत्त्वान्नतगम्भीरं तस्मिन् अथवा मध्येन च मध्यभागेन तु गम्भीरेऽ-वनते । गङ्गापुलिनवालुकाया योऽवदालो-ऽवदलनं पादादिन्यासोऽधोगमनमित्यर्थः, तेन 'सालिसए'त्ति सदृशकेऽतिनम्रत्वाद्दृश्यते च हंसतूल्यादिष्वयं न्यायः । 'ओयविय'त्ति उपचितं-परिकर्मितं यत् क्षौम-मतसीमयं कार्पासिकं वा दुकूलं-वस्त्रं तस्य युगलापेक्षया यः पट्ट-एकशाटकः स प्रतिच्छदनमाच्छादनं यस्य तत्तथा तस्मिन्, क्वचित् पडिछन्ने त्ति पाठस्तत्र तेन पट्टेन प्रतिच्छन्ने-आच्छादिते । तथा सुष्ठु विरचितं शुचि वा विरचितं रजस्त्राणमाच्छादनविशेषोऽपरिभोगावस्थायां यस्मिंस्तत्तथा तत्र । तथा **रक्तांशुकसंवृते** मशकगृहाभिधानवस्त्रावृते । **सुरम्ये**ऽतिरमणीये । तथा आजिनकं-चर्ममयो वस्त्रविशेषः, स च स्वभावादतिकोमलो भवति तथा रुतं-कर्पासपक्ष्म छूरो-वनस्पतिविशेषः नवनीतं-म्रक्षणम् एभिस्तुल्यः स्पर्शो यस्य तत्तथा, तूल त्ति पाठे तु तूलमर्कतूलमेतेषामिव स्पर्शो यस्य तत्तथा तत्र । सुगन्धाभ्यां वरकुसुमचूर्णाभ्यां-सत्पुष्पवासयोगाभ्यां यः शयनस्य-शय्याया उपचारः-पूजा तेन कलिते । '**पुव्वरत्तावरत्त– कालसमयंसि**'त्ति मध्यरात्रे इत्यर्थः । शेषं प्राग्वत् ।

**[सू.132] तं जहा -**

**गय वसह सीह अभिसेय दाम ससि दिणयरं झयं कुंभं ।**
**पउमसर सागर विमाणभवण रयणुच्चय सिहिं च ॥१९॥**

**तए णं सा तिसला खत्तियाणी तप्पढमयाए [1]चउद्दंतमूसियं[2] गलियविपुलजलहरहारनिकरखीरसागरससं–ककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरं समागयमहुयरसुगंधदाणवासियकवोलमूलं देवरायकुंजरं वरप्पमाणं पेच्छइ सजलघणविपुलजलहरगज्जियगंभीरचारुघोसं इभं सुभं सव्वलक्खणकयंबियं वरोरुं १ ।**

[ज.132] अथ स्वप्नानां व्याख्या - '**तए णं सा**'इत्यादि **ततः सा त्रिशला क्षत्रियाणी तत्प्रथमतया** इदं स्वप्ने पश्यति । अत्र च प्रथममिभदर्शनं सामान्यवृत्तिमाश्रित्योक्तम् अन्यथा प्रथमजिनजननी वृषभमिव

1 '°ए तओ य च°' इति Kh- मुद्रिते ।

2 '°सियग°' इत Kh- मुद्रिते ।

श्रीवीरमाता प्रथमं सिंहमद्राक्षीत् इति वृद्धाः । '**चउद्दंतं**' **चतुर्दन्त**मुशलं, क्वचित् तओ य चउद्दंतमिति पाठस्तत्र ततश्चेति योज्यमाने तए णमिति पौनरुक्त्यं स्यात्, तस्मात्ततौजसो महाबलाश्चत्वारो दन्ता यस्य स ततौजश्चतुर्दन्तस्तमिति व्याख्येयम् । '**ऊसियं**'ति **उच्छ्रितं**, निर्विभक्तिकपाठे तु गलियेत्यादिविशेषणेन सह कर्मधारयः । '**गलिय**'त्ति निर्जलः, हारनिकरः-पुञ्जीकृतहारः, दकरजांसि-शीकराः, रजतमहाशैलो-वैताढ्यः, तद्वत्पाण्डुरतरं पाण्डुरागं वा, समागता मधुकरा यत्र तथाविधं यत्सुगन्धं दानं-मदस्तेन वासितं-सुरभिकृतं कपोलमूलं यस्य स तथा तम्, क्वचिच्च महुरयत्ति पदं न दृश्यते तत्र समागतं सततं वहमानं यद्दानमिति व्याख्येयम् । **देवराजकुञ्जर**मैरावणं **वरप्रमाणं** पालकादप्युक्तोत्कृष्टमानदेहम् **इभं** करिणं **शुभं** शुभसूचकं '**सव्वलक्खणकयंबियं**'ति सर्वलक्षणकदम्बितं कदम्बं-समूहः वरश्चासावुरुर्विशालश्च वरोरुस्तम् ।1।

**[सू.133] तओ पुणो धवलकमलपत्तपयराइरेगरूवप्पभं पहासमुदओवहारेहिं सव्वओ चेव दीवयंतं अइसिरिभरपिल्लणाविसप्पंतकंतसोहंतचारुककुहं तणुसुइसुकुमाललोमनिद्धच्छविं थिरसुबद्धमंसलो-वचियलट्ठसुविभत्तसुंदरंगं पेच्छइ घणवट्टलट्ठउक्किट्ठविसिट्ठतुप्पग्गतिक्खसिंगं दंतं सिवं समाणसोभंत-सुद्धदंतं वसभं अमियगुणमंगलमुहं २ ।**

[ज.133] **ततः पुनर्वृषभं पश्यति**, कीदृशं ? धवलकमलपत्रप्रकरादतिरेका-ऽधिका रूपप्रभा यस्य तम् । **प्रभासमुदयोपहारैः** प्रभासमुदयो-दीप्तिजालं तस्योपहारा-विस्तारणानि तैः, **सर्वतः** सर्वा दिशो **दीपयन्तम्** । अतिश्रीभर-उत्कृष्टशोभासम्भारस्तेन यत्प्रेरणमिव प्रेरणं तेनैव विसर्पदुल्लसदत एव कान्तं-दीप्तं शोभमानं चारुककुदं-स्कन्धो यस्य तम्, किल ककुदं स्वभावादेवोल्लसदस्ति तत्रोत्प्रेक्षते नेदं स्वयमेवोल्लसत्यपि तु सहजशोभासम्भारेणैव प्रेर्यते उल्लास्यते । तनुः शुचिसुकुमाररोम्नां स्निग्धा छविर्यस्य तम् । स्थिरमत एव सुबद्धमांसलमत एवोपचितं लष्टं-प्रधानं सुविभक्तं- यथावत्सन्निविष्टावयवं सुन्दरमङ्गं यस्य तम् । घने-निचिते वृत्ते-वर्तुले वलिते लष्टादप्युत्कृष्टे-अतिश्रेष्ठे इति यावत् तुप्यग्रे- म्रक्षिताग्रे तीक्ष्णे शृङ्गे यस्य तम्, क्वचित् तुप्पपुप्फग्गतिक्खसिंगमिति पाठस्तत्र च तुप्ये-म्रक्षिते पुष्पाग्रे-पुष्पाकारं गोरोचनासद्भावस्तबकं बिन्दुरूपं पुष्पं तदग्रे-उपरिभागे ययोः शृङ्गयोरिति ज्ञेयम् । **दान्तं** दुर्दान्तम् । **शिव**मुपद्रवनिवारणम् । समानास्तुल्यप्रमाणा अत एव शोभमानाः शुद्धा-निर्दोषाः श्वेता वा दन्ता यस्य तम् । अमितगुणानां मङ्गलानां मुखमिव मुखं द्वारम्, अमियगुणमंगलसहमिति पाठे तु अमितगुणमत एव मङ्गलसहं-कल्याणसमर्थम् ।2।

**[सू.134] तओ पुणो हारनिकरखीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरं रमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्ठपउट्ठं वट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं परिकम्मियजच्चकमलकोमल[1]प्पमाण-सोभंतलट्ठउट्ठं रत्तोप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुनिल्लालियग्गजीहं मूसागयपवरकणगताविय आवत्तायंत-वट्टविमलतडिसरिसनयणं विसालपीवरवरोरुं पडिपुन्नविमलखंधं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थ-**

1 '°लमाइयसो°' इति मुद्रिते ।

**विच्छिन्नकेसराडोवसोहियं ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियलंगूलं सोम्मं सोम्माकारं लीलायंतं नहयलाओ ओवयमाणं नियगवयणमइवयंतं पेच्छइ सा गाढतिक्खनहं सीहं वयणसिरीपल्लवपत्त-चारुजीहं ३ ।**

[ज.134] **ततः पुनर्नभस्तलादवपतन्तम्** अवतरन्तं ततो **निजवदनमतिपतन्तं** प्रविशन्तं **सिंहं पश्यति।** '**हारनिकरे**'त्यादि पूर्ववत् । रमणीयमत एव प्रेक्षणीयं द्रष्टुमर्हम् । स्थिरौ-दृढौ, लष्टौ-श्रेष्ठौ *लषी कान्ता-[सि.हे.धा.927]*विति धातोः प्रयोगे लषितौ वा-कान्तौ, प्रकोष्ठौ-कलाचिके यस्य स तथा । वृत्ता-वर्तुलाः पीवराः-स्थूलाः सुश्लिष्टा-अतिपीवरा विशिष्टास्तीक्ष्णा या दंष्ट्रास्ताभिर्विडम्बितमलङ्कृतं मुखं यस्य स तथा, ततो विशेषणकर्मधारयः, विडंबियं ति विवृतमित्यन्ये । परिकर्मितौ जात्यकमलकोमलौ प्रमाणेन-मात्रया शोभमानौ, माइयसोभंतत्ति पाठे तु माइयत्ति मानोपेतौ मायान्वितौ वा, क्रूरत्वाच्छोभमानौ लष्टौ ओष्ठौ यस्य स तथा तम् । रक्तोत्पलपत्रवन्मृदु सुकुमालं तालु तन्निर्लालिता-निःकासिता अग्रजिह्वा यस्य स तथा तम्, तालुस्थाने तलं ति क्वचिद्दृश्यते तत्र रक्तोत्पलपत्रवन्मृदु तलं यस्या एवंविधा निर्लालिताऽग्रा-लपलपायमाना या जिह्वा यस्येति व्याख्येयम् । मूषागतं-मृन्मयभाजनविशेषस्थं यत्प्रवरकनकं तदपि तापितमग्निध्मातादत एवाऽऽवर्तमानं तद्वद्वृत्ते विमले तडित्सदृशे नयने यस्य स तथा तम्, आर्षत्वाद् विशेषणविशेष्ययोः पूर्वपरनिपातानियमः । विशालौ पीवरौ वरौ ऊरू यस्य स तथा, परिपूर्णोऽन्यूनो विमलः स्कन्धो यस्य स तथा, ततो विशेषणकर्मधारयः । मृदूनि-सुकुमाराणि विशदानि-धवलानि सूक्ष्माणि-तनूनि लक्षणैः प्रशस्तानि-प्रशस्तलक्षणानि विस्तीर्णानि-दीर्घाणि यानि केसराणि-स्कन्धरोमाणि तेषामाटोपेनोद्धततया शोभितम् । उच्छ्रितमुदग्रं सुनिर्मितं कुण्डलीकृतं सुजातं-सम्पूर्णमास्फोटितमाच्छोटितं लाङ्गूलं पुच्छच्छटा येन स तथा तम् । **सोमं** सौम्यं वा मनसाऽक्रूरं, **सौम्याकारं** हृद्याकृतिं, **लीलायन्तं** मन्थरगतिम् । वदनस्य-मुखकुहरस्य श्रिये-शोभार्थं पल्लव इव रक्तत्वमृदुत्वाभ्यां वदनश्रीपल्लवा, एवंविधा प्राप्ता प्रसारिता वा चार्वी जिह्वा यस्य स तथा, न च निल्लालियग्गजीहं इत्यनेन पौनरुक्त्यं विशेषणान्तरोपादानात्, क्वचित् वयणसिरिपलंबपत्तं चारुजीहमिति दृश्यते तत्र चेत्थं गमनिका - वदनस्य श्रीः-शोभा यया सा तथाविधा प्रलम्बा-लम्बमाना पत्रचार्वी-पत्रवत्तलिना जिह्वा स तथा ।3।

**[सू.135] तओ पुणो पुण्णचंदवयणा उच्चागयठाणलट्ठसंठियं पसत्थरूवं सुपइट्ठियकणगकुम्मसरि-सोवमाणचलणं अच्चुन्नयपीणरइयमंसलउन्नयतणुतंबनिद्धनहं कमलपलाससुकुमालकरचरणकोमलवरंगुलिं कुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघं निगूढजाणुं गयवरकरसरिसपीवरोरुं चामीकररइयमेहलाजुत्तकंतविच्छि-न्नसोणिचक्कं जच्चंजणभमरजलयपकरउज्जुयसमसंहियतणुयआदेज्जलडहसुकुमालमउयरमणिज्जरोम-राइं नाभीमंडलविसालसुंदरपसत्थजघणं करयलमाइयपसत्थतिवलीयमज्झं नाणामणि[1]कणगरयण-विमलमहातवणिज्जाहरणभूसणविराइयं[2]गोवंगिं हारविरायंतकुंदमालपरिणद्धजलजलिंतथणजुयल-विमलकलसं आइयपत्तियविभूसिएण य सुभगजालुज्जलेण मुत्ताकलावएणं उरत्थदीणारमालियविरइएणं**

1 '°णिरयणकणगवि°' इति मुद्रिते ।

2 '°यंगमंगिं' इति मुद्रिते ।

**कंठमणिसुत्तएण य कुंडलजुयलुल्लसंतअंसोवसत्तसोभंतसप्पभेणं सोभागुणसमुदएण आणणकुडुंबिएण कमलामलविसालरमणिज्जलोयणं कमलपज्जलंतकरगहियमुक्कतोयं लीलावायकयपक्खएणं सुविसयक-सिणघणसण्हलंबंतकेसहत्थं पउमद्दहकमलवासिणिं सिरिं भगवइं पिच्छइ हिमवंतसेलसिहरे दिसागइंदोरु-पीवरकराभिसिच्चमाणिं ४ ।**

[ज.135] **ततः पुनः पूर्णचन्द्रवदना** त्रिशला **हिमवच्छैलशिखरे पद्महृदन्तःकमलवासिनीं दिग्गजेन्द्रो-रुपीवरकराभिषिच्यमानां भगवतीं श्रीदेवीं पश्यति** । कीदृशीम्? '**उच्चागयट्ठा**' उच्चमागतं-प्राप्तम् अथवा उच्च-उन्नतोऽगः-पर्वतो हिमवांस्तत्र जातमुच्चागजं यत्स्थानं-कमलं तत्र लष्टं यथा भवत्येवं संस्थिताम् । तथा **प्रशस्तरूपाम्** । सुप्रतिष्ठौ-समतलनिवेशौ कनकमयकूर्मेणोन्नतत्वात्सदृशमुचितमुपमानं ययोस्तथाविधौ चरणौ यस्याः सा तथा ताम् । तथा अत्युन्नतं पीनमङ्गुष्ठाद्यङ्गं, तत्र रञ्जिता-मृगरमणाद्यन्यत्राप्यनुषङ्गलोप-वादिमताश्रयणाद्रञ्जिता इव लाक्षारसेन मांसला उन्नता-मध्योन्नतास्तनव-स्तलिनास्ताम्रा-अरुणाः स्निग्धा-अरूक्षा नखा यस्याः सा तथा ताम्, तथा अत्युन्नतानपि निजरूपदर्पोद्धुरानपि प्रीणयन्तीत्यत्युन्नतप्रीणा इति नखानामेव विशेषणं कार्यम् । कमलस्य पलाशानि-पत्राणि तद्वत्सुकुमारं करचरणं यस्याः, सा चासौ कोमलवराङ्गुलिश्च सा तथा ताम् । कुरुविन्दाऽऽवर्तं-भूषणविशेष आवर्तविशेषो वा, तद्वत्यौ वृत्तानुपूर्वे जङ्घे यस्याः सा तथा ताम् । **निगूढजानु**मिति **गजवरकरसदृशपीवरोरु**मिति **चामीकर-रचितमेखलायुक्तकान्तविस्तीर्णश्रोणिचक्रा**मिति च स्पष्टम् । जात्याञ्जनभ्रमरजलदप्रकर इव वर्णेन जात्याञ्जनभ्रमरजलदप्रकरस्तथाभूता ऋज्वी-सरला समा-ऽविषमा संहिता-निरन्तरा तनुका-सूक्ष्मा आदेया-सुभगा लटभा-सविलासा सुकुमारेभ्योऽपि शिरीषपुष्पादिभ्योऽपि मृद्वी सुकुमारमनोज्ञा रोमराजी यस्याः सा तथा ताम् । नाभीमण्डलेन सुन्दरं विशालं-प्रशस्तमुपलक्षणत्वाज्जघनं यस्याः सा तथा ताम् । करतलेन-मुष्टिना '**माइय**'त्ति मेयं मानं वा प्रशस्तत्रिवलीकं-शोभनवलित्रययुक्तं मध्यं यस्याः सा तथा ताम् ।

नानामणिकनकरत्नविमलमहातपनीयाभरणभूषणविराजिताङ्गोपाङ्गा या सा तथा ताम्, तत्र मणय-श्चन्द्रकान्ताद्याः रत्नानि-वैडूर्यादीनि कनकं-पीतवर्णं तपनीयं-तदेव रक्तं तत्र जात्यत्वाद्विमलमहत्त्वाभ्यां विशेषितं, तेषां यान्याभरणानि-अङ्गपरिधेयानि च भूषणान्युपाङ्गपरिधेयानि तैर्विराजितानि यथासङ्ख्यम-ङ्गोपाङ्गानि अङ्गानि-शिरोहृदयादीनि उपाङ्गान्यङ्गुल्यादीनि यस्याः सा तथा ताम् । हारेण विराजत् कुन्दमालया परिणद्धं '**जलजलिंत**'त्ति जाज्वल्यमानं, 'जलजलंत'त्ति पाठे जलवद्देदीप्यमानम्, स्तनयुगलमेव विमलौ कलशौ यस्याः सा तथा ताम् । आदृतैः-सादरैः प्रत्ययितै-राप्तैर्विज्ञानिकैर्विभूषितेन-विरचितमण्डनेन, सुभगै-र्दृष्टिहारिभिर्जालकै-र्गुच्छविशेषै-रुज्ज्वलेन **मुक्ताकलापेनो**पलक्षिता या सा तथा ताम्, अथवा आ-मर्यादया स्थानौचित्येन चिता-न्यस्ताः पत्रिका-मरकतपत्राणि ताभिर्विभूषितामिति योज्यम्, क्वचित् आत्तियपत्तियत्ति दृश्यते तत्र त्रिकं पृष्ठवंशस्याधस्तत्समीपोपलक्षितोऽग्रभागोऽपि त्रिकं तत आत्रिकात्त्रिकं यावत्प्राप्तिरवकाशो यस्य तदात्रिकप्राप्तिकम् एवंविधं विभूषितं-विभूषा येन मुक्ताकलापेन तदवधिप्रलम्बमानत्वादिति घटना । उरःस्थया दीनारमालया विरचितेन विराजितेन वा कण्ठमणिसूत्रकेण चोपलक्षिता या सा तथा ताम् । आर्षत्वादंसोपसक्तमिति विशेषणमपि परं ततोंऽसयोः-स्कन्धयोरुपसक्तं-

लग्नं यत्कुण्डलयुगलं तस्योल्लसन्ती शोभमाना प्रशस्ता प्रभा यत्र तथाभूतेनाऽऽननेन कौटुम्बिकेन, यथा किल राजा कौटुम्बिकैः शोभते एवमाननमपि शोभासमुदयेनेति मुखनरेन्द्रस्य कौटुम्बिकप्रायेण **शोभागुणसमुदयेन** चोपलक्षिता या सा तथा ताम्, तत्र शोभा-दीप्तिः स एव गुणस्तस्य समुदयः-प्राग्भारस्तेन । **कमलामलविशालरमणीयलोचना**मिति व्यक्तम् । प्राग्वत्परनिपाते प्रज्वलन्तौ-दीप्तिमन्तौ यौ करौ ताभ्यां गृहीताभ्यां कमलाभ्यां मुक्तं-क्षरत्तोयं-मकरन्दरसो यस्याः सा तथा ताम् । लीलया, न पुनः स्वेदापनोदार्थं स्वेदस्यैवाभावात्, वातार्थं-वातोत्क्षेपार्थं कृतो यः पक्षकस्तालवृन्तं तेनोपलक्षिता या सा तथा ताम्; केचिच्च लीलावादकृतपक्षकेणेति लीला-शोभा तदर्थं परैः सह स्पर्द्धया वादो लीलावादस्तत्र कृतो-विहितः पक्षः-प्रतिज्ञापरिग्रहो येन सः तथा कप्रत्ययेनेति शोभागुणसमुदयस्य विशेषणतया व्याचक्षते तच्च दूरान्तरितत्वात्ततः प्रतीयत इति । सुविशदः- स्पष्टो, न पुनर्जटाजूटवदविवृतः, कृष्णः- श्यामो घनो-ऽविरलः सूक्ष्मस्तलिनो लम्बमानः केशहस्तः - केशपाशो यस्याः सा तथा ताम् ।4।

**[सू.136] तओ पुणो सरसकुसुममंदारदामरमणिज्जभूयं चंपगासोगपुण्णागनागपियंगुसिरीसमोग्गरगमल्लियाजाइजूहियंकोल्लकोज्जकोरिंटपत्तदमणयणवमालियबउलतिलयवासंतियपउमुप्पलपाडलकुंदाइमुत्तसहकारसुरभिगंधिं अणुवममणोहरेणं गंधेणं दस दिसाओ वि वासयंतं सव्वोउयसुरभिकुसुममल्लधवलविलसंतकंतबहुवन्नभत्तिचित्तं छप्पयमहुयरिभमरगणगुमुगुमायंतमिलंतगुंजंतदेसभागं दामं पेच्छइ नभंगणतलाओ ओवयंतं ५ ।**

[ज.136] दामस्वप्नः सुव्यक्त एव । नवरं सरसकुसुमं यन्मन्दारदाम तेन रमणीयभूतं-रम्यं सञ्जातम् । सर्वर्तुकं यत् सुरभिकुसुमं माल्यं तेन धवलं च तद्विलसत्कान्तं बहुवर्णभक्तिचित्रं चेति विशेषणकर्मधारयः, अनेन धवलवर्णस्याऽऽधिक्यं लक्ष्यते । षट्पदमधुकरीभ्रमरी-वर्णादिविशिष्टभ्रमरजातिविशेषास्तेषां गणः स गुमगुमायमानो-मधुरं ध्वनन्निलीयमानः-स्थानान्तरादागत्य तत्र लीयमानो गुञ्जन्-शब्दविशेषं कुर्वन् देशभागेषु तस्मिंस्तस्मिन् देशे यस्य दाम्नः, गमकत्वादेवमपि समासः ततः पाश्चात्त्यविशेषणकर्मधारयेण सह षट्पदादिविशेषणस्य पुनः कर्मधारयः ।5।

**[सू.137] ससिं च गोखीरफेणदगरयरययकलसपंडुरं सुभं हिययनयणकंतं पडिपुन्नं तिमिरनिकरघणगहिरवितिमिरकरं पमाणपक्खंतरायलेहं कुमुदवणविबोहयं निसासोभगं सुपरिमट्ठदप्पणतलोवमं हंसपडुवन्नं जोइसमुहमंडगं तमरिपुं मयणसरापूरं समुद्ददगपूरगं दुम्मणं जणं दतियवज्जियं पायएहिं सोसयंतं पुणो सोम्मचारुरूवं पेच्छइ सा गगणमंडलविसालसोम्मचंकम्ममाणतिलगं रोहिणिमणहिययवल्लहं देवी पुन्नचंदं समुल्लसंतं ६ ।**

[ज.137] ततः पुनः **शशिनं च** पश्यति । **गोक्षीरफेनदकरजोरजतकलशपाण्डुरं शुभं हृदयनयनकान्तं प्रतिपूर्ण**मिति स्पष्टम् । तिमिरनिकरेण घनगभीरस्य वनकुञ्जादेर्वितिमिरकरं तिमिराणामभावो वितिमिरं तत्करणशीलं वितिमिरकरम् । प्रमाणपक्षयो-र्वर्षादिप्रमाणनिबन्धनयोः शुक्लकृष्णपक्षयोरन्तर्मध्ये राजन्ती लेखा-तिथिप्रवर्तकत्वेन कलाविभागरूपा यस्य स तथा, अथवा चन्द्रमसोऽपेक्षया प्रमाणपक्षयोरन्ते

पौर्णमास्यां रागदा-हर्षदायिन्यो लेखाः- कला यस्य तम्, सम्पूर्णकलमित्यर्थः, यतो जीवाभिगमवृत्ति-कृतोक्तम् - *पूर्णो मासो यस्यां सा पूर्णमासी पूर्णो वा मांश्चन्द्रमा यस्यां सा पूर्णमासी*, पूर्णमास्यां किल सकलकलाभिः पूर्णत्वं चन्द्रस्य भवति, अन्यदा तु वृद्धिहानिभ्यां न पूर्णत्वं कदापि, यत उक्तम् -

*सोलसमे काऊणं उडुवइ हायएत्थ पन्नरसा ।*
*तत्तियमित्ते भागे पुणो वि परिवड्ढए जोण्हा ॥*

इति वचनात् तिथिज्ञापकत्वेन प्रमाणपक्षः अन्यत्र पक्षशब्दप्रवृत्तिर्न प्रमाणभूतपक्षनिबन्धना किन्तु सञ्ज्ञारूपा स्वचित्तकल्पितानेकप्रकारा यथा *चउत्थीपक्खेणं अट्ठमीपक्खेणं बारसीपक्खेण*मित्यादि। प्रकृतं प्रस्तुमः- **कुमुदवनविबोधक**मिति व्यक्तम् । निशायाः शोभकं - शोभयितारं **निशाशोभकम्**। सुपरिमृष्टेन दर्पणतलेनोपमा यस्य स तथा तम् । हंसस्येव पटुर्धवलो वर्णो यस्य स तथा तम् । **तमोरिपु**मिति स्पष्टम्, तमरिउमिति पाठे तु तमसोऽन्धकारस्य न ऋतुर्न प्रस्तावो यस्मिन् सति स तथा तम्, अकारस्य प्रश्लेषात्तमरिउमिति सिद्धम् । मदनस्य-कामदेवस्य शरापूरमिव शरापूरं शरैरापूर्यत इति शरापूरस्तूणीरस्तम्, उदिते हि चन्द्रमसि लक्षीकरोति कुसुमशरः कामिनः स्वशराणाम् । समुद्रस्य दकं-पानीयं पूरयति-चन्द्रिकया तदुल्लासनात्समुद्रदकपूरस्तम् । **दुर्मनस्कं दयितवर्जितं जनं** विरहिणीलोकं **पादैः** किरणैः **शोषयन्तं** तापातिरेककरणात्, पादकैरिति प्रशंसायां कन् । **पुन**रिति योजितमेव । **सौम्यचारुरूप**मिति व्यक्तम् । '**पिच्छइ**' **पश्यति** '**सा**' त्रिशला । गगनमण्डलस्य विशालं सौम्यं चङ्क्रम्यमाणं-जङ्गमं तिलकमिव विभूषाहेतुत्वात्, गगणगमणित्ति पाठे तु गम्यतेऽनेनास्मिन्निति वा गमनं-मार्गः, गगनस्य गमनं, शेषं प्राग्वत्। रोहिण्यादिनक्षत्रविशेषस्य मन-श्चित्तं तस्य हितदो-ऽनुकूलदायी वल्लभः-प्रियस्तम्, एकतरानुरागमात्रेणापि किल वल्लभः स्यादित्येकपाक्षिकप्रेमनिरासार्थं हितद इति विशेषणम्, सर्वनक्षत्राधिपत्येऽपि यदत्र रोहिणीवल्लभ इति विशेषणं तल्लोकरूढ्या । पूर्णो-ऽविकलश्चन्द्र-आह्लादोऽस्मादिति पूर्णचन्द्रः, अथवा पूर्णश्चन्द्रो-दीप्तिर्यस्य मेघाद्यनावरणात्स तथा तम् । अत एव **समुल्लसन्तं** प्रतिक्षणं देदीप्यमानम् ।6।

**[सू.138] तओ पुणोऽ[1]तमपडलपरिप्फुडं चेव तेयसा पज्जलंतरूवं रत्तासोगपगासकिंसुयसुगमुह-गुंजद्धरागसरिसं कमलवणालंकरणं अंकणं जोइसस्स अंबरतलपईवं हिमपडलगलग्गहं गहगणोरुनायगं रत्तिविणासं उदयत्थमणेसु मुहुत्तसुहदंसणं दुन्निरिक्खरूवं रत्तिमुद्धावतदुप्पयारपमद्दणं सीयवेगमहणं पेच्छइ मेरुगिरिसययपरियट्टयं विसालं सूरं रस्सीसहस्सपयलियदित्तसोहं ७ ।**

[ज.138] **ततः सूर्यं** पश्यति । **अतमःपटलपरिस्फुटं** तमःपटलस्याभावोऽतमःपटलं तेन सर्वदिक्षु प्रकटम्, अथवा तमःपटलपरिस्फोटः, *स्वराणां स्वरा* इति उत्वम् । **चेव**शब्दस्यावधारणार्थस्य व्यवहितस्यापि सम्बन्धा**त्तेजसैव प्रज्वलद्रूपं**, प्रकृत्या हि सूर्यमण्डलवर्तिबादरपृथिवीकायिकाः शीतला एव; अथवा चेव त्ति समुच्चयार्थः । रक्ताशोकश्च प्रकाशकिंशुकश्च, पुष्पितपलाशः शुकमुखं च गुञ्जार्धश्च तेषां रागेण सदृशम् आरक्तत्वात् । कमलवनमलङ्करोति-विकाशश्रिया विभूषयति कमलवनालङ्करणस्तम् । **अङ्कनं** ज्योतिषश्चक्रं ज्योतिषां समूहो ज्योतिश्चक्रं तस्याङ्कनं मेषादिराशिसङ्क्रमणादिना

1 '°णो तम°' इति Kh- मुद्रिते ।

लक्षणं ज्ञापकम् । **अम्बरतलप्रदीप**मिति स्पष्टम् । हिमपटलं गले गृह्णातीति हिमपटलगलग्रहः, अवश्यायराशेर्गलहस्तयिता। ग्रहगणस्योरु-र्महान्नायको ग्रहगणोरुनायकस्तम् । **रात्रिविनाश**मिति स्पष्टम्, क्वचित् रत्तिवेपणासमिति पाठस्तत्र रात्रिव्यपनाशमिति व्याख्येयम् । रात्रिविनाशात् सिद्धं दिवाकरत्वं, यतः - *दिवा-दिनाहर्दिवस-प्रभा-विभा-भासः करः स्यान्मिहिरो विरोचनः [अभि.97]* । इति वचनाद्दिवसकरः सूर्य एवेति प्रसिद्धम् । **उदयास्तमनयोर्मुहूर्तसुखदर्शन**मन्यदा तु **दुर्निरीक्षरूप**मिति व्यक्तम् । रात्रौ, मकारस्यालाक्षणिकत्वात्, 'उद्धावत' उच्छृङ्खलान् दुःप्रचारान्-दुष्टप्रचारान् चौरपार-दारिकादीन् प्रमर्दयति यस्तम् ; रत्तिसुद्धंत इति पाठे तु रात्रिरेव शुद्धान्तो-ऽन्तःपुरं तत्र दुःखेन योऽसौ प्रचारस्तत्प्रमर्दनं, यथा हि राज्ञामन्तःपुरे प्रचारो दुःकरस्तथा रात्रावपि तमोविलुप्तचक्षुषाम्, सूर्योदये तु सुकरः प्रचारः पथिष्विति । **शीतवेगमथनं** जाड्यातिशयध्वंसकम् । मेरुगिरिं सततं नक्तं दिवं परिवर्तयति-प्रदक्षिणयतीति मेरुगिरिसततपरिवर्तनकस्तम् । **विशालं** विपुलम् । रश्मिसहस्रेण हेतुना प्रगलिता प्रदलिता वा दीप्तानामपि शोभा यस्माद्येन वा स तथा तम्, पयडिय इति पाठे तु रश्मिसहस्रेण प्रगढिता शोभा यस्येति ज्ञेयम्। अत्र च रश्मिसहस्राभिधानमिति रूढ्यावसेयम्, अन्यथा आधिक्यमपि रश्मीनां लोकशास्त्रे पठ्यते, यथाहि -

*ऋतुभेदात्पुनस्तस्यातिरिच्यन्तेऽपि रश्मयः ।*
*शतानि द्वादश मधौ त्रयोदशैव माधवे ॥*

*चतुर्दश पुनर्ज्येष्ठे नभोनभस्ययोस्तथा ।*
*पञ्चदशैव त्वाषाढे षोडशैव तथाश्विने ॥*

*कार्तिके त्वेकादश च शतान्येवं तपस्यपि ।*
*मार्गे तु दश सार्धानि शतान्येवं च फाल्गुने ॥*
*पोष एव परं मासि सहस्रं किरणा रवेः ।* इति ।7।

**[सू.139] तओ पुणो जच्चकणगलट्ठिपइट्ठियं समूहनीलरत्तपीयसुक्किल्लसुकुमालुल्लसियमोरपिंछकय-मुद्धयं धयं [1]अहियसस्सिरीयं फालियसंखंककुंददगरयरययकलसपंडुरेण मत्थयत्थेण सीहेण रायमाणेणं रायमाणं भेत्तुं गगणतलमंडलं चेव ववसिएणं पेच्छइ सिवमउयमारुयलयाहयपकंपमाणं अतिप्पमाणं जणपिच्छणिज्जरूवं ८ ।**

[ज.139] **ततो ध्वजं पश्यति** । **जात्यकनकयष्टिप्रतिष्ठितम्** । समूहोऽस्त्येषामिति समूहाः, अभ्रादि-त्वादप्रत्यये समूहवन्तः प्रचुरा इत्यर्थः, तैर्नीलरक्तपीतशुक्लैः, कृष्णस्य नीलादनतिविप्रकर्षात्पञ्चवर्णैः सुकुमारैः-कोमलैरुल्लसद्भि-र्वातेन स्फुरद्भिर्मयूरपिच्छै-र्मयूरपक्षिकैः कृता मूर्धजा इव-केशा इव यस्य स तथा तम् । **अधिकसश्रीक**मतीवशोभायुक्तम् । '**फालिय**'त्ति स्फटिकं शङ्खः-कम्बुरथवा स्फाटितो भिन्नः शङ्खः अङ्को-रत्नविशेषः कुन्दं-कुन्दवृक्षपुष्पं दकरजांसि- जलकणाः रजतकलशो-रूप्यकुम्भः

1 'धयं अहियसस्सिरीयं' इति नास्ति मुद्रिते ।

तद्वत्पाण्डुरेण । **मस्तकस्थेन राजमानेन गगनमण्डलं भेत्तुं व्यवसितेन** कृतोद्यमेन अत्युच्चैस्त्वादियमुत्प्रेक्षा, भगवल्लाञ्छनभूतसिंहाकारपताकया सिंहचित्रेण **राजमानम्** । शिवः - सौम्यो मृदु-रचण्डो यो मारुतो-वायुः तस्य यो लयः- श्लेषः तेनाहतमान्दोलितम् अत एव प्रकम्पमानम्-इतस्ततो नृत्यन्तम् अथवा शिवमृदुकमारुताहतलतावत् प्रकम्पमानमिति व्याख्येयम्, लयाहय त्ति आर्षत्वादाहतस्य परनिपातः । **अतिप्रमाणं** महाप्रमाणम् । **जनप्रेक्षणीयरूप**मिति स्पष्टम् ।8।

**[सू.140] तओ पुणो जच्चकंचणुज्जलंतरूवं निम्मलजलपुन्नमुत्तमं दिप्पमाणसोहं कमलकलावपरिरायमाणं पडिपुण्णसव्वमंगलभेयसमागमं पवररयणपरायंतकमलट्ठियं नयणभूसणकरं पभासमाणं सव्वओ चेव दीवयंतं सोमलच्छीनिभेलणं सव्वपावपरिवज्जियं सुभं भासुरं सिरिवरं सव्वोउयसुरभिकुसुमआसत्तमल्लदामं पेच्छइ सा रययपुन्नकलसं ९ ।**

[ज.140] **ततः सा रजतपूर्णकलशं पश्यति** । रजतशब्देन यद्यपि रूप्यमुच्यते तथापि **जच्चकंचणुज्जलंतरूव**मिति भणनात् कनकमेव ग्राह्यम्, यथा *मेरुगिरी रययमओ* इत्यत्र । जात्यकाञ्चनेन उत्प्राबल्येन ज्वलद्रूपं यस्य स तथा तम् । **निर्मलजलपूर्णम् उत्तमं देदीप्यमानशोभ**मिति स्पष्टम् । कमलकलापेन पार्श्ववर्तिना परिराजमानम्; क्वचिच्च कालमयूरकलायमाणमिति पाठः, तत्र च कालः-कृष्णवर्णाधिको मयूरकलापः- शिखिपिच्छं तेन परिराजमानमिति योज्यम् । प्रतिपूर्णा एव प्रतिपूर्णकाः, ते च ते सर्वमङ्गलभेदाश्च, तेषां समागमो मेलकस्थानम्; क्वचिच्च पडिबुज्झंतसव्वमंगलालयसमागममिति पाठस्तत्र प्रतिबुद्ध्यमानानि-जागरूकाणि यानि सर्वमङ्गलानि, तेषामालयो-निवासभूतः समागमः- सन्मुखागमनं यस्येति व्याख्येयम् । प्रवररत्नैः प्रराजति-प्रकर्षेण शोभमाने कमले स्थितं-प्रतिष्ठितम् अथवा प्रवरा रचना-न्यासविशेषो यस्य तत् प्रवररचनं तथा परागः-पौष्पं रजोऽन्त-र्गर्भे यस्य तत् परागान्तः, प्रवररचनं च तत् प्रवररचनपरागान्तस्तादृशे कमले स्थितम्; क्वचिच्च पवररयणपसरंतकमलट्ठिअं इति पाठः, तत्र प्रवराणि रत्नानि यत्र, तच्च तत् प्रसरत्कमलं तत्र स्थितमिति घटना । नयनानामानन्दकत्वाद्भूषणं करोति नयनभूषणकरः तम्, दृष्टेर्हि चारुरूपावलोकनमेव भूषणम् । **प्रभासमानं** स्वयं दीप्यमानं {वा} प्रभया वा कान्त्याऽसमानं निरुपमम्। अत एव सर्वा दिशो **दीपयन्तम्** उद्योतयन्तम् । सौम्यलक्ष्म्याः-प्रशस्तसम्पदः निभेलणं ति देश्यत्वात् गृहम् । सर्वैः पापै-रशिवैः परिवर्जितम् । अत एव **शुभं भासुरं** दीप्रं **श्रीवरं** श्रिया - त्रिवर्गसम्पत्त्या वरं - श्रेष्ठं तदागमसूचकत्वात् । सर्वर्तुजानां सुरभिकुसुमानामासक्तं-कण्ठस्थं माल्यदाम-प्रशस्तमाला यस्मिन् स तथा तम्, अत्र दामशब्दः प्रशंसावाचको यथा *वनान्तकपोलपाली* इत्यादावन्तकपोलपालीशब्दौ ।9।

**[सू.141] तओ पुणो रविकिरणतरुणबोहियसहस्सपत्तसुरहितरपिंजरजलं जलचरपहगरपरिहत्थ-गमच्छपरिभुज्जमाणजलसंचयं महंतं जलंतमिव कमलकुवलयउप्पलतामरसपुंडरीयउरुसप्पमाण-सिरिसमुदएहिं रमणिज्जरूवसोभं पमुइयंतभमरगणमत्तमहुकरिगणोक्करोलिब्भमाणकमलं कादंबग-बलाहग[1]चक्ककलहंससारसगव्वियसउणगणमिहुणसेविज्जमाणसलिलं पउमिणिपत्तोवलग्गजलबिंदु-**

1 ''°चक्काकक°'' इति मुद्रिते ।

**[1]निचयचित्तं च पेच्छइ सा हिययणयणकंतं पउमसरं नाम सरं सररुहाभिरामं १० ।**

[ज.141] **ततः पुनः पद्मसरः पश्यति** । तरुणशब्दस्येह सम्बन्धात् तरुणरविकिरणैर्बोधितानि यानि सहस्रपत्राणि-पद्मानि तैः सुरभितरं पिञ्जरं च-पीतरक्तं च जलं यस्य तत्तथा तत्र, अथवा पुणरवित्ति पुनरपि {रवि}किरणः-सूर्यस्तेन तरुणेनाभिनवेन बोधितानीति योज्यम् । जलचरा-यादांसि तेषां पहकर त्ति देश्यत्वात्समूहस्तेन परिहत्थं ति परिपूर्णं, जलचरपहकरपरिहत्थगं च तन्मत्स्यपरिभुज्यमानजलसञ्चयं चेति विशेषणकर्मधारयः । **'महंतं' महत्** तथा कमलं-सूर्यविकाशि कुवलयं- नीलम् उत्पलं-रक्तं, तथा च पठन्ति - *उप्पलदलसुकुमालो जस्स करे उल्लिउहत्थो* अत्र हि हस्तस्य रक्तोत्पलेनैवोपमानं घटते, तामरसं-महाम्भोजं पुण्डरीकं-श्वेतम् एतेषामुरुभि-र्विशालैः सर्पद्भि-रुल्लसद्भिः श्रीसमुदयैः-कान्तिप्राग्भारैर्ज्वलदिव-दीप्यमानमिव । अत एव **रमणीयरूपशोभं** प्रमुदितमन्तश्चित्तं येषां ते प्रमुदितान्तरस्ते च ते भ्रमरगणम-त्तमधुकरगणास्तेषामुत्कराः, समूहानामपि समूहाभिधानमतिख्यापनार्थम्, तैरवलिह्यमानानि-स्वाद्यमानानि कमलानि यत्र तत् । कादम्बकाः-कलहंसाः, बलाहकाः- बलाकाः, चक्रा-श्चक्रवाकाः, कलामधुरध्वनयो हंसाः कलहंसाः-राजहंसाः, *राजहंसेऽपि कलहंस[वि.लो.को. सान्तवर्गे 48]*इति विश्वलोचनः, सारसा-दीर्घजानवो जीवाः, ते च ते गर्विताः- सुस्थानप्रतिदृप्ताः शकुनिगणाश्च-पक्षिसमूहाश्च, तेषां मिथुनै-र्द्वन्द्वैः सेव्यमानसलिलम् [यस्य तत्] । पद्मिनी पत्रोपलग्ना ये जलबिन्दवस्तेषां निचयेन चित्रं मण्डितमिव; क्वचिच्च पउमिणिपत्तोवलग्गजलबिंदुमुत्तचित्तमिति दृश्यते, तत्र च जलबिन्दव एव मुक्ताफलानि ताभिश्चित्रितमिति व्याख्येयम् । **हृदयनयनकान्त**मिति सुगमम् । **सररुहाभिरामं** ति सरस्सु-सरोवरेषु अर्हं-पूज्यम् अत एवाभिरामं सरोर्हाभिरामम् *उच्चार्हती[सि.हे.8-2-111]*ति हकारात्पूर्व उकारः ।10।

**[सू.142] तओ पुणो चंदकिरणरासिसरिससिरिवच्छसोहं चउगमणपवड्ढमाणजलसंचयं चवलचंचलु-च्चायप्पमाणकल्लोललोलंततोयं पडुपवणाहयचलियचवलपागडतरंगरंगंतभंगखोखुब्भमाणसोभंतनि-म्मलउक्कडउम्मीसहसंबंधधावमाणोनियत्तभासुरतराभिरामं महामगरमच्छतिमितिमिंगिलनिरुद्धतिलि-तिलियाभिघायकप्पूरफेणपसरं [2]महानईतुरियवेगसमागयभमगंगावत्तगुप्पमाणुच्चलंतपच्चोनियत्तभममाण-लोलसलिलं पेच्छइ खीरोयसागरं सरयरयणिकरसोम्मवयणा ११ ।**

[ज.142] **ततः पुनः क्षीरसागरं शरद्रजनीकरसौम्यवदना पश्यति** । चन्द्रकिरणराशिसदृशी श्रीवक्षःशोभा यस्य स तथा तम्, वक्षःशब्देनात्र मध्यभागो लक्ष्यते । चतुर्षु गमनेषु - चतुर्दिग्मार्गेषु प्रवर्धमानः परिवर्तमानो वा - प्रसरन् जलसञ्चयो यस्य स तथा तम्; चउगुणपवड्ढमाणजलसंचयमिति पाठस्तु सुगम एव, कस्मात् चतुर्गुणत्वमित्यनपेक्ष्यैवाऽऽधिक्यमात्रस्यैव विवक्षितत्वात् । चपलेभ्योऽपि चञ्चलाश्चपलचञ्चलास्तैरुच्चात्म-प्रमाणैरत्युन्नतत्व(स्व)मानैः कल्लोलैर्लोलं तोयं यस्य स तथा तम् । पटुपवनाहताः सन्तश्चलिताः-प्रवृत्ता अत एव चपलाः प्रकटाः - स्पष्टास्तरङ्गाः पटुपवनाहतचलितचपलप्रकटतरङ्गास्तथा रङ्गन्त - इतस्ततः

1 ''°दुमुत्तचि°'' इति मुद्रिते ।

2 ''°सरम°'' इति मुद्रिते ।

प्रेङ्खन्तो भङ्गा-रङ्गद्भङ्गास्तथा **खोखुब्भमाण** त्ति अतिक्षुभ्यन्तः शोभमाना निर्मला उत्कटा-दुःसहा ऊर्मयस्ततस्तरङ्गान्तभङ्गान्तोर्म्यन्तपदानां द्वन्द्वः, केवलं कल्लोलाः- सामान्येन तरङ्गास्त एव लघवो-भङ्गास्त एव विच्छित्तिमन्तः ऊर्मयो-महाकल्लोलाः, तैः सह-सार्धं यः सम्बन्धस्तेन धावमान-स्तीराभिमुखं सर्पन् पश्चादपनिवृत्तोऽत एव *भयङ्करे तु डमरमाभीलं भासुरतरं तथे*ति वचनाद्भासुरतरो-ऽतिभयङ्करोऽभिरामश्च-हृद्यो धावमानः सन् भासुरतरोऽपनिवृत्तश्च सन्नभिराम इत्यर्थः, ततो लोलत्-तोयान्तपदेन सह विशेषणकर्मधारयः; क्वचिच्च उक्कडउम्मीससहस्सं ति पाठः, स च सुबोध एव, ततः परं पबंधायमाणनियत्तभासुरतराभिराममिति पाठस्तत्र चेत्थं व्याख्या - प्रबन्धेन-नैरन्तर्येणायमानो-गच्छन् आयमानो वा-प्रत्यागच्छन् प्रबन्धायमानः, न विद्यते नियंतंति पश्यन् द्रष्टा यस्य तत् अनियन्तं केनाप्यदृश्यमानं दूरतरत्वात्, अत एव भासुरं-भयङ्करं यत्तटं-परपारं तेनाभिरामो-वैपुल्येन मनोहारीत्यर्थः, ततः प्रबन्धायमानपदेन सह कर्मधारयः । महान्तो मकराश्च मत्स्याश्च तिमयश्च तिमिङ्गलाश्च निरुद्धाश्च तिलितिलिकाश्च जलजन्तुभेदास्तेषामभिघातेन पुच्छाद्याच्छोटनेनोत्पलादिना वा कर्पूर इव कर्पूर उज्ज्वलत्वात्फेनप्रसरो यत्र स तथा तम् । महानदीनां-गङ्गासिन्ध्वादीनां त्वरितवेगैरागतभ्रम-उत्पन्नभ्रमणो योऽसौ गङ्गावर्ताख्य आवर्तस्तत्र गुप्यद्-व्याकुलीभवदत एवोच्चलत्प्रत्यवनिवृत्तं च भ्रममाणं *वयःशक्तिशीले [सि.हे. 5-2-24]*इति शानविधानात् भ्रमणशीलं लोलं-स्वभावादस्थिरं सलिलं यस्य स तथा तम् ।11।

**[सू.143] तओ पुणो तरुणसूरमंडलसमप्पभं दिप्पमाणसोभं[1] उत्तमकंचणमहामणिसमूहपवरतेयअट्ठ-सहस्सदिप्पंतनभप्पईवं कणगपयरपलंबमाणमुत्तासमुज्जलं[2] ईहामिगउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्न-ररुरुसरभचमर[3]कुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं गंधव्वोपवज्जमाणसंपुण्णघोसं निच्चं सजलघणवि-उलजलहरगज्जियसद्दाणुणादिणा देवदुंदुहिमहारवेणं सयलमवि जीवलोयं पूरयंतं कालागरुपवरकुंदुरु-क्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघिंतगंधुद्धुयाभिरामं निच्चालोयं सेयं सेयप्पभं सुरवराभिरामं पिच्छइ सा सातोवभोगं विमाणवरपुंडरीयं १२ ।**

[ज.143] **ततः पुनः सा विमानवरपुण्डरीकं प्रेक्षते** । विमानवरेषु मध्येषु पुण्डरीकमिव श्रेष्ठत्वात् विमानवरपुण्डरीकम् । **तरुणसूरमण्डलसमप्रभं दीप्यमानशोभ**मिति स्पष्टम् । उत्तमकाञ्चनमहामणिसमूहैः प्रवराणां, **तेय** त्ति तेकन्ते गच्छन्त्याधारभावमिति तेका लिहादित्वादचि अथवा त्रायन्ते गृहं पतदिति *कृत्यल्युटो बहुल[पा.व्या. 3-3-113]*मिति कर्तरि यप्रत्यये त्रेयास्ततस्तेकानां त्रेयाणां वा-स्तम्भानामष्ट-सहस्रेणाऽष्टोत्तरसहस्रेण दीप्यमानं सत् नभः प्रदीपयति-प्रकाशयति यत्तत्तथा । कनकप्रतरेषु-सुवर्णपत्रकेषु लम्बमानाभिर्मुक्ताभिः समुज्ज्वलम्, कनकप्रतरैर्लम्बमानमुक्ताभिश्च समुज्ज्वलमित्यन्ये । ईहामृगा-वृका वृषभतुरगनरमकरविहगाः प्रतीताः **वालग** त्ति व्यालाः- सर्पाः किन्नररुरुसरभचमराः प्रसिद्धाः श्वापदविशेषाः

1 'दिप्पमाणसोभं' इति नास्ति मुद्रिते ।

2 अत्र 'जलंतदिव्वदामं' इति अधिकः पाठः Kh-मुद्रिते किन्तु टीकाकारेण न व्याख्यातः ।

3 '°रसंसत्तकुं°' इति Kh-मुद्रिते ।

कुञ्जरा-गजाः वनलता-अशोकलताद्याः पद्मलताः- पद्मिन्यः, एतेषां भक्तिभि-र्विच्छित्तिभिश्चित्रं-नानारूपम्। गान्धर्वस्य-गीतस्योपवाद्यमानस्य-वादित्रस्य च सम्पूर्णो घोषो यत्र तत्तथा, *उच्चोपे [सि. हे. 8-1-173]* इति सूत्रेण उपवज्जमाण इति रूपम्; क्वचिच्च गंधव्वोवज्झमाण इति दृश्यते तच्च गन्धर्वाणां-देवगायनानाम् उपवध्यमानः - परस्य सम्बन्धीभवन्नत एव सम्पूर्णो घोषो यत्रेति योज्यम् । **नित्यं** शाश्वतम् । सजलो-जलपूर्णो घनो-ऽविरलो विपुलः- पृथुर्जलधरो-मेघस्तस्य गर्जितशब्दस्तद्वदनुनादिना-प्रतिरवयुक्तेन **देवदुन्दुभिमहारवेण सकलमपि जीवलोकं** प्राणिगणं पूरयन्तमाप्याययन्तं चतुर्दशरज्ज्वात्मकं वा लोकं व्याप्नुवन्तम् । कालागरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुष्काः प्राग्व्याख्यातास्तेषां च दह्यमानो धूपश्च-दशाङ्गादिः वासाङ्गानि च-गन्धमालिनीग्रन्थोक्तसुरभीकरणोपायभूततत्तद्द्रव्याणि च तेषामुत्तमेन मघमघायमानेन गन्धेनोद्धुतेन- इतस्ततो विप्रसृतेनाभिरामं यत्तत्तथा; क्वचिच्च डज्झंतधूवसारसंग इति दृश्यते, तत्र च दह्यमानो यो धूपसार-उत्कृष्टधूपस्तस्य सङ्गः तेन हृदयङ्गमेनोत्तमेन-श्रेष्ठेन मघमघायमानेन गन्धेनेति व्याख्येयम्। नित्यमुद्योतयुक्तं **सेय**मिति **श्वेतं सेयप्पभ**मिति **श्रेयःप्रभं** तथा सुरवरानभिरमयतीति **सुरवराभिरामं** तथा सुराणां वराः- श्रेष्ठाः अभि-समन्ताद्रामा-नायिका यत्र तत्सुरवराभिरामम् । सातस्य-सातवेदनीयस्य कर्मण उपभोगो यत्र पञ्चविधविषयसम्पत्तेस्तत्**सातोपभोगम्** ।12।

**[सू.144] तओ पुणो पुलगवेरिंदनीलसासगकक्केयणलोहियक्खमरगयमसारगल्लपवालफलिहसोगंधि-यहंसगब्भअंजणचंदप्पभवररयणमहियलपइट्ठियं गगणमंडलंतं पभासयंतं तुंगं मेरुगिरिसन्निगासं पिच्छइ सा रयणनियररासिं १३ ।**

[ज.144] **ततः पुनः सा रत्ननिकरराशिं पश्यति**, रत्ननिकराणां राशिरुच्छ्रितः समूहविशेषस्तम्। पुलकादयो रत्नविशेषाः प्रसिद्धाः, नवरं **वेरिंद** त्ति वज्रं **सासग** त्ति सस्यकश्चन्द्रप्रभश्चन्द्रकान्तः, **महीतलप्रतिष्ठित**मिति राशेर्विशेषणम् । पुलकादिवररत्नैर्**गगनमण्डलान्तं** यावत्**प्रकाशयन्तम्** । **तुङ्ग**मुच्चम् । उच्चत्वं च वस्त्वन्तरापेक्षया अनियतस्वरूपमत आह - **मेरुगिरिसन्निकाशं** मेरुगिरितुल्यम् ।13।

**[सू.145] सिहिं च सा विउलुज्जलपिंगलमहुघयपरिसिच्चमाणनिद्धूमधगधगाइयजलंतजालुज्जला-भिरामं तरतमजोगेहिं जालपयरेहिं अण्णमण्णमिव अणुपइण्णं पेच्छइ जालुज्जलणगअंबरं व कत्थइ पयंतं अइवेगचंचलं सिहिं १४ ।**

[ज.145] **'सिहिं च'**त्ति *गयवसभगाथाया[दशा. 8-132]*अन्ते **'सिहिं च त्ति'** यत्पदं तस्येदं ग्रहणकवाक्यम्, अत एव 'तत' इति नोक्तम्, विशेष्यपदं तु स्वप्नवर्णकान्ते सिहिमिति **शिखिनं च सा** त्रिशला देवी **पश्यति** । कीदृशम् ? विपुला उज्ज्वलेन पिङ्गलेन च मधुघृतेन परिषिच्यमाना निर्धूमा धगधगायमाना-धगधगिति कुर्वन्त्यो ज्वलन्त्यो-दीप्यमाना या ज्वाला- अर्चिषस्ताभिरुज्ज्वलमत एवाभिरामम् । तरतमयोगो विद्यते येषु ते तरतमयोगा अभ्रादित्वादप्रत्ययः, एका ज्वाला उच्चा, अन्या पुनरुच्चतरा, अपरास्तूच्चतमा इति **तरतमयोगयुक्तैर्ज्वालाप्रकरैः** कलापैर**न्योन्यमनुप्रकीर्णमिव**-

मिश्रितमिव स्पर्धया तदीया ज्वाला अन्योन्यमनुप्रविशन्तीवेत्यर्थः । **'जालुज्जलणगअंबरं व कत्थइ पयंतं'** ज्वालानामूर्ध्वं ज्वलनं-ज्वालोज्ज्वलनं, तदेव ज्वालोज्ज्वलनकमार्षत्वाद्विभक्तिलोपे, तेन कत्थइ क्वचित्प्रदेशेऽम्बरमाकाशं पयंतमिव-पचन्तमिव क्वचिदभ्रंलिहाभिर्ज्वालाभिराकाशमिव पक्तुमुद्यतमिवेति भावः । **अतिवेगचञ्चल**मिवेति व्यक्तम् ।14।

एते च स्वप्नवर्णका बहुष्वादर्शेषु न दृश्यन्त एव, येष्वपि सन्ति तेष्वपि बहवो वाचनाभेदाः सङ्क्षिप्तव्यासादिकाः पाठान्तररूपा वा भेदाः सन्ति । अत एव दशाश्रुतस्कन्धचूर्णिकृता स्वप्ना न व्याख्याताः । अत्र तु यथादर्शदृष्टाः पूर्वाचार्यप्रणीतवृत्तितो व्याकृताः । न्यूनाधिकपददर्शने न विरोध उद्भावनीयो, विस्तरकरणे तु भद्रबाहुस्वामिन एव स्वतन्त्राः, सङ्क्षिप्तलिखने लेखकानामेव तथाविधमालस्यं ज्ञातव्यम् उत्कृष्टपदसङ्ख्यादर्शने जघन्यपदसङ्ख्यायास्तत्रैवान्तर्भूतत्वात् । न च पाठान्तरेऽपि विरोधोऽङ्गीकरणीयः पर्यायान्तरेण तस्यैवार्थस्याभिधानात् इति कृतं प्रसङ्गेन ।

**[सू.146] [1]इमे एयारिसे सुभे सोमे पियदंसणे सुरूवे सुविणे दट्ठूण सयणमज्झे पडिबुद्धा अरविंदलोयणा हरिसपुलइयंगी ।**

**एए चोद्दस सुमिणे, सव्वा पासेइ तित्थयरमाया ।**
**जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरहा ॥२०॥**

[ज.146] प्रकृतमुपतन्यते - **'इमे एयारिसे' इमानेतादृशान् शुभान्** कल्याणहेतून्, **सौम्यान्** उमा-कीर्तिस्तत्सहितत्वात् सोमान्, प्रियं दर्शनं-स्वप्नेऽवभासो येषां ते प्रियदर्शनास्तान्, **सुरूपान्** शोभनस्वभावान् **स्वप्नान्** गजादीन् **शयनमध्ये** निद्रान्तरे **दृष्ट्वा प्रतिबुद्धा** जागरिताऽरविन्दं-कमलं तद्वदर्थाद्विकसिते लोचने यस्याः सा तथा । हर्षेण पुलकितं-सञ्जातरोमाञ्चितमङ्गं- शरीरं यस्याः सा **हर्षपुलकिताङ्गी ।**

अथैतान् स्वप्नान् तीर्थकरमातरः सर्वा अपि पश्यन्तीति गाथया दर्शयितुमाह ग्रन्थकारः - **'एए'** इत्यादि **एतानन्तरोक्तान् चतुर्दश स्वप्नान् पश्यति तीर्थकरमाता**, कदेत्याह - **यस्यां रात्रौ व्युत्क्रामति कुक्षौ महायशाः अर्हन्** । जातित्वादेकवचनं न दूषणावहम् । शेषं प्राग्वत् ।

**[सू.147] तए णं सा तिसला खत्तियाणी इमेयारूवे ओराले चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठ जाव हयहियया धाराहयकलंबपुप्फगं पिव समूससियरोमकूवा सुमिणोग्गहं करेइ, सुमिणोग्गहं करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सयणिज्जाओ अब्भुट्ठित्ता पायपीढातो पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता अतुरियं अचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सयणिज्जे जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिद्धत्थं खत्तियं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं [2]मणोरमाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरियाहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं मियमहुरमंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेइ ।**

---

1 'इमे' इत्यस्य स्थाने 'एमेते' इति पाठः मुद्रिते ।

2 'मणामा°' इति Kh - मुद्रिते ।

[ज.147] **'ताहिं इट्ठाहि'**मित्यादि या विशिष्टगुणोपेतास्**ताभिर्गीभि**रिति सम्बन्धः, **इष्टाभिः**- तस्य वल्लभाभिः, **कान्ताभि**रभिलषिताभिः सदैव, तेन **प्रियाभिः** अद्वेष्याभिः सर्वेषामपि **मनोज्ञाभि**र्मनोरमाभिः कथयापि **मनोरमाभि**र्मनःप्रियाभिश्चिन्तयापि **उदाराभि**रुदारनादवर्णोच्चारादिमुक्ताभिः **कल्याणाभिः** समृद्धिकारिकाभिः **शिवाभि**र्गीर्दोषानुपद्रुताभिः **धन्याभि**र्धनलम्भिकाभिः **मङ्गल्याभि**र्मङ्गले साध्वीभिः **सश्रीकाभि**रलङ्कारादिशोभावतीभिः **हृदयगमनीयाभिः** हृदये या गच्छन्ति कोमलत्वात्सुबोधत्वाच्च तास्तथा ताभिः **हृदयप्रह्लादनीयाभि**राह्लादिकाभिः **मितमधुरमञ्जुलाभिः** मिता-वर्णपदवाक्यापेक्षया परिमिता मधुराः-स्वरतो मञ्जुला-मनोरमाः शब्दतो यास्ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः ।

**[सू.148] तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणी[1]कणगरयण-भत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि निसीयइ, निसीइत्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया सिद्धत्थं खत्तियं ताहिं इट्ठाहिं जाव संलवमाणी संलवमाणी एवं वयासी ।**

[ज.148] '**तए ण**'मिति **ततो**ऽनन्तरं, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, '**णाणामणी**'त्यादि नानामणिकनकरत्नानां भक्तिभि-र्विच्छित्तिभिश्चित्रे-विचित्रे ।

**[सू.149] एवं खलु अहं सामी ! अज्ज तंसि तारिसयंसि सयणिज्जंसि वन्नओ जाव पडिबुद्धा । तं जहा - गय वसह० गाहा । तं एतेसिं सामी ! ओरालाणं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ? ।**

[ज.149] **'वन्नओ'** इति प्रागुक्ता वर्णना ।

**[सू.150] तए णं से सिद्धत्थे राया तिसलाए खत्तियाणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठचित्ते आणंदिए पीइमणे परमसोमणसिए हरिसवसविसप्पमाणहियए धाराहयनीवसुरहिकुसुमचुंचुमालइयरोमकूवे ते सुमिणे ओगिण्हति, ते सुमिणे ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसइ, ईहं अणुपविसित्ता अप्पणो साहाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थोग्गहं करेइ, अत्थोग्गहं करित्ता तिसलं खत्तियाणीं ताहिं इट्ठाहिं [2]कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणोरमाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरियाहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं मियमहुरसस्सिरीयाहिं वग्गूहिं संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी ।**

[ज.150] '**ते सुमिणे ओगिन्हइ**'त्ति **तान् स्वप्नानवगृह्णाति** अर्थावग्रहतः, **ईहामनुप्रविशति** सदर्थपर्यालोचन-लक्षणाम् । ततः '**अप्पणो**' इत्यादि प्राग्वद् व्याख्येयम् ।

'**ताहि**'मित्यादि पुनर्विस्तरेण व्याख्यायते - **ताभि**र्विवक्षिताभिः । विवक्षितत्वमेवाऽऽह - **'इट्ठाहिं'** ति इष्यन्ते स्मेतीष्टा -वाञ्छितास्ताभिः । प्रयोजनवशादिष्टमपि किञ्चित्स्वरूपतः कान्तं स्यात् अकान्तं चेत्यत आह - '**कंताहिं**' कमनीयशब्दाभिः '**पियाहिं**'ति अद्वेष्याभिः । **'मणुण्णाहिं'** मनसा ज्ञायन्ते सुन्दरतया यास्ता मनोज्ञा-भावतः सुन्दरा इत्यर्थः ताभिः । '**मणामाहिं**'ति मनसा अम्यन्ते-गम्यन्ते

1 '°कणग°' इति नास्ति मुद्रिते ।

2 'कंताहिं....हिययपल्हायणिज्जाहिं' इत्यस्य स्थाने 'जाव मंगल्लाहिं' इत्येव पाठः Kh - मुद्रिते ।

पुनः पुनर्याः सुन्दरत्वातिशयात्ता मनोमास्ताभिः । '**मणाभिरामाहिं**'ति तत्र मनोभिर्विधिनाऽतिबहुकालं यावद्रमयन्तीति मनोभिरामा अतस्ताभिः । '**उरालाहिं**'ति **उदाराभिः** शब्दतोऽर्थतश्च । '**कल्लाणाहिं**'ति **कल्याणाभिः** श्रुतार्थप्राप्तिसूचिकाभिः । '**सिवाहिं**'ति उपद्रवरहिताभिः शब्दार्थदूषणरहिताभिरित्यर्थः । '**धन्नाहिं**'ति **धन्याभि**र्धनलम्भिकाभिः । '**मंगलाहिं**'ति **माङ्गल्याभि**र्मङ्गलेऽनर्थप्रतिघाते साध्वीभिः । '**ससिरीयाहिं**'ति **सश्रीकाभिः** शोभायुक्ताभिः । '**हिययगमणिज्जाहिं**'ति **हृदयगमनीयाभिः** सुबोधाभिरित्यर्थः। '**हिययपल्हायणिज्जाहिं**' ति **हृदयप्रह्लादनीयाभिः** हृदयगतकोपशोकादिग्रन्थिविलयनकारिणीभिरित्यर्थः । '**मियमहुरसस्सिरीयाहिं**'ति मिता-परिमिता मधुराक्षराः- कोमलशब्दाः सश्रीकाभिः- सह श्रियोक्तगुणलक्षणा यास्तास्तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः ततस्ताभिः । '**वग्गूहिं**' ति **वाग्भि**र्गीर्भिः । इष्टादीन्येकार्थिकान्येव वा प्रायः ।

**[सू.151] ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा एवं सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरीया आरोग्गतुट्ठिदीहाउयकल्लाणमंगल्लकारगा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा । तं जहा - अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो० सोक्खलाभो० रज्जलाभो०, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं अम्हं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसयं कुलतिलयं कुलकित्तिकरं कुलदिणयरं कुलआहारं कुलनंदिकरं कुलजसकरं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणसंपुन्नपंचेंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणपमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पियं सुदंसणं दारयं पयाहिसि ।**

[ज.151] '**देवाणुप्पिए**'त्ति हे सरलस्वभावे ! '**अत्थलाभो**'इत्यादि अर्थो-हिरण्यादिः भोगाः-शब्दादयः **पुत्रलाभ**स्तनयजन्म सौख्यं-निर्वृत्तिः राज्यं-सप्ताङ्गस्वरूपं भविष्यन्तीति शेषो दृश्यः । **कुलकेत्वा**दीनि त्रयोदश पदानि – केतु - श्चिह्नं ध्वज इव कुलस्य केतुरिव केतुरद्भुतभूतत्वात् कुलकेतुस्तम्, पाठान्तरेण कुलहेतुं कुलकारणम् । एवं दीप इव दीपः प्रकाशकत्वात् मङ्गलत्वाच्च । पर्वतो-ऽनभिभवनीयः स्थिराश्रयसाधर्म्यात् । अवतंसः-शेखरः उत्तमत्वात् । तिलको-विशेषको भूषकत्वात् । कीर्तिकरः-ख्यातिकरः, क्वचिद्वृत्तिकर इत्यपि दृश्यते वृत्तिश्च निर्वाहः। कुलदिनकरोऽत्यन्तप्रकाशकत्वात् । कुलस्याऽऽधारः पृथिवीवत् । नन्दिकरो-वृद्धिकरः । यशः-सर्वदिग्गामिप्रसिद्धिविशेषस्तत्करः । पादपो-वृक्ष आश्रयणीयच्छायकत्वात् । विवर्धनं-विविधैः प्रकारैर्वृद्धिरेव तत्करः । **सुकुमाले**त्यादि पूर्ववत् ।

**[सू.152] से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिन्नविउलबलवाहणे रज्जवई राया भविस्सइ, तं जहा–ओराला णं तुमे जाव दोच्चं पि तच्चं पि अणुवूहइ ।**

**[सू.153] तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा जाव हियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी ।**

**[सू.154] एवमेयं सामी ! तहमेयं सामी ! अवितहमेयं सामी ! असंदिद्धमेयं सामी ! इच्छियमेयं सामी ! पडिच्छियमेयं सामी ! इच्छियपडिच्छियमेयं सामी !, सच्चे णं एसमट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ, ते सुमिणे सम्मं पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए; जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता एवं वयासी ।**

[ज.152-154] **शूरो** दानतोऽभ्युपेतनिर्वाहणतो वा । **वीरः** सङ्ग्रामकरणतः, क्वचिद्धीर इति पठ्यते तत्रापि स एवार्थः । **विक्रान्तो** भूमण्डलाक्रमणतः । विस्तीर्णादपि विपुले-ऽतिविस्तीर्णे बलवाहने-सैन्यगवादिके यस्य स तथा । **राज्यपती** राजा-स्वतन्त्र इत्यर्थः ।

'**त**'मिति यस्मादेवं तस्मादुदारादिविशेषणाः स्वप्नास्त्वया दृष्टा इति । निगमनमित्यादि प्राग्व्याख्यातार्थम् ।

**[सू.155] मा मे ते उत्तमा पहाणा मंगल्ला महासुमिणा अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्संति त्ति कट्टु देवयगुरुजणसंबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं लट्ठाहिं कहाहिं सुमिणजागरियं जागरमाणी जागरमाणी विहरइ ।**

[ज.155] **'दोच्चंपि तच्चंपि'** द्विरपि त्रिरपि उत्तमाः स्वरूपतः, प्रधानाः फलतः । एतदेवाऽऽह-**मङ्गल्या** मङ्गले साधवः । **'सुमिणजागरियं'**ति स्वप्नसंरक्षणार्थं जागरिकां **जाग्रती** विदधती तान् स्वप्नान् संरक्षणेनोपचरन्ती, क्वचिच्च 'पडिजागरमाणी'इति पाठः तत्र प्रतिजाग्रती विदधती आभीक्ष्ण्ये द्विर्वचनम् ।

**[सू.156] तए णं सिद्धत्थे खत्तिए पच्चूसकालसमयंसि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, कोडुंबियपुरिसे सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अज्ज सविसेसं बाहिरिज्जं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्त-[1]सुइयसम्मज्जिओवलित्तं सुगंधवरपंचवन्नपुप्फोवयारकलियं कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघ-मघेंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह कारवेह, करेत्ता कारवेत्ता य सीहासणं रयावेह, सीहासणं रयावित्ता ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह ।**

[ज.156] '**पच्चूसे**'त्यादि प्रत्यूषकाललक्षणो यः समयोऽवसरस्तस्मिन् **कौटुम्बिकपुरुषान्** आदेशकारिणः '**सद्दावेइ**'त्ति आह्वयति । '**खिप्पामेव**'त्ति शीघ्रमेव '**उवट्ठाणसाल**'मिति **उपस्थानशाला**मास्थानमण्डपं '**गंधोदगे**'त्यादि गन्धोदकेन सिक्ता शुचिका-पवित्रा सम्मार्जिता-कचवरापनयनेनोपलिप्ता- छगणादिना या सा तथा ताम्, इदं च विशेषणं गन्धोदकसिक्तसम्मार्जितोपलिप्तशुचिकामित्येवं दृश्यं सिक्ताद्यनन्तर-भावित्वाच्छुचिकत्वस्य । तथा सुगन्धवरश्च तथा पञ्चवर्णश्च पुष्पलक्षणो य उपचारः- पूजा तेन कलिता या सा तथा ताम्। '**काले**'त्यादि पूर्ववत् । '**आणत्तियं पच्चपिणह**'त्ति **आज्ञप्ति**मादेशं **प्रत्यर्पयत** कृतां सतीं निवेदयत ।

**[सू.157] तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयल जाव**

1 '°सुइय°' इति नास्ति मुद्रिते ।

**कट्टु एवं सामि ! त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति, एवं पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतियाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्त जाव सीहासणं रयावेंति, सीहासणं रयावित्ता जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सिद्धत्थस्स खत्तियस्स तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति ।**

[ज.157] '**एवं सामि**'त्ति **एव**मित्यादेशम्, **स्वामिन्** इत्यामन्त्रणार्थम्, **इति**रुपदर्शने ।

**[सू.158] तए णं सिद्धत्थे खत्तिए कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिल्लियम्मि अहा[1] पंडरे पहाए रत्तासोयपहा [2]किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलायरसंडविबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते [3]तस्स य करपहरापरद्धंमि अंधयारे बालायवकुंकुमेणं खचियव्व जीवलोए सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ ।**

[ज.158] '**कल्ल**'मित्यादि श्वः, प्रादुः प्राकाश्ये ततः **प्रकाशप्रभातायाम्** रजन्याम् । **फुल्लोत्पलकमलकोमलो-न्मीलिते** फुल्लं-विकसितं तच्च तदुत्पलं च-पद्मं फुल्लोत्पलं, तच्च कमलश्च-हरिणविशेषः फुल्लोत्पलकमलौ तयोः कोमल-मकठोरमुन्मीलितं दलानां नयनयोश्चोन्मीलनं यस्मिन् तत्तथा तस्मिन् । **अथ** रजनीविभातानन्तरं दीर्घत्वमार्षत्वात्, **पाण्डुरे** शुक्ले **प्रभाते** उषसि । रक्ताशोकस्य-तरुविशेषस्य प्रभा च किंशुकं च-पलाशपुष्पं च शुकमुखं प्रतीतं गुञ्जा- रक्तकृष्णः फलविशेषः तदर्धं चेति द्वन्द्वः, एतेषां यो रागो-रक्तत्वं तेन सदृशे; क्वचिच्च गुंजद्धरागबंधुजीवगपारावयचलणनयणपरहुयसुरत्तलोयणजासुअणकुसुमरासिहिंगुलनियराति-रेयरेहंतसरिसे इति पाठस्तत्र बन्धुजीवकं-पुष्पविशेषः पारापतस्य चरणौ नयने च परभृतस्य-कोकिलस्य सुरक्तस्य जात्यत्वान्मधुरकण्ठस्य लोचने-नेत्रे परभृतस्य वा सुरक्ते-सुशब्देन कोपाविष्टत्वलक्षणात् कोपारक्ते लोचने, जासुयणकुसुमरासि त्ति जपापुष्पप्रकरः हिङ्गुलकनिकरः- सुवर्तितकुरुविन्दगुलिका, एतेभ्योऽतिरेकेणा-ऽऽधिक्येन राजमानः सदृशस्तस्मिन्, अरुणत्वमात्रेण सदृशः विशिष्टदीप्त्या त्वतिरिक्तः इति भावः । कमलाकराः- पद्मोत्पत्तिभूता ह्रदादयस्तेषु यानि खण्डानि-नलिनवनानि तेषां विबोधको-विकाशको यः स तथा तत्र । **उद्गते सूरे** रवौ, किम्भूते? **सहस्ररश्मौ** तथा **दिनकरे** दिनकरणशीले **तेजसा ज्वलति** सति, '**तस्स य करपहरापरद्धंमि**'त्ति **तस्य च** कराः किरणास्तेषां तैर्वा प्रहारो-ऽभिघातस्तेनापराद्धे-विनाशितेऽन्धकारे, पहर त्ति *घञ्वृद्धेर्वे[सि.हे.8-1-68]*ति प्राकृतलक्षणेन ह्रस्वः, बालातपः कुङ्कुममिव तेन खचिते इव - पिञ्जरिते इव जीवलोके-मध्यजगति शयनीयादभ्युत्तिष्ठति ।

**[सू.159] सयणिज्जाओ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पायपीढाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता अट्टणसालं अणुपविसइ, अट्टणसालं अणुपविसित्ता**

---

1 'अहा' इत्यस्य स्थाने 'अह' इति पाठो मुद्रिते ।

2 'पगासकिं°' इति Kh-मुद्रिते ।

3 'तस्स करपहरापरद्धंमि अंधयारे बालायवकुंकुमेणं खचियव्व जीवलोए' इति नास्ति मुद्रिते ।

**अणेगवायामजोगवग्गणवामद्दणमल्लजुद्धकरणेहिं संते परिस्संते सयपागसहस्सपागेहिं सुगंधवरतेल्लमाइएहिं पीणणिज्जेहिं[1] दीवणिज्जेहिं दप्पणिज्जेहिं [2]मद्दणिज्जेहिं विंहणिज्जेहिं सव्विंदियगायपल्हायणिज्जेहिं [3]अब्भंगेहिं अब्भंगिए समाणे तेल्लचम्मंसि[4] पडिपुन्नपाणिपायसुकुमालकोमलतलेहिं पुरिसेहिं अब्भंगणप-रिमद्दणुव्वलणकरणगुणनिम्माएहिं छेएहिं दक्खेहिं पट्ठेहिं कुसलेहिं मेधावीहिं जियपरिस्समेहिं अट्ठिसुहाए मंसमुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए सुहपरिकम्मणाए संवाहणाए[5] संवाहिते समाणे अवगयपरिस्समे अट्टणसालाओ पडिनिक्खमइ ।**

[ज.159] '**अट्टणसाले**'त्यादि **अट्टनशाला** व्यायामशाला । अनेकानि व्यायामनिमित्तं योग्यादीनि तानि तथा तत्र, योग्या च-गुणनिका वल्गनं - चोल्लनं व्यामर्दनं-परस्परेण बाह्वाद्यङ्गमोटनं मल्लयुद्धं च प्रतीतं करणानि - चाङ्गभङ्गविशेषाः मल्लशास्त्रप्रसिद्धानि, तैः **श्रान्तः** - सामान्येन **परिश्रान्तो-**ऽङ्गप्रत्यङ्गापेक्षया सर्वतः । शतकृत्वो यत्पक्वम् अपरापरौषधीरसेन सह शतेन वा कार्षापणानां यत् पक्वं तच्छतपाकमिति । एवमितरदपि सुगन्धिवरतैलादिभिरभ्यङ्गैरिति योगः, आदिशब्दात् घृतकर्पूरपानीयादिग्रहः । किम्भूतैः ? **प्रीणनीयैः** रसरुधिरादिधातुसमताकारिभिः **दीपनीयै**रग्निजननैः **मर्दनीयै**र्मन्मथवर्धनैः **बृंहणीयै-**र्मांसोपचयकारिभिः **दर्पणीयै**र्बलकरैः सर्वेन्द्रियाणि -सर्वगात्राणि च प्रह्लादयन्तीति सर्वेन्द्रियगात्रप्रह्लादनी-यास्तै**रभ्यङ्गैः** स्नेहनै रसैः, अभ्यङ्गः क्रियते यस्य सोऽ**भ्यङ्गितः** सन्, तत**स्तैलचर्मणि** तैलाभ्यक्तस्य सम्बाधनाकरणाय यच्चर्म-तूलिकोपरि कडत्रं तत्तैलचर्म, तत्र '**संवाहिते समाणे**'त्ति योगः । कैरित्याह - **पुरुषैः**, कथम्भूतैः ? प्रतिपूर्णानां पाणिपादानां सुकुमालकोमला-न्यतिकोमलान्यधोभागापेक्षया येषां ते तथा तैः । तथा क्वचित् सुइसुकुमालेति पाठः सुबोध एव । क्वचिदभ्यङ्गपरिमर्दनपदमग्रेतनपदेषु दृश्यते तत्राप्ययमेवार्थः । अभ्यङ्गपरिमर्दनोद्वलनानां प्रतीतार्थानां ये गुणविशेषास्तेषु निर्माताः-सदभ्यस्ता ये ते तथा तैः । तथा **छेकै**रवसरज्ञैः, द्विसप्ततिकलापण्डितैरिति वृद्धाः । **दक्षैः** कार्याणामवलम्बितकारिभिः । **प्रष्ठै**-र्वाग्मिभिरिति वृद्धाः अथवा प्रष्ठैरग्रगामिभिः । **कुशलैः**- साधुभिः सम्बाधनकर्मणि । **मेधाविभि-**रपूर्वविज्ञानग्रहणशक्तिनिष्ठैः । 'निउणेहिं निउणसिप्पोवगएहिं' ति क्वचित् दृश्यते, तत्र निपुणै-रुपायकुशलैः निपुणानि-सूक्ष्माणि यानि शिल्पानि- अङ्गमर्दनादीनि तान्युपगतानि - अधिगतानि यैस्ते तथा तैः । **जितपरिश्रमैः** । व्याख्यान्तरे तु छेकैः- प्रयोगज्ञैः दक्षैः-शीघ्रकारिभिः '**पत्तट्ठेहिं**'ति प्राप्तार्थैरधिकृतकर्मणि निष्ठां गतैः कुशलै-रालोचितकारिभिः मेधाविभिः-सकृच्छ्रुतदृष्टकर्मज्ञैः निपुणै-रुपायारम्भिभिः निपुणशिल्पोपगतैः-सूक्ष्मशिल्पसमन्वितैरिति । अस्थ्नां सुखहेतुत्वादस्थिसुखा तया, एवं शेषाण्यपि पदानि। सुखा-सुखकारिणी परिकर्मणा- अङ्गशुश्रूषा सुखपरिकर्मणा तया । तस्याश्च

1 अत्र 'जिंघणिज्जेहिं' इत्यधिकः पाठो मुद्रिते ।

2 '°मयणि°' इति Kh- मुद्रिते ।

3 'अब्भंगेहिं' पदं नास्ति Kh- मुद्रिते किन्तु टीकाकारेण व्याख्यातमिति कृत्वाऽत्र स्वीकृतम् ।

4 'णिउणेहिं' इत्यत्र अधिकः पाठो मुद्रिते ।

5 'संवाहणाए' इति नास्ति मुद्रिते ।

बहुविधत्वात्कतमयेत्याह - '**संवाहणाए**'त्ति **सम्बाधनया** वा विश्रामणया । **अपगतपरिश्रमः**; क्वचित् अवगयखेयपरिस्समेत्ति पाठः तत्र खेदो-दैन्यं *खिद दैन्ये [पा.धा. दिवादि 64]* इति वचनात्, परिश्रमो-व्यायामजनितः शरीरस्वास्थ्यविशेषः ।

**[सू.160] अट्टणसालाओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ, अणुप्पविसित्ता समुत्त[1]जालाकुलाभिरामे विचित्तमणिरयणकोट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि नाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहनिसन्ने पुप्फोदएहि य गंधोदएहि य उण्होदएहि य सुहोदएहि य सुद्धोदएहि य कल्लाणक[2]पवरमज्ज[3]णावसाणे मज्जिए, तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासातियलूहियंगे अहयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुए सरससुरहिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते सुइमालावन्नगविलेवणे आविद्धमणिसुवन्ने कप्पियहारद्धहारति-सरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तयसुकयसोहे पिणद्धगेविज्जे अंगुलिज्जगललियकयाभरणे वरकडगतुडियथं-भियभुए अहियरूवसस्सिरीए कुंडलउज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयरइयवच्छे मुद्दिया-पिंगलंगुलीए पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे नाणामणिकणगरयणविमलमहरिहनिउणोवियमि-सिमिसिंतविरइयसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठ[4]संठिअपसत्थआविद्धवीरवलए । किं बहुणा ? कप्परुक्खए[5] विय अलंकियविभूसिए नरिंदे सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं मंगलजयसद्दकयालोए अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदो-वारियअमच्चचेडपीढमद्दणगरनिगमसेट्ठिसेणावइसत्थवाहदूयसंधिपालसद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेह-निग्गए इव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससि व्व पियदंसणे नरवई [6]नरिंदे नरवसभे नरसीहे अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणे मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ ।**

[ज.160] '**समुत्तजालाकुलाभिरामे**'त्ति समुक्तेन-मुक्ताफलयुतेन जालेनाऽऽकुलोऽभिरामश्च- रम्यो यः स्नानमण्डपः स तथा; पाठान्तरेण समंतजालाकुलाभिरामे त्ति समन्तात्-सर्वतो जालकै-र्विच्छित्तिच्छिद्र-वद्गृहावयवविशेषैराकुलो- व्याप्तोऽभिरामश्च- रमणीयो यः स तथा; पाठान्तरेण समत्तजालाभिरामे त्ति समस्तः- सर्वो जालकैरभिरामो यः स तथा तत्र । तथा विचित्रमणिरत्नाभ्यां कुट्टिमतलं- बद्धभूमिका यत्र स तथा तत्र । **रमणीये स्नानमण्डपे नानामणिरत्नभक्तिचित्रे स्नानपीठे** सुखं निषण्णः, ततः **पुष्पोदकैः** पुष्पपरिमलमिश्रैः, **गन्धोदकैः** श्रीखण्डादिरसमिश्रैः, **उष्णोदकै**-रग्नितप्तोदकैः **शुभोदकैः** पवित्रस्थानाहृतैस्तीर्थोदकैः सुखोदकैर्वा नात्युष्णोदकैरित्यर्थः, **शुद्धोदकैश्च** स्वाभाविकैः । कथं मज्जित

1 '°जालकलावाभि°' इति मुद्रिते ।

2 '°करणप°' इति मुद्रिते ।

3 '°ज्जणविहीए म°' इति मुद्रिते ।

4 '°संठिअपसत्थ°' इति नास्ति Kh-मुद्रिते ।

5 '°क्खते चेव अ°' इति मुद्रिते ।

6 'नरिंदे' इत्यस्मादारभ्य 'दिप्पमाणे' पदं यावन्नास्ति मुद्रिते ।

इत्याह - '**तत्थ**'त्ति **तत्र** स्नानावसरे कौतुकानां रक्षादीनि शतानि तैः, '**कल्लाणग**'त्ति कल्याणानि कायत्याकारयतीति कल्याणकमेवंविधं यत्प्रवरमज्जनं तस्यावसाने, '**पम्हले**'त्यादि पक्ष्मला-पक्ष्मवत्यत एव सुकुमाला गन्धप्रधाना काषायिका- कषायरक्तशाटिका तया लूषितं - विरूक्षितम् अङ्गं यस्य स तथा । अहतं- मलमूषिकादिभिरनुपद्रुतं प्रत्यग्रमित्यर्थः सुमहार्घं-बहुमूल्यं यत् दूष्यरत्नं-प्रधानवस्त्रं तेन सुसंवृतः- परिगतः यद्वा सुष्ठु संवृतं- परिहितं येन स तथा; क्वचित् नासानीसासवायवज्झचक्खुहरवण्णफरिस-जुत्तहयलालापेलवाइरेगधवलकणगखचियंतकम्मदूसरयणसुसंवुएत्ति दृश्यते तत्र नासानिश्वासवातेन वाह्यं-हरणीयं श्लक्ष्णत्वात्, चक्षुर्हरन्त्यात्मवशं नयन्ति विशिष्टरूपातिशयकलितत्वात् चक्षुर्हरं चक्षुर्धरं वा - चक्षूरोधकं घनत्वात्, वर्णस्पर्शयुक्तं - प्रधानवर्णस्पर्शं, हयलालायाः सकाशात्पेलवं- मृदु अतिरेकेण- अतिशयेन धवलं यत्तत्तथा कनकेन खचितं मण्डितम् अन्तयोः- अञ्चलयोः कर्म- वानलक्षणं यस्य तत्तथा तेन सुसंवृतः । शुचिनी- पवित्रे माला च- पुष्पमाला वर्णकविलेपनं च-मण्डनकारिकुङ्कुमादिविलेपनं यस्य स तथा, यद्यपि वर्णकशब्देन नामकोशे चन्दनमभिधीयते तथापि **सरससुरहिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते** इत्यनेनैव विशेषणेन तस्योक्तत्वात् इह वर्णकं चन्दनमिति न व्याख्यातम् । आविद्धानि मणिसुवर्णानि यस्य स तथा, मणिमयं सुवर्णमयं च त्यक्त्वा न धात्वन्तरमयं भूषणमिति भावः । कल्पितो- विन्यस्तो हारो-ऽष्टादशसरिकोऽर्धहारो-नवसरिकः त्रिसरिकं च प्रतीतमेव यस्य स तथा प्रालम्बो- झुम्बनकं प्रलम्बमानो यस्य स तथा कटिसूत्रेण-सारसनेन कट्याभरणविशेषेण सुष्ठुकृता शोभा यस्य स तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः; अथवा कल्पितहारादिभिः सुकृता शोभा यस्य स तथा । तथा पिनद्धानि-परिहृतानि ग्रीवायां ग्रैवेयकानि-कण्ठकाख्यग्रीवाभरणानि येन स तथा । अङ्गुलीयका-न्यङ्गुल्याभरणान्यूर्मिका ललितानि कचाभरणानि-पुष्पादीनि यस्य स तथा, क्वचित् पिणद्धगेविज्जगअंगुलिज्जगललियंगयललियकयाभरणे त्ति पाठः तत्र पिनद्धानि-बद्धानि ग्रीवादिषु ग्रैवेयकाङ्गुलीयकानि- ग्रीवाभरणाङ्गुल्याभरणानि येन स तथा ललिताङ्गके-ललितशरीरे अन्यान्यपि ललितानि- शोभावन्ति कृतानि-विन्यस्तान्याभरणानि यस्य स तथा, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः अथवा पिनद्धानि ग्रैवेयकाङ्गुलीयकानि ललिताङ्गदे च कचाभरणानि-केशाभरणानि पुष्पादीनि येन स तथा । तथा वरकटकत्रुटिकैः- प्रधानहस्ताभरणबाह्वाभरणविशेषैर्बहु-त्वात्तेषां तैः स्तम्भिताविव स्तम्भितौ भुजौ यस्य स तथा । अधिकरूपेण सश्रीकः- सशोभो यः स तथा । तथा कुण्डलोद्योतिताननः मुकुटदीप्तशिरस्क इति प्रतीतम् । हारेणावस्तृत-माच्छादितं तेनैव सुष्ठु कृतरतिकं च वक्ष- उरो यस्य स तथा । तथा मुद्रिकाः- सरत्नान्याभरणानि ताभिः पिङ्गलाः-कपिला अङ्गुलयो यस्य स तथा । तथा प्रलम्बेन- दीर्घेण प्रलम्बमानेन च- झुम्बमानेन सुकृतं पटेनोत्तरीयक-मुत्तरासङ्गो येन स तथा; क्वचित् उज्जलनेवत्थरइयचिल्लकविरायमाणे तेएण य दिवाकरो व्व दित्ते, तत्र उज्ज्वलान्यर्थात् वस्त्राणि नेपथ्या-न्याभरणानि तै रचितो रतिदो वा चिल्लको-देदीप्यमानो विराजमानश्च यः स तथा, तथा तेजसा दिवाकरवद्दीप्तः - सूर्यवत् दीप्ततेजाः । तथा नानामणिकनकरत्नैर्विमलानि महार्हाणि निपुणेन - शिल्पिना 'ओविय'त्ति परिकर्मितानि '**मिसिमिसिंत**'त्ति दीप्यमानानि यानि विरचितानि - निर्मितानि सुश्लिष्टानि- सुसन्धीनि विशिष्टा-न्यन्येभ्यो विशेषवन्ति लष्टानि- मनोहराणि

संस्थितानि- संस्थानवन्ति सदाकाराणि अत एव प्रशस्तानि-रम्याणि आविद्धानि- परिहितानि वीरवलयानि येन स तथा, सुभटो हि यदि क्वचिदन्योऽप्यस्ति वीरव्रतधारी तदासौ मां विजित्य मोचयत्वेतानि वलयानीति स्पर्धयन् यानि कटकानि परिदधाति तानि वीरवलयानीत्युच्यन्ते । **किं बहुना**, वर्णितेनेति शेषः ? **कल्पवृक्ष इवालङ्कृतविभूषित**स्तत्रालङ्कृतो-दलादिभिर्विभूषितो हि - फलपुष्पादिभिः कल्पवृक्षो, राजा तु मुकुटादिभिरलङ्कृतो विभूषितस्तु वस्त्रादिभिरिति । '**सकोरिंटमल्लदामेणं**'ति सकोरिण्टकानि-कोरिण्टकाभिधानकुसुमस्तबकवन्ति माल्यदामानि-पुष्पस्रजो यत्र तत्तथा तेन, कोरिण्टकः- पुष्पवृक्षजाति-विशेषस्तत्पुष्पाणि मालान्तेषु शोभार्थं दीयन्ते, मालायै हितानि माल्यानि-पुष्पाणि दामानि-माला इति । '**धरिज्जमाणेणं**' **ध्रियमाणेन** । वाचनान्तरे सूर्याभवर्णकः, स चैवम् - *एगावलिपिणद्धे [राजप्र.137]* इत्यादि राजप्रश्नीयसूत्रम्, तत्रैकावली- विचित्रमणिमयी मुक्तावली- केवलमुक्तामयी कनकावली-सौवर्णमणिमयी रत्नावली- रत्नमयी अङ्गदकेयूरे-बाह्वाभरणविशेषे, एतयोश्च यद्यपि नामकोशे एकार्थतोक्ता तथापीहाऽऽकारविशेषाद्भेदोऽवगन्तव्यः, कटकं- कलाचिकाभरणविशेषः त्रुटिकं- बाहुरक्षिकाः कटिसूत्रं-सारसनं दशमुद्रिकानन्तकं- हस्ताङ्गुलिमुद्रादशकं वक्षःसूत्रं- हृदयाभरणभूतं सुवर्णशृङ्खलकं, वच्छीसुत्तं ति पाठान्तरं तत्र वैकक्षिकासूत्रम् - उत्तरासङ्गपरिधानीयं शृङ्खलकं, मुरवी-मुरजाकारमाभरणं कण्ठमुरवी-तदेव कण्ठासन्नतरावस्थानं प्रालम्बो-झुम्बनकं कुण्डलानि-कर्णाभरणानि मुकुटः- शिरोभूषणं चूडामणिः-सर्वरोगाशिवादिप्रशमनं केशालङ्करणं, *रयणसंकडुक्कडं* ति रत्नसङ्कटं च तदुत्कटं चोत्कृष्टं रत्नसङ्कटोत्कटं, *ग्रन्थिमे*त्यादि इह ग्रन्थिमं-ग्रन्थेन निर्वृत्तं सूत्रग्रथितमालादि वेष्टिमं-वेष्टनेन निष्पन्नं यद् ग्रथितं सद्वेष्ट्यते पुष्पलम्बूसकादिः कन्दुक इत्यर्थः पूरिमं-येन वंशशलाकामयपञ्जरकादि कूर्चादि वा पूर्यते सङ्घातिमं तु यत्परस्परतो नालसङ्घातेन सङ्घात्यते, *अलंकिय* त्ति अलङ्कृतश्चासौ-कृतालङ्कारोऽत एव विभूषितश्च-सञ्जातविभूषश्चेत्यलङ्कृतविभूषितः, *वेरुलियभिसंतदंडे* त्ति वैडूर्यस्य भिसंत त्ति *भासेर्भा(र्भि)स[सि.हे. 8-4-203]* इति प्राकृतलक्षणात् भासमानो दण्डो यस्य स तथा तम्, *पलंबसकोरेंटमल्लदामं* ति प्रलम्बानि सकोरण्टकपुष्पगुच्छयुक्तानि माल्यदामानि-पुष्पमाला यत्र, चन्द्रमण्डलनिभं-परिपूर्णचन्द्रमण्डलाकारमुपरि धृतं यत्तेन तत्तथा, *नानामणी*त्यादि नानामणिकनकरत्नानां विमलस्य-महार्हस्य तपनीयस्य च सत्कावुज्ज्वलौ विचित्रौ दण्डौ ययोस्ते तथा, कनकतपनीययोः को विशेष ? उच्यते, कनकं पीतं तपनीयं रक्तमिति, *चिल्लिया*उत्ति दीप्यमाने लीने इत्येके; *संखंककुंद* इति शङ्खाङ्ककुन्ददकरजसाममृतस्य मथितस्य ततो यः फेनपुञ्जस्तस्य च सन्निकाशे ये ते तथा, इह चाङ्को रत्नविशेषः; *चामरा*उत्ति यद्यपि चामरशब्दो नपुंसकलिङ्गे रूढस्तथापीह स्त्रीलिङ्गतया निर्दिष्टस्तथैव गौडमते रूढत्वादिति । अथ प्रस्तुतवाचनाऽनुस्रियते- '**मंगले**'त्यादि मङ्गले-आदिमङ्गलभूते जयशब्दः कृत आलोकेन यस्य स तथा, आलोककृतमार्गदान इत्येके । अनेके ये गणनायकाः- प्रकृतिमहत्तराः, दण्डनायका-स्तन्त्रपाला, राजानो-माण्डलिकाः, ईश्वरा- युवराजानः अणिमाद्यैश्वर्ययुक्ता इत्यन्ये, तलवराः- परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूषिता राजस्थानीयाः, माडम्बिकाश्छिन्नमडम्बाधिपाः, कौटुम्बिकाः- कतिपयकुटुम्बप्रभवोऽवलगका ग्राममहत्तरा वा, मन्त्रिणः-सचिवाः, महामन्त्रिणो- महामात्याः मन्त्रिमण्डलप्रधाना हस्तिसाधनाध्यक्षा वा, गणका-

ज्योतिषिकाः भाण्डागारिका वा, दौवारिकाः-प्रतीहारा राजद्वारिका वा, अमात्या-राज्याधिष्ठायकाः, चेटाः- पादमूलिका दासा वा, पीठमर्दा-आसनासन्नसेवकाः वयस्या इत्यर्थः वेश्याचार्या वा, नागरा-नगरवासिप्रकृतयो राजदेयविभागाः, निगमाः-कारणिका वणिजो वा, श्रेष्ठिनः- श्रीदेवताध्यासित-सौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः, सेनापतयो- नृपतिनिरूपिताश्चतुरङ्गसैन्यनायकाः, इभ्याः-सारधनाच्छादि-हस्तिनः, सार्थवाहाः- सार्थनायकाः, दूता- अन्येषां गत्वा राजादेशनिवेदकाः, सन्धिपाला-राज्यसन्धिरक्षकाः, एषां द्वन्द्वः, ततस्तैः इह तृतीयाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः, सद्धिं ति सार्धं सहेत्यर्थः । न केवलं तत्सहितत्वमेवापि तु तैः समिति समन्तात्परिवृतः परिवरित इति नरपति**र्मज्जनगृहात्प्रतिनिः-क्रामती**ति सम्बन्धः । किम्भूतः ? प्रियदर्शनः, क इव ? धवलमहामेघनिर्गत इव शशी, तथा **ससिव्व** त्ति [1]तत्करणस्यान्यत्र सम्बन्धः, ततो **ग्रहगणदीप्यमानर्क्षतारकगणानां मध्ये** इव वर्तमान इति । **नरपति**-र्नराणां रक्षिता, **नरेन्द्रो** नरेष्वैश्वर्यानुभवनात्, **नरवृषभो** राज्यधुराधरणात्, **नरसिंहः** शौर्यातिशयात् । **अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानः** ।

**[सू.161] मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयइ, निसीइत्ता अप्पणो उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चत्थुयाइं सिद्धत्थयकयमंगलोवयाराइं [2]उत्तरावक्कमणाइं रयावेइ, रयावित्ता अप्पणो अदूरसामंते नाणामणिरयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जं महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हपट्टभत्तिसतचित्तताणं[3] ईहामियउसहतुर-गनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभ[4]ट्ठावयचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ, अंछावेत्ता नाणामणिरयणभत्तिचित्तं अत्थरयमिउमसूरगोत्थयं सेयवत्थपच्चत्थुयं सुमउयं अंगसुहफरिसगं विसिट्ठं तिसलाए खत्तियाणीए भद्दासणं रयावेइ ।**

[ज.161] '**सेयवत्थपच्चुत्थयाइं**'ति श्वेतवस्त्रेण- धवलवाससा प्रत्यवस्तृता-न्याच्छादितानि तथा । कृतः सिद्धार्थकप्रधानो मङ्गलनिमित्तमुपचारः-पूजा येषु तानि तथा, प्राकृतत्वात् कृतशब्दस्य मध्ये निपातः। '**उत्तरावक्कमणाइं**' इति स्वकीयासनादुत्तरस्यां दिशि वर्तमानानि । **आत्मनः** स्वस्य '**अदूरसामंते**'त्ति दूरं-विप्रकर्षतः सामन्तं- समीपमुभयोरभावोऽदूरसामन्तं, नातिदूरे नातिसमीपे उचितदेश इत्यर्थः। '**नाणामणी**'त्यादि यवनिकामासादयतीति सम्बन्धः, नानामणिरत्नै-श्चन्द्रकान्तादिकर्केतनादिभिर्मण्डिता या सा तथा ताम् । अधिकं प्रेक्षणीया- अवलोकनीया या सा तथा ताम्, क्वचित् अहियपेच्छणिज्जरूवमिति पाठस्तत्राधिकं प्रेक्षणीयं रूपं यस्यां सा तथा ताम् । '**सण्हपट्टभत्तिसयचित्तताणं**'ति सूक्ष्मपट्टसूत्रमयो भक्तिशतचित्रस्तानस्तानको यस्यां सा तथा ताम्; क्वचित् भत्तिसयसमुवचियमाणमिति पाठः तत्र भक्तिशतैः समुपचितैः स्फीतो मानो-बहुमानो यस्यां विषये इति योज्यं, *माणसपीइमाणो* इति वचनात्; क्वचिच्च

1 वतोऽन्यत्र सम्बन्ध इत्यर्थः ।

2 'उत्तरावक्कमणाइं' इति नास्ति Kh - मुद्रिते ।

3 '°त्तमाणं' इति मुद्रिते ।

4 '°ट्ठावय°' इति नास्ति Kh - मुद्रिते ।

सण्हबहुभत्तिसययसमुचिताणंति दृश्यते, तत्र च श्लक्ष्णानि बहुभक्तिशतानि यानि चित्राणि तेषां स्थानमत एव सततसमुचितां सर्वकालयोग्याम् । ईहामृगा-वृकाः, ऋषभतुरगनरमकरविहगाः प्रतीताः, व्यालाः-श्वापदा भुजगा वा, किन्नरा-व्यन्तरविशेषाः, रुरवो-मृगभेदाः, शरभाः-पराशराः, अष्टापदा-महाकाया आटव्यपशवः, चमरा- आटव्या गावः । '**अब्भिंतरियं**'ति आस्थानशालाया अभ्यन्तरभागवर्तिनीं **यवनिकां** काण्डपटं '**अंच्छावेइ**' आकर्षयति- आयतां कारयतीत्यर्थः । '**अत्थरए**'त्यादि आस्तरकेन-प्रतीतेन मृदुमसूरकेण वाऽवस्तृतमाच्छादितम् अथवा अस्तरजसा-निर्मलेन मृदुमसूरकेण अवस्तृतम् । श्वेतवस्त्रेण प्रत्यवस्तृत-मुपर्याच्छादितम्, **सुमृदुकं** कोमलमत एवाङ्गस्य सुखः- सुखकारी स्पर्शो यस्य तदङ्गसुखस्पर्शम्, **विशिष्टं** शोभनम्, '**भद्दासणं**'ति **भद्रासनं रचयति** ।

**[सू.162] भद्दासणं रयावित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थपारए विविहसत्थकुसले सुविणलक्खणपाढए सद्दावेह ।**

[ज.162] 'अट्ठंग'त्ति अष्टाङ्ग-मष्टावयवं दिव्योत्पातान्तरिक्षभौमाङ्गस्वरलक्षणव्यञ्जनभेदादङ्गविद्या-हरिवंशावश्यकचूर्ण्याद्युक्ताङ्गस्वप्नस्वरभौमव्यञ्जनलक्षणोत्पातान्तरिक्षभेदाद्वाऽष्टभेदं यन्महानिमित्तं-परोक्षार्थप्रतिपत्तिकारणव्युत्पादकः शास्त्रविशेषस्तस्य यौ सूत्रार्थौ तौ धारयन्ति पठन्ति वा तयोर्वा पारगा ये ते तथा; अनेन पाठत्रयं व्याख्यातं - धारए पाठए पारए इति ।

**[सू.163] तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठा जाव हयहियया करयल जाव पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतियाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता कुंडग्गामं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सुमिणलक्खणपाढगाणं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता सुविणलक्खणपाढए सद्दाविंति ।**

[ज.163] '**हट्ठ**'त्ति **याव**त्करणात् हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिया इत्यादि दृश्यम् । '**करयल**'त्ति **याव**त्करणात् करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तहत्ति विणएणं आणाए वयणं पडिसुणेंति त्ति अस्यार्थः- प्रतिशृण्वन्ति- अभ्युपगच्छन्ति वचनं विनयेन, किम्भूतेन ? इत्याह - एवमिति यथैव यूयं भणथ तथैव, देवो त्ति हे देव ! तहत्ति नान्यथा आज्ञया भवदादेशेन करिष्यामः इत्येवमभ्युपगमसूचकपदचतुष्टयभणनरूपेणेति ।

**[सू.164] तए णं ते सुविणलक्खणपाढगा सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पा[1] वेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवराइं परिहिया अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा सिद्धत्थकहरियालियकयमंगलमुद्धाणा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो निग्गच्छंति ।**

[ज.164] '**कयबलिकम्मे**'त्यादि स्नानान्तरं कृतं बलिकर्म यैः स्वगृहदेवतार्चनं ते तथा । कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि दुःस्वप्नादिविघातार्थमवश्यकरणीयत्वाद्यैस्ते तथा, तत्र कौतुकानि-

1 'सुद्धप्पावेसाइं' इत्येवमेकमेव पदं मुद्रिते ।

मषीतिलकादीनि मङ्गलानि-सिद्धार्थकदध्यक्षतदूर्वाङ्कुरादीनि; अन्ये त्वाहुः - 'पायच्छित्ता' पादेन पादे वा छुप्ता-श्चक्षुर्दोषपरिहारार्थं पादच्छुप्ताः, कृतकौतुकमङ्गलाश्च ते पादच्छुप्ताश्चेति विग्रहः । तथा **शुद्धात्मानः** स्नानेन शुचीकृतदेहाः । '**वेसाइं**'ति वस्त्राणीति योगः, वेषे साधूनि **वेष्याणि** अथवा शुद्धानि तानि प्रवेश्यानि च-राजसभाप्रवेशोचितानि चेति विग्रहः । **मङ्गल्यानि** मङ्गलकरणे साधूनि **वस्त्राणी**ति व्यक्तम्, **प्रवराणि** प्रधानानि **परिहितानि** निवसितानि । तथा अल्पानि-स्तोकानि महार्घाणि-बहुमूल्यानि यान्याभरणानि तैरलङ्कृतं शरीरं येषां ते तथा । सिद्धार्थकाः-सर्षपा हरितालिका च-दूर्वा कृतमङ्गलनिमित्तं मूर्धनि-शिरसि यैस्ते तथा । '**सएहिं**'ति **स्वकेभ्य** आत्मीयेभ्य इत्यर्थः ।

**[सू.165] निग्गच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सिद्धत्थस्स रन्नो भवणवरवडिंसगपडिदुवारे तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता भवणवरवडिंसगपडिदुवारे एगयओ [1]मिलायंति, एगयओ मिलित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करतलपरिग्गहियं जाव कट्टु सिद्धत्थं खत्तियं जएणं विजएणं वद्धाविंति ।**

[ज.165] '**भवणवर**'त्ति भवनवरेषु-हर्म्येषु अवतंसक इव- शेखर इव भवनवरावतंसकस्तस्य प्रतिद्वारं-समीपद्वारम् । '**एगओ मिलायंति**'त्ति **एकतो मिलन्ति**, तत्रैकतो मिलन्ति द्विधा- द्रव्यतो भावतश्च, तत्र द्रव्यतो ह्येकत्र मिलनमेव भावतस्तु परस्परस्पर्धापरिहरणतः, राजद्वारे हि निर्णयावसरे परस्परस्पर्धया न तथा यशोवादोऽत उक्तम् - एकतो मिलन्ति इति । सिद्धार्थनामानं क्षत्रियं द्वितीयवर्णवर्तिनम् । '**जएणं विजएणं वद्धावेंति**'त्ति **जयेन विजयेन** च 'त्वं वर्धस्व' इत्याचक्षन्त इत्यर्थः, शब्दार्थस्तु पूर्वमेव व्याख्यातः ।

**[सू.166] तए णं ते सुविणलक्खणपाढगा सिद्धत्थेणं रन्ना वंदियपूइयसक्कारियसम्माणिया समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति ।**

[ज.166] '**वंदिये**'त्यादि वन्दिताः- सद्गुणोत्कीर्तनेन पूजिताः- पुष्पैः सत्कारिताः- फलवस्त्रादिदानतः सन्मानिता- अभ्युत्थानादिप्रतिपत्त्या, अन्ये त्वाहुः- पूजिता-वस्त्राभरणादिभिः सत्कारिता- अभ्युत्थानादिना सन्मानिता- आसनदानादिना; क्वचित् अच्चियवंदियमाणियपूइये त्ति पाठः तत्रार्चिताश्चन्दनचर्चादिना मानिता दृष्टिप्रमाणतः, शेषं पूर्ववत् । क्वचित् ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणामाहिं वग्गूहिं उवसंगहिया समाणा इति पाठः, नवरम् उपसङ्गृहीताः स्वीयतया आदृताः, **समाण** त्ति सन्तः '**पुव्वन्नत्थेसु**' **पूर्वन्यस्तेषु भद्रासनेषु निषीदन्ति** उपविशन्ति ।

**[सू.167] तए णं सिद्धत्थे खत्तिए तिसलं खत्तियाणिं जवणियंतरियं ठावेइ, ठावित्ता पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे परेणं विणएणं ते सुमिणलक्खणपाढए एवं वयासि–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि जाव सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले जाव चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा । तं जहा–गय उसभ० गाहा । तं एतेसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं देवाणुप्पिया ! ओरालाणं जाव के मण्णे कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ।**

---

1 'मिलंति' इति मुद्रिते ।

[ज.167] **यवनिकान्तरितां स्थापयति** रक्षयति । **'पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे'** त्ति पुष्पाणि च फलानि च पुष्पफलानि तैः प्रतिपूर्णौ हस्तौ यस्य स पुष्पफलप्रतिपूर्णहस्तः सन् **परेण** प्रकृष्टेन **विनयेन** नम्रतादिलक्षणेन **तान् स्वप्नलक्षणपाठकान् एवमवादीत्** । शेषं व्याख्यातार्थम् ।

**[सू.168] तए णं ते सुमिणलक्खणपाढगा सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव हियया ते सुविणे ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसंति, ईहं अणुपविसित्ता अन्नमन्नेणं सद्धिं संलाविंति, संलावित्ता तेसिं सुमिणाणं लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अहिगयट्ठा सिद्धत्थस्स रन्नो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा उच्चारेमाणा सिद्धत्थं खत्तियं एवं वयासी ।**

[ज.168] **'अन्नमन्नेणं सद्धिं संलावेंति'**त्ति **अन्योन्येन सह संलापयन्ति** तदर्थपर्यालोचनरूपं वाक्सम्बन्धं विदधते; संचालेंति क्वचित्पाठः तत्र सञ्चालयन्ति- संवादयन्ति पर्यालोचयन्ति इत्यर्थः । **'तेसिं सुमिणाणं'** ति **तेषां स्वप्नानां** 'लद्धट्ठा'इत्यादि **लब्धार्थाः** स्वतो, **गृहीतार्थाः** पराभिप्रायग्रहणतः, **पृष्टार्थाः** संशये सति परस्परतः, तत एव **विनिश्चितार्थाः**, अत ए**वाभिगतार्थाः** अथवा लब्धार्था- अर्थश्रवणतः गृहीतार्था- अवधारणतः, पृष्टार्थाः- संशये सति, अधिगतार्था अभिगतार्था वा-अर्थावबोधात्, विनिश्चितार्था- ऐदम्पर्योपलम्भात् । **पुरतो**ऽग्रतः । **स्वप्नशास्त्राणि** तन्निबन्धनभूतानि तदर्थप्रतिपादकश्लोकादिभणनतः **उच्चारयन्तः उच्चारयन्तः** सन्तः ।

**[सू.169] एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं सुमिणसत्थे बायालीसं सुविणा तीसं महासुमिणा बाहत्तरिं सव्वसुमिणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिया ! अरहंतमातरो वा चक्कवट्टिमायरो वा अरहंतंसि वा चक्कहरंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एतेसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति, तं जहा–गय० गाहा ।**

**[सू.170] वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अण्णतरे सत्त महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति ।**

**[सू.171] बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति ।**

**[सू.172] मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कंते समाणे एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति ।**

**[सू.173] इमे य णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, जाव मंगल्लकारगा णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, तं जहा-अत्थलाभो देवाणुप्पिया ! भोगलाभो देवाणुप्पिया ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिया ! सुक्खलाभो देवाणुप्पिया ! रज्जलाभो देवाणुप्पिया !, एवं खलु देवाणुप्पिया ! तिसला खत्तियाणीया नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं तुम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसयं कुलतिलकं कुलकित्तिकरं कुलनंदिकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं**

**कुलविविद्धिकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणप्पमा-णपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाहिइ ।**

**[सू.174] से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिण्णविपुलबलवाहणे चाउरंतचक्कवट्टी रज्जवई राया भविस्सइ जिणे वा तिलोक्कनायए धम्मवरचक्कवट्टी, तं ओराला णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाण-मंगलकारगा णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा ।**

**[सू.175] तए णं से सिद्धत्थे राया तेसिं सुविणलक्खणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए करयल जाव ते सुमिणलक्खणपाढगे एवं वयासि ।**

[ज.169-175] '**अम्हं**'ति **अस्माकं** सर्वेषामित्यर्थः, न त्वेकैकस्येति । '**बायालीसं**'ति **द्विचत्वारिंशत्स्वप्नाः** सामान्यफलाः, **त्रिंशत्** '**महासुमिण**'त्ति महाफलाः । '**गब्भं वक्कममाणंसि**'त्ति **गर्भं व्युत्क्रामति** प्रविशति सतीत्यर्थः गर्भे वा व्युत्क्रामत्युत्पद्यमाने ।

**[सू.176] एवमेयं देवाणुप्पिया ! तहमेयं देवा० अवितहमेयं देवा० इच्छियमेयं० पडिच्छियमेयं० इच्छियपडिच्छियमेयं देवा०, सच्चे णं एसमट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं विणएणं पडिच्छइ, ते सुमिणे पडिच्छित्ता ते सुमिणलक्खणपाढए णं विउलेणं पुप्फगंधवत्थमल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता विपुलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयति, विपुलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइत्ता पडिविसज्जेइ ।**

[ज.176] '**विउलेणं**'ति **विपुलेन** अतिबहुलेन **अशनेन** ओदनादिरूपेण, उपलक्षणं चैतत्पानादीनाम् । '**पुप्फे**'त्ति पुष्पाण्यग्रथितानि गन्धा-वासा माल्यानि-ग्रथितपुष्पाणि अलङ्कारो-मुकुटादिस्तेषां समाहारद्वन्द्वः । '**सक्कारेइ**'त्ति प्रवरवस्त्रादिना **सत्कारयति** '**सम्माणेइ**'त्ति **सन्मानयति** तथाविधवचनादिप्रतिपत्त्या पूजयति । '**विउलं जीवियारिहं**'ति जीविकोचितम् आजन्मनिर्वाहयोग्यं वा '**पीइदाणं**'ति प्रीत्या- तुष्ट्या यद्दानं **प्रीतिदानं ददाति** प्रयच्छति **प्रतिविसर्जयति** तान् स्वस्थाने इति गम्यम् ।

**[सू.177] तए णं से सिद्धत्थे खत्तिए सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठित्ता जेणेव तिसला खत्तियाणी जवणियंतरिया तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तिसलं खत्तियाणिं एवं वयासी ।**

**[सू.178] एवं खलु देवाणुप्पिए ! सुविणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा जाव एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति ।**

**[सू.179] इमे य णं तुमे देवाणुप्पिए ! चोद्दस महासुमिणा दिट्ठा, तं० ओराला णं तुमे जाव जिणे वा तेलोक्कनायए धम्मवरचक्कवट्टी ।**

**[सू.180] तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा जाव हियया करयल जाव ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ ।**

**[सू.181] सम्मं पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अतुरियं अचवलं असंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सते भवणे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणं अणुपविट्ठा ।**

[ज.177-181] '**उरालाणं तुमे**' इत्यादि **यावत्**करणात् सिवा धन्ना इत्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः, **जिनस्त्रिलोकनायकः**, शेषं प्रतीतार्थम् ।

**[सू.182] जप्पभिइं च णं समणे भगवं महावीरे तंसि नायकुलंसि साहरिए तप्पभिइं च णं बहवे वेसमणकुंडधारिणो तिरियजंभगा देवा सक्कवयणेणं से जाइं इमाइं पुरापोराणाइं महानिहाणाइं भवंति, तं जहा-पहीणसामियाइं पहीणसेउयाइं पहीणगोत्तागाराइं उच्छन्नसामियाइं उच्छन्नसेउकाइं उच्छन्नगोत्तागाराइं [1]सिंघाडएसु वा तिएसु वा चउक्केसु वा चच्चरेसु वा चउम्मुहेसु वा महापहेसु वा गामट्ठाणेसु वा नगरट्ठाणेसु वा गामनिद्धमणेसु वा नगरनिद्धमणेसु वा आवणेसु वा देवकुलेसु वा सभासु वा पवासु वा आरामेसु वा उज्जाणेसु वा वणेसु वा वणसंडेसु वा सुसाणसुन्नागारगिरिकंदरसंतिसेलोवट्ठाणभवणगिहेसु वा सन्निक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं सिद्धत्थरायभवणंसि साहरंति ।**

[ज.182] '**वेसमणकुंडधारिणो**' त्ति वैश्रमणस्य कुण्डमायत्ततां धारयन्ति ये ते तथा । तिर्यग्लोकवासिनो जृम्भका देवा**स्तिर्यक्जृम्भकाः** । '**सक्कवयणेणं**' ति शक्रेण वैश्रमण आदिष्टस्तेन च इति भावः। '**से**' इत्यथशब्दार्थः । पुरा-पूर्वं प्रतिष्ठितत्वेन पुराणानि-चिरन्तनानि **पुरापुराणानि महानिधानानि** भूमिगतसहस्रादिसङ्ख्या द्रव्यसञ्चयाः । प्रहीणाः- स्वल्पीभूताः स्वामिनो येषां तानि **प्रहीणस्वामिकानि**। प्रहीणाः- स्वल्पीभूताः सेक्तारः- सेचकाः धनक्षेप्तारो येषां तानि **प्रहीणसेक्तृकाणि** प्रहीणसेतुकानि वा सेतुर्मार्गः । प्रहीणं- विरलीभूतं मानुषं गोत्रागारं तत्स्वामिनो गोत्रागारं येषां तानि **प्रहीणगोत्रागाराणि**, गोत्रं- धनस्वामिनोऽन्वयः अगारं-गृहम् । एवमुत्सन्नो- निःसत्ताकीभूतः स्वामी येषामित्यादि पूर्ववत् । शृङ्गाटकं-सिङ्घाटकाभिधानफलविशेषाकारं त्रिकोणं स्थानम्, त्रिकं-यत्र स्थाने रथ्यात्रयं मिलति, चतुष्कं - यत्र रथ्याचतुष्कमीलकः स्यात्, चत्वरं - बहुरथ्यापातस्थानं यत्र बहवो मार्गा मिलन्ति, चतुर्मुखं-चतुर्द्वारं देवकुलिकादि, महापथो- राजमार्गः, ग्रामस्थानानि - पुरातननिवासभूमयः, नगरस्थानानि - नगरस्योद्वसिता भुवः, ग्रामनिर्धमनानि-ग्रामजलनिर्गमाः खालमिति प्रसिद्धाः, एवं नगरनिर्धमनानि- नगरजलनिर्गमनमार्गाः, आपणानि- हट्टाः व्यवहारस्थानानि, देवकुलानि-यक्षशिवाद्यायतनानि, सभा-जनोपवेशनस्थानानि, आरामा-विविधलतोपेताः कदल्यादिप्रच्छन्नगृहेषु स्त्रीसहितानां पुंसां क्रीडास्थानभूमयः, उद्यानानि-पत्रपुष्प-फलच्छायोपगतवृक्षोपशोभितानि बहुजनस्य विविधवेषस्योन्नतमानस्य भोजनार्थं यानं-गमनं येष्विति व्युत्पत्त्या उद्यानिकास्थानानि, वनान्येकजातीयवृक्षाणि, वनखण्डानि- अनेकजातीयोत्तमवृक्षाणि, श्मशानं-पितृवनं, शून्यागारं- शून्यगृहम्, गिरिकन्दरा- गुहाः, शान्तिगृहाः- शान्तिकर्मस्थानानि, क्वचिच्च संधीति पाठः तत्र सन्धिगृहं-भित्त्योरन्तराले प्रच्छन्नस्थानम्, शैलगृहं - पर्वतमुत्कीर्य यत्कृतम्, उपस्थानगृहमास्थानमण्डपस्ततः

1 अत्र 'गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंवाहसंनिवेसेसु' इति पाठोऽधिकः Kh - मुद्रिते ।

श्मशानादीनां द्वन्द्वः, क्वचिच्च भवणगिहेसु इत्यपि दृश्यते तत्र भवनगृहाः- कुटुम्बिवसनस्थानानि । क्वचित्पुनः सिंघाडएसु वा इत्यस्मात्पूर्वं गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंवाहसंनिवेसेसु इति दृश्यते तत्र करादिगम्या ग्रामाः, आकरा - लोहाद्युत्पत्तिभूमयः, नैतेषु करोऽस्तीति नगराणि, खेटानि- धूलीप्राकारोपेतानि, कर्बटानि-कुनगराणि, मडम्बानि- सर्वतोऽर्धयोजनात्परतोऽवस्थितग्रामाणि, द्रोणमुखानि - यत्र जलस्थलपथावुभावपि स्तः, पत्तनानि- येषु जलस्थलपथयोरन्यतरेण पर्याहारप्रवेशः, आश्रमास्तीर्थस्थानानि मुनिस्थानानि वा, सम्बाहाः- समभूमौ कृषिं कृत्वा येषु दुर्गभूमिषु धान्यानि कृषीवलाः संवहन्ति रक्षार्थम्, सन्निवेशाः - सार्थकटकादयस्ततो द्वन्द्वः तेषु; क्वचिच्च घोसेसु इति पाठस्तत्र घोषा - गोकुलानि तेषु । '**संनिक्खित्ताइं**' सम्यक् निक्षिप्तानि; क्वचित् संनिखित्ताइं संनिहियाइं गुत्ताइं चिट्ठंतीति दृष्टम्, तत्र सन्निहितानि-सम्यग्निधानीकृतानि गुप्तानि-पिधानाद्यनेकोपायैस्**तिष्ठन्ति** । '**साहरंति**' प्रवेशयन्ति निक्षेपयन्तीति ।

**[सू.183] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे नायकुलंसि साहरिए तं रयणिं च णं नायकुलं हिरण्णेणं वड्ढित्था सुवण्णेणं वड्ढित्था धणेणं धन्नेणं रज्जेणं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवएणं[1] वड्ढित्था, विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइएणं संतसारसावएज्जेणं पीइसक्कारेण अईव अईव अभिवड्ढित्था ।**

**[सू.184] तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापिऊणं अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था–जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो सुवन्नेणं वड्ढामो धणेणं धन्नेणं रज्जेणं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवएणं[2] वड्ढामो, विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइएणं संतसारसावएज्जेणं पिइसक्कारेणं[3] अतीव अतीव अभिवड्ढामो तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स एयाणुरूवं गोन्नं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणो त्ति ।**

[ज.183-184] '**हिरण्णेण**'मित्यादि हिरण्यं-रूप्यम् अघटितस्वर्णमित्येके, सुवर्णं घटितम् । धनं गणिमधरिममेयपरिच्छेद्यभेदाच्चतुर्धा, तथा चोक्तम् -

*गणिमं जाईपुप्फफलाइ धरिमं तु कुंकुमगुडाई ।*
*मेज्जं चोप्पडलोणाइ रयणवत्थाइ परिच्छिज्जं ॥* इति ।

धान्यं चतुर्विंशतिधा, तथा चोक्तम् -

*धन्नाइं चउव्वीसं जवगोहुमसालिवीहिसट्ठीआ ।*
*कोद्दवअणुआकंगूरालयतिलमुग्गमासा य ॥ [दश. नि. 252]*

---

1 अत्र 'जसवाएणं' इति पाठोऽधिकः Kh - मुद्रिते ।

2 अत्र 'जसवाएणं' इति पाठोऽधिकः Kh - मुद्रिते ।

3 '°क्कारसमुदएणं' इति मुद्रिते ।

*अयसिहरिमंथतिउडयनिप्फावसलिंदरायमासा य ।*
*उच्छूमसुरतुयरा कुलत्थ तह धन्नयकलाया ॥ [दश. नि. 253]*

राज्य-ममात्यादिसमुदायात्मकं राष्ट्रं - देशः बलं-चतुरङ्गं वाहनं-वेगसरादि कोशो-भाण्डागारं कोष्ठागारं-धान्यगृहं पुरं- नगरम् अन्तःपुरं - प्रसिद्धं जनपदो-लोकः, क्वचित् जसवाएणं ति पाठस्तत्र यशोवादः - साधुवादः । पुनर्विपुलं धनं-गवादि, कनकं-घटिताघटितस्वरूपं द्विविधमपि, रत्नानि-कर्केतनादीनि, मणयश्चन्द्रकान्ताद्याः, मौक्तिकानि-शुक्त्यादिप्रभवानि, शङ्खा-दक्षिणावर्ताः, शिला-राजपट्टादिकाः, प्रवालानि-विद्रुमाणि, रक्तरत्नानि-पद्मरागाः आदिशब्दाद्वस्त्रकम्बलादिपरिग्रहः, ततस्तेन। एतेन किमुक्तं भवतीत्याह - सद्विद्यमानं न पुनरिन्द्रजालादिरिवावास्तवं यत्सारस्वापतेयं - प्रधानद्रव्यं तेन । प्रीति-र्मानसिकी स्वेच्छा सत्कारो-वस्त्रादिभिर्जनकृतः ततः समाहारद्वन्द्वम्, तेन । **अतीवातीव** अधिकतराधिकतरमित्यर्थः, **अभिवर्धामहे** वृद्धिमाप्नुमहे ।

तत् यदाऽ**स्माकमेष दारकः** सुतो **जातो भविष्यती**ति **तदा** '**गौण्णं**'ति गुणेभ्य आगतम्, किमुक्तं भवतीत्याह- '**गुणनिप्फन्नं**'ति गौणशब्दोऽप्रधानेऽपि वर्तते इत्यत उक्तं **गुणनिष्पन्न**मिति, प्रशस्तं नामैव **नामधेयं करिष्यामः वर्धमान इति ।**

**[सू.185] तए णं समणे भगवं महावीरे माउअणुकंपणट्ठाए निच्चले निप्फंदे निरेयणे अल्लीणपल्लीणगुत्ते यावि होत्था ।**

[ज.185] '**माउण**'मित्यादि मातुरनुकम्पनार्थं कृपया मातरि वाऽनुकम्पाभक्तिस्तदर्थं मयि परिस्पन्दमाने 'मा मातुः कष्टं भूया'दिति मातरि वा भक्तिरन्येषां विधेयतयोपदर्शिता भवत्विति **निश्चल**श्चलनक्रियाया अभावात् **निःस्पन्दः** किञ्चिच्चलनस्याप्यभावात् अत एव **निरेजनो** निःकम्पः, अत एव च '**अल्लीणे**'त्यादि आ-ईषल्लीन आलीनोऽङ्गसंयमनात् प्रकर्षेण लीनः प्रलीनः उपाङ्गसंयमनात् अत एव गुप्ताः परिस्पन्दनाभावात्, ततो विशेषणकर्मधारयः **चापी**ति समुच्चयार्थः ।

**[सू.186] तए णं तीसे तिसलाए खत्तियाणीए अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था –हडे मे से गब्भे मडे मे से गब्भे चुए मे से गब्भे गलिए मे से गब्भे एस मे गब्भे पुव्विं एयति इयाणिं नो एयति त्ति कट्टु ओहतमणसंकप्पा चिंतासोगसायरं संपविट्ठा करयलपल्हत्थमुही अट्टज्झाणोवगया भूमिगयदिट्ठीया झियायइ ।**[1]

[ज.186] '**तए ण**'मिति व्याख्यातार्थम् । '**हडे**'इत्यादि **हृतो मम गर्भः** केनचिद्देवादिना ? **मृतः** कालधर्मं प्राप्तः ? **च्युतः** सजीवपुद्गलपिण्डतालक्षणात् पर्यायात्परिभ्रष्टः ? **गलितो** द्रवतामापद्य क्षरितः ? चतुर्ष्वपि पदेषु काक्वा विकल्पप्रतीतिः । **पूर्व**मियत्कालात्प्राक् **एजति** कम्पते *एजृ कम्पने[सि.हे.धा.148]* इति

1 अत्र 'तं पि य सिद्धत्थरायभवणं उवरयमुइंगतंतीतलतालनाडइज्जजणमणुज्जं दीणविमणं विहरइ' इत्यधिकः पाठः Kh-मुद्रिते परं टीकाकारेण न स्वीकृतः ।

धातोः, **इदानीं** प्रस्तुतं **नैजति इति कृत्वा उपहतमनःसङ्कल्पा** उपहतः - कालुष्यकवलितो मनसि सङ्कल्पो यस्याः सा तथा, चिन्तया - गर्भहरणादिध्यानेन यः शोकः स एव सागरस्तत्र **सम्प्रविष्टा**, करतले पर्यस्तं - निवेशितम् अभि - आभिमुख्येन मुखं यया सा तथा, **आर्तध्यानोपगता** मनोज्ञविषयविप्रयोगे स्मृतिसमन्वागता - विस्मृतिं प्राप्ता, **भूमिगतदृष्टिका** भूमिसम्मुखमेव किङ्कर्तव्यजडतया वीक्ष्यमाणा **ध्यायति**। क्वचित् तंपि य सिद्धत्थरायभवणं इत्यादि दृश्यते, तत्र तदपि च सिद्धार्थराजभवनमुपरतं - निवृत्तं मृदङ्गतन्त्रीतलतालैः प्राग्व्याख्यातैर्नाटकीयैर्नाटकहितैर्जनैः - पात्रैः मणुज्जं ति भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य मनोज्ञत्वं - चारुता यस्मात् तत्तथा, अथवा उपरतमृदङ्गतन्त्रीतलतालनाटकीयजनं अणुज्जं ति अनूर्जमनोजस्कं वा अत एव दीनविमनस्कं विहरत्यास्ते स्म ।

**[सू.187] तए णं समणे भगवं महावीरे माऊए अयमेयारूवं अज्झत्थियं पत्थियं मणोगयं संकप्पं समुप्पण्णं विजाणित्ता एगदेसेणं एयइ ।**

**[सू.188] तए णं सा तिसला खत्तियाणी हट्ठतुट्ठ जाव हियया एवं वयासि–नो खलु मे गब्भे हडे जाव नो गलिए, मे गब्भे पुव्विं नो एयइ इयाणिं एयइ त्ति कट्टु हट्ठतुट्ठ जाव एवं वा विहरइ ।**

[ज.187-188] '**तए ण**'मित्यादि **ततः श्रमणो भगवान् महावीरो मातुरेतद्रूपं सङ्कल्पं** '**वियाणिय**'त्ति विशेषेण ज्ञात्वा '**एगदेसेणं**'ति करचरणाङ्गुल्यादिना **एकदेशेनैजति** । शेषं सुगमम् । एतच्च यद्भगवता मातुरनुकम्पायै कृतमपि तस्या अधृतितया पर्यणंसीत् तदागामिनि काले कालदोषाद्गुणोऽपि वैगुण्याय कल्पिष्यते इति सूचनार्थमिति पूज्याः ।

**[सू.189] तए णं समणे भगवं महावीरे गब्भत्थे चेव इमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ नो खलु मे कप्पइ अम्मापिएहिं जीवंतेहिं मुंडे भवित्ता अगारवासाओ अणगारियं पव्वइत्तए ।**

[ज.189] '**तते ण**'मित्यादि व्यक्तम्, नवरं ततश्चलनक्रियया मातुः सुखोत्पत्त्युत्तरकालमित्यर्थः '**गब्भत्थे चेव**'त्ति **गर्भस्थ एव** गर्भे एव स्थितः सन् पक्षाधिकमासषट्के व्यतिक्रान्त इत्यर्थः '**अभिग्गहं**'ति अभिगृह्णते प्रत्यादीयत इत्यभिग्रहः कर्तव्यक्रियां प्रति नियतोऽन्तःकरणविशेषः, तम् अभिगृह्णाति । **नो** निषेधार्थः **मे** मम **कल्पते** युज्यते '**अम्मापिऊहिं**' ति **अम्बापित्रोर्जीवतोः** सतोः सप्तम्यर्थे तृतीया, '**मुंडे भवित्ता**' इत्यादि प्राग्वत् ।

**[सू.190] तए णं सा तिसला खत्तियाणी ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छिता सव्वालंकारभूसिया तं गब्भं नाइसीएहिं नाइउण्हेहिं नाइतित्तेहिं नाइकडुएहिं नाइकसाइएहिं नाइअंबिलेहिं[1] नातिनिद्धेहिं नातिलुक्खेहिं नातिउल्लेहिं नातिसुक्केहिं[2] सव्वत्तुभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं ववगयरोगसोगमोहभयपरित्तासा जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे य काले य**

1 अत्र 'नाइमहुरेहिं' इत्यधिकः पाठः Kh - मुद्रिते ।

2 '°हिं उडुभ°' इति मुद्रिते ।

**आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुन्नदोहला सम्माणियदोहला अविमाणियदोहला वुच्छिन्नदोहला [1]ववणीयदोहला सुहं सुहेणं आसयइ सयति चिट्ठइ निसीयइ तुयट्टइ [2]विहरइ सुहं सुहेणं तं गब्भं परिवहइ ।**

[ज.190] '**तं गब्भं**'ति तमधिकृत**गर्भं** '**नातिसीएहि**'मित्यादि **नातिशीतैः नात्युष्णैः नातितिक्तै**र्निम्बादिवत्, समयपरिभाषेयमन्यथा लोकपरिभाषया तु विश्वभेषजादिषु तिक्तत्वम्, **नातिकटुकै**र्नागरादिवत् **नातिकषायै**र्बस्बूलादिवत् **नात्यम्लैः** कपित्थादिवत् **नात्यार्द्रै**र्घृतादिरससन्मिश्रैः **नातिशुष्कै**श्चनकवल्लादिवन्नीरसैः **नातिस्निग्धैः** स्त्यानीभूतकेवलघृतरूपैः **नातिरूक्षैः** शुष्कपूपादिकैः, यतः शीतादिषु हि कानिचिद्वातिकानि कानिचित्पैत्तिकानि कानिचित् श्लेष्मकराणि च स्युः, उक्तं च वाग्भटे-

*वातलैश्च भवेद्गर्भः कुब्जान्धजडवामनः ।*
*पित्तलैः खलतिः पिङ्गश्चित्री पाण्डुः कफात्मभिः ॥*

'**सव्वत्तुभयमाण**'त्ति ऋतौ ऋतौ यथायथं भोज्यमानाः - सेव्यमानाः सुखाः-सुखहेतवो ये तैः **भोजनाच्छादनगन्धमाल्यै**स्तत्र भोजनमाहारग्रहणम् आच्छादनं-प्रावरणं गन्धाः - पटवासादयः माल्यानि - पुष्पमालाः तैः । '**ववगये**'त्यादि व्यपगता-रोगादिभिः परिवर्जिता इति योगः, तत्र रोगाः-ज्वरादिकाः शोक-इष्टवियोगादिजनितः मोहो - मूर्च्छा भयं - भीतिमात्रं परित्रासो-ऽकस्माद्भयं परित्रासस्थाने परिश्रमो वा व्यायामः । '**जं तस्स**'त्ति **यत्तस्य गर्भस्य हितं** गर्भस्यैव मेधायुरादिवृद्धिकारणं **मितं** परिमितं नाधिकं न्यूनं वा **पथ्य**मरोगकारणत्वात्, किमुक्तं भवति ? गर्भपोषणम् **देशे** उचितभूप्रदेशे **काले** तथाविधावसरे । '**विवित्तमउएहिं**'ति विविक्तानि - दोषवियुक्तानि लोकान्तरासङ्कीर्णानि वा मृदुकानि च कोमलानि च यानि तथा तैः । '**पइरिक्क**'त्ति प्रतिरिक्तया - तथाविधजनापेक्षया विजनया अत एव सुखया - शुभया वा, **मनोनुकूलया विहारभूम्या** चङ्क्रमणासनादिरूपया भूम्या '**पसत्थे**'त्यादि प्रशस्तदोहदाऽनिन्द्यमनोरथा **सम्पूर्णदोहदा**ऽभिलाषपूरणात् **सम्मानितदोहदा** प्राप्ताभिलषितस्य भोगात् **अविमानितदोहदा** नावज्ञातदोहदा क्षणमपि नापूर्णमनोरथेत्यर्थः अत एव **व्यवच्छिन्नदोहदा** त्रुटिताकाङ्क्षा, दोहदव्यवच्छेदस्यैव प्रकर्षाभिधानायाऽऽह-**व्यपनीतदोहदा सुखंसुखेन** गर्भानाबाधया '**आसयइ**' **आश्रय**त्याश्रयणीयं स्तम्भादि **शेते** त्वग्वर्तनेन निद्रया वा **तिष्ठ**त्यूर्ध्वा **निषीद**त्यासने उपविशति **त्वग्वर्तयति** निद्रां विना शय्यायां **विहरति** कुट्टिमे, **सुखंसुखेन** यथा भवति तथा **तं गर्भं परिवहति** ।

**[सू.191] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे चित्तसुद्धे तस्स णं चित्तसुद्धस्स तेरसीदिवसेणं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं उच्चट्ठाणगतेसु गहेसु पढमे चंदजोगे सोमासु दिसासु वितिमिरासु विसुद्धासु जइएसु सव्वसउणेसु पयाहिणाणुकूलंसि भूमिसप्पिंसि मारुयंसि पवातंसि निप्फण्णमेदिणीयंसि कालंसि पमुदितपक्कीलिएसु**

1 '°ला विणी°'इति मुद्रिते ।

2 'विहरइ' नास्ति मुद्रिते ।

**जणवएसु पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं [1]अरोगा अरोगं दारयं पयाया ।**

[ज.191] '**तेणं कालेणं तेणं समएण**'मित्यादि व्याख्यातार्थम् । '**उच्चट्ठाणगएसु**'इत्यादि **उच्चस्थानगतेषु ग्रहेषु**, ग्रहाणामुच्चस्थानान्येवम् - अजवृषमृगाङ्गनाकर्कमीनवाणिजांशकेष्विनाद्युच्चाः दश10-शिख्य3ष्टाविंशति28-तिथी15-न्द्रिय5-त्रिघन27-विंशेष्विति 20 *[ना.जै.ज्यो.प्र.भाग 2, श्लो. 8]* । सर्वग्रहाणामुच्चत्वमंशकाद्यपेक्षया घटनीयम् । **प्रथमे चन्द्रयोगे** प्रथमशब्दस्य प्रधानार्थत्वात् प्रधाने चन्द्रयोगे चन्द्रबले अर्थान्नृपादीनाम् अथवा तदानीं सूर्यस्य मेषस्थितत्वाद्भगवतश्च मध्यरात्रे जन्मभावात्तदा च मकरलग्नस्य सम्भवात् प्रथमायां चान्द्र्यां होरायां *समराशौ चन्द्रतीक्ष्णांश्वो*रिति वचनात्, अन्यथा वा सुधिया वृद्धोपदेशाद्भावनीयम् । तथा **सौम्यासु** दिग्दाहाद्युत्पातवर्जितासु **दिक्षु** शान्तास्वित्यर्थः, **वितिमिरासु** भगवज्जन्मकाले सार्वत्रिकोद्योतसद्भावाच्चन्द्रज्योत्सनया वा ध्वस्तध्वान्तासु, **विशुद्धासु** रजोवृष्ट्याद्यभावान्निर्मलासु, जयोऽस्त्येष्विति **जयिकेषु** राजादीनां जयदायिषु, **सर्वशकुनेषु** काकोलूककपोतक्यादिषु यथा काकानां श्रावणे द्वित्रिचतुःशब्दाः शुभावहा इति, तथा प्रदक्षिणश्चासावनुकूलश्च प्रदक्षिणानुकूलस्तस्मिन् भगवतः प्रदक्षिणवर्तित्वादनुकूले अथवा प्रदक्षिणावर्तत्वात् अनुकूलः सुरभिशीतत्वात्, भूमिसर्पिणी मृदुत्वात् चण्डवाताद्युच्चैः सर्पति अतो भूमिसर्पिणीत्युक्तम् तादृशि **मारुते प्रवाते** प्रवातुमारब्धे, निष्पन्ना - निष्पन्नसर्वसस्या मेदिनी यत्र तादृशे **काले** ऋतौ, प्रमुदिताः - सुभिक्षसौस्थ्यादिना प्रक्रीडिताश्च - वसन्तोत्सवादिना क्रीडितुमारब्धास्ततो विशेषणकर्मधारये **प्रमुदितप्रक्रीडितेषु**, **जनपदेषु** जनपदवास्तव्येषु लोकेषु सत्सु **अरोगा** अनाबाधा माता **अरोग**मनाबाधं **दारकं प्रजाता** सुषुवे, जनिः सोपसर्गत्वात्सकर्मकः ।

**[सू.192] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए सा णं रयणी बहूहिं देवेहि य देवीहि य ओवयंतेहिं य उप्पयंतेहिं य उप्पिंजलमाणभूया कहकहभूया यावि होत्था ।**

[ज.192] '**जं रयणिं**' **यस्यां रात्रौ** । '**ओवयंतेहिं** ओवयमाणेहिं वा' **अवपतद्भि**रवतरद्भिः '**उप्पयंतेहिं** उप्पयमाणेहिं वा' **उत्पतद्भि**रूर्ध्वं गच्छद्भिः '**उप्पिंजलमाणभूय**'त्ति उत्पिञ्जलो-भृशमाकुलः, स इवाचरतीति आचारे क्विपि शतरि च *शत्रानश[सि.हे.8-3-181]* इति प्राकृतलक्षणेन माणादेशे उप्पिंजलमाणे त्ति सिद्धम्, तद्भूता भूतस्योपमार्थत्वादुत्पिञ्जलन्तीव उत्पिञ्जलायमानेव '**कहकह**'त्ति अव्यक्तवर्णो-नादः तद्भूता चापि हर्षाट्टहासादिना कहकहा रवमयी '**होत्था**' **अभवत्** अर्थाद्विभक्तिव्यत्ययाद्वा सा रजनी; क्वचित् उप्पिंजलमालाभूया इति पाठः तत्र उत्पिञ्जलानां-भृशमाकुलानां माला-श्रेणिस्तां भूता-प्राप्तेति; क्वचिच्च उप्पयंतेहिं उप्पयंतेहिं देवुज्जोए एगालोए देवसन्निवाया उप्पिंजलमाणभूया कहकहभूया यावि होत्था इति दृष्टम्, तत्र होत्थ त्ति प्रत्येकं सम्बन्धाद्देवोद्योतोऽभवत् एकालोकश्च उद्योताद्वैतभाक् लोकश्चतुर्दशरज्ज्वात्मको भुवनं वाभवत् देवसन्निपाताश्चतुर्विधा देवनिकायाः उत्पिञ्जलभूताश्चाप्यभवन्; क्वचित् एगालोए लोए देवुज्जोए देवुक्कलियाए देवसन्निवाए देवकहकहए देवउप्पिंजलमाणभूते जाते यावि होत्था इति दृष्टम्,

1 1 '°णं आरोगा आरो°' इति मुद्रिते । '°णं आरुग्गा आरुग्गं दा°' इति Kh ।

तच्च स्पष्टं नवरमुत्कलिका-हर्षज उत्कृष्टक्ष्वेडितनादः ।

**[सू.193] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए तं रयणिं च णं बहवे वेसमणकुंडधारिणो तिरियजंभगा देवा सिद्धत्थरायभवणंसि हिरन्नवासं च सुवन्नवासं च रयणवासं च वयरवासं च वत्थवासं च आहरणवासं च पत्तवासं च पुप्फवासं च फलवासं च बीयवासं च मल्लवासं च गंधवासं च वण्णवासं च चुण्णवासं च वसुहारवासं च वासिंसु ।**

[ज.193] '**सिद्धत्थे**'त्यादि **सिद्धार्थराजभवने** '**हिरण्णवास**'मित्यादि हिरण्यं-रूप्यं वर्ष-मल्पतरं वृष्टिस्तु महती, आभरणानि-कटकादीनि, पत्रपुष्पफलबीजानि प्रतीतानि, माल्यं-ग्रथितपुष्पाणि, गन्धाः-कोष्टपुटपाकाः, चूर्णो-गन्धद्रव्यसम्बन्धी, वर्णश्चन्दनं, धन्नवासं वत्ति पाठे धान्यवर्षं, वर्णचूर्णे व्यक्ते, वसु-द्रव्यम् '**वासिंसु**'त्ति वर्षितवन्तः । अत्र च बहूहिं देवेहिं देवीहिं उप्पयंतेहिं इति कथनाद्भगवतो जन्ममह आवेदितो भवति । स च यथा जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यां सामान्यतो जिनजन्मोक्तं तच्छ्रीवीरजिनजन्मनि अपि वक्तव्यं, नवरमिह क्षत्रियकुण्डपुरे नगरे सिद्धार्थस्य राज्ञः त्रिशलादेव्या इत्ययमभिलापः संयोजयितव्यो, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यां तु नायमभिलापोऽस्ति सामान्यत्वात्तत्र तस्य इति । तत्र चालापकप्रबन्धेन विस्तरत्वादुद्धृत्य लिख्यतेऽत्र ग्रन्थगौरवभयाद्विस्तरार्थिभिस्तु तत एवावलोकयितव्यः । स चैवम् - अष्टौ दिक्कुमारीमहत्तरिकाः भोगङ्कराप्रभृतयस्तत्समयमुपजातसिंहासनप्रकम्पाः प्रयुक्तावधिज्ञानाः समवसित-चतुर्विंशतितमतीर्थनाथजननाः ससम्भ्रममनुष्ठितसमवायाः 'समस्तजिननायकजन्मसु महो महिमविधानमस्माकं जीत'मिति विहितनिश्चयाः स्वकीयस्वकीयाभियोगिकदेवविहितदिव्यविमानरूढाः सामानिकपरिकरवृताः सर्वर्द्ध्या वीरजिनजन्मनगरमागम्य जिनजन्मभवनं यानविमानैस्त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य उत्तरपूर्वस्यां दिशि यानविमानानि चतुर्भिरङ्गुलैर्भुवमप्राप्तानि व्यवस्थाप्य जिनसमीपं जिनजननीसमीपं च गत्वा त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य कृतप्राञ्जलिपुटा इदमवादिषुः - 'नमोऽस्तु ते रत्नकुक्षिधारिके ! नमोऽस्तु ते जगत्प्रदीपदायिके ! वयमधोलोकवास्तव्या दिक्कुमार्यो जिनस्य जन्ममहिमानं विधास्यामः, अतो युष्माभिर्न भेतव्य'मिति अभिधाय च विहितसंवर्तवाताः जिनजन्मभवनस्य समन्ताद्योजनपरिमण्डलक्षेत्रस्य तृणपत्रकचवरादे-रशुचिवस्तुनोऽपनयनेन विहितशुद्धयो जिनजनन्योरदूरतो जिनस्यासाधारणमगणितगुणगणमागायन्त्य-स्तस्थुः । एवमेवोर्ध्वलोकवास्तव्या नन्दनवनकूटनिवासिन्य इत्यर्थः अष्टौ दिक्कुमारीमहत्तरिकास्तथैवाऽऽ-गत्य विरचिताभ्रवर्दलका आयोजनमानक्षेत्रं गन्धोदकवर्षं पुष्पवर्षं च धूपघटीश्च कृत्वा जिनसमीप[1]मागत्य परिगायन्त्य आसाञ्चक्रुः । तथा पौरस्त्यरुचकवास्तव्या रुचकाभिधस्य त्रयोदशद्वीपस्य मध्यवर्तिनः प्राकाराकारेण मण्डलव्यवस्थितस्योपरि पूर्वदिग्व्यवस्थितेष्वष्टासु कूटेषु कृतनिवासा इत्यर्थः आगत्य वाऽऽदर्शहस्ता गायन्त्यस्तस्थुः । एवं दक्षिणरुचकवास्तव्या जिनदक्षिणेन भृङ्गारहस्ताः पश्चिमरुचकवास्तव्या जिनस्य पश्चिमेन तालवृन्तहस्ताः उत्तररुचकवास्तव्या जिनस्योत्तरेण [चामरहस्ताः] एवं चतस्रो रुचकस्य विदिग्वास्तव्या आगत्य दीपिकाहस्ता जिनस्य चतसृषु विदिक्षु तथैव तस्थुः । तथा मध्यमरुचकवास्तव्या रुचकद्वीपस्याभ्यन्तरार्धवासिन्य इत्यर्थः चतस्रस्तास्तथैवाऽऽगत्य जिनस्य चतुरङ्गुलवर्जनाभिनालच्छेदनं

1 '°मीपे प°' इति Kh ।

च विवरस्य रत्नपूरणं च तदुपरि हरितालिकापीठबन्धं च पश्चिमावर्जदिक्त्रये कदलीगृहत्रयं च तन्मध्येषु चतुःशालभवनत्रयं च तन्मध्यदेशे सिंहासनत्रयं च दक्षिणे सिंहासने जिनजनन्योरुपवेशनं च शतपाकादितैलाभ्यञ्जनं च गन्धद्रव्योद्वर्तनं च पूर्वत्र पुष्पोदकशुद्धोदकगन्धोदकमज्जनं च सर्वालङ्कारविभूषणं च उत्तरत्र गोशीर्षचन्दनकाष्ठैर्वह्निज्वालनं चाग्निहोमं च भूतिकर्मरक्षापोट्टलिकां च मणिमयपाषाणद्वयस्य जिनकर्णाभ्यर्णे प्रताडनं च 'भवतु भगवान् पर्वतायु'रिति भणनं च पुनः समातृकजिनस्य स्वभवननयनं च शय्याशायिनं च चक्रुः, कृत्वा चाऽऽगायन्त्यस्तस्थुरिति । सौधर्मे कल्पे च शक्रस्य सहसा आसनं प्रचकम्पे । अवधिं चासौ प्रयुयुञ्जे, तीर्थकरजन्म चाऽऽलुलोके, ससम्भ्रमं च सिंहासनादुत्तस्थौ, पादुके च मुमोच, उत्तरासङ्गं चकार, सप्ताष्टानि पदानि तीर्थकराभिमुखमुपजगाम, भक्तिभरनिर्भरो यथाविधि जिनं जिनमातरं च ननाम, पुनः सिंहासनमुपविवेश, हरिणेगमेषिदेवं पदात्यनीकाधिपतिं शब्दयाञ्चकार, तमादिदेश यथा 'सुधर्मायां योजनपरिमण्डलां सुघोषाभिधानां घण्टां त्रिस्ताड्यन्नुद्घोषणां विधेहि यथा भो भो देवा ! गच्छति शक्रो जम्बूद्वीपं तीर्थकरजन्ममहिमानं कर्तुमतो यूयं सर्वसमृद्ध्या शीघ्रं शक्रस्यान्तिके प्रादुर्भवते'ति । स तु तथैव चकार । तस्यां च घण्टायां त्रिस्ताडितायामन्यान्येकोन-द्वात्रिंशद्घण्टालक्षाणि समकमेव रणरणारवं चक्रुः । उपरते च घण्टारवे घोषणामुपश्रित्य यथादिष्टं देवाः सपदि विदधुः । ततो हि पालकाभिधानाभियोगिकदेवविरचिते लक्षयोजनप्रमाणे पश्चिमावर्जदिक्त्रय-निवेशिततोरणद्वारे नानामणिमयूखमञ्जरीरञ्जितगगनमण्डले नयनमनसामतिप्रमोददायिनि महाविमानेऽधिरूढः सामानिकादिदेवकोटिभिरनेकाभिः परिवृतः पुरःप्रवर्तितपूर्णकलशभृङ्गारच्छत्रपताकाचामराद्यनेक-मङ्गलवस्तुस्तोमः पञ्चवर्णकुडभीसहस्रपरिमण्डितयोजनसहस्रोच्छ्रितमहेन्द्रध्वजप्रदर्शितमार्गो नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणपूर्वे रतिकरपर्वते कृतावतारो दिव्यविमानर्द्धिमुपसंहरन् क्षत्रियकुण्डपुरमाजगाम, विमानारूढ एव भगवतो जिनस्य जन्मभवनं त्रिः प्रदक्षिणीकृतवान्, उत्तरपूर्वस्यां दिशि चतुर्भिरङ्गुलैर्भुवमप्राप्तं विमानमवस्थापितवान् । ततोऽवतीर्य भगवन्तं समातृकं दिक्कुमारीवदभिवन्द्य जिनमातरमवस्था(स्वा)प्य जिनप्रतिबिम्बं तत्सन्निधौ विधाय पञ्चधाऽऽत्मानमाधाय एकेन रूपेण करतलपल्लवावधृतजिनः अन्येन जिननायकोपरि धृतच्छत्रः अन्याभ्यां करचालितप्रकीर्णकः अन्येन च करकिशलयकलितकुलिशः पुरः प्रगन्ता सुरगिरिशिखरोपरिवर्तिपण्डकवनं गत्वा तद्व्यवस्थिताऽतिपाण्डुकम्बलशिलासिंहासने पूर्वाभिमुखो निषण्णः । एवमन्ये ईशानादयो वैमानिकेन्द्राश्चमरादयो भवनपतीन्द्राः कालादयो व्यन्तरेन्द्राः चन्द्रसूर्यादयो ज्योतिष्काः सपरिवारा मन्दरेऽवतेरुः । ततश्चाच्युतदेवराजा जिनाभिषेकमन्याभियोगिकदेवाना-दिदेश । ते चाष्टसहस्रसौवर्णिकानां कलशानाम् एवं रूप्यमयानाम् एवं द्विसंयोगवतां त्रीण्यष्टसहस्राणि त्रिसंयोगवतामष्टसहस्रं भौमेयकानां तथाष्टसहस्रं चन्दनकलशानां भृङ्गाराणामादर्शानां स्थालीनाम् अन्येषां च विविधानामभिषेकोपयोगिनां भाजनानामष्टसहस्रमष्टसहस्रं विचक्रुः । तैश्च कलशादिना भाजनैः क्षीरोदस्य समुद्रस्य पुष्करोदस्य च मागधादीनां च तीर्थानां गङ्गादीनां च महाह्रदानामुदकमुत्पलादीनि मृत्तिकां च हिमवदादीनां च वर्षधरपर्वतानां वर्तुलविजयार्धानां च पर्वतानां भद्रशालादीनां च वनानां पुष्पाणि गन्धान् सर्वौषधीः तुवराणि सिद्धार्थकान् गोशीर्षचन्दनानि चानिन्युः ।

ततोऽसावच्युतदेवराजोऽन्यैः सामानिकदेवसहस्रैः सह जिनपतिमभिषिषेच । अभिषेके च वर्तमाने इन्द्रादयो देवाः छत्रचामरकलशधूपकडुच्छकपुष्पगन्धाद्यनेकविधाभिषेकद्रव्यव्यग्रहस्ता वज्रशूलाद्यनेकायुधसम्बन्धबन्धुरपाणयः आनन्दजलप्रप्लुतगण्डस्थलाः ललाटपट्टघटितकरसम्पुटाः जयजयारवमुखरितदिगन्तराः प्रमोदमदिरामन्दवशविरचितविविधचेष्टाः पर्युपासाञ्चक्रिरे । तथा केचिच्चतुर्विधं वाद्यं वादयामासुः । केचिच्चतुर्विधं गीतं परिजगुः । केचिच्चतुर्विधं नृत्यं ननृतुः । केचिच्चतुर्विधमभिनयम् अभिनिन्युः । केचिद् द्वात्रिंशद्विधं नाट्यविधिमुपदर्शयामासुरिति । ततो गन्धकाषायिकेण गात्राण्यलूषयत् । ततश्चाच्युतेन्द्रो मुकुटादिभिर्जिनमलञ्चकार । ततो जिनपतेः पुरतो रजतमयतन्दुलैर्दर्पणादीन्यष्टमङ्गलकान्यालिलेख । पाटलादिबहलपरिमलकलितकुसुमनिकरं व्यकिरन् । शुभसुरभिगन्धबन्धुरं धूपं परिददाह । अष्टोत्तरेण वृत्तशतेन च सन्तुष्टस्तुष्टाव - नमोऽस्तु ते सिद्ध ! बुद्ध ! नीरज ! श्रमण ! समाहितसमस्तयोगिन् ! शल्यकर्तन ! निर्भय ! नीराग ! निर्दोष ! निर्मम ! निःशल्य ! निःसङ्ग ! मानमूरण ! गुणरत्नशीलसागर ! अनन्त ! अप्रमेय ! अभय ! धर्मवरचतुरन्तचक्रवर्तिन् ! नमोऽस्तु तेऽर्हते नमोऽस्तु ते भगवते इत्यभिधाय वन्दते स्म । ततो नातिदूरे स्थितः पर्युपासाञ्चक्रे । एवं सर्वेऽप्यभिषिषेचुः, केवलं सर्वान्ते शक्रोऽभिषिक्तवान् । तदभिषेकावसरे ईशानः शक्रवदात्मानं पञ्चधा विधाय जिनस्योत्सङ्गधारणादिक्रियामकरोत् । ततः शक्रो जिनस्य चतुर्दिशि चतुरो धवलवृषभान् विचकार । तेषां च शृङ्गाग्रेभ्योऽष्टौ तोयधारा युगपद्विनिर्ययुः, वेगेन च वियति समुत्पेतुः, एकत्र च मिलन्ति स्म, भगवतो मूर्धनि च निपेतुः । शेषमच्युतेन्द्रवदसावपि चकार । ततोऽसौ पुनर्विहितपञ्चप्रकारात्मा तथैव गृहीतजिनश्चतुर्निकायदेवपरिवृतः तूर्यनिनादापूरिताम्बरतलो जिननायकं जिनजनन्याः समीपे स्थापयामास । जिनप्रतिबिम्बमवस्वापं च प्रतिसञ्जहार । क्षोमयुगलं कुण्डलयुग्मं च तीर्थकरस्योच्छीर्षमूले स्थापयति स्म । श्रीदाम काण्डकं च नानामणिमयं जिनस्योल्लोके(चे) दृष्टिपातनिमित्तमतिरमणीयं निचिक्षेप । ततः शक्रो वैश्रमणमवादीत् - भो देवानाम्प्रिया ! द्वात्रिंशत्सुवर्णकोटीं जिनजन्मभवने संहरत । तदादेशाच्च जृम्भका देवास्तथैव चक्रुः । शक्रः पुनर्देवैर्जिनजन्मनगरे त्रिकादिष्वप्येवं घोषणं कारयामास यथा हंभो ! भवनवास्यादिदेवाः शृण्वन्तु भवन्तो यथा यो जिने जिनजनन्यां वाशुभं मनः सम्प्रधारयति तस्यार्यकमञ्जरीव सप्तधा मूर्धा स्फुटतु । ततो देवा नन्दीश्वरेऽष्टाहिकामहिमानं जिनभवनेषु विदधुः ततश्च स्वस्थानानि जग्मुरिति ।

अत्रान्तरे प्रियभाषिताभिधा चेटी राजानं वर्धापयति यथा पियट्ठयाए पियं निवेएमो पियं भे भवउ त्ति इत्यादि क्वचिद्दृश्यते । तच्च बहुष्वादर्शेषु न दृष्टं तस्या अपि वाचनाया उपरि कश्चिद्व्याचक्षते इति तत्रापि किञ्चिद्विव्रियते - पियट्ठयाए प्रीत्यर्थं पियं निवेएमो त्ति प्रियमिष्टवस्तु पुत्रजन्मलक्षणं निवेदयामः पियं भे भवउ त्ति एतच्च प्रियनिवेदनं प्रियं भे - युष्माकं भवत्विति । तस्या दानं मउडवज्जं ति मुकुटवर्जं मुकुटस्य राजचिह्नत्वात् स्त्रीणां वाऽनुचितत्वात्तस्येति तद्वर्जनम्, जहामालिअं ति यथाधारितं *मलमल्ल धारणे [पा.धा. 489-490]* इति परिहितमित्यर्थः उमोयं ति अवमुच्यते परिधीयते यः सोऽवमोचक आभरणं तं मत्थयं धोयइ त्ति अङ्गप्रतिचारिकाणां मस्तकानि क्षालयति दासत्वापनयनार्थं, स्वामिना धौतमस्तकस्य हि दासत्वमपगच्छतीति लोकव्यवहारः ।

**[सू.194] तए णं से सिद्धत्थे खत्तिए भवणवइवाणमन्तरजोइसवेमाणिएहिं देवेहिं तित्थयरजम्मणाभिसेयमहिमाए कयाए समाणीए पच्चूसकालसमयंसि नगरगुत्तिए सद्दावेइ, नगरगुत्तिए सद्दावित्ता एवं वयासी ।**

[ज.194] '**तित्थयर**'त्ति **तीर्थकरजन्माभिषेकमहिम्नि कृते सति**, स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात्, '**नगरगुत्तिए**'त्ति पुरारक्षकान् ।

**[सू.195] खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कुंडपुरे नगरे चारगसोहणं करेह, चारगसोहणं करित्ता माणुम्माणवद्धणं करेह, माणुम्माणवद्धणं करित्ता कुंडपुरं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं आसियसम्मज्जियोवलेवियं सिंघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु सित्तसुइसम्मट्ठरत्थंतरावणवीहियं मंचाइमंचकलियं नाणाविहरागविभूसियज्झयपडागमंडियं लाउल्लोइयमहियं गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलितलं उवचियचंदणकलसं चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तोसत्तविपुलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं पंचवन्नसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघिंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं नडनट्टगजल्लमल्लमुट्ठिय[1]विडंबगवेलंबग[2]कहगपढकलासकआइंखगलंखमंखतूणइल्लतुंववीणियअणेगतालायराणुचरियं करेह कारवेह, करेत्ता कारवेत्ता य जूयसहस्सं च मुसलसहस्सं च उस्सवेह, उस्सवित्ता य मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणेह ।**

**[सू.196] तए णं ते णगरगुत्तिया सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयल जाव पडिसुणित्ता खिप्पामेव कुंडपुरे नगरे चारगसोहणं जाव उस्सवेत्ता जेणेव सिद्धत्थे राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु सिद्धत्थस्स रन्नो एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति ।**

[ज.195-196] '**चारगसोहणं**'ति **चारकशोधनं** बन्दिमोचनम् । मानं-रसधान्यविषयम् उन्मानं-तुलारूपं तयोर्वर्धनम् । '**सब्भिंतरबाहिरिय**'त्ति सहाभ्यन्तरेण-नगरमध्यभागेन बाहिरिका-नगरबहिर्भागो यत्र तत्तथा, क्रियाविशेषणं चेदम् । आसिक्तं-गन्धोदकच्छटकदानात् सन्मार्जितं-कचवरशोधनात् उपलिप्तं-गोमयादिना । शृङ्गाटकादयः 'पहेसु'त्ति पन्थाः-सामान्यमार्गः । तथा सिक्तानि-जलेनात एव शुचीनि-पवित्राणि सम्मृष्टानि-कचवरापनयनेन समीकृतानि रथ्यान्तराणि-रथ्यामध्यानि आपणवीथयश्च-हट्टमार्गा यस्मिंस्तत्तथा । तथा मञ्चा-मालकाः प्रेक्षणकद्रष्टृजनोपवेशननिमित्तम् अतिमञ्चा-स्तेषामप्युपरि ये तैः कलितम् । तथा नानाविधरागैः-कुसुम्भादिभिर्विभूषिता ये ध्वजाः-सिंहगरुडादिरूपकोपलक्षितबृहत्पट्टरूपाः पताकाश्च-तदितरास्ताभिर्मण्डितम् । तथा लाइयं-छगणादिना भूमौ लेपनम् उल्लोइयं-सेटिकादिना कुड्यादिषु धवलनं ताभ्यां महितमिव महितं-पूजितमत एव महितं-पूजितं यत्र तत्तथा; अन्ये तु लिप्तमुल्लोचित-मुल्लोचयुक्तं महितं चेति व्याचक्षते । गोशीर्ष[स्य]-चन्दनविशेषस्य सरसस्य-प्रत्यग्रस्य रक्तचन्दनस्य-चन्दनविशेषस्यैव दर्दरस्य-दर्दराद्रिजातश्रीखण्डस्य गोशीर्षादिभिर्वा दत्ताः पञ्चाङ्गुलयस्तला-हस्तका यस्मिन् कुड्यादिषु तत्तथा; दर्दरेण-बहलेन चपेटादिरूपेण वा दत्तपञ्चाङ्गुलितलमित्येके; अन्ये त्वाहुः- दर्दरश्चीवरावनद्धं

1 '°विडंबग°' इति नास्ति Kh- मुद्रिते ।

2 अत्र '°पवग°' इति अधिकः पाठो मुद्रिते ।

कुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गालितेन गोशीर्षादिरसेनेति । तथा उपचिता-उपनिहिता गृहान्तश्चतुष्केषु चन्दनकलशा-मङ्गलघटा यत्र तत्तथा । चन्दनघटा सुकृतास्तोरणानि च प्रतिद्वारं-द्वारस्य द्वारस्य देशभागेषु यत्र तत्तथा; क्वचित् घटस्थाने घणत्ति दृश्यते, तत्र चन्दना-चन्दनमाला घनानि-प्रभूतानि सुकृतानि-तोरणानि च प्रतिद्वारं यत्रेति व्याख्येयम्; उवचियचंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं क्वचित्पाठस्तत्रोपचिता-निवेशिताश्चन्दनघटाश्च-मङ्गल्यकलशाः सुष्ठुकृततोरणानि च द्वारदेशभागं प्रति यस्मिंस्तत्तथा, देशभागश्च देश एव । तथा आसक्तो-भूमिलग्न उत्सक्तश्चोपरि लग्नो विपुलो-विस्तीर्णो वृत्तो-वर्तुलो वग्घारिउ त्ति प्रलम्बितः पुष्पगृहाकारो माल्यदाम्नां-पुष्पमालानां कलापः- समूहो यत्र तत्तथा । तथा पञ्चवर्णाः सरसाः सुरभयो ये मुक्ताः-करप्रेरिताः पुष्पपुञ्जास्तैर्य उपचारः पूजाभूमेस्तेन कलितम् । '**कालागरु**'इत्यादि प्राग्वत् । नटा-नाटककर्तारः, नर्तका-ये स्वयं नृत्यन्ति अंकोल्ला इत्येके, जल्ला-वरत्राग्रखेलकाः राज्ञः स्तोत्रपाठका इत्यन्ये, मल्ला-नियुद्धप्रतीताः, मौष्टिका-मल्ला एव ये मुष्टिभिः प्रहरन्ति, विडम्बका-विदूषकाः, वेलम्बका-ये समुखविकारमुत्प्लुत्य नृत्यन्ति, कथकाः - सरसकथावक्तारः, पठकाः सूक्तादीनां, क्वचित् पवग इति दृश्यते तत्र प्लवका-ये उत्प्लवन्ते गर्तादिकं झम्पाभिर्लङ्घयन्ति नद्यादिकं वा तरन्ति, लासका-ये रासकान् ददति जयशब्दप्रयोक्तारो वा भाण्डा इत्यर्थः, आरक्षका-स्तलवराः आख्यायका वा ये शुभाशुभमाख्यान्ति, लङ्घा-महावंशाग्रखेलकाः, मङ्खा-श्चित्रफलकहस्ता भिक्षाकाः- गौरीपुत्रका इति प्रसिद्धाः, तूणइल्ला-भस्त्रकवित्तास्तूणाभिधानवाद्यविशेषवन्तो वा, तुम्बवीणिका-वीणावादकाः अथवा तुम्बाः- किन्नरीआलपत्यादिवादकाः वीणिका-वीणावादिनः, अनेके ये तालाचराः-तालादानेन प्रेक्षाकारिणस्तालान् कुट्टयन्तो वा ये कथां कथयन्ति, तैरनुचरितं यत्तत्तथा । **कुरुत** स्वयं **कारयत** चान्यैः । **युगसहस्रं च मुशलसहस्रं चोच्छ्रयध्वम्**, पुत्रजन्मनि चैतन्मङ्गलार्थं देशविशेषेऽवश्यं करणीयम्। शेषं व्यक्तम् । क्वचित् आयामजामाहियसक्कारं च पूयामहिमसंजुत्तं च उस्सवेह, तत्र आयाम त्ति दीर्घत्वयुक्तं यामाधिकं यामप्रमाणातिरिक्तं सत्कारं-सत्कारयुक्तं पूजामहिम्ना संयुक्तम् इति ज्ञेयम् ।

**[सू.197] तए णं से सिद्धत्थे राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता जाव सव्वोरोहेणं सव्वपुप्फगंधवत्थमल्लालंकारविभूसाए सव्वतुडियसद्दनिनाएण महया इड्ढीए महया जुतीए महया बलेणं महया वाहणेणं महया समुदएणं महया वरतुडियजमगसमगप्पवाइएणं संखपणवपडह-भेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरवमुइंगदुंदुहिनिग्घोसणादितरवेणं उस्सुक्कं[1] उक्करं उक्किट्ठं अदेज्जं अमेज्जं अभडप्पवेसं अडंडिम[2]कोडंडिमं अधरिमं गणियावरनाडइज्जकलियं अणेगतालायराणुचरियं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं पमुइयपक्कीलियसपुरजणजाणवयं दसदिवसट्ठिइपडियं करेइ ।**

[ज.197] '**अट्टणसाल**'त्ति व्यायामशाला । '**जाव सव्वोरोहेणं**'ति इत्यादि **समस्तान्तःपुरैः**, **याव**त्करणात् सव्विड्ढीए सव्वजुईए इत्यादि दीक्षाकालपठितं वक्ष्यमाणमालापकवृन्दं सव्वोरोहेणमिति पर्यन्तमत्र ग्राह्यम् । क्वचिच्च पूर्ण एव पाठोऽयं दृश्यते, तत्र सव्विड्ढीए इत्यादिपदानि यथास्थाने एव व्याख्या-

1 'उस्सुक्कं°' इत्यस्य स्थाने 'उस्सुंकं' इति पाठो मुद्रिते ।

2 '°डंडको°' इति मुद्रिते ।

स्यन्ते । कानिचिदत्रापि । तत्र पुष्पाण्यग्रथितानि, गन्धा-वासा वस्त्राणि-दुकूलादीनि माल्यानि-ग्रथितानि पुष्पाणि, अलङ्कारो-मुकुटादिः, एतल्लक्षणा या विभूषा तया । सर्वाणि यानि त्रुटितानि-वादित्राणि तेषां यः शब्दो यश्च सङ्गतो निनादः-प्रतिशब्दः स तथा तेन; सव्वतुडियसद्दसन्निनाएणं ति पाठे तु सर्वतूर्याणां यः शब्दो-ध्वनिर्यश्च सङ्गतो निनादः-प्रतिरवस्तेन । **महत्या ऋद्ध्या** युक्त इति गम्यम् । युक्तिर्युतिर्द्युतिर्वा तया, तत्र युक्ति-रुचितेष्टवस्तुघटना युति-र्मेलो द्युति-र्दीप्तिराभरणादीनाम् । **बलेन** सैन्येन **वाहनेन** शिबिकावेगसरादिना **समुदयेन** सङ्गताभ्युदयेन परिवारादिसमुदायेन वा । तूर्याणां यमकसमकं-युगपत्प्रवादितं-ध्वनितं तेन । शङ्खः - कम्बुः, पणवो-मृत्पटहो, भेरी-ढक्का, झल्लरी-चतुरङ्गुलनालिः करटिसदृशी वलयाकारा उभयतो नद्धेत्यन्ये, खरमुखी-काहला, हुडुक्का-तिविलतुल्या, मुरजो-मर्दलः, मृदङ्गो-मृन्मयः, दुन्दुभि-र्देववाद्यम्, एषां घोषो-महाध्वनिर्नादितं च-प्रतिशब्दस्तद्रूपो यो रवस्तेन । **उस्सुक्क**मित्यादि **उच्छुल्काम्** उन्मुक्तशुल्कां **स्थितिपतितां करोती**ति संयोगः, शुल्कं-विक्रेतव्यभाण्डं प्रति मण्डपिकायां राजदेयं द्रव्यम् । **उत्कराम्** उन्मुक्तकराम्, करो-गवादीन् प्रति प्रतिवर्षं राजदेयं द्रव्यम् । **उत्कृष्टां** कर्षणं-कृष्टम् उन्मुक्तं कृष्टं यस्यां सोत्कृष्टा ताम्, लभ्येऽप्याकर्षणनिषेधात् । **अदेयां** विक्रयनिषेधेन न केनापि कस्यापि देयमित्यर्थः । **अमेयां** क्रयविक्रयनिषेधादेव । **अभटप्रवेशाम्** अविद्यमानो भटानां-राजाज्ञादायिनां भट्टपुत्रादिपुरुषाणां प्रवेशः कुटुम्बिगृहेषु यस्यां सा तथा ताम् । तथा दण्डेन निर्वृत्तं दण्डिमं, कुदण्डेन निर्वृत्तं कुदण्डिमं राजद्रव्यं तन्नास्ति यस्यां सा तथा ताम् **अदण्डिमकुदण्डिमाम्**, तत्र दण्डोऽपराधानुसारेण राजग्राह्यं दण्डं कुदण्डस्तु कारणिकानां प्रज्ञापराधान्महत्यप्यपराधिनोऽपराधेऽल्पं राजग्राह्यं द्रव्यम्; क्वचित् अदंडकुदंडिममिति पाठः तत्र दण्डलभ्यं द्रव्यं दण्डः कुदण्डेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिमं तन्नास्ति यस्यां सा, शेषमुक्तवत् । **अधरिमाम्** अविद्यमानं धरिमम् ऋणद्रव्यं यस्यां सा तथा ताम्; क्वचित् अहरिममिति दृष्टं तत्राहरिमं कस्यापि वस्तुनः केनाप्यहरणात्; क्वचित् अधारणिज्जमित्यपि दृश्यते तत्र अविद्यमानो धारणीयोऽधमर्णो यस्यां सा तथा ताम्; अगणिमंति क्वचित्पाठस्तत्र विक्रयार्थं गणनयोग्यवस्तुनोऽगणनादगणिमाम् । गणिकावरै-र्विलासि-नीप्रधानैर्नाटकीयै-र्नाटकप्रतिबद्धपात्रैः कलिता या सा तथा ताम्; क्वचित् अगणियवरनाडइज्जकलियं ति दृश्यते तत्रागणितैः प्रतिस्थानं भावादगणितै-रसङ्ख्यातैर्वरैः-श्रेष्ठैर्नाटकीयैः कलितामिति व्याख्येयम्। **अनेकतालाचरानुचरितां** प्रेक्षाकारिविशेषासेविताम् । तथा अनुद्धुता-आनुरूप्येण वादनार्थमुत्क्षिप्ता अनुद्धता वा-वादनार्थमेव वादकैरत्यक्ता मृदङ्गा-मर्दला यस्यां सा तथा ताम् । अम्लानानि माल्यदामानि-पुष्पमाला यस्यां सा तथा ताम् । प्रमुदितो-हृष्टः प्रक्रीडितश्च-क्रीडितुमारब्धः सह पुरजनेन जानपदो-जनपदलोको यस्यां सा तथा ताम्; पमुइयपकीलियाभिराममिति क्वचित् पाठस्तत्र प्रमुदितैः प्रक्रीडितैश्च जनैरभिरामाम्। वाचनान्तरे विजयवेजयंतं इति दृश्यते तत्र चातिशयेन विजयो विजयविजयः, स प्रयोजनं यत्र सा विजयवैजयिकी ताम् । **दसदिवसं** ति दश दिवसान् यावत् स्थितौ-कुलमर्यादायां पतिताऽन्तर्भूता या पुत्रजन्मोत्सवसम्बन्धिनी वर्धापनिकादिका प्रक्रिया स्थितिपतिता ताम्; क्वचित् दसराइं ति पाठस्तत्र दश रात्रीर्यावद्, अत्र दत्तग्रहणात् देवदत्तवद्रात्रिग्रहणात् दिवसस्यापि ग्रहणमिति ।

**[सू.198] तए णं से सिद्धत्थे राया दसाहियाए ठिइपडियाते वट्टमाणीए सइए य साहस्सिए य सयसा–**

**हस्सिए य जाए य दाए य भाए य दलमाणे य दवावेमाणे य सइए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य लंभे पडिच्छमाणे य पडिच्छावेमाणे य एवं वा विहरइ ।**

[ज.198] '**दसाहियाए**'त्ति **दशाहिकायां** दशदिवसप्रमाणिकायां '**सइए ये**'त्यादि **शतिकान्** शतपरिणामान् **साहस्रिकान्** सहस्रपरिणामान् **शतसाहस्रिकाल्लक्षप्रमाणान्** '**जाए ये**'त्यादि '**जाए य**' त्ति **यागान्** देवपूजाः नगरमध्यवर्तिजिनगृहेषु विशेषपूजाकरणकारापणान् **दायान्** पर्वदिवसादौ दानानि '**भाए य**'त्ति भागान् लब्धद्रव्यविभागान् मानितद्रव्यांशान् वा '**दलमाणे य**' त्ति **ददन्** '**दवावेमाणे**' त्ति **दापयन्** '**लंभे पडिच्छमाणे य**'त्ति **लाभान् प्रतीच्छन्** गृह्णन् '**पडिच्छावेमाणे य**'त्ति **प्रतिग्राहयन्** '**विहरइ**'त्ति **विहरत्यास्ते** ।

**[सू.199] तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइपडियं करेंति, तइए दिवसे चंदसूरस्स दंसणियं करिंति, छट्ठे दिवसे जागरियं करेंति, एक्कारसमे दिवसे विइक्कंते निव्वत्तिए असुतिजातकम्मकरणे संपत्ते बारसाहदिवसे विउलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडाविंति, उवक्खडावित्ता मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणं नायखत्तिए य आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय-मंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिते भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगया तेणं मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणेणं नायएहि य सद्धिं तं विउलं असणं ४ आसाएमाणा विसाएमाणा परिभुंजेमाणा परिभाएमाणा विहरंति ।**

[ज.199] '**अम्मापियरो**'इत्यादि **मातापितरौ प्रथमे दिवसे स्थितिपतितं** कुलक्रमान्तर्भूतं पुत्रजन्मोचित-मनुष्ठानं **कारयतः** स्म । **तृतीये दिवसे चन्द्रसूरदर्शनिका**मुत्सवविशेषं यत्राद्यकल्पे शिशोर्दर्पणदर्शनं कार्यते । '**जागरियं**'ति षष्ठीजागरणम्; क्वचिद् धम्मजागरियं ति दृश्यते, तत्र धर्मेण देवगुरुगीतगानादिना पौरजनस्त्रीणां ताम्बूलदानादिना वा जागरिका ताम्, श्रावकत्वादस्य तत्करणमिति नार्थविसंवादत्वम् । '**निव्वत्तिए**'इत्यादि **निर्वर्तिते** कृते अशुचीना-मशौचवतां जन्मकर्मणां-प्रसवव्यापाराणां नालच्छेदननिखननादीनां यत्करणं तत्तथा, तत्र '**बारसाहदिवसे**'त्ति **द्वादशाख्यदिवसे** अथवा द्वादशानामह्नां समाहारो द्वादशाहं तस्य दिवसो येन द्वादशाहः पूर्यते, तत्र '**उवक्खडावेंति**'त्ति **उपस्कारयतः** रसवतीं निष्पादयतः । '**मित्तनाई**'त्यादि मित्राणि-सुहृदः ज्ञातयः- सजातीया मातृपितृभ्रात्रादयः निजकाः-स्वकीयाः पुत्रादयः स्वजनाः-पितृव्यादयः सम्बन्धिनः- श्वसुरपुत्रश्वसुरादयः परिजनो-दासीदासादिः नायखत्तिया-उसभसामिसयणिजगा । '**आसाएमाणा**' इत्यादि आ-ईषत्स्वादयन्तौ बहु च त्यजन्ताविक्षुखण्डादेरिव, विशेषेणाऽऽधिक्येन स्वादयन्तावल्पमेव त्यजन्तौ खर्जूरादेरिव, परिभुञ्जानौ सामस्त्येनोपभुञ्जानौ अल्पमप्यत्यजन्तौ भोज्यं, परिभाजयन्तावन्येभ्यो यच्छन्तौ स्वाद्यविशेषं मातापितराविति प्रक्रमः ।

**[सू.200] जिमियभुत्तोत्तरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुईभूया तं मित्तनाइनियगसयण-संबंधिपरिजणं नायए य खत्तिए य विउलेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता तस्सेव मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणस्स नायाण य खत्तियाण य पुरओ एवं वयासी ।**

[ज.200] '**जिमिय**'त्ति **जिमितौ** भुक्तवन्तौ '**भुत्तुत्तरागय**'त्ति भुक्तोत्तरं-भोजनोत्तरकालम् आगतावुप-

वेशनस्थाने इति गम्यते **'समाणे'**त्ति सन्तौ, किम्भूतौ भूत्वेत्याह-**आचान्तौ** शुद्धोदकयोगेन कृतशौचौ **चोक्षौ** लेपसिक्थाद्यपनयनेनात एव **परमशुचिभूता**वत्यर्थं शुचीभूताविति । पुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालङ्कार-सत्कारसन्मानव्याख्या पूर्ववत् । **'एवं वयासि'** त्ति **एवमवादिष्टाम् ।**

**[सू.201] पुव्विं पि य णं देवाणुप्पिया ! अम्हं एयंसि दारगंसि गब्भं वक्कंतंसि समाणंसि इमेयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था–जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते तप्पभिइं च णं अम्हे हिरन्नेणं वड्ढामो सुवन्नेणं धणेणं धन्नेणं जाव सावएज्जेणं पीइसक्कारेणं अईव अईव अभिवड्ढामो सामंतरायाणो वसमागया य तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स एयाणुरूवं गोन्नं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणु त्ति, [1]ता अज्ज अम्हं मणोरहसंपत्ती जाया, तं होउ णं कुमारे वद्धमाणे नामेणं ।**

[ज.201] **'ता'** इति **ततः अद्यास्माकं मनोरथसम्प्राप्तिर्जाता**, **'तं होउ णं'**ति **तद्भवतु कुमारो वर्धमान** इति **नाम्ना** ।

**[सू.202] समणे भगवं महावीरे कासवगोत्ते णं, तस्स णं तओ नामधेज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा– अम्मापिउसंतिए वद्धमाणे १ सहसमुइयाते समणे २ अयले भयभेरवाणं परीसहोवसग्गाणं खंतिखमे पडिमाणं पालए धीमं अरतिरतिसहे दविए वीरियसंपन्ने देवेहिं से णामं कयं समणे भगवं महावीरे ३ ।**

[ज.202] **'कासवगुत्तेणं'**ति **काश्यपगोत्रेण तस्य त्रीणि नामधेयानि 'एवमाहिज्जंति'**त्ति **एवमाख्यायन्ते** अधीयन्ते वा-[1]अम्बापित्रोः सत्कं नाम **वर्धमान** इति, [2] **'सहसमुइयाए'**त्ति समुदिता-रागद्वेषाभावः 'सह'त्ति सहभाविनी समुदिता सहसमुदिता, यच्चूर्णिः *-समुई-रागदोसरहियया* तया **श्रमण** इति नाम, श्राम्यतीति श्रमणस्तपोनिधिः *श्रमूच् खेदतपसो[सि.हे.धा.1233]*रिति वचनात्, [3] भयम् - अकस्माद् भैरवं -सिंहादेर्भयं तयोर्विषयेऽचलो निःप्रकम्पः तदगोचरत्वाद्, परीषहोपसर्गाणां क्षुत्पिपासादिदिव्यादिभेदात् द्वाविंशतिषोडशविधानां **क्षान्तिक्षमः** क्षान्त्या क्षमते न त्वसमर्थतया यः स क्षान्तिक्षमः, **प्रतिमानां** भद्रादीनामेकरात्रिक्यादीनां वा तत्तदभिग्रहविशेषाणां वा **पालकः** पारगो वा, **धीमान्** ज्ञानचतुष्टयवान्, **अरतिरतिसहः** अरतिरत्योः सह समर्थस्तन्निग्रहात्, **'दविए'** त्ति **द्रव्यं** तत्तद्गुणभाजनं *द्रव्यं च भव्ये* इति शब्दप्राभृतवचनात् रागद्वेषरहित इति वृद्धाः, **वीर्यसम्पन्नः** स्वस्य सिद्धिगमने निश्चितेऽपि तपश्चरणादौ प्रवर्तनात्, अतो **महावीर** इति **नाम देवैः कृतम्** ।

**[सू.203] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पिया कासवे गोत्तेणं, तस्स णं तओ नामधेज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा– सिद्धत्थे इ वा सेज्जंसे इ वा जसंसे इ वा ।**

**[सू.204] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स माया वासिट्ठा गोत्तेणं, तीसे णं तओ नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–तिसला इ वा विदेहदिण्णा इ वा पियकारिणी इ वा ।**

---

1 'ता....जाया' इति पाठो नास्ति मुद्रिते ।

**[सू.205] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पित्तिज्जे सुपासे, जेट्ठे भाया नंदिवद्धणे, भगिणी सुदंसणा, भारिया जसोया कोंडिन्ना गोत्तेणं ।**

**[सू.206] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स णं धूया कासवी गोत्तेणं, तीसे णं दो नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–अणोज्जा इ वा पियदंसणा इ वा ।**

**[सू.207] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स नत्तुई कासवी गोत्तेणं, तीसे णं दो नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–सेसवई इ वा जस्सवई इ वा ।**

[ज.203-207] '**भगिणी सुदंसण**'त्ति **भगिनी सुदर्शना**नाम्नी जमालेर्माता, '**धूय**'त्ति सुता तस्यैव जमालेर्भार्या '**नत्तुइ**'त्ति दोहित्री ।

**[सू.208] समणे भगवं महावीरे दक्खे दक्खपतिन्ने पडिरूवे आलीणे भद्दए विणीए नाए नायपुत्ते नायकुलचंदे विदेहे विदेहदिन्ने विदेहजच्चे विदेहसूमाले तीसं वासाइं विदेहंसि कट्टु अम्मा[1]पिऊहिं देवत्तगएहिं गुरुमहत्तरएहिं अब्भणुन्नाए समत्तपइन्ने पुणरवि लोयंतिएहिं[2] जीयकप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं मियमहुरसस्सिरीयाहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं गंभीराहिं अपुणरुत्ताहिं वग्गूहिं अणवरयं अभिनंदमाणा य अभिथुव्वमाणा य एवं वयासी–जय जय नंदा ! जय जय भद्दा ! भद्दं ते जय जय खत्तियवरवसहा ! बुज्झाहि भगवं लोगनाहा ! पवत्तेहि धम्मतित्थं हियसुहनिस्सेयसकरं सव्वलोए सव्वजीवाणं भविस्सई त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति ।**

[ज.208] '**दक्खे**' इत्यादि **दक्षः** कलासु । दक्षा-प्रतिज्ञातसिद्धिपारङ्गामितया पट्वी प्रतिज्ञा यस्य स तथा । **प्रतिरूपस्तत्तद्गुणसङ्क्रमणदर्पणत्वात्** विशिष्टरूपो वा । **आलीनः** सर्वगुणैराश्लिष्टो गुप्तेन्द्रियः। **भद्रकः** सरलः, भद्रग इति वा भद्रवद्-वृषभवद्गच्छतीति भद्रो वा सर्वकल्याणदायित्वात् । **विनीतो** विनयवान् सुशिक्षितो वा जितेन्द्रियो वा,

*विनयो हीन्द्रियजयस्तद्युक्तः शास्त्रमर्हति ।*
*विनीतस्य हि शास्त्रार्थाः प्रसीदन्ति ततः श्रियः ॥*

इति वचनात् । एतानि च विशेषणानि भोगावस्थां वर्षद्वयं भावयतिदशां च प्रतीत्य यथासम्भवं योज्यानि । तथा **ज्ञातः** प्रख्यातः ज्ञातो वा ज्ञातवंशजत्वात् । अत एवाह - '**नायपुत्ते**' **ज्ञातपुत्रः** ज्ञातः-सिद्धार्थनृपस्तस्य पुत्रो ज्ञातपुत्रः । न च पुत्रमात्रेणैव काचित्सिद्धिरित्याह-**ज्ञातकुलचन्द्रः** । **विदेह** इति विशिष्टदेहः वज्रऋषभनाराचसंहननसमचतुरस्रसंस्थानोपेतत्वात् अथवा *दिहींक् लेपे[सि.हे.धा.1128]* विगतो देहो-लेपोऽस्मादिति विदेहो निर्लेपो भोगेष्वपि *यत्र तत्र रतिर्नाम* वैराग्यभावात् । '**विदेहदिन्न**'त्ति

1 '°पिईहिं°' इति मुद्रिते ।

2 '°हिं जिय°' इति मुद्रिते ।

विदेहदिन्ना - त्रिशलादेवी तस्या अपत्यं वैदेहदिन्नः, संस्कृतापेक्षया विदेहदत्ता-त्रिशला तस्या अपत्यं वैदेहदत्त इति ज्ञेयम् । तस्या एवौरसपुत्रत्वख्यापनार्थं विशेषणमाह -'**विदेहजच्चे**'त्ति विदेहा, भीमो भीमसेन इति न्यायात् विदेहदत्ता - त्रिशला, तस्यां जातो विदेहाजः, विदेहाजाऽर्चा शरीरं यस्यासौ **विदेहाजार्चः** अथवा विदेहो विगतदेहोऽनङ्ग इत्यर्थः, स यात्यः-पीडयितव्यो यस्यासौ विदेहयात्यः । तथा '**विदेहसूमाले**'त्ति विशेषेण दिह्यते-लिप्यते तत्तत्परिग्रहारम्भसम्भृतैः पापपङ्कैर्जीवोऽस्मिन्निति विदेहो - गृहवासस्तत्रैव सुकुमारः शब्दादिविषयसुखलालितः, न पुनर्व्रतावस्थायां, तत्रेतरदुर्विषहपरीषहकाल-चक्राभिघाताद्युपसर्गसहने वज्रकर्कशत्वात् । **त्रिंशद्वर्षाणि** विदेहो-गृहवासस्तं **कृत्वा** स्थित्वा, एतेषां च पदानां क्वापि विवृतिर्न दृष्टा, अतो वृद्धाम्नायादन्यथापि भावनीयानि । '**अम्मापिऊहिं**'ति मातापित्रोर्देवत्वं गतयोः, यदुक्तमाचाराख्ये प्रथमाङ्गे *समणस्स भगवतो महावीरस्स अम्मापियरो पासावच्चिज्जा समणोवासगा यावि होत्था । ते णं बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पालइत्ता छण्हं जीवनिकायाणं सारक्खणनिमित्तं आलोइत्ता निंदित्ता गरहित्ता पडिक्कमित्ता आहारिहं उत्तरगुणपाइच्छित्ताइं पडिवज्जित्ता कुससंथारगं दुरुहित्ता भत्तं पच्चक्खायति पच्चक्खाइत्ता अपच्छिमाए मारणंतियाए सरीरसंलेहणाए झूसियसरीरा कालमासे कालं किच्चा तं सरीरं विप्पजहित्ता अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ना । तते णं आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं चुए चइत्ता महाविदेहे वासे चरिमेणं उस्सासनिस्सासेणं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति[आचा.2-3-401]* इति व्यक्तम्, नवरं अच्चुए कप्पे त्ति अच्युतकल्पो द्वादशदेवलोकस्तत्र देवत्वेनोत्पन्नौ । सप्ततिशतस्थानकग्रन्थेऽप्येवमेवोक्तमस्तीति ज्ञेयम् । मूलटीकायां तु माहेन्द्रकल्पमुपगतयोरिति दृश्यते तत्तु चिन्त्यम् आचाराङ्गेण सह विसंवादित्वात् इति कृतं प्रसङ्गेन । ततो नन्दिवर्धनप्रभृतिकुटुम्बकमनुज्ञापितवान् य'दार्य ! पूर्णो ममाभिग्रहः ततः प्रव्रजामी'ति । ततः स्वजनवर्गेणोक्तं यथा 'भगवन् मा कृथाः क्षते क्षारावसेचन'मित्येवमभिहितेन भगवतावधिना व्यज्ञायि यथा 'मय्यस्मिन्नवसरे प्रव्रजति सति बहवो नष्टचित्ता विगतासवश्च स्यु'रित्यवधार्य तानुवाच - 'कियन्तं कालं पुनरत्र मया स्थातव्य'मिति । ते ऊचुः - 'संवत्सरद्वयेनास्माकं शोकापगमो भावी'ति । भट्टारकोऽ'प्यो'मित्युवाच - 'किन्त्वाहारादिकं मया स्वेच्छयाऽनियन्त्रितेन भोजनवेलायां स्वबन्धुवर्गगृहेऽज्ञातेनैव कार्यं परं मदुद्देशेन नैव कार्यं, तस्य प्रचुरतरसत्त्वोपघातकारणत्वात्, ततो न मदीयेच्छाविघाताय भवद्भिरुपस्थातव्यम्' । एतेन च गार्हस्थ्यैर्भिक्षाटनमपि न कल्पते एकादशप्रतिमा-भिग्रहमन्तरेणाथ च षट्कायारम्भोऽपि न, तथा स्वस्य सम्बोभवीति अदैन्यम् औदासीन्यं चापि उपदर्शितं भवति । तैरपि 'यथाकथञ्चिदयं तिष्ठत्वि'ति मन्वानैः सर्वैस्तथैव प्रतिपेदे । ततो भगवांस्तद्वचनमनुवर्त्यात्मीयं च निःक्रमणावसरमवगम्य संसारासारतां विज्ञाय सच्चित्तोदकमप्यपीत्वा अपरा अपि पादधावनादिकाः क्रियाः प्रासुकोदकेनैव प्रकृत्य वस्त्रालङ्कारभास्वरशरीरोऽपि निरवद्यवृत्तिर्भावमुनीभूय वर्षद्वयं गृहे तस्थिवान् । ततः प्रथमवर्षेऽतीते लोकान्तिका देवा ब्रह्मलोकादागत्य भगवन्तं स्वयम्बुद्धमपि कल्प इति कृत्वा दीक्षायै बोधयन्ति स्मेति । ततो गुरुमहत्तरकाननुज्ञाप्य सांवत्सरिकं महादानं दत्त्वा प्राव्राजीद्भगवान्, अत उक्तं **गुरुमहत्तरकैरभ्यनुज्ञातः**, यतः **समाप्तप्रतिज्ञः** 'नाहं समणो होहं अम्मापियरम्मि जीवंते' इति गृह(गर्भ)स्थावस्थागृहीताभिग्रहस्य वर्षद्वयावस्थानाभिग्रहस्य च पारगमनात्, **पुनरपी**ति विशेषद्योतने एकं

तावत्स्वयमेव समाप्तप्रतिज्ञो विशेषतश्च **लोकान्तिकैर्देवै**र्बोधित इति गम्यते तृतीयाया अन्यथानुपपत्तेः, तत्र लोकान्ते भवा लौकान्तिकाः ब्रह्मलोकवास्तव्याः सारस्वतादयः एकान्तसम्यग्दृष्टयो देवविशेषाः, न च भगवांस्तदुपदेशमपेक्षते स्वयम्बुद्धत्वात् किन्त्वेतेषामयमाचारः इत्येतदेवाऽऽह - '**जीयकप्पिएहिं**'ति जीतमवश्याचरणीयं कल्पितं-कृतं यैस्ते जीतकल्पितास्तैर्जीतेन वा-अवश्यम्भावेन कल्प-इतिकर्तव्यता जीतकल्पः, स एषामस्तीति जीतकल्पिकास्तैः । '**ताहि**'मित्यादि विभक्तिव्यत्ययात् ते लोकान्तिका देवा-**स्ताभि**रिष्टादिविशेषणोपेताभिर्वाग्भिर्गीर्भि**रनवरतम् अभिनन्दयन्तः** समृद्धिमन्तमाचक्षाणाः **अभिष्टुवन्तश्च** गुणकीर्तनया **एवमवादिषु**र्व्यजिज्ञपन् । इष्टादीनां व्याख्या प्राग्वत्, नवरं गम्भीराभिर्महाध्वनिभिरपुनरुक्ता-भिरिति व्यक्तम्; क्वचित् मियमहुरगंभीरगाहियाहिं इति पाठस्तत्र दुरवधार्यमपि अर्थं श्रोतॄन् ग्राहयन्ति यास्ता ग्राहिकास्ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयः ताभिः; अट्ठसइयाहिं ति क्वचिद्दृश्यते तत्रार्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभिः अथवा सइ त्ति बहुफलत्वम् अर्थतः सइयाउ अट्ठसइयाओ ताहिं ।

'**जय जये**'त्यादि सम्भ्रमे द्विर्वचनम्, **जय जय** त्वं जयं लभस्व । नन्दति- समृद्धो भवतीति **नन्दः** तस्याऽऽमन्त्रणम्, इह च दीर्घत्वं प्राकृतत्वात् अथवा जय त्वं जगन्नन्द ! भुवनसमृद्धिकारक ! । **जय जय भद्र !** प्राग्वत्, नवरं भद्रः कल्याणकारी वा भद्रं ते भवत्विति शेषः । '**हियसुहनिस्सेयसकरं**'ति हितं-पथ्यान्नवत्, सुखं-शर्म शुभं वा-कल्याणं, निःश्रेयसं-मोक्षस्तत्करं, **धर्मतीर्थं** धर्मप्रधानं प्रवचनम्, तीर्थान्तरीयतीर्थव्यवच्छेदार्थं धर्मतीर्थमित्युक्तम् । केषां हितसुखनिःश्रेयसकरं भविष्यतीत्याह -**सर्वलोके सर्वजीवानां** सर्वस्मिन् लोके ये सर्वजीवाः सूक्ष्मबादरादिभेदभिन्नास्तेषाम्, रक्षोपदेशादिना हितादित्वात्, यत उक्तम्-

*वेसमणकुण्डलधरा देवा लोगंतिया महड्ढीया ।*
*बोहिंति य तित्थयरं पन्नरससु कम्मभूमीसु ॥*

*बंभमि य कप्पंमि य बोधव्वा कण्हराइणो मज्झे ।*
*लोगंतियविमाणा अट्ठसु वत्था असंखिज्जा ॥ [आचा. 2-3-402]*

*सारस्सयमाइच्चा वन्ही वरुणा य गद्दतोया य ।*
*तुसिया अव्वाबाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य ॥ [आ.नि.214]*

*एए देवनिकाया भयवं बोहिंति जिणवरं वीरं ।*
*सव्वजगज्जीवहियय भयवं तित्थं पवत्तेहि ॥ [आचा. 2-3-402]*

**[सू.209] पुव्विं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स माणुस्साओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरे आहोहिए अप्पडिवाई नाणदंसणे होत्था । तए णं समणे भगवं महावीरे तेणं अणुत्तरेणं आहोहिएणं नाणदंसणेणं अप्पणो निक्खमणकालं आभोएइ, अप्पणो निक्खमणकालं आभोएत्ता चेच्चा हिरण्णं चेच्चा सुवन्नं चेच्चा धणं चेच्चा रज्जं चेच्चा रट्ठं एवं बलं वाहणं कोसं कोट्ठागारं चेच्चा पुरं चेच्चा अंतेउरं चेच्चा जणवयं चेच्चा विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइयं संतसारसाव-**

**तेज्जं विच्छड्डइत्ता विगोवइत्ता दाणं दायारेहिं परिभाएत्ता दाइयाणं परिभाएत्ता जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमीपक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए पोरिसीए अभिनिविट्ठाए पमाणपत्ताए सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं चंदप्पभाए सीयाए सदेवमणुयासुराए परिसाए समणुगम्ममाणमग्गे संखियचक्कियनंगलियमुहमंगलियवद्धमाणगपूसमाणगघंटियगणेहिं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं मियमहुरसस्सिरीयाहिं वग्गूहिं अभिनंदमाणा अभिसंथुवमाणा य एवं वयासी ।**

[ज.209] '**पुव्विं पि ण**'मित्यादि **मानुष्यकान्**मनुष्योचितात् **गृहस्थधर्मा**द्विवाहादेः पूर्वमपि भगवतोऽ**नुत्तरम्**

*नेरइयदेवतित्थंकरा य ओहिस्सऽबाहिरा हुंति ।*
*पासंति सव्वतो खलु सेसा देसेण पासंती॥[नं.सू.29 गा.54]*ति वचनात्

सर्वोत्कृष्ट**माभोगिकम्** - आभोगप्रयोजनमप्रतिपात्यनिवर्तकम् आ केवलोत्पत्ते**र्ज्ञानदर्शनम्** अवधिज्ञानमवधिदर्शनं चाऽऽ**सीत्**, तच्च परमावधेः किञ्चिन्न्यूनम्, 'अहोहिए'इति क्वचित्पाठः तत्राधोऽवधिरधः-परिच्छेदबहुलोऽभ्यन्तरावधिरित्यर्थः तथा च चूर्णिः-*अहोहीय त्ति अब्भिंतरोही[दशा.चू.पृ.100],* अत एवोक्तम्- *नेरइये[नं.सू.29 गा.54]*त्यादि । अत्र हि अबाहिरत्ति अभ्यन्तरावधयो व्याख्याताः । '**तए ण**'मित्यादि **आत्मनः** स्वस्य **निष्क्रमणकालम्** इति दीक्षादानावसरं वर्षमात्रे शेषे इति शेषः, '**आभोएइ**'इति विलोकयति, तत एवोक्तमाचाराङ्गेऽपि-*जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमीपक्खेणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अभिनिक्खमणाभिप्पाए यावि होत्था[आचा. 2-3-402]*

*संवच्छरेणं होही अभिनिक्खमणं तु जिणवरिंदस्स ।*
*तो अत्थसंपयाणं पव्वत्तई पुव्वसूराओ ॥ [आचा. 2-3-402 (गा.1)]*

*एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव य अणूणगा सयसहस्सा ।*
*सूरोदयमाईयं दिज्जई जा पायरासाओ ॥[आचा. 2-3-402 (गा.2)]*

*तिन्नेव य कोडिसया अट्ठासीइं च हुंति कोडीतो ।*
*असियं च सयसहस्सा एयं संवच्छरे दिन्नं ॥[आचा. 2-3-402 (गा.3)]*

*वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छियं दिज्जए बहुविहीयं ।*
*सुरअसुरदेवदाणवनरिंदमहियाण निक्खमणे ॥ [आ. नि. 219]*

सुगमाश्चैता गाथाः, नवरं पायरासाउ त्ति मगधदेशसम्बन्धिनं प्रातराशि-प्राभातिकं भोजनकालं यावत्प्रहरद्वयादिकमित्यर्थः; वरवरिय त्ति वरस्य-इष्टार्थस्य वरणं-ग्रहणं वरवरिका, वरं वृणुत वरं वृणुत इत्येवं शब्दनं वरवरिकेति भावः; सुरासुरैर्देवदानवनरेन्द्रैश्च महिता ये ते तथा तेषाम् इति । ततः संवत्सरदानोत्तरकालं श्रमणस्य निष्क्रमणाभिप्रायं ज्ञात्वा भवनपतिवानमन्तरज्योतिष्कवैमानिका

देवाः सेन्द्राः देव्यश्च स्वस्वरूपनेपथ्या गान्धर्वऋद्धिद्युतिबलसमुदयेन स्वकीयस्वकीययानविमानारूढाः सुरवरगत्याऽधोऽवपतन्तः तिर्यगसङ्ख्येयान् द्वीपसमुद्रान् व्यतिक्रामन्तः व्यतिक्रामन्तः क्षत्रियकुण्डपुरमाजग्मुः । ततः शक्रो विमानादवतीर्य वैक्रियसमुद्घातं कृत्वा देवच्छन्दकं सान्तःपीठं ससिंहासनं च विधाय भगवतः समीपमुपागत्य त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य भगवन्तं सार्थे नीत्वा देवच्छन्दकान्तर्वर्तिसिंहासने निवेश्य पूर्वाभिमुखं शतपाकसहस्रपाकैस्तैलैरभ्यञ्जनं कारयति । ततो गन्धद्रव्योद्वर्तनं पुष्पोदकादिभिः प्रवरतीर्थाद्यानीत-औषधीजलैश्च अष्टसहस्रचतुःषष्टिसुवर्णादिकलशैर्मज्जनं च गात्ररूक्षणं गोशीर्षचन्दनविलेपनं च बहुमूल्यवस्त्रपरिधापनं च हारार्धहारकेयूरकुण्डलमुकुटकटीसूत्रमुद्रिकालङ्करणं च चतुर्विधदामोपशोभितं च करोति । पुनर्वैक्रियसमुद्घातं विधाय एकां चन्द्रप्रभाभिधानां शिबिकां सहस्रपुरुषवाहिनीं वृषभतुरगनरमकरविहगव्यालकवानरकुञ्जररुरुसरभचमरशार्दूलसिंहवनलतापद्मलताचित्रां विद्याधरमिथुनयुग्मयन्त्रयोगयुक्ताम् अर्चिःसहस्रमालिनीं रूपकसहस्रकलितां प्रवरमुक्तादामहारार्धहारतपनीयलम्बूसकप्रभृतिनयनसुखदपरिमण्डिताम् उत्तानकनयनप्रेक्षणीयाम् अशोकलताकुन्दलताश्यामलतानागलतादिलताभक्तिचित्रितां नानामणिपञ्चवर्णघण्टापताकापरिमण्डिताग्रशिखरां शुभां चारुरूपां प्रासाद्यां दर्शनीयाम् उपनयति, यतः-

*सीया उवणीया जिणवरस्स जरमरणविप्पमुक्कस्स ।*
*ओसत्तमल्लदामा जलथलयदिव्वकुसुमेहिं ॥*

*सिबियाइ मज्झयारे दिव्ववररयणरूववं चइयं ।*
*सीहासणं महरिहं सपायपीढं जिणवरस्स ॥*

*आलइयमालमउडो भासुरबोंदी वराभरणधारी ।*
*खोमयवत्थनियत्थो जस्स य मुल्लं सयसहस्सं ॥*

*छट्ठेण उ भत्तेण अज्झवसाणेण सोहणेण जिणो ।*
*लेसाहि विसुज्झंतो आरुहई उत्तमं सीयं ॥*

*सीहासणे निविट्ठो सक्कीसाणा य दोहिं पासेहिं ।*
*वीयंति चामराहिं मणिरयणविचित्तदंडाहिं ॥*

*पुव्विं उक्खित्ता माणुसेहिं साहट्टु रोमकूवेहिं ।*
*पच्छा वहंति देवा सुरअसुरगरुलनागिंदा ॥*

*पुरओ सुरा वहंती असुरा पुण दाहिणंमि पासंमि ।*
*अवरे वहंति गरुला नागा पुण उत्तरे पासे ॥*

*वणसंडं च कुसुमियं पउमवरो वा जहा सरयकाले ।*
*सोहइ कुसुमभरेणं इय गयणयलं सुरगणेहिं ॥*

*सिद्धत्थवणं व जहा कणयारवणं च चंपगवणं वा ।*
*सोहइ कुसुमभरेणं इय गयणयलं सुरगणेहिं ॥*

*वरपडहभेरिझल्लरिसंखसयसहस्सएहिं तूरेहिं ।*
*गयणयले धरणियले तूरनिनाओ परमरम्मो ॥*

*ततवितत घणझुसिरं आउज्जं चउव्विहं बहुविहीयं ।*
*वायंति तत्थ देवा बहूहिं आनट्टगसएहिं ॥[आचा.2-3-402(गा.1-11)]*

इति दीक्षाग्रहणकाले प्रथमाङ्गे श्रीवीरस्यैवाधिकारे दृश्यतेऽत उक्तम् । कृतं प्रसङ्गेन । प्रकृतमनुस्रियते -'**चिच्चा हिरण्ण**'मित्यादि हिरण्यादिव्याख्या प्राग्वत्, '**चिच्चा**' **त्यक्त्वा** । तथा **विच्छर्द्य** विशेषेण त्यक्त्वा निष्क्रमणमहिमकरणतो विच्छर्दवद्वा कृत्वा विच्छर्दो-विस्तारः । तथा तदेव गुप्तं सद्विगोप्य-प्रकाशीकृत्य दानातिशयात् अथवा *गुपि गोपनकुत्सनयोः[सि.हे.धा.763]* ततो **विगोप्य** कुत्सनीय-मेतदस्थिरत्वादित्युक्त्वा । दीयत इति **दानं** धनं, '**दायारेहिं**' ति दायाय-दानार्थमाऋच्छन्ति अचि प्रत्यये दायारा-याचकास्तेभ्यो **दानार्हेभ्यः परिभाज्य** परिभाव्य वा आलोच्य एतेभ्य इदमिदं वा दातव्यमिति अथवा दातृभिः स्वनियुक्तपूरुषैर्दानं परिभाज्य दापयित्वा, तथा दायो-भागोऽस्त्येषां दायिका-गोत्रिकास्तेभ्यो दानं धनविभागं विभाज्य भागांशं दत्त्वा ।

'**जे से हेमंताण**'मित्यादि पाठसिद्धम् । '**पाईणगामिणीए छायाए**' **पूर्वदिग्गामिन्यां छायायां** '**पोरिसीए**' अर्थात् पाश्चात्य**पौरुष्यां प्रमाणप्राप्तायां** कोटिप्राप्तायां**मभिनिवृत्तायां** जातायां **सुव्रताख्ये दिवसे विजयाख्ये मुहूर्ते चन्द्रप्रभायां शिबिकाया**मारूढमिति गम्यम्, तन्मानं त्वेवम् -

*पंचासइ आयामा धणूणि विच्छिन्नपन्नवीसं तु ।*
*बत्तीसयमुव्विद्धा सिबिया चंदप्पहा भणिया ॥ [आ.नि.भा.93]*

**सदेवमनुजासुरया** स्वर्गमर्त्यपातालवासिन्या **परिषदा** जनसमुदायेन **समनुगम्यमान**मनुव्रज्यमानं भगवन्त**मग्रे** चाग्रतश्च शङ्खिकाद्यैः परिवृतं **ताभि**रिष्टादिविशेषणोपेताभिर्वाग्भि**रभिनन्दन्तोऽभिष्टुवन्तश्च** प्रक्रमात् कुलमहत्तरादिस्वजना **एवमवादिषुः** । तत्र शाङ्खिका-श्चन्दनगर्भशङ्खहस्ताः मङ्गलकारिणः शङ्खवादका वा, चाक्रिका-श्चक्रप्रहरणाः कुम्भकारतैलिकादयो वा, लाङ्गलिका - गलावलम्बितसुवर्णादिमयलाङ्गला-कारधारिणो भट्टविशेषाः कर्षका वा, मुखमङ्गलिका - मुखे मङ्गलं येषां ते तथा चाटुकारिण इत्यर्थः, वर्धमानाः स्कन्धारोपितपुरुषाः, '**पूसमाण**'त्ति पुष्यमाणा मागधा मान्या वा, घण्टया चरन्तीति घाण्टिकाः राउलिया इति रूढाः, तेषां गणास्तैः; क्वचित् खंडियगणेहिंति पाठस्तत्र खण्डिकगणाश्छात्रसमुदायास्तैः । किमवादिषुः? इत्याह-

**[सू.210] जय जय नंदा ! जय जय भद्दा ! भद्दं ते अभग्गेहिं णाणदंसणचरित्तेहिं अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जियं च पालेहि समणधम्मं, जिअविग्घो वि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे, निहणाहि**

**रागदोसमल्ले तवेणं, धिइधणियबद्धकच्छे मद्दाहि अट्ठकम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं अप्पमत्तो हराहि आराहणपडागं च वीर ! तेलोक्करंगमज्झे, पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं वरणाणं, गच्छ य मोक्खं परमपयं जिणवरोवदिट्ठेणं मग्गेणं अकुडिलेणं, हंता परीसहचमूं, जय जय खत्तियवरवसहा ! बहूइं दिवसाइं बहूइं पक्खाइं बहूइं मासाइं बहूइं उऊइं बहूइं अयणाइं बहूइं संवच्छराइं अभीए परीसहोवसग्गाणं खंतिखमे भयभेरवाणं धम्मे ते अविग्घं भवउ त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति ।**

[ज.210] '**जय जये**'त्यादि प्राग्वत् । नवर**मभग्नै**-र्निरतीचारैः **ज्ञानदर्शनचारित्रै**स्त्वम् । क्वचित् अजियाइं जिणाहि इंदियाइं इत्यादिपदानि न दृश्यन्ते परं तानि सर्वाणि कल्पोक्तानि न विरुद्धानि, **अजिता**न्यजेयानि **जय** वशीकुरु **इन्द्रियाणि** श्रोत्रादीनि **जितं च** सात्म्यापन्नं **श्रमणधर्मं** क्षान्त्यादिदशलक्षणं **जितविघ्नोऽपि च त्वं** हे **देव** ! सन्निवस निवस **सिद्धिमध्ये**, **अपि चे**ति समुच्चये, अत्र सिद्धिशब्देन श्रमणधर्मस्य वशीकारस्तस्य मध्यं लक्षणया प्रकर्षस्तत्र त्वं निरन्तरायं तिष्ठेत्यर्थः । अत एव **रागद्वेषमल्लौ निजहि** निगृहाण **तपसा** बाह्याभ्यन्तरेण साधकतमेन । तथा धृतौ-सन्तोषे धैर्ये वा धणिय-मत्यर्थं बद्धकक्षः सन् **मर्दयाष्टकर्मशत्रून्**, केन कृत्वा ? इत्याह - **ध्यानेने**ति, तत्रापि आर्तरौद्रनिषेधार्थमाह -'**उत्तमेणं**' ति **उत्तमसा** तमोऽतीतेन, तत्रापि कर्मशत्रून् मर्दने प्रधानसाधनं शुक्लध्यानमेवेत्याह -**शुक्लेन** शुक्लाख्येन । **अप्रमत्तः** प्रमादरहितः सन् '**हराहि**' त्ति निगृहाण चाऽऽराधनापताकाम्, **वीरे**ति भगवदामन्त्रणम् अङ्गीकारवाचकम्, **त्रैलोक्यरङ्गमध्ये** त्रिभुवनमल्लाख्यवाटकान्तरे । **प्राप्नुहि** च **वितिमिरमनुत्तरं केवलं वरं ज्ञानं गच्छ च मोक्षं परं पदं जिनवरोपदिष्टेन** ऋषभादिजिनेन्द्रोक्तेन **मार्गेण** रत्नत्रयलक्षणेन प्रशान्तेन हितात्मकेन वा **अकुटिलेन** कषायविषयादिकौटिल्यपरिहारात् अक्षेपेण मोक्षप्रापकत्वाच्च सरलेन **हत्वा परीषहचमूम्**। **जय जय क्षत्रियवरवृषभ** ! जात्यक्षत्रियो हि परचमूं हन्ति । दिवसाः प्रहराष्टकात्मकाः अहोरात्रा इत्यर्थः, पक्षाः पञ्चदशाहोरात्रात्मकाः, मासाः पक्षद्वयात्मकाः, ऋतवो हेमन्ताद्या मासद्वयात्मकाः, अयनानि दक्षिणायनोत्तरायणरूपाणि मासषट्करूपाणि, संवत्सराणि द्वादशमासात्मकानि । **अभीतः परीषहोपसर्गेभ्यो भयभैरवानां** भैरवभयानां **क्षान्तिक्षमः** क्षान्त्या क्षमो न त्वसामर्थ्यादिना स क्षान्तिक्षमः । क्वचित् अभिभवियगामकंटगे इत्यपि दृश्यते, तत्र ग्रामकण्टकानिन्द्रियग्रामप्रतिकूलान् दुर्वाक्यजल्पनपरादीन् अभिभूय - अपाकर्ण्य । **धर्मे** प्रस्तुते **ते** त**वाविघ्नं** निर्विघ्नता **भवतु इतिकट्टु** इत्युच्चार्य **जयजयशब्दं प्रयुञ्जते** स्वजना एव ।

**[सू.211] तए णं समणे भगवं महावीरे नयणमालासहस्सेहिं पेच्छिज्जमाणे पेच्छिज्जमाणे वयणमाला-सहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे हिययमालासहस्सेहिं ओनंदिज्जमाणे ओनंदिज्जमाणे मणोरहमाला-सहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे विच्छिप्पमाणे कंतिरूवगुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे अंगुलिमालासहस्सेहिं दाइज्जमाणे दाइज्जमाणे दाहिणहत्थेणं बहूणं नरनारिसहस्साणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे भवणपंतिसहस्साइं समतिच्छमाणे समतिच्छमाणे तंतीतलतालतुडियगीयवाइयरवेणं महुरेण य मणहरेणं जयजयसद्दघोसमीसिएणं मंजुमंजुणा घोसेण य पडिबुज्झमाणे पडिबुज्झमाणे**

**सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्ववाहणेणं सव्वसमुदएणं सव्वादरेणं सव्वविभूतीए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वसंगमेणं सव्वपगतीहिं सव्वणाडएहिं सव्वतालायरेहिं सव्वोरोहेणं सव्वपुप्फवत्थगंध-मल्लालंकारविभूसाए सव्वतुडियसद्दसण्णिणादेणं महता इड्ढीए महता जुतीए महता बलेणं महता वाहणेणं महता समुदएणं महता वरतुडितजमगसमगप्पवादितेणं संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहि-हुडुक्कदुंदुभिनिग्घोसनादियरवेणं कुंडपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव णायसंडवणे उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ ।**

[ज.211] '**तए ण**'मित्यादि नयनमालाः श्रेणिस्थितजननयनपङ्क्तयस्तासां सहस्रैः, एवमग्रेऽपि । '**वयण**'त्ति वचनानि वदनानि वा '**अभिथुव्वमाणे**'त्ति **अभिष्टूयमानः** । हृदयमालासहस्रैर्जननमनसमूहैरुन्नन्द्यमान उत्प्राबल्येन समृद्धिमुपनीयमानो जय जीव नन्देत्यादिपर्यालोचनादिति भावः; क्वचित् उन्नइज्जमाणे त्ति पाठस्तत्रोन्नतीक्रियमाण उन्नतिं प्राप्यमाणः; क्वचित् अभिनंदिज्जमाणे अयमपि पाठः तत्र अभिनन्द्यमान इति । '**विच्छिप्पमाणे**' त्ति **मनोरथमालासहस्रैरेतस्याऽऽज्ञाविधायिनो भवाम** इत्यादिभिर्जनविकल्पैर्विशेषेण **स्पृश्यमानः** । **कान्तिरूपगुणैर्हेतुभूतैः प्रार्थ्यमानो** भर्तृतया स्वामितया वा स्त्रीपुरुषजनेनाभिलष्यमाणः । '**दाइज्जमाणे**' त्ति परस्परमङ्गुलिसहस्रैर्दर्श्यमानः । '**पडिच्छमाणे**'त्ति **प्रतीच्छन्** । **भवनपङ्क्तिसहस्राणि समतिच्छन्** समतिक्रामन् उल्लङ्घयन् । '**तंती**'त्यादि तन्त्र्यादीनां त्रुटितान्तानां प्रागुक्तार्थानां गीते-गीतमध्ये यद्वादितं-वादनं तेन यो रवः-शब्दस्तेन **मधुरेण** श्रोत्रमधुवर्षिणा **मनोहरेण** मनोऽभिरामेण **जयशब्दघोष-मिश्रितेन** जयशब्दोच्चारणमिश्रितेन **मञ्जुमञ्जुना** न ज्ञायते कोऽपि किमपि जल्पतीति अतिकोमलेन **घोषेण च** लोकानां स्वरेण **प्रतिबुध्यमानः** सावधानीभवन्; क्वचित् आपडिपुच्छमाण त्ति पाठस्तत्र आप्रतिपृच्छन् प्रणमतां जनानां सुखादिवार्ताम् । '**सव्विड्ढीए**' इत्यादि **सर्वऋद्ध्या** समस्तच्छत्रादिराजचिह्नरूपया, **सर्वद्युत्या** आभरणादिसम्बन्धिन्या सर्वयुत्या वा उचितेष्टवस्तुघटनलक्षणया, **सर्वबलेन** हस्त्यश्वादिना कटकेन, **सर्ववाहनेन** करभवेगसरयानयुग्यगिल्लिस्यन्दनमानिकासङ्ग्रामिकपारियानिकादिना, **सर्वसमुदयेन** पौरादिमेलकेन, **सर्वादरेण** सर्वौचित्यकृत्यकरणरूपेण, **सर्वविभूत्या** सर्वसम्पदा, **सर्वविभूषया** समस्तशोभया, **सर्वसम्भ्रमेण** प्रमोदकृतौत्सुक्येन, **सर्वसङ्गमेन** सर्वस्वजनमेलापकेन, **सर्वप्रकृतिभिरष्टादशनैगमादि-**नगरवास्तव्यप्रकृतिभिः, **सर्वनाटकै**रित्यादि सुगमम्, सर्वतूर्यशब्दानां मीलने यः सङ्गतो निनादो-महाघोष-स्तेन । अल्पेष्वपि ऋद्ध्यादिषु सर्वशब्दप्रवृत्तिर्दृष्टा इत्यत आह -'**महया इड्ढीए**' इत्यादि प्राग्वत् ।

**[सू.212] उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, अहे सीयं ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, सीयाओ पच्चोरुहित्ता सयमेव आहरणमल्लालंकारं ओमुयइ, आहरणमल्लालंकारं ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमायाय एगे अबीए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ।**

[ज.212] '**सीयं ठावेइ**'त्ति **शिबिकां** कूटाकाराच्छादितजम्पानविशेषं स्थिरीकारयति । '**पच्चोरुहइ**'त्ति **प्रत्यवरोहति** अवतरतीत्यर्थः । सुरविहितसिंहासने उपविशति । **आभरणमाल्यालङ्कारान् अवमुञ्चति** ।

पठ्यते च प्रथमाङ्गे-*पुरत्थाभिमुहे सीहासणे निसीयति, आभरणमल्लालंकारं पडिच्छति, तओ णं समणे भगवं महावीरे दाहिणं दाहिणेणं वामं वामेणं पंचमुट्ठियं लोयं करेति, तओ णं सक्के देविंदे देवराया समणस्स भगवओ महावीरस्स जण्णुवायपडिएवइरामएणं थालेणं केसाइं पडिच्छति, अणुजाणउ मे भगवं तिकट्टु खीरोयसागरं साहरइ, तते णं समणे भगवं महावीरे लोयं करेत्ता सिद्धाणं नमुक्कारं करेइ, सव्वं मे अकरणिज्जं पावं कम्मं तिकट्टु सामाइयचरित्तं पडिवज्जति, देवपरिसं मणुयपरिसं च आलिक्खचित्तभूयमिव ठवेइ । [आचा.2-3-15-766]*

*दिव्वो मणुस्सघोसो तुरियनिनादो य सक्कवयणेणं ।*
*खिप्पामेव निलुक्को जाहे पडिवज्जइ चरित्तं ॥ [आचा.2-3-15-767]*

*पडिवज्जित्तु चरित्तं अहोनिसं सव्वपाणभूयहियं ।*
*साहट्टु रोमपुलया सव्वे देवा निसामेंति ॥ [आचा.2-3-15-768]*

*तओ णं समणस्स भगवतो महावीरस्स सामाइयं खाओवसियं चरित्तं पडिवन्नस्स मणपज्जवनाणे समुप्पन्ने अड्ढाइज्जेहिं दीवेहिं दोहिं समुद्देहिं सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तयाणं वियत्तमाणसाणं मणोगयाइं भावाइं जाणंति, तओ समणे भगवं महावीरे पव्वइए समाणे मित्तनायसयणसंबंधिवग्गं पडिविसज्जेइ[आचा.2-3-15-769]* इति विस्तरः । पूर्वापरसम्बन्धज्ञापनार्थं लिखितोऽयम्, प्रकृत-मुपतन्यते -'**सयमेव**' त्ति **स्वय**मात्मनैव **पञ्चमुष्टिकं लोचं करोति षष्ठेन भक्तेनापानकेन** '**मुंडे भवित्त**' त्ति **मुण्डो भूत्वा** द्रव्यतः शिरःकूर्चलुञ्चनेन भावतः क्रोधाद्यपनयनेन **अगाराद्** गृहान्निःक्रम्येति **अनगारतां** साधुतां **प्रव्रजितो** गतः, विभक्तिपरिणामाद्वानगारतया प्रव्रजितः श्रमणीभूतः '**एगं देवदूसं**'ति **एक**मद्वितीयं **देवदूष्यम्** इन्द्रेण वामस्कन्धेऽर्पितं दिव्यवस्त्रविशेषम्, **एको** रागद्वेषसहायविरहात्, अत एव एकाक्येव न पुनर्यथा ऋषभश्चतुःसहस्र्या राज्ञां मल्लिपार्श्वौ त्रिभिस्त्रिभिः शतैर्वासुपूज्यः षट्शत्या शेषाः सहस्रेणेति ।

**[सू.213] समणे भगवं महावीरे संवच्छरं साहियं मासं जाव चीवरधारी होत्था, तेण परं अचेले पाणिपडिग्गहिए ।**

[ज.213] एकं **संवत्सरं** मासमात्रेणाधिकं **चीवरधारी** वस्त्रधारकश्चाभवत् । '**पाणिपडिग्गहिए**'त्ति **पाणिपतद्ग्रहिकः** पाणिपात्रः तथाविधलब्धिसम्पन्नत्वात् कल्पातीतत्वात् तस्य, स्थविरकल्पिकानां तु साधूनां यतनार्थं यतनया व्याप्रियमाणं पात्राद्युपग्रहणं न तथा संयमबाधाहेतुकम् ।

**[सू.214] समणे भगवं महावीरे साइरेगाइं दुवालस वासाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तं जहा–दिव्वा वा माणुस्सा वा तिरिक्खजोणिया वा अणुलोमा वा पडिलोमा वा ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासेइ ।**

[ज.214] '**वोसट्ठकाए**'त्ति **व्युत्सृष्टकायः** परिकर्मवर्जनात् **त्यक्तदेहः** परीषहादिसहनात् । '**सम्मं सहई**'त्यादि **सम्यक् सहते** भयाभावेन **क्षमते** क्रोधाभावेन **तितिक्षते** दैन्यानवलम्बनेन **अध्यासयति** अविचलितकायतया ।

**[सू.215] तए णं समणे भगवं महावीरे अणगारे जाए इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिए मणसमिए वइसमिए कायसमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते गुत्ते गुत्तिंदिय[1]बंभयारी अकोहे अमाणे अमाए अलोभे संते पसंते उवसंते परिनिव्वुडे अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नगंथे निरुवलेवे, कंसपाई इव मुक्कतोये, संखो इव निरंजणे, जीवो इव अप्पडिहयगई, गगणं पिव निरालंबणे, वायुरिव अप्पडिबद्धे, सारयसलिलं व सुद्धहियए, पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे, कुम्मो इव गुत्तिंदिए, खग्गिविसाणं व एगजाए, विहग इव विप्पमुक्के, भारुंडपक्खी इव अप्पमत्ते, कुंजरो इव सोंडीरे, वसभो इव जायथामे, सीहो इव दुद्धरिसे, मंदरो इव अप्पकंपे, सागरो इव गंभीरे, चंदो इव सोमलेसे, सूरो इव दित्ततेए, जच्चकणगं व जायरूवे, वसुंधरा इव सव्वफासविसहे, सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते ।**

[ज.215] '**इरियासमिए**' इत्यादि ईर्यायां-गमनागमनादौ समितः-सम्यक् प्रवृत्तः । भाषायां-भाषणे समितः सावद्यभाषापरिवर्जनत्वेन । एषणायां-द्विचत्वारिंशद्दोषविशुद्धभिक्षाग्रहणे समितः । आदाने-ग्रहणे उपकरणस्येति गम्यते, भाण्डमात्रवस्त्राद्युपकरणरूपपरिच्छदस्य भाण्डमात्रस्य-वोपकरणस्यैव अथवा भाण्डस्य-वस्त्रादेर्मृन्मयभाजनस्य वा मात्रस्य च-पात्रविशेषस्य निक्षेपणायां-विमोचने यः समितः- सुप्रत्युपेक्षितादिक्रमेण सम्यक् प्रवृत्तः स । तथा उच्चारः-पुरीषं प्रश्रवणं-मूत्रं खेलो-निष्ठीवनं सिङ्घानो-नासिकामलः जल्लः- शरीरमलस्तेषां परिष्ठापना-परित्यागस्तत्र समितः- शुद्धस्थण्डिलाश्रयणात् । एतच्चान्त्यसमितिद्वयं भगवतो भाण्डसिङ्घानाद्यसम्भवेऽपि नामाखण्डितार्थमित्थमुक्तम् । '**मणसमिए**'इत्यादि मनःप्रभृतीनां कुशलानां प्रवर्तक इत्यर्थः, चित्तादीनामशुभानां निषेधको यतः समितिः- सत्प्रवृत्तिर्गुप्तिस्तु निरोध इति । अत एव '**गुत्तो**' **गुप्तः** सर्वथा गुप्तत्वात् । '**गुत्तिंदियबंभयारि**'त्ति गुप्तानीन्द्रियाणि-शब्दादिषु रागद्वेषाभावात् श्रोत्रादीनि बह्मचर्यं- मैथुनविरतिरूपं वसत्यादिनवगुप्तिमच्चरति-आसेवते इत्येवं यः स तथा; क्वचित् 'गुत्तिंदिए' शब्दादिषु रागादिरहितः गुत्तबंभयारि त्ति गुप्तं-वसत्यादिगुप्तिमद् ब्रह्म चरतीत्येवं शीलः स तथा । '**अकोहे**'त्ति चत्वारि पदानि प्रतीतानि, नवरम् **अक्रोध** इति क्रोधोदये सति विफली-करणात् । अत एव '**संते**' त्ति **शान्तोऽन्तर्वृत्त्या प्रशान्तो** बहिर्वृत्त्या **उपशान्त** उभयतः; अथवा मनःप्रभृत्यपेक्षया शान्तादीनि पदानि; अन्ये त्वाहुः-शान्त-उपशमी प्रशान्त-इन्द्रियनोइन्द्रियैरुपशान्तः-क्रोधाद्यकरणेन; अथवा श्रान्तो-भवभ्रमणात् प्रशान्तः-प्रकृष्टचित्तत्वात् उपशान्तो-निवृत्तः पापेभ्यः; प्रशमप्रकर्षाय वैकार्थं पदत्रयमिदम् । अत एव **परिनिर्वृतः** सकलसन्तापवर्जितः । **अनाश्रवो**-ऽविद्यमानपापकर्मबन्धो हिंसादिसप्तदशाश्रवनिवृत्तेः यतः

*पञ्चाश्रवाद्विरमणं पञ्चेन्द्रियनिग्रहः कषायजयः ।*
*दण्डत्रयविरतिश्चेति संयमः सप्तदशभेदः ॥ [प्र.र.172]*

**अमम** आभिष्वङ्गिकममेतिशब्दवर्जितः । **अकिञ्चनो** निर्द्रव्यः । **छिन्नग्रन्थो** मुक्तहिरण्यादिग्रन्थः; क्वचित् छिन्नसोए त्ति पाठस्तत्र छिन्नशोकः छिन्नश्रोता वा छिन्नसंसारप्रवाह इत्यर्थः । **निरुपलेपो** द्रव्यभावमलरहितः,

1 '°दिए गुत्तबं°' इति Kh- मुद्रिते ।

तत्र द्रव्यतो निर्मलदेहत्वात् भावतो निरुपलेपस्तु मिथ्यादर्शनाविरत्यादिकर्मबन्धहेतुवर्जितत्वात् । अथ निरुपलेपतामेवोपमानैराह-'**कंसपाई इवे**'त्यादि **कांस्यपात्रीव** मुक्तं-त्यक्तं तोयमिव तोयं बन्धहेतुत्वात् स्नेहो येन स तथा । **शङ्ख इव निरञ्जनो**, रञ्जनं रङ्गणं वा रागाद्युपरञ्जनं तस्मान्निर्गतः । क्वचित् आयरिसेव पागडभावे, तत्र आदर्श इव दर्पण इव प्रकटाभिप्रायः, यथा किल आदर्शे प्रतिबिम्बितं वस्तु सर्वं सम्यक्तया प्रतिभासते एवं भगवानपि मायादिरहितः सर्वम् आर्जवेनैव प्रकाशयति, न क्वापि वञ्चने बुद्धिः । **जीव इवाप्रतिहतगतिः** सर्वत्रौचित्येनाऽस्खलितविहारित्वात्संयमे वाऽप्रतिहतवृत्तिः । **गगनमिव निरालम्बनो** देशग्रामकुलनगरादिनिश्रारहितत्वात् । **वायुरिवाप्रतिबद्धः** क्षेत्रादौ प्रतिबन्धाभावेनौचित्येन सततविहारित्वात् *गामे एगराइय[दशा.8-217]*मित्यादिवचनात् । **शारदसलिलमिव शुद्धहृदयः** कालुष्याभावात् । पुष्करं पद्मं तस्य पत्र**मिव निरुपलेपः** पङ्कजलकल्पस्वजनविषयस्नेहरहितत्वात् । **कूर्म इव** कच्छप इव **गुप्तेन्द्रियः**, स हि कदाचित् ग्रीवापादचतुष्टयलक्षणाङ्गपञ्चकेन गुप्तो भवत्येवं भगवानपि इन्द्रियपञ्चकेनेति। खड्गो-गण्डकस्तस्य विषाणं-शृङ्गं तदेकमेव भवति, तद्वदेको जात एकभूतो रागादिसहायवैकल्यात् । **विहग इव विप्रमुक्तो** मुक्तपरिकरत्वादनियतवासाच्च । **भारुण्डपक्षीवाऽप्रमत्तो** निद्राद्यभावात्, भारुण्डपक्षिणोः किलैकं शरीरं पृथक्ग्रीवं त्रिपादं भवति तौ चाऽत्यन्ताप्रमत्ततयैव निर्वाहं लभेते इति तदुपमा । **कुञ्जर इव शौण्डीरः** कर्मशत्रुसैन्यं प्रति शूरः । **वृषभ इव जातस्थामा** स्वीकृतमहाव्रतभारवहनं प्रति जातबलो निर्वाहकत्वात्। **सिंह इव दुर्धर्षः** परीषहादिमृगैरनभिभवनीयः । मेरुरिवानुकूलप्रतिकूलोपसर्गपवनैरविचलितसत्त्वः । **सागर इव गम्भीरो** हर्षशोकादिकारणसम्पर्केऽप्यविकृतचित्तः । **चन्द्र इव सोमलेश्यो**ऽनुतापहेतुमनः-परिणामः । **सूर इव दीप्ततेजा**, द्रव्यतः शरीरदीप्त्या भावतो ज्ञानेनापरेषां क्षोभकत्वाद्वा । **जात्यकनकमिव जातरूपो** जातं-सम्पन्नं रूपं रागादिकुद्रव्यविरहाद् यस्य स तथा, अपगतदोषलक्षणकुद्रव्यत्वेनोत्पन्नस्व-भाव इत्यर्थः । **वसुन्धरेव** पृथ्वीवत् सर्वान् स्पर्शाननुकूलेतरान् शीतोष्णादीन् विषहते यः स तथा । **सुहुतहुताशन इव तेजसा ज्वलन्** सुष्ठु इव हुतं-क्षिप्तं घृतादितर्पितः,स चासौ हुताशनश्च-वह्निस्तद्वत्तेजसा ज्ञानरूपेण तपस्तेजसा ज्वलन् दीप्यमानः । अत्र च 'इमेसिं पयाणं दोन्नि संगहणिगाहाओ' इतिवाक्य-पूर्विके द्वे गाथे क्वचिदादर्शे दृश्येते -

*कंसे संखे जीवे गगणे वाऊ य सारए सलिले ।*
*पुक्खरपत्ते कुम्मे खग्गे विहगे य भारुंडे ॥*

*कुंजरवसहे सीहे नगराया चेव सागरमखोहे ।*
*चंदे सूरे कणगे वसुंधरा चेव हूयवहे ॥*

अर्थस्तु व्याख्यात एव । अत्र च कानिचित्पदानि सूत्रे व्यत्ययेन दृश्यन्ते तानि तथा व्याख्येयानि ।

**[सू.216] [1]नत्थि णं तस्स भगवंतस्स कत्थइ पडिबंधो भवति । से य पडिबंधे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ । दव्वओ णं सचित्ताचित्तमीसिएसु दव्वेसु । खेत्तओ णं गामे वा**

1 अत्र द्वे संग्रहणीगाथे स्तः Kh- मुद्रिते ।

**नगरे वा अरण्णे वा खित्ते वा खले वा घरे वा अंगणे वा णहे वा । कालओ णं समए वा आवलियाए वा आणापाणुए वा थोवे वा खणे वा लवे वा मुहुत्ते वा अहोरत्ते वा पक्खे वा मासे वा उऊ वा अयणे वा संवच्छरे वा अन्नयरे वा दीहकालसंजोगे वा । भावओ णं कोहे वा माणे वा मायाए वा लोभे वा भये वा हासे वा पेज्जे वा दोसे वा कलहे वा [1]जाव मिच्छादंसणसल्ले वा । तस्स णं भगवंतस्स नो एवं भवइ ।**

[ज.216] '**नत्थि ण**'मित्यादि **नास्त्यय**ं पक्षो यदुत **तस्य भगवतः कुत्रचिदपि प्रतिबन्धो** भवति । **क्षेत्रं** धान्यजन्मभूमिः, **खलं** धान्यमलपवनादिस्थण्डिलं, **नभ** आकाशं, '**घरे वा**' गृहे प्रतीते, '**अंगणं**' गृहाद्बहिर्जनोपवेशनस्थलम् । **समयः** सर्वनिकृष्टतरः कालः उत्पलपत्रशतव्यतिभेदजरत्पट्टशाटिका-पाटनादिदृष्टान्तसाध्यस्तत्र, **आवलिकाया**मसङ्ख्यातसमयसमुदायात्मिकायाम्, '**आणापाणू**' उच्छ्वास-निःश्वासकाले, **स्तोके** सप्तोच्छ्वासमाने, पक्षादयः प्राग्वत्, **क्षणे** बहुतरोच्छ्वासरूपे, **लवे** सप्तस्तोकमाने, **मुहूर्ते** लवसप्तसप्ततिमाने, **अहोरात्रे** त्रिंशन्मुहूर्तमाने, **पक्षे** पञ्चदशाहोरात्रमाने, मासादयः पूर्ववत्, **अन्यतरस्मिन् वा दीर्घकालसंयोगे** युगपूर्वादौ । '**भए**' इहलोकादिभेदात्सप्तविधे '**हासे**' हास्ये हर्षे वा, '**पिज्जे**' अनभिव्यक्त-मायालोभस्वभावेऽभिष्वङ्गमात्रे **प्रेमणि**, **द्वेषे**ऽनभिव्यक्तक्रोधमानस्वरूपेऽप्रीतिमात्रे, अथवा रागः सुखाभिज्ञस्य सुखानुस्मृतिपूर्वः सुखे तत्साधनेऽप्यभिमते विषये गृद्धिस्तस्मिन्, द्वेषे दुःखाभिज्ञस्य दुःखानुस्मृतिपूर्वः दुःखे तत्साधने वाऽप्रीतिस्तस्मिन्, **कलहे**ऽसभ्यवचनराट्यादौ, **याव**त्करणात् अभ्याख्यानादिपदकदम्बकपरिग्रहः, तत्र अभ्याख्यानेऽसद्दोषाविष्करणे, पैशून्ये-प्रच्छन्नमसद्दोषाविष्करणे, परपरिवादे-विप्रकीर्णपरदोषवचने, अरतिरतिः-अरतिमोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगफलारतिः, रतिमोहनीयोदयाच्चित्ताभिरती रतिः, अरतिश्च रतिश्चेति समाहारस्तस्मिन्, मायामृषे मायामोषे वा-वेषान्तरभाषान्तरकरणेन परवञ्चनं माया मायया सह मृषा मायामृषा मायया वा मोषः परेषां मायामोषस्तस्मिन्, **मिथ्यादर्शनशल्ये** मिथ्यात्वं शल्यमिवानेक-दुःखहेतुत्वान्मिथ्यादर्शनशल्यम् । **एव**ममुना प्रकारेण **तस्य भगवतो न भवति** प्रतिबन्ध इति प्रकृतम् ।

**[सू.217] से णं भगवं वासावासवज्जं अट्ठ गिम्हहेमंतिए मासे गामे एगराईए नगरे पंचराईए वासीचंदण-समाणकप्पे समतिणमणिलेट्ठुकंचणे समदुक्खसुहे इहलोगपरलोगअपडिबद्धे जीवियमरणे निरवकंखे संसारपारगामी कम्मसंगनिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिए एवं च णं विहरइ ।**

[ज.217] '**से णं भगव**'मित्यादि **स भगवान्**, **णं** पूर्ववत्, वर्षासु-प्रावृषि वासो-निवासो वर्षावासस्तद्वर्ज-**मष्टौ मासान् ग्रीष्महैमन्तिकान्** ग्रीष्महेमन्तसत्कान् **ग्रामे एकरात्रिकः** एकरात्रौ वासमानतयाऽस्ति यस्य स तथा एवं **नगरे पञ्चरात्रिकः** वासीचन्दनयोः प्रतीतयोः अथवा वासीचन्दने इव वासीचन्दने अपकारकोपकारकौ तयोः समानो निर्द्वेषरागत्वात्समः कल्पो-विकल्पः समाचारो वा यस्य स तथा, तथा समानि-तुल्यान्युपेक्षणीयतया तृणादीनि यस्य स तथा, '**समसुहदुक्खे**' त्ति समेऽनभिलष्यमाणतया परिहरणीयतया च सुखदुःखे यस्य स तथा, '**इहलोगे**' त्ति इहलोकपरलोकयोर्विषयेऽप्रतिबद्धोऽगृद्धः,

1 'जाव' इत्यस्य स्थाने 'अब्भक्खाणे वा पेसुन्ने वा परपरिवाए वा अरतिरती वा मायामोसे वा' इत्येवं सम्पूर्ण एव पाठो Kh-मुद्रिते ।

**जीवितमरणयोर्निरवकाङ्क्षः**, संसरणं-संसारस्तस्य पारः-पारगमनं तत्र गन्तुं शीलमस्येति **संसारपारगामी**, कर्माणि-ज्ञानावरणादीनि तेषां सङ्गः-स्वात्मप्रदेशैः सह दृढीभवनं कर्मसङ्गस्तस्य निर्घातनमात्मप्रदेशेभ्यो दूरीकरणं तदर्थ**मभ्युत्थितः** सन्, **एवं** पूर्वोक्तरीत्या **च**शब्दाद्वक्ष्यमाणगुणयुक्ततया वा **विहरत्यास्ते** ।

**[सू.218] तस्स णं भगवंतस्स अणुत्तरेणं नाणेणं अणुत्तरेणं दंसणेणं अणुत्तरेणं चरित्तेणं अणुत्तरेणं आलएणं अणुत्तरेणं विहारेणं अणुत्तरेणं वीरिएणं अणुत्तरेणं अज्जवेणं अणुत्तरेणं मद्दवेणं अणुत्तरेणं लाघवेणं अणुत्तराए खंतीए अणुत्तराए मुत्तीए[1] अणुत्तराए तुट्ठीए अणुत्तरेणं सच्चसंजमतवसुचरियसोव-[2]चियफलपरिनिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स दुवालस [3]वासाइं विइक्कंताइं । तेरसमस्स संवच्छरस्स अंतरा वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं दोच्चे मासे चउत्थे पक्खे वइसाहसुद्धे तस्स णं वइसाहसुद्धस्स दसमीए पक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए पोरिसीए अभिनिवट्टाए पमाणपत्ताए सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं जंभियगामस्स नगरस्स बहिया उजुवालियाए नईए तीरे वियावत्तस्स चेईयस्स अदूरसामंते सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणंसि सालपायवस्स अहे गोदोहियाए उक्कुडुयनिसिज्जाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ।**

[ज.218] '**तस्स ण**'मित्यादि **तस्य भगवतः** ज्ञानं-मत्यादिचतुष्टयं तेन, दर्शनं-चक्षुर्दर्शनादि सम्यक्त्वं वा तेन, **चारित्रेण** महाव्रतादिना,**आलयेन** स्त्र्याद्यसंसक्तवसत्यादिना, **विहारेण** देशादिषु चङ्क्रमणेन, **वीर्येण** विशिष्टोत्साहेन, **आर्जवेन** मायानिग्रहेण, **मार्दवेन** माननिग्रहेण, **लाघवेन** क्रियासु दक्षत्वेन अथवा लाघवं द्रव्यतोऽल्पोपधित्वं भावतो गौरवत्रयत्यागस्तेन, **क्षान्त्या** क्रोधनिग्रहेण, **मुक्त्या** निर्लोभतया, क्वचित् गुत्तीए इत्यपि पाठस्तत्र गुप्त्या मनोगुप्त्यादिकया, **तुष्ट्या** मनःप्रह्लत्त्या, **सत्यसंयमतपःसुचरितसोपचित-फलनिर्वाणमार्गेण** सत्यं-सूनृतं संयमः-प्राणिदयादिभेदात्सप्तदशविधः तपो-द्वादशभेदं तेषां सुष्ठु-विधिवच्चरित-माचरणं सत्यसंयमतपःसुचरितम् उपचयन-मुपचितं सहोपचयेन वर्तते इति सोपचितं सत्यसंयमतपःसुचरितेन सोपचितं-स्फीतं फलं-मुक्तिलक्षणं यस्य स तथा स चासौ निर्वाणमार्गश्च-रत्नत्रयलक्षणस्तेनाऽऽ**त्मानं भावयतो** वासयतः अनेनाऽऽत्मज्ञानमेव मोक्षस्य प्रधानं साधनमित्युक्तम्, **द्वादश वर्षाण्यतिक्रान्तानि** त्रयोदशे संवत्सरे '**अंतरा वट्टमाणस्स**'त्ति मध्ये पक्षाधिकषण्मासलक्षणे वर्तमाने इत्यर्थः । '**वेयावत्तस्स चेइयस्स**' त्ति व्यावृत्तचैत्यत्वाद्व्यावृत्तं तस्य **व्यावृत्तस्या**तिजीर्णदेवतायतन-युक्तोद्यानस्येत्यर्थः, विजयावर्तं वा नाम चैत्यं तस्य '**अदूरसामन्ते**' **अदूरासन्ने** सालवृक्षस्याऽधो **गोदुहिकया** आसननीत्या **उत्कुटुकया निषिद्यया आतापनायाम् आतापयतः** अदूरासन्ने उचितदेशे इत्यर्थः '**गाहावइस्स**'त्ति **गृहपतेः** कौटुम्बिकस्य '**कट्ठकरणंसि**' क्षेत्रे धान्योत्पत्तिस्थाने '**झाणंतरियाए**'त्ति शुक्लध्यानं

1 अत्र 'अणुत्तराए गुत्तीए' इत्यधिकः पाठः Kh- मुद्रिते ।

2 '°वचइय°' इति मुद्रिते ।

3 'वासाइं' इत्यस्य स्थाने 'संवच्छराइं' इति पाठः Kh- मुद्रिते ।

चतुर्धा पृथक्त्ववितर्कसविचारम्1 एकत्ववितर्कमविचारं2 सूक्ष्मक्रियमप्रतिपाति3 उत्सन्नक्रियमनिवर्ति4 तेषामाद्यभेदद्वये ध्यातेऽग्रेतनभेदद्वयमप्रतिपन्नस्य केवलज्ञानमुत्पन्नमित्यर्थः । '**अणंते**' इत्यादि पूर्ववत् ।

**[सू.219] तए णं से भगवं अरहा जाए जिणे केवली सव्वन्नू सव्वदरिसी सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स परियायं जाणइ पासइ, सव्वलोए सव्वजीवाणं आगइं गइं ठिइं चवणं उववायं तक्कं मणो माणसियं भुत्तं कडं पडिसेवियं आविकम्मं रहोकम्मं अरहा अरहस्सभागी तं तं कालं मणवयणकायजोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ ।**

[ज.219] '**तए ण**'मित्यादि **अर्हन्नशोकादिमहापूजार्हत्वात्** क्वचित् अरिहा इति पाठस्तत्र अरीन् रागादीन् हन्तीत्यरिहा अविद्यमानं वा रह-एकान्तं प्रच्छन्नं सर्वज्ञत्वाद्यस्य सोऽरहा, '**जाए**' **जातः** सम्पन्नः क्वचिज्जाण इति दृश्यते तत्र ज्ञायको ज्ञाता रागादिभावसम्बन्धिनां स्वरूपकारणफलानामिति, **जिनो** रागादिजेता, केवलानि-सम्पूर्णानि शुद्धानि अनन्तानि वा ज्ञानादीनि यस्य सन्ति स **केवली**, अत एव **सर्वज्ञः** एकस्मिन् समये विशेषावबोधवान्, **सर्वदर्शी** द्वितीयसमये सामान्यबोधवान्, **सदेवमनुजासुरस्य लोकस्य पर्यायं** जातावेकवचनं पर्यायानुत्पादव्ययलक्षणान् **जानाति** ज्ञानेन **पश्यति** केवलदर्शनेन, न च पर्यायानित्युक्ते द्रव्यं न जानातीति शङ्कनीयम् उत्पादव्यययोर्निराधारयोरनुपपत्तेस्तयोर्ज्ञातयोरविष्वग्भावेन वर्ति अन्वयिद्रव्यमपि ज्ञातमेव स्यात्, तथा चाहुः-

*द्रव्यं पर्यायवियुतं पर्याया द्रव्यवर्जिताः ।*
*क्व कदा केन किंरूपा दृष्टा मानेन केन वा ॥*

आर्षेऽप्युक्तम् -

*जं जं जे जे भावे परिणमइ पओगवीससा दव्वं ।*
*तं तहा जाणाइ जिणो अपज्जवे जाणणा पत्थि ॥ [आ.नि.795]*

अत एवाह-'**सव्वलोए**'इत्यादि **सर्वलोके** सर्वलोकवर्तिनां **सर्वजीवाना**मेकेन्द्रियादीना**मागतिं गतिं स्थितिं च्यवनमुपपातं तत्कं मनो मानसिकं भुक्तं कृतं परिषेवितं** प्रतिसेवितं वा **आविःकर्म रहःकर्म** जानाति पश्यति चेति डमरुकमणिन्यायेनात्रापि सम्बध्यते, तत्राऽऽगति-र्यतः स्थानादागच्छन्ति विवक्षितं स्थानं जीवाः गति-र्यत्र मृत्वोत्पद्यन्ते स्थितिः - कायस्थितिर्भवस्थितिश्च संसारे वाऽवस्थानरूपा स्थितिस्तामपि भगवान् जानाति तथा- ज्ञाननैर्मल्यात् च्यवनं-देवलोकाद्देवानां मनुष्यतिर्यक्ष्ववतरणम् उपपादं - देवनारकाणां जन्मस्थानं तत्कं मनस्तेषां जीवानामिदं तत्कं-तदीयं मनश्चित्तं मानसिकं-चित्तगतं चिन्तारूपापन्नपुद्गलजातम्, यद्यपि मनोमनोगतयोर्नास्ति वास्तवो भेदः तथापि व्यवहारनयानुसरणादस्त्येव भेदः, तथा च वक्तारो भवन्ति 'ममेदं मनसि वर्तत' इति, भुक्तमशनपुष्पादि कृतं-चौर्यादि प्रतिसेवितं परिवेषितं वा-मैथुनादि आविःकर्म-प्रकटकृतं रहःकर्म-प्रच्छन्नकृतम् । '**अरहा**'इति पूर्ववत् **अरहस्यभागी** न रहस्यभागी न रहस्यमेकान्तं भजते जघन्यतोऽपि देवकोटिसेव्यत्वात् '**तं तं काल**'मिति **तत्र तत्र काले मनोवचनकाययोगेन वर्तमानानां सर्वलोके सर्वजीवानां सर्वभावान् जानन् पश्यंश्च विहरती**त्यन्वयः । अमी हि जीवाः कदाचिन्मनोयोग

एव वर्तन्ते कदाचिद्वागयोगे कदाचित्काययोगे अथवा सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियास्त्रिष्वपि वर्तन्ते असञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रिय-चतुस्त्रिद्वीन्द्रिया वाक्काययोगयोः एकेन्द्रियास्तु काययोग एव । सर्वभावानतीतानागतगुणपर्यायान् तत्र सहभाविनो गुणा ज्ञानादयः क्रमभाविनः पर्यायाः हर्षादयः । एतावता च ग्रन्थेन अजीवपरिज्ञानं क्वापि नोक्तम्, अतस्तत्सङ्ग्रहार्थम् अकारप्रश्लेषात्सर्व-अजीवानां धर्मास्तिकायादीनां पुद्गलास्तिकायपर्यन्तानां सर्वभावान् सर्वविवर्तान् जानातीति व्याख्येयम् ।

अत्रावसरे प्रथमाङ्गे एवं पठ्यते -*जण्णं समणस्स भगवतो महावीरस्स निव्वाघाए निरावरणे जाव समुप्पन्ने तण्णं दिवसं भवणवइवाणमंतरजोइसियविमाणवासिदेवेहि य देवीहि य ओवयंतेहिं जाव उप्पिंजलगभूए यावि होत्था [आचा. 2-3-15-774] । तए णं समणे भगवं महावीरे उप्पण्णवरनाणदंसणधरे अप्पाणं च लोगं च अभिसमक्खपुव्वं देवाणं धम्ममाइक्खइ ततो पच्छा माणुसाणं [आचा. 2-3-15-775] । तओ णं समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाणदंसणधरे गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं पंच महव्वयाइं सभावणाइं छज्जीवनिकायाइं भासई परुवेई[आचा. 2-3-15-776]* इति । अत एवाऽऽश्चर्यावसरे *अभाविया परिसा [स्था.सू.777गा.175]* इति प्रतिपादितम् । कृतं प्रसङ्गेन, प्रस्तुतमनुस्रियते ।

**[सू.220] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे अट्ठियगामं नीसाए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए । चंपं च पिट्ठिचंपं च निस्साए तओ अंतरावासे वासावासं उवागए । वेसालिं नगरिं वाणियगामं च निस्साए दुवालस अंतरावासे वासावासं उवागए । रायगिहं नगरं नालंदं च बाहरियं निस्साए चोद्दस अंतरावासे वासावासं उवागए । छ म्मिहिलाए दो भद्दियाए एगं आलंभियाए एगं सावत्थीए एगं पणीयभूमीए एगं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रन्नो रज्जुगसहाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए ।**

[ज.220] साम्प्रतं भगवतो दीक्षापर्यायं विवक्षुश्चतुर्मासकप्रमाणं निरूपयन्नाह -'**तेणं कालेणं**' इत्यादि अस्थिकग्रामो यत्र धनदेवसार्थवाहवृषभः क्षुत्पिपासाद्यधिसहनेन शूलपाणियक्षतामापन्नः स्वमारितनृणामस्थीनि राशीकार्य तदुपरि चैत्यं जनैः कारितवान् । पूर्वं हि स ग्रामो वर्धमानो नाम्ना इति रूढोऽभूत् । तस्यास्थिकग्रामस्य **निश्रया प्रथममन्तरावासं** वर्षारात्रं '**वासावासं**'ति वर्षासु वसन**मुपागतः** । अन्तरावास इति वर्षारात्रस्याऽऽख्या, उक्तं च -*अंतरघणसामलो भयवं* ति वर्षारात्रघनश्याम इत्यर्थः, अथवा अन्तरावासम् अन्तरः-सान्तर आवास-आवसनम् अन्तरावास इति वर्षान्तरम्, एकत्रैवानन्तरितचतुर्मासकद्वयस्य करणाभावात् । एवमेवाग्रेऽपि भावना कार्या, अन्यथा चतुर्दश-चतुर्मासकानामेकत्रावस्थितेः स्वीकारः, न चैवम्, तस्य भगवतोऽप्रतिबद्धविहारिताया उक्तत्वात् जघन्यकल्पज्येष्ठकल्पयोस्तेनैवाऽऽचरितत्वात् इति तु प्रसिद्धमेवेति न प्रतन्यते । ततश्च**म्पां पृष्टिचम्पां** च **निश्रायाऽ**वलम्ब्य **त्रयो** वर्षारात्राः । एवं **वैशालीं वाणिज्यग्रामं च निश्राय द्वादश, राजगृहं नालन्दं च निश्राय चतुर्दश**, नालन्दा राजगृहबाहिरिका राजगृहादुत्तरस्यां शाखापुरविशेषः । **षण्मिथिलायां,**

**द्वौ भद्रिकापुर्याम्, एकश्चाऽऽलम्भिकायाम्, एकः श्रावस्त्याम्, एकः प्रणितभूमौ** वज्रभूम्याख्येऽनार्यदेशे इत्यर्थः, **एकश्चापश्चिमो** वर्षारात्रो **मध्यमपापायां हस्तिपालस्य राज्ञो रज्जुकसभायाम्** । अपश्चिमशब्दः पर्यन्तवाची मङ्गलार्थं चापश्चिम इत्युक्तम् । रज्जुका-लेखकास्तेषां सभा अपरिभुज्यमाना करणशाला तत्र, जीर्णशुल्कशालायामित्यर्थः । प्राक्किल तस्या नगर्या अपापेति नामासीत्, देवैस्तु पापेत्युक्तं येन तत्र भगवान् कालगत इति छद्मस्थकाले जिनकाले च सर्वसङ्ख्यया द्विचत्वारिंशद्वर्षारात्राः ।

**[सू.221] तत्थ णं जे से पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रन्नो रज्जुगसभाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए, तस्स णं अंतरावासस्स जे से वासाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे कत्तियबहुले तस्स णं कत्तियबहुलस्स पन्नरसीपक्खेणं जा सा चरिमा रयणी तं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए विइक्कंते समुज्जाए छिन्नजाइजरामरणबंधणे सिद्धे बुद्धे मुत्ते अंतगडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खपहीणे चंदे नामं से दोच्चे संवच्छरे पीतिवद्धणे मासे नंदिवद्धणे पक्खे अग्गिवेसे[1] नामं से दिवसे उवसमि त्ति पवुच्चइ देवाणंदा नामं सा रयणी निरइ त्ति पवुच्चइ अच्चे लवे [2]सुत्ते पाणू थोवे सिद्धे नागे करणे सव्वट्ठसिद्धे मुहुत्ते साइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

[ज.221] '**तत्थ ण**'मित्यादि '**जे से**' त्ति यस्मिन्नन्तरावासे वर्षारात्रे । '**पक्खे णं**'ति **दिवसे चरमा रजनी** दिनापेक्षया पश्चाद्भाविनी रात्रिः अथवा चरमा रजनी पक्षान्तर्वर्तिनी रात्रिरमावास्या रात्रिरित्यर्थः अथवा चरमा रजनी रात्रेश्चरमभागः अमावास्यारात्रेः पर्यन्तकालस्तत्र **कालगतः** कायस्थितिभवस्थित्योः कालाद्गतः, **व्यतिक्रान्तः** संसारात्, **समुद्यातः** सम्यगुद्यातो न सुगतादिवत्, ते हि स्वदर्शनादिनिकारा-त्पुनर्भवेऽवतरन्ति

*ज्ञानिनो धर्मतीर्थस्य कर्तारः परमं पदम् ।*
*गत्वाऽऽगच्छन्ति भूयोऽपि भवं तीर्थनिकारत ॥* इति वचनात् ।

'**छिन्नजाती**'त्यादि छिन्नं जात्यादीनां बन्धनं-हेतुभूतं कर्म येन स तथा, **सिद्धः** साधितार्थः, **बुद्धो-**ऽवगतसकललोकालोकस्वरूपः, **मुक्तो** भवोपग्राहिकर्मांशेभ्यः, **अन्तकृत्** सर्वदुःखानाम्, **परिनिर्वृतः** कर्मकृतसकलसन्तापविरहात्, किमुक्तं भवति ? इत्याह -**सर्वदुःखप्रहीणः** सर्वाणि दुःखानि-शारीर-मानसानि च प्रहीणानि यस्य स तथा । '**चंदे नामं से**' इत्यादि युगे हि संवत्सरपञ्चकं भवति । तत्र तृतीयपञ्चमावभिवर्द्धिताख्यौ शेषास्त्रयश्चन्द्राख्याः । स च **द्वितीयश्चन्द्रसंवत्सरस्तस्य** प्रमाणम् अहोरात्राणां त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि भवन्ति द्वादश च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य $354\frac{12}{62}$ । **प्रीतिवर्धनो मासः** कार्तिकस्य हि प्रीतिवर्धन इति सञ्ज्ञा सूर्यप्रज्ञप्तौ, **नन्दिवर्धनः पक्षः**, '**अग्गिवेस**'त्ति तस्य दिनस्य नाम, क्वचित् सुव्वयग्गी इति नाम दृश्यते । '**उवसमेत्ति**' इतिशब्दो वाक्यालङ्कारे, उपशम इत्यपि तस्य नामेत्यर्थः । **देवानन्दा नाम सा** अमावास्या **रजनी निरतिरित्युच्यते** । यस्मिन् लवे भगवान् सिद्धिं गतः स लवोऽर्चाख्यः । एवं स च प्राणापानः **सुप्तो** नाम, क्वचिन्मुक्तो नाम, क्वचिन्मुहूर्तो नाम । स

1 'अग्गिवेसे' इत्यस्य स्थाने 'सुव्वयग्गी' इति पाठो मुद्रिते ।

2 'सुत्ते' इत्यस्य स्थाने 'मुहुत्ते' इति पाठः Kh- मुद्रिते ।

च स्तोकः सिद्धो नाम । तच्च करणमेकादशकरणान्तर्वर्ति शकुन्यादिस्थिरकरणचतुष्टयमध्ये तृतीयं नागं नाम, अमावास्याया उत्तरार्धे हि तद्भवति । एवं स मुहूर्तः सर्वार्थसिद्धो नाम ।

**[सू.222] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे सा णं रयणी बहूहिं देवेहि य देवीहि य ओवयमाणेहि य उप्पयमाणेहि य उज्जोविया यावि होत्था ।**

**[सू.223] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे सा णं रयणी बहूहिं देवेहिं य देवीहि य ओवयमाणेहि य उपयमाणेहि य उप्पिंजलगमाणभूया कहकहगभूया या वि होत्था ।**

[ज.222-223] '**बहूहिं देवेहि य देवीहि य उप्पयमाणेहिं ओवयमाणेहिं**' इति सूचनात् सूत्रस्य सेन्द्रारि-देवगणैर्निर्वाणमहश्चक्रे सक्थीनि च जगृहीते धर्मजिनभक्तिरागादिवाक्यपर्यन्तं द्रष्टव्यम् ।

**[सू.224] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं जेट्ठस्स गोयमस्स इंदभूइस्स अणगारस्स अंतेवासिस्स नायए पेज्जबंधणे वोच्छिन्ने अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ।**

[ज.224] '**तं रयणिं च णं जिट्ठस्स**' इत्यादि **ज्येष्ठस्यान्तेवासिन** इति योज्यम्, **गौतमस्य** गोत्रेण **इन्द्रभूतेर्**नाम्ना '**नायए**' त्ति **ज्ञातजे** श्रीमहावीरविषये '**पिज्जबंधणे**'त्ति स्नेहबन्धने **व्यवच्छिन्ने** त्रुटिते केवलमुत्पन्नम् । भगवतैव केवलज्ञानोत्पत्तिविषयिकसंशयिनं गौतमं प्रत्युक्तं *वुच्छिंदि सिणेहम-प्पणो[उत्त.10-27]* इत्यादिवचनात् ।

**[सू.225] जं रयणिं च णं समणे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं नव मल्लई नव लिच्छई कासीकोसलगा अट्ठारस वि गणरायाणो अमावसाए पाराभोयं पोसहोववासं पट्ठविंसु, गते से भावुज्जोए दव्वुज्जोअं करिस्सामो ।**

[ज.225] '**नव मल्लई**' इत्यादि काशिदेशस्य राजानो मल्लकिज्ञातीया नव, ते कार्यवशाद्गणमेलकं कुर्वन्तीति **गणराजानोऽष्टादश** ये चेटकमहाराजस्य भगवन्मातुलस्य सामन्ताः श्रूयन्ते । तस्या**ममावास्यायां** पारं-पर्यन्तं भवस्य आभोगयति-पश्यति यः स पाराभोगः संसारसागरपारप्रापणस्तम् अथवा पारं-पर्यन्तं यावत् आभोगो-विस्तारो यस्य स पाराभोगः अष्टप्राहरिकः प्रभातकालं यावत् सम्पूर्ण इत्यर्थः, पूर्णो हि पौषधः समयभाषयाऽष्टप्राहरिक एव, तं तथाविधं **पौषधोपवासम्** इति पौषधे-नियमविशेषे उपवसनम्-अवस्थानं पौषधोपवासस्तं '**पट्ठविंसु**' त्ति **प्रस्थापितवन्तः** कृतवन्तः । केचिच्च 'बाराभोए' इति पठन्ति, तत्र द्वारमाभोग्यते-अवलोक्यते यैस्ते द्वाराभोगाः-प्रदीपाः तान् कृतवन्तः आहारत्यागेन उपवासरूपं पौषधं चाकार्षुः इति व्याचक्षते । एतत्सम्बन्धानुगतमेव चोत्तरसूत्रम् '**गए से**' इत्यादि । *नाणं भावुज्जोओ[आ.नि.1060]* इति वचनात् ज्ञानज्ञानिनोरभेदाच्च स भावोद्योतरूपो ज्ञानमयो भगवान् गतो निर्वाणम् अतः साम्प्रतं **द्रव्योद्योतं** प्रदीपलक्षणं **करिष्यामः** इति हेतोश्च दीपाः प्रवर्तिताः । ततः प्रभृति दीपोत्सवः सम्प्रवृत्तः । कार्तिकशुक्लप्रतिपदि च श्रीगौतमस्य केवलमहिमा देवैश्चक्रे । अतस्तदपि दिनं जनप्रमोदकारणं चेति ।

**[सू.226] जं रयणिं च णं समणे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं खुद्दाए भासरासी महग्गहे दोवाससहस्सट्ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्मनक्खत्तं संकंते ।**

[ज.226] '**खुद्दाए**'त्ति **क्षुद्रात्मा** क्रूरस्वभावो **भस्मकराशिस्त्रिंशत्तमो** ग्रहो **द्विवर्षसहस्रस्थितिरे**कराशौ एतावन्तं कालमवस्थानात् **श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य जन्मनक्षत्रं** जन्मराशौ **सङ्क्रान्तः** । अत्र च नक्षत्रशब्देन राशिरेव ।

**[सू.227] जप्पभिइं च णं से खुड्डाए भासरासी महग्गहे दोवाससहस्सट्ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्मनक्खत्तं संकंते तप्पभिइं च णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य नो उदिए उदिए पूयासक्कारे पवत्तति ।**

**[सू.228] जया णं से खुड्डाए जाव जम्मनक्खत्ताओ वीतिक्कंते भविस्सइ तया णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य उदिए उदिए पूयासक्कारे पवत्तिस्सति ।**

[ज.227-228] **उदितः उदितः** स्फीतः स्फीतः पूजा-ऽभ्युत्थानाहारदानादिभिः सत्कारो - वस्त्रादिभिर्न भविष्यति इति तत्कालापेक्षया भविष्यद्वचनं न विरोधभाक् । **यदा** च **स** क्रूरो भस्मराशिर्महाग्रहो भगवज्जन्मराशे**र्व्यतिक्रान्तो** गतो **भविष्यति तदा** तथा **भविष्यति** ।

**[सू.229] जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं कुंथू अणुद्धरी नामं समुप्पन्ना, जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य नो चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जा अठिया चलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जं पासित्ता बहूहिं निग्गंथेहिं निग्गंथीहि य भत्ताइं पच्चक्खायाइं ।**

**[सू.230] से किमाहु भंते!? अज्जप्पभिइं दुराराहए संजमे भविस्सइ ।**

[ज.229-230] '**तं रयणिं च ण**'मित्यादि **तस्यां रात्रौ** कु-भूमिस्तस्यां तिष्ठतीति **कुन्थुः** प्राणिजातिः, न उद्धर्तुं शक्यत **इत्यनुद्धरी** अणुं सूक्ष्मदेहं धरतीत्यनुद्धरीति चूर्णिः । **स्थिता** इत्यस्य व्याख्यानम् **अचलमाने**ति । '**छउमत्थाणं**'ति छद्मनि तिष्ठन्तीति छद्मस्थाश्चर्मचक्षुर्दर्शिन इत्यर्थः । **चक्षुःस्पर्शं** दृष्टिपथं '**हव्वं**' **शीघ्रं नागच्छन्ति** । **यां दृष्ट्वा बहुभि**र्बहुसङ्ख्याकैर्न सर्वैरिति हृदयम्, श्रमणैः श्रमणीभिश्च **भक्तानि प्रत्याख्यातानि** अनशनं कृतमित्यर्थः । '**किमाहु**'त्ति **किमाहुर्भदन्ताः** गुरवः, किं कारणमनुद्धर्या उत्पत्तौ भक्तप्रत्याख्याने वा ब्रुवते पूज्यपादाः इति शिष्येण पृष्टे गुरुराह -**अद्यप्रभृति दुराराधः** आराधयतां दुष्करः **संयमो भविष्यती**ति जीवव्याकुलितत्वात् पृथिव्याः संयमप्रायोग्यक्षेत्राभावात् पाखण्डिसङ्कराच्च जीवयतनाया एव संयमं प्रति कारणत्वात् ।

**[सू.231] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स इंदभूइपामोक्खाओ चोद्दस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया होत्था ।**

**[सू.232] समणस्स भगवओ महावीरस्स अज्जचंदणापामोक्खाओ छत्तीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया होत्था ।**

**[सू.233] समणस्स भगवओ महावीरस्स संखसयगपामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सयसाहस्सी अउणट्ठिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासयाणं संपया होत्था ।**

**[सू.234] समणस्स भगवओ महावीरस्स सुलसारेवईपामोक्खाणं समणोवासियाणं तिण्णि सयसाह-स्सीओ अट्ठारस य सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था ।**

[ज.231-234] साम्प्रतं भगवतः सर्वसङ्घचया विशिष्टपरिवारं विवक्षुरिदमाह - '**तेणं कालेणं तेणं समएण**'मित्यादि '**साहस्सीओ**'त्ति आर्षत्वात् स्त्रीत्वम् । आर्या चन्दना चन्दनबाला इति नाम्नी । शङ्खो भगवत्यां द्वादशशते साधर्मिकवात्सल्यानुमतिसंयच्छकः प्रतीतः । शतकस्तु पुष्कलीनाम्ना प्रतीतः । सुलसा नागभार्या द्वात्रिंशत्पुत्रजननी । रेवती मङ्खलीपुत्रमुक्ततेजोऽर्चिजातरक्तातिसारस्य भगवतस्तथावि-धौषधदानेनाऽऽरोग्यकर्त्री ।

**[सू.235] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स तिन्नि सया चोद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खरसन्निवाईणं जिणो विव अवितहं वागरमाणाणं उक्कोसिया चोद्दसपुव्वीणं संपया होत्था ।**

**[सू.236] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स तेरस सया ओहिनाणीणं अतिसेसपत्ताणं उक्कोसिया ओहिनाणीणं संपया होत्था ।**

**[सू.237] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त सया केवलनाणीणं संभिन्नवरनाणदंसणधराणं उक्कोसिया केवलनाणिसंपया होत्था ।**

[ज.235-237] '**चउद्दसपुव्वीणं**' ति **चतुर्दशपूर्विणाम्** '**अजिणाणं**'ति असर्वज्ञानां सतां सर्वज्ञ-तुल्यानाम्, सर्वेऽक्षरसन्निपाता-वर्णसंयोगा ज्ञेयतया विद्यन्ते तेषाम्, '**जिणो इव**'त्ति **जिन इवावितथं** सद्भूतार्थं **व्याकुर्वाणानां** केवलिश्रुतकेवलिनोस्तथाविधोपयोगवतोः प्रज्ञापनायां तुल्यत्वात्, तथा चोक्तम् *-नाणी वयंति अदुवावि एगे एगे वयंति अदुवावि नाणी [आचा.1-4-2-135]* इति वचनात्, उपयोगासम्भवे तु छद्मस्थत्वात् कदाचित् संशयोत्पत्तेस्तेषामपि समये श्रवणात् ।

'**अइसेसपत्ताणं**'ति अतिशेषा-अतिशया आमर्षौषध्यादयस्तान् प्राप्तानाम् उत्कृष्टावधिज्ञानिनां सम्पदासीत् ।

'**केवलनाणीणं**'ति **केवलज्ञानिनां** सम्भिन्ने सिद्धसेनदिवाकरमते अन्योन्यमिलिते-एकसमयभाविनी वरे-श्रेष्ठे ज्ञानदर्शने धारयन्ति इति तु विरुद्धम्, अत एवावधृतसिद्धान्तहृदयजिनभद्रगणिक्षमा-श्रमणाभिप्रायेण तु सम्-सम्यग् भिन्ने-पृथक्समयभाविनी ज्ञानदर्शने इति व्याख्येयम्, तथा चाऽऽगमः *-जं समयं नाणं नत्थि तं समयं दंसणं, जं समयं दंसणं नत्थि तं समयं नाणं* इति, अथवा सम्भिन्ने-सम्पूर्णे ।

**[सू.238] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त सया वेउव्वीणं अदेवाणं देविड्ढिपत्ताणं उक्कोसिया वेउव्विसंपया होत्था ।**

[ज.238] वैक्रियलब्धिमताम् **अदेवानां** देवर्द्धिप्राप्तानां देववत् विकुर्वणासमर्थानाम् **उत्कर्षिका** उत्कृष्टा वैक्रियलब्धिमतां सम्पदभूत् ।

**[सू.239] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पंचसया विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवेसु दोसु य समुद्देसु सण्णीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं जीवाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं उक्कोसिया विउलमईसंपया होत्था ।**

[ज.239] '**विउलमईणं**' विपुला-बहुविधविशेषणोपेतमन्यमानवस्तुग्राहित्वेन विस्तीर्णा मतिर्मनःपर्यायज्ञानं येषां ते तथा, तथाहि - घटोऽनेन चिन्तितः, स च द्रव्यतः सौवर्णादिः क्षेत्रतः पाटलिपुत्रकादिः कालतः शारदादिः भावतः कालवर्णादिरित्येवं विपुलमतयो जानन्ति । ऋजुमतयस्तु सामान्यत एव तेषाम् । तथाऽर्द्धतृतीयाङ्गुलन्यूनमनुजक्षेत्रव्यवस्थितानां सञ्ज्ञिनां मनोमात्रग्राहकाः ऋजुमतयः, इतरे पुनः सम्पूर्णे नृलोके इति । मनःपर्यायज्ञाने दर्शनाभावात् '**जाणमाणाण**'मित्येवोक्तं, न पासमाणाणं ति । यच्च श्रीऋषभचरिते क्वचिदुभयमपि दृश्यते, तत्र पश्यतामिव पश्यतां साक्षात्करणादिति व्याख्येयम् ।

**[सू.240] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स चत्तारि सया वाईणं सदेवमणुयासुराए परिसाए वाए अपराजियाणं उक्कोसिया वाइसंपया होत्था ।**

[ज.240] '**वाईणं**'ति परं वीतरागकथया बोधयितुं समर्था अर्थोक्तिभिरिति वादिनस्तेषाम्, उक्तं च -*वीतरागकथावादस्तत्फलं तत्त्वनिर्णय* इति । '**सदेवे**'त्यादि **सदेवमनुजासुरया पर्षदा वादे अपराजितानाम्** ।

**[सू.241] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त अंतेवासिसयाइं सिद्धाइं जाव सव्वदुक्खप्पहीणाइं, चउद्दस अज्जियासयाइं सिद्धाइं ।**

[ज.241] '**सिद्धाइं**'ति मुक्तिपदं प्राप्ता य एव केवलिनः प्रागुद्दिष्टास्त एव सिद्धाः स्वहस्तदीक्षिता भगवत इति, गणधरादिपरिकरस्य तु नेह विवक्षा ।

**[सू.242] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स अट्ठ सया अणुत्तरोववाइयाणं गइकल्लाणाणं ठिइकल्लाणाणं आगमेसिभद्दाणं उक्कोसिया अणुत्तरोववाइयाणं संपया होत्था ।**

[ज.242] '**अणुत्तरोववाइयाणं**'ति न विद्यन्ते उत्तराः-प्रधाना एभ्य इति अनुत्तरास्तेषु उपपात-उत्पत्तिर्येषां तेऽनुत्तरौपपातिनस्तेषाम् । '**गइकल्लाणाणं**'ति गतिर्देवानामपि विशिष्टस्वरूपा कल्याणी येषां ते तथा । तथा स्थितिर्देवायूरूपा कल्याणी उत्कृष्टा येषां ते तथा अथवा स्थितिरित्यवस्थानं सा कल्याणी वीतरागस्थितिकत्वात्तेषाम्, उक्तं चाऽऽगमे -*अणुत्तरोववाइया देवा नो उदिण्णमोहा उवसंतमोहा नो खीणमोहा*, अत एकादशगुणस्थानवर्तिनां तत्रोत्पादात् छद्मस्थवीतरागास्ते इति स्थितिकल्याणास्तेषाम्। अतोऽत्यन्तसुखभाजस्ते यतः

*जं च कामसुहं लोए जं च दिव्वं महासुहं ।*
*वीयरागसुहस्साओ अणंतभागं न अग्घई ॥[बृ.सं.169]*

अत एवाऽऽ**गमिष्यद्भद्राणाम्** आगामिभवे सेत्स्यमानत्वात् । अथवा गतौ प्राणगमनेऽपि स्थितौ-जीवितेऽपि कल्याणं येषां ते तथा । तथा चाहुः -

*तवनियमसुट्ठियाणं कल्लाणं जीवियंपि मरणंपि ।*
*जीवंति जइ गुणा अज्जयंति सुगई उ जंति मया ॥*

अभयकुमारादीनामिव तेषाम् ।

**[सू.243] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स दुविहा अंतकडभूमी होत्था, तं जहा–जुगंतकडभूमी य परियायंतकडभूमी य । जाव तच्चाओ पुरिसजुगाओ जुगंतकडभूमी, चउवासपरियाए अंतमकासी ।**

[ज.243] '**दुविहा अंतगडभूमि**'त्ति अन्तकृतो-भवान्तकृतो निर्वाणयायिनस्तेषां भूमिः-कालोऽ**न्त-कृद्भूमिः** । '**जुगंतकडभूमि**'त्ति इह युगानि-कालमानविशेषास्तानि च क्रमवर्तीनि तत्साधर्म्याद्ये क्रमवर्तिनो गुरुशिष्यप्रशिष्यादिरूपाः पुरुषास्तेऽपि युगानि तैः प्रमितान्तकृद्भूमिः । '**परियायंतगडभूमी य**'त्ति पर्यायस्तीर्थकरस्य केवलित्वकालस्तमाश्रित्यान्तकृद्भूमिर्या सा । तत्र '**जावे**'त्यादि इह पञ्चमी द्वितीयार्थे द्रष्टव्या, ततो **याव**त्तृतीयपुरुष एव युगं, तृतीयं प्रशिष्यं जम्बूस्वामिनं यावदित्यर्थः युगान्तकरभूमी वीरजिनस्याभवत् । वीरजिनादारभ्य तृतीयं पुरुषं यावत्तीर्थे साधवः सिद्धाः श्रीवीरः सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामीति, ततः परं सिद्धिगमनव्यवच्छेदोऽभूदिति हृदयम् । '**चउवासपरियाए**'त्ति चतुर्वर्षपर्याये केवलिपर्यायापेक्षया भगवति जिने सति **अन्तमकार्षीत्** भवान्तमकरोत् तत्तीर्थे साधुसिद्धिर्नारात् कश्चिदपीति, केवलोत्पत्तेश्चतुर्षु वर्षेषु सिद्धिगमनारम्भः, तथा चाहुः -

*वीरस्स सिद्धिगमणाओ तिन्नि पुरिसा जाव सिद्धि त्ति ।*
*एस जुगंतरभूमी तेण परं नत्थि निव्वाणं ॥*

*वीरजिणकेवलाओ चउवरिस न कोइ सिद्धिसंपत्तो ।*
*केवलजुत्तो वि जई पज्जायंतकरभूमी सा ॥*

**[सू.244] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता, साइरेगाइं दुवालस वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता, देसूणाइं तीसं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता, बायालीसं वासाइं सामन्नपरियायं पाउणित्ता, बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता, खीणे वेयणिज्जाउयनामगोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुवीइक्कंताए तिहि वासेहिं अद्धनवमेहि य मासेहिं सेसएहिं पावाए मज्झिमाए हत्थिपालगस्स रन्नो रज्जुगसभाए एगे अबीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं साइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पच्चूसकालसमयंसि संपलियंकनिसन्ने पणपन्नं अज्झयणाइं कल्लाणफलविवागाइं पणपन्नं अज्झयणाइं पावफलविवागाइं छत्तीसं च अपुट्ठवागरणाइं वागरित्ता पधाणं नाम अज्झयणं विभावेमाणे विभावेमाणे कालगए वितिक्कंते समुज्जाए छिन्नजाइजरामरणबंधणे सिद्धे बुद्धे मुत्ते अंतकडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

[ज.244] सम्प्रति सर्वायुःपरिमाणं विवक्षुरिदमाह -'**तेणं कालेण**'मित्यादि सुगमम् । '**छउमत्थपरियागं पाउणित्ता**'इत्यादि **छद्मस्थपर्यायं** छद्मस्थत्वं **प्राप्य** पूरयित्वा इत्यर्थः । '**देसूणाइं**' ति पक्षाधिकषण्मासोनानि, केवलित्वेन पर्यायः केवलिपर्यायस्तम्, श्रामण्यं-चारित्रम् । '**खीणे**'त्ति क्षीणवेदनीयायुर्नामगोत्रः, शेषं व्याख्यातार्थम् । '**एगे अबीए**'त्ति **एकः** कर्मसहायविरहात्, **अद्वितीय** एकाकी न पुनर्यथा ऋषभादयो दशसहस्रादिभिः साधुभिः सहिता मोक्षं जग्मुस्तथेति, प्रत्यूषकाललक्षणो यः समयोऽवसरस्तत्र '**संपलियंकनिसन्ने**'इति सङ्गतः पर्यङ्कः-पद्मासनं तत्र निषण्ण-उपविष्टः । '**पणपण्ण**'मित्यादि **पञ्चपञ्चाशत्कल्याणफलविपाकानी**ति सुखविपाकानि, **पञ्चपञ्चाशत्पापफलविपाकानि** दुःखविपाकानीत्यर्थः, **षट्त्रिंशदपृष्टव्याकरणान्ये**व सन्ति भविनामुपकारार्थं भगवता व्याकृतानीति अपृष्टव्याकरणान्युच्यन्ते तानि च षट्त्रिंशदुत्तराध्ययनानि । पञ्चपञ्चाशत्सु कल्याणफलविपाकाध्ययनेष्वेकं मरुदेवाध्ययनं '**विभावेमाणे**'इति **विभावयन् कालगतः** । शेषं व्याख्यातार्थम् ।

**[सू.245] समणस्स णं भगवओ महावीरस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरकाले गच्छइ । वायणंतरे पुण अयं तेणउए संवच्छरकाले गच्छइ इति दीसइ ।**

[ज.245] '**नववाससयाइं**'ति श्रीवीरनिर्वृतेर्नवसु वर्षशतेष्वशीत्यधिकेषु व्यतीतेष्वियं वाचना पुस्तकेषु न्यस्ता इति यतोऽस्य सूत्रस्य श्रीवर्धमाननिर्वाणानन्तरं सप्तत्यधिकशतेनोत्पन्नेन श्रीभद्रबाहुस्वामिना सूत्रतः नवमपूर्वादुद्धृत्य प्रणीतत्वात् अर्थतस्तु भगवतैवैतत्प्रतिपादितम्, तथैव प्रान्ते वक्ष्यति *तेणं कालेणं तेणं समएण[दशा.10-470]*मित्यादिना । श्रीदेवर्द्धिक्षमाश्रमणैर्हि श्रीवीरनिर्वाणात् नवसु वर्षशतेष्वशीत्युत्तरेषु ग्रन्थान् व्यवच्छिद्यमानान् दृष्ट्वा पुस्तकेषु लिखिता इति पूर्वं गुरुशिष्याणां श्रुताध्ययनाध्यापन-व्यवहारस्तु पुस्तकनिरपेक्ष एवासीत् । केचित्त्विदमाहु-र्यत् स्थविरावली न भद्रबाहुकृता, आगामिकाल-भाविनां कथं विचारचातुरीचञ्चवो नमस्यन्ति ? तत्र आगामिकालभाविनामपि वन्द्यत्वात् भरतमरीचिवदिति, अतः स्थविरावल्यपि श्रीभद्रबाहुस्वामिकृतैवेति नात्र शङ्कावकाशः । **वाचनान्तरे पुनरयम्** उक्तं च तथैव -

*सालिवाहणेण रन्ना संघाएसेण कारिओ भयवं ।*
*पज्जोसवणचउत्थी चाउम्मासं चउद्दसीए ॥*

प्रसङ्गतोऽत्र त्रिनवत्यधिकनवशते पर्युषणोक्ता । तथा च *एवं च कारणेणं कालगायरिएणं चउत्थीए पज्जोसवणं पवत्तिअं, समत्थसंघेण अणुमन्निअं, तव्वसेण पक्खियाईणि वि चउद्दसीए आयरियाणि, अन्नहा आगमुत्ताणि पुण्णिमाए* इत्यादि, ततोऽवसीयते - इदं वाक्यं पुस्तकलेखनविषयमेव न पुनः संवत्सरप्रतिक्रमणविषयं यतः सूत्रे **वायणंतरे पुण नवसयतेणउए संवच्छरे काले गच्छति इति दीसइ**, तत्रेदं दृश्यते केषाञ्चित् पठनावसरे वाचनान्तरं तु एकार्थविवक्षायामेव स्यात् नान्यार्थविवक्षायामिति तु सुबोधं जिनवचनवेदिनाम् । तथा त्रिनवत्यधिकनवशतसंवत्सरः कालो याति इति दृश्यते, तत्र लेखनप्रारम्भस्तु अशीत्यधिकनववर्षशते गते सति, त्रिनवत्यधिकनवशतसंवत्सरे तु परिसमाप्तिर्ग्रन्थलेखनस्येति एकत्र

वाचनायां प्रारम्भविवक्षाऽपरत्र तु समाप्तिविवक्षेति न विरोधो बोधवतां प्रतिस्मरणपूर्वकं लिखतां विच्छिन्नग्रन्थं सम्बन्धेन योजयतां शोधयतां चैतावान् कालातिक्रमो द्रष्टव्यः । अत्रायं प्रवादः - एतस्मिंश्चावसरे पञ्चम्याश्चतुर्थ्यां सङ्घाऽऽग्रहेण श्रीपर्युषणपर्वप्रतिक्रमणं शालिवाहननृपाभ्यर्थनया च कृतमिति श्रूयते । चतुर्णवत्यधिकनवशतसंवत्सरे तु तस्य स्वर्गगमनं जातम् । ततस्तथैव पाश्चात्त्यैरपि विहितमिति, परमिदं कारणिकं नोत्सर्गयायिनां श्रेयस्करमिति भगवदाज्ञया तु पञ्चम्यामेव क्रियमाणत्वपूर्वमासीत् तथैवाधुनापि कार्यं कियत्साधुभिः भगवदाज्ञाया एव सर्वोत्तमत्वात् तथा चाहुः -

*आणाइ जिणिंदाणं न हु बलियतरा उ आयरियआणा ।*
*जिणाणाए परिभवो एवं गव्वो अविणओ य ॥[बृ.भा. 5377 ]*

न चात्राऽऽचार्याज्ञापि वर्तते किन्तु कारणवशादाचरितेति ।

**[सू.246] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए पंचविसाहे होत्था, तं जहा–विसाहाहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते १ विसाहाहिं जाए २ विसाहाहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ३ विसाहाहिं अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ४ विसाहाहिं परिनिव्वुए ५ ।**

**[सू.247] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले तस्स णं चित्तबहुलस्स चउत्थीपक्खेणं पाणयाओ कप्पाओ वीसं सागरोवमट्ठितीयाओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वाणारसीए नयरीए आससेणस्स रन्नो वम्माए देवीए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आहारवक्कंतीए भववक्कंतीए सरीरवक्कंतीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते ।**

[ज.246-247] उक्तं श्रीवीरचरितम् । साम्प्रतं श्रीपार्श्वनाथस्य लेशतः क्रमप्राप्तमभिधीयते - '**तेणं कालेणं तेणं समएण**'मित्यादि । '**पासे अरिह**'त्ति **पार्श्व** इति नाम्ना **अर्हन्** '**पुरिसादाणिय**'त्ति **पुरुषादानीयः** पुरुषाणां प्रधानः पुरुषाणां मध्ये आदानीय-आदेयो ग्राह्यनामा पुरुषादानीय इति वृद्धाः । पुरुषश्चासौ-पुरुषाकारवर्तितया आदानीय-आदेयवाक्यतया पुरुषादानीयः । पुरुषविशेषणं तु पुरुष एव प्रायस्तीर्थकर इति ख्यापनार्थम् इति वादिवेतालः । पुरुषैर्वा आदानीयो ज्ञानादिगुणतया पुरुषादानीयः ।

**[सू.248] पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तिण्णाणोवगए यावि होत्था–चइस्सामि त्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुए मि त्ति जाणइ, तेणं चेव अभिलावेणं सुविणदंसणविहाणेणं सव्वं जाव नियगं गिहं अणुप्पविट्ठा जाव सुहं सुहेणं तं गब्भं परिवहइ ।**

[ज.248] '**जाव नियगं गिहमणुपविट्ठा**' इति अत्र **याव**त्करणात्स्वप्नदर्शनं च भर्तुः कथनं च स्वप्नपाठकमुखात्तत्फलश्रवणं चेत्यादि सर्वं द्रष्टव्यं यावत्स्वगृहमनुप्रविष्टा । '**जाव**'त्ति अत्र **याव**त्करणात् *तं गब्भं नातिसीतेहिं नातिउण्हेहि[दशा.8-190]*मित्यादि पदानि द्रष्टव्यानि । शेषं व्यक्तार्थम् ।

**[सू.249] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से हेमंताणं दोच्चे मासे तच्चे पक्खे पोसबहुले तस्स णं पोसबहुलस्स दसमीपक्खेणं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अरोगा अरोगं पयाया, जम्मणं सव्वं पासाभिलावेण भाणियव्वं जाव तं होउ णं कुमारे पासे नामेणं ।**

[ज.249] '**होउ णं कुमारे पासे**' इति अस्मिन् गर्भस्थे सति शयनस्थिता जननी तमसि सर्पन्तं कृष्णं सर्पं पश्यति स्मेति पार्श्वः ।

**[सू.250] पासे णं अरहा पुरिसादाणीए दक्खे दक्खपइण्णे पडिरूवे अल्लीणे भद्दए विणीए तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता णं पुणरवि लोयंतिएहिं जियकप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं जाव एवं वयासी–जय जय नंदा जय जय भद्दा, भद्दं ते जाव जय जय सद्दं पउंजंति ।**

**[सू.251] पुव्विं पि णं पासस्स अरहओ पुरिसादाणियस्स माणुस्सगाओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरे आहोहियए तं चेव सव्वं जाव दायं दाइयाणं परिभाएत्ता जे से हेमंताणं दोच्चे मासे तच्चे पक्खे पोसबहुले तस्स णं पोसबहुलस्स एक्कारसीदिवसेणं पुव्वण्हकालसमयंसि विसालाए सिबियाए सदेवमणुयासुराए परिसाए तं चेव सव्वं नवरं वाणारसिं नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव आसमपए उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता असोगवर–पायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, सीयाओ पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरण–मल्लालंकारं ओमुयति, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, पंचमुट्ठियं लोयं करित्ता अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमायाय तिहिं पुरिससएहिं सद्धिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ।**

**[सू.252] पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तेसीइं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तं जहा–दिव्वा वा माणुस्सा वा तिरिक्खजोणिया वा, अणुलोमा वा पडिलोमा वा, ते उप्पन्ने सम्मं सहइ तितिक्खइ खमइ अहियासेइ ।**

**[सू.253] तए णं से पासे भगवं अणगारे जाए इरियासमिए जाव अप्पाणं भावेमाणस्स तेसीइं राइंदियाइं विइक्कंताइं चउरासीइमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणे जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले तस्स णं चित्तबहुलस्स चउत्थीपक्खेणं पुव्वण्हकालसमयंसि धायतिपायवस्स अहे छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने जाव जाणमाणे पासमाणे विहरइ ।**

**[सू.254] पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अट्ठ गणा अट्ठ गणहरा होत्था, तं जहा–**

**सुभे य अज्जघोसे य वसिट्ठे बंभयारि य ।**
**सोमे सिरिहरे चेव वीरभद्दे जसे वि य ॥२१॥**

[ज.250-254] '**अट्ठ गणा**' इति **अष्टा**वष्टसङ्ख्याका **गणा** एकवाचनारूपा यतिसमुदाया गणधरास्तन्नायकाः सूरयः । आवश्यके तु दश गणा दश गणधरा इति तदिह स्थानाङ्गे च द्वावल्पायुष्कत्वान्नोक्ताविति समञ्जसं यतः श्रीपार्श्वचरिते दशगणधरचरित्रेषु सप्ताष्टगणधरौ जयविजयाख्यौ श्रावस्तीनृपपुत्रौ स्वप्नविशेषोपलम्भनिश्चितस्वपरिमितायुष्कावेव निष्क्रान्तौ ।

**[सू.255] पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अज्जदिण्णपामोक्खाओ सोलस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया होत्था । पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स पुप्फचूलापामोक्खाओ अट्ठत्तीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपदा होत्था । पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स सुनंदपामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सयसाहस्सी चउसट्ठिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासगसंपया होत्था । पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स सुनंदापामोक्खाणं समणोवासिगाणं तिन्नि सयसाहस्सीओ सत्तावीसं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था । पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अद्धुट्ठसया चोद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खर जाव चोद्दसपुव्वीणं संपया होत्था । पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स चोद्दस सया ओहिनाणीणं, दस सया केवलनाणीणं, एक्कारस सया वेउव्वियाणं, अद्धट्ठमसया विउलमईणं, छ स्सया वाईणं, छ सया रिउमईणं, बारस सया अणुत्तरोववाइयाणं संपया होत्था ।**

[ज.255] ऋजुमतिविपुलमतीनां विशेषः प्रागेवोक्तः ।

**[सू.256] पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स दुविहा अंतकडभूमी होत्था, तं जहा–जुयंतकडभूमी य परियायंतकडभूमी य । जाव चउत्थाओ पुरिसजुगाओ जुयंतकडभूमी, तिवासपरियाए अंतमकासी ।**

[ज.256] युगान्तकरभूमौ श्रीपार्श्वनाथादारभ्य चतुर्थं पुरुषं यावत्सिद्धिगमः प्रवृत्तः, पर्यायान्तकरभूमौ केवलोत्पादात्त्रिषु वर्षेषु सिद्धिगमनारम्भः ।

**[सू.257] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता, तेसीतिं राइंदियाइं छउमत्थपरियायं पाउणित्ता, देसूणाइं सत्तरिं वासाइं केवलिपरियायं पाउणित्ता, बहुपडिपुन्नाइं सत्तरिं वासाइं सामन्नपरियायं पाउणित्ता, एक्कं वाससयं सव्वाउयं पालित्ता खीणे वेयणिज्जाउयनामगोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुवीइक्कंताए जे से वासाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे सावणसुद्धे तस्स णं सावणसुद्धस्स अट्ठमीपक्खेणं उप्पिं सम्मेयसेलसिहरंसि अप्पचोत्तीसइमे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वण्हकालसमयंसि वग्घारियपाणी कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

**[सू.258] पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणियस्स कालगतस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स दुवालस वाससयाइं विइक्कंताइं तेरसमस्स य वाससयस्स अयं तीसइमे संवच्छरकाले गच्छइ ।**

[ज.257-258] '**वग्घारियपाणि**'त्ति कायोत्सर्गस्थितत्वात् प्रलम्बितभुजद्वयः मोक्षगमने पूर्वाह्ण एव कालः । इति श्रीपार्श्वनाथचरितं समाप्तम् । श्रीपार्श्वनाथनिर्वाणादनन्तरं श्रीवीरमुक्तेः पञ्चाशद्वर्षशतद्वयेन जातत्वात् ।

**[सू.259] तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी पंचचित्ते होत्था, तं जहा–चित्ताहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते जाव चित्ताहिं परिनिव्वुए ।**

[ज.259] सम्प्रति क्रमप्राप्तं श्रीनेमिजिनचरितमुच्यते - क्वचित् उवक्खेवो त्ति प्रागुक्तालापकोच्चारणं चित्राभिलापेनेत्यर्थः ।

**[सू.260] तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जे से वासाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे कत्तियबहुले तस्स णं कत्तियबहुलस्स तेरसीपक्खेणं अपराजियाओ महाविमाणाओ [1]तित्तीसं सागरोवमट्ठितीयाओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सोरियपुरे नगरे समुद्दविजयस्स रन्नो भारियाए सिवाए देवीए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव चित्ताहिं गब्भत्ताए वक्कंते, सव्वं तहेव सुमिणदंसणदविणसंहरणाइयं एत्थ भणियव्वं ।**

[ज.260] '**तित्तीसं सागरोवमाइं**'ति **त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि** । '**दविणसंहरणाइं**' पितुर्वेश्मनि निधान-निक्षेपादि ।

**[सू.261] तेणं कालेणं तेणं समएणं अरिहा अरिट्ठनेमी जे से वासाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे सावणसुद्धे तस्स णं सावणसुद्धस्स पंचमीपक्खेणं नवण्हं मासाणं जाव चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमु-वागएणं अरोगा अरोगं पयाया । जम्मणं समुद्दविजयाभिलावेणं नेतव्वं, जाव तं होउ णं कुमारे अरिट्ठनेमी नामेणं ।**

[ज.261] '**अरिट्ठनेमी नामेणं**'ति रिष्टरत्नमयं नेमिं दिव्युत्पतन्तं माता स्वप्नेऽद्राक्षीत् इति रिष्टनेमिः अपश्चिमशब्दवत् नञ्पूर्वत्वे**ऽरिष्टनेमिः** ।

**[सू.262] अरहा अरिट्ठनेमी दक्खे जाव तिन्नि वाससयाइं कुमारे अगारवासमज्झे वसित्ता णं पुणरवि लोयंतिएहिं जीयकप्पिएहिं देवेहिं तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव दायं दाइयाणं परिभाएत्ता जे से वासाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे सावणसुद्धे तस्स णं सावणसुद्धस्स छट्ठीपक्खेणं पुव्वण्हकाल-समयंसि उत्तरकुराए सीयाए सदेवमणुयासुराए परिसाए अणुगम्ममाणमग्गे जाव बारवईए नगरीए मज्झं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव रेवयए उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, सीयं ठावित्ता सीयाए पच्चोरुहइ, सीयाए पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमादाय एगेणं पुरिससहस्सेणं सद्धिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ।**

---

1 '°ओ बत्ती°' इति Kh-मुद्रिते ।

**[सू.263] अरहा णं अरिट्ठनेमी चउप्पन्नं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे तं चेव सव्वं जाव पणपन्नइमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणे जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे अस्सोयबहुले तस्स णं अस्सोयबहुलस्स पन्नरसीपक्खेणं दिवसस्स पच्छिमे भागे उप्पिं उज्जिंतसेलसिहरे वडपायवस्स अहे छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स जाव अणंते अणुत्तरे जाव सव्वलोए सव्वजीवाणं भावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ ।**

**[सू.264] अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अट्ठारस गणा गणहरा होत्था । अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स वरदत्तपामोक्खाओ अट्ठारस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया होत्था । अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अज्जजक्खिणिपामोक्खाओ चत्तालीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया संपया होत्था । अरहओ अरिट्ठनेमिस्स नंदपामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सयसाहस्सी अउणत्तरिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासगसंपया होत्था । अरहओ अरिट्ठनेमिस्स महासुव्वया पामोक्खाणं तिन्नि सयसाहस्सीओ छत्तीसं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था । अरहओ अरिट्ठनेमिस्स चत्तारि सया चोद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खर जाव होत्था । पण्णरस सया ओहिनाणीणं, पन्नरस सया केवलनाणीणं, पन्नरस सया वेउव्वियाणं, दस सया विउलमतीणं, अट्ठ सया वाईणं, सोलस सया अणुत्तरोववाइयाणं, पन्नरस समणसया सिद्धा, तीसं अज्जियासयाइं सिद्धाइं ।**

**[सू.265] अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स दुविहा अंतकडभूमी होत्था, तं जहा–जुगंतकडभूमी य परियायंत–कडभूमी य, जाव अट्ठमाओ पुरिसजुगाओ जुगंतकडभूमी दुवासपरियाए अंतमकासी ।**

**[सू.266] तेणं कालेणं तेणं समएणं अरिहा अरिट्ठनेमिस्स तिन्नि वाससयाइं कुमारवासमज्झे वसित्ता, चउप्पन्नं राइंदियाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता, देसूणाइं सत्त वाससयाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता, पडिपुन्नाइं सत्त वाससयाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता, एगं वाससहस्सं सव्वाउयं पालइत्ता खीणे वेयणिज्जाउयनामगोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुवीइक्कंताए जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढसुद्धे तस्स णं आसाढसुद्धस्स अट्ठमीपक्खेणं उप्पिं उज्जिंतसेलसिहरंसि पंचहिं छत्तीसेहिं अणगारसएहिं सद्धिं मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि नेसज्जिए कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

[ज.262-266] '**कुमारे**'त्ति अपरिणीतः । षष्ठेन तपसा अपानकेन, शेषं श्रीवीरचरितवदवसेयम् ।

**[सू.267] अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स कालगयस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस चउरासीइं वाससहस्साइं विइक्कंताइं, पंचासीइमस्स य वाससहस्सस्स नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ।**

[ज.267] '**चउरासीइं वाससहस्साइं**' ति नेमिनिर्वाणात् त्र्यशीत्या सहस्रैरर्धाष्टमशतैश्च वर्षाणां श्रीपार्श्वस्य सिद्धिगमनात् ततः परमर्धतृतीयशताभ्यां श्रीवीरस्य निर्वृतिरिति ।

[सू.268] नमिस्स णं अरहओ कालगयस्स जाव प्पहीणस्स पंच वाससयसहस्साइं चउरासीइं च वाससहस्साइं नव य वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ।

[सू.269] मुणिसुव्वयस्स णं अरहओ कालगयस्स जाव पहीणस्स एक्कारस वाससयसहस्साइं चउरासीइं च वाससहस्साइं नव य वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे गच्छइ ।

[सू.270] मल्लिस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स पन्नट्ठिं वाससयसहस्साइं चउरासीइं वाससहस्साइं नव य वास सयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ।

[सू.271] अरस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे वासकोडिसहस्से वितिक्कंते, सेसं जहा मल्लिस्स । तं च एयं–पंचसट्ठिं लक्खा चउरासीइसहस्सा विइक्कंता तम्मि समए महावीरो निव्वुओ, ततो परं नव सया विइक्कंता, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे गच्छइ । एवं अग्गओ जाव सेयंसो ताव दट्ठव्वं ।

[सू.272] कुंथुस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे चउभागपलिओवमे विइक्कंते पंचसट्ठिं च सयसहस्सा सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.273] संतिस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे चउभागूणे पलितोवमे विइक्कंते पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.274] धम्मस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स तिन्नि सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.275] अणंतस्स णं जाव प्पहीणस्स सत्त सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.276] विमलस्स णं जाव प्पहीणस्स सोलस सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.277] वासुपुज्जस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स छायालीसं सागरोवमाइं विइक्कंताइं सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.278] सेज्जंसस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवमसए विइक्कंते पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लिस्स ।

[सू.279] सीयलस्स णं जाव प्पहीणस्स एगा सागरोवमकोडी तिवासअड्ढनवमासाहियबायालीसवास–सहस्सेहिं उणिया विइक्कंता, एयम्मि समए वीरे निव्वुए, तओ वि य णं परं नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ।

[सू.280] सुविहिस्स णं अरहओ पुप्फदंतस्स काल जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स दस सागरोवम–कोडीओ विइक्कंताओ, सेसं जहा सीअलस्स, तं च इमं–तिवासअद्धनवमासाहिअबायालीसवास–सहस्सेहिं ऊणिआ विइक्कंता इच्चाइ ।

[सू.281] चंदप्पहस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगं सागरोवमकोडिसयं विइक्कंतं सेसं जहा सीतलस्स, तं च इमं–तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं ऊणिगामिच्चाइ ।

**[सू.282] सुपासस्स णं जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवमकोडीसहस्से विइक्कंते, सेसं जहा सीयलस्स, तं च इमं–तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता इच्चाइ ।**

**[सू.283] पउमप्पभस्स णं जाव प्पहीणस्स दससागरोवमकोडिसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीयलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता इच्चाइयं ।**

**[सू.284] सुमइस्स णं जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवमकोडीसयसहस्से विइक्कंते, सेसं जहा सीयलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं इच्चाइयं ।**

**[सू.285] अभिनंदणस्स णं जाव प्पहीणस्स दस सागरोवमकोडीसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीयलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं इच्चाइयं ।**

**[सू.286] संभवस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स वीसं सागरोवमकोडिसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीयलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसवाससहस्सेहिं इच्चाइयं ।**

**[सू.287] अजियस्स णं जाव प्पहीणस्स पन्नासं सागरोवमकोडिसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीयलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसवाससहस्सेहिं इच्चाइयं ।**

[ज.268-287] अतः परं ग्रन्थगौरवभयान्नम्यादीनां पश्चानुपूर्व्या अजितान्तानामन्तरालकालमेवाऽऽह -'**नमिस्स ण**'मित्यादि सुगमश्चायं सूत्रपाठः तथापि विशिष्टावबोधाय व्यक्तिर्लिख्यते । नमिनिर्वाणान्नेमिनिर्वाणं पञ्चवर्षलक्षैः । मुनिसुव्रतमोक्षान्नमिः षड्भिर्वर्षलक्षैर्मुक्तः । मल्लिमोक्षान्मुनिसुव्रतश्चतुःपञ्चाशद्वर्षलक्षैर्मुक्तः । अरमोक्षाद्वर्षकोटिसहस्रेण मल्लिर्मुक्तः । कुन्थुमोक्षाद्वर्षकोटिसहस्रोनपल्योपमचतुर्थांशेनारो मुक्तः । शान्तिमोक्षात्पल्योपमार्धेन कुन्थुर्मुक्तः । धर्ममोक्षात्पल्योपमचतुर्भागोनैस्त्रिभिः सागरोपमैः शान्तिर्मुक्तः । अनन्तमोक्षाच्चतुर्भिः सागरोपमैः धर्मो मुक्तः । विमलमोक्षान्नवभिः सागरोपमैरनन्तो मुक्तः । वासुपूज्यमोक्षात्त्रिंशत्सागरोपमैर्विमलो मुक्तः । श्रेयांसमोक्षाच्चतुःपञ्चाशत्सागरोपमैर्वासुपूज्यो मुक्तः । शीतलमोक्षात्सागरोपमशतोनया षट्षष्टिलक्षषड्विंशतिसहस्रवर्षोनया च सागरकोट्या श्रेयांसो मुक्तः । सुविधिमोक्षान्नवभिः सागरकोटिभिः शीतलो मुक्तः । चन्द्रप्रभमोक्षान्नवत्या सागरकोटिभिः सुविधिर्मुक्तः । सुपार्श्वमोक्षात्सागरकोटीनां नवशत्या चन्द्रप्रभो मुक्तः । पद्मप्रभमोक्षात् सागरकोटीनां नवतिभिः सहस्रैः सुपार्श्वो मुक्तः । सुमतिमोक्षात्सागरकोटीनां नवत्या सहस्रैः पद्मप्रभो मुक्तः । अभिनन्दनमोक्षात्सागरकोटीनां नवभिर्लक्षैः सुमतिर्मुक्तः । सम्भवमोक्षात्सागरकोटीनां दशभिर्लक्षैरभिनन्दनो मुक्तः । अजितमोक्षात्सागरकोटीनां त्रिंशता लक्षैः सम्भवो मुक्तः । ऋषभमोक्षात्सागरकोटीनां पञ्चाशता लक्षैरजितो मुक्तः । इति श्रीजिनान्तरालानि उक्तानि ।

**[सू.288] तेणं कालेणं तेणं समएणं उसहे णं अरहा कोसलिए चउउत्तरासाढे अभीइपंचमे होत्था, तं जहा–उत्तरासाढाहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते जाव अभीइणा परिनिव्वुए ।**

[ज.288] सम्प्रति श्रीऋषभनाथचरितं व्यावर्ण्यते -'**तेणं कालेणं तेणं समएण**'मित्यादि '**कोसलिय**'त्ति

कोशलाया-मयोध्यायां भवः **कौशलिकः** । '**चउउत्तरासाढे**' त्ति **चतुरुत्तराषाढः** चतुर्णां कल्याणका-नामुत्तराषाढायां सञ्जातत्वात् । अभिजित् पञ्चमः, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यां तु *पंच उत्तरासाढे अभीई छट्ठे होत्था [जं.प्र.सू.85]*इति दृश्यते तत्र पञ्चानां मध्ये राज्यकल्याणकं विवक्षितम्, समाधानप्रकारस्तु अस्माभिरेव जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ प्रतिपादितः, तेन पुनर्नेह प्रपञ्च्यते, तत एवावसेयः ।

**[सू.289] तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे णं अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे आसाढबहुले तस्स णं आसाढबहुलस्स चउत्थीपक्खेणं सव्वट्ठसिद्धाओ महाविमाणाओ तेत्तीससागरोमट्ठितीयाओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इक्खागभूमीए नाभिस्स कुलगरस्स मरुदेवीए भारियाए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि आहारवक्कंतीए जाव गब्भत्ताए वक्कंते ।**

**[सू.290] उसभे अरहा कोसलिए तिन्नाणोवगए होत्था, तं जहा – चइस्सामि त्ति जाणइ । [1]जं णं रयणिं उसभे णं अरहा कोसलिए मरुदेवाए देवीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते तं णं रयणिं सा मरुदेवा देवी तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि तं चेव, णवरं पढमं उसभं मुहे अतिन्तं पासति सेसाउ गयं, णाभिकुलगरस्स साहेति, णाभी सतमेव वागरेति, णत्थि सुमिणपाढगा, ओराला णं तुमे देवाणुप्पिया सुमिणा दिट्ठा जाव सस्सिरिया णं तुमे देवाणुप्पिया सुमिणा दिट्ठा, तं जहा– अत्थलाभो देवाणुप्पिया भोगलाभो देवाणुप्पिया सोक्खलाभो देवाणुप्पिया पुत्तलाभो देवाणुप्पिया, एवं खलु देवाणुप्पिया णवण्हं मासाणं जाव दारगं पयाहिसि । से वि य णं दारगे उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयजोव्वणमणुप्पत्ते महाकुलगरे यावि भविस्सति । ततेणं सा मरुदेवा देवी सेसं तं चेव जाव सुहेणं तं गब्भं परिवहति ।**

[ज.289-290] '**अइंतं**'ति **प्रविशन्तम्** । '**सेसाओ गयं**'ति शेषाः जिनजनन्यः प्रथमं गजं पश्यन्ति, श्रीवीरमाता तु प्रथमं सिंहमिति । '**सुविणपाढगा णत्थि**'त्ति स्वप्नपाठका न सन्ति तदा तेषामसत्त्वात्,'**नाभि**'त्ति नाभिकुलकर एव स्वप्नफलं व्याकरोति मरुदेवीं प्रतीति शेषः ।

**[सू.291] तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले तस्स णं चित्तबहुलस्स अट्ठमीपक्खेणं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं जाव आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं पयाया, तं चेव जाव देवा देवीओ य वसुहारवासं वासिंसु, सेसं तहेव चारगसोहणं माणुम्माणवड्ढणं उस्सुक्कमाईयं ट्ठिइपडियवज्जं सव्वं भाणियव्वं ।**

**[सू.292] उसभे णं अरहा कोसलिए कासवगुत्ते णं, तस्स णं पंच नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा– उसभे इ वा पढमराया इ वा पढमभिक्खाचरे इ वा पढमजिणे इ वा पढमतित्थकरे इ वा ।**

[ज.291-292] '**उसभे इ व**'त्ति ऋषभः प्रतीतः **प्रथमो राजा**ऽस्या अवसर्पिण्या अपेक्षया एवं

1 'जं णं' इत्यस्मादारभ्य 'परिवहति' इत्येतावत्पर्यन्तस्य पाठस्य स्थाने 'जाव सुमिणे पासइ, तं जहा– गय उसह गाहा, सव्वं तहेव, नवरं सुविणपाढगा णत्थि, नाभी कुलगरो वागरेइ' इत्येव पाठो मुद्रिते तथा 'जाव सुमिणे पासइ, तं जहा – गयगाहा, सव्वं तहेव, नवरं पढमं उसभं मुहेणं अइंतं पासइ, सेसाओ गयं, नाभिकुलगरस्स साहइ, सुविणपाढगा नत्थि, नाभिकुलगरो सयमेव वागरेइ' इत्येव पाठः Kh प्रतौ ।

**प्रथमजिनो** रागादिजेता, प्रथमः केवली केवलज्ञानवान्, प्रथम एव तीर्थकरः, तीर्थशब्देन प्रथमगणधरः श्रमणसङ्घो वा प्रवचनं वा, तत्र गणस्थापनानन्तरं सर्वमन्यद्भवतीति गणधर एवात्र तीर्थशब्देन विवक्षितः, अत एव प्रथमो धर्मवरचक्रवर्ती धर्मेण वराः-श्रेष्ठास्तेषां मध्ये चक्रवर्तीव चक्रवर्ती अथवा धर्म एव वरं-प्रधानं चक्रं कुगतिच्छेदकत्वात् तेन वर्तितुं शीलमस्येति धर्मवरचक्रवर्ती ।

**[सू.293] उसभे अरहा कोसलिए दक्खे पतिन्ने पडिरूवे अल्लीणभद्दए वीणीए वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसइ, वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसित्ता तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं रज्जवासमज्झे वसमाणे लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बाहत्तरिं कलाओ चोवट्ठिं महिलागुणे सिप्पसयं च कम्माणं तिन्नि वि पयाहियाए उवदिसइ, उवदिसित्ता पुत्तसयं रज्जसए अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता पुणरवि लोयंतिएहिं जिअकप्पि० सेसं तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव दायं दाइयाणं परिभाएत्ता जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चेत्तबहुले तस्स णं चेत्तबहुलस्स अट्ठमीपक्खेणं दिवसस्स पच्छिमे भागे सुदंसणाए सिबियाए सदेवमणुयासुराए परिसाए समणुगम्ममाणमग्गे जाव विणीयं रायहाणिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव सिद्धत्थवणे उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे जाव सयमेव चउमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अप्पाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं उग्गाणं भोगाणं राइन्नाणं च खत्तियाणं च चउहिं सहस्सेहिं सद्धिं एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ।**

[ज.293] स भगवान् विंशतिपूर्वलक्षाणि कुमारत्वे उषित्वा त्रिषष्टिपूर्वलक्षाणि राज्यमध्यावसत्। '**लेहाइयाउ**'त्ति **लेखादिका द्वासप्ततिकलाः** कथम्भूतास्ता ? इत्याह -**गणितप्रधाना** गणितेना-ऽङ्कशास्त्रेण प्रधानाः प्रकृष्टतया दीप्राः, पुनः किंलक्षणाः ? शकुनिरुतं पर्यवसाने-अवसाने यासां ताः **शकुनिरुतपर्यवसानाः** द्वासप्ततिकलास्ताश्चेमाः तद्यथा - लेहं1 गणियं2 रूवं3 नट्टं4 गीयं5 वाइयं6 सरगयं7 पुक्खरगयं8 समतालं9 जूयं10 जणवायं11 पासगं12 अट्ठावयं13 पोरेकव्वं14 दगमट्टियं15 अन्नविहिं16 पाणविहिं17 वत्थविहिं18 विलेवणविहिं19 सयणविहिं20 अज्जं21 पहेलियं22 मागहियं23 गाहा24 गीइया25 सिलोगो26 हिरण्णजुत्ती27 सुवन्नजुत्ती28 चुण्णजुत्ती29 आहारणविही30 तरुणीपडिकम्मं31 इत्थिलक्खणं32 पुरिसलक्खणं33 हयलक्खणं34 गयलक्खणं35 गोणलक्खणं36 कुक्कुडलक्खणं37 छत्तलक्खणं38 दंडलक्खणं39 असिलक्खणं40 कागणिलक्खणं41 मणिलक्खणं42 वत्थुविज्जं43 खंधारमाणं44 नगरमाणं45 वूहं46 पडिवूहं47 चारं48 पडिचारं49 चक्कवूहं50 गरुडवूहं51 सगडवूहं52 जुद्धं53 निजुद्धं54 जुद्धातिजुद्धं55 अच्छिजुद्धं56 मुट्ठिजुद्धं57 बाहुजुद्धं58 लयजुद्धं59 ईसत्थं60 च्छरुप्पवायं61 धणुखय62 हिरण्णपागं63 सुवण्णपागं64 सुत्तखेड्डं65 वट्टखेड्डं66 नालियाखेड्डं67 पत्तच्छिज्जं68 कडगच्छिज्जं69 सज्जीवं70 निज्जीवं71 सउणरुयमिति72 । 'महिलाण गुणा' स्त्रीणां कलाश्चतुःषष्टिरिति तासु चतुर्विंशतिः कर्माश्रयाः गीतनृत्यवाद्यादयः विंशतिः द्यूताश्रयाः आयप्राप्त्यक्षविधानादयः षोडश शयनोपचारिकाः पुरुषभावग्रहणस्वरागप्रकाशनादयः चतस्र उत्तरकलाः

साश्रुपातं रमणस्य शापनमित्यादय इति मूलकलाश्चतुःषष्टिस्तत्राप्यन्तरकलाः पञ्चशतान्यष्टादशाधिकानि। तन्मध्याद्विभाज्य चतुःषष्टिरेता वात्स्यायनसाधारणाधिकरणे तृतीयाध्याये उक्तास्तद्यथा - गीतं1 नृत्यं2 वाद्य3मालेख्यं4 विशेषकच्छेद्यं5 चित्रकर्माणि6 तन्दुलकुसुमबलिविकारः7 पुष्पास्तरणं8 दशनवसनाङ्गरागाः9 मणिभूमिकाकर्म10 शयनरचना11 उदकवाद्यं12 उदकाघाताः13 चित्राश्च योगा दौर्भाग्यकेन्द्रियपलितीकरणादयः14 माल्यग्रन्थनविकल्पाः15 शेखरकापीडयोजनं16 नेपथ्यप्रयोगः17 कर्णपत्रभङ्गाः18 गन्धयुक्तिः19 भूषणयोजना20 ऐन्द्रजालं21 कौचुमाराश्च योगाः सुभगकरणादयः22 हस्तलाघवं23 विचित्रशाकयूषभक्षविकारक्रियापानकरसरागासवयोजनं24 सूचीवासकर्माणि25 सूत्रक्रीडा26 वीणाडमरुकवाद्यं27 प्रहेलिका28 प्रतिमाला अन्ताक्षरिकेत्यर्थः29 दुर्वचकयोगा30 पुस्तकवाचनं31 नाटकाख्यायिकदर्शनं32 काव्यसमस्यापूरणं33 पट्टिकावेत्रवानविकल्पाः34 तर्ककर्माणि35 भक्षणं36 वास्तुविद्या37 रूप्यरत्नपरीक्षा38 धातुवादः39 मणिरागाकरज्ञानं40 वृक्षायुर्वेदयोगाः41मेषकुक्कुट-लाबुकयुद्धविधिः42 शुकसारिकाप्रलापनं43 उत्सादने केशमर्दने च कौशलं44 अक्षरमुद्राकथनं45 म्लेच्छितविकल्पाः46 वेशभाषाविज्ञानं47 पुष्पशकटिका48 यन्त्रमातृका49 धारणमातृका50 सम्पात्यं51 मानसी52 काव्यक्रिया53 अभिधानकोशः54 छन्दोज्ञानं55 क्रियाकल्पः56 छलितकयोगाः57 वस्त्रगोपनानि58 द्यूतविशेषाः59 आकर्षक्रीडा60 बालक्रीडनकानि61 हस्तशिक्षावैनयिकविद्याज्ञानं62 शस्त्रशिक्षादिवैनयिकविद्याज्ञानं63 मृगयादिवैनयिकविद्याज्ञानम्64 अथवा साम्प्रयोगिकाश्चतुःषष्टिर्महिला-गुणास्ते चेत्थम् - आलिङ्गनचुम्बननखच्छेद्यदशनच्छेद्यसंवेशनशीत्कृतपुरुषायितोपरिष्टकानामष्टाष्ट-विकल्पभेदादष्टावष्टविकल्पश्चतुःषष्टिस्तत्र पृष्टकं विद्वकम् उद्धृष्टकं पीडितकं लतावेष्टितकं वृक्षादिरूढकं तिलतन्दुलकं क्षीरजलकमित्यालिङ्गनविकल्पाः, निमित्तकं स्फुरितकं घट्टितकं समग्रहणं तिर्यग्ग्रहणं भ्रान्तम् अवपीडितकम् ओष्ठपीडितकमिति चुम्बनविकल्पाः, आछुरितकम् अर्धचन्द्रो मण्डलं रेखा व्याघ्रनखकं मयूरपदकं शशप्लुतकम् उत्पलपत्रकमिति नखच्छेद्यविकल्पाः, गूढकम् उच्छूनकम् उत्फुल्लकं विजृम्भितं दुःप्रवालमणिर्मणिमाला खण्डाभ्रकं वराहचर्चितकमिति दशनच्छेद्यविकल्पाः, उत्पुल्लकं विजृम्भितम् इन्द्राणीपार्श्वसम्पुटम् उत्तानसम्पुटं पीडितकं वेष्टितकं वाडवाकमिति उद्धग्रकं विजृम्भितकं पीडितकमर्धपीडितकं वेणुदारितकं शूलोचितकं काक्वटकं पद्मासनकमिति वा संवेशनविकल्पाः, हिङ्कारस्तनितरुदितकूजितसूत्कृतपूत्कृतदूत्कृतादीनि सप्ताव्यक्ताक्षराणि अम्बाघालमर्थमोक्षणार्थप्रयोगा-श्चाष्टममिति पारापतादिविरुतभेदाद्वा शीत्कृतविकल्पाः, अपहस्तकं प्रसरितकं मुष्टिः समतलं कीली कर्पूरी विद्वा सन्देशिकाभेदादष्टधा प्रहणनं तु शीत्कृत एवान्तर्भूतं प्रहरणेनोद्भवत्वाच्छीत्कृतस्येति, उपसुप्तकं मन्थनं दुलोवमर्दनं पीडितकं निर्घातो वराहघातो वृषाघातश्च कटकविलसितं सम्पुटकं सन्दशको भ्रमरकः प्रेङ्खोलितमिति विकल्पानां क्वचित्केषाञ्चिदन्तर्भावेऽष्टौ पुरुषायितविकल्पाः, निमित्तकं पार्श्वदष्टं बहिःसन्दशः अन्तःसन्दशः चुम्बितकं परिघृष्टकमाम्रभूषितकं सङ्करः इत्यौपरिष्टकविकल्पाः, एतेषां परिज्ञानकौशलं चतुःषष्टिर्महिलागुणास्तान्, एतेषां व्याख्यानं जयमङ्गलातोऽवसेयम् । **शिल्पशतं** च

कुम्भकारलोहकारचित्रकारतन्तुवायनापितशिल्पानां पञ्चानां प्रत्येकं विंशतिभेदत्वात्, तथा चार्षम्-

*पंचेव य सिप्पाइं घडलोहे चित्तणंतकासवए ।*
*इक्किक्कस्स य इत्तो वीसं वीसं भवे भेया ॥ [आ.नि.207]*

**कर्मणां** कृषिवाणिज्यादीनां मध्ये शतमेवोपदिष्टम्, अत एवानाचार्योपदेशजं कर्म आचार्योपदेशजं तु शिल्पम् इति कर्मशिल्पयोर्विशेषमामनन्ति । कर्माणि हि क्रमेण स्वयमुत्पन्नानीति । एतानि **त्रीण्यपि** द्वासप्ततिकलाः चतुःषष्टिमहिलागुणाः शिल्पशताख्यानि वस्तूनि **प्रजाहिताय** भगवा**नुपदिशति** स्मेति इत्यर्थः । **उपदिश्य** च **पुत्रशतं राज्येऽभिषिच्य** च त्र्यशीतिपूर्वलक्षाणि महाराज्यवासमध्ये उषित्वा '**सयमेव**'त्ति स्वयमेव चतसृभिर्मुष्टिभि**र्लोचं करोति** । तथाहि - एकया मुष्ट्या श्मश्रुकूर्चयोर्लोचः, तिसृभिश्च यावता कृतः शिरसि लोचस्तावता एकां मुष्टिं केशानामवशिष्यमाणानां पवनान्दोलितामितस्ततो विक्षिपन्तीं कनककलशोपरि नीलोत्पलपिधानानुकारिणीमुभयतः स्कन्धोपरि लुलन्तीं वीक्ष्य प्रमुदितहृदयेन शक्रेण सोपरोधं विज्ञप्तो भगवान् रक्षितवान् इति पूर्ववृद्धाः ।

**[सू.294] उसभे णं अरहा कोसलिए एगं वाससहस्सं निच्चं वोसट्ठकाये चियत्तदेहे जाव अप्पाणं भावेमाणस्स एक्कं वाससहस्सं विइक्कंतं, तओ णं जे से हेमंताणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे फग्गुणबहुले तस्स णं फग्गुणबहुलस्स एक्कारसीपक्खेणं पुव्वण्हकालसमयंसि पुरिमतालस्स नयरस्स बहिया सगडमुहंसि उज्जाणंसि नग्गोहवरपायवस्स अहे अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते जाव जाणमाणे पासमाणे विहरइ ।**

**[सू.295] उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स चउरासीइं गणा चउरासीइं गणहरा होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स उसभसेणपामोक्खाओ चउरासीइं समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बंभीसुंदरिपामोक्खाणं अज्जियाणं तिन्नि सयसाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स सेज्जंसपामोक्खाणं समणोवासगाणं तिन्नि सयसाहस्सीओ पंच सहस्सा उक्कोसिया समणोवासयसंपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स सुभद्दापामोक्खाणं समणोवासियाणं पंच सयसाहस्सीओ चउप्पन्नं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स चत्तारि सहस्सा सत्त सया पन्नासा चोद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं उक्कोसिया चोद्दसपुव्विसंपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स नव सहस्सा ओहिनाणीणं उक्कोसिया संपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीससहस्सा केवलणाणीणं उक्कोसिया संपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीससहस्सा छच्च सया वेउव्वियाणं उक्कोसिया संपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बारससहस्सा छच्च सया पन्नासा विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं पासमाणाणं उक्कोसिया विपुलमइसंपया होत्था । उसभस्स णं बारस सहस्सा छच्च सया पन्नासा वाईणं उक्कोसिया संपया होत्था । उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीसं अंतेवासिसया सिद्धा,**

**चत्तालीसं अज्जियासाहस्सीओ सिद्धाओ । बावीस सहस्सा नव य सया अणुत्तरोववाइयाणं गतिक जाव भद्दाणं उक्कोसिया संपया होत्था ।**

**[सू.296] उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स दुविहा अंतगडभूमी होत्था, तं जहा–जुगंतकडभूमी य परियायंतकडभूमी य । जाव असंखेज्जाओ पुरिसजुगाओ जुगंतगडभूमी, अंतोमुहुत्तपरियाए अंतमकासी ।**

[ज. 294-296] '**दुविहा अंतगडभूमी**'त्यादि **युगान्तकृद्भूमिरसङ्ख्येयानि पुरुषयुगानि** भगवतोऽन्वयक्रमे सिद्धानीति । **पर्यायान्तकृद्भूमि**र्भगवता केवले समुत्पन्नेऽन्तर्मुहूर्तेन स्वामिनी मरुदेवा अन्तकृत्केवलितां प्राप्तेति ।

**[सू.297] तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झा–वसित्ता णं, तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं रज्जवासमज्झावसित्ता णं, तेसीइं पुव्वसयसहस्साइं अगारवासमज्झा–वसित्ता णं, एगं वाससहस्सं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता, एगं पुव्वसयसहस्सं वाससहस्सूणं केवलि–परियागं पाउणित्ता, पडिपुन्नं पुव्वसयसहस्सं सामन्नपरियागं पाउणित्ता, चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता, खीणे वेयणिज्जाउयनामगोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए सुसमदूसमाए समाए बहुविइक्कंताए तिहिं वासेहिं अद्धनवमेहि य मासेहिं सेसेहिं जे से हेमंताणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे माहबहुले तस्स णं माहबहुलस्स तेरसीपक्खेणं उप्पिं अट्ठावयसेलसिहरंसि दसहिं अणगारसहस्सेहिं सद्धिं चोद्दसमेणं भत्तेणं अप्पाणएणं अभिइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वण्हकालसमयंसि संपलियंकनिसन्ने कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

**[सू.298] उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स कालगयस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स तिन्नि वासा अद्धनवमा य मासा विइक्कंता, तओ वि परं एगा सागरोवमकोडाकोडी तिवासअद्धनवमासाहिएहिं बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणिया वीइक्कंता, एयम्मि समए समणे भगवं महावीरे परिनिव्वुडे, तओ वि परं नव वाससया वीइक्कंता, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरकाले गच्छइ ।**

[ज.297-298] '**सुसमदूसमाए समाए**'त्ति तृतीयारके एकोननवतिपक्षावशेषे भगवान् सिद्धः उपर्यष्टापद-शैलशिखरस्य '**चउदसमेणं भत्तेणं**'ति उपवासषट्केन चतुर्दशभक्तपरित्यागात् । अत्रान्तरे जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यां श्रीऋषभस्य निर्वाणमहिमोक्तस्तथेह वाच्यः । स चैवमर्थतः - यत्र समये ऋषभो भगवान् कालगतः समुद्घातः छिन्नजातिजरामरणबन्धनः सिद्धः तत्र समये शक्रश्चलितासनः प्रयुक्तावधिर्विज्ञातजिननिर्वाणः सपरिकरोऽश्रुजलपूर्णलोचनो निर्हासो निरानन्दो महादुःखौघपूरितचेताः अष्टापदशैलशिखरेऽवततार । ततोऽसौ विमना निरानन्दोऽश्रुपूर्णनयनो जिनशरीरं त्रिः प्रदक्षिणीकृत्यानतिदूरासन्ने नमस्यन् पर्युपास्ते स्म । एवं सर्वेऽपि वैमानिकादयो देवराजाः । ततः शक्रो देवैर्नन्दनवनात् आनायितगोशीर्षसरसदारुर्विहित-चितात्रयः क्षीरसमुद्रादानीतक्षीरोदकेन जिनदेहं स्नपयामास, गोशीर्षचन्दनेनानुलिलेप, हंसलक्षणपटसाटकं निवेशयामास, सर्वालङ्कारविभूषितं चकार । शेषा देवा गणधरानगारशरीरकाण्येवं चक्रुः । शक्रस्ततो देवैस्तिस्रः शिबिकाः कारयामास । तत्रैकत्रासौ जिनशरीरमारोपयामास, चितिस्थाने नीत्वा शिबिकायां

स्थापयामास । शेषा देवा गणधरानगारशरीराणि द्वयोः शिबिकयोरारोप्य चित्योः स्थापयामासुः । ततः शक्रादेशादग्निकुमारा देवास्तिसृष्वपि चितिषु अग्निकायं कृतवन्तो वायुकुमारास्तु वायुकायं शेषदेवाश्च कालागरुपवरकुन्दुरुक्कतुरुष्कधूपान् घृतमधु च कुम्भाग्रशः प्रचिक्षिपुः । ततो मांसादिषु दग्धेषु मेघकुमारा देवाः कृतवैक्रियमेघजलेन चितीर्निर्वापयामासुः । ततः शक्रो भगवतो दक्षिणमुपरितनं सक्थि जग्राह, ईशानश्च वामं, चमरोऽधस्तनं दक्षिणं, बलिस्तत्रत्यमेव वामं, शेषा यथार्हमङ्गोपाङ्गानि । केचिज्जीतमिति कृत्वा, केचिद्धर्म एवास्माकं भगवत्सक्थिपूजनादीति कृत्वा, अत्र धर्मः श्रुतधर्म एव व्याख्येयः देवानां चारित्रधर्मस्याविद्यमानत्वात्, केचन जिनभक्तिरागेण एतत्पूजनात् ज्ञशरीरद्रव्यजिनभक्तिर्भविष्यतीति कृत्वा गृहीतवन्तः । ततस्तीर्थकरादिचितिषु महास्तूपान् चक्रुः परिनिर्वाणमहिमानं च । ततः शक्रो नन्दीश्वरे गत्वा पूर्वस्मिन्नञ्जनकपर्वते जिनायतनमहिमानं चकार । तल्लोकपालास्तु चत्वारश्चतुर्षु पूर्वाञ्जनकपार्श्ववर्तिषु दधिमुखपर्वतेषु सिद्धायतनेषु महिमानं चक्रुः । एवमीशान उत्तरस्मिंस्तल्लोकपालास्तत्पार्श्ववर्तिदधिमुखेषु । चमरो दक्षिणेऽञ्जनके तल्लोकपालास्तथैव । बलिः पश्चिमेऽञ्जनके तल्लोकपालास्तथैव । ततः शक्रः स्वकीयविमाने गत्वा सुधर्मसभामध्यस्थितमाणवकाभिधानस्तम्भवर्तिवृत्तसमुद्गकानवतार्य सिंहासने निवेश्य तन्मध्यवर्तिजिनसक्थीनि न्यस्तानि सन्ति तत्र च तानि प्राक्षिपद् । एवं सर्वेऽपि देवा इति । इति श्रीऋषभजिनचरितं समाप्तम् । इति श्रीचतुर्विंशतिजिनचरित्राणि समाप्तिमापुर्व्याख्यानतः ।

**[सू.299] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एक्कारस गणहरा होत्था ।**

[ज.299] साम्प्रतं स्थविरावलीं वक्तुकामः प्रक्रमते - **'तेणं कालेणं तेणं समएण'**मित्यादि तत्र **नव गणा एकादश गणधरा अभवन्** । तत्र गणा एकक्रिया एकवाचना यतिसमुदायाः केचित्त्विदमाहुर्यत् सामाचारीभेदाद्गणान्तरमिति तन्न वक्ष्यमाणार्थेन सह विरोधापत्तेः ।

**[सू.300] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एकारस गणहरा होत्था ? समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे इंदभूई अणगारे गोयमे गोत्तेणं पंच समणसयाइं वातेइ, मज्झिमे अणगारे अग्गिभूई नामेणं गोयमे गोत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, कणीयसे अणगारे वाउभूई नामेणं गोयमे गोत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जवियत्ते भारदाये गोत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जसुहम्मे अग्गिवेसायणे गोत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे मंडियपुत्ते वासिट्ठे गोत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे मोरियपुत्ते कासवगोत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे अकंपिए गोयमे गोत्तेणं थेरे अयलभाया हारियायणे गोत्तेणं ते दुन्नि वि थेरा तिन्नि तिन्नि समणसयाइं वाइंति, थेरे मेयज्जे थेरे य प्पभासे एए दोन्नि वि थेरा कोडिन्ना गोत्तेणं तिन्नि तिन्नि समणसयाइं वाएंति, से[1] तेणट्ठेणं अज्जो ! एवं वुच्चइ–समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एक्कारस गणहरा होत्था ।**

[ज.300] तथैव दर्शयति - **'से केणट्ठेण'**मित्यादि सेशब्दोऽथशब्दार्थः, प्रश्नयितुरयमभिप्रायः यथा किल *जावइया जस्स गणा तावइया गणहरा तस्स* इति वचनात् गणधरमाना एव गणाः सर्वजिनानामभवन्,

1 'से एतेणं अट्ठे°' इति मुद्रिते ।

श्री**वीरस्य** तु **किमर्थं नव गणा एकादश गणधरा** इति?

इति शिष्याशङ्कापनोदार्थम् आचार्य आह - '**समणस्से**'त्यादि श्री**इन्द्रभूतिरग्निभूतिर्वायुभूतिर्व्यक्तः सुधर्मस्वामी** पञ्चापि स्थविराः प्रत्येकं पञ्च **पञ्च श्रमणशतानि** वाचयन्ति सूत्रार्थप्रदानतः पाठयन्ति । **स्थविरो मण्डितपुत्रः स्थविरो मौर्यपुत्रश्चै**तौ द्वावपि स्थविरौ सार्धतृतीयानि **सार्धतृतीयानि श्रमणशतानि** वाचयतः। **स्थविरोऽकम्पितः स्थविरोऽचलभ्राता** चैतौ द्वावपि स्थविरौ त्रीणि **त्रीणि श्रमणशतानि** वाचयतः । **स्थविरो मेतार्यः स्थविरः प्रभास**श्चैतौ द्वावपि स्थविरौ त्रीणि **त्रीणि श्रमणशतानि** वाचयतः। केचिन्मण्डिक इति नाम वदन्ति । '**से तेणट्ठेण**'मित्यादि निगमनसूत्रं व्यक्तम्, नवरम् '**अज्जो**' त्ति हे **आर्य**!।

**[सू.301] सव्वे वि णं एए समणस्स भगवओ महावीरस्स एक्कारस वि गणहरा दुवालसंगिणो चोद्दस-पुव्विणो समत्तगणिपिडगधरा रायगिहे नगरे मासिएणं भत्तिएणं अपाणएणं कालगया जाव सव्वदुक्ख-प्पहीणा । थेरे इंदभूई थेरे अज्जसुहम्मे सिद्धिं गए महावीरे पच्छा दोन्नि वि परिनिव्वुया ।**

**[सू.302] जे इमे अज्जत्ताते समणा निग्गंथा विहरंति एए णं सव्वे अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स आवच्चिज्जा, अवसेसा गणहरा निरवच्चा वोच्छिन्ना ।**

[ज.301-302] नव गणधरा भगवति जीवत्येव सिद्धिं प्राप्ताः । इन्द्रभूतिसुधर्माणौ तु तस्मिन् सिद्धिं गते सिद्धावित्येतदेवाऽऽह - '**सव्वे वि ण**'मित्यादि **सर्वेऽप्यमी** एकादशसङ्ख्याकाः **द्वादशाङ्गिनः** आचारादिदृष्टिवादान्तश्रुतवन्तः स्वयं प्रणयनात् **चतुर्दशपूर्विणः**, द्वादशाङ्गिन इत्येतेनैव चतुर्दशपूर्वित्वे लब्धे यत्पुनरेतदुपादानं तदङ्गेषु चतुर्दशपूर्वाणां प्राधान्यख्यापनार्थं प्राधान्यं च पूर्वप्रणयनादनेकविद्या-मन्त्राद्यर्थमयत्वान्महाप्रमाणत्वाच्च, द्वादशाङ्गित्वं चतुर्दशपूर्वित्वं च सूत्रमात्रग्रहणेऽपि स्यादिति तदपोहार्थमाह -**समस्तगणिपिटकधारकाः** गणोऽस्यास्तीति गणी-भावाचार्यस्तस्य पिटकमिव रत्नादिकरण्डकमिव गणिपिटकं-द्वादशाङ्गी, तदपि न देशतः स्थूलभद्रस्येव किन्तु समस्तं सर्वाक्षरसन्निपातित्वात् तद्धारयति सूत्रतोऽर्थतश्च ये ते तथा । '**अज्जत्ताए**'त्ति **आर्यतया** अद्यतनयुगे वा । '**अवच्चिज्जा**'**अपत्यानि** तत्सन्तानजा इत्यर्थः । **निरपत्याः** शिष्यादिसन्तानरहिताः स्वस्वमरणकाले स्वस्वगणस्य श्रीसुधर्मस्वामिनि निसर्गात् ।

**[सू.303] समणे भगवं महावीरे कासवगोत्ते णं । समणस्स णं भगवओ महावीरस्स कासवगोत्तस्स अज्जसुहम्मे थेरे अंतेवासी अग्गिवेसायणसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जसुहम्मस्स अग्गिवेसायणसगोत्तस्स अज्जजंबुनामे थेरे अंतेवासी कासवगोत्ते । थेरस्स णं अज्जजंबुनामस्स कासवगोत्तस्स अज्जप्पभवे थेरे अंतेवासी कच्चायणसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जप्पभवस्स कच्चायणसगोत्तस्स अज्जसेज्जंभवे थेरे अंतेवासी मणगपिया वच्छसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जसेज्जंभवस्स मणगपिउणो वच्छसगोत्तस्स अज्जजसभद्दे थेरे अंतेवासी तुंगियायणसगोत्ते ।**

[ज.303] तच्छिष्यो **जम्बूनामा**, तच्छिष्यो हि **प्रभवः**, तच्छिष्यः **शय्यम्भवो** जिनप्रतिमादर्शनात्सञ्जात-संवेगः, तदन्वयसमुद्भूतो **यशोभद्रः** । गोत्राणि तु यथाप्रवृत्त्या लोकतो बोद्धव्यानि ।

**[सू.304] संखित्तवायणाए अज्जजसभद्दाओ अग्गओ एवं थेरावली भणिया, तं जहा– थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स तुंगियायणसगोत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा–थेरे अज्जसंभूयविजए माढरसगोत्ते, थेरे अज्जभद्दबाहू पाइणसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जसंभूयविजयस्स माढरसगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जथूलभद्दे गोयम–सगोत्ते । थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमसगोत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा–थेरे अज्जमहागिरी एलावच्छसगोत्ते थेरे अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगोत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा सुट्ठियसुपडिबुद्धा कोडियकाकंदगा वग्घावच्चसगोत्ता । थेराणं सुट्ठियसुपडिबुद्धाणं कोडियकाकंदगाणं वग्घावच्चसगोत्ताणं अंतेवासी थेरे अज्जइंददिन्ने कोसियगोत्ते । थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कोसियगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जदिन्ने गोयमसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयमसगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसियगोत्ते । थेरस्स णं अज्जसीहगिरिस्स जातिसरस्स कोसियगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगोत्तस्स अंतेवासी चत्तारि थेरा–थेरे अज्जनाइले थेरे अज्जपोगिले थेरे अज्जजयंते थेरे अज्जतावसे । थेराओ अज्जनाइलाओ अज्जनाइला साहा निग्गया, थेराओ अज्जपोगिलाओ अज्जपोगिला साहा निग्गया, थेराओ अज्जजयंताओ अज्जजयंती साहा निग्गया, थेराओ अज्जतावसाओ अज्जतावसी साहा निग्गया इति ।**

[ज. 304] **सङ्क्षिप्तवाचनायामार्ययशोभद्रादग्रत एवं स्थविरावली भणिता**, चिरन्तनगणाधिपैरिति शेषः यतः कृतिरियं श्रीभद्रबाहुस्वामिचरणानाम् । '**सुट्ठियसुप्पडिबुद्धा**' इति **सुस्थितसुप्रतिबुद्ध**नामानौ **कौटिककाकन्दका**विति नामबिरुदप्रायं विशेषणं, कोटिशः सूरिमन्त्रजापपरिज्ञानादिना कौटिकौ, काकन्द्यां नगर्यां जातत्वात् काकन्दकौ, ततो विशेषणसमासः, यथा मधुकैटभन्यायेन सहचरितः सुस्थितेन सुप्रतिबुद्धः सुस्थितसुप्रतिबुद्धः पूज्यत्वाद्बहुवचनम् ।

**[सू.305] वित्थरवायणाए पुण अज्जजसभद्दाओ परओ थेरावली एवं पलोइज्जइ, तं जहा–थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्जभद्दबाहू पाईणसगोत्ते, थेरे अज्जसंभूयविजये माढरसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जभद्दबाहुस्स पाईणसगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा– थेरे गोदासे थेरे अग्गिदत्ते थेरे जण्णदत्ते थेरे सोमदत्ते कासवगोत्ते णं । थेरेहिंतो णं गोदासेहिंतो कासवगोत्तेहिंतो एत्थ णं गोदासगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–तामलित्तिया कोडीवरिसिया पोंडवद्धणिया दासीखब्बडिया ।**

**[सू.306] थेरस्स णं अज्जसंभूयविजयस्स माढरसगोत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा–**

**नंदणभद्दे उवनंदभद्द तह तीसभद्द जसभद्दे ।**
**थेरे य सुमिणभद्दे मणिभद्दे य पुन्नभद्दे य ॥२२॥**

थेरे य थूलभद्दे उज्जुमती जंबुनामधेज्जे य ।
थेरे य दीहभद्दे थेरे तह पंडुभद्दे य ॥२३॥

थेरस्स णं अज्जसंभूइविजयस्स माढरसगोत्तस्स इमाओ सत्त अंतेवासिणीओ अहावच्चाओ अभिन्नाताओ होत्था, तं जहा–

जक्खा य जक्खदिन्ना भूया तह होइ भूयदिन्ना य ।
[1]एणा वेणा रेणा भगिणीओ थूलभद्दस्स ॥२४॥

[सू.307] थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमगोत्तस्स इमे दो थेरा अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्जमहागिरी एलावच्छसगोत्ते, थेरे अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जमहागिरिस्स एलावच्छसगोत्तस्स इमे अट्ठ थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा– थेरे उत्तरे थेरे बलिस्सहे थेरे धणड्ढे थेरे सिरिड्ढे थेरे कोडिन्ने थेरे नागे थेरे नागमित्ते थेरे छलुए रोहगुत्ते कोसिय–[2]गोत्तेणं । थेरेहिंतो णं छलुएहिंतो रोहगुत्तेहिंतो कोसियगोत्तेहिंतो तत्थ णं तेरासिया निग्गया । थेरेहिंतो णं उत्तरबलिस्सहेहिंतो तत्थ णं उत्तरबलिस्सहगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–कोसंबिया सोतित्तिया [3]कोडंबाणी चंदनागरी ।

[सू.308] थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगोत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–

थेरे त्थ अज्जरोहण भद्दजसे मेहगणी य कामिड्ढी ।
सुट्ठियसुप्पडिबुद्धे रक्खिय तह रोहगुत्ते य ॥२५॥

इसिगुत्ते सिरिगुत्ते गणी य बंभे गणी य तह सोमे ।
दस दो य गणहरा खलु एए सीसा सुहत्थिस्स ॥२६॥

[सू.309] थेरेहिंतो णं अज्जरोहणेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो तत्थ णं उद्देहगणे नामं गणे निग्गए । तस्सिमाओ चत्तारि साहाओ निग्गयाओ छच्च कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ? एवमाहिज्जंति–उदुंबरिज्जिया मासपूरिया मतिपत्तिया [4]पुन्नपत्तिया, से तं साहाओ । से किं तं कुलाइं ? एवमाहिज्जंति, तं जहा–

पढमं च नागभूयं बीयं पुण सोमभूइयं होइ ।
अह उल्लगच्छ तइयं चउत्थयं हत्थिलिज्जं तु ॥२७॥

पंचमगं नंदिज्जं पुण पारिहासियं होइ ।
उद्देहगणस्सेते छच्च कुला होंति नायव्वा ॥२८॥

---

1 'एणा' इत्यस्य स्थाने 'सेणा' Kh-मुद्रिते ।

2 '°सिए गो°' इति मुद्रिते ।

3 'कोडवाणी' इति मुद्रिते ।

4 '°या सुवन्न°' इति मुद्रिते ।

**[सू.310] थेरेहिंतो णं सिरिगुत्तेहिंतो णं हारियसगोत्तेहिंतो एत्थ णं चारणगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ सत्त य कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहातो ? एवमाहिज्जंति, तं जहा–हारियमालागारी संकासिया गवेधूया [1]विज्जनागरी, से त्तं साहाओ । से किं तं कुलाइं ? एवमाहिज्जंति, तं जहा–**

**पढमेत्थ वत्थलिज्जं बीयं पुण वीचिधम्मकं होइ ।**
**तइयं पुण हालिज्जं चउत्थगं पूसमित्तेज्जं ॥२९॥**

**पंचमगं मालिज्जं छट्ठं पुण अज्ज[2]सेडयं होइ ।**
**सत्तमगं कण्हसहं सत्त कुला चारणगणस्स ॥३०॥**

**[सू.311] थेरेहिंतो भद्दजसेहिंतो भारद्दायसगोत्तेहिंतो एत्थ णं उडुवाडियगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ तिन्नि कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ? एवमाहिज्जंति, तं जहा– चंपिज्जिया भद्दिज्जिया काकंदिया मेहलिज्जिया, से तं साहाओ । से किं तं कुलाइं ? एवमाहिज्जंति–**

**भद्दजसियं तह भद्दगुत्तियं तइयं च होइ जसभद्दं ।**
**एयाइं उडुवाडियगणस्स तिन्नेव य कुलाइं ॥३१॥**

**[सू.312] थेरेहिंतो णं कामिड्ढिहिंतो कुंडिलसगोत्तेहिंतो एत्थ णं वेसवाडियगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ? एवमाहिज्जंति– सावत्थिया रज्जपालिया अन्तरिज्जिया खेमलिज्जिया, से तं साहाओ । से किं तं कुलाइं ? एवमाहिज्जंति–**

**गणियं मेहिय कामड्ढियं च तह होइ इंदपुरगं च ।**
**एयाइं वेसवाडियगणस्स चत्तारि उ कुलाइं ॥३२॥**

**[सू.313] थेरेहिंतो णं इसिगोत्तेहिंतो णं काकंदएहिंतो वासिट्ठसगोत्तेहिंतो एत्थ णं माणवगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ तिण्णि य कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति–कासविज्जिया गोयमिज्जिया वासिट्ठिया सोरट्ठिया, से त्तं साहाओ । से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–**

**इसिगोत्तियऽत्थ पढमं बिइयं इसिदत्तियं मुणेयव्वं ।**
**तइयं च अभिजसंतं तिन्नि कुला माणवगणस्स ॥३३॥**

**[सू.314] थेरेहिंतो णं सुट्ठियसुप्पडिबुद्धेहिंतो कोडियकाकंदिएहिंतो वग्घावच्चसगोत्तेहिंतो एत्थ णं कोडियगणे नामं गणे निग्गए । तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–**

---

1 '°या वज्ज°' इति मुद्रिते ।

2 '°ज्जवेड°' इति Kh मुद्रिते ।

उच्चानागरि विज्जाहरी य वइरी य मज्झिमिल्ला य ।
कोडियगणस्स एया हवंति चत्तारि साहाओ ॥३४॥

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

पढमेत्थ बंभलिज्जं बितियं नामेण वच्छलिज्जं तु ।
ततियं पुण वाणिज्जं चउत्थयं पन्नवाहणयं ॥३५॥

[सू.315] थेराणं सुट्ठियसुपडिबुद्धाणं कोडियकाकंदाणं वग्घावच्चसगोत्ताणं इमे पंच थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्जइंददिन्ने थेरे पियगंथे थेरे विज्जाहरगोवाले कासवगोत्ते णं थेरे इसिदत्ते थेरे अरहदत्ते । थेरेहिंतो णं पियगंथेहिंतो एत्थ णं मज्झिमा साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं विज्जाहरगोवालेहिंतो तत्थ णं विज्जाहरी साहा निग्गया ।

[सू.316] थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कासवगोत्तस्स अज्जदिन्ने थेरे अंतेवासी गोयमसगोत्ते । थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयमसगोत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया वि होत्था, तं जहा– थेरे अज्जसंतिसेणिए माढरसगोत्ते थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसियगोत्ते । थेरेहिंतो णं अज्जसंति–सेणिएहिंतो णं माढरसगोत्तेहिंतो एत्थ णं उच्चानागरी साहा निग्गया ।

[सू.317] थेरस्स णं अज्जसंतिसेणियस्स माढरसगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा– थेरे अज्जसेणिए थेरे अज्जतावसे थेरे अज्जकुबेरे थेरे अज्जइसिपालिते । थेरेहिंतो णं अज्जसेणितेहिंतो एत्थ णं अज्जसेणिया साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जतावसेहिंतो एत्थ णं अज्जतावसी साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जकुबेरेहिंतो एत्थ णं अज्जकुबेरा साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जइसिपालेहिंतो एत्थ णं अज्जइसिपालिया साहा निग्गया ।

[सू.318] थेरस्स णं अज्जसीहगिरिस्स जातीसरस्स कोसियगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा– थेरे धणगिरी थेरे अज्जवइरे थेरे अज्जसमिए थेरे अरहदिन्ने । थेरेहिंतो णं अज्जसमिएहिंतो एत्थ णं बंभ[1]दीविया साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जवइरेहिंतो गोयमसगोत्ते–हिंतो एत्थ णं अज्जवइरा साहा निग्गया ।

[सू.319] थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोतमसगोत्तस्स इमे तिन्नि थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा– थेरे अज्जवइरसेणिए थेरे अज्जपउमे थेरे अज्जरहे । थेरेहिंतो णं अज्जवइरसेणिएहिंतो एत्थ णं अज्जनाइली साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जपउमेहिंतो एत्थ णं अज्जपउमा साहा निग्गया । थेरेहिंतो णं अज्जरहेहिंतो एत्थ णं अज्जजयंती साहा निग्गया ।

[सू.320] थेरस्स णं अज्जरहस्स वच्छसगोत्तस्स अज्जपूसगिरी थेरे अंतेवासी कोसियगोत्ते । थेरस्स णं अज्जपूसगिरिस्स कोसियगोत्तस्स अज्जफग्गुमित्ते थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते ।

1 '°भदेवीया' इति मुद्रिते ।

[ज.305-320] विस्तरवाचना व्यक्तैव, नवरं बहवोऽत्र पाठभेदा नानादेशजलेखकविशेषाज्जाताः, तत्तत्स्थविराणां च शाखा कुलानि च साम्प्रतं नानुवर्तन्ते नामान्तरतिरोहितानि वा भविष्यन्ति, अतो निर्णयः कर्तुं न पार्यते पाठेषु, एवं कुलेष्वपि भाषाभेदान्न तथा व्यक्तिरिति तस्मादत्र तथाविधसम्प्रदायविज्ञातारो बहुश्रुता एव प्रमाणम्, मा भूत् स्वमनीषिकया वदनादुत्सूत्रमिति । तत्र कुलमेकाचार्यसन्ततिः, शाखास्तु तस्यैव सन्ततौ पुरुषविशेषाणां पृथक्पृथगन्वयाः, एकवाचनारूपाचारयतिसमुदायो गणः,

*तत्थ कुलं विन्नेयं एगायरियस्स संतती जाओ ।*
*दोण्ह कुलाणमिहो पुण साविक्खाणं गणो होइ ॥*

इति वचनात् शाखा विवक्षिताद्यपुरुषस्य सन्ततिः यथा वैरनाम्नो वैरी शाखा, कुलानि च तच्छिष्याणां पृथगन्वया यथा चान्द्रं कुलं नागेन्द्रं कुलमित्यादि । '**अहावच्चा**' इति यथार्थान्यपत्यानि न पतन्ति येन जातेन दुर्गतावपयशःपङ्के वा पूर्वजास्तदपत्यम् इति ह्यपत्यलक्षणं सुशिष्याश्च सद्वृत्ताः पूर्वजान्न पातयन्तीति प्रत्युत प्रभासयन्ति । अत एवाभिज्ञाताः प्रख्याताः । '**एणा**'स्थाने क्वचित् सेणा इति दृश्यते । '**छलुए रोहगुत्ते**'त्ति विप्रतिपत्त्यवस्थायां द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाख्यषट्पदार्थप्ररूपकत्वात् षट् गोत्रेणोलूकत्वादुलूकः, षट् चासावुलूकश्चेति **षडुलूकः**, उलूकत्वमेव व्यनक्ति '**कोसियगुत्तेणं**'ति उलूककौशिकशब्दयोर्नार्थभेदः । '**तेरासिय**'त्ति **त्रैराशिकाः** जीवाजीवनोजीवाख्यराशित्रयप्ररूपिणस्तच्छिष्यप्रशिष्याः । अयं हि अन्तरञ्जिकायां पुरि पोट्टशालाभिधानं परिव्राजकप्रतिवादिनं वृश्चक्यादिसप्तविद्याप्रौढं गुरुदत्तमयूर्यादिभिः प्रतिहत्य तेन राशिद्वयकक्षायां कक्षीकृतायां तद्बुद्धिपरिभवार्थं राशित्रयं व्यवस्थाप्य तं वादे पराजित्य गुरुसमीपमागत्य सर्वं स्ववृत्तं व्यजिज्ञपत् । गुरुणोक्तम् - वत्स! साध्वकार्षीः परं राशित्रयप्ररूपणमुत्सूत्रमिति ददस्व 'मिथ्या दुःकृतम्' । स च कथमवितथमिव वितथमपि तथा विधाय परिषदि तथा प्रज्ञाप्य स्ववचनमप्यप्रमाणयामीत्यवलेपान्न प्रत्यपादि गुरुभिरुपपाद्यमानमपि राशिद्वयम् । ततः षाण्मासीं यावद्राजसभायां वादमासूत्र्य चतुश्चत्वारिंशेन पृच्छाशतेन निर्लोठ्य कथमप्याग्रहममुञ्चन्तममुं गुरुः कोपाटोपात् खेलमात्रकभस्मक्षेपेण मूर्ध्नि गुण्डयित्वा सङ्घबाह्यमकरोत् । ततस्तस्मात्षष्ठनिह्नवाः त्रैराशिका जाताः, क्रमेण वैशेषिकदर्शनं ततः प्ररूढमिति । '**कोडंबाणी**' इति क्वचिच्च कुण्डधारीत्युक्तम् । **आर्यरोहणो1 भद्रयशाः2 मेघः3 कामर्द्धिः4 सुस्थितः5 सुप्रतिबुद्धः6 रक्षितः7 रोहगुप्तः8 ऋषिगुप्तः9 श्रीगुप्तः10 ब्रह्म11 सोमः12** इति द्वादश गणधराः सुहस्तिशिष्याः । '**पुन्नपत्तिया**'इति क्वचित् सुवण्णपत्तिया इति । '**अह उल्लगच्छ तइयं**'ति क्वचित् उल्लगंध इति पाठः । '**पारिहासयं होइ**' त्ति क्वचित् पाठः पारिभासियमिति, अन्ये पारिहामयमिति । '**विज्जनागरि**'त्ति क्वचित् वज्जनागरित्ति । '**अज्जसेडयं**' ति क्वचित् अज्जवेडयं ति पाठः । प्रश्नवाहनकुलम् इति एतदनुयायिनो मलधारिगच्छीया इति वृद्धप्रवादः । अत एवाऽऽदौ प्रदर्शितं नामान्तरतिरोहितानीति ।

'**बंभदीविया साह**'त्ति आर्यसमिताचार्या हि नद्यां योगचूर्णं निक्षिप्य पादलेपमात्रेण जलोपरिगमनविस्मापितजनस्य पाखण्डिनो दर्पखण्डनं विधाय प्रवचनप्रभावनया ब्रह्मदीपिकान् तापसान् प्रत्यबुबूधन् । **तेभ्यो**

**ब्रह्मदीपिका शाखा निर्गता ।**

**[सू.321]** **वंदामि फग्गुमित्तं च गोयमं धणगिरिं च वासिट्ठं ।**
**कोच्छिं सिवभूइं पि य कोसिय दोज्जिंतकंटे य ॥३६॥**

**तं वंदिऊण सिरसा चित्तं वंदामि कासवं गोत्तं ।**
**णक्खं कासवगोत्तं रक्खं पि य कासवं वंदे ॥३७॥**

**वंदामि अज्जनागं च गोयमं जेहिलं च वासिट्ठं ।**
**विण्हुं माढरगोत्तं कालगमवि गोयमं वंदे ॥३८॥**

**गोयमगोत्तमभारं सप्पलयं तह य भद्दयं वंदे ।**
**थेरं च संघवालियकासवगोत्तं पणिवयामि ॥३९॥**

**वंदामि अज्जहत्थिं च कासवं खंतिसागरं धीरं ।**
**गिम्हाण पढममासे कालगयं चेत्तसुद्धस्स ॥४०॥**

**वंदामि अज्जधम्मं च सुव्वयं सीसलद्धिसंपन्नं ।**
**जस्स निक्खमणे देवो छत्तं वरमुत्तमं वहइ ॥४१॥**

**हत्थं कासवगोत्तं धम्मं सिवसाहगं पणिवयामि ।**
**सीहं कासवगोत्तं धम्मं पि य कासवं वंदे ॥४२॥**

**सुत्तत्थरयणभरिए खमदममद्दवगुणेहिं संपन्ने ।**
**देविड्ढिखमासमणे कासवगोत्ते पणिवयामि ॥४३॥**

[ज.321] '**वंदामि फग्गुमित्तं च**' इत्यादिगाथास्तत्र गद्योक्तोऽर्थः पुनः पद्यैः सङ्गृहीत इति न पौनरुक्त्यं भावनीयम् । '**कुच्छं**' ति कुत्सगोत्रमिति । पाठसिद्धा इमा गाथाः, नवरं '**वरमुत्तमं**' ति वरा-श्रेष्ठा मा- लक्ष्मीस्तया उत्तमं छत्रं वहति यस्य शिरसि धारयति देवः पूर्वसङ्गतिकः । क्वापि मिउमद्दवसंपन्नं ति मृदुना-मधुरेण मार्दवेन-मानपरित्यागेन सम्पन्नम् अथवा मृदुकं-करुणार्द्रहृदयम् अद्रवसम्पन्नं न द्रवेण-अनर्मणा सम्पन्नम् अद्रवसम्पन्नम् ।

इयं स्थविरावली पूर्वोक्ततीर्थकराभिधानवत् पूज्यत्वादत्र पठ्यते मङ्गलरूपत्वादस्याः । महतां नामस्मरण-मात्रेणापि क्षीयते कर्मसन्ततिः ।

**[सू.322] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ।**

[ज.322] तत उक्तं जिननामस्थविरनामरूपं भावमङ्गलमधुना पूर्वापरजिनयोः सदृशाचारत्वात् श्रीवर्धमान-स्वामितीर्थसाधुवर्गस्य सामाचारीं निरूपयितुमाह - तत्रापि

*आचेलुक्कुद्देसियसिज्जायररायपिंडकिइकम्मे ।*
*वयजेट्ठपडिक्कमणे मासं पज्जोसवणकप्पो ॥ [बृ.भा.6364]*

इति वचनात् अनेकधा प्ररूपणीयत्वात् तस्या न सा प्ररूप्यते किन्तु पर्युषणाकल्पसामाचार्येवात्र प्ररूपयिष्यते इति तामेव विवक्षुरादौ पर्युषणा- प्राग्निरूपितशब्दार्था वक्ष्यमाणस्वरूपा वा कदा विधेयेति श्रीवीरतद्गणधरतच्छिष्यादिदृष्टान्तेनाऽऽह - '**तेणं कालेणं तेणं समएण**'मित्यादि व्याख्यातार्थम् । '**वासाणं**'ति आषाढचतुर्मासकदिनादारभ्य **सविंशतिरात्रे मासे व्यतिक्रान्ते भगवान्** '**पज्जोसवेइ**'त्ति पर्युषणामकार्षीत् । परि-सामस्त्येन उषणा-निवासः ।

**[सू.323] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ? जतो णं पाएणं अगारीणं अगाराइं कडियाइं उक्कंपियाइं छन्नाइं लित्ताइं घट्ठाइं मट्ठाइं संपधूमियाइं खाओदगाइं खातनिद्धमणाइं अप्पणो अट्ठाए कयाइं परिभोत्ताइं परिणामियाइं भवंति से तेणऽट्ठेणं एवं वुच्चइ–समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते वासावासं पज्जोसवेति ।**

[ज.323] इत्युक्ते शिष्यः प्रश्नयितुमाह - '**से केणट्ठेण**'मित्यादि प्रश्नवाक्यं सुबोधम् । गुरुराह - '**जओ ण**'मित्यादि निर्वचनवाक्यम्, **यतः** '**णं**' प्राग्वत् '**पाएणं**' ति प्रायः **अगारिणां** गृहस्थानाम् **अगाराणि** गृहाणि '**कडियाइं**'ति कटयुक्तानि '**उक्कंपियाइं**'ति धवलितानि '**छन्नाइं**' तृणादिभिः '**लित्ताइं**' छगणाद्यैः, क्वचित् गुत्ताइं ति पाठस्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरणद्वारपिधानादिभिः '**घट्ठाइं**' ति विषमभूमिभञ्जनात् '**मट्ठाइं**' श्लक्ष्णीकृतानि, क्वचित् संमट्ठाइं ति पाठस्तत्र समन्तात् मृष्टानि मसृणीकृतानि सम्मृष्टानि '**संपधूमियाइं**'ति सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि '**खाओदगाइं**' ति कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि '**खायनिद्धमणाइं**' ति निद्धमणं-खालं गृहात्सलिलं येन निर्गच्छति '**अप्पणो अट्ठाए**' आत्मार्थं स्वार्थं गृहस्थैः **कृतानि** परिकर्मितानि, करोतेः काण्डं करोतीत्यादाविव परिकर्मार्थत्वात्, **परिभुक्तानि** तैः स्वयं परिभुज्यमानत्वात्, अत एव **परिणामितानि** अचित्तीकृतानि **भवन्ति**, ततः सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति । यदि पुनः प्रथममेव साधवः स्थिता स्म इति ब्रूयुस्तदा ते प्रव्रजितानामवस्थानेन सुभिक्षं सम्भाव्य गृहिणस्तप्तायोगोलकल्पा दन्तालक्षेत्रकर्षणगृहछादनादीनि कुर्युः तथा चाधिकरणदोषाः । अतः पञ्चाशता दिनैः स्थिता स्म इति वाच्यम् ।

**[सू.324] जहा णं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ तहा णं गणहरा वि वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति ।**

**[सू.325] जहा णं गणहरा वासाणं जाव पज्जोसवेंति तहा णं गणहरसीसा वि वासाणं जाव पज्जोसविंति ।**

**[सू.326] जहा णं गणहरसीसा वासाणं जाव पज्जोसविंति तहा णं थेरा वि वासाणं जाव पज्जोसविंति ।**

**[सू.327] जहा णं थेरा वासाणं जाव पज्जोसविंति तहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एए वि णं वासाणं जाव पज्जोसविंति ।**

**[सू.328]जहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति तहा णं अम्हं पि आयरियउवज्झाया वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेंति ।**

**[सू.329] जहा णं अम्हं आयरियउवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसवेंति तहा णं अम्हे वि अज्जो ! वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेमो । अंतरा वि य से कप्पइ पज्जोसवित्तए, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए ।**

[ज.324-329] '**गणहरा वि**' त्ति **गणधरा अपि** एवमेवाकार्षुः । '**अज्जत्ताए**'त्ति **अद्यकालीनाः** आर्यतया व्रतस्थविरा इत्येके । '**अम्हं पि**'त्ति **अस्माकमपि आचार्योपाध्यायाः** । '**अम्हे वि**'त्ति **वयमपी**–त्यर्थः । '**अंतरा वि य से**' इत्यादि **अन्तरापि च** अर्वागपि **कल्पते** युज्यते **पर्युषितुम्**, **न कल्पते तां रजनीं** भाद्रपदशुक्लपञ्चमीम् '**उवायणावित्तए**'त्ति **अतिक्रमितुम्**, उष निवासे इत्यागमिको धातुः पर्युषितुं वस्तुमिति सूत्रार्थः । अत्र अन्तरा वि य से कप्पइ इति कथनात् पर्युषणा द्विधा सूचिता भवति । सा चैवम् - एका गृहिज्ञाता अपरा गृहिणामज्ञाता । तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां वर्षायोग्यपीठफलकादौ यत्नेन कल्पोक्ता द्रव्यक्षेत्रकालभावस्थापना क्रियते, सा आषाढशुक्लपौर्णमास्यां पञ्चपञ्चदिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपदसितपञ्चम्याम्, सा चैकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते । गृहिज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकातीचारालोचनं लुञ्चनं पर्युषणाकल्पसूत्रकर्षणं चैत्यपरिपाटी अष्टमं सांवत्सरिकप्रतिक्रमणं च क्रियते यया च व्रतपर्यायवर्षाणि गण्यन्ते, सा नभस्यशुक्लपञ्चम्याम् । एतावता यदा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां संवत्सरप्रतिक्रमणं कृतं तत ऊर्ध्वं तु न कल्पते विहर्तुम्, ततस्तदवधि विहर्तव्यम् । अन्तरापि चैकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते निवासो न तु प्रतिक्रमणम् । कैश्चिदुच्यते यत्र वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणमपि, तत्र चेद्यत्रैव वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणं तदाऽऽषाढशुक्लपञ्चदश्यामपि तत्कर्तव्यम्, न चैवं दृष्टमिष्टं वा, ततो निवास एवार्वाग्युक्त इति परमार्थः । अमुमेवार्थं श्रीसुधर्मस्वामिनो व्यासेन प्रतिपादितवन्तः श्रीसमवायाङ्गे यथा *समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसतिराए मासे विइक्कंते सत्तरीहिं राइंदिएहिं सेसेहि वासावासं पज्जोसवेति [सम. सू. 70]। व्याख्या - समणे इत्यादि । वर्षाणां चतुर्मासप्रमाणकालस्य सविंशतिरात्रे विंशतिदिवसाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशति दिनेष्वतीतेष्वित्यर्थः, सप्तत्यां च रात्रिदिवसेषु शेषेषु संवत्सरप्रतिक्रमणरूपधर्म-दिवसे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थः वर्षास्वावासो वर्षावस्थानं 'पज्जोसवेइ'त्ति परिवसति सर्वथा करोति। पञ्चाशति दिनेषु प्राक्तनेषु तथाविधवसत्यभावादिकारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति परं भाद्रपदशुक्ल-पञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदयम् । [सम. सू. 70वृत्तिः]* चन्द्रसंवत्सरस्यैवायं नियमः, नाभिवर्धितस्येत्यादि, तथा निर्युक्तिः-

*एत्थ उ पणगं पणगं कारणियं जाव सवीसई मासो ।*
*सुद्धदसमीठियाण च आसाढीपुण्णिमोसरणं ॥ [दशा.नि.71]*

*इय सत्तरी जहण्णा असीइणउई दसुत्तरसयं च ।*
*जइ वासइ मग्गसिरे दस राया तिन्नि उक्कोसा ॥ [दशा.नि.72]*

*काऊण मासकप्पं तत्थेव ठियाण तीस मग्गसिरे ।*
*सालंबणाण छम्मासितो उ जेट्ठोग्गहो होइ ॥ [दशा.नि.73]*

सुगमाश्चेमाः, नवरमाद्यगाथाद्वयस्य चूर्णिः- *आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तणडगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो कहितो तो सावणबहुलपंचमीए पज्जोसवेंति, असति खेत्ते सावणबहुलदसमीए, एवं पंच पंच उस्सारेंतेणं जाव असति भद्दवयसुद्धपंचमीए, अतो परं ण वट्टति अतिक्कमितुं आसाढपुण्णिमातो आढत्तं मग्गंताणं जाव भद्दवयजोण्हस्स पंचमीए, एत्थंतरे जति ण लद्धं ताहे जति रुक्खस्स हेट्ठे ठितो तो वि पज्जोसवेयव्वं, एतेसु पव्वेसु जहालंभं पज्जोसवेयव्वमिति, अपव्वे ण हवति[दशा.नि.71चूर्णिः]*। अत्र पूर्वोक्तान्येकादश पर्वाणि, अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्वाणि ज्ञेयानि, संवत्सरप्रतिक्रमणं तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति । द्रव्यक्षेत्रकालभावस्थापना सम्पदध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते, तत एवावसेया । नवरं कल्पमाश्रित्य जघन्यतो नभस्यसितपञ्चम्या आरभ्य कार्तिकचतुर्मासान्तः सप्ततिदिनमानः, एतावता यदा सप्तत्या अहोरात्रेण चतुर्मासकप्रतिक्रमणं विहितं तदनन्तरं प्रत्यूषे विहर्तव्यं कारणान्तराभावे। तत्सद्भावे तु मार्गशीर्षेणापि सह आषाढमासेनापि च सह षण्मासा इति । यत्पुनरभिवर्धिते वर्षे विंशत्या पर्युषितव्यम् इति अवस्थाननियमविषयमुच्यते तत्सिद्धान्तटिप्पनानामनुसारेण, तत्र हि प्रायो युगमध्ये पोषः युगान्ते चाऽऽषाढो वर्धते तानि च नाधुना सम्यक् ज्ञायन्ते । अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्धते, स तथैव तत्र गणयितव्यः, नान्या कल्पना कार्या, दृष्टं परित्यज्यादृष्टपरिकल्पना न सङ्गता, आम्नायापरिज्ञानात्तु कल्पनापि न निश्चयितव्येति ।

साम्प्रतं तु कालकाचार्याचरणाच्चतुर्थ्यामपि पर्युषणां विदधति, तत्तु विचार्यं शाश्वतपर्वलोपात् अपवाद-स्थाने उत्सर्गप्रवर्तनात् आगमविरोधाच्चेति । ततो भगवदुक्तमेव पुरातनमिति कृत्वा तदेव प्रमाणं कार्यम् । ततश्च कालावग्रहो जघन्यतो भाद्रपदसितपञ्चम्या आरभ्य कार्तिकचतुर्मासान्तः सप्ततिदिनमानः, उत्कर्षतो वर्षायोग्यक्षेत्रान्तराभावादाषाढमासकल्पेन सह वृष्टिसद्भावात् मार्गशीर्षेणापि सह षण्मासा इति ।

द्रव्यक्षेत्रकालभावस्थापना चैवम् - द्रव्यस्थापना-तृणडगलक्षारमल्लकादीनां परिभोगः, सचित्तादीनां परिहारः, तत्र सचित्तद्रव्यं शिक्षो न परिव्राज्यते अतिश्रद्धं राजानं राजामात्यादिकं विना, अचित्तद्रव्यं वस्त्रादिकं न गृह्यते, मिश्रद्रव्यं शैक्षः सोपधिकः एवमाहारविकृतिसंस्तारकादिद्रव्येषु परिभोगपरिहारौ योज्यौ । क्षेत्रस्थापना - सक्रोशं योजनं, कारणेन बालग्लानवैद्यौषधादौ चत्वारि पञ्च वा योजनानि । कालस्थापना - चत्वारो मासा {यच्च}तत्र कल्पते । भावस्थापना - क्रोधादीनां विवेकः ईर्याभाषादिसमितिषु चोपयोग इति कृतं विस्तरेण ।

**[सू.330] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सकोसं जोयणं उग्गहं ओगिण्हित्ता णं चिट्ठिउं अहालंदमवि उग्गहे ।**

**[सू.331] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सकोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतुं पडियत्तए । जत्थ णं नई निच्चोयगा निच्चसंदणा नो से कप्पइ सव्वओ**

**समंता सकोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतुं पडियत्तए । एरवईए कुणालाए जत्थ चक्किया एगं पायं जले किच्चा एगं पायं थले किच्चा एवं चक्किया एवं णं कप्पइ सव्वओ समंता सकोसं जोयणं भिक्खाय-रियाए गंतुं पडियत्तए, एवं नो चक्किया एवं णं नो कप्पइ सव्वओ समंता सकोसं जोयणं गंतुं पडिनियत्तए ।**

[ज.330-331] '**वासावास**'मित्यादि **वर्षावासं पर्युषितानां** स्थितानां **निर्ग्रन्थानां निर्ग्रन्थीनां वा सर्वतश्चतसृषु** दिक्षु **समन्ता**द्विदिक्षु च **सक्रोशं योजनमवग्रहमवगृह्य यथालन्दमपि** स्तोककालमप्यवग्रहे **स्थातुं कल्पते**, न बहिर्लन्दकालमपि स्थातुं कल्पते । तत्रोदकार्द्रो हस्तो यावता शुष्यति तावत्कालो जघन्यलन्दम्, उत्कृष्टं पञ्चाहोरात्रास्तयोरन्तरं मध्यम् । यथा रेफप्रकृतिरप्यरेफप्रकृतिरपीति एवं लन्दमप्य-वग्रहे स्थातुं कल्पते, अलन्दमपि यावत् षण्मासान् एकत्रावग्रहे स्थातुं कल्पते ।

उपाश्रयात्सार्धक्रोशद्वयं चतसृषु दिक्षु ऊर्ध्वाधोमध्यग्रामान् विना गजेन्द्रपदादिगिरेर्मेखलाग्रामस्थितानां तु षट्सु दिक्षु गमनागमनेन पञ्चक्रोशावग्रहः । यच्चानन्तरं विदिक्ष्वित्युक्तं तद्व्यवहारिकदिगपेक्षया, भवन्ति हि ग्रामा मूलग्रामादाग्नेयादिविदिक्षु, नैश्चयिकविदिक्षु चैकप्रदेशात्मकत्वान्न गमनागमनसम्भव इति । अटवीजलादिव्याघाते तु त्रिदिक्को द्विदिक्क एकदिक्को वाऽवग्रहो भावनीयः ।

'**जत्थ णं नदी**' इत्यादि **नित्योदका** नित्यस्तोकजला **नित्यस्पन्दना** सततवाहिनी । **ऐरावती** नाम नदी **कुणालापुर्यां** द्विक्रोशं सदा वहति, तादृशी नदी लङ्घयितुं कल्पते स्तोकजलत्वात् । '**जत्थ चक्किया**' **यत्र शक्नुयात्** '**सिया**' **यद्येकं पादं जले** जलमध्ये निक्षिप्य **एकं** च **पादं स्थले** आकाशे **कृत्वा** द्वाभ्यां पादाभ्यामविलोडयन् **गन्तुं** शक्नुयात् तदा तत्परतः स्थिते ग्रामादौ भिक्षाचर्या **कल्पते**, नान्यथा । एकं पादं जलान्तः क्षिपेदिति द्वितीयं जलादुपर्युत्पाट्य मुञ्चति तदा कल्पते, यत्र च पादद्वयेनापि जलं विलोड्यते तत्र **गन्तुं प्रत्यागन्तुं** च न **कल्पते** इत्यर्थः ।

यत्र च न शक्नुयाद्गत्वा प्रत्यागन्तुं तत्र न गच्छेत् । यत्र जङ्घार्धं यावदुदकं स दकसङ्घट्टः, नाभिं यावल्लेपस्तत्परतो लेपोपरि । ततः ऋतुबद्धे काले भिक्षाचर्यायां यत्र त्रयो दकसङ्घट्टाः वर्षासु च सप्त भवेयुस्तत् क्षेत्रं नोपहन्यते, चतुरादिभिरष्टादिभिश्च तैरुपहन्यते । ते च ऋतुबद्धे गतागतेन षट् वर्षासु च चतुर्दश स्युः । लेपश्चैकोऽपि क्षेत्रमुपहन्ति, लेपोपरि तु किं वाच्यम् । तथा यदि चतुरो मासान् एकद्वित्र्यादिदिनान् वोपोषितः स्थातुं न शक्नोति, तदा जघन्यतोऽपि पूर्वक्रियमाणनमस्कारसहितादेः पौरुष्यादितपोवृद्धिं कुर्यात् इति ।

**[सू.332] वासावासं पज्जोसविताणं अत्थेगतियाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ 'दावे भंते !' एवं से कप्पइ दावित्तए, नो से कप्पइ पडिगाहित्तए ।**

[ज.332] '**अत्थेगइयाण**'मित्यादि **अस्त्येतद्यदेकेषां** साधूनां पुरत **एवमुक्तपूर्वं भवति**, गुरुभिरिति गम्यते, चूर्णौ तु *अत्थेगइया आयरिया [दशा.चू.पृ. 102]* इत्युक्तम् *अत्थं भासेइ आयरियो [आ.नि. 92]* इति वचनात्, अर्थ एवानुयोग एव एकायिता-एकाग्रता अर्थैकायितास्तेषाम् अथवा अस्त्येतत्

यदेकेषामाचार्याणामिदमुक्तं भवति यत् '**दावे भंते**'त्ति हे **भदन्त** ! कल्याणिन् ! साधोर्दावे इति ग्लानाय **दद्याः** *स्वार्थिके णो वा* दापयेर्दद्याः, अशनादिकमानीयेति गम्यते । अनेन च ग्लानदानादेशेनाद्यचतुर्मासकादौ स्वयं मा प्रतिगृह्णीया इत्युक्तम् । **एवमुक्ते** '**से**' **तस्य** साधोः **कल्पते दातु**मर्थाद् ग्लानाय, **न** स्वयं **प्रतिग्रहीतुं** गुरुणाऽननुज्ञातत्वात् ।

**[सू.333] वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगईयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ 'पडिगाहे भंते!' एवं से कप्पइ पडिगाहित्तए, नो से कप्पइ दावित्तए ।**

[ज.333] अथ गुरुणोक्तम् - स्वयं **प्रतिगृह्णीयाः**, ग्लानायान्यो दास्यति न वाऽद्य भोक्ष्यत इति । ततः स्वयं **प्रतिग्रहीतुं कल्पते न** ग्लानाय **दातुम्** ।

**[सू.334] वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगईयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ 'दावे भंते ! पडिगाहे भंते !' एवं से कप्पइ दावित्तए वि पडिगाहित्तए वि ।**

[ज.334] अथ गुरुणोक्तम् - स्याद् **भदन्त**! **दद्याश्च** ग्लानाय **प्रतिगृह्णीयाश्च** यदद्य त्वमक्षमोऽसीति। ततो दानं तस्मै प्रतिग्रहणं च **कल्पते** । अनुक्तः चेद् ग्लानायाऽऽनयति स्वयं वा गृह्णाति, ततः परिष्ठापनिकादोषोऽजीर्णादिना ग्लानत्वं वा मोहोद्भवो वा क्षीरादौ च धरणाधरणे आत्मसंयमविराधनेति ।

**[सू.335] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा हट्ठाणं आरोग्गाणं बलियसरीराणं इमाओ नवरसविगईओ अभिक्खणं अभिक्खणं आहारित्तए, तं जहा–खीरं दहिं नवणीयं सप्पिं तिल्लं गुडं महुं मज्जं मंसं ।**

[ज.335] '**हट्ठाण**'मित्यादि **हृष्टानां** तरुणत्वेन समर्थानाम्, युवानोऽपि केचित्सरोगाः स्युरित्याह- '**आरोगाणं**' क्वचित् आरुग्गाणं ति पाठः तत्राऽऽरोग्यमस्त्येषामित्यभ्रादित्वादप्रत्यये आरोग्यास्तेषाम्, युवानोऽपि नीरोगा अपि केचित्कृशाङ्गाः स्युरित्याह -**बलिकशरीराणाम्**, रसप्रधाना विकृतयो रसविकृतयः, ता **अभीक्ष्णं** पुनः पुनः **आहारयितुं न कल्पन्ते**, रसग्रहणं तासां मोहोद्भवहेतुत्वख्यापनार्थम्, अभीक्ष्णग्रहणं पुष्टालम्बने कदाचित्तासां परिभोगानुज्ञानार्थम्, नवग्रहणं मूलविकृतिख्यापनार्थम् अवान्तरभेदास्तु एकैकस्या बहवो भवन्ति । ननु मद्यादिविकृतिचतुष्टयं यावज्जीवमपि निषिद्धमस्ति तर्हि किमर्थं तदुपादानमिति चेत् ? न किञ्चिदिति ब्रूमः किन्तु सर्वसङ्ग्रहेण जगत्स्थितौ विद्यमानत्वज्ञापनार्थं हेयाहेयविभागप्रदर्शनार्थं च । ततश्चैता अनास्वाद्यविकृतयो न कदाचिदपि साधूनामन्तःपरिभोगार्थमुपादेयाः । यच्चाऽऽचाराङ्गादौ क्वचित् पठ्यते *मच्छं वा मसं वा[आचा.2-1-1-9-393]* तत्तु बाह्यपरिभोगार्थमेव, न तु कदापि अन्तरभ्यवहारार्थं तत्रैव टीकायामन्यच्छेदसूत्रवृत्त्योश्च सविस्तरं भावितत्वात् । अन्यथा सामान्यविशेषावगमो न विधीयते तदाऽनुज्ञापूर्वं सर्वं ग्राह्यमित्यादिवचनाद्धिरण्यादिकमपि साधूनामनुज्ञापूर्वकं ग्रहीतव्यं स्यादिति तु नेष्टम् । ततोऽवबोधसूचकमेवैतद्वाक्यं मन्तव्यम्, न सर्वविकृतिग्रहणरूपमिति कृतं प्रसङ्गेन । नवग्रहणात् कदाचित्पक्वान्नमपि गृह्यते । विकृतयश्च द्विविधाः- सञ्चयिका असञ्चयिकाश्च । तत्र

दुग्धदधिपक्वान्नविकृतयोऽसञ्चयिकाः ग्लानत्वे वा गुरुबालवृद्धतपस्विगच्छोपग्रहार्थं वा श्रावकादरनिमन्त्रणाद्वा ग्राह्याः । घृततैलगुडाख्याः सञ्चयिकाः, ताः प्रतिलाभयन् गृही वाच्यः - महान् कालोऽस्ति ततो ग्लानादिकार्ये ग्रहीष्यामः, स च वदेत्- गृह्णीत चतुर्मासीं यावत् प्रभूताः सन्ति । ततो ग्राह्याः, बालादीनां च देयाः, न तरुणानां निःकारणं देया इत्यादि ।

**[सू.336] वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगतियाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ 'अट्ठो भंते ! गिलाणस्स ?' से य वयिज्जा 'अट्ठो' । से य [1]पुच्छे सिया 'केवईएणं अट्ठो ?' से य वएज्जा 'एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स' । जं से पमाणं वदति से पमाणतो घेत्तव्वे । से य विन्नवेज्जा, से य विन्नवेमाणे लभिज्जा, से य पमाणपत्ते 'होउ, अलाहि' इति वत्तव्वं सिया । से किमाहु भंते ! एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स । सिया णं एवं वयंतं परो वएज्जा 'पडिग्गाहेहि अज्जो ! तुमं पच्छा भोक्खसि वा [2]पाहिसि वा' एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए, नो से कप्पइ गिलाणनीसाए पडिग्गाहित्तए ।**

[ज.336] '**अत्थेगइयाण**'मित्यादि **अस्त्येकेषां** वैयावृत्त्यकरादीना**मेवमुक्तपूर्वं भवति**, गुरुं प्रतीति शेषः, हे **भदन्त !** हे भगवन्नर्थः प्रयोजनं **ग्लानस्य** विकृत्येति काक्वा प्रश्नावगतिः । एवं वैयावृत्त्यकरेणोक्ते '**से य वएज्जा**' **स च** गुरुर्वदेत् **अर्थः**'**से य पुच्छे**'इति तं च ग्लानं वैयावृत्त्यकरः **पृच्छति** क्वचित् से य पुच्छियव्वे इति पाठस्तत्र ग्लानः प्रष्टव्यः, किं पृच्छतीत्याह - '**केवइएणं अट्ठो**' **कियता** विकृतिजातेन क्षीरादिना त**वार्थः** । तेन च ग्लानेन स्वप्रयोजने उक्ते स वैयावृत्त्यकरो गुरोरग्रे ब्रूयात् - '**एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स**' **इयतार्थो ग्लानस्य** । ततो गुरुराह - '**जं से**' इति **यत् स** ग्लानः **प्रमाणं वदति तत्प्रमाणेन** '**से**' इति तद्विकृतिजातं ग्राह्यम्, त्वया '**से य विन्नविज्जा**' **स च** वैयावृत्त्यकरादि**र्विज्ञपयेत्** याचेत गृहस्थपार्श्वात्, विज्ञपिधातुरत्र याच्ञायाम् । **स च** याचमानो **लभते** तद्वस्तु, **तच्च प्रमाणप्राप्तं** पर्याप्तजातं ततश्च '**होउ अलाहि**' त्ति साधुप्रसिद्धस्य इत्थमिति शब्दस्यार्थे भवत्विति पदम् अलाहि त्ति सृतमित्यर्थः *अलाहि निवारणे* इति वचनात्, अन्यन्मा दा **इति वक्तव्यं स्या**द्गृहस्थं प्रति । ततः स गृही प्राह - '**से किमाहु भंते**'! **अथ किमाहुर्भदन्ताः**! किमर्थं सृतमिति ब्रुवते भवन्त इत्यर्थः । साधुराह - '**एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स**' **एतावतार्थो ग्लानस्य** । '**सिया**' कदाचित् एतं साधु**मेवं वदन्तं परो** दाता गृही **वदेत्,** किं तदित्याह - '**अज्जो**' इत्यादि हे **आर्य ! प्रतिगृहाण त्वं**, **पश्चा**द्यदधिकं तत्त्वं **भोक्ष्यसे** भुञ्जीथाः पक्वान्नादि **पास्यति** पिबेर्द्रवं क्षीरादि, क्वचित् पाहिसिस्थाने दाहिसि त्ति दृश्यते, तच्चातीव हृद्यम्, स्वयं वा भुञ्जीथाः अन्यसाधोर्वा दद्या इति । **एव**मुक्ते गृहिणा '**से**' तस्य साधोः **कल्पते प्रतिग्रहीतुम्**, **न** पुन**र्ग्लाननिश्रया** गार्ध्यात् स्वयं ग्रहीतुम् । ग्लानार्थं याचितं मण्डल्यां नानेयमित्याकूतम् ।

**[सू.337] वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थि णं थेराणं तहप्पगाराइं कुलाइं कडाइं पत्तियाइं थेज्जाइं वेसासियाइं सम्मयाइं बहुमयाइं अणुमयाइं भवंति तत्थ से नो कप्पइ अद्दक्खु वइत्तए 'अत्थि ते आउसो !**

---

1 'पुच्छियव्वे सि°' इति Kh - मुद्रिते ।

2 'वा देहि°' इति मुद्रिते ।

**इमं वा इमं वा ?' । से किमाहु भंते! सड्ढी गिही गिण्हइ वा तेणियं पि कुज्जा ।**

[ज.337] '**तहप्पगाराइं**' ति **तथाप्रकाराणि** अजुगुप्सितानि गृहिणां **कुलानि** '**कडाइं**' ति **कृतानि** तैरन्यैर्वा श्रावकत्वं दाने वा श्राद्धत्वं वा ग्राहितानि, '**पत्तियाइं**' ति **प्रत्ययितानि** प्रीतिकराणि वा, '**थिज्जाइं**' ति स्थैर्यमस्त्येष्विति **स्थैर्याणि** प्रीतौ दाने च स्थिराणि, '**वेसासियाइं**'ति ध्रुवं लप्स्येऽहं तत्रेति विश्वासो येषु तानि **विश्वासिकानि**, '**संमयाइं**' ति सम्मतयतिप्रवेशानि, '**बहुमयाइं**' ति बहवोऽपि साधवो-नैको द्वौ वा मता येषु बहूनां वा गृहमनुष्याणां मतः साधुप्रवेशो येषु तानि च बहुमतानि, '**अणुमयाइं**'ति **अनुमतानि** दातुमनुज्ञातानि अणुरपि-क्षुल्लकोऽपि मतो येषु सर्वसाधुसाधारणत्वान्न पुनर्मुखं दृष्ट्वा तिलकं कर्षन्तीत्यणुमतानीति वा येषु कुलेषु '**से**' तस्य साधोः '**अदक्खु**' इति याच्यं **वस्त्वदृष्ट्वा न कल्पते वक्तुं**, यथा**ऽस्ति ते आयुष्मन् !** अमुकममुकं वा वस्त्विति । कुतो ? यतः '**सड्ढी**'ति श्रद्धावान् दानवासितको **गृही** तत्साधुयाचितं वस्तु **गृह्णीत** मूल्येन क्रीणीयात्, मूल्याभावे यत्यर्थं **स्तैन्यमपि कुर्यात्** चौर्येणाप्यानीय तद्वस्तु वितरेत्, तद्वस्तु ओदनसक्तुमण्डकादि पूर्वक्वथिते उष्णोदके वा प्रक्षिपेत्, आपणाद्वा आनयेत्, प्रामित्यकं वा कुर्यादिति । कृपणगृहेषु त्वदृष्ट्वापि याचने न तथा दोष इत्यर्थः ।

**[सू.338] वासावासं पज्जोसवियस्स निच्चभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगं गोयरकालं गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पवेसित्तए वा, नऽन्नत्थ आयरियवेयावच्चेण वा उवज्झायवेयावच्चेण तवस्सिगिलाणवेयावच्चेण खुड्डएणं वा अवंजणजायएणं ।**

[ज.338] '**निच्चभत्तिअस्से**'त्यादि नित्यमेकाशनिनः, '**एगं गोयरकालं**'ति एकस्मिन् गोचरचर्याकाले सूत्रपौरुष्यनन्तरमित्यर्थः, '**गाहावाइकुलं**' गृहस्थवेश्म '**भत्ताए वा**' भक्तार्थं '**पाणाए वा**' पानार्थम्, '**णन्नत्थे**'त्यादि णङ्कारो वाक्यादावलङ्कारार्थः **अन्यत्र च आचार्यवैयावृत्त्यात्** अन्यत्र तद्वर्जयित्वा इत्यर्थः, आचार्यवैयावृत्त्यं हि यद्येकवारं भुक्ते न कर्तुं पारयति तदा द्विरपि भुङ्क्ते, तपसो हि वैयावृत्त्यं गरीयः । एवमुपाध्यायादिष्वपि । '**अव्वंजणजायएणं**'ति न व्यञ्जनानि बस्तिकूर्चकक्षारोमाणि जातानि यस्यासावव्यञ्जनजातस्ततः स्वार्थे कः अव्यञ्जनजातकात् क्षुल्लकादन्यत्र, यावदद्यापि तस्य व्यञ्जनानि नोद्भिद्यन्ते तावत्तस्य द्विरपि भोजनं न दुष्यतीत्यर्थः । अत्र च आचार्यश्च वैयावृत्त्यमस्तीत्यभ्रादित्वाद-प्रत्यये वैयावृत्त्यश्च-वैयावृत्त्यकरः आचार्यवैयावृत्त्यौ ताभ्यामन्यत्र । एवमुपाध्यायादिष्वपि ज्ञेयम् । आचार्योपाध्यायतपस्विग्लानक्षुल्लकानां द्विर्भक्तस्याप्यनुज्ञातत्वादेवमपि व्याख्येयम् ।

**[सू.339] वासावासं पज्जोसवियस्स चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स अयं एवइए विसेसे-जं से पाओ निक्खम्म पुव्वामेव वियडगं भोच्चा पेच्चा पडिग्गहगं संलिहिया संपमज्जिया, से य संथरिज्जा कप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्तए, से य नो संथरिज्जा एवं से कप्पइ दोच्चं पि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.339] '**अयं एवइए**' इत्यादि **अयं** वक्ष्यमाण **एतावान् विशेषो यत् स** आचार्योपाध्यायग्लान-क्षुल्लकेभ्योऽन्यः साधुश्चतुर्थभोजी प्रातर्न चरमपौरुष्यां **निष्क्रम्यो**पाश्रयादावश्यक्या निर्गत्य **पूर्वमेव**

**विकट**मुद्गमादिशुद्धं **भुक्त्वा** प्रासुकाहारं **पीत्वा** च तक्रादिकं संसृष्टकल्पं वा **पतद्ग्रहं** पात्रं **संलिख्य** निर्लेपीकृत्य **सम्प्रमृज्य** च प्रक्षाल्य '**से य**' त्ति यदि **संस्तरे**न्निर्वहेत्तदा तत्र **तेनैव भक्तार्थेन** भोजनेन परिवसेत् । **अथ न संस्तरेत्** स्तोकत्वात् तदा '**दुच्चंपि**'त्ति द्वितीयवेलायामपि भिक्षेत् इत्यर्थः ।

**[सू.340] वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति दो गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

**[सू.341] वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

**[सू.342] वासावासं पज्जोसवियस्स विकिट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वे वि गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.340-342] **षष्ठभक्तिकस्य द्वौ गोचरकालौ** येन स कल्येऽप्युपवासं कर्ता । **अष्टमभक्तिकस्य त्रयो**, न च प्रातरटितमेव धारयेत् सञ्चयसंसक्तिसर्पाघ्राणादिदोषप्रसङ्गात् । '**विकिट्ठभत्तियस्स**'त्ति अष्टमादूर्ध्वं तपो विकृष्टभक्तम्, '**सव्वे गोयरकाल**'त्ति चतुरोऽपि प्रहरान् ।

**[सू.343] वासावासं पज्जोसवियस्स निच्चभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वाइं पाणगाइं पडिगाहित्तए ।**

**[सू.344] वासावासं पज्जोसवियस्स चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिगाहेत्तए, तं जहा–उस्सेइमं संसेइमं चाउलोदगं ।**

**[सू.345] वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिगाहेत्तए, तं जहा–तिलोदए तुसोदए जवोदए ।**

**[सू.346] वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणयाइं पडिगाहित्तए, तं जहा–आयामए सोवीरए सुद्धवियडे ।**

**[सू.347] वासावासं पज्जोसवियस्स विकिट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगे उसिण[1]वियडे पडिगाहेत्तए, से वि य णं असित्थे, णो वि य णं ससित्थे ।**

**[सू.348] वासावासं पज्जोसवियस्स भत्तपडियाइक्खित्तस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगे उसिणोदए पडिगाहित्तए, से वि य णं असित्थे नो चेव णं ससित्थे, से वि य णं परिपूते नो चेव णं अपरिपूए, से वि य णं परिमिए नो चेव णं अपरिमिए[2] ।**

[ज.343-348] एवमाहारविधिमुक्त्वाऽथ पानकविधिमाह - '**सव्वाइं पाणगाइं**'ति पानैषणोक्तानि वक्ष्यमाणानि वोत्स्वेदिमादीनि । **तत्रोत्स्वेदिमं** पिष्टजलं पिष्टभृतहस्तक्षालनजलं वा1, **संस्वेदिमं** संसेकिमं वा यत्पर्णाद्युत्काल्य शीतोदकेन सिच्यते तत् 2, '**चाउलोदगं**'ति तन्दुलधावनोदकम् 3 । **तिलोदकं**

1 '°सिणोदए वि°' इति मुद्रिते ।

2 अत्र 'से वि य णं बहुसंपण्णे नो चेव णं अबहुसंपण्णे' इत्यधिकः पाठः Kh-मुद्रिते ।

महाराष्ट्रादिषु निस्त्वचिततिलधावनजलम् 1, **तुषोदकं** व्रीह्यादिधावनम् 2, **यवोदकं** यवधावनम् 3। **आयामं** कोद्रवश्रावणम् 1, **सोवीरं** काञ्जिकम् 2, **शुद्धविकटमुष्णोदकं** वर्णान्तरादिप्राप्तं शुद्धजलं वा केवलोष्णजलं तु उसिणवियडे इत्यनेनैवोक्तम् 3 । '**उसिणवियडे**' इति उष्णजलम्, तदप्यसिक्थं यतः प्रायेणाष्टमोर्ध्वं तपस्विनो देहं देवता अधितिष्ठति । '**भत्तपडियाइक्खित्तस्स**'त्ति प्रत्याख्यातभक्तस्यानशनिन इत्यर्थः । '**परिपूए**' इति वस्त्रगलितम् **अपरिपूते** तृणकाष्ठादेर्गले लगनात्, तदपि **परिमितम्** अन्यथाऽजीर्णं स्यात् । क्वचित् से वि य णं बहुसंपन्ने इत्यपि दृश्यते, तत्र ईषदपरिसमाप्तं सम्पूर्णं बहुसम्पूर्णं *नाम्नां प्राग्बहुत्वे* इति बहुप्रत्ययः, अतिस्तोकतरे हि तृण्मात्रस्यापि नोपशम इति ।

**[सू.349] वासावासं पज्जोसवियस्स संखादत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति पंच दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए पंच पाणगस्स अहवा चत्तारि भोयणस्स पंच पाणगस्स अहवा पंच भोयणस्स चत्तारि पाणगस्स, तत्थ णं एगा दत्ती लोणासायणमेत्तमवि पडिग्गाहिया सिया कप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्तए, नो से कप्पइ दोच्चं पि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.349] '**संखादत्तिअस्स**'त्ति सङ्ख्चयोपलक्षिता दत्तयो यस्येति सङ्ख्यादत्तिकस्तस्य दत्तिपरिमाणवत इत्यर्थः । '**लोणासाय**'त्ति लवणं किल स्तोकं दीयते, यदि तावन्मात्रं भक्तपानस्य गृह्णाति तदा सापि दत्तिर्गण्यते, अतो **लवणास्वादनमात्रमपि** गृहीता दत्तिः स्यात् । पञ्चेत्युपलक्षणम्, तेन चतस्रस्तिस्रो द्वे एका षट् सप्त वा यथाभिग्रहं वाच्याः । कदाचित्तेन पञ्च दत्तयो भोजनस्य लब्धास्तिस्रश्च पानकस्य ततः पानकसत्का अवशिष्टास्ता भोजने निक्षिपति वर्धयतीत्यर्थः, भोजनसत्का वा पानके इत्येवं समावेशो न कल्पते इत्यर्थः ।

**[सू.350] वासावासं पज्जोसवियाणं नो से कप्पति निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा जाव उवस्सयाओ सत्तघरंतरं संखडिए[1] सन्नियट्टचारिस्स एत्तए । एगे पुण एवमाहंसु–नो कप्पइ जाव उवस्सयाओ परेणं संखडिं सन्नियट्टचारिस्स एत्तए । एगे पुण एवमाहंसु–नो कप्पइ जाव उवस्सयाओ परंपरेण संखडिं सन्नियट्टचारिस्स एत्तए ।**

[ज.350] '**जाव उवस्सयाओ**' इत्यादि **उपाश्रयात्** शय्यातरगृहादारभ्य **यावत्सप्तगृहान्तरे** सप्तगृह-मध्ये '**संखडिए**'**त्ति** संस्क्रियत इति संस्कृतिरोदनपाकस्ता**मेतुं** गन्तुं **न कल्पते**, पिण्डपातार्थं तत्र न गच्छे-दित्यर्थः । तेषां गृहाणां सन्निहिततया साधुगुणहृतहृदयत्वेनोद्गमादिदोषसम्भवात् । एतावता शय्यातरगृह-मन्यानि च षट् आसन्नगृहाणि वर्जयेदित्युक्तम् । कस्य न कल्पत ? इत्याह -'**संनियट्टचारिस्स**' त्ति निषिद्धगृहेभ्यः सन्निवृत्तः संश्चरतीति सन्निवृत्तचारी प्रतिषिद्धवर्जकः साधुस्तस्य । बहवस्त्वेवं व्याचक्षते -सप्तगृहान्तरं जनसङ्कुलजेमनवारलक्षणां गन्तुं न कल्पते, इदं च युक्तं प्रतिभासते । द्वितीयमते शय्यातरगृहमन्यानि च सप्त गृहाणि वर्जयेदित्युक्तम् । तृतीयमते शय्यातरगृहं सप्त चान्यानि वर्जयेदित्युक्तं '**उवस्सयाओ परंपरेण**'त्ति उपाश्रयात्परतः सप्तगृहान्तरमेतुं न कल्पते, शय्यातरगृहादनन्तरमेकं गृहं ततः

1 '°डिसन्नि°' इति मुद्रिते । '°खडिं स°' इति Kh ।

सप्त गृहाणि इति परम्परतः ।

**[सू.351] वासावासं पज्जोसवियस्स नो कप्पइ पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स कणगफुसियमित्तमवि वुट्ठिकायंसि निवयमाणंसि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.351] '**पाणिपडिग्गहियस्स**'त्ति जिनकल्पिकादेः । '**कणगफुसिया**' फुसारमात्रम् अवश्यायो-महिका वर्षं वा वृष्टिकायो-ऽप्कायवृष्टिः ।

**[सू.352] वासावासं पज्जोसवियस्स पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स नो कप्पइ अगिहंसि पिंडवायं पडिग्गाहित्ता पज्जोसवित्तए, पज्जोसवेमाणस्स सहसा वुट्ठिकाए निवडिज्जा देसं भोच्चा देसमायाय पाणिणा पाणिं परिपिहित्ता उरंसि वा णं निलिज्जिज्जा, कक्खंसि वा णं समाहडिज्जा, अहाछन्नाणि वा लयणाणि उवागच्छिज्जा, रुक्खमूलाणि वा उवागच्छिज्जा, जहा से पाणिंसि दते वा दतरए वा दगफुसिया वा नो परियावज्जइ ।**

[ज.352] '**अगिहंसि**' त्ति अनाच्छादिते आकाशे इत्यर्थः, **पिण्डपात**माहारं **प्रतिगृह्य** '**पज्जोसवित्तए**' आहारयितुं **न कल्पते** । कदाचिदर्धभुक्तेऽपि वृष्टिपातः स्यात् । ननु जिनकल्पिकादयो देशोनदश-पूर्वधरत्वेनातिशयज्ञानिनस्तैश्च प्रागेवोपयोगः कृतो भविष्यति तत्कथमर्धभुक्तेऽपि वृष्टिसम्भवः ? सत्यं छाद्मस्थिकोपयोगस्तथा वा स्यादन्यथा वा इति न दोषः, '**पज्जोसवेमाणस्स**'त्ति आकाशे भुञ्जानस्य यदि वर्षेत् तदा पिण्डपातस्य देशमेकं **भुक्त्वा देशं** चाऽऽदाय **पाणि**माहारैकदेशसहितं **पाणिना** द्वितीयहस्तेन **पिधाया**ऽऽच्छाद्य **उरसि** हृदयाग्रे **निलीयेत** निक्षिपेद्वा तम् इति तं साहारं पाणिं **कक्षायां** वा **समाहरेद्** अन्तर्हितं कुर्याद्, एवं च कृत्वा **यथाछन्नानि** गृहिभिः स्वनिमित्तमाच्छादितानि **लयनानि** गृहाणि **उपागच्छेत्** **वृक्षमूलानि वा यथा 'से'** तस्य **पाणौ** एकादीनि **न पर्यापद्यन्ते** न विराध्यन्ते न पतन्ति च । तत्र दकं बहवो बिन्दवः, दकरजो बिन्दुमात्रं, दकफुसिका फुसारमात्रम् अवश्याय इत्यर्थः ।

**[सू.353] वासावासं पज्जोसवियस्स पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स जं किंचि कणगफुसियमित्तं पि निवडइ नो से कप्पइ भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.353] उक्तमेवार्थं निगमयन्नाह - '**वासवासं**' इत्यादि । '**कणगफुसियमित्तं पि**' कणो-लेशस्तन्मात्रं कं-पानीयं फुसिया-फुसारमात्रं कणकस्य फुसिआ कणकफुसिआ ।

**[सू.354] वासावासं पज्जोसवियस्स पडिग्गहधारिस्स भिक्खुस्स नो कप्पइ वग्घारियवुट्ठिकायंसि गाहा-वइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, कप्पइ से अप्पवुट्ठिकायंसि संतरुत्तरंसि गाहावइकुलं भत्ताए पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ।**

[ज.354] उक्तः पाणिपात्रस्य विधिः, इदानीं पतद्ग्रहधारिणस्तमाह -'**पडिग्गहधारिस्से**'त्यादि **पतद्ग्रह-धारिणः** स्थविरकल्पिकस्य '**वग्घारियवुट्ठिकायंसि**'त्ति प्रलम्बधारावृष्टिः यस्यां वा वर्षाकल्पः श्च्योतति तीव्रं वा वर्षाकल्पं भित्त्वाऽन्तःकायमार्द्रयति वृष्टिस्तत्र विहर्तुं न कल्पते । अपवादात्त्वशिवादिकारणैर्भिक्षाका-

लाद्यकालमेघाद्ययोग्यक्षेत्रस्थाः श्रुतपाठकास्तपस्विनः क्षुदसहाश्च भिक्षार्थं पूर्वपूर्वाभावेनौर्णिकेनौष्ट्रिकेन जीर्णेन सौत्रेण वा कल्पेन तथा तालपत्रेण पलाशपत्रेण वा प्रावृता विहरन्तीति । '**संतरुत्तरंसि**' आन्तरः सौत्रकल्पः उत्तर और्णिकस्ताभ्यां प्रावृतस्याल्पवृष्टौ गन्तुं कल्पते । अप्रावृतानां गच्छतां सतां सहसा वृष्ट्याऽप्कायो गृहीतपानभक्तयोः पर्यापद्येत इति हेतोः अथवा अन्तर इति कल्पः उत्तरो वर्षाकल्पः कम्बल्यादिः ।

**[सू.355] वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स निग्गंथीए वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप-विट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवएज्जा कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा अहे वियडगिहंसि वा अहे रुक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए, तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पच्छाउत्ते भिलंगसूवे कप्पइ से चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए नो से कप्पइ भिलिंगसूवे पडिग्गाहित्तए, तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते भिलिंगसूवे पच्छाउत्ते चाउलोदणे कप्पइ से भिलिंगसूवे पडिग्गाहित्तए नो से कप्पइ चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए, तत्थ से पुव्वागमणेणं दो वि पुव्वाउत्ताइं वट्टंति कप्पंति से दो वि पडिगाहित्तए, तत्थ से पुव्वागमणेणं दो वि पच्छाउत्ताइं नो से कप्पंति दो वि पडिग्गाहित्तए । जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते से कप्पइ पडिगाहित्तए, जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते से नो कप्पइ पडिग्गाहित्तए ।**

[ज.355] '**निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवइज्जा**' इति स्थित्वा स्थित्वा वर्षति । '**अहे उवस्सयंसि वा**' आत्मनः साम्भोगिकानामितरेषां वा उपाश्रयस्याधस्तदभावे **विकटगृहे** आस्थानमण्डिकायां यत्र ग्राम्यपरिषदुपविशति, तत्र हि स्थितो वेलां वृष्टेः स्थितास्थितस्वरूपं च जानात्यशङ्कनीयश्च स्यात् **वृक्षमूले** वाऽनिर्गलकरीरादौ ।

तत्र विकटगृहे वृक्षमूले वा स्थितस्य साधोः '**पुव्वागमणेणं**'ति आगमनात्पूर्वकालम् अथवा पूर्वं साधुरागतः पश्चाद्दायको राद्धुं प्रवृत्त इति **पूर्वागमनेन** हेतुना **पूर्वायुक्तस्तन्दुलोदनः कल्पते, पश्चादायुक्तो भिलिङ्गसूपो न कल्पते** । तत्र पूर्वायुक्तः साध्वागमात् पूर्वमेव स्वार्थं गृहस्थैः पक्तुमारब्धः । साध्वागते च यः पक्तुमारब्धः स पश्चादायुक्तः, स च न कल्पते उद्गमादिदोषसम्भवात् । पूर्वायुक्तस्तु कल्पते तदभावात् । भिलिङ्गसूवो मसूरदालिरुडिददालिर्वा सस्नेहसूपो वा । एवं शेषालापकद्वयमपि व्याख्येयम् । सङ्ग्रहमाह - '**जे से तत्थे**'त्यादि स्पष्टम् । अत्रैके वदन्ति-यच्चुल्ह्यामारोपितं तत्पूर्वायुक्तम् । अन्ये त्वाहुः - यत्समीहितं तत्पूर्वायुक्तम्, समीहितं नाम यत्पाकार्थमुपढौकितम् । एतौ च द्वावप्यनादेशौ । आदेशस्तु यत्साधोरागमनात्पूर्वं गृहिभिः स्वार्थमुपस्क्रियमाणं तत्पूर्वायुक्तम्, तथा चाऽऽगमः -

*पुव्वाऊत्तारुहिअं केसिंचि समीहियं तु जं तत्थ ।*
*एए न हुंति दुन्निवि पुव्वपवत्तं तु जं तत्थ ॥ [व्यव.भा. 2477]*

अनादेशे त्वयं हेतुः -

*पुव्वारुहिते य समीहिते य किं छुब्भई न खलु अन्नं ।*
*तम्हा जं खलु उचिअं तं तु पमाणं न इयरं तु ॥ [ व्यव.भा.2478]*

*बालगपुच्छाईहिं णाउं आदरमणादरेहिं च ।*
*जं जोग्गं तं गिण्हइ दव्वपमाणं च जाणिज्जा ॥ [व्यव.भा.2479]* इति ।

**[सू.356] वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवएज्जा कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा अहे वियडगिहंसि वा अहे रुक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए, नो से कप्पइ पुव्वगहिएणं भत्तपाणेणं वेलं उवाइणावित्तए, कप्पइ से पुव्वामेव वियडगं भोच्चा पिच्चा पडिग्गहगं संलिहिय संलिहिय पमज्जिय पमज्जिय एगायगं भंडगं कट्टु जाव सेसे सूरिए जेणेव उवस्सए तेणेव उवागच्छित्तए, नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए ।**

[ज.356] '**वेलं उवायणावित्तए**'त्ति **वेलामतिक्रमयितुम्** । तत्र च तिष्ठतः कदाचिद्वर्षं नोपरमति तत्र का मेरा ? इत्याह -'**वियडग**'मित्यादि **विकट**मुद्गमादिविशुद्धं **भुक्त्वा पीत्वा** च एकत्रायतं शुद्धभाण्डकं पात्रकाद्युपकरणं **कृत्वा** वपुषा सह प्रावृत्य वर्षत्यप्यनस्तमिते सूर्ये वसतावागन्तव्यमेव । बहिर्वसतां बहवो दोषा एकाकिनस्तावदात्मपरोभयसमुत्थाः, साधवो वसतिस्था अधृतिं कुर्युरिति ।

**[सू.357] वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवइज्जा कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा जाव उवागच्छित्तए, तत्थ नो कप्पइ एगस्स य निग्गंथस्स एगाए य निग्गंथीए एगयओ चिट्ठित्तए, तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स दोण्ह य निग्गंथीणं एगयओ चिट्ठित्तए, तत्थ नो कप्पइ दोण्ह निग्गंथाणं एगाए य निग्गंथीए एगयओ चिट्ठित्तए, तत्थ नो कप्पइ दोण्ह य निग्गंथाणं दोण्ह य निग्गंथीणं एगयओ चिट्ठित्तए, अत्थि य इत्थ केइ पंचमए खुड्डए वा खुड्डिया वा अन्नेसिं वा संलोए सपडिदुवारे एवण्हं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए ।**

**[सू.358] वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवएज्जा कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा उवागच्छित्तए, तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स एगाए य अगारीए एगयओ चिट्ठित्तए, एवं चउभंगो, अत्थि या इत्थ केइ पंचमए थेरे वा थेरिया वा अन्नेसिं वा संलोते सपडिदुवारे एवं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए ।**

**[सू.359] एवं चेव निग्गंथीए अगारस्स य भाणियव्वं ।**

[ज.357-359] तत्र विकटगृहवृक्षमूलादौ कथं स्थेयमित्याह -'**नो कप्पइ एगस्से**'त्यादि शङ्कादिदोष-सद्भावात् । एकाकित्वं कथं तस्येति चेत् ? उच्यते, सङ्घाटिक उपोषितोऽसुखितो वा स्यात्, कारणिको वा स एकाकीति । '**अत्थि य इत्थ केइ**'त्ति **अस्ति चात्र कश्चित्पञ्चमः**, अत्थियाइं थ केइ त्ति पाठे तु थ इति वाक्यालङ्कारे अत्थिया इति भाषामात्रमस्ति चेत्यर्थः, '**खुड्डए वा खुड्डियाइ वे**'त्ति क्षुल्लकः साधूनां क्षुल्लिका साध्वीनाम्, साधुर्ह्यात्मना द्वितीय उत्सर्गतः, संयत्यस्तु त्र्यादयः *षट्कर्णो भिद्यते मन्त्र* इति न्यायात् । '**अन्नेसिं वा संलोए**'त्ति यत्र क्षुल्लकादिर्न स्यात् तत्रान्येषां ध्रुवकर्मिकलोहकारादीनां वर्षेऽप्यमुक्तस्वकर्मणां **संलोके** दृष्टिपथे तत्रापि **सप्रतिद्वारे** सर्वतो द्वारे सर्वगृहाणां वा द्वारे '**एवं ण्हं**'ति

**एवं कल्पते स्थातुं ण्ह**मिति वाक्यालङ्कारे । एवं निर्ग्रन्थस्यागारीसूत्रे निर्ग्रन्थ्या अगारसूत्रे च ज्ञेयम् । अगारमस्यास्तीत्यभ्रादित्वादप्रत्ययोऽगारो गृही ।

**[सू.360] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अपरिन्नएणं अपरिन्नयस्स अट्ठाए असणं वा ४ जाव पडिग्गाहित्तए, से किमाहु भंते !? इच्छा परो अपडिन्नते भुंजिज्जा, इच्छा परो न भुंजिज्जा ।**

[ज.360] '**अपरिण्णएण**'मिति 'त्वं मम योग्यमशनाद्यानये'रि**त्यपरिज्ञप्तेना**भणितेन 'अहं तव योग्यम-शनाद्याऽऽनयिष्ये' **इत्यपरिज्ञप्तस्यानुक्तस्यार्थाय** कृते **अशना**दि **परिग्रहीतुं न कल्पते** । अत्र प्रश्नयति - '**से किमाहु भंते**'त्ति अत्र **किं** कारणं **भदन्ता** आहुः ? गुरुराह - '**इच्छे**'त्यादि इच्छा चेदस्ति यस्मै आनीतं स **भुञ्जीत**, इच्छा-अभोजनरुचिश्चेत्तदा **न भुञ्जीत** । यदि च परोऽनिच्छन् दाक्षिण्याद्भुङ्क्ते ततो ग्लानिस्तस्याजीर्णादिना, न भुङ्क्ते चेत्तदा वर्षासु जलहरितबाहुल्येन स्थण्डिलदौर्लभ्यात् परिष्ठापनादोष-स्तस्मात् पृष्ट्वाऽऽनेयमिति ।

**[सू.361] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा उदउल्लेण वा ससणिद्धेण वा काएणं असणं वा ४ आहारित्तए ।**

**[सू.362] से किमाहु भंते !? सत्त सिणेहायतणा, तं जहा–पाणी पाणीलेहा नहा नहसिहा भमुहा अहरोट्ठा उत्तरोट्ठा । अह पुण एवं जाणेज्जा–विगओअए से काए छिन्नसिणेहे एवं से कप्पइ असणं वा ४ आहारित्तए ।**

[ज.361-362] '**उदउल्लेण**'मित्यादि **उदकार्द्रेण** गलद्बिन्दुयुक्तेन **सस्निग्धेन** ईषदुदकयुक्तेन '**से किमाहु भंते**' स भगवांस्तीर्थकरः किमत्राह कारणम् ? गुरुराह - 'सत्ते'त्यादि **सप्त स्नेहायतनानि** जलावस्थानानि येषु जलं चिरेण शुष्यति -**पाणी** हस्तौ1 **पाणिरेखा** आयुरेखादयस्तासु चिरमुदकं तिष्ठतीति2 **नखा** अखण्डा3 **नखशिखा**स्तदग्रभागाः4 **भ्रूः** नेत्रोर्ध्वरोमाणि5 **अहरुट्ठा** दाढिका6 **उत्तरोट्ठा** श्मश्रूणि7 । **विगतोदको** बिन्दुरहितः **छिन्नस्नेहः** सर्वथा उद्धानः ।

**[सू.363] वासावासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा इमाइं अट्ठ सुहुमाइं, जाइं छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वाइं पासियव्वाइं पडिलेहि–यव्वाइं भवंति, तं जहा–पाणसुहुमं पणगसुहुमं बीयसुहुमं हरियसुहुमं पुप्फसुहुमं अंडसुहुमं लेणसुहुमं सिणेहसुहुमं ।**

**[सू.364] से किं तं पाणसुहुमे ? पाणसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा– किण्हे नीले लोहिए हालिद्दे सुक्किले, अत्थि कुंथू अणुद्धरी नामं जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा नो चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जा अट्ठिया चलमाणा छउमत्थाणं चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जा छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वा पासियव्वा पडिलेहियव्वा भवइ, से त्तं पाणसुहुमे १ ।**

**[सू.365] से किं तं पणगसुहुमे ? पणगसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–किण्हे नीले लोहिए हालिद्दे सुक्किले, अत्थि पणगसुहुमे तद्दव्वसमाणवन्नए नामं पण्णत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवति, से तं पणगसुहुमे २ ।**

**[सू.366] से किं तं बीयसुहुमे ? बीयसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–किण्हे जाव सुक्किल्ले, अत्थि बीयसुहुमे कण्णियासमाणवन्नए नामं पण्णत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ, से त्तं बीयसुहुमे ३ ।**

**[सू.367] से किं तं हरियसुहुमे ? हरियसुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–किण्हे जाव सुक्किल्ले, अत्थि हरियसुहुमे पुढवीसमाणवन्नए, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ, से त्तं हरियसुहुमे ४ ।**

**[सू.368] से किं तं पुप्फसुहुमे ? पुप्फसुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–किण्हे जाव सुक्किल्ले, अत्थि पुप्फसुहुमे रुक्खसमाणवन्ने नामं पन्नत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवति, से तं पुप्फसुहमे ५ ।**

**[सू.369] से किं तं अंडसुहुमे ? अंडसुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–उद्दंसंडे उक्कलियंडे पिपीलियंडे हलियंडे हल्लोहलियंडे, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ, से त्तं अंडसुहुमे ६ ।**

**[सू.370] से किं तं लेणसुहुमे ? लेणसुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–उत्तिंगलेणे भिंगुलेणे उज्जुए तालमूलए संबोक्कावट्टे नामं पंचमे, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ, से त्तं लेणसुहुमे ७ ।**

**[सू.371] से किं तं सिणेहसुहुमे ? सिणेहसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–उस्सा हिमए महिया करए हरतणुए, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ, से त्तं सिणेहसुहुमे ८ ।**

[ज.363-371] '**अट्ठ सुहुमाइं**' इत्यादि सूक्ष्मत्वादल्पाधारत्वाच्च **सूक्ष्माणि, अभीक्ष्णं** पुनः पुनर्यत्र स्थाननिषीदनादाननिक्षेपादि करोति, तानि **ज्ञातव्यानि** सूत्रोपदेशेन **द्रष्टव्यानि** चक्षुषा ज्ञात्वा दृष्ट्वा च **प्रतिलेखितव्यानि** परिहर्तव्यतया विचारणीयानि । '**त**'मिति **तद्यथा –प्राणसूक्ष्मं पञ्चविधं प्रज्ञप्तं** तीर्थकरगणधरैः, एकैकस्मिन् वर्णे सहस्रशो भेदाः बहुप्रकाराश्च संयोगास्ते सर्वेऽपि पञ्चसु कृष्णादिष्ववतरन्ति। प्राणसूक्ष्मं तु द्वीन्द्रियादयः प्राणा यथाऽ**नुन्धरी कुन्थुः**, स हि चलन्नेव विभाव्यते, न स्थितः सूक्ष्मत्वात्। पनक उल्ली, स च प्रायः प्रावृषि भूमीकाष्ठभाण्डादिषु जायते, यत्रोत्पद्यते तद्द्रव्यसमवर्णश्च, '**नामं पन्नत्ते**' इति नामेति प्रसिद्धौ । **बीजसूक्ष्मं** कणिकाशाल्यादिबीजानां मुखमूले नहीति रूढा नखिका । **हरितसूक्ष्मं** नवोद्भिन्नं पृथ्वीसमवर्णं हरितं तच्चाल्पसंहननत्वात् स्तोकेनापि विनश्यति । **पुष्पसूक्ष्मं** वटोदुम्बरादीनां तत्समवर्णत्वादलक्ष्यं तच्चोच्छ्वासेनापि विराध्यते । **अण्डसूक्ष्मम्** उद्दंशा-मधुमक्षिकामत्कुणाद्यास्तेषा-

मण्ड**मुद्दंशाण्डम्**, **उत्कलिकाण्डं** लूतापुटाण्डं, **पिपीलिकाण्डं** कीटिकाण्डं, हलिका-गृहकोकिला ब्राह्मणी वा तस्या अण्डं **हलिकाण्डं**, हल्लोहलिया अहिल्लोडी सरडी कक्किडीत्येकार्थास्तस्या अण्डम्, एतानि हि सूक्ष्माणि स्युः । लयनमाश्रयः सत्त्वानां यत्र कीटकाद्यनेकसूक्ष्मसत्त्वा भवन्तीति **लयनसूक्ष्मं** यथा उत्तिङ्गा-भूयका गर्दभाकृतयो जीवास्तेषां लयनं भूमावुत्कीर्णगृहम् **उत्तिङ्गलयनं**, भृगुः-शुष्कराजी जलशोषानन्तरं केदारादिषु स्फुटिता दालिरित्यर्थः, '**उज्जुए**'त्ति बिलं, तालमूलकाकारम् अधः पृथु उपरि सूक्ष्मविवरम्, **शम्बूकावर्तं** भ्रमरगृहम् । **स्नेहसूक्ष्मम्** '**ओस**'त्ति अवश्यायो यः खात्पतति, **हिमं** स्त्यानोदबिन्दुः, **महिका** धूमरी, **करको** घनोपलः, **हरतनु**र्भूनिःसृतस्तृणाग्रबिन्दुरूपो यो यवाङ्कुरादौ दृश्यते। अष्टास्वपि '**से तं**' तदेतत् ।

**[सू.372] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु इच्छिज्जा गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा उवज्झायं वा थेरं वा पवत्तिं वा गणिं वा गणहरं वा गणावच्छेययं वा जं वा पुरओ काउं विहरइ, कप्पइ से आपुच्छिउं आयरियं वा जाव जं वा पुरओ काउं विहरइ-इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, ते य से वियरेज्जा एवं से कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताए वा जाव पविसित्तए वा, ते य से नो वियरेज्जा एवं से नो कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, से किमाहु भंते!? आयरिया पच्चवायं जाणंति ।**

[ज.372] अथ ऋतुबद्धवर्षालक्षणकालद्वयसामान्यसामाचारी वर्षासु विशेषेणोच्यते - '**अणापुच्छित्ता**' इति **अनापृच्छ्या**नुज्ञाममार्गयित्वेत्यर्थः, कम् ? इत्याह - '**आयरियं वा**'इत्यादि आचार्यः सूत्रार्थव्याख्याता दिगाचार्यो वा, उपाध्यायः सूत्राध्यापकः, स्थविरो ज्ञानादिषु सीदतां स्थिरीकर्ता उद्यतानामुपबृंहकश्च, प्रवर्तको ज्ञानादिषु प्रवर्तयिता । तत्र ज्ञाने पठ गुणय शृणु उद्देशादीन् कुरु इति, दर्शने दर्शनप्रभावकान् सम्मत्यादितर्कानभ्यस्येत्यादि, चारित्रे प्रायश्चित्तमुद्वह अनेषणां दुःप्रत्युपेक्षितां मा कृथाः यथाशक्त्या द्वादशधा तपो विधेहीत्यादि । गणी यस्य पार्श्वे आचार्याः सूत्राद्यभ्यस्यन्ति गणिनो वान्ये आचार्याः सूत्राद्यर्थमुपसम्पन्नाः, गणधरस्तीर्थकृच्छिष्यादिः, गणावच्छेदको यः साधून् गृहीत्वा बहिः क्षेत्रे आस्ते गच्छार्थं क्षेत्रोपधिमार्गणादौ प्रधावनादिकर्ता सूत्रार्थोभयवित् **यं वा** स्पर्धकाधिपतित्वेन सामान्यसाधुमपि **पुरस्कृत्य विहरति** । '**ते य से वियरेज्जा**' ते चाऽऽचार्यादयः '**से**' **तस्य वितरेयु**रनुज्ञां दद्युः । '**से किमाहु भंते**' इति प्राग्वत् । आचार्य आह - '**आयरिया पच्चवाया जाणंती**'ति बहुवचनान्ता गणस्य संसूचका भवन्तीति न्याया**दाचार्या**दयः **प्रत्यपाय**मपायपरिहारं च **जानन्ति** । प्रतिकूलापायस्य प्रत्यपाय इति विग्रहेणापायपरिहारेऽपि प्रत्यपायशब्दो वर्तते । अनापृच्छ्य गतानां वृष्टिर्वा पतेत् प्रत्यनीकाः शैक्षस्वजनाश्चोपद्रवेयुः कलहो वा केनचिदाचार्यबालग्लानक्षपकयोग्यं वा ग्राह्यमभविष्यत् ते चातिशयशालिनः तत्सर्वं विदित्वा तस्मै अदापयिष्यन् ।

**[सू.373] एवं विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा अन्नं वा जं किं पि पओयणं, एवं गामाणुगामं दूइज्जित्तए ।**

[ज.373] एवं विहारभूमिः चैत्यवन्दनकरणार्थं जिनगृहे गमनं *विहारो जिनसद्मनि* इति वचनात्, यद्यपीदमस्ति केवलं साधूनां धर्मकृत्यं परं गुर्वादेशेनैव कर्तव्यं तपोवदिति ख्यापनार्थं पृथगुपादानम् । विचारभूमिः शरीरचिन्ताद्यर्थं गमनम् । '**अन्नं वा जं किंचि पओयण**'मिति **अन्यद्वा यत्किञ्चित्प्रयोजनं** लेपनसीवन-लिखनादि उच्छ्वासादिवर्जं तत्सर्वमापृच्छ्यैव कर्तव्यमिति तत्त्वं, गुरुपारतन्त्र्यस्यैव ज्ञानादिरूपत्वात्, यतः -

*नाणस्स होइ भागी थिरयरओ दंसणे चरित्ते अ ।*
*धन्ना आवकहाए गुरुकुलवासं न मुंचंति ॥ [वि.भा. 3459]*

'**एवं गामाणुगामं दूइज्जित्तए**' त्ति **एवं** पूर्वोक्तप्रकारेणैव **ग्रामानुग्रामं** प्रति **द्रोतुं** हिण्डितुं भिक्षाद्यर्थं कारणे बालग्लानादौ, अन्यथा हि वर्षासु ग्रामानुग्रामं हिण्डनमनुचितमेव ।

**[सू.374] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अन्नयरिं विगइं आहारित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेययं वां जं वा पुरओ कट्टु विहरइ, कप्पइ से आपुच्छित्ता णं तं चेव–इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे अन्नयरिं विगइं आहारित्तए, तं एवइयं वा एवतिक्खुत्तो वा, ते य से वियरेज्जा एवं से कप्पइ अन्नयरिं विगइं आहारित्तए, ते य से नो वियरेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नयरिं विगइं आहारित्तए, से किमाहु भंते ! ? आयरिया पच्चवायं जाणंति ।**

[ज.374] '**एवइयं वा**' **इयतीं वा** '**एवइअखुत्तो व**' त्ति **एतावतो वारान्,** अत्र प्रत्यपाया अस्या विकृतेर्ग्रहणे अस्यायमपायो मोहोद्भवादिर्ग्लानत्वादस्य गुणो वेति ।

**[सू.375] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छेज्जा अन्नयरिं तेइच्छं आउट्टित्तए, तं चेव सव्वं ।**

[ज.375] '**तेगिच्छिं**' ति वातिकश्लैष्मिकसान्निपातिकरोगानामातुरवैद्यप्रतिचारकभैषज्यरूपां चतुष्पदां **चिकित्सां,** तथा चोक्तम् -

*भिषक् द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ।*
*चिकित्सितस्य निर्दिष्टं प्रत्येकं तच्चतुर्गुणम् ॥*

*दक्षो विज्ञातशास्त्रार्थो दृष्टकर्मा शुचिभिषक् ।*
*बहुकल्पं बहुगुणं सम्पन्नं योग्यमौषधम् ॥*

*अनुरक्तः शुचिर्दक्षो बुद्धिमान् परिचारकः ।*
*आढ्यो रोगी भिषग्वश्यो ज्ञापकः सत्त्ववानिति ॥*

'**आउट्टित्तए**' त्ति कारयितुम्, आउट्टिधातुरागमिकः करणार्थे ।

**[सू.376] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अन्नयरं ओरालं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए, तं चेव सव्वं ।**

[ज.376] '**तवोकम्मं**'ति अर्धमासादि तपः, अत्र प्रत्यपायान् 'समर्थोऽसमर्थो वायं ? वैयावृत्त्यकरो

वायं ? अन्यो वा वैयावृत्त्यकरोऽस्ति नास्ति वा ? पारणकयोग्यं [1]लाजातरलादिसन्धुक्षणमस्ति नास्ति वे?'त्यादिकान् आचार्या एव विदन्ति ।

**[सू.377] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अपच्छिममारणंतियसंलेहणाजूसणाझूसिए भत्तपाण-पडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरित्तए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, असणं वा ४ आहारित्तए वा, उच्चारपासवणं वा परिट्ठावित्तए सज्झायं वा करित्तए धम्मजागरियं वा जागरित्तए, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता तं चेव ।**

[ज.377] अपश्चिमं - चरमं मरणमपश्चिममरणम्, न पुनर्यत्प्रतिक्षणम् आयुर्दलिकानुभवलक्षणमावीचिमरणम्, तदेवान्तेऽपश्चिममरणान्तस्तत्र भवा आर्षत्वादुत्तरपदवृद्धौ अपश्चिममारणान्तिकी, सा चासौ संलेखना च, संलिख्यते-कृशीक्रियते शरीरकषायाद्यनयेति संलेखना, सा च द्रव्यभावभेदभिन्ना, *चत्तारि विगईनिज्जूहियाइं* इत्यादिकाऽपश्चिमा मारणान्तिकसंलेखना, तस्याः '**जूसण**'त्ति जोषणं-सेवा तया '**झूसिए**'त्ति क्षपित-शरीरोऽत एव **प्रत्याख्यातभक्तपानः पादपोपगतः** कृतपादपोपगमनोऽत एव **कालं** जीवितकालं मरणकालं वा**ऽनवकाङ्क्षन्** अनभिलषन् **विहर्तुमिच्छेत्** । अत्र प्रत्यापाया - अयं निस्तारको न वा, समाधिपानकं निर्यामका वा सन्ति न वेत्यादयः । क्षपकस्य ह्युदरमलशोधनार्थं त्वगेलानागकेशरतमालपत्रमिश्र-शर्कराक्वथितशीतलक्षीरलक्षणं समाधिपानकं प्रसङ्गान्मिलितं पाययित्वा पूगफलादिद्रव्यैर्मधुरविरेचः कार्यते । निर्यामकास्त्वग्वर्तनाद्यर्थम् अष्टचत्वारिंशत् '**परिट्ठवित्तए**'त्ति व्युत्सृष्टुं रात्रिप्रथमचरमयामयो-**र्धर्मजागरिकाम्** आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयधर्मध्यानविधानादिना जागरणं धर्मजागरिका तां **जागरितु**मनुष्ठातुम् । प्रत्यापायाश्चेह यथा कार्यं तद्विघातरूपाः स्वयमेवोहनीयाः ।

**[सू.378] वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा अन्नयरिं वा उवहिं आयावित्तए वा पयावित्तए वा, नो से कप्पइ एगं वा अणेगं वा अपडिण्णवित्ता गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा आहारित्तए, बहिया विहारभूमीं वा वियारभूमिं वा सज्झायं वा करित्तए, काउस्सग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए, अत्थि या इत्थ केइ अहासन्निहिए एगे वा अणेगे वा कप्पइ से एवं वदित्तए-इमं ता अज्जो ! तुमं मुहुत्तगं जाणाहि जाव ताव अहं गाहावइकुलं जाव काउसग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए, से य से पडिसुणिज्जा एवं से कप्पइ गाहावइ तं चेव, से य से नो पडिसुणिज्जा एवं से नो कप्पइ गाहावइकुलं जाव काउस्सग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए ।**

[ज.378] '**वत्थं चे**'त्यादि व्याख्यातार्थं गणिसम्पदध्ययने, नवरं पादप्रोञ्छनं-रजोहरणम् **आतापयितु-**मेकवारम् आतापनायां प्रदातुं **प्रतापयितुं** पुनः पुनः आतपे दातुम्, अन्यथा कुत्सापनकादयो दोषाः मलयोगात्तत्र तथाविधप्रयत्नं विना जन्तूत्पत्तिदोषवारणाय वस्त्राद्युपधौ आतपे दत्ते बहि**र्गन्तुं** यावत्कायोत्सर्गेऽपि **स्थातुं न कल्पते** सहसावृष्टिभयाद् । यदि सन्निहितो यतिस्तिष्ठति तमुपधिं च

1 लाज = भुंजेलुं धान, ममरा । तरला = कांजी, ओसामण ।

भलापनवशाच्चिन्तयति, तदा कल्पते । चिन्तकाभावे तु जलक्लेदचोरहरणाप्कायविराधनोपकरणहा-न्यादयो दोषाः । स्थानम् ऊर्ध्वस्थानलक्षणं कायोत्सर्गादिकम् । '**इमं ता**' इत्यादि **इदं** वस्त्रादि **तावन्मुहूर्तकं** मुहूर्तमात्रं **जानीहि** विभावय । '**जाव ताव**' त्ति भाषामात्रं यावदर्थे स च सन्निहितः साधुः '**से**' **तस्य** उपधिचिन्तनेच्छाकारकर्तुः **प्रतिशृणुया**दङ्गीकुर्याद्वचनमिति शेषः, शेषं स्पष्टम् ।

**[सू.379] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अणभिग्गहियसेज्जासणियं होत्तए, आयाणमेतं, अणभिग्गहियसेज्जासणियस्स अणुच्चाकुइयस्स अणट्ठाबंधिस्स अमियासणियस्स अणातावियस्स असमियस्स अभिक्खणं अभिक्खणं अप्पडिलेहणासीलस्स अप्पमज्जणासीलस्स तहा तहा णं संजमे दुराराहए भवइ; अणायाणमेतं, अभिग्गहियसेज्जासणियस्स उच्चाकुवियस्स अट्ठाबंधिस्स मियासणियस्स आयाविस्स समियस्स अभिक्खणं अभिक्खणं पडिलेहणासीलस्स पमज्जणासीलस्स तहा तहा णं संजमे सुआराहए भवइ ।**

[ज.379] '**अणभिग्गहिअ**' इत्यादि अनभिगृहीतशय्यासन एवानभिगृहीतशय्यासनिकः स्वार्थे इक् तथाविधेन **भवितुं न कल्पते** न युक्तम् । वर्षासु यतिना मणिकुट्टिमेऽपि पीठफलकाभिग्रहवतैव भाव्यमित्यर्थः, अन्यथा शीतलायां भूमौ शयने कुन्थ्वादिप्राणिविराधनाऽजीर्णादिदोषाश्च स्युः, आसने तु कुन्थ्वादिसङ्घट्टननिषिद्यामालिन्याप्कायवधादयः । '**आयाणमेयं**'ति कर्मणो दोषाणां वा **आदान**-मुपादानकारण**मेतद**नभिगृहीतशय्यासनिकत्वम् । अथवा अभिग्रहो-निश्चयः स्वपरिगृहीतमेव शय्यासनं भोक्तव्यं, नान्यपरिगृहीतमिति । आदानत्वमेव दृढयति -'**अणभिग्गहिय**' इत्यादि **अनभिगृहीतशय्या-सनिकस्ये**त्युक्तवत् । **अनुच्चाकुचिकस्य** *कुच परिस्पन्दे* अकुचाऽपरिस्पन्दा निश्चला यस्य कम्बिका न चलन्ति, अदृढबन्धने हि सङ्घर्षात् मत्कुणकुन्थ्वादिवधः स्यात्, उच्चा हस्तादि यावद्येन पिपीलिकावधो न स्यात् सर्पादिर्वा न दशेत्, उच्चा चासावकुचा च उच्चाकुचा कम्बादिमयी शय्या, सा विद्यते यस्यासौ उच्चाकुचिको, न उच्चाकुचिकः अनुच्चाकुचिको नीचसपरिस्पन्दशय्याक**स्यानर्थकबन्धिनः** पक्षमध्येऽनर्थकं निःप्रयोजनमेकवारोपरि द्वौ त्रीन् चतुरो वारान् कम्बासु बन्धान् ददाति चतुरुपरि बहूनि वाऽङ्कानि बध्नाति, तथा च स्वाध्यायपलिमन्थादयो दोषाः । यदि चैकाङ्गिकं चम्पकादिपट्टं लभ्यते तदा तदेव ग्राह्यं बन्धनादिक्रियापरिहारात् । **अमितासनिकस्य** अबद्धासनस्य स्थानात् स्थानान्तरं हि मुहुर्मुहुः सङ्क्रामन् सत्त्ववधे प्रवर्तते । अनेकानि वा आसनानि सेवमान**स्यानातापिनः** संस्तारपात्रादीनामातपेऽ-दातुस्तत्र च पनकसंसक्त्यादयो दोषाः, उपभोगे च जीववधः, उपभोगाभावे चोपकरणमधिकरणमेवेति । **असमितस्ये**र्यादिषु तत्रेर्यापरिष्ठापनिकासमित्योरसमितः सत्त्वान् हन्ति भाषासमितावसमितश्च सम्पातिमान् एषणासमितावसमितस्त्वयमप्कायः परिणतो न वेति स्नेहच्छेदं न वेत्ति आदाननिक्षेपणासमितावसमितः पुनः स्थाननिषीदनादाननिक्षेपादौ जीवान् विराध्यतीति **अभीक्ष्णम् अभीक्ष्णं** पुनः पुनः **अप्रतिलेखनाशीलस्य** चक्षुषाऽदृष्टवा **अप्रमार्जनाशीलस्य** रजोहरणादिनाऽप्रमृज्य स्थानादिकर्तुः दुःप्रतिलेखितदुःप्रमार्जितमप्य-प्रतिलेखिताप्रमार्जितमेव, नञः कुत्सार्थत्वात् । **तथा तथा** तेन तेनानभिगृहीतशय्यासनिकत्वादिना प्रकारेण **संयमो दुराराध्यो** दुष्प्रतिपाल्यो **भवति** । यथा यथा तानि स्थानानि करोति तथा तथा संयमाराधना

दुष्करा भवतीत्यर्थः ।

इत्यादानमुक्त्वाऽनादानमाह - '**अणायाणमेवे**'ति कर्मणोऽसंयमस्य वा**ऽनादानमेतत्** शय्यासनाभिग्रहवता भाव्यम्, उच्चाकुचा च शय्या कर्तव्या, अर्थाय सकृच्च पक्षान्तर्बन्धनीया, अङ्गकानि चत्वारि कार्याणि, बद्धासनेन भाव्यम् । यथा यथैतानि स्थानानि करोति **तथा तथा संयमः स्वाराधितः** सुकरो वा **भवति**, ततश्च मोक्षः ।

**[सू.380] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ उच्चारपासवणभूमीओ पडिलेहित्तए, न तहा हेमंतगिम्हासु जहा णं वासावासेसु, से किमाहु भंते ! ? वासावासएसु णं ओसन्नं पाणा य तणा य बीया य पणगा य हरियायणा य भवंति ।**

[ज.380] '**तओ उच्चारपासवणभूमीओ**' त्ति अनधिसहिष्णोस्तिस्रोऽन्तः अधिसहिष्णोश्च बहिस्तिस्रः दूरव्याघातेन मध्यमाः तद्व्याघातेनाऽऽसन्नाः इत्यासन्नमध्यदूरभेदात्तिस्रः, आर्षत्वात् ग्रीष्मशब्दो बहुत्वे स्त्रीलिङ्गश्च । '**ओसन्न**'मित्यादि ओसन्नं प्रायेण बाहुल्येनेत्यर्थः । **प्राणाश्च** शङ्खनकेन्द्रगोपककृम्यादयः **तृणानि** घासाः **बीजानि** तत्तद्वनस्पतीनाम् अधुनोद्भिन्नानि किशलयानि **हरितानि** बीजेभ्यो जातानि **पनका** उल्लयः, अथवा 'पाणायतणा य'त्ति प्राणानां जीवानामायतनानि स्थानभूतानि बीजानि पनकहरितानि चेति योज्यम्, क्वचिच्च पाणाययण त्ति दृष्टं तत्र प्राणायतनमिति व्याख्येयम् ।

**[सू.381] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ मत्तगाइं गिण्हित्तए, तं जहा–उच्चारमत्तए पासवणमत्तए खेलमत्तए ।**

[ज.381] '**तओ मत्तय**'त्ति **त्रीणि मात्रकाणि,** तदभावे हि वेलातिक्रमणे वेगधारणे आत्मविराधना । अत्र चूर्णिः- *बाहिं णितस्स गुम्मियादिगहणं तेण मत्तए वोसिरित्ता बाहिं णित्ता परिट्ठवेइ, पासवणे वि अभिग्गहितो धरेइ, तस्सासइ जो जाहे वोसिरइ सो ताहे धरेइ ण निक्खिवइ सुवंतो वा उच्छंगे ठितयं चेव उवरिं दंडएण वा दोरेण बंधति गोसे असंसत्तीयाए भूमीए अन्नत्थ परिट्ठवेइ त्ति [दशा. चू. पृ. 107] ।*

**[सू.382] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ गोलोमप्पमाणमित्ते वि केसे तं रयणिं उवायणावित्तए, पक्खिया आरोवणा, मासिते खुरमुंडे, अद्धमासिए कत्तरिमुंडे, छम्मासिए लोए, संवच्छरिए वा थेरकप्पे ।**

[ज.382] '**परं पज्जोसवणाओ**'त्ति **पर्युषणातः परम्** आषाढशुक्लपौर्णमासीचतुर्मासकदिवसादनन्तरं **गोलोमप्रमाणमात्रा अपि केशा** न स्थापनीयाः, आसतां प्रलम्बाः यतः *धुवलोओ उ जिणाणं निच्चं थेराण वासा[दशा.नि.89]*स्विति वचनात्, याव**त्तां रजनीं** भाद्रपदसितपञ्चमीरात्रिं सांवत्सरिक-प्रतिक्रमणमर्यादाभूतां **ना**तिक्रमेत्, पञ्चम्या रात्रेरर्वागेव लोचं कारयेत् । अयमभिप्रायो - यदि समर्थस्तदा वर्षासु यथाकेशवृद्धि लोचं कारयेत्, असमर्थोऽपि तां रात्रिं नोल्लङ्घयेत्, पर्युषणापर्वण्यवश्यं लोचं

विना प्रतिक्रमणस्याकल्प्यत्वात् । **'उवायणावित्तए'**त्ति **अतिक्रमयितुम्** । केशेषु ह्यप्कायो लगति, स च विराध्यते । तत्सङ्गाच्च षट्पदिकाः सम्मूर्च्छन्ति ताश्च कण्डूयमानः खण्डयति नखक्षतं वा शिरसि करोति इति गोलोममात्रा अपि केशाः स्थापयितुं न कल्पन्ते । यदि च क्षुरेण मुण्डापयति कर्तर्या वा कल्पयति तदा आज्ञाभङ्गोऽनवस्था मिथ्यात्वं संयमात्मनोर्विराधना च षट्पदिकाश्छिद्यन्ते नापितश्च पश्चात्कर्म करोति अपभ्राजना च शासनस्य । तस्माल्लोच एव श्रेयान् । यदि चासहिष्णोर्लोचे कृते ज्वरादिरुपद्रवो वा कस्यचित् बालो वा रुद्यात् धर्मं वा त्यजेत्ततो न तस्य लोचः कार्यः, क्षुरेण मुण्डनीयः स इत्येतदेवाऽऽह - **'अज्जेण'**मित्यादि **आर्येण** साधुना **क्षुरमुण्डेन वा लुञ्चितशिरोजेन वा भवितव्यं स्यात्** । **'लुक्क'**त्ति लुञ्चिताः शिरोजाः केशा यस्य स तथा तेन अपवादतो बालग्लानादिना क्षुरमुण्डेन उत्सर्गतो लुञ्चितशिरोजेनेत्यर्थः, केवलं प्रासुकोदकमात्मना गृहीत्वा शिरः प्रक्षाल्य नापितस्यापि हस्तक्षुरक्षालनाय तदेव देयमिति यतना । यस्तु क्षुरेणापि कारयितुमक्षमो व्रणादिमच्छिरा वा, तस्य केशाः कर्तर्या कल्पयितव्याः । **'पक्खियारोवण'**त्ति इदं च सूत्रं पूर्वालापकार्थसङ्ग्रहणायैवाऽऽहुः । पाक्षिकं बन्धदानं, संस्तारकदवरकाणां पक्षे पक्षे बन्धा मोक्तव्याः प्रतिलेखयितव्याश्चेत्यर्थः, अथवा आरोपणा नाम प्रायश्चित्तं, तद्धि पक्षे पक्षे समादेयम्, इयं तु रीतिः साधूनां सार्वकालिकी, वर्षासु तु विशेषतः । **'मासए खुरमुण्डे'**त्ति मासे मासेऽसहिष्णुना मुण्डनं कारणीयम् । **'अद्धमासिए कत्तरिमुंडे'**त्ति यदि कर्तर्या कारयति तदा पक्षे पक्षे कारणीयम् । क्षुरकर्तर्योश्च लोचे प्रायश्चित्तं निशीथवर्णितं यथासङ्ख्यं लघुगुरुमासलक्षणं देयम् । **'छम्मासिए लोए संवच्छरिए वा थेरकप्पो'**त्ति **षाण्मासिको लोचः** स्थविराणां वृद्धानां जराजर्जरत्वेनासामर्थ्याद्दृष्टिरक्षार्थं वा अर्थात्तरुणानां चातुर्मासिकः, संवत्सरो-वर्षारात्रः *संवच्छरं वा वि परं पमाणं बीयं च वासं न तहिं वसिज्जा[दश.चूलिका2-11]* इति वचनात्, ततः संवत्सरे-वर्षासु भवः **सांवत्सरिको वा** लोचः स्थविरकल्पस्थितानां, वर्षासु हि जिनकल्पिकस्थविरकल्पिकानां ध्रुवो लोच इति, वाशब्दो विकल्पार्थः, अपवादतो नित्यलोचाकरणेऽपि पर्युषणापर्वण्यवश्यं लोचः कार्य इति सूचयति। अथवैष सर्व आपृच्छ्य भिक्षाचर्यागमनविकृतिग्रहणादिर्मात्रकावसानः सांवत्सरिको वर्षावाससम्बन्धी **स्थविरकल्पः** स्थविरमर्यादा, वाशब्दः किञ्चिज्जिनकल्पिकानामपि सामान्यमिति पक्षान्तरं सूचयति, प्रायस्तु स्थविराणामेवायं कल्प इत्यर्थः ।

**[सू.383] वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वदित्तए, जो णं निग्गंथो वा निग्गंथी वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ से णं 'अकप्पेणं अज्जो ! वयसी'ति वत्तव्वे सिया, जो णं निग्गंथो वा निग्गंथी वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ से णं निज्जूहियव्वे सिया ।**

[ज.383] **'परं पज्जोसवणाओ'**त्ति पर्युषणाकृतानन्तरम्, **'अहिगरणं' अधिकरणं** राटिस्तत्करं वचनमपि अधिकरणं **'वइत्तए'**त्ति **वक्तुम्, यश्च वदति** तत् **सोऽकल्पेन** हे **आर्य** ! अकल्पेन अनाचारेण **वदसीति वक्तव्यः** यतः पर्युषणादितोऽर्वाक् पर्युषणादिने वा यदधिकरणमुत्पन्नं तत्पर्युषणायां क्षामितं यच्च त्वं

पर्युषणातः परमप्यधिकरणं वदसि सोऽयमकल्प इति भावः, '**निज्जूहियव्वे सिया**' इति ताम्बूलिकपत्र-दृष्टान्तेन गच्छान्निष्क्राम्यः स्यात् यतः स स्वयं नष्टः परान्नाशयति, उपशान्तोपस्थितस्य च मूलं दातव्यम् ।

**[सू.384] वासवासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अज्जेव कक्खडे कडुए वुग्गहे समुप्पज्जिज्जा सेहे राइणियं खामिज्जा, राइणिए वि सेहं खामिज्जा, खमियव्वं खमावेयव्वं, उवसमियव्वं उवसमावेयव्वं, सम्मुइसंपुच्छणाबहुलेणं होयव्वं, जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा, जो न उवसमइ तस्स नत्थि आराहणा, तम्हा अप्पणा चेव उवसमियव्वं, से किमाहु भंते !? उवसमसारं खु सामण्णं ।**

[ज.384] '**इह खलु**' इत्यादि **इहे**ति प्रवचने, **खलु**र्वाक्यालङ्कारेऽद्यैव पर्युषणादिने **कक्खडः** उच्चैःशब्दः **कटुको** जकारमकारादिरूपो **विग्रहः** कलहः **समुत्पद्येत**, **शैक्षो**ऽवमरात्निकः **रात्निकं** रत्नाधिकं, यद्यपि रत्नाधिकः प्रथमं सामाचारीवितथकरणेऽपराद्धस्तथापि शैक्षेण रात्निकः क्षमणीयः, अथवा शैक्षोऽपुष्टधर्मा तदा **रात्निक**स्तं प्रथमं **क्षमयति** । तस्मात्**क्षमयितव्यं** स्वयमेव **क्षमयितव्यः** परः, अव्यक्तत्वान्नपुंसकत्वं यथा किं तस्या गर्भे जातमितिवत् । तथा **उपशमितव्य**मात्मना उपशमः कर्तव्यः, **उपशमयितव्यः** परः

*जं अज्जियं समीपत्तएहिं तवनियमबंभमइएहिं ।*
*मा हु तयं कलहंता उल्लिंचह सागपत्तेहिं ॥*

*जं अज्जियं चरित्तं देसूणाए य पुव्वकोडीए ।*
*तं पि कसाइअमित्तो हारेइ नरो मुहुत्तेणं ॥ [बृ.भा. 2715]*

इत्यादिभिरुपदेशैः '**सम्मुइ**' शोभना मतिः रागद्वेषरहिता तया तत्पूर्वया सम्पृच्छना सूत्रार्थेषु ग्लानानां वा तद्बहुलेन **भवितव्यम्** । रागद्वेषौ विहाय येन सार्धमधिकरणमासीत् तेन सह सूत्रार्थसम्प्रश्नः कर्तव्यः तदुदन्तश्च सोढव्यः । नन्वेकतरस्य क्षमयतोऽपि यद्येको नोपशाम्यति तदा का गतिरित्याह - '**जो उवसमइ**' इत्यादि **य उपशाम्यति** उपशमयति वा कषायान् **तस्यास्त्याराधना** ज्ञानादीनाम्, विपर्ययस्तु **यो न उपशाम्यति नास्ति तस्याऽऽराधना** । कुत एतद् ? यस्मात् इत्यध्याहारः, '**सामन्नं**' श्रमणभावः **उपशमसारम्** उपशमप्रधानं **खु**र्निश्चये,

*सामन्नमणुचरंतस्स कसाया जस्स उक्कडा हुंति ।*
*मन्नामि उच्छुपुप्फं व निप्फलं तस्स सामन्नं ॥ [दश.नि.302]*

इति वचनात् । इयं च सामाचारी सर्वदापि सदृशैव, परं बद्धकालत्वाद्विशेषतश्चतुर्मासके वार्षिके ।

**[सू.385] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ उवस्सया गिन्हित्तए-वेउव्विया पडिलेहा साइज्जिया पमज्जणा ।**

[ज.385] साम्प्रतम् उपाश्रयविधिमाह- '**तओ उवस्सया**' इत्यादि वर्षा**सूपाश्रयास्त्रयो**ः ग्राह्याः संसक्तजलप्लावनादिभयात् । '**त**'मिति पदं तत्रेत्यर्थे सम्भाव्यते । '**वेउव्विया पडिलेहा**'त्ति क्वचिच्च

वेउव्विया य पडिलेहा इति दृश्यते, उभयत्रापि पुनः पुनरित्यर्थः, '**साइज्जिया पमज्जणा**'इति आर्षे जे *भिक्खू हत्थकम्मं करेइ करेंतं वा साइज्जिइ[नि. 1-1]* त्ति वचनात् साइज्जिधातुरास्वादने वर्तते, तत उपभुज्यमानो य उपाश्रयः स कयमाणे कडे त्ति न्यायात् साइज्जिउ त्ति भण्यते, तत्सम्बन्धिनी **प्रमार्जना** साइज्जिया । यस्मिन्नुपाश्रये स्थितास्तं प्रातः प्रमार्जयन्ति, पुनर्भिक्षां गतेषु साधुषु, पुनर्मध्याह्ने, पुनः प्रतिलेखनाकाले तृतीययामान्ते इति वारचतुष्टयं प्रमार्जयन्ति वर्षासु, ऋतुबद्धे त्रिः । अयं च विधिरसंसक्ते, संसक्ते तु पुनः पुनः प्रमार्जयन्ति । शेषोपाश्रयद्वयं तु प्रतिदिनं प्रतिलिखन्ति प्रत्यवेक्षन्ते 'मा कोऽपि तत्र स्थास्यति ममत्वं वा करिष्यती'ति । तृतीयदिवसे पादप्रोञ्छनकेन प्रमार्जयति, अत उक्तम् - वेउव्विया पडिलेहा त्ति, क्वचित् साइज्जिया पडिलेह त्ति दृश्यते तत्रापि प्रतिलेखनाप्रमार्जनयोरैक्यविवक्षया स एवार्थः ।

**[सू.386] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अन्नयरिं दिसं वा अणुदिसं वा अवगिज्झिय भत्तपाणं गवेसित्तए, से किमाहु भंते !? ओसन्नं समणा वासासु तवसंपउत्ता भवंति, तवस्सी दुब्बले किलंते मुच्छिज्ज वा पवडिज्ज वा तामेव दिसं वा अणुदिसं वा समणा भगवंतो पडिजागरंति ।**

[ज.386] '**अन्नयरि**'मित्यादि **अन्यतरां दिशं** पूर्वादिका**मनुदिशं** विदिशमाग्नेयादिका**मवगृह्ण**ोद्दिश्याहममुकां दिशमनुदिशं वा यास्यामीत्यन्यसाधुभ्यः कथयित्वा **भक्तपानं गवेषयितुं** विहर्तुं **कल्पते** । '**से किमाहु भंते**' त्ति किमत्र कारणम् ? आचार्य आह - '**ओसन्नं**' प्रायेण **श्रमणा भगवन्तो वर्षासु तपःसम्प्रयुक्ताः** प्रायश्चित्तवहनार्थं संयमार्थं स्निग्धकाले मोहजयार्थं वा षष्ठादितपश्चारिणो **भवन्ति** । ते च **तपस्विनो दुर्बलास्तपसैव** कृशाङ्गा, अत एव **क्लान्ताः** सन्तो **मूर्च्छेयुर्वा प्रपतेयुर्वा**, तत्र मूर्च्छा-इन्द्रियमनोवैकल्यं प्रपतनं-दौर्बल्यात्प्रस्खल्य भूमौ पतनम्, **तामेव दिशमनुदिशं वा श्रमणा भगवन्तः प्रतिजाग्रति** प्रतिचरन्ति गवेषयन्ति । अयं भावार्थो - भक्ताद्यर्थं ग्रामादौ यस्यां दिशि विदिशि वा गच्छेयुस्तां गुर्वादिभ्यः कथयित्वा गच्छन्ति, येन तेषां तत्र गतानां तपःक्लमादिना मूर्च्छितानां प्रतिपतितानां वा पाश्चात्त्याः साधवस्तस्यां दिशि विदिशि वाऽभ्येत्य सारां कुर्वन्ति, अकथयित्वा गतानां दिगपरिज्ञानात् कथं ते सारां कुर्युरिति ।

**[सू.387] वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा जाव चत्तारि पंच जोयणाइं गंतुं पडियत्तए, अंतरा वि से कप्पइ वत्थए, नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए ।**

[ज.387] '**जाव चत्तारि पंच वा**' इत्यादि वर्षाकल्पौषधिवैद्यार्थं ग्लानसाराकरणार्थं वा याव'च्चत्तारि पंच जोयणाणि'त्ति **चत्वारि पञ्च वा योजनानि गत्वा** प्रतिनिवर्तेत तत्प्राप्तौ तदैव व्याघुट्टेत, न तु यत्र लब्धं तत्रैव वसेत्, स्वस्थानं प्राप्तुमक्षमश्चा**न्तरापि** वसेद्, एवं हि वीर्याचार आराधितो भवति । यत्र दिने वर्षाकल्पादि लब्धं, तद्दिनरात्रिं तत्रैव नातिक्रमेत् । यस्यां वेलायां तल्लब्धं, तस्यामेव वेलायां निर्गत्य बहिस्तिष्ठेत् । पुष्टालम्बने तु तादृशे तत्रापि वसेदिति हृदयम् । इह सामाचारीपरिकथनेऽनुक्तान्यपि कानिचिद्वाक्यानि द्रव्यक्षेत्रकालभावनायां ग्रन्थान्तरोक्तानि दृश्यन्ते, तान्यप्यत्र वाच्यानि इति ।

**[सू.388] इच्चेइयं संवच्छरियं थेरकप्पं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएणं फासित्ता पालित्ता सोभित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालित्ता अत्थेगइया समणा णिग्गंथा तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, अत्थेगइया दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, अत्थेगइया तच्चेणं भवग्गहणेणं जाव अंतं करेंति, सत्तट्ठ भवग्गहणाइं नाइक्कमंति ।**

[ज.388] सामाचारीमभिधाय तत्पालनफलमाह - '**इच्चेइय**'मित्यादि **इति**रुपप्रदर्शने, **एतत्पू**र्वोक्तं **सांवत्सरिकं** वर्षारात्रिकं **स्थविरकल्पं** यद्यपि किञ्चिज्जिनकल्पिकानामपि सामान्यं तथापि भूम्ना स्थविराणाम् एव अत्र सामाचारी-स्थविरकल्पिकमर्यादा, **यथासूत्रं** यथा सूत्रेण भणितं न सूत्रव्यपेतं, तथा कुर्वतः कल्पो भवति अन्यथा त्वकल्प इति **यथाकल्पम्**, एवं कुर्वतश्च ज्ञानादित्रयलक्षणो मार्ग इति **यथामार्गम्**, **यथातथ्यं** यथैव समुपदिष्टं भगवता तथा **सम्यग्** यथास्थितम्,'**काएण**' त्ति उपलक्षणत्वात्कायवाङ्मनोभिः अथवा कायशब्देनैव योगत्रयं व्याख्यायते तथाहि - **कायेन** शरीरेण *कै गै रै शब्दे[पा. धा.भ्वादि941-942-934]* कायते-उच्चार्यते इति कायो-वचनं तेन, कं-ज्ञानं तदेवाऽऽत्मस्वरूपं यस्य तत् कात्मं-मनो बुद्ध्यात्मकत्वान्मनसः तेन, ततश्च कायवाङ्मनोभिरित्यर्थः **स्पृष्ट्वा** आसेव्य **पालयित्वा** अतीचारेभ्यो रक्षयित्वा **शोधयित्वा** शोभयित्वा वा विधिवत्करणेन **तीरयित्वा** यावज्जीवमाराध्य यावज्जीवमाराधनया तं नीत्वा वा **कीर्तयित्वा** अन्येभ्य उपदिश्य **आराध्य** न विराध्य यथावत्करणात् **आज्ञया** भगवदुपदेशेन **अनुपाल्य** पूर्वैः पालितस्य पश्चात्पालनेन '**अत्थेगइय**' त्ति **सन्त्येके** येऽत्युत्तमया पालनया तस्मिन्नेव भवग्रहणे भवे **सिद्ध्यन्ति** उत्तमयाऽनुपालनया द्वितीये भवे मध्यमया तु तृतीये जघन्ययापि **सप्ताष्टौ भवग्रहणानि नातिक्रमन्ती**ति समुदायार्थः । तत्र सिद्ध्यन्ति निष्ठितार्था भवन्ति **बुद्ध्यन्ते** केवलज्ञानेन **मुच्यन्ते** भवोपग्राहिकर्मांशेभ्यः **परिनिर्वान्ति** कर्मकृतसकलसन्तापविरहाच्छीती-भवन्ति, किमुक्तं भवति ? **सर्वदुःखानां** शारीरमानसाना**मन्तं** विनाशं **कुर्वन्ती**ति ।

**[सू.389] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भयवं महावीरे रायगिहे नगरे गुणसिलए चेइए बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं मज्झगए चेव एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ पज्जोसवणाकप्पो नामऽज्झयणं सअट्ठं सहेउयं सकारणं ससुत्तं सअत्थं सउभयं सवागरणं भुज्जो भुज्जो उवदंसेइ त्ति बेमि । पज्जोसवणाकप्पो सम्मत्तो । अट्ठमी दसा सम्मत्ता ॥**

[ज.389] न चैतत्स्वमनीषिकयोच्यते किन्तु भगवदुपदेशपारतन्त्र्येण इत्याह -'**तेणं कालेणं तेणं समएण**' - मित्यादि सुबोधम् । नवरं **तस्मिन् काले** चतुर्थारकप्रान्ते **तस्मिन् समये** प्रस्तावे, समयशब्देनात्र कालविशेषो गृह्यते **राजगृहे नगरे गुणशिलये चैत्ये** समवसरणावसरे मध्यगतः श्रमणादिदेव्यन्तपरिषन्मध्य-वर्ती, '**चेव**'त्ति अवधारणे **मध्यगत** एव,न पुनरेकान्ते, अनेनोद्घाट्य शिर इत्युक्तम् । क्वचित् सदेवमणुया-सुराए परिसाए मज्झगए त्ति पाठः, तत्र च परि-सर्वतः सीदतीति परिषत्, परिषद्ग्रहणात्समवसरणे

गृहिणामपि कथ्यत इत्युक्तम् । ननु श्रमणाः श्रमण्यश्चैवात्राधिकारिणः, किमर्थं तर्हि परिषन्मध्ये भगवानुपदिष्टवान्, अनधिकारात्तेषां पर्युषणाकल्पस्येति चेत् ? उच्यते, यद्यपि मुख्यतः साधूनामुपदिष्टं तथापि यथा साधवो हि वर्षासु तपःप्रभृत्यनुष्ठानोद्यता यतनापराश्च तिष्ठन्तीति तथा तथाभूताः श्रावका अपि एतस्मिन् कल्पे विशेषतोऽभिग्रहयतनादिषु सावधाना भवन्ति, देवा अपि एवविधं कठिनतरमाचारं ज्ञात्वा तत्पालकसाधूनां गुणगानं कुर्युः स्वयं चाष्टाह्निकादिमहोत्सवदिवसं जानीयुरित्यादिधर्मप्रवृत्ति-विशेषज्ञापनार्थं तत उपयुज्यत एव परिषद्यपि सामाचारीसूत्रकर्षणम्, आवश्यकं त्विदं मुख्यतः साधूनामेवेति ज्ञेयम् । '**एवमाइक्खति**'त्ति **एवमाख्याति** यथोक्तं कथयति **एवं भाषते** वाग्योगेन **एवं प्रज्ञापयति** अनुपालितस्य फलं ज्ञापयति **एवं प्ररूपयति** दर्पणतल इव प्रतिरूपं श्रोतॄणां हृदये सङ्क्रमयति । इदानीमाख्येयस्य नामधेयमाह -**पर्युषणाकल्पं नामाध्ययनं भूयो भूय उपदर्शयति** विस्मरणशीलश्रोत्रनु-ग्रहार्थम् अनेकशः प्रदर्शयति, द्विर्वचनं निकाचनार्थम् । '**सअट्ठं**'ति **सार्थं** प्रयोजनयुक्तं, न पुनरन्तर्गडुकण्टक-शाखामर्दनवदभिधेयशून्यं तथाविधवर्णानुपूर्वीमात्रबद्धम् । **सहेतुः** दोषदर्शनं हेतुः अननुपालयतोऽमी दोषाः इति अथवा हेतुर्निमित्तं यथा *सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ[दशा.8-322]* इत्युक्ते किं निमित्तम् ? *पाएणं अगारीणं अगाराइं कडियाइं[दशा.8-323]* इत्यादिकोऽधिकरणपरिहरणात्मको हेतुरिति तेन सहितं सहेतुः । तथा **सकारणं** कारणमपवादो यथा *अंतरा वि य से कप्पइ पज्जोसवित्तए [दशा.8-329]* इति अर्वागपि कल्पते, पञ्चम्या अर्वागेकादशसु पर्वतिथिषु कल्पते पर्युषितुं, स इत्यनेनावस्थानम् अर्वागपि कल्पते, न पुनः संवत्सरप्रतिक्रमणादग्रतोऽपवादेऽपि विहर्तुं कल्पत इति तेन सहितं सकारणम् । **ससूत्रं सार्थं सोभय**मिति तत्र ससूत्रं यथा *नव गणा एक्कारस गणहरा[दशा.8-299]*, अर्थस्तु *से केणट्ठेण[दशा.8-300]*मिति प्रश्नानन्तरं प्रत्युत्तरदानकाले *से तेणट्ठेण[दशा.8-300]*-मित्यादिसूत्रपाठयुक्तम्, अथवा सर्वं सूत्रं सार्थमेव, न तु डित्थडवित्थादिवदनर्थकमिति, अत एव सोभयं सूत्रार्थरूपतयाभिधेयप्रतिपादकमिति । ननु कथमेवमर्थकत्वमस्याध्ययनस्य, न ह्यत्र टीकादाविवार्थः पृथग्व्याख्यातोऽस्ति इति चेत् ? उच्यते, सूत्रस्यार्थनान्तरीयकत्वाददोषः, यद्यत्पदं वर्णपङ्क्तिसम्बद्धं तदर्थप्रकर्षप्रतिभासकम्, न तु अनवबोधरूपं व्यर्थवर्णपङ्क्तिवदिति, अतः सार्थकत्वं तस्य प्रमाणीक्रियते। ननु अनन्तरीय एवार्थोऽस्ति, तर्हि कोऽयं टीकाकरणप्रयासः, तत एव तदवबोधः स्यादिति चेत् ? सत्यं, स एवार्थोऽल्पधियामगम्य इति कृत्वा व्यासेन लिखनात् यथा तिलस्थतैलात् न तथा तैलकार्यसिद्धिः यन्त्रारोपितपीडिततिलसमुदायादेवार्थसिद्धिरिति । ननु कथमेवम्, सूत्रादतिरिक्त एवार्थो न स्यात्, पश्चादभिधानात् विस्तरस्येति चेत्? उच्यते, यद्यप्यस्माभिस्तत्तद्वर्णपरम्परयाऽधुना उच्यमानोऽस्ति, परं सूत्रसन्दर्भकाले तु पूर्वमभिधेयमवधार्य पश्चात्सूत्रसन्दर्भरचनेति यतः -

*अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं ।*
*सासणस्स हियट्ठाए तओ सुत्तं पवत्तेई ॥ [आ. नि. 92]*

ननु स एवार्थोऽस्माभिरुच्यते विस्तरतया तथा सर्वोऽपि प्रमाणमेवेति न तत्र शङ्कावकाशः कोऽपीति

सत्यम्, नात्रास्माकमस्मिन्नर्थे विवादः, प्रमाणमेव यो भगवताऽभिहितोऽर्थोऽस्माभिरुच्यमानः स, परं यत्र छद्मस्थत्वादधिकन्यूनताकथनं विपरीततया वा कथनं तत्राप्रामाण्यं, यतः आहुः श्रीमलयगिरिसूरि-चरणाः -

*छद्मस्थस्य हि बुद्धिः स्खलति न कस्येह कर्मवशगस्य ।*
*सद्बुद्धिविरहितानां विशेषतो मद्विधासुमताम् ॥*

अन्यत्राप्याचार्यमतानुसारतो यत्रार्थभेदस्तत्राचार्यवरैरुक्तमस्ति यदेव मतमागमानुपाति तदेव सत्यमिति मन्तव्यमितरत्पुनरुपेक्षणीयमिति । आचार्याणां सम्पदादिदोषादयं मतिभेदो, जिनानां तु मतमेकमेव अविरुद्धं च, रागादिविरहितत्वात् इति वचनात् यदस्मिन्नर्थे सूत्रानुगतार्थप्रतिपादकम् अर्थकदम्बकं भवति तदेव प्रमाणमिति कृतं प्रसङ्गेन । तथा **सव्याकरणं** पृष्टापृष्टार्थकथनं व्याकरणं तत्सहितमिति । '**त्ति बेमि**' **इति ब्रवीमी**ति श्रीभद्रबाहुस्वामी स्वशिष्यान् प्रति ब्रूते - नेदं स्वमनीषिकया ब्रवीमि किन्तु तीर्थकरगणधरोपदेशेनेति । अनेन च गुरुपारतन्त्र्यमभिहितम् । *इतेः स्वरात्तश्च द्विः[सि.हे.8-1-42]* इति इलोपे तकारस्य द्वित्वे 'उवदंसेइ त्ति' इति रूपम् । '**पज्जोसवणाकप्पो सम्मत्तो**'त्ति **पर्युषणाकल्पः समाप्त** इति पर्युषणा-वर्षासु एकक्षेत्रनिवासस्तस्य सम्बन्धी कल्पः- सामाचारी साधून् प्रतीत्य विधिप्रतिषेधरूपेति, तदभिधेययोगादध्ययनमपि पर्युषणाकल्पो रत्नपरीक्षागजशिक्षादिवत् । इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायामष्टममध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ अष्टममध्ययनं समाप्तम् ॥

# नवमदशा मोहनीयस्थानाध्ययनम्

**[सू.390] तेणं कालेणं तेणं समयेणं चम्पा नामं नयरी होत्था, वण्णओ । पुण्णभद्दे नाम चेइए, वण्णओ, कोणिये राया धारिणी देवी, सामी समोसढे, समोसरणं, परिसा निग्गया, धम्मो कहितो, परिसा पडिगया ।**

[ज.390] [1]व्याख्यातं कल्पाख्यमष्टममध्ययनम् । साम्प्रतं नवममारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः – अनन्तराध्ययने कल्पः प्रतिपादितः । स चावितथ एव कार्यः । यस्त्वेनं वितथतया करोति स मोहनीयमर्जयति । अतस्तान्येव नामग्राहं दर्शयति, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्येदमादि-सूत्रम् – '**तेणं कालेण**'मित्यादि । व्याख्या प्राग्वत् । '**तेणं कालेण**'मिति **तस्मिन् काले तस्मिन् समये** तस्मिन् पूर्णभद्रचैत्ये '**समणे भगवं महावीरे**'त्ति **श्रमणो भगवान्महावीरो**ऽर्हन् सर्वज्ञः सर्वदर्शी सप्तहस्तप्रमाणशरीरोच्छ्रयः समचतुरस्रसंस्थानो वज्रर्षभनाराचसंहननः कज्जलप्रतिमकालिमोपेतस्निग्धा-कुञ्चितप्रदक्षिणावर्तमूर्द्धज उत्तप्ततपनीयाभिरामकेशान्तकेशभूमिरातपत्राकारोत्तमाङ्गसन्निवेशः परिपूर्णशशाङ्क-मण्डलादप्यधिकतरवदनशोभः पद्मोत्पलसुरभिगन्धनिश्वासो वदनत्रिभागप्रमाणकम्बूपमचारुकन्धरः सिंहशार्दूलवत्परिपूर्णविपुलस्कन्धप्रदेशो महापुरकपाटवत्पृथुलवक्षस्थलाभोगो यथास्थितलक्षणोपेत-श्रीवृक्षः परिघोपमप्रलम्बबाहुयुगलो रविशशिचक्रसौवस्तिकादिप्रशस्तलक्षणोपेतपाणितलः सुजातपार्श्वो झषोदरः सूर्यकरस्पर्शसञ्जातविकाशपद्मोपमनाभिमण्डलः सिंहवत्संवर्तितकटीप्रदेशो निगूढजानुः कुरुविन्द-वृत्तजङ्घायुगलः सुप्रतिष्ठितकूर्मचारुचरणः प्रशस्तलक्षणाङ्कितचरणतलप्रदेशोऽनाश्रवो निर्ममश्छिन्नश्रोता निरुपलेपोऽपगतप्रेमरागद्वेषश्चतुस्त्रिंशदतिशयोपेतो गगनगतेन धर्मचक्रेण आकाशगतेन छत्रेण आकाशगताभ्यां चामराभ्यां आकाशगतेनातिस्वच्छस्फटिकविशेषमयेन सपादपीठेन सिंहासनेन पुरतो देवैः प्रकृष्यमाणेन प्रकृष्यमाणेन धर्मध्वजेन चतुर्दशभिः श्रमणसहस्रैः षट्त्रिंशत्सङ्घ्चैरार्यिकासहस्रैः परिवृतो यथास्वकल्पं सुखेन विहरन् यथारूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसा चाऽऽत्मानं भावयन् '**जाव**'त्ति **याव**त्करणात्तीर्थकरसाधुवर्णकः सर्वोऽपि वाच्यः । '**समोसरणं**'ति समवसरणवर्णनं च भगवत औपपातिकग्रन्थादवसेयम् । '**परिसा पडिगय**'त्ति चम्पानगरीवास्तव्यो लोको भगवन्तमागतं श्रुत्वा भगवद्वन्दनार्थं स्वस्मात्स्वस्मादाश्रयात् कृतस्नातः कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तोऽल्पमहर्घाभरणालङ्कृतशरीरः स्वस्वपरिकरसमेतो हस्त्यादिवाहनारूढो निजचरणविहारचारी च सन् निर्गतः । भगवता च धर्मकथा कथिता । श्रुत्वा च तां हृष्टचित्तो वन्दित्वा भगवन्तं 'स्वाख्यातो भगवन् ! धर्म' इत्युक्त्वा **पर्षत्स्वस्थानं प्रतिगता** ।

**[सू.391] अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे बहवे निग्गंथा य निग्गंथीओ य आमंतेत्ता एवं वदासी, एवं खलु अज्जो तीसं मोहणिज्जठाणाइं जाइं इमाइं इत्थिओ वा पुरिसा वा अभिक्खणं अभिक्खणं आयरमाणे वा समायरमाणे[2] वा मोहणिज्जत्ताए कम्मं पकरेंति ।**

[ज.391] तदा '**अज्जो**'त्ति प्राग्वत् । '**तीसं**' ति **त्रिंशत्**सङ्घ्चानि '**मोहणिज्जठाणाइं**' ति मोहनीयं

---

1 'श्रीपरमपदप्राप्तेभ्यो नमः' इति मङ्गलं B-LI-Kh-A1-A2-M2 ।

2 '°यरेण वा' इति मुद्रिते ।

सामान्येनाष्टप्रकारं कर्म, विशेषतश्चतुर्थी प्रकृतिः, तस्य स्थानानि निमित्तानि **मोहनीयस्थानानि** । **यानि** इति पूर्वतनतीर्थकरैः प्रतिपादितानि **इमानि** अनन्तरवक्ष्यमाणानि **स्त्री वा पुरुषो वा अभीक्ष्णम् आचरन्** सकृन्मन्दाध्यवसायादितया **वा समाचरन्** असकृत्तीव्राध्यवसायपरिगतो **वा मोहनीयतया** इति मोहनीयकर्मत्वेन **कर्म प्रकरोति** ।

**[सू.392] तं जहा –**

**जे केइ तसे पाणे वारिमज्झे विगाहित्ता ।**
**उदएणा[1]ऽऽकम्म मारेइ महामोहं पकुव्वति ॥४४॥**

[ज.392] **तद्यथा– 'जे केई'**त्यादिश्लोकः **यः कश्चित्**[2] **त्रसान् प्राणान्** स्त्रीपुरुषगृहस्थपाखण्डि-प्रभृतीन् **वारिमध्ये विगाह्य** प्रविश्य परिव्राजकवत् **'उदएणं'**ति **उदयेन** तथा[3]हिंसादिप्रवर्तककर्मोदयेन उदकेन वा शस्त्रभूतेन **मारयति** । कथम् ? इत्याह– **आक्रम्य** पादादिना । स इति गम्यते, मार्यमाणस्य महामोहोत्पादकत्वात् सङ्क्लिष्टचित्तत्वात् भवशते दुःखवेदनीयमात्मना **महामोहं प्रकरोति** जनयति । तदेवम्भूतं त्रसमारणेनैकं मोहनीयस्थानम्, एवं सर्वत्रेति ॥१॥

**[सू.393] पाणिणा संपिहित्ताणं सोयमावरिय पाणिणं ।**
**अंतो नदंतं मारेइ महामोहं पकुव्वइ ॥४५॥**

[ज.393] **'पाणिणा'** इत्यादिश्लोकः **पाणिना** हस्तेन **सम्पिधाय** स्थगयित्वा, किं तत् ? **स्रोतो** रन्ध्रमुखमित्यर्थः तथा **आवृत्या**वरुध्य **प्राणिनं** ततः **अन्तर्नदन्तं** गलमध्ये रवं कुर्वन्तं घुरघुरायमाणमित्यर्थः, स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोति** । इति द्वितीयम् ॥२॥

**[सू.394] जायतेयं समारब्भबहुं[4] ओरुंभिया जणं ।**
**अंतो धूमेण मारेंति महामोहं पकुव्वइ ॥४६॥**

[ज.394] **'जायतेयं'** श्लोकः **जाततेजसं** वैश्वानरं **समारभ्य** प्रज्वाल्य **बहु** प्रभूतम् **अवरुध्य** महा-मण्डपवाडादिषु प्रक्षिप्य **जनं** लोकम् **अन्त**र्मध्येमण्डपादे**र्धूमेन** वह्निलिङ्गेन अथवा अन्तर्धूमोऽस्य सोऽन्तर्धूमस्तेन जाततेजसा विभक्तिपरिणामा**न्मारयति** योऽसौ **महामोहं प्रकरोति** । इति तृतीयम् ॥३॥

**[सू.395] सीसम्मि जो पहणति उत्तमंगम्मि चेतसा ।**
**विभज्ज मत्थगं फाले महामोहं पकुव्वइ ॥४७॥**

[ज.395] **'सीसंमि'** श्लोकः **शीर्षे** शिरसि **यः प्रहन्ति** खड्गमुद्गरादिना प्रहरति, प्राणिनमिति गम्यते,

---

1 '°एणकम्म' इति सर्वासु प्रतिषु ।

2 'कश्चन त्र°' इति A1 ।

3 '°थाविधहिं°' इति Kh ।

4 '°ब्भवेउं ओ°' इति मुद्रिते । '°मारंभं ब°' इति K–Kh–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

किम्भूते ? स्वभावतः शिरसि **उत्तमाङ्गे** सर्वावयवानां प्रधानावयवे तद्विघातेऽवश्यं मरणात् । **चेतसा** सङ्क्लिष्टेन मनसा, न यथाकथञ्चिदित्यर्थः । तथा **विभाव्य मस्तकं** प्रकृष्टप्रहारदानेन **स्फोटयति**, ग्रीवादिकं कायमपीति गम्यते । स इत्यस्य गम्यमानत्वात् स **महामोहं प्रकरोती**ति चतुर्थम् ॥४॥

**[सू.396]** **सीसावेढेण जे केइ आवेढेति अभिक्खणं ।**
**तिव्वं असुहसमायारे महामोहं पकुव्वइ ॥४८॥**

[ज.396] '**सीसावेढेणे**'त्यादिश्लोकः **शीर्षावेष्टेना**ऽऽर्द्रचर्मादिमयेन **यः कश्चिद्वेष्टयति** स्त्रीपुरुषादित्रसानिति गम्यते, **अभीक्ष्णं** भृशं **तीव्रोऽशुभसमाचारः**, स इत्यस्य गम्यमानत्वात् , स मार्यमाणस्य महामोहोत्पादकत्वेन आत्मना **महामोहं प्रकुरुते** । इति पञ्चमश्लोकार्थः ॥५॥

**[सू.397]** **पुणो पुणो पणिहीए बाले उवहसे जणं ।**
**फलेणं अदुवा डंडेणं महामोहं पकुव्वइ ॥४९॥**

[ज.397] '**पुणो**' इति श्लोकः **पौनःपुन्येन प्रणिधिना** मायया, यथा वाणिजकादिवेषं विधाय गलाकर्तकाः पथि गच्छता सह गत्वा विजनं विश्रब्धं वा मारयन्ति तथा हत्वा विना**श्योपहसेत्**, आनन्दातिरेका**ज्जनं** मूर्खलोकं हन्यमानं केन हत्वा ? **फलेन** योगविभावेन मातुलिङ्गादिना '**अदुवा**' तथा **दण्डेन** प्रसिद्धेन, स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोती**ति षष्ठम् ॥६॥

**[सू.398]** **गूढाचारी णिगूहिज्जा मायं मायाए छायए ।**
**असच्चवाई णिण्हाइ महामोहं पकुव्वइ ॥५०॥**

[ज.398] '**गूढायारी**' श्लोकः **गूढाचारी** प्रच्छन्नाचारवान् **निगूहयते** गोपयते स्वकीयं प्रच्छन्नं दुष्टमाचारं तथा **मायां** परकीयां **मायया स्वादयेत्** जयेत् । यथा शकुनिमारका छन्दैरात्मानमावृत्य शकुनीन् गृह्णतः स्वकीयया मायया शकुनिमायां छादयन्ति तथा **असत्यवादी निह्नवी** अपलापकः स्वकीययोर्मूलगुणोत्तर-गुणप्रतिषेधयोः सूत्रार्थयोर्वा **महामोहं प्रकरोती**ति सप्तमः ॥७॥

**[सू.399]** **धंसति जो अभूतेणं अकम्मं अत्तकम्मणा ।**
**अदुवा तुममकासित्ति महामोहं पकुव्वति ॥५१॥**

[ज.399] '**धंसेइ**'त्ति श्लोकः **ध्वंसयति** छायया भ्रंशयति **यः** पुरुषो**ऽभूतेना**सद्भूतेन, कम् ? **अकर्मक**म-विद्यमानदुश्चेष्टितम् **आत्मकर्मणा** आत्मकृतऋषिघातादिना दुश्चेष्टितेन दुर्व्यापारेण **अथवा** यदन्येन कृतं तदाश्रित्यापरस्यासमक्षमेव '**त्वमकार्षी**रितन्महापाप'मिति वदति क्रियायाः गम्यमानत्वात्, स इत्यस्यापि गम्यमानत्वात्, **महामोहं प्रकरोती**त्यष्टमम् ॥८॥

**[सू.400]** **जाणमाणो परिसाए सच्च[1]मोसाणि भासति ।**
**अक्खीणझंझे पुरिसे महामोहं पकुव्वइ ॥५२॥**

---

1 'सच्चमोसाण भासए' इति सर्वासु प्रतिषु । अस्य टीका 'सत्यमृषाणां भाषकः' इति भवेत् ।

[ज.400] '**जाणमाणो**' श्लोकः **जानानो** यथा अनृतमेतत् **परिषदः** सभाया बहुजनमध्ये इत्यर्थः, **सत्यामृषा** किञ्चित्सत्यानि सत्यनिबद्धानि किञ्चिदसत्यानि वस्तूनि वाक्यानि वा **भाषते**, **अक्षीणझञ्झो**ऽनुपरतकलहः यः, स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोती**ति नवमम् ॥९॥

**[सू.401]** **अणायगस्स नयवं दारे तस्सेव धंसिया ।**
**विउलं विक्खोभइत्ताणं किच्चा णं पडिबाहिरं ॥५३॥**

**उव्वकसंतंपि झंपेत्ता पडिलोमाहिं वग्गुहिं ।**
**भोगभोगे वियारेति महामोहं पकुव्वति ॥५४॥**

[ज.401] '**अणायगस्से**'ति गाथाद्वयार्थः अनायको अविद्यमानो राजा तस्य, **नयवान्** नीतिमानमात्यः, स **तस्यैव** राज्ञो **दारान्** कलत्रं द्वारं वाऽर्थागमस्योपायं **ध्वंसयित्वा** भोगभोगान् विदारयतीति सम्बन्धः, किं कृत्वा ? **विपुलं** प्रचुरमित्यर्थः, **विक्षोभ्य** सामन्तादिपरिकरभेदेन सङ्क्षोभ्य नायकं तस्य क्षोभं जनयित्वेत्यर्थः, **कृत्वा** विधाय '**ण**'मित्यलङ्कारे **प्रतिबाह्य**मनधिकारिणं दारेभ्योऽर्थागमद्वारेभ्यो वा दारान् राज्यं वा स्वयमधिष्ठायेत्यर्थः । तथा **उपकसन्तमपि** समीपमागच्छन्तमपि सर्वस्वापहारे कृतेऽनुलोमैः करुणैश्च वचनैरनुकूलयितुमुपस्थितमित्यर्थः, **झम्पयित्वा** नष्टवचनावकाशं कृत्वा **प्रतिलोमाभि**स्तस्य प्रतिकूलाभि**र्वाग्भि**र्वचनैरेतादृशस्तादृशस्त्वम् इत्यादिभिरित्यर्थः **भोगभोगान्** विशिष्टशब्दादीन् **विदारयति** हरति योऽसौ **महामोहं प्रकरोती**ति दशमम् ॥१०॥

**[सू.402]** **अकुमारभूते जे केइ कुमारभूतेत्ति हं वदे ।**
**इत्थीहिं[1] गिद्धे वसए महामोहं पकुव्वइ ॥५५॥**

[ज.402] '**अकुमारे**'त्ति श्लोकः **अकुमारभूतो**ऽकुमारोऽब्रह्मचारी सन् **यः कश्चित्** '**कुमारभूतो**ऽहं कुमारब्रह्मचार्यह'मिति **वदति** । अथवा **स्त्रीषु गृद्धो वशकश्च** स्त्रीणामेवाऽऽयत्त इत्यर्थः अथवा वसति आस्ते, स **महामोहं प्रकरोतीत्ये**कादशम् ॥११॥

**[सू.403]** **अबंभचारी जे केइ बंभचारि [2]त्ति हं वदे ।**
**गद्दभे व्व गवं मज्झे विस्सरं णदती णदं ॥५६॥**

**अप्पणो अहिये[3] बाले मायामोसं बहुं भसे ।**
**इत्थीविसयगेहीए महामोहं पकुव्वति ॥५७॥**

[ज.403] '**अबंभे**'ति गाथायुग्मम् **अब्रह्मचारी** मैथुनादनिवृत्तो **यः कश्चित्** तत्काल एवाऽऽसेव्याब्रह्मचर्यं '**ब्रह्मचारी** साम्प्रत**मह**'मित्यतिधूर्ततया परप्रवञ्चनाय **वदति**, तथा य एवम् अशोभावहं सतामनादेयं भणन्

1 '°त्थीविसयसेवीए' इति K-Kh-M1-M3-M4-LD1-LD2-मुद्रिते ।

2 '°चारी अहं' इति K-Kh-M1-M3-M4-LD1-LD2 ।

3 '°हियं बा°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**गर्दभ इव गवां मध्ये** विचरन् वृषभवन्मनोज्ञं **नदति**, नादं शब्दमित्यर्थः, तथा य एवं भणन्नात्**मनोऽहितो** न हितकारी **बालो** मूढो **मायामृषां बहु**मायावृतं प्रभूतं **भषते** श्वेव निन्दितं भषते, कया ? **स्त्रीविषयगृद्ध्या** हेतुभूतया यः, स इत्थम्भूतो **महामोहं प्रकरोती**ति द्वादशम् ॥१२॥

**[सू.404]** **जं णिस्सितो उव्वहती जससाऽहिगमेण[1] वा ।**
**तस्स लुब्भति वित्तंसि महामोहं पकुव्वइ ॥५८॥**

[ज.404] '**जं निस्सिओ**' श्लोकः **यं** राजानं राजामात्यादिकं वा **निश्रित उद्वहते** जीविकालाभेनाऽऽत्मानं धारयति, कथं ? **यशसा** 'राजादिसत्कोऽय'मिति प्रसिद्ध्या **अभिगमेन वा** सेवया आश्रितराजादेः **तस्य** निर्वाहकारणस्य राजादे**र्लुभ्यति वित्ते** द्रव्ये यः, स **महामोहं प्रकरोती**ति त्रयोदशम् ॥१३॥

**[सू.405]** **इस्सरेण अदुवा गामेण अणिस्सरे इस्सरी[2]कए ।**
**तस्स संपरिग्गहितस्स सिरी यऽतुलमागता ॥५९॥**

**इस्सादोषेण आइट्ठे कलुसाविलचेतसा ।**
**जे अंतरायं चेतेति महामोहं पकुव्वति ॥६०॥**

[ज.405] '**इस्सरेणे**'ति गाथायुगलार्थः **ईश्वरेण** प्रभुणा **अथवा ग्रामेण** जनसमूहेन **अनीश्वर ईश्वरीकृतः तस्य** पूर्वावस्थायामनीश्वरस्य **सम्प्रगृहीतस्य** प्रच्छादिता **श्री**र्लक्ष्मीरतुला असाधारणा **आगता** प्राप्ता **अतुलं** वा यथा भवतीत्येवं श्रीः समागता । आगतश्रीकश्च प्रभ्वाद्युपकारकविषये **ईर्ष्यादोषेणाऽऽविष्टो** युक्तः कलुषेण-द्वेषलोभादिलक्षणपापेनाऽऽविलं गडुलताकुलं वा चेतो यस्य स, तथा **योऽन्तरायं** व्यवच्छेदं जीवतः श्रीभोगानां **चेतयते** करोति प्रभ्वादेरसौ **महामोहं प्रकरोती**ति चतुर्दशम् ॥१४॥

**[सू.406]** **सप्पी जहा अंडउडं भत्तारं जो विहिंसइ ।**
**सेणावतिं पसत्थारं महामोहं पकुव्वति ॥६१॥**

[ज.406] '**सप्पी जहे**'ति **सापी** नागी **यथा 'अण्डउडं' अण्डकपुटं** स्वकीयमण्डकमित्यर्थः, अण्डकस्य वा पुटं सम्बद्धदलद्वयरूपं हिनस्ति, एवं '**भत्तारं**' पोषयितारं **यो विहिनस्ति सेनापतिं** राजानं **प्रशस्तारं** राजामात्यं धर्मपाठकं वा स **महामोहं प्रकरोती**ति पञ्चदशम् ॥१५॥

**[सू.407]** **जे नायगं च रट्ठस्स नेतारं निगमस्स वा ।**
**सिट्ठिं च बहुरवं हंता महामोहं पकुव्वति ॥६२॥**

[ज.407] '**जे णायगं**' श्लोकः **यो नायकं** वा प्रभुं **राष्ट्रस्य** राष्ट्रमहत्तरादिकमिति भावः तथा **नेतारं** प्रवर्तयितारं प्रयोजनेषु **निगमस्य** वाणिजकसमूहस्य, कं ? **श्रेष्ठिनं** श्रीदेवताङ्कितपट्टबन्धं, किम्भूतं ? **बहुरवं** भूरिशब्दं प्रभूततरयशसमित्यर्थः, **हत्वा महामोहं प्रकुरुत** इति षोडशम् ॥१६॥

---

1 '°ण च' इति K-M1-M3-M4-LD1-LD2।

2 '°स्सरे क°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

**[सू.408]** **बहुजणस्स नेतारं दीवं ताणं च पाणिणं ।**
**एतारिसं नरं हंता महामोहं पकुव्वइ ॥६३॥**

[ज.408] '**बहुजण**'श्लोकः **बहुजनस्य** पञ्चषादीनां लोकानां **नेतारं** नायकं, **द्वीपः** संसारसागरान्तर्गतानामाश्वसनम् अथवा दीप इव दीपोऽज्ञानान्धकारप्रवृत्तबुद्धिदृष्टिप्रसराणां हेयोपादेयवस्तुस्तोमप्रकाशकत्वात् । अत एव **त्राण**मापद्रक्षणं **प्राणिनाम्**, एतादृशा गणधरादयो भवन्ति, नवरं प्रावचनिकादिपुरुषं **हत्वा महामोहं प्रकरोती**ति सप्तदशम् ॥१७॥

**[सू.409]** **उवट्ठियं पडिविरयं संजयं [1]सुतवस्सितं ।**
**विउक्कम्म धम्माओ भंसेति महामोहं पकुव्वइ ॥६४॥**

[ज.409]'**उवट्ठियं**' श्लोकः **उपस्थितं** प्रव्रजिषुमित्यर्थः, **प्रतिविरतं** सावद्ययोगेभ्यो निवृत्तं प्रव्रजितमेवेत्यर्थः, **संयतं** साधुमुपस्थितं तपांसि कृतवन्तं शोभनं वा तपः श्रितमाश्रितम् । क्वचित् 'जे भिक्खुं जगज्जीवण'मिति पाठः, तत्र 'जगं'ति जङ्गमानि अहिंसकत्वेन जीवयतीति जगज्जीवनस्तं विविधैः प्रकारैरुपक्रम्याऽऽक्रम्य बलादित्यर्थः, **धर्मा**च्छ्रुतचारित्रलक्षणाद् **भ्रंशयति** यः स **महामोहं प्रकरोती**त्यष्टादशम् ॥१८॥

**[सू.410]** **तहेवाणंतणाणीणं जिणाणं वरदंसिणं ।**
**तेसिं अवण्णवं[2] बाले महामोहं पकुव्वइ ॥६५॥**

[ज.410] '**तहेव**'श्लोकः यथैव प्राक्तनं मोहनीयस्थानं **तथैव**[3] चेदमपि **अनन्तज्ञानिनां** ज्ञानस्यानन्तविषयत्वेनाक्षयत्वेन वा **जिनाना**मर्हतां **वरदर्शिनां** क्षायिकदर्शनित्वात्, **तेषां** ये ज्ञानाद्यनेकातिशयसम्पदुपेतत्वेन भुवनत्रये प्रसिद्धाः । अवर्णो-ऽवर्णवादो वक्तव्यत्वेन यस्यास्ति सो**ऽवर्णवान्**, यथा नास्ति कश्चित्सर्वज्ञो ज्ञेयस्यानन्तत्वात्? तत्रोच्यते, अदूषणं चैतद्, उत्पत्तिसमय एव केवलज्ञानं युगपल्लोकालोकौ प्रकाशयन्नुपजायते । यथाऽपवरकान्तर्वर्तिदीपकलिकाऽपवरकमध्यप्रकाशस्वरूपा इत्यभ्युपगमादिति । **बालो** अज्ञो **महामोहं प्रकरोती**त्येकोनविंशतितमम् ॥१९॥

**[सू.411]** **णेयाउयस्स मग्गस्स दुट्ठे अवय[4]रइ बहुं ।**
**तं तिप्प[5]यंतो भावेति महामोहं पकुव्वति ॥६६॥**

[ज.411] '**नेयाउयस्स**' त्ति श्लोकः **नैयायिकस्य** न्यायमनतिक्रान्तस्य **मार्गस्य** सम्यग्दर्शनादेर्मोक्षपथस्य **दुष्टो** द्विष्टो वा अपकारं करोतीति **बहु** अत्यर्थम्, पाठान्तरेणापहरति बहुजनं विपरिणमतीति भावः, **तं** मार्गं '**तिप्पयंतो**'त्ति निन्दया द्वेषेण वा वासयति अपरं च यः, स **महामोहं प्रकरोती**ति विंशतितमम् ॥२०॥

---

1 'सुसमाहियं' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च किन्तु चूर्णिकारेणापि 'सुतवस्सितं' इत्येव व्याख्यातम् ।

2 '°वण्णिमं बा°' इति K-MI-M3-M4-LD1-मुद्रिते ।

3 '°थैवेद°' इति B-LI ।

4 '°वहर°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

5 '°प्पइ ततो भा°' इति K-M1-M2-M3-M4-LD1-LD2-A1-A2 ।

**[सू.412]** **आयरिय–उवज्झाएहिं सुयं विनयं च गाहिए ।**
**ते चेव खिंसती बाले महामोहं पकुव्वइ ॥६७॥**

[ज.412] '**आयरिय**'श्लोकः **आचार्योपाध्यायैर्यैः श्रुतं** स्वाध्यायं **विनयं च गाहितः तानेव खिंसति** निन्दति, 'अल्पश्रुता एते' इत्यादि ज्ञानतः 'अन्यतीर्थिकसंसर्गकारिण' इत्यादि दर्शनतः 'मन्दधर्माणः पार्श्वस्थादि- स्थानवर्तिनस्तैः सहालापनाभिवादनादिकरणविदः' इत्यादि चारित्रतः, यः स एवम्भूतो **बालो महामोहं प्रकरोती**त्येकविंशतितमम् ॥२१॥

**[सू.413]** **आयरिय–उवज्झायाणं सम्मं ण परितप्पति ।**
**अपरिपूयते थद्धे महामोहं पकुव्वति ॥६८॥**

[ज.413] **'आयरिय'**श्लोकः आचार्यादीन् श्रुतदानग्लानावस्थाप्रतिचरणादिभिस्तर्पितवतः उपकृतवतः **सम्यक् न प्रतितर्पति**, विनयाहारोपध्यादिभिर्न प्रत्युपकरोति तथा **अप्रतिपूजको** न पूजाकारी तथा मानवान् स **महामोहं प्रकरोती**ति द्वाविंशतितमम् ॥२२॥

**[सू.414]** **अबहुस्सुते वि जे केइ सुतेणं पविकत्थइ ।**
**सब्भा[1]यवायं वयइ महामोहं पकुव्वइ ॥६९॥**

[ज.414] '**अबहुस्सुए**' श्लोकः **अबहुश्रुतश्च यः कश्चित्श्रुतेन** ज्ञानेन **प्रविकत्थति** स्वश्लाघां करोति यथा 'गण्यहं वाचकोऽहम्' । केनचित्पृष्टं यथा 'भवान् स बहुश्रुतो योऽस्माभिः श्रुतः?' तदा स एवं वदति 'सोऽह'मिति **सद्भाववादं वदति** तत्सदृशत्वम् आत्मनः ख्यापयति यः स **महामोहं प्रकरोती**ति त्रयोविंशतितमम् ॥२३॥

**[सू.415]** **अतवस्सिते य जे केइ तवेणं पविकत्थति ।**
**सव्वलोगपरे तेणे महामोहं पकुव्वइ ॥७०॥**

[ज.415] '**अतवस्सिए**' श्लोकः पूर्वार्द्धं कण्ठ्यम् । नवरं सर्वलोकात्सर्वजनात्सकाशात्परः - प्रकृष्टः **स्तेनश्चौ**रो भावचौरत्वात्, स **महामोह**मतपस्विताहेतुं **प्रकरोती**ति चतुर्विंशतितमम् ॥२४॥

**[सू.416]** **साहारणट्ठा जे केइ गिलाणंमि उव[2]ट्ठिते ।**
**पभू ण कुव्वती किच्चं मज्झंपेसे ण कुव्वइ ॥७१॥**

**सढे नियडिपण्णाणे कलुसाउलचेतसे ।**
**अप्पणो य अबोहीए महामोहं पकुव्वइ ॥७२॥**

[ज.416] '**साहारणे**'ति गाथायुग्मः **साधारणार्थ**मुपकारार्थं **यः कश्चित्** आचार्यादि**ग्लाने** रोगवति **उपस्थिते** प्रत्यासन्नीभूते **प्रभुः** समर्थ उपदेशेनौषधादिदानेन च स्वतोऽन्यतश्चोपकारं **न करोति**, **कृत्य**मुपेक्षते

1 'सज्झाय°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 'उट्ठि°' इति मुद्रिते ।

इत्यर्थः । केनाभिप्रायेणेति ? **ममाप्येष न करोति** किञ्चनापि कृत्यं समर्थोऽपि सन्निति द्वेषेणासमर्थोऽयं वा बालत्वादिना, किं कृतेनास्य पुनरुपकर्तुमशक्तत्वादिति लोभेनेति । **शठः** कैतवयुक्तः शक्तिलोपनात् । निकृतिर्माया तद्विषये प्रज्ञानं यस्य स तथा 'ग्लानः प्रतिजागरणीयो मा भवत्विति ग्लानवेषमहं करोमी'ति विकल्पवानित्यर्थः । अत एव **कलुषाकुलचेता आत्मनश्चाबोधिको** भवान्तराप्राप्तव्यजिनधर्मको ग्लाना-प्रतिजागरणेनाऽऽज्ञाविराधनात्, चशब्दात् परेषां चाबोधिकः अविद्यमानो बोधिरस्मादिति व्युत्पादनाद्, यदि तदीयं ग्लानाप्रतिचरणमुपलभ्य जिनधर्मपराङ्मुखा भवन्ति तेषामबोधिस्तत्कृत इति । स एवम्भूतो **महामोहं प्रकरोती**ति पञ्चविंशतितमम् ॥२५॥

**[सू.417]** **जे [1]कहाधिकरणाइं संपउंजे पुणो पुणो ।**
**सव्वतित्थाण भिताए महामोहं पकुव्वति ॥७३॥**

[ज.417] '**जे कहे**'ति श्लोकः - **यः** । कथा वाक्यप्रबन्धशास्त्रमित्यर्थः तद्रूपाणि अधिकरणानि **कथाधिकरणानि** कौटिल्यशास्त्रादीनि प्राण्युपमर्दनप्रवर्तकत्वेन तेषामात्मनो दुर्गतावधिकारित्वकरणात्, कथा(थया) वा क्षेत्राणि कृषत गानस्तपत्ते(?)त्यादिकथा(या) अधिकरणानि तथाविधप्रवृत्तरूपाणि अथवा कथा अधिकरणानि च यन्त्रादीनि कलहा वा कथाधिकरणानि, तानि स युङ्क्ते **पुनः पुनः** । एवं सर्वतीर्थभेदाय संसारतरणकारणात् तीर्थानि ज्ञानादीनि, तेषां सर्वथा नाशाय प्रवर्तमानः स **महामोहं प्रकरोती**ति षड्विंशतितमम् ॥२६॥

**[सू.418]** **जे य आहम्मिए जोए संपउंजे पुणो पुणो ।**
**सहाहेउं सहीहेउं महामोहं पकुव्वति ॥७४॥**

[ज.418] '**जे य**' श्लोकः व्यक्तं नवरम् **अधार्मिका योगा** निमित्तवशीकरणादिप्रयोगाः, किमर्थं ? **श्लाघाहेतोः सखिहेतो**र्मित्रनिमित्त इत्यर्थः, इति सप्तविंशतितमम् ॥२७॥

**[सू.419]** **जे य माणुस्सए भोगे अदुवा पारलोइये ।**
**[2]अतिप्पयंतो आसयति महामोहं पकुव्वति ॥७५॥**

[ज.419] '**जे य**' श्लोकः **यश्च मानुष्यकान् भोगान् अथवा पारलौकिकान्**, तत्र विभक्तिपरिणामात्तैः तेषु वा **अतृप्यन्** तृप्तिमगच्छन् **आस्वादते** अभिलषति आश्रयति वा स **महामोहं प्रकुरुते** इत्यष्टाविंशति-तमम् ॥२८॥

**[सू.420]** **इड्ढी जुत्ती जसो वण्णो देवाणं बलवीरियं ।**
**तेसिं अवण्णिमं बाले महामोहं पकुव्वइ ॥७६॥**

[ज.420] '**इड्ढी जुई**' श्लोकः **ऋद्धिर्विमानादिसम्पत् द्युतिः** शरीराभरणदीप्तिर्**यशः** कीर्तिः **वर्णः** शुक्लादिः शरीरसम्बन्धी **देवानां** सम्यग्दृशां वैमानिकादीनां बलं - शारीरं वीर्यं - जीवप्रभवम्

1 'जे तहा°' इति मुद्रिते ।

2 'न ति°' इति A1 –A2 – M2 । 'तेऽति°' इति मुद्रिते ।

अस्तीत्यध्याहारः **तेषाम्**, इह अपेर्गम्यमानत्वात् तेषामपि देवानामनेकातिशायिगुणवताम् **अवर्णवान्** अश्लाघाकारी अथवा अवर्णवान् केनोल्लेखेन ? देवानामृद्धिर्देवानां द्युतिरित्यादि काक्वा व्याख्येयम्, न किञ्चित् देवानामृद्ध्यादिकमस्तीत्यवर्णवादभावार्थः यद्वा किममी कामग्रस्ता धर्मानुष्ठानं कर्तुमसमर्था अविरता इति कथनेऽपि महान् दोषः । तथा चोक्तम् – *पंचहिं ठाणेहिं जीवा दुल्लभबोहित्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा – अरहंताणमवन्नं वदमाणे १, अरहंतपन्नत्तस्स धम्मस्स अवन्नं वदमाणे २, आयरियउवज्झायाणमवन्नं वदमाणे ३, चाउवन्नस्स संघस्स अवन्नं वदमाणे ४, विवि(व)क्कतवबंभचेराणं देवाणमवन्नं वदमाणे ५ [स्था.5-2-426]* । तत्र पञ्चमपदव्याख्या – विपक्वं सुपरिनिष्ठितं प्रकर्षपर्यन्तमुपगतमित्यर्थः तपश्च ब्रह्मचर्यं च भवान्तरे येषां विपक्वं वा उदयागतं तपो ब्रह्मचर्यं तद्धेतुकं देवायुष्कादिकर्म येषां ते, तेषामवर्णवादं वदन् दुर्लभबोधितया कर्म करोति । तदेवं 'न सन्त्येव देवाः कदाचनानुपलभ्यमानत्वात् किं वा तैर्विटैरिव कामासक्तमनोभिरविरतैस्तथा निर्निमेषैरचेष्टैश्च म्रियमाणैरिव प्रव[1]चनकार्यानुपयोगिकैश्चे'त्यादिकम् । यः एवम्भूतः स **महामोहं प्रकरोती**ति एकोनत्रिंशत्तमम् ॥२९॥

**[सू.421]** **अपस्समाणे पस्सामि देवे[2] जक्खे य गुज्झगे ।**
**अण्णाणी [3]जिणपूयट्ठी महामोहं पकुव्वई ॥७७॥**

[ज.421] '**अपस्समाणे**'ति श्लोकः **अपश्यन्नपि** यो ब्रूते **पश्यामि देवा**नित्यादि । तत्र देवा - वैमानिकज्योतिष्काः यक्षाश्च - व्यन्तराः गुह्यकाश्च - भवनवासिनः, तान् स्वरूपे**णाज्ञानी**, जिनस्येव पूजामर्थयते यः स **जिनपूजार्थी** गोशालवत्, स **महामोहं प्रकरोती**ति त्रिंशत्तमम् ॥३०॥

**[सू.422]** **एते मोहगुणा वुत्ता कम्मंता [4]वित्तवद्धणा ।**
**जे तु भिक्खू विवज्जेत्ता[5] चरेज्जऽत्तगवेसए ॥७८॥**

**जंपि जाणे इतो पुव्वं किच्चाकिच्चं बहु जढं ।**
**तं वंता ताणि सेविज्जा जेहिं आयारवं सिया ॥७९॥**

**आयारगुत्ते सुद्धप्पा धम्मे ठिच्चा अणुत्तरे ।**
**ततो वमे सए दोसे विसमासीविसो जहा ॥८०॥**

**सुवंत[6]दोसे सुद्धप्पा धम्मट्ठी विदिताऽपरे ।**
**इहेव लभते कित्तिं पेच्चा य सुगतिं वरं ॥८१॥**

---

1 '°वरका°' इति Kh प्रतौ ।

2 'देवा जक्खा य गुज्झगा' इति A1 –A2 – M2 – मुद्रिते ।

3 '°णी जण°' इति मुद्रिते ।

4 '°ता चित्त°' इति K – M1 – M3 – M4 – LD1 – LD2 ।

5 '°ज्जेज्जा च°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

6 'सुचत्तदो°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

[ज.422] साम्प्रतमुक्तरूपाणि मोहनीयस्थानान्युपसंहरन्नुपदेशसर्वस्वमाह – '**एते**' इत्यादि । **एतेऽ**नन्तरोक्ता **मोहगुणाः**; अथवा मोहानां गुणा गुणकारका मोहसम्बन्धं प्रतीति मोहगुणाः, न मोक्षं प्रति; यद्वा मोहाश्च तेऽगुणाश्च मोहागुणाः, प्राकृतत्वादकारलोपो यथा *गुणेहिं साहूऽगुणेहिंऽसाहू[दश.9-3-11]* इत्यादौ । कथम्भूता ? इत्याह – '**कम्मंता**' कर्मकारणानि अथवा कर्माण्येवान्तोऽवसानः फलं येषां ते **कर्मान्ताः**। **वित्तवर्द्धनाः** मोहरूपवित्तस्य वर्द्धना वृद्धिकारणानि 'चित्तवद्धणा' वा पाठः, तत्रापि चित्तं सङ्क्लेशरूपमशुभबन्धरूपं तद्वर्द्धनाः । तान् इत्यध्याहार्यम् '**जे उ**' त्ति **यान्** मोहप्रकारान् **भिक्षु**र्महात्मा **वर्जयित्वा** चरेत् संयमाध्वनि, **चरेद्वा** आचरेत् क्षान्त्यादिकं दशप्रकारं धर्मम् । कथम्भूतः सन् ? '**अत्तगवेसए**' आप्तास्तीर्थकरास्तेषां गवेषको नाम तद्वचनानुसरणपरः **आप्तगवेषकः**; यद्वा आत्मानं गवेषयति, न परम् इत्यात्मगवेषकः संवेगपर आत्मचिन्तकः ।

पुनः किं कुर्याद् ? इत्याह – '**जंपि जाणे**' इत्यादि । **यत् जानीयात्** वक्ष्यमाणम् **इत** अस्मात् प्रव्रज्याकालात् **पूर्वं** कृत्यमिति प्रेत्यकृत्यकुटुम्बपोषणसुतोत्पादनादिकम् अकृत्यं चौरहननकूटतुला-व्यापारपरवञ्चनादिकं **बह्व**नेकप्रकारं '**जढं**' **त्यक्तम्** अथवा बहुजढं नाम मातृपित्रादिस्वजनसम्बन्धं **तं** त्यक्त्वा **वान्त्वा** वा **तानि** यथोचितानि **सेवेत यैराचारवान्** चारित्रवान् **स्यात्** भवेत् ।

'**आयारे**'त्यादि आचारवान् इति अध्याहार्यम्, एवंविधश्च सन् यो **गुप्तो** गुप्तियुक्तः, अथवा आचारेण ज्ञानाचारादियुक्तः, शुद्धः पापकृत्यपरित्यागेनाऽऽत्मा यस्यासौ **शुद्धात्मा धर्मे** दशविधे **स्थित्वा अनुत्तरे** अतुल्ये, **ततो** जीवनिर्मलत्वादेव **वमेत्** त्यजेत् **स्वीयान्** आत्मीयान् **दोषान्** विषयकषायरूपान्, कः किमिव ? **आशीर्विषो विष**मिव, **यथा** सर्पो विषं त्यजेत् त्यक्त्वा वा न पुनरादत्ते एवमसावपीति उपनयो व्यक्तः ।

स च यथाभूतो यच्चाप्नोति तदाह - '**सुवंते**'त्यादि । सुष्ठ्वतिशयेन वान्तदोषः त्यक्तदोषः, **शुद्धात्मा**। धर्मः श्रुतचारित्रलक्षणस्तस्यार्थो विद्यतेऽस्मिन्निति **धर्मार्थी** । विदितं - ज्ञातमपरं-मोक्षो येन स **विदितापरः**, अपरग्रहणात्पूर्वग्रहणमपि दत्त इत्युक्ते देवदत्तग्रहणवत् । स चैवम्भूत **इहैव लभते** प्राप्नोति **कीर्तिं** प्रशंसारूपम् अथवा कीर्तिरित्युपलक्षणमामर्षौषध्यादिकमप्याप्नोति । '**पेच्चा य**'त्ति **प्रेत्य** परलोके सुगतिं मुक्तिरूपां लभते ।

**[सू.423]** **एवं अभिसमागम्म सूरा दढपरक्कमा ।**
**सव्वमोहविणिमुक्का जातीमरणमतिच्छिया ॥८२॥ त्ति बेमि ।**

**सम्मत्ता मोहणिज्जट्ठाणा णवमा दसा ॥**

[ज.423] उक्तोपसंहारमाह – '**एव**'मित्यादि । **एवं** पूर्वोक्तप्रकारेणावधारणे वा । अभिराभिमुख्ये, समेकीभावे, आङ् मर्यादाभिविध्योः, *गम्लृसृपृ गतौ,* सर्वे गत्यर्था धातवो ज्ञानार्था ज्ञेयाः, ज्ञात्वा गुणदोषानित्यर्थः । **शूराः** तपसि परीषहसहने च । **दृढपराक्रमाः** समाहततपउपधानाद्यनुष्ठाननिर्वाहकाः, न तु तद्भञ्जकाः । अथवा ज्ञाननयकथनात्करणनयोऽपि गृहीतोऽत्र । स चैवं ज्ञात्वा कुर्वन्ति ततः किमस्य

फलमित्युच्यते – '**सव्वमोहे**'ति सर्वमोहोऽष्टकर्मप्रकृतिरूपः तस्मात् विशेषेण नितरामतिशयेन मुक्ताः । यदा निरवशेषो मोहो गतो भवति तदा कारणस्याभावात् कार्यस्याभावो भवति तन्त्वभावात् पटाभाववत्, कारणं मोहः कार्ये **जातिमरणे** '**अतिच्छिते**' अतिक्रान्ते अतीतकाले, एवं साम्प्रतागामिकालयोर्भावना कार्या । **ब्रवीमी**ति पूर्ववत् । इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां नवममध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ नवममध्ययनं समाप्तम् ॥

# दशमदशा निदानस्थानाध्ययनम्

**[सू.424] तेणं कालेणं तेणं समयेणं रायगिहे नामं नयरे होत्था, वण्णओ गुणसिलए चेइए रायगिहे नगरे सेणिए नामं राया होत्था, रायवन्नओ एवं जहा उववातिए जाव चेलणाए सद्धिं विहरति, तए णं से सेणिए राया अण्णया कयाइ ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउगमंगलपायच्छित्ते सिरसा[1] कंठे मालकडे आविद्धमणिसुवन्ने कप्पियहारद्धहारतिसरतपालंबपलंबमाणकडिसुत्तयसुकयसोभे पिणिद्धगेविज्जे जाव कप्परुक्खए चेव अलंकितविभूसिते नरिन्दे सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं जाव ससिव्व पियदंसणे नरवइ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति निसीइत्ता कोटुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी ।**

[ज.424] श्रीदेवाधिदेवाय नमः । व्याख्यातं नवममध्ययनम् । साम्प्रतं दशममारभ्यते । अस्य चायमभिसम्बन्धः – अनन्तराध्ययने मोहनीयस्थानानि प्रतिपादितानि । तद्वशादेव तपः कुर्वन् निदानं करोति भोगाभिलाषित्वात् । तानि चात्र विभागेन दर्शयिष्यते(न्ते) । यद्वा अनन्तराध्ययने मोहनीयस्थानानि वर्जनीयानि इति प्रतिपादितम् । साम्प्रतं तद्विशेषभूतानि निदानान्यपि वर्जनीयानीति प्रतिपादयिष्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्यास्याध्ययनस्येदमादिसूत्रम् – '**तेणं कालेण**'मित्यादि व्याख्या प्राग्वत् । '**सेणिए**'त्ति **श्रेणिको नाम राजा 'होत्थ**'त्ति **अभवद्** आसीदित्यर्थः । '**रायवण्णउ**'त्ति **राजवर्णको** *महयाहिमवंत-महंतमलयमंदरमहिंदसारे अच्चंतविसुद्धरायकुलवंसप्पसूए निरंतररायलक्खणविराइयंगमंगे बहुजणबहुमाणपूइए सव्वगुणसमिद्धे [औप. सू. 6]* इत्यादिवर्णको वाच्यः । तस्य देवी समस्तान्तःपुरप्रधाना भार्या सकलगुणसमन्विता चेलणानाम्नी । तस्या वर्णको **यथा** औपपातिकनाम्नि ग्रन्थेऽभिहितस्तथात्राभिधातव्यः । स चायम् – *सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणपमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगी [औप. सू. 7]* इत्यादिको वाच्यः । '**जाव**'त्ति **यावत्**करणात् **चेलणाए** सद्धिं अणुत्तरे अविरत्ते इट्ठे सद्दफरिसरसरूपगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे **विहरइ** इतिपदकदम्बकपरिग्रहः । विस्तरव्याख्या तूपपातिकानुसारेण वाच्या, नेह विस्तरभिया प्रतन्यते ।

'**तते णं से सेणिए**' इत्यादि । **ततो**ऽनेकमल्लयुद्धव्यायामादिकरणानन्तरं **स** पूर्वनिर्दिष्टः **श्रेणिको राजा अन्यदा** अन्यस्मिन्नवसरे **कदाचित्**, '**ण्हाए**' इत्यादि **स्नातः** स्नानं कृतवान् । ततोऽनन्तरं कृतं बलिकर्म येन स्वगृहदेवतानां स तथा कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि दुःस्वप्नादिविघातार्थमवश्यकरणीयत्वाद्येन स तथा, अन्ये त्वाहुः – 'पायच्छित्ते' त्ति पादेन पादे वा लुप्तो दृग्दोषपरिहारार्थं पादलुप्तः, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तश्चासौ इति विग्रहः, तत्र कौतुकानि मषीतिलकादीनि मङ्गलानि तु दध्यक्षतदूर्वाङ्कुरादीनि । '**सिरसा कंठे मालाकडे**' त्ति **शिरसा कण्ठे** च माला कृता - धृता येन स तथा; क्वचित् 'सिरंसि ण्हाए कंठे मालाकडे' इति पाठः, तत्र शिरसि स्नातः; ननु पूर्वमपि 'ण्हाए' त्ति उक्तम्, तर्हि किमर्थं भूयोऽपि 'सिरसि ण्हाए' त्ति पुनरुक्तप्रसङ्गात् ? उच्यते, स्नातः सामान्यतोऽपि कण्ठस्नात उच्यतेऽतः

---

1 'सा ण्हाए कं°' इति K–Kh–M1–M3–M4–LD1–LD2–मुद्रिते ।

पुनरुपादानं तस्मिन् दिने विशेषत उक्तं शिरसि स्नातः; द्वितीयं पदं सुबोधम् । 'आविद्धमणिसुव्वणे' त्ति आविद्धं परिहितम् । **'कप्पिये'**त्यादि कल्पितानीष्टानि रचितानि च हारादीनि कटीसूत्रान्तानि यस्यान्यानि च सुकृतशोभनान्याभरणानि यस्य स तथा । **पिनद्धग्रैवेयकः** । **याव**त्करणात् *अंगुलिज्जगललियकयाभरणे {नाणामणिकणगरयण}वरकडगतुडियथंभियभुए अहियरूवसस्सिरीए कुंडलउज्जोतिताणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयरइयवच्छे मुद्दियापिंगलंगुलिए पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे नाणामणिकणगरयण-विमलमहरिहनिउणोवियमिसिमिसेंतविरइयसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठआविद्धवीरवलए । किं बहुणा ? [दशा.8-160]* इति पदकदम्बकपरिग्रहः । **'कप्परुक्खए चेव'**त्ति **कल्पवृक्ष इव 'अलंकियविभूसिय'** त्ति अलङ्कृतो मुकुटादिभिः विभूषितो वस्त्रादिभिरिति । **'णरिंदे'** त्ति नराणामिन्द्रो **नरेन्द्रः** । **'सकोरेंटे'**त्यादि सकोरण्टानि-कोरेण्टाभिधानकुसुमस्तबकवन्ति माल्यदामानि-पुष्पस्रजो यत्र तत्तथा । एवंविधेन **छत्रेण ध्रियमाणेन** शिरसीत्यध्याहारः । **याव**त्करणात् सेयवरचमराहिं उद्धुव्वमाणीहिं मंगलजयसद्दकयालोए अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दण-गरनिगमसेट्ठिसेणावतिसत्थवाहदूयसंधिवालसद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेहनिग्गए इव गहगणदिप्पंतरिक्खतारा-गणाण मज्झे इति पदकदम्बकपरिग्रहः । **शशीव प्रियदर्शनो नरपतिर्यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला** आस्थान-मण्डपो **यत्रैव सिंहासनं तत्रैवोपागच्छति उपागत्य सिंहासनवरे पूर्वाभिमुखः सन्निषीदति, कौटुम्बिकपुरुषान्** नृपाधिकारिणः पुरुषान् **शब्दयति** आमन्त्रयति, आम**न्त्र्यैवमवादीत्** ।

**[सू.425] गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया जाइं इमाइं रायगिहस्स नगरस्स बहिता तं जहा–आरामाणि य उज्जाणाणि य आएसणाणि य आयतणाणि य देवकुलाणि य सभातो य पवाओ[1] य पणियगेहाणि य पणियसालातो य जाणसालातो[2] य सुधाकम्मंताणि य [3]वाणीयकम्मंताणि य एवं कट्ठकम्मंताणि य[4] दब्भकम्मंताणि य इंगालकम्मंताणि य गिहकम्मंताणि य जे तत्थ वणमहत्तरगा अण्णाता चिट्ठंति ते एवं वदध ।**

[ज.425] **गच्छत, ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **यूयं** हे **देवानाम्प्रियाः**! सरलस्वभावाः ! **यानि इमानि** अनन्तरं वक्ष्यमाणस्वरूपाणि **राजगृहस्य नगरस्य बहि**र्भवन्ति इति शेषः । **तद्यथा 'आरामाणी**'त्यादि आरमन्ति येषु माधवीलतागृहादिषु दम्पत्यादीनि ते **आरामाः**, प्राकृतत्वान्नपुंसकत्वम् । **उद्यानानि** पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलान्युत्सवादौ बहुजनभोग्यानि । **आवेशनानि** येषु लोका आविशन्ति तानि चायस्कारकुम्भकारादिस्थानानि । **आयतनानि** देवकुलपार्श्वापवरकाः । **देवकुलानि** प्रतीतानि । **सभा** आस्थानमण्डपाः । **प्रपा** उदकदानस्थानानि । **'पणिय**'त्ति **पण्यशाला** घङ्घशाला, **पण्यगृहाणि** पण्यापणाः । **यानशाला** यत्र यानानि निष्पाद्यन्ते । **सुधाकर्मान्तानि** यत्र सुधापरिकर्म क्रियते । **वाणिज्यकर्मान्तानि** यत्र

1 'पवाओ य' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 'जाणसालातो य' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

3 'य धम्मक°' इति A1–A2–M2– मुद्रिते ।

4 'य इंगालकम्मंताणि य वणकम्मंताणि य दब्भकम्मंताणि य' इति K–Kh–M1–M3–M4–A1–A2 ।

वाणिज्यार्थं बहवो मिलन्ति लोकः । एवं **काष्ठकर्मान्तानि** यत्र काष्ठानि क्रयार्थं जलार्द्रभवनभिया वा यत्र सन्निक्षिप्ता[नि] तिष्ठन्ति । एवं दर्भवर्ध्रवल्लजाङ्गारगृहान्तानि द्रष्टव्यानि । चशब्दः सर्वत्रापरापरभेद-संसूचकः । **तत्र ये** च **महत्तरका**, वनमुपलक्षणम्, आवेशनादीनाम् आज्ञाता अत्यर्थं ज्ञाता अधिपतित्वेन प्रसिद्धास्तिष्ठन्ति,तान् एवं वदत ।

**[सू.426] एवं खलु देवाणुप्पिया सेणिए राया भिंभिसारे आणवेति जता–णं समणे भगवं महावीरे आदिकरे जाव[1] ⇒ संपाविउकामे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे [2]सुहंसुहेणं विहरमाणे ⇐ संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे इहमागच्छेज्जा, तया णं तुब्भे भगवतो महावीरस्स अहापडिरूवं उग्गहं अणुजाणध, अहापडिरूवं उग्गहं अणुजाणित्ता सेणियस्स रण्णो भिंभिसारस्स एयमट्ठं पिअं निवेदध ।**

[ज.426] किं तद् ? इत्याह – '**एवं खल्वि**'त्यादि **एव**ममुना प्रकारेण **खल्वि**त्यवधारणे, **देवानाम्प्रियाः** ! **श्रेणिको राजा** '**भिंभासारे**'त्ति भिम्भिर्भेरी सैव सारा प्रधाना यस्यासौ भिम्भिसारः । तदाख्यानमेवम् – कुमारभावे णिययघरे पलित्ते रमणयं भिंभयं घेत्तूणं णिग्गतो, अवसेसा कुमारा आभरणगादि । पिउणा पुच्छिया । सव्वेहिं कहियं जेहिं जं णीणियं । सेणिएण भणियं - मए भिंभि णीणिया । पसेणइणा भणितो – तुज्झ किं एस सारो ? तेण भणियं – आमं ति । ततो से रण्णा भिंभासारो णामं कतं । शेषं ज्ञातवरमेव । '**आणवेइ**' त्ति **आज्ञापयति,** किं तद् ? इत्याह – '**जया ण**'मित्यादि **यदा**, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **श्रमणो भगवान् महावीरः आदिकरः याव**त्करणात् तित्थगरे णमित्यादिकः समस्तोऽपि औपपातिकग्रन्थप्रसिद्धो भगवद्वर्णको वाच्यः । स चातिगरीयानिति न लिख्यते, केवलमौपपातिक-ग्रन्थादवसेयः। सम्प्राप्तुकामो मोक्षं प्रति तदनुकूलव्यापारवान् । '**पुव्वाणुपुव्विं**' ति पूर्व्यानुपूर्व्या, न पश्चानुपूर्व्या नानानुपूर्व्या चेत्यर्थः क्रमेणेति हृदयम् । **चरन्** सञ्चरन्, एतदेवाऽऽह – '**गामाणुगामं दूइज्जमाणे**' त्ति ग्रामश्च - प्रतीतोऽनुग्रामश्च - विवक्षितग्रामानन्तरो ग्रामो ग्रामाऽनुग्रामम्, तं **द्रवन्** गच्छन् एकस्माद् ग्रामादनन्तरं ग्राममनुल्लङ्घयन्नित्यर्थः, अनेनाप्रतिबद्धविहारमाह, तत्राप्यौत्सुक्याभावमिति । '**सुहंसुहेणं विहरमाणे**' त्ति अत एव **सुखं सुखेन** शरीरखेदाभावेन संयमबाधाभावेन च **विहरन्** स्थानात् स्थानान्तरं गच्छन् ग्रामादिषु वा तिष्ठन्, **संयमेन तपसा आत्मानं भावयन्** '**इहे**'ति अत्र नगरे, मकारोऽलाक्षणिकः, **आगच्छेत्**। **तदा यूयं श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य यथाप्रतिरूपं** चिरन्तनसाध्ववग्रहसदृशम् **अवग्रहमनुजानीध्वम्** अनुदद्ध्वम् । **अनुजानीय श्रेणिकस्य राज्ञो** हि **एनमर्थं निवेदयध्वम्** ।

**[सू.427] तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सेणिएण रन्ना भिंभिसारेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ[3]तुट्ठा जाव करयल जाव एवं[4] देवोत्ति आणाए विनयेणं पडिसुणंति एवं पडिसुणित्ता सेणियस्स अंतियातो पडिनिक्खमंति**

---

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति मुद्रिते ।

2 'सुहंसुहेणं विहरमाणे' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु परन्तु Kh प्रतौ केनचित् पश्चात्संयोजितम् । '°णे विहरेज्जा' इति मुद्रिते ।

3 '°ट्ठ जाव हयहियता कय जा°' इति मुद्रिते ।

4 '°वं सामित्ति' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**पडिनिक्खमित्ता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं निगच्छन्ति णिगच्छित्ता जाइं इमाइं रायगिहस्स बहिता आरामाणि य जाव जे तत्थ महत्तरया अण्णाता चिट्ठंति, ते एवं वदन्ति–जाव सेणियस्स रण्णो एयमट्ठं महप्पियं निवेदेज्जा–भे प्पियं भवतु दोच्चं पि[1] एवं वदन्ति, एवं वदित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं[2] पडिगता ॥**

[ज.427] '**तते ण**'मित्यादि व्यक्तम् । नवरम् एव**मुक्ताः** सन्तो '**हट्ठतुट्ठा**' इत्यादि **हृष्टा तुष्टा**, अतीवतुष्टा इति भावः, अथवा हृष्टा नाम विस्मयमापन्नाः यथा अहो भगवद्वार्तां निवेदनार्थमस्माकमादिशति इति तुष्टा तोषं कृतवन्तः यथा भव्यमभूद्यदस्मान् भगवद्वार्तां जिज्ञासुः श्रेणिको राजा आदिशति । **याव**त्करणात् चित्तमाणंदिया पीइमणा इत्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः । तोषवशादेव चित्तमानन्दितं स्फीतीभूतं *टुनदु समृद्धा[सि.हे.धा. 312]*विति वचनात् येषां ते चित्तानन्दिताः, सुखादिदर्शनात्पाक्षिको निष्ठान्तस्य परनिपातः, मकारः प्राकृतत्वादलाक्षणिकस्ततः पदत्रयस्य पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः । पीइमणा इति प्रीतिर्मनसि येषां ते प्रीतिमनसः नृपवचसि बहुमानपरायणा इति भावः । ततः क्रमेण बहुमानोत्कर्षवशात् परमसोमणसिया इति शोभनं मनो येषां ते सुमनसः, तस्य भावः सौमनस्यम्, परमं च सौमनस्यं परमसौमनस्यं तत्सञ्जातमेषामिति परमसौमनस्यिताः । एतदेव व्यक्तीकुर्वन्नाह – हरिसवस-विसप्पमाणहियया इति हर्षवशेन विसर्पत् - विस्तारयायि हृदयं येषां ते हर्षवशविसर्पद्हृदयाः । करतल **याव**त्करणात् सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु इति पदपरिग्रहः । **एवं** स्वामिन् यथैव यूयं भणथ तथैव '**देवो**'**त्ति** हे **देव** ! 'तह' त्ति नान्यथा आज्ञया भवदादेशेन करिष्याम इत्येवमभ्युपगमसूचकपदचतुष्टय-भणनरूपेणेति '**विणएण वयणं पणिसुणंति**'त्ति **प्रतिशृण्वन्ति** अभ्युपगच्छन्ति **वचनं विनयेन** । **श्रेणिकस्य** राज्ञोऽ**न्तिकात्स**मीपात् **प्रतिनिष्क्रामन्ति राजगृहं नगरं मध्यंमध्येन** इत्यर्थः । गृहंगृहेण मध्यंमध्येन पदंपदेन सुखंसुखेनेत्यादयः शब्दाश्चिरन्तनव्याकरणेन साधवः प्रतिपादिताः इति नायमप्रयोगः । **निर्गच्छन्ति** ।

'**जाइं**' ति व्याख्यातार्थम् । '**एयमट्ठं**' ति **एतमर्थम्**, किं भूतम् ? इत्याह – '**महप्पियं**' ति **महाप्रिय**मतिवल्लभं **श्रेणिकस्य राज्ञो निवेदयत** । किं तद् ? इत्याह – **प्रियं भे युष्माकं भवतु** इति । '**जामेव दिसिं**' ति यस्या दिशः सकाशात्**प्रादुरभूवन् तामेव दिसिं प्रतिगता** ।

**[सू.428] तेणं कालेणं तेणं समयेणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे जाव गामाणुगामं दूइज्जमाणे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तते णं रायगिहे नगरे सिंघाडग–तिय–चउक्क–चच्चर–चउम्मुहमहापहपहेसु महया जणसद्दे इ वा जाव पज्जुवासेति । तते णं ते चेव महत्तरगा जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिखुत्तो वंदन्ति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता णामगोयं पुच्छन्ति णामगोयं पुच्छित्ता णामगोत्तं संपधारेंति संपधारित्ता एगततो मिलन्ति एगततो मिलित्ता एगंतमवक्कमन्ति एगंतमवक्कमित्ता एवं वदासी ।**

---

1 अत्र 'तच्चं पि' इत्यधिकः पाठो मुद्रिते ।

2 अत्र 'नगरस्स' इत्यधिकः पाठः सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

[ज.428] '**तेणं कालेण**'मित्यादि व्याख्यातार्थम् । '**तते ण**'मित्यादि **ततो**ऽनन्तरं, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **राजगृहे नगरे** '**सिंघाडग**' इत्यादावयं वाक्यार्थः – सिङ्घाटकादिषु यत्र महाजनशब्दादयस्तत्र बहुजनोऽन्योऽन्यस्यैवमाख्याति । तत्र सिङ्घाटकं- सिङ्घाटकाभिधानफलविशेषाकारं स्थानं त्रिकोणमित्यर्थः । त्रिकं-यत्र स्थाने रथ्यात्रयमीलको भवति । चतुष्कं-यत्र रथ्याचतुष्कमीलकः स्यात् । चत्वरं-यत्र बहवो मार्गा मिलन्ति । चतुर्मुखं-तथाविधदेवकुलादि । महापथो- राजमार्गः । पन्था - रथ्यामात्रम् । 'महता जणसद्दे इ वा' इति महान् जनशब्दः परस्परालापादिरूपः, इकारो वाक्यालङ्कारार्थो, वाशब्दः पदान्तरापेक्षया समुच्चयार्थः, अथवा 'सद्देइ व' त्ति इह सन्धिप्रयोगादितिशब्दो द्रष्टव्यः, स चोपदर्शने ततश्च यत्र महाजनशब्द इति तद्वस्तु, '**जाव**' त्ति **याव**त्करणात् *जणवूहेइ वा जणकलकलेति वा जणुंमीति वा जणुक्कलियाति वा जणसन्निवाएइ वा बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खेइ एवं भासेइ एवं पन्नवेइ एवं परूवेइ एवं खलु देवाणुप्पिया समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमे जाव संपाविउकामे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे आगासगएणं छत्तेणं जाव संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तं महाफलं खलु देवाणुप्पिया तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं नामगोयस्स विसवणयाए किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए एगस्स वि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामो एयं तं इहभवे परभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ इति कट्टु बहवे उग्गा भोगा [औप. सू.27पृ.57A]* इत्याद्यौपपातिकग्रन्थोक्तं सर्वमवसातव्यं यावत् समस्तापि राजप्रभृतिकापि पर्षत् पर्युपासीना अवतिष्ठते । '**तते ण**'मित्यादि '**तिक्खुत्तो**' **त्रिकृत्व**स्त्रीन् वारान् दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिणां कृत्वा '**वंदंति**' भगवद्गुणोत्कीर्तनं कुर्वन्ति '**नमंसंति**' त्ति **नमस्यन्ति** शिरोनमनेन प्रणमन्ति; '**णामगोयं पुच्छंति**' त्ति नाम चाभिधानं यथा महावीर इति गोत्रं च वंशो यथा काश्यपगोत्र इति, **नामगोत्र**मिति द्वन्द्वैकत्वम्, अतस्तं **पृच्छन्ति**; अन्येभ्यः '**संपहारेंति**' त्ति **सम्प्रधारयन्ति** स्वचेतसि; '**एगतो मिलंति**' त्ति द्रव्यतो ह्येकत्र स्थाने मिलन्ति, भावतस्तु परस्परविरोधपरिहारेण सम्मता भवन्ति; अन्योन्यं शब्दयन्ति **एकान्तं** निर्जन**मपक्रामन्ति**; **एवमवादिषुः** ।

**[सू.429] जस्स णं देवाणुप्पिया सेणिए राया भिंभिसारे दंसणं कंखति, जस्स णं देवाणुप्पिया सेणिए राया दंसणं पीहय[1]ति, जस्स णं देवाणुप्पिया सेणिए राया दंसणं पत्थेति अभिलसति, जस्स णं देवाणुप्पिया सेणिए राया णामगोत्तस्सवि सवणताए हट्ठतुट्ठ जाव भवति, से णं समणे भगवं महावीरे आदिकरे तित्थकरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूतिज्जमाणे सुहं सुहेणं विहरन्ते इहमागते इह संपत्ते[2] इह समोसढे जाव अप्पाणं भावेमाणे सम्मं विहरति, तं गच्छह णं देवाणुप्पिया सेणियस्स रन्नो एयमट्ठं निवेदेमो पियं भे भवउत्ति कट्टु एयमट्ठं अण्णमण्णस्स**

1 'पीहेति' सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 'इह समोसढे' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**पडिसुणेन्ति पडिसुणित्ता जेणेव रायगिहे नयरे तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता रायगिहं नयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सेणियस्स रण्णो गेहे जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सेणियं रायं करयलपरिग्गहियं जाव जएणं विजएणं वद्धावेंति वद्धावित्ता एवं वयासी ।**

[ज.429] '**जस्स ण**'मित्यादि व्यक्तम् । '**दंसणं**' ति **दर्शन**मवलोकनं '**कंखति**' त्ति प्राप्तं सद्धि मोक्तुं नेच्छति । '**पीहयति**'त्ति **स्पृहयति** अनवाप्तमवाप्तुमिच्छति । '**पत्थति**' त्ति **प्रार्थयति** तथाभूतसहायजनेभ्यः सकाशाद्याचते । '**अभिलसति**' **अभिलषति** आभिमुख्येन कमनीयमिति मन्यते । **नामगोत्रस्यापि** '**सवणयाए**'त्ति श्रवणानां भावः श्रवणता तया, स्वार्थिको वा ताप्रत्ययः प्राकृतशैलीप्रभव इति । '**हट्ठतुट्ठे**'त्यादि प्राग्वत् । '**इहमागए**' त्ति **इहागतः**, मकारोऽलाक्षणिकः, इह राजगृहे । '**इह संपत्ते**' त्ति **इह सम्प्राप्तो** गुणशिलके । '**इह समोसढे**' त्ति **इह समवसृतः** साधूचितावग्रहे । तदेवाऽऽह–**यावत्**करणात् इहेव रायगिहे णगरे गुणसिलए चेइए अहापडिरूवमित्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः । करयलपरिग्गहितं **यावत्**करणात् सिरसा मत्थए अंजलिं कट्टु इति पदानि द्रष्टव्यानि । '**जएणं विजएणं वद्धावेंति**'त्ति जयः - सामान्यो विघ्नादिविषयः विजयः - स एव विशिष्टतरः प्रचण्डप्रतिपन्थ्यादिविषयः वर्द्धयन्ति **जयेन विजयेन** च वर्द्धस्व त्वमित्येवमाशिषं प्रयुञ्जते स्मेत्यर्थः ।

**[सू.430] जस्स णं सामी दंसणं कंखइ जाव से णं समणे भगवं महावीरे गुणसिलए चेइए जाव विहरति[1], एयण्णं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए[2] पियं निवेदेमो, पियं भे भवतु ।**

[ज.430] '**एतण्ण**'मित्यादि **एतत्, णं** पूर्ववत्, **देवानाम्प्रियाणां** सरलचित्तानां '**पियट्ठयाए**'त्ति **प्रियार्थतायै** प्रीत्यर्थं '**पियं णिवेयमो**' त्ति **प्रिय**मिष्टं वस्तु भगवदागमनलक्षणं **निवेदयामः** कथयामः '**पियं भे भवतु**'त्ति एतच्च प्रियनिवेदनं **प्रियं** '**भे**' **भवतां भवतु** तदन्यद्वा प्रियं भवत्विति ।

**[सू.431] तए णं से सेणिए राया तेसिं पुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता[3] जाव नमोत्थु णं अरिहंताणं जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं । णमोत्थु समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव मम धम्मायरियस्स धम्मोवएसगस्स । वंदामि भगवंतं जाव ते पुरिसे सक्कारेति सम्माणेति सक्कारित्ता सम्माणित्ता विपुलं जीवियारिहं पितिदाणं दलयति दलइत्ता पडिविसज्जेति पडिविसज्जित्ता नगरगुत्तियं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी– खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! रायगिहं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं आसित्तसम्मज्जितोवलित्तं जाव[4] ⇒ करेह य कारवेह य । तते णं कोडुंबियपुरिसा सेणियस्स रण्णो एयमट्ठं पडिसुणंति पडिसुणित्ता रायगिहं जाव करेंति कारयंति, करेत्ता कारयेत्ता एयमाणत्तियं ⇐ पच्चपिणंति ।**

---

1 '°ति तेणं दे°' इति मुद्रिते ।

2 'पियट्ठयाए' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च, Kh प्रतौ केनचित् पश्चात् संयोजितम् ।

3 '°त्ता जहा कोणितो जाव वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता ते' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

4 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

[ज.431] '**सोच्चा निसम्म**' त्ति **श्रुत्वा** श्रोत्रेणाऽऽकर्ण्य **निशम्य** हृदयेनावधार्य '**हट्ठे**'त्यादि प्राग्वत्। **यावत्**करणात् तुट्ठे चित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणसिए इत्यादि द्रष्टव्यम् । '**सीहासणाउ**' त्ति **सिंहासनादभ्युत्तिष्ठते** पादपीठात्प्रत्यवरोहति अवतरतीत्यर्थः । **यावत्**करणात् *पाउयाओ ओमुयति एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ आयंते चोक्खे परमसुइभूए अंजलिमउलियग्गहत्थे तित्थगराभिमुहे सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छति वामं जाणुं अंचेइ दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि णमेति ईसिं पच्चुण्णमति कडगतुडियथंभिआओ भुयाओ पडिसाहरइ [औप.सू.12 पृ.24A]* त्ति द्रष्टव्यम् । '**नमोत्थु णं**' **नमस्कारोऽस्तु अर्हद्भ्यः**, **यावत्**करणात् *भगवंताणं आइगराणं तित्थगराण[दशा.8-115]*-मित्यादिपदानि द्रष्टव्यानि । '**सिद्धिगइ**' त्ति सिद्धिगतिरिति नामधेयं-प्रशस्तं नाम यस्य त**त्सिद्धिगतिनामधेयम्**, तिष्ठत्यस्मिन्निति **स्थानं** क्षीणकर्मणो जीवस्य रूपं लोकाग्रं च जीवस्वरूपं विशेषणानि तु लोकाग्रे उपचारादवसेयानीति **सम्प्राप्तेभ्यः** । **णमोत्थु ण**मित्यादि प्राग्वत् । '**मम धम्मायरियस्स**'त्ति **मम धर्माचार्याय**, न तु कलाचार्याय । धर्माचार्यत्वमेव कथम् ? इत्यत आह – '**धम्मोवएसगस्स**' त्ति **धर्मोपदेशकाये**ति । '**वंदामि भगवन्तं**' तत्र चैत्ये स्थितम् । **यावत्**करणात् *इह गए, पासइ मे भगवं तत्थ गए इह गयं त्ति कट्टु वंदति णमंसति [दशा.8-115]* 'इह गए' त्ति अत्रैव स्थितोऽहं वन्दे, कस्माद् ? इत्यत आह – 'पासइ मे' त्ति पश्यति मां स भगवान् 'इतिकट्टु' इतिकृत्वा इतिहेतोः 'वंदइ' पूर्वोक्तस्तुत्या स्तौति 'नमंसइ' त्ति नमस्यति शिरोनमनेन प्रणमति । '**ते पुरिसे**' त्ति **तान् पुरुषान्** '**सक्कारेइ**' त्ति प्रवरवस्त्रादिभिः पूजयति '**सम्माणेइ**'त्ति तथाविधया वचनादिप्रतिपत्त्या पूजयत्येवेति । '**विउलं**'**ति विपुलं जीवितार्हम्** आजीवितं भोगोपभोगार्हं **प्रीतिदानं** भगवत्प्रीत्या रागेण दानं **ददाति**, **प्रतिविसर्जयति** तान् स्वस्थाने इति गम्यते । '**णगरगुत्तियं**'ति तलारक्षं **शब्दापयति** । '**खिप्पामेव**' त्ति **क्षिप्र**मविलम्बित**मेव भो देवानुप्रिया** ! '**रायगिहं नगरं**'ति **राजगृहं नगरं** '**सब्भिंतरबाहिरियं**' ति सहाभ्यन्तरेण नगरमध्यभागेन बाहिरिका नगरबहिर्भागो यत्र तत्तथा, क्रियाविशेषणं चेदम् । '**आसित्तसमज्जितोवलित्तं**' ति आसिक्तमुदकच्छटेन सम्मार्जितं कचवरशोधनेन उपलिप्तं गोमयादिना । **यावत्**करणात् *सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरचउमुहमहा-पहपहेसु [दशा.8-195]* इत्यादिपदपरिग्रहः । सित्तसुइसंमट्ठरत्थंतरावणवीहियं सिक्तानि जलेनात एव शुचीनि- पवित्राणि सम्मृष्टानि कचवरापनयनेन रथ्यान्तराणि आपणवीथयश्च- हट्टमार्गा यस्मिन् तत्तथा । मंचातिमंचकलितं मञ्चा- मालकाः प्रेक्षणद्रष्टृजनोपवेशननिमित्तम् अतिमञ्चास्तेषामप्युपरि ये तैः कलितम् । नाणाविहरागमूसियझयपडागाइपडागमंडितं नानाविधरागैः-कुसुम्भादिभिरुच्छ्रितैरूर्ध्वीकृतैर्ध्वजै-श्चक्रसिंहा-दिलाञ्छनोपेतैः पताकाभि-स्तदितराभिरतिपताकाभिश्च-पताकोपरिवर्तिनीभिर्मण्डितं यत्तत्तथा । लाउल्लोइ-यमहियं लाइयं- छगणादिना भूमौ लेपनम् उल्लोइयं- सेटिकादिना कुड्यादिषु धवलनं, ताभ्यां महितं- पूजितम् अत एव वा महितं - पूजितं यत्र तत्तथा । गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं गोशीर्षस्य- चन्दनविशेषस्य सरसस्य च रक्तचन्दनस्य- चन्दनविशेषस्यैव दर्दरेण- चपेटारूपेण दत्ता-न्यस्ताः पञ्चाङ्गुलयस्तला- हस्ता यस्मिन् कुड्यादिषु तत्तथा । उवचियचंदणकलसं उपचिता- उपनिहिताः गृहान्तःकृतचतुष्केषु चन्दनकलशा- मङ्गलघटा यत्र तत्तथा । चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं

चन्दनघटाः सुकृतास्तोरणानि च प्रतिद्वारं द्वारस्य देशभागेषु यत्र तत्तथा । आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारिय-मल्लदामकलावं आसक्तो- भूमिलग्नः उत्सक्त-श्चोपरि लग्नो विपुलो वृत्तो वग्घारिउत्ति प्रलम्बो माल्यदाम्नां पुष्पमालानां कलापः- समूहो यत्र तत्तथा । पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं पञ्चवर्णाः सरसाः सुरभयो ये मुक्ताः- करप्रेरिताः पुष्पपुञ्जास्तैर्य उपचारः - पूजाभूमेस्तेन कलितम् । कालागरुपव-रकुंदुरुक्कतुरुक्कधूपडज्झंतमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं कृष्णागरुः प्रवरकुन्दुरुक्कं चर्चडाभिधानो गन्धद्रव्यविशेषः कुन्दुरुक्कं-चीडम्, तुरुक्कं-सिल्हकं धूपगन्धद्रव्यसंयोगज इति द्वन्द्वः, एतेषां वा सम्बन्धी यो धूपनस्य दह्यमानस्य सुरभिर्यो मघमघायमानोऽतिशयवान् गन्ध उद्धूत-उद्धूतः तेनाभिराममभिरमणीयं यत्तत्तथा । सुष्ठुगन्धवराणां प्रधानः चूर्णानां गन्धो यस्मिन् अस्ति तत्सुगन्धवरगन्धिकं यत्तत्तथा । तथा गन्धप्रवर्तिगन्धद्रव्यगुटिका कस्तूरिका वा गन्धवर्तिस्तद्भूतं सौरभ्यातिशयात्, तत्कल्पम् । करेह य कारवेह य । **तते णं कोडुंबियपुरिसा सेणियस्स रण्णो एयमट्ठं पडिसुणंति पडिसुणित्ता रायगिहं जाव करेंति कारयंति करेत्ता कारयेत्ता एयमाणत्तियं पच्चपिणंति** त्ति **आज्ञप्तिमाज्ञां प्रत्यर्पयन्ति** सम्पाद्य निवेदयन्ति ।

**[सू.432] तते णं से सेणिए राया बलवाउयं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हय–गय–रह–जोह–कलियं चाउरंगिणं सेण्णं सण्णाहेह जाव से पच्चपिणति । तए णं सेणिये राया जाणसालियं सद्दावेति सद्दावित्ता एवं वदासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! धम्मियं जाणपवरं जुत्तामेव उवट्ठवेहि उवट्ठवेत्ता मम एतमाणत्तियं पच्चपिणाहि, [1]णिज्जाइस्सामि समणं भगवं महावीरं अभिवंदए ।**

[ज.432] '**बलवाउयं**' ति **बलव्यापृतं** सैन्यव्यापारपरायणम् । '**हये**'त्यादि **हयगजरथयोद्धकलितां चातुरङ्गिणीं सेनां सन्नाहयध्वम्** । **यावत्**करणात् ते कोडुंबियपुरिसा इत्यादि द्रष्टव्यम् । '**जाणसालि**'त्ति **यानशालाधिकारिणम्** । इह यानं गन्त्र्यादि । '**धम्मियं जाणपवरं**' ति धर्मार्थं यानं - गमनं येन तद्धर्मयानम्, तन्मध्ये प्रवरं - श्रेष्ठं शीघ्रगमनत्वादिगुणोपेतं योत्रितमेव उपस्थापय । किमर्थम् ? इत्याह – '**णिज्जा–इस्सामि**'त्ति **निर्गमिष्यामि श्रमणं भगवन्तं महावीरम् अभिवन्दितुम्** ।

**[सू.433] तते णं से जाणसालिए सेणिएणं रन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठ जाव हितए जेणेव जाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता जाणसालं अणुपविसति अणुपविसित्ता जाणाइं[2] पच्चुवेक्खति जाणाइं पच्चोरुभति जाणाइं संपमज्जति संपमज्जित्ता जाणाइं नीनेति नीनित्ता जाणाइं[3] संवट्टेइ संवट्टित्ता दूसं पवीणेति पवीणित्ता जाणाइं समलंकरेति समलंकरित्ता जाणाइं वरमंडियाइं करेति करित्ता जेणेव वाहणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता वाहणसालं अणुप्पविसति अणुप्पविसित्ता वाहणाइं पच्चुवेक्खेइ पच्चुवेक्खित्ता वाहणाइं संपमज्जइ संपमज्जित्ता वाहणाइं[4] अप्फालेइ अप्फालित्ता वाहणाइं**

1 'णिज्जाइस्सामि.... अभिवंदए' नास्ति मुद्रिते ।

2 'जाणगं प°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

3 'जाणाइं संवट्टेति संवट्टित्ता' इति नास्ति मुद्रिते ।

4 '°इं णीणेति णीणित्ता वाहणाइं अप्फालेइ' इति मुद्रिते ।

**णीणेति णीणित्ता दूसे पवीणेति पवीणित्ता वाहणाइं सालंकाराइं[1] करेइ करित्ता वाहणाइं वरभंडमंडिताइं करेति करित्ता जाणाइं जोएति जोइत्ता वटुमं[2] गाहेति गाहित्ता पओगलट्ठिं[3] पओयधरए य समं आडहइ आडहित्ता [4]अंतरासमपदंसि अंतरापतोदंसि जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयल जाव एवं वदासी–जुत्ते ते सामी धम्मिए जाणप्पवरे आइट्ठं भद्दं तद्रूहाहि ।**

[ज.433] '**जाणाइं पच्चुवेक्खति**'त्ति **यानानि** शकटादीनि **प्रत्युपेक्षते** निरीक्षते । '**जाणाइं संपमज्जइ**' **यानानि सम्प्रमार्जयति** विरजीकरोति, **यानानि प्रत्यवरोहति** उच्चस्थानात् । '**नीणेइ**' त्ति **यानानि** शालाया **निष्काशयति** । '**संवट्टेइ**'त्ति **संवर्तयति** एकत्र स्थाने न्यस्यति । '**दूसं पवीणेइ**'त्ति **दूष्यं** तदाच्छादनवस्त्रं **प्रविनयत्य**पसारयति । '**जेणेवे**'त्यादि ततः स यानशालिको **यत्रैव वाहनशाला तत्रैवोपगच्छति** । **वाहनानि** बलिवर्दान् । व्याख्या प्राग्वत्, नवरं '**वाहणाइं अप्फालेइ**' त्ति **आस्फालयति** उत्तेजयतीत्यर्थः । '**दूसे पवीणेइ**'त्ति मक्षिकामशकादिनिवारणार्थं नियुक्तानि वस्त्राणि व्यपनयति । '**सालंकाराइं करेइ**'ति **सालङ्काराणि करोति** योत्रादिभिः कृतालङ्काराणि करोति । '**वरभंडगमंडियाइं**'ति प्रवराभरणभूषितानि '**जाणाइं जोएइ**' त्ति वाहनै**र्यानानि योजयति** सम्बन्धयतीत्यर्थः । '**वटुमं गाहेइ**'त्ति **वर्त्म ग्राहयति** यानानि मार्गे स्थापयतीत्यर्थः । '**पओगलट्ठिं**'ति **प्रतोत्रयष्टिं** प्राजनकदण्डम् । '**पओयधरए य**'त्ति प्रतोत्रधरान् शकटखेटकान् '**समं**'ति एककालं '**आडहइ**'त्ति आदधाति नियुङ्क्ते । '**अंतरासमपदंसि**' अन्तरा-मध्ये आश्रमपदे-गृहपङ्क्तिवर्त्मान्तराले '**अंतरापतोदंसि**'त्ति अन्तरा-मध्ये प्रतोदे-यष्टिभरविरचिते । '**जेणेवे**'त्यादि सुबोधम् । '**आइट्ठ**'मित्यादि **आदिष्टं** यद्युष्माभिः तत्र, तवारोहणादौ **भद्रं** कल्याणं भवत्विति शेषः ।

**[सू.434] तए णं से सेणिए राया भिंभिसारे जाणसालियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव जेणेव मज्जण[5]घरे तहेव जाव कप्परुक्खए चेव अलंकित–विभूसिते णरिन्दे जाव मज्जणघरातो पडिनिक्खमति पडिनिक्खमित्ता जेणेव चेल्लणादेवी तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता चेल्लणं देविं एवं वदासि ।**

[ज.434] '**जेणेव मज्जणघरे**'त्ति **मज्जनघरं** '**तहेव**'त्ति **तथैव यावत्**करणात्, *तेणेव उवागच्छति मज्जणघरं अणुपविसति समत्तजालाउलाभिरामे विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जण्हाणमंडवंसि [दशा.8-160]* इत्यादि द्रष्टव्यम् ।

**[सू.435] एवं खलु देवाणुप्पिये ! समणे भगवं महावीरे आदिकरे तित्थकरे जाव पुव्वाणुपुव्विं जाव संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । तं महाफलं खलु देवाणुप्पिये ! तहारूवाणं अरहंताणं**

---

1 '°कारेइ' इति मुद्रिते ।

2 'वट्टमग्गं गा°' इति मुद्रिते ।

3 '°लट्ठिए धरए य आरुहइ' इति मुद्रिते ।

4 'अंतरासमपदंसि अंतरापतोदंसि' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

5 '°घरं अणुपविसइ जा°' इति मुद्रिते ।

**भगवंताणं जाव तं गच्छामो देवाणुप्पिये ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवतं चेतियं पज्जुवासामो, एयण्णं[1] इहभवे य परभवे य हिताए[2] जाव आणुगामियत्ताए भविस्सति ।**

[ज.435] '**आदिगरे तित्थगरे**' **याव**त्करणात् सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमेत्यादि द्रष्टव्यम् । '**तं महाफल**'मित्यादि यस्मादेवं तस्मान्महद्विशिष्टं फलमर्थो भवतीति गम्यम् । '**खल्वि**'ति निश्चये । '**तहारूवाणं**' ति तत्प्रकारस्वभावानां महाफलजननस्वभावानामित्यर्थः । **अर्हतां भगवतां** '**जाव**'त्ति **याव**त्करणात् *णाम-गोयस्सवि सवणयाए किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए ? एगस्स वि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए ? किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणताए ? [औप.सू.27 पृ.57B]* इति द्रष्टव्यम् । 'णामे'त्ति नामगोत्रयोः श्रवणतया इत्यनेन भगवतो भावतो भावशुद्ध्या नामश्रवणमपि बहुफलमिति प्रतिपादितम् आराध्यत्वात् भगवतः, अतस्तन्नामापि श्रवणमात्रेणापि बहुतरफलदमिति । 'किमंग पुण' त्ति किं पुनरिति पूर्वोक्तार्थस्य विशेषद्योतनार्थः । 'अंगे'त्यामन्त्रणे अथवा परिपूर्ण एवायं शब्दो विशेषणार्थः । अभिगमनमभिमुखगमनं वन्दनं प्रणमनं प्रतिप्रच्छनं शरीरादिवार्ताप्रश्नः पर्युपासनं सेवा, एतेषां भावस्तत्तथा । तथा 'एगस्स वि'त्ति एकस्यापि 'आयरियस्स'त्ति आर्यस्याऽऽर्यप्रणेतृत्वात् 'धम्मियस्स'त्ति धार्मिकस्य धर्मप्रयोजनत्वात् । अत एव सुवचनस्येति '**वंदामो**'त्ति स्तुमः '**नमंसामो**'त्ति प्रणमामः '**सक्कारेमो**'त्ति सत्कुर्मः आदरं वस्त्राद्यर्चनं वा विदध्मः '**सम्माणेमो**'त्ति सन्मानयामः उचित-प्रतिपत्तिभिः । '**कल्लाण**'मित्यादि **कल्याणं** कल्याणहेतुत्वादभ्युदयहेतुमित्यर्थो भगवन्तमिति योगः, '**मंगलं**' दुरितोपशमनहेतुं **दैवतं** देवं चैत्यं जिनप्रतिमां तदिव **चैत्यं पर्युपासयामः** सेवामहे । '**एयण्णं**'ति **एतद्भ**गवद्वन्दनादि अस्माकं '**इहभवे य**'त्ति अत्र भवे, चस्य भिन्नक्रमत्वात् **परभवे च** जन्मान्तरे '**हियाए**' त्ति **हिताय** पथ्यान्नवत्, **याव**त्करणात् सुहाए खमाए निस्सेयसाए इति द्रष्टव्यम् । तत्र 'सुहाए'त्ति सुखाय शर्मणे 'खमाए'त्ति क्षमाय सङ्गतत्वाय 'निस्सेयसाए'त्ति निःश्रेयसाय मोक्षाय '**आणुगामियत्ताए**'त्ति **आनुगामिकत्वाय** भवपरम्पराशुभानुबन्धसुखाय **भविष्यती**तिकृत्वा इतिहेतोरित्यर्थः ।

**[सू.436] तते णं सा चेल्लणादेवी सेणियस्स रण्णो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव पडिसुणेति, पडिसुणित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अंतो[3] अंतेउरंसि ण्हाता कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता किं ते वरपायपत्तणेउरमणिमेहलहाररइयउवचियकडगखुड्डएगावलीकंठमुरय-तिसरतवरवलयहेमसुत्तयकुंडलउज्जोयवियाणणा रयणविभूसियंगी चीणंसुयवत्थपरिहिता दुगुल्लसुकुमार-कंतरमणिज्जउत्तरिज्जा सव्वोउयसुरभिकुसुमसुंदररयितपलंबसोहंतकंत[4]विकसंतचित्तमाला वरचंदणचच्चिया,**

---

1 'एतेणं इ°' इति मुद्रिते ।

2 '°ए सुहाए खमाए निसेसाए जा°' इति मुद्रिते ।

3 'अंतो अंतेउरंसि' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

4 '°तविकंतवि°' इति मुद्रिते ।

**वराभरणभूसियंगी कालागरुधूवधूविया सिरीसमाणवेसा बहूहिं खुज्जाहिं चिलातियाहिं जाव[1] जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छति ।**

[ज.436] '**अंतो अंतेउरंसि**'त्ति अन्तर्मध्ये अन्तःपुरस्येत्यर्थः । '**किं ते**' इत्यादि किमपरमित्यर्थः वरपादप्राप्तनूपुरमणिमेखलाहाराः तथा रचितान्युपचितकटकानि च खटुकानि-चाङ्गुलीयाभरणानि एकावली च- विचित्रमणिकृता एकसरिका, कण्ठमुरजश्चाऽऽभरणविशेषः, त्रिसरकं च तवरश्च- आभरण-विशेषः वलयश्च- प्रतीतः, हेमसूत्रकं च-हेममयं कटीसूत्रं यस्याः सा, तथा कुण्डलोद्योतिताननाः, ततो वरपादप्राप्तनूपुरादीनां कर्मधारयः । रत्नानां भूषणैर्विराजितमङ्गं शरीरं यस्याः सा तथा । चीनांशुकं नाम यद्वस्त्राणां मध्ये प्रवरं, तत्परिहितं- निवसनीकृतं यया सा तथा । '**दुगुल्ले**'त्यादि दुकूलं - वस्त्रम् अथवा दुकूलो - वृक्षविशेषः तद्वल्काज्जातं दुकूलं वस्त्रविशेष एव, तत्सुकुमालम्, अत एव कान्तं - पुनः पुनरभिलषणीयं रमणीयं-मनोहरम् उत्तरीयम्-उपरिकायाच्छादनं यस्याः सा तथा । सर्वर्तुकसुरभिकुसुमैः सुन्दरा रचिता प्रलम्बमाना शोभमाना कान्ता विकसन्ती चित्रा माला यस्याः सा तथा । वरं प्रधानं यच्चन्दनं तच्चर्चितं शरीरे यया सा तथा । वराणि- प्रधानानि यानि आभरणानि तैर्भूषितमङ्गं यस्याः सा तथा । कृष्णागरुधूपेन धूपिता या सा तथा । श्रीर्लक्ष्मीस्तत्समानवेषो यस्याः सा तथा । अधिकृतवाचना अनुस्रियते – '**बहूहिं खुज्जाहिं**' ति **बहूवीभि**र्बहुसङ्ख्याभिः **कुब्जकाभि**र्वक्रजङ्घाभिः '**चिलाइयाहिं**' ति चिलातदेशोत्पन्नाभिः । '**जाव**'त्ति **याव**त्करणात् इदं दृश्यम् – 'वामणियाहिं' ति ह्रस्वशरीराभिः 'वडभियाहिं' ति मडहकोष्ठाभिः बब्बरियाहिं बर्बरीभिः बर्बरदेशसम्भवाभिः बकुशकाभिः पोतिकाभिः पल्हविकाभिः ईसिनिकाभिः लासिकाभिः लाकुसिकाभिः द्रविडीभिः सिंहलीभिः आरबीभिः पक्षिणीभिः बहुलीभिः मुरुण्डिभिः शबरीभिः नानादेशीभिः बहुभिः नानाविधानार्यदेशोत्पन्नाभिरित्यर्थः, विदेशस्तद्देशापेक्षया राजगृहं नगरं विदेशः तस्य परिमण्डिकाभिः । इंगियचिंतियपत्थियवियाणाहिं तत्र इङ्गितेन- नयनादिचेष्टाविशेषेण चिन्तितं- च परेण हृदि स्थापितं प्रार्थितं- चाभिलषितं च विजानन्ति यास्तथा ताभिः । सदेसनेवत्थगहियवेसाहिं स्वदेशे नेपथ्यमिव गृहीतो वेषो यकाभिः तास्तथा ताभिः । तथा चेडियाचक्कवालवरिसधरथेरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपरिक्खित्ता त्ति चेटिकाचक्रवालेनार्थात् स्वदेशसम्भवेन वर्षधराणां वध्रितककरणेन नपुंसकीकृतानामन्तःपुरमहल्लकानां स्थविरकञ्चुकिकानामन्तःपुरप्रयोजन-निवेदकानां प्रतीहाराणां वा महत्तरकानां चान्तःपुरकार्यचिन्तकानां वृन्देन परिक्षिप्ता या सा तथा । '**जेणेव बाहिरिया**' इत्यादि व्यक्तम् ।

**[सू.437] तए णं से सेणिए राया चेल्लणाए देवीए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ दुरुहित्ता सकोरिण्टमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं उववाइयगमेणं नेयव्वं जाव[2] ⇒ समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ ठवित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ**

1 'महत्तरवंदपरिक्खित्ता' इति अधिकः पाठोऽत्र मुद्रिते सर्वासु प्रतिषु च ।

2 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**पच्चोरुहित्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं, तं जहा – खग्गं छत्तं उप्फेसं पाउआओ वालवीयणिज्जं, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तं ⇐ जहा–सच्चित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए १ अच्चित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए २ एगसाडिएणं उत्तरासंगकरणेणं ३ चक्खुफासे अंजलिकरणेणं ४ मणसो एगत्तीकरणेणं ५ । समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करेत्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ, तं जहा – काइयाए वाइयाए माणसियाए । एवं चेल्लणा देवी जाव जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं[1] ⇒ महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तं जहा – सच्चित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए १ अच्चित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए २ विणओणयाए गायलट्ठीए ३ चक्खुप्फासे अंजलिकरणेणं ४ मणसो एगत्तीकरणेणं ५ समणं भगवं महावीरं ⇐ वंदति नमंसति सेणियं रायं पुरो कट्टु ठितिया चेव जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासति ।**

[ज.437] '**उववातियगमेणं**'ति औपपातिकग्रन्थोक्तकोणिकवन्दनगमनप्रकारेणायमपि निर्गतः । विस्तरस्तु तत एवावसेयो विस्तरभिया नेह प्रतन्यते । **याव**त्करणात् *तते णं तस्स सेणियस्स रन्नो भिंभासारस्स धम्मियं जाणपवरं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठट्ठमंगलया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपत्थिया, तं जहा–सोवत्थिय१सिरिवच्छ२णंदियावत्त३वद्धमाणक४भद्दासण५[2]कलस६मच्छ७दप्पणा८ । तयाणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं दिव्वा य छत्तपडागा सचामरा दंसणरइयआलोयदरसणिज्जा वाउद्धूयविजयवेजयंती य ऊसिया गगणतलमणुलिहंती पुरतो अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया [औप. सू.31 पृ.68B]* इत्यादि द्रष्टव्यम् । किञ्चित्परिज्ञानहेतोर्लिख्यतेऽनुक्रमः – बहुकिङ्करजनपरिगृहीतं छत्रं सिंहासनं च पुरतः सम्प्रस्थितम् । कुन्तचामरपाशपुस्तकफलकपीठग्रहाः पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थिताः । ततः कान्दर्पिका दण्डिनः शिखण्डिनो जटिनो हास्यकरा डमरकराः कान्दर्पिका द्रवकराः कौत्कुचिका क्रीडाकराश्च गायन्तो नृत्यन्तो भाषयन्तो जयजयशब्दं प्रयुञ्जन्तः पुरतः सम्प्रस्थिताः । ततोऽष्टशतं गजानां पुरतः प्रस्थितमष्टशतं च हयानाम् अष्टशतं च छत्रचामरपताकातोरणकिङ्किनीसमूह-परिक्षिप्तानाम् अष्टशतं रथानां पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितम् । ततः स श्रेणिको हाराद्याभरणभूषितो धृतच्छत्रः चामरवीज्यमानो देवसन्निभया ऋद्ध्या चतुरङ्गदलसेनया परिवृतो गमनाय प्रधारितवान् । ततः श्रेणिकस्य पुरतो महान्तोऽश्वाः उभयतो नागाः पृष्ठतो रथा रथसङ्गेल्यो राजवाहनादीनि सम्प्रस्थितानि । ततः सर्वर्द्ध्या सर्ववादित्रनादेन राजगृहं नगरं मध्यंमध्येन बहुजननयनशतैरवलोकमानः बहुजनैरभिस्तूयमानः बहुजनै रूपादिसम्पदाप्रार्थ्यमानः परस्परमङ्गुलीसहस्रैर्दर्श्यमानः जयजयशब्दं शृण्वन् निर्गच्छति । अथाधिकृतवाचनानुश्रीयते – **समणस्स भगवतो महावीरस्स अदूरसामंते** त्ति अनिकटासन्ने उचिते देशे । '**धम्मिय**'मित्यादि **धार्मिकं यानप्रवरं** '**ठवेइ**' त्ति **स्थापयति** स्थिरीकरोति । '**अवहट्टु**' **अपहृत्य** परित्यज्य '**रायककुहाइं**' ति नृपचिह्नानि तद्यथा छत्रखड्गे प्रतीते '**उप्फेसं**' ति मुकुटं किरीटं, न तु शिरोवेष्टनमपीति

1 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 '°णपुण्णक°' इति M1–M3–M4–K ।

भावार्थः, **पादुके** प्रतीते **वालवीयणिज्जं** ति चामरम् । '**पंचविहेण**'मित्यादि पञ्चप्रकारेण **अभिगमेन** प्रतिपत्त्या **अभिगच्छति** तत्समीपमभिगच्छति '**सच्चित्ताणं**' **सच्चित्तानां** पुष्पताम्बूलादीनां **व्युत्सर्जनया** त्यागेन **अचित्तानां** वस्त्रमुद्रिकादीनाम् **अव्युत्सर्जनया**ऽत्यागेन, **एकशाटिकेने**ति अनेकोत्तरीयशाटिकानां निषेधार्थमुक्तम्, उत्तरासङ्ग उत्तरीयस्य देहन्यासविशेषः । **चक्षुःस्पर्शे** दृष्टिपाते **अञ्जलिकरणेन** '**मणसो एगत्तीकरणेणं**' ति मनसोऽनेकत्वस्यानेकालम्बनत्वस्य एकत्वकरणम् एकालम्बनत्वस्य करणम् एकत्वीकरणं, तेन । '**तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ**' त्ति **त्रिविधया** त्रिप्रकारया **पर्युपासनया** मनोवाक्कायरूपया पर्युपास्ते सेवां करोति । **चेल्लणा**पि '**पंचविहेण**'मित्यादि पूर्ववत्, नवरं '**विणओणयाए गायलट्ठीए**' इति विनयेन-प्रह्वतालक्षणेन अवनता गात्रयष्टिः शरीरसंस्थितिर्यस्याः सा तथा तया । '**समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ**' **वन्दते** भगवद्गुणप्रकाशनेन **नमस्यति** पञ्चाङ्गप्रणिपातेनेत्यर्थः । '**सेणियं रायं पुरओ कट्टु**' **श्रेणिकं राजं(जानं) पुरतो**ऽग्रतः **कृत्वा** '**ठितिया चेव**'त्ति **स्थितिका, च**ः प्रकारान्तरसूचक **एवा**वधारणे, ऊर्ध्वस्थानस्थितैव अनुपविष्टेत्यर्थः । इह च वन्दनं पञ्चाङ्गप्रणिपातेन धर्मश्रवणं चोर्ध्वस्थितानां सभर्तृकानां भगवद्व्याख्यानश्रवणतो न तासां खेदप्राप्तिस्तथातिशयविशेषात् इति । इयं समवसरणादन्यत्र प्रवृत्तिः समवसरणे तु द्वादशापि पर्षदः सदोपविष्टा एव शृण्वन्ति, न तत्रोर्ध्वस्थितानां श्रवणाधिकार इत्यावश्यकनिर्युक्तौ, अतः सर्वत्र समञ्जसमिति । प्रकृतमनुश्रीयते – 'तिविधाए' इत्यादि व्याख्यातार्थम् ।

**[सू.438] तए णं समणे भगवं महावीरे सेणियस्स रन्नो भिंभिसारस्स चेल्लणाए देवीए तीसे महति-महालियाए परिसाए[1] केवलिपरिसाए चउदसपुव्विपरिसाए मुणिपरिसाए जतिपरिसाए महव्वइपरिसाए देवपरिसाए अणेगसयाए जाव धम्मो कहितो परिसा पडिगया, सेणितो राया पडिगतो ।**

[ज.438] '**तते ण**'मित्यादि व्यक्तम् । '**तीसे**' इत्यादि **तस्याः महतिमहत्या** विविधम् अनेकप्रकारम्, कथम्भूतायाः पर्षदः ? **केवलिपर्षदः** । केवलितुल्यचतुर्दशपूर्ववित्पर्षदः । यतन्तीति यतयः, त एव परिषत्परिवारो यतिपर्षत् तस्याः, अतिशयज्ञानिसाधूनामित्यर्थः । धर्मं कथयतीति योगः । महान्ति च तानि व्रतानि, तानि सन्ति येष्विति महाव्रतिनः तत्परिषदः । देवा भवनवास्यादयस्तत्पर्षदः । अनेकानि शतानि प्रमाणानि यस्यां सा तथा । '**जाव**' त्ति **याव**त्करणात् *ओहबले महब्बले अपरिमियबलविरियते-यमाहप्पकंतिजुत्ते [औप.सू.34 पृ.77B]* इत्यादि द्रष्टव्यम् । '**धम्मो कहिओ**'त्ति **धर्मः** श्रुतचारित्रात्मकः **कथित** आख्यातः यथा च जीवा बध्यन्ते कर्मभिर्मिथ्यात्वादिहेतुभिर्यथा मुच्यन्ते तैरेव ज्ञानाद्यासेवनतः यथा सङ्क्लिश्यन्ते अशुभपरिणामा भवन्ति तथा आख्यातीति । इहावसरे धर्मकथा औपपातिकोक्ता भणितव्या, अत्र बहुर्ग्रन्थ इति न लिखितः । **पर्षत्प्रतिगता**, स्वस्थानमिति गम्यम् । **श्रेणिको राजा**पि सचेल्लणाकः **प्रतिगतः** ।

**[सू.439] तत्थ[2] णं अत्थेगइयाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य सेणियं रायं चेल्लणं देविं पासित्ताणं**

---

1 'केवलिपरिसाए चउदसपुव्विपरिसाए महव्वइपरिसाए' एतानि पदानि न सन्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च । मुद्रिते 'महव्वइ' इत्यस्य स्थाने 'मणुस्स' इति अस्ति ।

2 '°त्थ एगतिया°' इति मुद्रिते ।

**इमेतारूवे मणोगए जाव संकप्पे समुपज्जित्था – अहो णं सेणिए राया महिड्ढीए जाव जे णं ण्हाते कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारभूसिते चेल्लणादेवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति । ण मे दिट्ठा देवा देवलोगंसि, सक्खं खलु अयं देवे, जति इमस्स तवनियमबंभचेरवासस्स[1] कल्लाणे फलवित्तिविसेसे अत्थि, तया वयमवि आगमेस्साइं इमाइं एताइं उरालाइं एयारूवाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरामो, सेत्तं साहू ।**

[ज.439] '**तत्थ णं**'ति **तत्र** भगवत्समवसरणे, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **अस्त्येकेषां निर्ग्रन्थानां निर्ग्रन्थीनां च श्रेणिकं राजं चेल्लणादेवीं** च **दृष्ट्वा** '**इमेयारूवे**' इत्यादि अयमेतद्रूपः **सङ्कल्पः समुदपद्यत** । कथम्भूत ? इत्याह – **मनोगतो** मनसि गतो व्यवस्थितो, नाद्यापि वचसा प्रकाशितस्वरूप इति भावः । पुनः कथम्भूत ? इत्याह – **याव**त्करणादिदं द्रष्टव्यम् - अज्झत्थिए इत्यादि आध्यात्मिकः आत्मन्यध्यध्यात्मम्, तत्र भव आध्यात्मिकः आत्मविषय इति भावः । सङ्कल्पश्च द्विधा भवति – कश्चिद् ध्यानात्मकोऽपरश्चिन्तात्मकस्तत्रायं चिन्तात्मक इति प्रतिपादनार्थमाह – चिन्तितः चिन्ता सञ्जाता एषामिति चिन्तितः चिन्तात्मक इति भावः । सोऽपि कश्चिदभिलाषात्मको भवति कश्चिदन्यथा, तत्रायमभिलाषा-त्मकस्तथा चाह – प्रार्थितः प्रार्थनं – प्रार्थो णिजन्तत्वात् अल्प्रत्ययः, प्रार्थः सञ्जातोऽस्येति प्रार्थितः अभिलाषात्मक इति भावः । किं स्वरूप इत्याह – '**अहो ण**'मित्यादि **अहो** इत्याश्चर्ये **णं** पूर्ववत्, **श्रेणिको राजा महर्द्धिको** भगवत्परिवाराद्यपेक्षया । **याव**त्करणादिदं द्रष्टव्यम् – महज्जुतिए महाद्युतिकः शरीराभरणाद्यपेक्षया, महब्बले महाबलः शरीरप्रमाणापेक्षया, महाजसे महायशो बृहत्प्रख्यातिः, महेसक्खे महेशाख्यो 'महेश्वर' इत्याख्या-ऽभिधानं यस्यासौ महेशाख्यः, महासोक्खे इति क्वचिद्वक्तव्यम् । किमिति ? **यत्स्नातः** पदव्याख्या प्राग्वत् । '**सद्धिं**' सार्द्धं '**भोगभोगाइं**' इति भोगार्हा भोगाः शब्दादयस्तान्, सूत्रे नपुंसकता प्राकृतत्वात्, प्राकृते हि लिङ्गं व्यभिचारि, यदाह पाणिनिः प्राकृतलक्षणे *लिङ्गं व्यभि-चार्यपी*ति । **भुञ्जानो विहरत्यास्ते** । अधिकृतमाह – '**ण मे**' इत्यादि **न** इति निषेधे **मे** मया **दृष्टाः**, एकवचनं स्वस्वाध्यवसायिकत्वात्, **देवा देवलोके**, परं **साक्षात्**प्रत्यक्षः **खल्वयं देवः** तथाविधसम्पत्समन्वितत्वा-देतस्यापि, तर्हि '**जती**'ति **यदि एतस्य** प्रत्यक्षमङ्गीकृतस्य **तपोनियमब्रह्मचर्यवासस्य कल्याणः** कल्यं नीरोगताम् अणयति- गमयति प्रापयतीतियावत् कल्याणः, प्रस्तावाच्छुभः **फलवृत्तिविशेषोऽस्ति** विद्यते, एतावता इदं कष्टानुष्ठानं चेत् क्रियमाणं सफलमस्ति, क्वचित् तवनियमगुत्तिबंभचेरफलवित्तिविसेसे इति पाठः सुबोध एव, तदा **वयमपि आगमिष्यत्कालभाविनः इमान् उदारान्** प्रधानान् **मानुष्यकान् भोगभोगान्** पूर्ववत् {**याव**त्करणात् महिड्ढिया इत्यादिपदानि द्रष्टव्यानि} '**सेत्तं साहु**'त्ति तदेतत्**साधु** शोभनं सम्यगितियावत् ।

**[सू.440] अहो णं चेल्लणा देवी महिड्ढीया जाव महेसक्खा जा णं ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिता सेणिएणं रन्ना सद्धिं उरालाइं जाव माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरति न मे दिट्ठीओ देवीओ देवलोगंसि, सक्खं खलु इयं देवी, जइ इमस्स सुचरियस्स तवनियमबंभचेरवासस्स**

1 '°रगुत्तिफ°' इति K–M1–M2–M3–M4–A1–A2–LD1–LD2 ।

**कल्लाणे फलवित्तिविसेसे अत्थि, तया वयमपि आगमिस्साइं इमाइं एयारूवाइं उरालाइं जाव विहरामो, सेत्तं साहुणी ।**

[ज.440] साध्व्यश्चैवं चिन्तितवत्यः- '**अहो ण**'मित्यादि व्याख्या सुकरैव । तदेतत्साध्वी । तपोनियमादि-फलवृत्तिविशेषोऽस्तीत्यादि पूर्ववत् ।

**[सू.441] अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे तं बहवे निग्गंथाण निग्गंथीओ य आमंत्तेत्ता एवं वदासि- सेणियं रायं चेल्लणं देविं पासित्ता इमेतारूवे अब्भत्थिते जाव समुपज्जित्था । अहो णं सेणिए राया महिड्ढीए जाव सेत्तं साहू । अहो णं चेल्लणा देवी महिड्ढिया सुंदरा जाव सेत्तं साहुणी । से णूणं अज्जो अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ।**

[ज.441] '**अज्जो**'त्ति व्याख्या प्राग्वत् । '**से णूण**'मित्यादि '**से**' यदुक्तं मया '**नूणं**'ति एवमर्थे तत्र तत्रास्यैव व्याख्यातत्वात् । अथवा से इति शब्दो मागधदेशीप्रसिद्धो अथशब्दार्थो वर्तते, अथशब्दस्तु वाक्योपन्यासार्थः परिप्रश्नार्थो, यदाह – *अथ प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेषु*, नूनमिति निश्चितम्, **अर्थो**ऽभिधेयं **समर्थो** भवदभिप्रायप्रतिपादक इति काक्वा प्रश्नः । तत्र '**हंता**' इति निर्ग्रन्थनिर्ग्रन्थीवाक्यम् एवमर्थे दृष्टम्, **अस्ती**ति विद्यते ।

**[सू.442] एवं खलु समणाउसो मए धम्मे पन्नत्ते इणमेव निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले पडिपुण्णे संसुद्धे णेआउए सल्लगत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे निव्वाणमग्गे निज्जाणमग्गे अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे इत्थं ठिया जीवा सिज्झन्ति बुज्झंति मुच्चन्ति परिनिव्वायन्ति सव्वदुक्खाणमंतं करेन्ति ।**

**जस्स णं धम्मस्स निग्गंथे सिक्खाए उवट्ठिए विहरमाणे पुरा दिगिंच्छाए पुरा पिवासाए पुरा वाताऽऽतवेहिं[1] पुट्ठे विरूवरूवेहिं परिसहोवसग्गेहिं उदिण्णकामजाए यावि विहरेज्जा, से य परिक्कम्मेज्जा ।**

[ज.442] इत्थं तेषां निदानाविष्करणं विधाय तदपनोदार्थं भगवान् परोपकारनिरतः प्रवचनवर्णनव्याजेनाह – '**एवं खल्वि**'त्यादि **एव**मनन्तरवक्ष्यमाणस्वरूपेण हे **श्रमणा** ! हे **आयुष्मन्तः** ! '**इणमेवे**'ति **इदमेवे**ति द्वादशाङ्गं गणिपिटकं, निर्ग्रन्था बाह्याभ्यन्तरग्रन्थनिर्गताः साधवो निर्ग्रन्थानामिदं **नैर्ग्रन्थं**, **प्रावचनं** प्रकर्षेणाभिविधिनोच्यन्ते जीवादयो यस्मिंस्तत्प्रावचनम् । तत्किं स्वरूपम् ? अत आह – सद्भ्यो हितं **सत्यं** सन्तो मुनयो गुणाः पदार्था वा सद्भूतं वा सत्यम् । नयदर्शनमपि स्वविषये सत्यं भवत्येवेत्यत आह- '**अणुत्तरे**' नास्योत्तरं विद्यते **इत्यनुत्तरं** यथावस्थितसमस्तवस्तुप्रतिपादकत्वादुत्तममित्यर्थः । अन्यदप्येवंविधं भविष्यतीत्यत आह – '**केवले**'ति केवलमद्वितीयं नापरमित्थम्भूतमित्यर्थः । तथा **प्रतिपूर्ण**मपवर्गप्रापकै-र्गुणैर्भृतमित्यर्थः । सर्वमयत्वात्सर्वविषयं वा शुद्धं सामस्त्येन शुद्धं एकान्तेनाकलङ्कमित्यर्थः । '**णेयाउए**'त्ति नयनशीलं **नैयायिकं** मोक्षगमकमित्यर्थः न्यायोपपन्नं वा । एवम्भूतमपि कथञ्चित् तत्स्वाभाव्यान्नालं भवति बन्धननिकर्तनाय न भविष्यतीत्यत आह – '**सल्लगत्तणे**'त्ति कृन्ततीति कर्तनं, शल्यानि मायादीनि,

1 अत्र 'स पुरा' इत्यधिकः पाठो मुद्रिते ।

तेषां कर्तनं **शल्यकर्तनम्** । परमतनिषेधार्थत्वादाह - '**सिद्धिमग्गे**'त्ति सेधनं सिद्धिर्हितार्थप्राप्तिस्तस्या मार्गः **सिद्धिमार्गः** तत्, आर्षत्वान्नपुंसकत्वम् । '**मुत्तिमग्गे**'त्ति मोचनं मुक्तिरहितार्थकर्मविच्युतिस्तस्या मार्गो **मुक्तिमार्गस्**तत्केवलज्ञानादिहितार्थप्राप्तिद्वारेणाहितकर्मविच्युतिद्वारेण च मोक्षसाधनमिति भावना । अनेन च केवलज्ञानादिविकलाः सकर्मकाश्च मुक्ताः इति दुर्न्नयनिरासमाह । विप्रतिपत्तिनिरासार्थमाह – '**निव्वाणमग्गे**'त्ति निर्वृत्तिर्निर्वाणं सकलकर्मक्षयजमात्यन्तिकसुखमित्यर्थः तस्य मार्ग इति **निर्वाणमार्गस्**तत्, अनेन च निःसुखदुःखा मुक्तात्मान इति प्रतिपादनपरं च दुर्नयनिरासमाह । '**निज्जाणमग्गे**' त्ति याति तदिति यानम्, निरुपमं यानं निर्याणं मोक्षपदम्, तस्य मार्गो **निर्याणमार्गस्**तत्, अनेनानियतसिद्धिक्षेत्र-प्रतिपादनपरदुर्नयनिरासमाह । निगमयन्नाह – '**अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे**' त्ति **अवितथं** सत्यं च, यदि च पौनरुक्ताशङ्का तदा पूर्वत्र 'सच्चं' ति सार्चं सपूजं जगत्पूजास्पदत्वादिति व्याख्येयम्, **अविसंधि** अव्यवच्छिन्नं सर्वदा अपरविदेहादिषु भावात्, **सर्वदुःखप्रहीणमार्गः** सर्वदुःखप्रहीणो मोक्षस्त-त्कारणमित्यर्थः । साम्प्रतं परार्थकरणद्वारेणास्य चिन्तामणित्वमुपदर्शयति – '**इत्थं ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति**' इति **अत्र** नैर्ग्रन्थे प्रवचने **जीवाः सिद्ध्यन्ती**त्यणिमाद्यतिशयफलं प्राप्नुवन्ति **बुध्यन्ते** केवलिनो भवन्तीति '**मुच्चंति**' त्ति **मुच्यन्ते** भवोपग्राहिकर्मणा '**परिनिव्वायंति**' त्ति परि-समन्तात् निर्वान्ति, किमुक्तं भवति ? '**सव्वदुक्खाणमंतं करंति**'त्ति **सर्वदुःखानां** शरीरमानसभेदानाम् **अन्तं** विनाशं **कुर्वन्ति** । क्वचित् इणमेव निग्गंथं पावयणं इत्यनुस्वारान्तं दृश्यते, तदपि तथैव व्याख्येयम् । इत्थमभिधायाधुना चिन्तामणिकल्पे यथा केचन विप्रतिपत्तिं विदधते तथा दर्शयितुमाह – '**जस्स ण**'मित्यादि **यस्य धर्मस्य** चारित्रधर्मस्य, शिक्षा द्विविधा ग्रहणासेवनरूपा, तस्यै **शिक्षायै उपस्थितो निर्ग्रन्थः विहरन् पुरा**ग्रेतनचिन्तनकरणात् पूर्वं '**दिगिंच्छाए**' त्ति इह च दिगिंच्छत्ति देशीवचनेन बुभुक्षोच्यते, सैवात्यन्तव्याकुलहेतुरप्यसंयम-भीरुतया आहारपरिपाकादिवाञ्छा विनिवर्तिता तद्भावस्तत्ता तया । पातुमिच्छा पिपासा, तद्भावस्तत्ता तया । वातश्चाऽऽतपश्च वातातपौ, ताभ्यां **वातातपाभ्याम्** । '**पुट्ठे**' त्ति **स्पृष्टः** । '**विरूवरूवेहिं**' ति **विरूपरूपैश्च** नानाप्रकारैः, परीषहा एवोपसर्गाः परीषहोपसर्गास्तैः **परीषहोपसर्गैः**, '**उदिण्णे**'त्यादि उदीर्य उदयं प्राप्तः कामजातः कामप्रकारो यस्य स **उदीर्णकामजातः**, **चापि**शब्दौ उक्तस्य भेदान्तरसूचकौ, **विहरेत्** । कामो नाम इच्छा मदनात्मकः । '**से य परक्कमेज्ज**'त्ति **स च पराक्रमेत्** संयमे तपसि वा कामभोगाशंसायुक्त एव तपोऽनुष्ठानं विदध्यात् ।

**[सू.443] से य परिक्कम्ममाणे पासेज्जा –जे इमे उग्गपुत्ता महा[1]साउगा भोगपुत्ता महासाउगा तेसिं णं अन्नतरस्स अतिजायमाणस्स वा निज्जायमाणस्स वा उभओ[2] पुरओ महंतदासी–दास–किंकर–कम्मकर–पुरिसा [3]पायत्तपरिक्खित्तं छत्तं भिंगारं गहाय निगच्छंति । तदनन्तरं च णं पुरतो महं आसा आसवरा उभओ तेसिं नागा नागवरा पिट्ठओ रहा रहवरा रहसंगिल्लि । से[4] णं उद्धरियसेयछत्ते अब्भुग्गतभिंगारे**

1 '°हामाउया भो°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 'उभओ' इति नास्ति मुद्रिते सर्वासु च प्रतिषु ।

3 '°सा अंतप°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

4 '°ल्लि सेन्नं उ°' इति मुद्रिते ।

**पग्गहियतालविंटे पवियत्तसेयचामरवालवीयणिए अभिक्खणं अभिक्खणं अभिजातियणिजातिय-सप्पभे[1] सपुव्वावरं च णं ण्हाते कयबलिकम्मे[2] ⇒ कयकोउयमंगलपायच्छित्ते कंठे मालाकडे आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियमालामउलमउडी वग्घारियसोणिसुत्तमल्लदामकलावे अहयवत्थपरिहिए चंदणोक्किण्णगातसरीरे ⇐ महतिमहालियाए कूडागारसालाए महतिमहालयंसि[3] ⇒ सयणिज्जंसि दुहओ विब्बोयणे दुहओ अन्नए मज्झे णयगंभीरे, वण्णओ, ⇐ सव्वरातिणिएणं जोतिणा ज्झियायमाणेणं इत्थीगुम्मसंपरिवुडे महताहतणट्टगय[4]वाइततंतीतलतालतुडियघणमुत्तिंग[5]पडुप्पवाइयरवेणं ओरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति ।**

**तस्स णं एगमवि आणवेमाणस्स जाव चत्तारि पंच अवुत्ता चेव अब्भुट्ठेंति । भण देवाणुप्पिया किं किं करेमो ? किं आहरामो ? किं उवणेमो ? किं चेट्ठामो ?, किं भे [6]हिययेच्छितं ? किं भे आसगस्स सदति ?**

[ज.443] तत्र च **स** '**परक्कममाणे पासेज्ज**'त्ति **पराक्रमन्** गच्छन् संयमाध्वनि **पश्येत्** । कान् ? इत्याह - '**उग्गपुत्त**'त्ति **उग्रपुत्राः**, उग्रा नाम आदिदेवावस्थापिता रक्षवंशजा, तेषां पुत्राः कुमारावस्थाः । '**महासाउगा**' इति उपलक्षणं चैतत्पितृकुलस्यापि, महान्तश्च ते स्वादुकाश्च **महास्वादुकाः** स्वादुपरायणाः भोगासेवनतत्परा इत्यर्थः । क्वचित् 'महामाउगा' इति पाठस्तत्र महती शीलरूपादियुक्ता माता येषां ते महामातृकाः इति । एवं **भोगपुत्राः** आदिदेवावस्थापितगुरुवंशजपुत्राः, उपलक्षणं चैतत् राजन्येक्ष्वाकुकौरवना-गादीनाम् । प्रकृतमाह – '**तेसिं ण**'मित्यादि **तेषा**मुग्रपुत्रादीना**मन्यतरस्य** '**अतिजाय**'त्ति आगच्छतो बहिः प्रदेशात् स्वगृहं प्रति '**निज्जाय**'त्ति गच्छतः स्वगृहादेर्बहिः प्रदेशं प्रति, कथम् ? इत्याह - '**उभओ**' त्ति **उभयत**स्तेषाम् उग्रपुत्रादीनां **पुरतो**ऽग्रतो महान्तो ये दास्य-श्चेट्यो दासा-श्चेटकाः किङ्कराः- प्रति कर्म प्रभोः पृच्छापूर्वकारिणः कर्मकरा-स्तदन्यथाविधास्ते च ते पुरुषाश्चेति समासः, पदातं पदातिसमूहस्तैः परिक्षिप्तं परिवृतं यत्तत्तथा, एवंविधं **छत्रं भृङ्गारं** च **गहाय निगच्छंति**, इत्यनेन तस्य प्रभुत्वमावेदितं भवति । '**तदणंतर**'मित्यादि ततोऽनन्तरं **पुरतो**ऽग्रतो बृहत्तमा अश्वास्तुरङ्गाः '**आसवर**' त्ति **अश्ववराः** अश्वानां मध्ये प्रधानाः, '**नाग**' त्ति **नागा** हस्तिनः, **नागवराः** नागानां मध्ये प्रधानाः, एवं **पृष्ठतो रथाः रथवराः** '**रथसंगिल्लि**'त्ति रथसमुदायः । '**से ण**'मित्यादि **सो**ऽनिर्दिष्टनामा **उद्धृतश्वेतच्छत्रः** । तथा '**अब्भुगयभिंगारे**'त्ति अभ्युद्गतोऽभिमुखमुद्गत उत्पाटितो भृङ्गारो यस्य स तथा । '**पग्गहियतालविंटे**' त्ति प्रगृहीतं तालवृन्तं यं प्रति तथा । वीज्यमाना श्वेतचामरवालव्यञ्जनिका यं प्रति स तथा । '**अभिक्खणं**' ति भूयो भूयः, एकवचनं निर्गमनसमयमङ्गीकृत्य न दोषावहम् । कथम्भूतास्ते ? '**सप्पभा**' इति सती-शोभना प्रभा- कान्तिर्येषां

1 '°प्पभासे पु°' इति मुद्रिते ।

2 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठस्य स्थाने 'जाव सव्वालंकारविभूसिते' इत्येवं पाठो मुद्रिते सर्वासु प्रतिषु च ।

3 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतपाठस्य स्थाने 'सीहासणंसि जाव' इत्येवं पाठो मुद्रिते सर्वासु प्रतिषु च ।

4 '°ट्टगीतवा°' इति मुद्रिते सर्वासु प्रतिषु च ।

5 '°गमद्दलप°' इति मुद्रिते ।

6 'हितं इच्छि°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

ते **सत्प्रभाः** सप्रभा वा । '**सपुव्वावरं च ण**'मित्यादि सह पूर्वेण पूर्वाह्णकर्तव्येनापरेण वापराह्णकर्तव्येन यदि वा पूर्वं यत्क्रियते स्नानादिकं तथापरं च यत्क्रियते विलेपनभोजनादिकं तेन सह वर्तत इति **सपूर्वापरम्**, इदमुक्तं भवति – यद्यदा प्रार्थ्यते तत्तदा सम्पद्यते इति । अभिलषितार्थप्राप्तमेव लेशतो दर्शयितुमाह '**ण्हाये**'त्यादि व्यक्तार्थम् । '**कंठे मालाकडे**' त्ति **कण्ठे कृतमालः** । कप्पिय त्ति कल्पितश्चासौ मालाप्रधानो मुकुलितः कमलमुकुलसञ्चितो मुकुटश्च स तथा विद्यते यस्य स भवति **कल्पितमालामुकुल-मुकुटी** ।'**वग्घारिते**'त्यादि प्रलम्बितं श्रोणीसूत्रं मल्लदामकलापश्च येन स तथा । अहतं मूषिकाद्यनुपहतं यद्वस्त्रं तत्परिहितं येन स तथा । '**चंदणोक्किण्णगातसरीरे**' त्ति चन्दनेन प्रतीतेन उत्कीर्णमिवोत्कीर्णं गात्राणि शरीरं च यस्य स तथा । एवंविधः सन् '**महतिमहालियाए**' इत्यादि महत्यामुच्चायां महालयायां विस्तीर्णायाम्, **कूटाकारशालायां** कूटस्येव पर्वतशिखरस्येवाऽऽकारो यस्याः सा कूटाकारा, यस्या उपरि आच्छादनं शिखराकारं सा कूटाकारेति भावः, कूटाकारा चासौ शाला च कूटाकारशाला यदिवा कूटाकारेण शिखराकृत्योपलक्षिता शाला कूटाकारशाला, उपलक्षणं चैतत्प्रासादादीनाम् । कूटाकारशालाग्रहणं निर्जनत्वात्प्रधानभोगवृद्धिकारणत्वात् । **महतिमहालये शयनीये 'दुहतो' उभयत** उभौ शिरोऽन्तपादान्ता-वाश्रित्य **विब्बोयणि** त्ति उपधानं यत्र तत्तथा तस्मिन् । '**दुहउ**' त्ति **उभयतः उन्नते मध्ये** नतं निम्नत्वाद्गम्भीरं च महत्वान्नतगम्भीरम् तत्र । '**वण्णओ**'त्ति वर्णकग्रहणाद्*गंगापुलिणवालुया अवदालसालिसए [दशा. 8-131]* इत्यादिपदकदम्बकपरिग्रहः । '**सव्वराति**'त्ति **सर्वरात्रिकेण ज्योतिषा** दीपरूपेण **ध्मायमानेन** जाज्वल्यमानेन '**इत्थीगुम्म**' त्ति स्त्रीगुल्मेन युवतिजनेन सार्द्धमपरपरिवारेण सम्परिवृतो वेष्टितस्तथा । '**महयाहये**'त्यादि महता, रवेणेति योगः, 'अहये'त्ति आख्यानकप्रतिबद्धानीति वृद्धाः अथवा अहतानि आहतानि अव्याक्ष(ह)तानीति भावः, नाट्यगतवादितानि च तन्त्री-वीणा तला-हस्ततालाः तालाः-कांसिकाः त्रुटितानि-शेषतूर्याणि तथा घनो-घनसदृशो ध्वनिसामर्थ्यात् यो मृदङ्गो-मर्दलः पटुना-दक्षपुरुषेण प्रवादितस्तत एतेषां पदानां द्वन्द्वस्तेषां यो रवस्तेन । **उदारान्** प्रधानान् **मानुष्यकान्** मनुष्यसम्बन्धीन्, शेषव्याख्या प्राग्वत् ।

'**तस्से**'त्ति तस्य क्वचित्प्रयोजने समुत्पन्ने **सत्येकमपि** पुरुष**माज्ञापयतो यावच्चत्वारः पञ्च वा** पुरुषाः **अनुक्ता एव समुपतिष्ठन्ते** । ते च किं कुर्वाणा ? एतद्वक्ष्यमाणमूचुस्तद्यथा – **भणा**ऽऽज्ञापय हे स्वामिन् ! धन्या वयं येन भवताप्येवमादिश्यन्ते, **किं कुर्म** इत्यादि । '**आहरामो**'त्ति **आनयामः** ? '**किं उवणेमो**'त्ति सदपि **किमुपनयामः** ? **किमातिष्ठामो**ऽन्नादिपचनक्रियारूपम् ? '**किं भे**' **किं युष्माकं हृदयेप्सितम्**? तथा **किं** च **भे** युष्माक**मास्यकस्य स्वदते** स्वादु प्रतिभाति ? यदिवा यदेव भवदीयस्याऽऽस्यतः श्रवति तदेव वयं कुर्म इति ?

**[सू.444] जं पासित्ता निग्गंथे निदाणं करेति । जइ इमस्स तवनियमबंभचेरवासस्स तं चेव जाव साहू । एवं खलु समणाउसो निग्गंथे निदाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइयऽपडिक्कंते [1]अहारिहं पायच्छित्तं अपडिवज्जित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति**

1 'अहारिहं पायच्छित्तं अपडिवज्जित्ता' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**महिड्ढिएसु जाव चिरट्ठितिएसु ।**

**से णं तत्थ देवे भवति महड्ढिए चिरट्ठितिए । ततो देवलोगातो आउखतेणं ट्ठितिखतेणं [1]भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया तेसिं णं अण्णतरंसि कुलंसि पुमत्ताए पच्चायांति ।**

**से णं तत्थ दारए भवति सुकुमालपाणिपाए जाव सुरूवे, तए णं से दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णय-परिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते सयमेव पेइयं दायं पडिवज्जति । तस्स णं अतिजायमाणस्स वा पुरओ जाव महंतदासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ?**

[ज.444] प्रस्तुतमाह – **यं** पूर्वोक्तस्वरूपं पुरुषं '**पासेत्ता**'त्ति **दृष्ट्वा निर्ग्रन्थो निदानं करोति** । '**जइ इमस्से**'त्यादि पूर्ववत् । '**एवं खल्वि**'त्यादि **एव**मनन्तरोक्तप्रकारेण हे **श्रमण** ! हे **आयुष्मन् ! निर्ग्रन्थो निदानं कृत्वा** '**तस्स**'त्ति **तस्य** निदानरूप**स्थानस्य** अनालोच्य गुरूणामतिचारजातमनिवेद्य, एवम-प्रतिक्रम्यापुनःकरणेनानुत्थाय, अकरणयाए ति क्रियते इति करणं तस्य भावः करणता तथा अनभ्युत्थाय, अहारिहमिति यथार्हं प्रायश्चित्तापनयनयोग्यं तपःकर्मनिर्वृत्तिकादिकं पापच्छेदकत्वात्पापच्छित् प्रायश्चित्त-विशोधकत्वाद्वा प्रायश्चित्तम्, अप्रतिपद्य अनभ्युपगम्य **अन्यतरेषु** कल्पग्रैवेयकानां मध्ये अन्यतमेषु देवेषु **देवतया उपपत्तारो भवन्ति** । कथम्भूतेषु ? इत्याह - **महड्ढिएसु** इत्यादि प्राग्वत् । नवरं चिरा-प्रभूतकालभाविनी स्थितिर्येषां ते चिरस्थितिकाः ।

**ततो**ऽनन्तरं व्यवधानाभावेन '**आउक्खएण**'मित्यादि **आयुःक्षयेन** आयुर्दलिकनिर्जरणेन **स्थितिक्षयेन** आयुःकर्मणः स्थितेर्वेदनेन **भवक्षयेन** देवभवनिबन्धनभूतकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेनेति, **अनन्तरं** देवभवसम्बन्धिनां **चयं** शरीरं '**चइत्त**'त्ति **त्यक्त्वा** '**पुमत्ताए**' त्ति **पुरुषत्वेन प्रत्यायान्ति** । **स तत्र दारको भवति** कुमारक इत्यर्थः । कथम्भूत ? इत्याह – '**सुकुमाले**'त्यादि सुकुमारौ पाणी पादौ च यस्यासौ **सुकुमारपाणिपादः** । **याव**त्करणात् *अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरे लक्खणवंजणगुणोववेए [दशा. 8-107]* इत्यादिपदसमूहो द्रष्टव्यः । तत्र अहीनानि स्वरूपतः पूर्णानि याः सङ्ख्याः पुण्यानि वा पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तथा तदेवंविधं शरीरं यस्य स तथा तम् । लक्खणवंजणगुणोववेयं लक्षणानि-स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि- मषीतिलकादीनि, तेषां यो गुणः- प्रशस्तता तेनोपपेतो- युक्तो यः स तथा तम् । ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं शशिवत्सौम्याकारं कान्तं-कमनीयमत एव प्रियं द्रष्टॄणां दर्शनं-रूपं यस्य स तथा, तम् । '**विन्नयपरिणयमेत्ते**' त्ति विज्ञ एव विज्ञकम्, स चासौ परिणतमात्रश्च कलादिष्विति गम्यते, विज्ञकपरिणतमात्रः । '**जोव्वण**'त्ति यौवनमेव **यौवनकमनुप्राप्तः**, **स्वयमेव पैतृकं दायं**शब्देन धनं **प्रतिपद्यते** आत्मायत्तं करोति । शेषं व्यक्तम् ।

**[सू.445] तस्स णं तहप्पगारस्स पुरिसजातस्स तहारूवे समणे वा माहणे वा उभओ कालं केवलि-पन्नत्तं धम्ममाइक्खेज्जा ? हंता आइक्खेज्जा, से णं पडिसुणेज्जा ? नो इणट्ठे समत्थे, अभविए णं से**

1 'भवक्खएणं' नास्ति मुद्रिते ।

**तस्स धम्मस्स सवणयाए । से य भवइ महिच्छे महारंभे महापरिग्गहे अहम्मिए जाव दाहिणगामी नेरइये आगमिस्साणं दुल्लहबोहिए यावि भवइ, तं एवं खलु समणाउसो तस्स णिदाणस्स इमेतारूवे पावए[1] फलविवागे जं णो संचाएति केवलिपन्नत्तं धम्मं पडिसुणित्तेए ॥१॥**

[ज.445] '**धम्ममाइक्खेज्जा**'त्ति **धर्मं कथयेत्** ? एवं **स प्रतिशृणुयात् ? नायमर्थः समर्थः** । **अभविको**ऽयोग्यः '**से**' **तस्य धर्मस्य श्रवणतायै** । एतन्निदानस्यैतदेव फलं यत्केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं श्रोतुं न समर्थो भवति । नवरं '**पावए फलविवागे**' त्ति **पापकः फलविपाकः** इति प्रथमनिदानस्वरूपम् ॥1॥

**[सू.446] एवं खलु समणाउसो मए धम्मे पन्नत्ते इणमेव निग्गंथे पावयणे जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेति । जस्स णं धम्मस्स निग्गंथी सिक्खाए उवट्ठिया विहरमाणी पुरा दिगिंच्छाए उदिन्नकामजाया विहरेज्जा सा य परक्कमेज्जा, सा य परक्कम्ममाणी पासेज्जा–से जा इमा इत्थिया भवति एगा एगजाया एगाभरणपिहाणा तेल्लपेलाइ व सुसंगोप्पिता चेल्लपेलाइ व सुसंपरिग्गहिया रयणकरंडगसमाणी तीसे णं अतिजायमाणीए वा निज्जायमाणीए वा पुरतो महंत दासी दास चेव जाव किं भे आसगस्स सदति ? जं पासित्ता निग्गंथी णिदाणं करेति । जति इमस्स सुचरियस्स तवनियम जाव भुंजमाणी विहरामि सेत्तं साधुणी ।**

[ज.446] अथ द्वितीये किमपि लिख्यते – '**एगे**'त्यादि **एका** स्वरूपतः **एकजाता** तज्जातीया अन्यस-पत्नीवर्जिता '**एगाभरणा**' इति एकाभरणानि एकजातीयहेमरूप्यरत्नाभरणानि पिधानानि च वस्त्राणि यस्याः सा तथा । पुनः कथम्भूता ? इत्याह – '**तेल्लपेलाइ वे**'त्यादि तैलपेटा सौराष्ट्रप्रसिद्धो मृन्मयं(यः) तैलस्य भाजनविशेषः । स च भङ्गभयात् लोठनभयाच्च सुष्ठु सङ्गोप्यते, एवं सापि । क्वचित् तेलकेला इति पाठः, तत्रापि स एवार्थः । '**चेलपेलाइ व सुसंपरिग्गहिया**' चेलानि वस्त्राणि, तेषां पेला पोट्टलिका इव सुसम्प्रगृहीता सुरक्षिता इत्यर्थः । '**रयणे**'त्यादि **रत्नकरण्डकसमाना** बहुमूल्यतया यत्नेन रक्षिता । शेषं कण्ठ्यम् ।

**[सू.447] एवं खलु समणाउसो निग्गंथी णिदाणं किच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइयऽपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति महिड्ढिएसु जाव सा णं तत्थ देवे भवति जाव भुंजमाणी विहरति । सा णं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ट्ठितिक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता जइ इमे उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया एतेसिं णं अण्णतरंसि कुलंसि दारियत्ताए पच्चायाति सा णं तत्थ दारिया भवति सुकुमाल जाव सुरूवा । तते णं तं दारियं अम्मापियरो उम्मुक्क–बालभावं विण्णयपरिणयमित्तं जोव्वणगमणुप्पत्तं पडिरूवेणं सुक्केणं [2]पडिरूवेणं पडिरूवस्स भत्तारस्स भारियत्ताए दलयन्ति सा णं तस्स[3] भारिया भवति । एगा एगजाता इट्ठा कंता जाव रयणकरंडगसमाणी तीसे जाव**

---

1 'पावए' नास्ति मुद्रिते ।

2 'पडिरूवेणं' नास्ति मुद्रिते। '°ण विणएणं प°' इति LD2 ।

3 'तत्थ भा°'इति K–Kh–LD1–LD2 ।

**अतिजायमाणीए वा निज्जायमाणीए वा पुरतो महंत दासी–दास जाव किं ते आसगस्स सदति ?**

[ज.447] '**दारियत्ताए**'त्ति पुत्रीतया । '**पडिरूवेणं सुक्केणं**' ति **प्रतिरूपेण** स्वरूपतः उभयकुलोचितेन विवाहमीलनदानरूपेण, **प्रतिरूपेण** कन्यासदृशरूपेण **प्रतिरूपस्य** वयःप्रभृतिगुणसमेतस्य **भर्तु**र्भार्यातया ददति ।

**[सू.448] तीसे णं तहप्पगाराए इत्थियाए तहारूवे समणे वा माहणे वा उभओ कालं केवलिपन्नत्तं धम्मं आइक्खेज्जा ? हंता[1] आइक्खेज्जा । सा णं भंते पडिसुणेज्जा ? णो इणट्ठे समत्थे, अभविया णं सा तस्स धम्मस्स सवणयाए । सा च भवति महिच्छा महारंभा महापरिग्गहा अहम्मिया जाव दाहिणगामिए नेरइए आगमिस्साए दुल्लभबोहियाए यावि[2] भवति । एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावए[3] फलविवागे जं णो संचाएति केवलिपन्नत्तं धम्मं पडिसुणेत्तए ॥२॥**

[ज.448] एतस्य निदानस्यैतत्फलं यत्केवलिभाषितधर्मश्रवणं न प्राप्नोति ॥2॥

**[सू.449] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते इणमेव निग्गंथे पावयणे तह चेव जस्स णं धम्मस्स निग्गंथे सिक्खाए उवट्ठिते विहरमाणे पुरा दिगिंच्छाए जाव से य परक्कममाणे पासेज्जा– इमा इत्थिका भवति एगा एगजाता जाव किं ते आसगस्स सदति ? जं पासित्ता निग्गंथे निदाणं करेति दुक्खं खलु पुमत्तणए । जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया एतेसिं णं अण्णतरेसु उच्चावएसु महासमर–संगमेसु उच्चावयाइं सत्थाइं उरंसि चेव पडिसंवेदेन्ति, तं दुक्खं खलु पुमत्तणए, इत्थित्तणयं साहू । जइ इमस्स तवनियमबंभचेरवासस्स फलवित्तिविसेसे अत्थि वयमवि आगमेस्साइं जाव से तं साधू ।**

**[सू.450] एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथे निदाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु जाव से णं तत्थ देवे भवति महिड्ढीए जाव विहरति । से णं देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव अण्णतरंसि कुलंसि दारियत्ताए पच्चायाति जाव तेणं तं दारियं जाव भारियत्ताए दलयन्ति । सा णं तस्स भारिया भवति एगा एगजाता जाव तहेव सव्वं भाणियव्वं तीसे णं अतिजायमाणीए वा जाव किं ते आसगस्स सदति ?**

**[सू.451] तीसे णं तहप्पगाराए इत्थिकाए तहारूवे समणे वा माहणे वा जाव णं पडिसुणेज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे, अभविया णं सा तस्स धम्मस्स सवणताए । सा य भवति महिच्छा जाव दाहिणगामिए नेरइए आगमेस्साणं दुल्लभबोहिए यावि भवति । तं एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेतारूवे पावते फलविवागे भवति जं णो संचाएति केवलिपण्णत्तं धम्मं पडिसुणेत्तए ॥३॥**

[ज.449-451] तृतीये किमपि लिख्यते – '**दुक्खं खलु**' इत्यादि **दुःखं** कष्टं **पुरुषत्वे**, तदेवाह

---

1 'हंता आइक्खेज्जा' नास्ति मुद्रिते ।

2 'यावि' नास्ति मुद्रिते ।

3 '°वकम्मफ°' इति मुद्रिते ।

– '**से जे**' त्ति सेशब्दोऽथशब्दः अथशब्दश्चेह वाक्योपक्षेपार्थो, येऽमी भवन्ति '**उच्चावएसु**'त्ति उच्चा-महत्प्रभुप्रारम्भिताः अवचा-स्तथाविधनीचपुरुषप्रारम्भितास्तेषु, समरसङ्गामावेकार्थौ, उच्चावचानि शस्त्राणि शरतोमरादीनि 'उरंसि'त्ति वक्षसि एवं पतन्ति, उपलक्षणं चैतच्छेषाङ्गानाम्, अतः **स्त्रीत्वं साधु** सम्यग् । {'उभओ कण्णं' ति उभयोः श्रावणार्थम्} अस्यापि निदानस्यैवंविधं फलं यन्न केवलिप्रणीतं धर्मं श्रोतुमाप्नोति ॥3॥

**[सू.452] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते इणमेव निग्गंथे पावयणे सेसं तं चेव जाव जस्स धम्मस्स निग्गंथी सिक्खाए उवट्ठिता विहरमाणी पुरा दिगिंच्छाए पुरा जाव उदिण्णकामजाता यावि विहरेज्जा, सा य परक्कमेज्जा । सा य परक्कममाणी पासेज्जा–से जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव किं ते आसगस्स सदति ? जं पासित्ता णिग्गंथी निदाणं करेति दुक्खं खलु इत्थित्तणए दुस्संचाराइं गामंतराइं जाव सन्निवेसंतराइं ।**

**से जहा णामए[1] मंसपेसियाति वा अंबपेसियाति वा माउलिंगपेसियाति वा उच्छुखंडयाति वा संबलि–काफालियाति वा बहुजणस्स आसायणिज्जा पत्थणिज्जा पीहणिज्जा अभिलसणिज्जा एवामेव इत्थिकावि बहुजणस्स आसायणिज्जा जाव अभिलसणिज्जा । तं दुक्खं खलु इत्थित्तणए, पुमत्तणए साहू । जइ इमस्स तवनियमस्स जाव[2] ⇒ अत्थि अहमवि णं आगमेस्साणं इमाइं एयारूवाइं पुरिसभोगभोगाइं भुंजिस्सामो, सेत्तं ⇐ साहू ।**

**[सू.453] एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथी निदाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, से णं तत्थ देवे भवति महिड्ढिए जाव चइत्ता जे इमे उग्गपुत्ता तहेव दारए जाव किं ते आसगस्स सदति ?**

**[सू.454] तस्स णं तहप्पगारस्स पुरिसजातस्स जाव अभविए णं से तस्स धम्मस्स सद्दहण[3]ताए । से य भवति महिच्छाए जाव दाहिणगामिए जाव दुल्लभबोहिए यावि भवति एवं खलु जाव[4] सद्दहित्तए ॥४॥**

[ज.452-454] चतुर्थे किमपि लिख्यते – '**दुक्खं खलु इत्थित्तणए**' त्ति **दुःखं** कष्टं **स्त्रीत्वे**, तदेवाह – '**दुस्संचाराइं**'ति **दुःसञ्चारा** ग्रामा दुर्ग्रामा इत्यर्थः, शब्दव्याख्या प्राग्वत् । '**से जहा णामए**'त्ति **से** अथ **यथानाम** '**मंसपेसिय**'त्ति **मांसपेशिका** मांसखण्डः । **आम्रपेशिका** च दृष्टापि सती मुखं सनिष्ठीवं करोति । एवं **मातुलिङ्गपेशिका** मातुलिङ्गो नाम बीजपूरकः । '**इच्छुखंडिय**'त्ति **इक्षुखण्डिका** इक्षुपर्वरूपा । '**संबलिकाफालिय**' त्ति शाल्मलीवृक्षविशेषस्तत्फालिका फलांशरूपा । '**बहुजणस्से**'त्यादि **बहुजनस्य**

---

1 '°ए अंबपेसियाति वा अंबाडगपेसियाति वा मंसपेसियाति वा' इति मुद्रिते ।

2 '⇒⇐' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठो नास्ति मुद्रिते ।

3 'सवण°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

4 '°व सुणेत्त°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च । अस्माकमपि एष एव पाठः सम्यग् भाति परं टीकाकारेण केनापि कारणेन 'श्रद्धातु'मिति व्याख्यातम् ।

बहुलोकस्य **आस्वादनीया** ईषत्स्वादयोग्या भवति, **प्रार्थनीया** तथाभूतसहायजनेभ्यः सकाशद्याचनीया, **'अभिलसणिज्जा'**त्ति **अभिलषनीया** आभिमुख्येन कमनीया, **'एवामेव'**त्ति एवमेवाऽऽकारोऽलाक्षणिकः ।

**'अभविए'**त्ति **अभविको**ऽयोग्यः **से** तस्य **धर्मस्य** श्रद्धानतया । **स** च **भवति महेच्छः** । एतस्य निदानस्यैतत्फलं यन्न केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं शक्नोति श्रद्धातुं, परं शृणोति इति विशेषः ॥4॥

**[सू.455] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते, इणामेव निग्गंथे पावयणं तहेव जस्स णं धम्मस्स निग्गंथो निग्गंथी वा सिक्खाए उवट्ठिए विहरमाणे पुरा दिगिंच्छा जाव उदिण्णकामभोगे जाव विहरेज्जा से य परक्कमेज्जा से य परक्कममाणे माणुस्सेहिं कामभोगेहिं निव्वेयं गच्छेज्जा,**

**माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा अणियता[1] असासता सडणपडणविद्धंसणधम्मा उच्चारपासवण-खेलसिंघाणवंतपित्तपूतसुक्कसोणियसमुब्भवा दुरूवउस्सासनिस्सासा दुरूव[2]पूइमुत्तपुरीसपुण्णा वंतासवा पित्तासवा[3] पच्छा पुरं च णं अवस्सं विप्पजहणिज्जा ।**

**संति खलु[4] उड्ढं देवा देवलोगंमि ते णं तत्थ अण्णेसिं देवाणं देवीओ अभियुंजिय अभियुंजिय परियारेन्ति, [5]अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभियुंजिय अभियुंजिय परियारेन्ति, अप्पणा चेव अप्पाणं विउव्वित्ता विउव्वित्ता परियारेन्ति, [6]जति इमस्स तव० तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव वयमवि आगमिस्साणं इमाइं एतारूवाइं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरामो, सेत्तं साहू ।**

**[सू.456] एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथो वा निग्गंथी वा निदाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइय-अपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा अन्नतरेसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, तं जधा-महिड्ढिएसु जाव पभासेमाणे तेणं अण्णं देवं अन्नं देवीं तं चेव जाव पवियारिंति, से णं तातो देवलोगातो तं चेव पुमत्ताए जाव किं ते आसगस्स सदति ?**

**[सू.457] तस्स णं तहप्पगारस्स पुरिसजातस्स तथारूवे समणे वा माहणे वा जाव पडिसुणेज्जा ? हंता[7] पडिसुणेज्जा । से णं सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा ? नो इणट्ठे समट्ठे । अभविए णं से तस्स धम्मस्स सद्दहणताए ।**

**से य भवति महिच्छे जाव दाहिणगामिए णेरइए आगमेस्साए दुल्लभबोहिए यावि भवति । एवं खलु समणाउसो तस्स निदाणस्स इमेतारूवे पावए फलविवागे जं णो संचाएति केवलिपन्नत्तं धम्मं**

---

1 '°णितिया अ°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

2 '°पूइ°' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

3 'खेलासवा' इति अधिकः पाठो मुद्रिते ।

4 'खलु' नास्ति मुद्रिते ।

5 'अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभियुंजिय अभियुंजिय परियारेंति' इति नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

6 '°न्ति सति' इति सर्वासु प्रतिषु ।

7 'हंता पडिसुणेज्जा' इति नास्ति मुद्रिते ।

**सद्दहित्तए**[1] ॥ ५ ॥

[ज.455-457] पञ्चममेवम् – '**माणुस्सएहिं**' इत्यादि **मानुष्यकेषु कामभोगेषु निर्वेदं** वैराग्यं **गच्छेत्** । तदेवाह – '**माणुस्सगा**' इति इह कामभोगग्रहणे तदाधारभूतानि स्त्रीपुरुषशरीराण्यपि गृहीतानि । '**अधुवा**' इत्यादि **अध्रुवाः** चलाः, **अनियताः** अनेकस्वरूपाः, **अशाश्वताः** प्रतिक्षणं परिणामान्तरीयाः, **शटनपतनविध्वंसधर्माणः** स्वभावाः, उच्चारप्रश्रवणश्लेष्मसिङ्घानकाः एतद्रूपा इत्यर्थः, वान्तपित्ता वान्तपित्तकरणशीलाः, शुक्रशोणिताभ्यां समुद्भव - उत्पत्तिर्येषां ते शुक्रशोणितसमुद्भवाः, **दुरूप – उच्छ्वासनिःश्वासाः**, दुरूपेण पूतिमूत्रपुरीषेण पूर्णाः, इह च दुरूपं विरूपम्, वान्तमाश्रवन्ति इति **वान्ताश्रवाः** एवं **पित्ताश्रवाः पश्चान्मरणसमयानन्तरं पूर्वं** जराऽऽगमाच्च **अवश्यं** नियततया अवशं वा विप्रजह्वास्त्यजनीयाः ।

**सन्ति** विद्यन्ते, '**खल्वि**'त्यवधारणे, **ऊर्ध्वं देवा देवलोके** '**ते णं तत्थ अण्णेसि**'मित्यादि **ते** देवत्वेनोत्पन्नाः निर्ग्रन्थाः **तत्र** देवलोके **अन्येषां देवानां** सम्बन्धिनीर्**देवीः** '**अभियुंजिय**'त्ति **अभियुज्य** वशीकृत्य आश्लिष्य वा '**परियारेंति**' त्ति परिभुञ्जते, '**अप्पणिज्जियाउ**' त्ति आत्मीयाः। '**अप्पणा चेव अप्पाणं**' त्ति **आत्मनैव आत्मानं** स्त्रीपुरुषतया विकृत्येत्यर्थः । शेषं सुबोधार्थम् ॥5॥

**[सू.458] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पन्नत्ते तं चेव से य परक्कममाणे माणुस्सए कामभोगेसु निव्वेदं गच्छेज्जा, माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा अणितिया तहेव जाव संति उड्ढं देवा देवलोगंसि ते णं तत्थ णो अन्नदेवं नो अन्नदेविं अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेन्ति, [2]अप्पणच्चियाए देवीए अभिजुंजिय परियारेन्ति, अप्पणा चेव अप्पाणं विउव्विय परियारेन्ति ।**

**[सू.459] जति इमस्स तव० तं चेव सव्वं जाव से णं सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा [3]रोएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थरुयी रुइमादाय से य भवति ।**

**[सू.460] से जे इमे आरण्णिया आवसहिया [4]गामंतिया कण्हुहिरहस्सिया नो बहुसंजता नो बहुपडि–विरता सव्व[5]पाणभूतजीवसत्तेसु अप्पणा अविरया[6] । ते अप्पणा सच्चामोसाइं एवं विप्पउंजंति[7]अहं ण हंतव्वो अन्ने हंतव्वा, अहं न अज्जावेतव्वो अन्ने अज्जावेतव्वा, अहं ण परियावेतव्वो अण्णे परियावेतव्वा, अहं ण परिघेतव्वो अन्ने परिघेतव्वा, अहं ण उद्दवेतव्वो अण्णे उद्दवेतव्वा, एवामेव इत्थिकामेहिं**

---

1 '°ए वा ३ ।' इति LD1 – LD2 – K - मुद्रिते ।

2 'अप्पणच्चियाए देवीए अभिजुंजिय परियारेंति' नास्ति K – Kh – M1 – M3 – M4 – LD1 – LD2 ।

3 'रोएज्जा' नास्ति मुद्रिते ।

4 'गामणियंति°' इति K – M1 – M3 – M4 – LD1 – LD2 - मुद्रिते ।

5 'सव्व°' नास्ति मुद्रिते ।

6 'अप्पणा अविरया ।' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

7 '°प्पडिवदेन्ति' इति मुद्रिते ।

**मुच्छिया[1] गिद्धा गढिया अज्झोववन्ना जाव वासाइं[2] चउपंचमाइं छदसमाणि वा अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं भुंजित्ता भोगभोगाइं कालमासे कालं किच्चा अन्नतराइं [3]आसुराइं किब्बिसयाइं ट्ठाणाइं उववत्तारो भवन्ति । ते ततो विमुच्चमाणा भुज्जो एलमूयत्ताए [4]तमूयत्ताए जाइमूयत्ताए पच्चायंति । तं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स जाव णो संचाएति केवलिपन्नत्तं धम्मं सद्दहितए वा ३ ॥ ६ ॥**

[ज.458-460] षष्ठे किमपि लिख्यते – किन्तु '**अण्णत्थरुई**' त्ति अन्यत्र जैनधर्मातिरिक्ते स्थाने रुचिरभिलाषा यस्यासा**वन्यत्ररुचिः** परं **रुचिमात्रया** धर्मश्रद्धारूपया **स च भवति** ।

**ये चामी** वक्ष्यमाणा भवन्ति '**आरण्णिय**' त्ति अरण्ये वस**न्त्यारण्यकाः** ते च कन्दमूलफलाहारास्सन्तः केचन वृक्षमूले वसन्ति । तथा '**आवसहिय**'त्ति **आवसथिकाः** आवसथास्तापसाश्रया उटजादयस्तेषु वसन्ति **आवसथिकाः** । '**गामंतिया**'त्ति ग्रामादिकमुपजीवन्तो ग्रामस्यान्ते समीपे वसन्तीति **ग्रामान्तिका**स्तथा । '**कण्हुहिरहस्सिया**' इति क्वचित्कार्ये मण्डलप्रवेशादिके रहस्यं येषां ते **क्वचिद्राहस्यिकाः** । ते एते **न बहुसंयता** न सर्वसावद्यानुष्ठानेभ्यो निवृत्ताः, एतदुक्तं भवति – न बाहुल्येन त्रसेषु दण्डसमारम्भं विदधति, एकेन्द्रियोपजीविनस्त्वविगानेन तापसादयो भवन्ति इति । तथा **न बहुप्रतिविरता** न सर्वेष्वपि प्राणातिपातविरमणादिव्रतेषु वर्तन्ते किन्तु द्रव्यतः कतिपयव्रतिनो, न भावतो मनागपि, तत्कारणस्य सम्यग्दर्शनस्याभावात्, सम्यक्त्वं विना न तदनुष्ठानमपि शोभनम्, सम्यक्त्वमेव मूलं सर्वस्यापि विरत्यादेरित्यभिप्रायः इति, एतदेवाऽऽविर्भावयन्नाह – '**सव्वपाणे**'त्यादि ते ह्यारण्यकादयः सर्वप्राणभूत[जीव]सत्त्वेभ्यः **आत्मना** स्वतोऽ**विरताः** तदुपमर्दकारम्भादविरता इत्यर्थः । तथा **ते** पाखण्डिका **आत्मना** स्वतो बहूनि सत्यामृषाभूतानि वाक्या**न्येवं** वक्ष्यमाणनीत्या विशेषेण प्रयुञ्जन्ति ब्रुवते इत्यर्थः, यदिवा सत्यान्यपि तानि प्राण्युपमर्दकत्वेन मृषाभूतानि सत्यामृषाणि, एवं ते प्रयुञ्जन्तीति दर्शयन्ति, तद्यथा – **अहं** ब्राह्मणत्वाद्दण्डादिभि**र्न हन्तव्योऽन्ये** तु शूद्रत्वाद्धन्तव्यास्तथाहि तद्वाक्यम् - *शूद्रं व्यापाद्य प्राणायामं जपेत्किञ्चिद्वा दद्यात् तथा क्षुद्रसत्त्वानामनस्थिकानां शकटभरमपि व्यापाद्य ब्राह्मणं भोजयेदित्यादि*, अपरं **चाहं** वर्णोत्तमत्वान्नाऽऽज्ञापयितव्योऽन्ये तु मत्तोऽधमाः स**माज्ञापयितव्याः**, तथा **नाहं परितापयितव्योऽन्ये** तु **परितापयितव्या**स्तथा **चाहं** वेतनादिना कर्मकारणाय **न ग्राह्योऽन्ये** तु शूद्रा **ग्राह्या** इति । किं बहुनोक्तेन ? **नाहमपद्रावयितव्यो** जीविताद् व्यपरोपयितव्योऽ**न्ये त्वपद्रावयितव्या** इति । तदेवं तेषां परपीडोपदेशनतोऽतिमूढतयाऽसम्बद्धप्रलापिनामज्ञानावृतानामात्मम्भरीणां विषमदृष्टीनां न प्राणातिपातविरतिरूपव्रतमस्त्यस्य चोपलक्षणार्थत्वान्मृषावादादत्तादानविरमणाभावोऽप्यायोज्यः । अधुना त्वनादिभवाभ्यासात् दुस्त्यजत्वेन प्राधान्यात् सूत्रेणैवाब्रह्माधिकृत्याऽऽह – '**एवामेवे**'त्यादि **एवमेव** पूर्वोक्तेनैव कारणत्वेनातिमूढत्वादिना परमार्थमजानानास्ते तीर्थिकाः, स्त्रीप्रधानाः कामाः स्त्रीकामाः यदिवा स्त्रीषु कामेषु च शब्दादिषु **मूर्च्छिता**

---

1 '°या गढिया गिद्धा अ°' इति मुद्रिते सर्वासु च प्रतिषु ।

2 'वासाइं' इत्यस्मात् 'भोगभोगाइं' पर्यन्तं नास्ति मुद्रिते ।

3 'आसुराइं' नास्ति मुद्रिते ।

4 'तमूयत्ताए जाइमूयत्ताए' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

**गृद्धाः ग्रथिताः अध्युपपन्नाः**, अत्र चात्यादरख्यापनार्थं प्रभूतपर्यायग्रहणम् । एतच्च स्त्रीषु शब्दादिषु च प्रवर्तनं प्रायः प्राणिनां प्रधानं संसारकारणम्, तथा चोक्तम् – *मूलमेयमहम्मस्स [दश. 6-17]* इत्यादि । इह वा स्त्रीसङ्गासक्तस्यावश्यम्भाविनी शब्दादिविषयासक्तिरिति, अतः स्त्रीकामग्रहणम् । तत्र चाऽऽसक्ता यावन्तं कालमासते तत्सूत्रेणैव दर्शयति – **यावद्वर्षाणि चतुःपञ्चषट्दशकानि**, अयं च कालो गृहीतः । एतावत्कालोपादानं च साभिप्रायकम्, प्रायस्तीर्थिका अतिक्रान्तवयस एव प्रव्रजन्ति, तेषां चैतावानेव कालः सम्भाव्यते । यदिवा मध्यग्रहणात्तत ऊर्ध्वमधश्च गृह्यते, तद्दर्शयति – तस्माच्चाऽऽपातात्काला**दल्पतरः प्रभूततरो वा**पि कालो भवति । तत्र च ते त्यक्त्वापि गृहवासं, **भुक्त्वा भोगभोगा**निति स्त्रीभोगे सत्यवश्यं शब्दादयो भोगभोगास्तान् भुक्त्वा, ते च किल 'वयं प्रव्रजिता' इति न च भोगेभ्यो विनिवृत्ता यतो मिथ्यादृष्टितयाऽज्ञानवत्त्वात्सम्यग्विरतिपरिणामरहिताः । ते चैवम्भूतपरिणामाः स्वायुषः क्षये **कालमासे कालं कृत्वा** विकृष्टतपसोऽपि सन्तो**ऽन्यतरेष्वासुरिकेषु किल्बिषिकेषु स्थानेषू**त्पादयितारो **भवन्ति**, ते ह्यज्ञानतपसा मृता अपि किल्बिषिकेषूत्पत्स्यन्ते । तस्मादपि स्थानादायुषः क्षया**द्विप्रमुच्यमाना**श्च्युताः किल्बिषबहुलास्तत्कर्मशेषेणैलवत् मूका एलमूकास्तद्भावेनोत्पद्यन्ते, किल्बिषस्थानाच्च्युतः सन्ननन्तरभवे वा मानुषत्वमवाप्य यथैकोऽव्यक्तवाग् भवत्येवमसावप्यव्यक्तवाक् समुत्पद्यत इति । तथा '**तमूयत्ताए**'त्ति **तमस्त्वेना**त्यन्तान्धतमस्त्वेन जात्यनन्ततयाऽज्ञानावृततया वा तथा **जातिमूकत्वेना**पि गतवाच इह **प्रत्यागच्छन्ती**ति । शेषं प्रतीतम् ॥6॥

**[सू.461] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पन्नत्ते जाव माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा, तहेव संति उड्ढं देवलोयंसि अण्णं देवं णो[1] अण्णं च देविं अभियुंजिय अभियुंजिय परियारेंति, नो अप्पणा चेव अप्पाणं वेउव्विय वेउव्विय परियारेन्ति । जइ इमस्स तवनियम० तं चेव जाव एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथो वा निग्गंथी वा निदाणं किच्चा अणालोइय तं चेव जाव विहरति ।**

**[सू.462] से णं भव्वं[2] अन्नं देवं णो अन्नं देविं अभियुंजिय अभियुंजिय परियारेंति । नो अप्पणा चेवं अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेन्ति । से णं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं तं चेव वत्तव्वं नवरं हंता सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा । से णं सीलव्वतगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं पडिवज्जेज्जा ? नो तिणट्ठे समट्ठे ।**

**से णं दंसणसावए भवति अभिगतजीवाजीवे जाव अट्ठिमिंजप्पेमाणुरागरत्ते सेसे अणट्ठे । से णं एतारूवेणं विहारेणं विहरमाणे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणइ, बहूइं० पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति ।**

**एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेतारूवे पावए फलविवागे जं णो संचाएति सीलव्वतगुणवेरमण–पच्चक्खाण[3]पोसहोववासाइं पडिवज्जित्तए ॥७॥**

---

1 'णो' नास्ति मुद्रिते सर्वासु प्रतिषु च ।

2 '°णं तत्थ अ°' इति मुद्रिते ।

3 '°वेरमणपच्चक्खाण°' नास्ति मुद्रिते ।

[ज.461-462] सप्तमे किमपि लिख्यते – '**णवर**'मिति विशेषः '**हंता सद्दहेज्जा**'त्ति **श्रद्दधेत्** । **प्रतीयेत्** प्रतीतिं विदध्यात्, **रोचयेत्** चेतसि सम्यक्तया जानीयात् । 'सीलव्वए'त्ति प्राग्वत् प्रतिपद्येत अङ्गीकुर्यात् ? गुरुराह – **नायमर्थः समर्थः** नायमर्थो युक्त्युपपन्नो, **स** हि **दर्शनश्रावको भवति**, दर्शनं नाम सम्यक्त्वं तदाश्रित्येत्यभिप्रायः । '**अभिगये**'त्यादि अग्रे व्याख्यास्यते । एवम्भूतः स **बहूनि वर्षाणि श्रमणोपासकपर्यायं पालयति** । केवलेनापि सम्यक्त्वेन श्रावको भवत्येव क्रियायामपि तस्यैव प्रधानतरत्वात् ॥7॥

**[सू.463] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पन्नत्ते तं चेव सव्वं जाव से य परक्कममाणे दिव्वमाणुस्सेहिं कामभोगेहिं निव्वेदं गच्छेज्जा, माणुस्सगा कामभोगा अधुवा जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु कामभोगा अधुवा अणितीया असासता चला चयणधम्मा पुणरागमणिज्जा पच्छा पुव्वं च णं अवस्सं विप्पजहणिज्जा ।**

**[सू.464] जति इमस्स तवनियमस्स जाव अत्थि वयमवि आगमेस्साणं जे इमे भवंति उग्गपुत्ता महामाउया जाव पुमत्ताए पच्चायंति तत्थ णं समणोवासए भविस्सामि अभिगतजीवाजीवे जाव[1] पडिलाभेमाणे विहरिस्सामि सेत्तं साधू ।**

**[सू.465] एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथो वा निग्गंथी वा निदाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइय जाव देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति जाव किं ते आसगस्स सदति ? तस्स णं तहप्पगारस्स पुरिसजातस्स जाव सद्दहेज्जा, से णं सीलव्वय जाव पोसहोववासाइं पडिवज्जेज्जा ? हंता पडिवज्जेज्जा । से णं मुण्डे भवित्ता अगारातो अणगारियं पव्वएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे ।**

**से णं समणोवासए भवति अभिगतजीवा जाव पडिलाभेमाणे विहरइ । से णं एतारूवेण विहारेण विहरमाणे बहूणि वासाणि समणोवासगपरियागं पाउणति, बहू० पाउणित्ता आबाहंसि उप्पण्णंसि वा अणुप्पण्णंसि वा बहूइं हंता पच्चक्खाइ हंता [2]पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता [3]अणालोइयऽपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति तं एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेतारूवे पावए फलविवागे जं णो संचाएति सव्वातो सव्वत्ताए मुण्डे भवित्ता अगारातो अणगारियं पव्वइत्तए ॥८॥**

[ज.463-465] अष्टमे किमपि लिख्यते – '**तत्थ णं**'ति **तत्रो**ग्रपुत्रादिषु अहं **श्रमणोपासको भूयासम्** । विशिष्टोपदेशार्थं श्रमणानुपास्ते सेवते इति श्रमणोपासकः । स च श्रमणोपासनतः '**अभिगतजीवाजीवे**' इत्यादि अधिगतौ सम्यग्विज्ञातौ जीवाजीवौ येन स तथा । **याव**त्करणात् *उवलद्धपुण्णपावे [औप. सू.41 पृ.104B]* इत्यादिपदकदम्बकसङ्ग्रहः । उपलब्धे - यथावस्थितस्वरूपेण विज्ञाते पुण्यपापे

1 '°व फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं प°' इति मुद्रिते ।

2 'पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ' नास्ति मुद्रिते ।

3 '°त्ता आलो°' इति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

येन स उपलब्धपुण्यपापः । आश्रवाणां-प्राणातिपातादीनां संवरस्य-प्राणातिपातादिप्रत्याख्यानरूपस्य निर्जरायाः-कर्मणां देशतो निर्जरणस्य क्रियाणां-कायिक्यादीनामधिकरणानां- खड्गादीनां बन्धस्य-कर्मपुद्गलजीवप्रदेशान्योन्यानुगमरूपस्य मोक्षस्य-सर्वात्मना कर्मापगमरूपस्य कुशलः-सम्यक् परिज्ञाता आश्रवसंवरनिर्जराक्रियाधिकरणबन्धमोक्षकुशलः, एतेन चास्य ज्ञानसम्पन्नतोक्ता । 'असहिज्जे' इति अविद्यमानसाहाय्यः कुतीर्थिकप्रेरितसम्यक्त्वादि(वि)चलनं प्रति न परसाहाय्यमपेक्षते इति भावः । तथा चाह – देवासुरनागसुवन्नजक्खरक्खसकिंनरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणतिकम्मणिज्जे देवा-वैमानिकाः, असुरकुमारा नागकुमाराश्चेति भवनपतिविशेषाः, सुवर्णा - ज्योतिष्का इत्यर्थः, क्वचित् गरुडे त्ति नागा अधीयन्ते ततः सुवण्णे त्ति सुवर्णकुमारा भवनपतिविशेषाः, यक्षराक्षसकिन्नरकिम्पुरुषा व्यन्तरभेदाः, गरुड त्ति गरुडचिह्नाः सुवर्णकुमाराः, गन्धर्वमहोरगाश्च व्यन्तराः तैः अणतिकमणिज्जे त्ति अनतिक्रमणीयाः अचालनीयाः, एवं चैतत् यतो निग्गंथपावयणे निस्संकिए इत्यादि नैर्ग्रन्थे प्रावचने निःसंशयः निक्कंखिएत्ति- दर्शनान्तराकाङ्क्षारहितः निव्वितिगिच्छे- फलं प्रति निःशङ्कः लद्धट्ठे- अर्थश्रवणतः गहियट्ठे- गृहीतार्थोऽवधारणतः पुच्छियट्ठे- पृष्टार्थः सांशयिकार्थ-प्रश्नकरणात् अहिगयट्ठे त्ति- अधिगतोऽर्थो येन स तथा अभिगतार्थो वा अर्थाधारणात् विणिच्छियट्ठे त्ति- विनिश्चितार्थः ऐदम्पर्योपलम्भात् अट्ठिमिंजापेम्माणुरागरत्ते त्ति अस्थीनि च- कीकसानि मिञ्जा च- तन्मध्यवर्तिधातुविशेषः अस्थिमिञ्जास्ताः प्रेमानुरागेण- सर्वज्ञप्रवचनप्रीतिलक्षणकुसुम्भादिरागेण रक्ता इव रक्ता यस्य स तथा । केनोल्लेखेनेत्यत आह – अयमाउसो निग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे त्ति अयमिति प्राकृतत्वादिदम् आउसो त्ति आयुष्मन्निति पुत्रादेरामन्त्रणम्, सेसे त्ति शेषं निर्ग्रन्थप्रवचनव्यतिरिक्तं धनधान्यकलत्रपुत्रमित्रकुप्रवचनादिकम् अनर्थोऽनर्थकारणत्वात् इति । ऊसियफलिहे त्ति उच्छ्रितमुत्तमं स्फटिकमिव स्फटिकं चित्तं यस्य स उच्छ्रितस्फटिकः मौनीन्द्रप्रवचनावाप्त्या परितुष्टमना इत्यर्थः, एषा वृद्धव्याख्या, अपरे त्वाहुः – उच्छ्रितोऽर्गला स्थानादपनीय ऊर्ध्वीकृतो न तिरश्चीनः कपाटः पश्चाद्भागादपनीत इत्यर्थः, उत्सृतो वा अपगतः परिघोऽर्गला गृहद्वारे यस्यासावुत्सृतपरिघो वा, औदार्यातिरेकतो अतिशयदानदायित्वेनानुकम्पया भिक्षुकप्रवेशार्थमनर्गलितगृहद्वार इत्यर्थः । अवंगयदुवारे अप्रावृतद्वारः भिक्षुकप्रवेशार्थं कपाटानामपि पश्चात्करणात्, वृद्धानां तु भावनावाक्यमेवम्-सम्यग्दर्शनलाभे सति न कस्माच्चित्पाखण्डिकाद्बिभेति शोभनमार्गपरिग्रहणे उद्घाटितशिरास्तिष्ठतीति भावः । चियत्तंतेउरघरप्पवेसे त्ति चियत्तो त्ति लोकानां प्रीतिकरः एवान्तःपुरे वा गृहे वा प्रवेशो यस्य स तथा, अतिधार्मिकतया सर्वत्रानाशङ्कनीय इत्यर्थः, इन्प्रत्ययोऽत्र समासान्तः, चियत्तो त्ति नाप्रीतिकरोऽन्तःपुरगृहयोः प्रवेशः शिष्टजनप्रवेशनं यस्य स तथा, अनीर्ष्यालुताप्रतिपादनपरं चेत्थं विशेषणमिति, अथवा चियत्तो त्ति त्यक्तोऽन्तःपुरगृहयोः परकीययोर्यथाकथञ्चित्प्रवेशो येन स तथा । चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुन्नं पोसहं सम्ममणुपालेमाणे त्ति चतुर्दशी पर्वविधिना प्रतीता अष्टमी च तयोः, अमावास्यासु मासार्द्धान्तपर्वत्वेन प्रख्यातासु पौर्णमासीषु पूर्णमासत्वेन पूर्णचन्द्रोदयत्वेन मासान्तपर्वसु प्रसिद्धासु, एवम्भूतेषु

धर्मदिवसेषु शुद्ध्यतिशयेन प्रतिपूर्णो यो पौषधो-व्रताभिग्रहविशेषस्तं प्रतिपूर्णमाहारशरीरसंस्कारब्रह्मचर्या-व्यापाररूपं पौषधमनुपालयन् सम्पूर्णं श्रावकधर्ममनुचरति, तदनेन विशिष्टदेशचारित्रमावेदितं भवति । समणे निग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं अत्र वस्त्रं प्रतीतम्, पतद्भक्तं पानं वा गृह्णातीति पतद्ग्रहः लो(ले)हादित्वादच्प्रत्ययः पात्रम्, पादप्रोञ्छनकं रजोहरणम्, ओसहभेसज्जेणंति औषधमेकद्रव्याश्रयं भेषजं द्रव्यसमुदायरूपम् अथवौषधं त्रिफलादि भैषज्यं पथ्यम्, पाडिहारिएणं पीढफलगसेज्जासंथारएणं **पडिलाभेमाणे** त्ति प्रतिहरः-प्रत्यर्पणं प्रयोजनमस्येति प्रातिहारिकं, पीठ-मासनं फलक-मवष्टम्भनार्थः काष्ठविशेषः शय्या- वसतिः शयनं वा यत्र प्रसारितपादैः सुप्यते संस्तारको - लघुतरशयनमेव । बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं अप्पाणं भावेमाणे त्ति शीलव्रतानि-अणुव्रतानि गुणा-गुणव्रतानि वेरमणानि-रागादिविरतिप्रकाराः प्रत्याख्यानानि नमस्कारसहितादीनि पौषधोपवासो- विशेषतोऽष्टम्यादिदिनेषूपवसनम् आहारादित्याग इत्यर्थः । **विहरिस्सामि** त्ति विचरिष्ये । क्वचिदेतानि पदानि अननुगमेनापि दृश्यन्ते तान्यपि अनेन व्याख्यानुक्रमेण वाच्यानि ।

**'से णं मुंडे'** इत्यादि **स मुण्डो** मस्तकलोचनेन **भूत्वा** '**अगाराओ**'त्ति अगैर्द्रुमदृषदादिभिर्निवृत्तं तस्मात् निःक्रम्येति शेषः **अनगारितां** साधुतां **प्रव्रजेत्** प्रतिपद्येत । शेषं व्यक्तम् ।

**'से ण'**मित्यादि **स** पूर्वोक्तनिदानकर्ता यथाशक्ति सदनुष्ठानं विधाय **उत्पन्ने वा** कारणे **अनुत्पन्ने वा** भक्तं प्रत्याख्या**यानालोचितप्रतिक्रान्तः** समाधिं प्राप्तः सन् **कालमासे कालं कृत्वा अन्यतरेषु देवेषु** उत्पद्यते इति । एतानि चाभिगतजीवाजीवादिकानि पदानि हेतुहेतुमद्भावेन नेतव्यानि, तद्यथा – यस्मादभिगत-जीवाजीवस्तस्मादुपलब्धपुण्यपापः, यस्मादुपलब्धपुण्यपापस्तस्मादुच्छृ(च्छ्रि)तमनाः, एवमुच्छ्रितमनाः सन् श्रावकधर्मं साधुधर्मं च प्रकाशयन् विहरत्यष्टमीचतुर्दश्यादिषु पौषधोपवासादिपारणकेषु साधून्प्रासुकेन प्रतिलाभयति । एतन्निदानस्यैतत्फलं यज्जानन्नपि कटुविपाकान् विषयान् जहाय न चारित्रं प्रतिपद्यते ॥8॥

**[सू.466] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पन्नत्ते जाव से य परक्कममाणे दिव्वमाणुस्सएहिं काम-भोगेहिं निव्वेयं गच्छेज्जा, माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु कामभोगा अधुवा जाव पुणरागमणिज्जा, जति इमस्स तव-नियम जाव वयमवि आगमेस्साणं जाइं इमाइं कुलाइं[1] भवंति, तं जहा – अंतकुलाणि वा पंतकुलाणि वा तुच्छकुलाणि वा दरिद्दकुलाणि किविणकुलाणि भिक्खागकुलाणि [2]माहणकुलाणि एएसिं अण्णतरंसि कुलंसि पुमत्ताए पच्चायिस्सामि[3] एस मे आता परियाए सु[4]निस्सारिओ भविस्सति सेत्तं साधू ।**

---

1 'कुलाइं भवंति, तं जहा –' नास्ति मुद्रिते ।

2 'माहणकुलाणि वा' नास्ति सर्वासु प्रतिषु मुद्रिते च ।

3 '°च्चायंति ए°' इति सर्वासु प्रतिषु ।

4 '°सुणीहडे भ°' इति मुद्रिते ।

**[सू.467] एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथो वा निग्गंथी वा नियाणं किच्चा तस्स ट्ठाणस्स अणालोइय-अपडिक्कंते सव्वं तं चेव जाव से णं मुण्डे भवित्ता अगारातो अणगारियं पव्वएज्जा, से णं तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झेज्जा जाव सव्वदुक्खाणं अन्तं करेज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे ।**

**से णं भवइ से णं जे अणगारा भगवंतो इरितासमिता जाव[1] सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते, से णं एतेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणंति, बहू० पाउणित्ता अबाहंसि उप्पण्णंसि वा जाव भत्तं पच्चक्खाएज्जा[2] जाव कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंतीति । एवं समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेतारूवे पावए फलविवागे जं णो संचाएति तेणेव भवगहणेणं सिज्झेज्जा जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेज्जा ॥९॥**

[ज.466-467] नवमे किमपि लिख्यते – '**अंतकुलाणि व**'त्ति जघन्यकुलानि अन्त्यवर्णत्वात् **प्रान्त-कुलानि** अधमाधमकुलानि **तुच्छकुलानि** स्वल्पकुलानि स्वल्पकुटुम्बानि **दरिद्रकुलानि** सर्वथा निर्धनकुलानि **कृपणकुलानि** सत्यपि विभवेऽतीवनिःसत्त्वानि भिक्षणशीलानि **भिक्षुककुलानि** भिक्षामात्रोपजीवीनि **ब्राह्मणकुलानि** प्रतीतानि । **एतेषामन्यतरस्मिन् कुले पुंस्त्वेन प्रत्यागमिष्यामि**, यत एतेभ्यः कुलेभ्यो **ममाऽऽत्मा सुनिःसारितो भविष्यति**, प्रव्रज्याभिप्राये सञ्जाते न कोऽपि मां प्रतिबन्धको भविष्यति इति हृदयम् ।

'**से णं तेणेव**'त्ति **स तस्मिन् भवग्रहणे** कृतप्रव्रज्योऽपि **सिद्ध्येत्** । पदव्याख्या पूर्ववत् । '**अणगारा**' इत्यादि व्यक्तम् । यावत्करणात् *भासासमिया एसणासमिया [दशा. 8-215]* इत्यादिपदानि द्रष्टव्यानि । '**सुहुये**'त्यादि सुष्ठु हुतं- क्षिप्तं घृतादि यत्रासौ सुहुतो घृतादितर्पितः, स चासौ हुताशनश्च- वह्निस्तद्वत्, **तेजसा** ज्ञानरूपेण तपस्तेजसा वा **ज्वलन्** दीप्यमानः । शेषं सुबोधम् । एतन्निदानस्यैतत्फलं यत् न शक्नोति कर्मक्षयं विधाय मोक्षं गच्छति इति तात्पर्यमिति नवमम् ॥९॥

**[सू.468] एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पन्नत्ते इणमेव निग्गंथं जाव से परक्कमेज्जा जाव सव्व-कामविरत्ते सव्वरागविरत्ते सव्वसंगातीते सव्वसिणेहातिक्कंते सव्वचारित्ते परिवुडे तस्स णं भगवंतस्स अणुत्तरेणं नाणेणं जाव परिनिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरनाणंदसणे समुप्पज्जेज्जा । तते णं से भगवं अरहा भवति जिणे केवली सव्वन्नू सव्वदरिसी सदेवमणुयाऽसुराए जाव बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणति, बहूइं० पाउणित्ता अप्पणो आउसेसं आभोएति, आभोएत्ता भत्तं पच्चक्खाति, भत्तं पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेति, छेदित्ता ततो पच्छा [3]चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं सिज्झति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेति ।**

**एवं खलु समणाउसो ! तस्स अनिदाणस्स इमेयारूवे कल्लाणे फलविवागे जं तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेति ।**

---

1 '°व बंभचारी तेणं' इति सर्वासु प्रतिषु । '°व बंभचारी से' इति मुद्रिते ।

2 'पच्चाइक्खित्ता जा°' इति मुद्रिते ।

3 'चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं' नास्ति मुद्रिते ।

[ज.468] '**अणुदिण्णकामजाते**'त्ति **अनुदीर्णकामजातः** कामगमः '**सव्वकामविरत्ते**'त्ति **सर्वकाम-विरक्तः सर्वसङ्गातीतः सर्वस्नेहातिक्रान्तः** सर्वचारित्रत्वेन सर्वधर्मानुष्ठायित्वेन **परिवृतः, तस्य भगवतः** '**अणुत्तरेणं णाणेणं**'ति ज्ञानं-मत्यादि तदपेक्षया अनुत्तरं- प्रधानं तेन, यावत्करणाद् *दंसणेणं चरित्तेण- [दशा. 8-218]*मित्यादि पदानि द्रष्टव्यानि । '**परिनिव्वाणमग्गेणं**' ति परिनिर्वाणं कषायदाहोपशमन-मार्गेण **आत्मानं भावयतो** वासयतः, अनेनाऽऽत्मैव प्रधानं मोक्षाङ्गमित्युक्तम् ।'**अणंते**' इत्यादि **अनन्त**मनन्तार्थविषयत्वात् यद्वा अनन्तमन्तरहितमपर्यवसितत्वात्, **अनुत्तरं** सर्वोत्तमत्वात्, **निर्व्याघातं** कटकुड्याद्यप्रतिहतत्वात्, **निरावरणं** क्षायिकत्वात्, **कृत्स्नं** सकलार्थग्राहकत्वात्, **प्रतिपूर्णं** सकलस्वांश-समन्वितत्वात् राकाचन्द्रवत्, केवलमसहायम् अत एव वरं-प्रधानं ज्ञानं च दर्शनं च ज्ञानदर्शनम्, ततः पूर्वपदाभ्यां कर्मधारयः, **समुत्पद्यते** सकलावरणक्षयादाविर्भवति ।

'**तते ण**'मित्यादि **ततः स भगवानर्हन् जिनः केवली भवति सर्वज्ञः सर्वदर्शी** च सर्वविशेषाणां सामान्यस्य च प्रथमद्वितीयादिसमयेषु अवबोधमान् **सदेवमनुजासुरायां** जन्तुसन्ततिर्**यावत्**करणात् *सव्वभावे जाणमाणे [दशा. 8-219]* इत्यादि द्रष्टव्यम् । भावानिति पर्यायान् उत्पादस्थितिव्ययलक्षणान् जानाति, यथावदवगच्छन् विहरत्यास्ते । '**अप्पणो आउसेसं**' ति आत्मानम् **आयुःशेषं** पश्यति । शेषं सुबोधम् ।

अथोपसंहर्तुकामो भगवानिदमाह – '**एवं खल्वि**'त्यादि **एवं** पूर्वोक्तप्रकारेण हे **श्रमणा** ! हे **आयुष्य-मन्तः** ! **तस्यानिदानस्यायमेवैतद्रूपः कल्याणः** शुभः फलवृत्तिविशेषः, किं तद् ? इत्याह – **यत्तेनैव भवग्रहणेन सर्वदुःखानामन्तं करोति** ।

**[सू.469] तते णं बहवे निग्गंथा य निग्गंथीओ य समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म समणं भगवं महावीरं वंदन्ति णमंसन्ति वंदित्ता णमंसित्ता तस्स ट्ठाणस्स आलोएंति पडिक्कमन्ति जाव अहारिहं पायच्छित्तं तवोकम्मं पडिवज्जंति ।**

[ज.469] इति श्रुत्वा यत्ते कृतवन्तस्तदाह – '**तते ण**'मित्यादि सुबोधम् । '**तस्स**'त्ति तत्स्थानस्यान-न्तरोक्तस्थानस्य निदानरूपस्याऽऽ**लोचयन्ति** ।

**[सू.470] तेणं कालेणं तेणं समयेणं समणे भगवं महावीरे रायगिहे नगरे गुणसिलए चेइये बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावगाणं बहूणं साविगाणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं सदेवमणुआसुराए परिसाए मज्झंगते [1]एवमाइक्खइ एवं भासति एवं[2] पण्णवेति एवं परूवेति आयातिट्ठाणं णामं अज्जो अज्झयणे सअट्ठं सहेउयं सकारणं [3]ससुत्तं च [4]सअत्थं च तदुभयं च भुज्जो भुज्जो उव[5]दरिसेति त्ति बेमि ।**

---

1 'एवमाइक्खइ' नास्ति मुद्रिते ।

2 'एवं पण्णवेति' नास्ति A1–A2–M2–मुद्रिते ।

3 'णं सुत्तं' A1–A2–M2–मुद्रिते ।

4 'च अत्थं' K–M1–M2–M3–M4–A1–A2–LD1–LD2–मुद्रिते ।

5 '°वदंसे°' इति K–Kh–M1–M3–M4–LD1–LD2 ।

**॥ [1]आयातिट्ठाणं सम्मत्तं । समत्तातो आयारदसाओ ॥**

[ज.470] स्वमनीषिकापरिहाराय भगवान् भद्रबाहुस्वामी प्राह – '**तेणं कालेण**'मित्यादि **राजगृहे नगरे गुणशिलये चैत्ये** समवसरणावसरे श्रमणादिसुरान्तपरिषन्मध्यवर्ती **एवमाख्याति** यथोक्तं कथयति **एवं भाषते** वाग्योगेन **एवं प्रज्ञापयति** अनुपालितस्य फलं प्रदर्शयति **एवं प्ररूपयति**, किं तद् ? इत्याह – '**आयातिट्ठाणे**' त्ति आयतिर्नाम उत्तरकालस्तस्य स्थानं पदम् इत्यभिधानं हे **आर्या** ! **अध्ययनं** '**सअट्ठ**'मित्यादि व्याख्यातार्थम् । **इति ब्रवीमी**ति पूर्ववत् । नया अप्यत्र वाच्यास्ते चानेकप्रकारा भवन्ति, परमत्र विशेषत्वेन ज्ञानपूर्वक एव क्रियानयोऽतिसङ्ग्रहेण वाच्यः । स चायम् –

*सव्वेसिं पि नयाणं बहुविहवत्तव्वयं निसामेत्ता ।*
*तं सव्वनयविसुद्धं जं चरणगुणट्ठिओ साहू ॥ [आ. नि.1055]*

इति श्रीब्रह्मविरचितायां जनहितायां श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीकायां दशमं निदानस्थानाख्यमध्ययनं समाप्तम् । तत्समाप्तौ समाप्ता चेयं श्रीदशाश्रुतस्कन्धटीका । श्रीरस्तु, शुभं भवतु, कल्याणमस्तु ॥

## ॥ दशममध्ययनं समाप्तम् ॥

## ॥ इति श्रीदशाश्रुतस्कन्धः ॥

1 'आयातिट्ठाणं' इत्यस्य स्थाने 'नवपावनियाणट्ठाणदसादसममज्झयणं' इति मुद्रिते ।

# दशाश्रुतस्कन्धस्य

# बालावबोधविभागः

# दशाश्रुतस्कन्ध बालावबोध (१)

श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्रार्थ चिंतविये छे. दशाश्रुतखंधनो स्यूं अर्थ ? दश अध्ययन सहित जे श्रुत, ते दशाश्रुत. दशाश्रुतरूप जे खंध ते दशाश्रुतखंध. ए सूत्र अनंगप्रविष्ट अने कालिक सूत्र. एहना दश अध्ययन. तिहां प्रथम वीस समाधिया पामवाने वीस असमाधिना स्थानक वर्जवा. ते माटे प्रथम अध्ययने वीस असमाधिना स्थानक वर्जवा ते देखाडे छे. ते अध्ययनने आदिसूत्रे गणधरे नमोकारसूत्रमध्ये प्रथम गणधरे अरिहंत-तीर्थंकरने नमस्कार कीधूं. ते एतला वली जे तीर्थंकरे साधुप्रमुख च्यार तीर्थ थाप्या – प्रकास्या. ते च्यारतीर्थमध्ये वडेरा गणधर अने वडेरा गणधरांने उपगार तीर्थंकरनो, ते माटे प्रथम तीर्थंकरने नमस्कार १.

अने तीर्थंकर ते निश्चे सिद्ध थाय. पहिला तीर्थंकर अने पछे सिद्ध. ते माटे बीजे पदे सिद्धने नमस्कार २.

पछे तीर्थंकरनो प्ररूप्यो मार्ग ते आचार प्रवर्तावे. ते माटे तीजे पदे आचार्यने नमस्कार ३.

अने जिहां आचार्य होय तिहां निश्चे समीपे उपाध्याय होय. ते माटे चोथे पदे उपाध्यायने नमस्कार ४.

ते आचार्य-उपाध्यायनो परिवार ते साधु. ते माटे पांचमे पदमे(दे) साधुने नमस्कार कीधूं ५.

साधुमध्ये ज्ञान १ दर्शन २ चारित्र ३ ए त्रिण अरूपी छे. ते माटे अत्र सर्वत्र ज्ञानादिक त्रिणने वंदना जाणवी भावथी, यथा *संजयाणं च भावओ* कहतां संयतीने भावथकी नमस्कार कीधूं. ५. तथा *अरिहंत१ सिद्ध२ पवयणं* ए वीस स्थानकमध्ये प्रथम अरिहंतनो गुणग्राम-विनय पछे सिद्धने. तथा वली *नमोत्थू(त्थु)णं अरिहंताणं* अत्र सर्व वर्तमान अरिहंतने नमस्कार, *सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं* पद सूधी पछे अत्रथी सिद्धने. तथा चंदपन्नत्तीमध्ये अरिहंतादिक पांचने नमस्कार कर्यो छे ते ए गाथा –

*णमिऊण असुरसुरगरुलभुयगपरिवंदिए गयकिलेसे ।*
*अरिहंत१सिद्धा२यरिय३उवज्झाए४ सव्वसाहू५ य ॥ [चं.प्र.२]*

अत्र नमोक्कारसूत्रं(त्रें) पांचे पदे नमस्कार कीधो ते माटे ते अत्र प्रथम नमोक्कार सूत्र गणधर वर्णवे छे, ते सूत्रने अर्थथकी कहिये छे –

## [प्रथमदशा असमाधिस्थानाध्ययनम्]

[बा.१] श्रीजिनाय नमः **ण०** नमस्कार थाओ अरिहंतने, ते केहवा छे ? अशोकादि आठ महाप्रातिहार्ये करी शोभित ते अरिहंत,

*अरिहंति वंदणणमंसणाणि अरिहंति पूयसक्कारं ।*
*सिद्धिगमणं च अरहा अरिहंता तेण वुच्चंति ॥ [आ.नि.९२१]*

**ण०** नमस्कार थाओ सिद्धप्रते, ते केहवा छे ? दग्ध कीधा कर्मरूप इंधण जेणे ते सिद्ध अथवा वांछितार्थ थया ते सिद्ध, तेह प्रते.

**ण०** नमस्कार थाओ आचार्यप्रते **आ०** मर्यादाये सेवे जिनशासनना हितोपदेशक ते माटे अथवा पंचविध ज्ञानादिक आचार ते पोते पाले पलावे ते आचार्यने.

*पंचविहं आयारं आयारमाणा तहा पभासंता ।*
*आयारं दंसणं च आयरिया तेण वुच्चंति ॥ [आ.नि.९९४]*

**ण०** नमस्कार थाओ उपाध्यायने. उप **क०** समीपे आवीने अध्ययन करिये ते उपाध्याय, द्वादशांगी श्रुत भणे भणावे ते उपाध्याय, तेहने.

**ण०** नमस्कार थाओ सर्व साधूने, साधे ज्ञानादि शक्ते मोक्ष ते साधू अथवा समता सर्वभूतने विषे ध्या[वे] ते साधू.

*वयछक्कमिंदियाणं च निग्गहो भावकरणे सव्वं च ।*
*खमयाविरागयावि य मणमाइणं निग्गहो य ॥१॥*

*कायाण छक्कजोगंमि जुत्तया वेयणाहियासणया ।*
*तह मारणंतियसहणा य एए अणगारगुणा ॥२॥*

सर्वसाधू ते जिनकल्पिकथविरकल्पादिक अनेक भेद छे ते लोक- अढीद्वीपमध्ये वर्ते छे ते सर्वसाधूने नमस्कार थाओ.

**ए०** ए पंच परमेष्ठी अरिहंतादिकने जे नमस्कार, ते केहा भगवंते कह्या – **स०** सगलाइ अनेक भवांना कीधा जे पाप तेहना नसाडणहार ७.

**मं०** द्रव्य मंगलीक दधिचंदनप्रमुख जे भावमंगलीक एणे आपे ३ परलोक फल सूचक दृष्टांत चंडपिंगलाचार्यनो ४ वली हुंडकयक्षनो दृष्टांत जाणवो ५.

ए मंगल सर्वमांहे ८ **प०** प्रथम ए श्रीनमस्कार पहिलो मंगलीक थयो ९. नवकारना माहात्म्य ऊपरे इह जो त्रिदंडियानो दृष्टांत१ वली साप फिटी फूलनी माला थइ २ देवता श्रावकने दिहाडी बीजोरो. आ निमित्तथी पंच परमेष्ठी प्रथम वखाण्या. पद ९ संपदा ८. गुर्वक्षर (?)

**सु०** सांभल्युं अवधार्युं **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् ! चिरंजीवी शिष्य. एहवा सुधर्मा स्वामी जंबूप्रते कहे **ते०** तेणे **भ०** भगवंते श्रीमहावीरदेवे **ए०** एम **म०** आख्यातो कह्यो **इ०** इहां जिनशासनने विषे **ख०** निश्चे **थे०** थविर-धर्मथी डिगताने थिर करे तेणे **भ०** भगवंते-भग कहिए ए भव-संसार तेहनो अंत करे ते भगवंत तेणे **वी०** वीस संख्याइं **अ०** असमाधि ते भावरूप जेणे आचर्ये आत्माने असमाधि उपजे तेहना **ठा०** स्थानक **प०** प्ररूप्या-भगवंत समीपे सांभली ग्रंथपणे निबंधन कर्या छे.

[बा.२] शिष्य पूछे छे **क०** कींया **ख०** निश्चे **ते०** ते **थे०** स्थविर-गणधरदेव तेणे **भ०** भगवंते भग शब्द ते पूज्यवाची ज्ञानादिक ऐश्वर्य छे जेहने तेणे **वि(वी)०** वीस **अ०** असमाधिना **ठा०** स्थानक ते **प०** प्ररूप्या.

[बा.३] सुधर्मा स्वामी कहे छे – **इ०** ए आगल कहस्ये ते **ख०** निश्चे **थे०** स्थविर भगवंते अतिशयज्ञानी श्रुतकेवली पुर्षे **वी०** वीस **अ०** असमाधिना थानक-नही जे समाधि ते असमाधि एतले ते आचरतां पोताना आत्माने [परने] उभयने, असमाधि ते २ प्रकारे ते द्रव्यअसमाधि भावअसमाधिना स्थानक ते **प०** प्ररूप्या भगवंतना मुखथकी सांभलीने भव्यजीवे **प०** कह्यां **तं०** ते **ज०** यथा-स्थानक वीस जिम छे तिम कहे छे –

[१] **द०** उतावलो-२ चाले, चशब्दात् ऊठे बेसे सूवे इत्यादिक असमाधिना स्थानक वर्जे. **द०** उतावलो-२ चाले ते पृथिव्यादिक जीवनी विराधना थाये१ खाड-गर्तादिकमध्ये पडवा लहे२ तेणे अन्य-परात्मानी विराधना थाये संयमनी खंडना थाये ३ कांटाप्रमुख भा(वा)गे४ असज्झाइ चंपे५ साहमा आवतां स्त्रीपुरुषस्युं अफलाये६ चपलाइपणो दीसे७ प्राण भूतनी अनुकंपा ओछी पडे८ इत्यादिक असमाधिना स्थानक उपजता जाणीने इर्यासमितिए प्रवर्ते, ते इर्यासमिति प्रथम समाधि जांणवी. इम सर्वत्र जाणवो. एहवो **भ०** व्हे १.

[२] **अ०** रात्रिने विषे तथा अंधारा प्रमुखने विषे अप्रकाशकारी भूमिकाइं अणपूंज्ये चाले बेसे सूवे तो असमाधि. अणपूंज्ये चाले ते दयानो प्रणाम(माण) घटे१ बिच्छु प्रमुख ऊपरे पगादिक मूके ते आत्मविराधना थाये २ ते माटे पूंजवो प्रमार्जवो ते बीजी समाधि २.

[३] **दु०** भूंडो दुष्टरीते प्रमार्जे एतले अविधि पूंजे, तिहां पिण जीवहिंसा ऊपजे. अजयणाए पूंजता उपयोगसून्य होय१ उपयोगसून्ये साहमुं जीवनो वाउनो घातनो करणहार थाये२ उपगरण टालीने अधिकरण थाये ३ ते माटे रूडीपरे उपयोगसहित पूंजवो ते त्रीजी समाधि ३. ए सर्वत्र वीस बोलें असमाधि करवी.

[४] **अ०** मर्यादाथी अधिक **से०** स्थानक **अ०** पाटपाटला राखे ते असमाधि. अधिक सय्यासन ते परिग्रह ते पलिमंथ. पलिमंथ ते संयमने व्याघातकारी माटे असमाधि ४.

[५] **रा०** रत्न ते ज्ञानदर्शनचारित्र, तेणे करीने जे अधिक ते रत्नाधिक आचार्यादिक पूज्य गुरुनो पराभव-अपमानकारी एतले जात्यादिकमदे करी गुरुने हीले, गुरु लडे छे, अल्पसूत्रनो धणी छे, गुर्वादिक साहमो बोलवो, ते अविनयपणो, अविनीतने गुरु सीखामण वलती न दे, तेणे करी शिष्यने ज्ञानादिकनी हानि पडे, अज्ञानरूप दल वधे ते असमाधि ५.

[५] **थे०** स्थविरनी घात चिंतवे तथा हेले निंदे, थेविरनी घात करे ने हेला करे ते जिनमार्गनी हेला करी कीधी १, तेणे उत्कृष्टो बंध पडे ते महामोहनी कर्म बांधे, ते असमाधि ६.

[७] **भू०** भूत-एकेन्द्र्यादिक जीवने **उ०** हीडतां चालतां घात करे, भूत-एकेन्द्र्यादिक ऊपरे विध्वंस परिणाम आणे तो पंचेंद्री ऊपरे विध्वंस परिणाम आवे, तेणे दुर्गति नरकनो आउखो बांधे ते असमाधि ७.

[८] **सं०** वार-वार वेगे करी क्रोध ऊतरे ज नही ते असमाध्यो वली, क्रोधादि करी धमधम्यो रहे, तेणे करी पोतानो जीव अने परजीवने संताप उपजावे १, तेणे करी अलीक-आलपणे बोले२, तेणे करी तिर्यंच सर्पादिकनो आउखो बांधे ८.

[९] **पि०** परपूठे **मं०** अवर्णवाद-निंदानो करणहार व्हे ते असमाध्यो वली **पि०** पर पूठे निंदा-मर्म उघाडे तो पोते ज अपयश पामे १, मोल पोतानो करे २, पोतामांहे गुण व्हे ते नास पामे ३, जिहां उपजे तिहां सर्वने निंदनीक व्हे, ए असमाध्यो ९.

[१०] **अ०** वार-वार क्षण-क्षणप्रते **उ०** अजांणतो थको निश्चेकारी भाषा बोले 'अयं दासः, अयं चौरः', ते असमाध्यो व्हे, **अ०** अजाण निश्चय भाषा बोलतां अजाणपणो होय १, विवेकवंत व्हे ते अजांणनो प्रत्यय न मांने विसंवादी माटे ए असमाधि १०.

[११] **ण०** नवा अधिकरण ते क्लेशादिक **अ०** नथी ऊपना तेहने **उ०** उपजावे एहवो **भ०** व्हे, ते असमाध्यो. **ण०** क्लेशने उपजावे घणा जीवांने दुःखदाइ व्हे ते १, तेणे अशातावेदनीय कर्म तीस कोडाकोड सागरोपमनो उत्कृष्टो बांधे २, जिहां उपजे तिहां घणी असाता पामे, ए असमाध्यो ११.

[१२] **पो०** पुरातन ते जीर्ण थया कलहरूप अधिकरण एतले वचन राडिरूप ते **खा०** खमावीने **वि०** उपसम्या होय ते **उ०** फेरी उदीरे ते असमाध्यो **भ०** व्हे. **पु०** पाछला क्लेशादिक उदीरे तो महादुष्ट प्र(परि)णाम आवे १, ते वलतो अधिकरण वृद्धि पामे २, घणानो निसासो पामे ३, पत खोवे ४, जिहां उपजे तिहां आशा भंग थाये ५, चीकणा कर्म बांधे, ए असमाधि १२.

[१३] **अ०** अकाले ते कालिक सूत्र आचारांगादिक प्रथम पोरसी टाली भणे, उत्कालिक सूत्र दशवेकालिकादिक ते काल ४ स्वाध्यायना टालीने संध्याने विषे भणे तो अकाले तथा असज्झायमांहे सज्झाय करतो थको ज्ञाननी आशातना करे, ते ज्ञान न पामे १३.

[१४] **स०** सचित्त पृथ्वीये खरड्या **पा०** हाथ **पा०** पग ते अणपूंज्ये सय्या-आसन सेवे तो १४.

[१५] **स०** प्रहर रात्र गयां पछे उतावली गृहस्थनी भाषा बोले तो १५.

[१६] **झं०** झंझले जेणे करी गच्छमध्ये यतिना मनने दुःख उपजे तो १६.

[१७] **क०** आक्रोशादिक करी खोटा झगडा करे तो १७.

[१८] **अ०** असमाधि-अस्वस्थपणानो **क०** करणहार व्हे तो. परने अने पोताना जीवने असमाध्यो पापलोभ उपजावे, पापलोभथी आर्त-रुद्रध्यान उपजे ए असमाध्यो १८.

[१९] **सू०** सूर्य ऊगांथी लेइने आथमतां लगे भोजन करे तो, आथमे त्यां सूधी जीमतां रात्रि तृषा लागे १, विसूचिका पीडा उपजे २, निद्रा व्यापे ३, स्वाध्यायध्यानादिकने व्याघात थावे, ए असमाध्यो १९.

[२०] **ए०** आहारनी एषणाने विषे **अ०** समितिरहित उपयोगरहित **वि०** अपि **भ०** व्हे तो. **ए०** एषणा असमितिवंतने अनुक्रमे छकायनी दया न रहे, ए असमाध्यो २०.

**ए०** ए पूर्वोक्तप्रकारे **ख०** निश्चे ते **थे०** स्थविर परमेस्वरे तथा गणधरे **वी०** वीस असमाधिना **ठा०** स्थानक **प०** कह्या. **त्ति०** इम हूं कहूं छुं.

## [द्वितीयदशा शबलाध्ययनम्]

प्रथम अध्ययने असमाधिना स्थानक कह्या. ते तो सेवतां सबलो पाप लागे ते बीजो सबलाध्ययन कहे छे.

[बा.४] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् जंबू ! **भ०** भगवंत परमेश्वरे **ए०** एम **म०** कह्युं **इ०** ए जिनशासनने विषे **ख०** निश्चे **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ए०** इकवीस **स०** सबला-काबराकरिचाना चारित्र ठाम, ते सबला. जिम ऊजलो वस्त्र ते मांहे जिम रींगलीना छांटा लागे काबरो, तिम चारित्र पिण अतिक्रमादिके काबरो कहिए. इकवीस सबला मध्ये कोइक थोडा दोषनो बोले(ल) यथा गणाओ गणं इत्यादिक, कोइ मोटा दोषनो बोल यथा मेहुणं पडिसेवमाणे, ए सर्वने सबला कह्या पिण सर्व सबला सरीखा न जांणवा, विशेषाधिक जांणवा यथा निसीथे मासियं० प्रायछित्त ३ सहूने सरीखो नही तिम इहां सबला छे.

[बा.५-६] **क०** कोण **ख०** निश्चे **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ए०** एकवीस **स०** सबला **प०** कह्या ? **इ०** ए आगल कहस्ये ते **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ए०** एकवीस **स०** सबला **प०** कह्या, **त०** ते जिम छे तिम कहे छे-

[१] **ह०** हाथे वेदविकारनो कर्म करे, कुचेष्टादिक करे तो सबलो दोष लागे १.

[२] **मे०** मेथुन देवादिक तीन जातिसुं सेवे, अतिक्रम-व्यतिक्रम-अतीचार करतो २.

[३] **रा०** रात्रिभोजन दिवसे ग्रहीने दिवसे जीमे१ दिवसे ग्रहे रात्रे भोगवे २ रात्रे ग्रहे रात्रे भोगवे ३ रात्रे ग्रहे दिवसे भोगवे ४, ए च्यार प्रकार रात्रिभोजन कहिये. ए रात्रिभोजन अतिक्रमादिके भोगवे एतले भोगवे तो सबलो दोष लागे ३.

[४] **आ०** दोषीलो आहार-पाणी भोगवे तो सबलो दोष लागे ४.

[५] **रा०** पिंडमांहि ते राजा मुख्य ते राजपिंड भोगवे तो सबलो ५.

[६] **की०** वेचातो लेवे **पा०** उधारो आणे **अ०** शोसीने आणे **अ०** सीरीनी तथा धणीनी आज्ञा विनां **आ०** साहमो आण्यो **दि०** आपे ते एतला प्रकारना आहारादिक भोगवे तो सबलो ६.

[७] **अ०** वारं-वार **प०** पचखाण करीने वले **भुं०** भोगवे तो **स०** सबलो दोष लागे ७.

[८] **अं०** छमासमांहि **ग०** एक गच्छथी बीजे गच्छे **स०** जावे तो **स०** सबलो दोष लागे ८.

[९] **अ०** एक मासमांहि **त०** तीन उदक ते पाणीना लेप **क०** लगाडे तो सबलो पाप कहिये नाभिप्रमाण जल अवगाहे ते लेप कहिये ९.

[१०] **अं०** एक मासमांहे **त०** तीन **मा०** मायाना **ठा०** स्थानक **क०** सेवे तो सबलो १०.

[११] **सा०** सय्यातरनो **पिं०** आहार-पाणी **भुं०** भोगवे तो सबलो ११.

[१२] **आ०** आकुटी ते जांणतो थको **पा०** जीवनी हिंसा करे तो **स०** सबलो १२.

[१३] **आ०** आकुटीने जांणतो थको **मु०** मृषा ते असत्य बोले तो सबलो १३.

[१४] **आ०** इम ज आकुटी जांणीनें **अ०** अदत्तादान प्रते **गि०** लेवे तो सबलो १४.

[१५] **आ०** आकुटी जाणीने **अ०** अंतरहित **पु०** सचित्त पृथवी ऊपर **ठा०** काउसग्ग करे **से०** सूवे **नि०** बेसे ए तीनूं ही **चे०** अनेरो पिण कायोत्सर्गादिक करे तो सबलो १५.

[१६] **ए०** इम जांणीने **स०** स्निग्ध पृथवी जलसहितने विषे **ए०** एम आकुटीने **स०** सचित्त रजसहित **पु०** पृथ्वीने विषे १६.

[१७] **ए०** एम **आ०** आकुटीने जांणतो थको **चि०** सचित्त सिला पाषाणने विषे **को०** घूणादिक जीवना वास छे जिहां **दा०** काष्ठने विषे **जी०** जीव ते बेइंद्यादिक **प०** प्रतिष्ठ्या-रह्या छे **स०** कीडी प्रमुखना अंडसहित **स०** जीवसहित **स०** बीज ते तिलप्रमुख तेणे सहित **ह०** हरित ते तृणप्रमुख तेणे सहित **स०** ओस ते सहित **स०** लूयाना घर सहित **प०** पंचवर्ण फूलणसहित **म०** पाणी सहित माटी **म०** कीलियानडाना जाल सहित तेहने विषे **त०** एतले बोले सहित जे **ठा०** स्थानक ते तथाप्रकारनो **ठा०** काउसग्ग करिवो **सि०** सूयवो **नि०** सज्जायस्थानक ते निसीहियं कहिये ते **चे०** करे तो सबलो पाप लागे १७.

[१८] **आ०** आकुटी ते जांणीने **मू०** मूल वृक्षना भोजन करे **कं०** उत्पलादिक कंदना भोजन करे **खं०** वृक्षना थडानो भोजन करे **त०** छाल पातली ते त्वचानो भोजन करे **प्प०** कूंपलकलश तेहनो भोजन करे **प०** पानडानो भोजन करे **पु०** फूलनो भोजन करे **फ०** फलनो भोजन करे **बी०** बीजनो भोजन करे **ह०** हरितभोजन ए १० बोल सहित **भुं०** भोगवे तो **स०** सबलो १८.

[१९] **अं०** एक **सं०** वर्षमांहे **द०** दस **उ०** पाणी ताले पलगाडे तो **स०** सबलो पाप लागे १९.

[२०] **अं०** एकवर्षमांहे **द०** दश **मा०** माया-कपटरूप ते आचरे तो सबलो एतले काबरो चारित्र करे २०.

[२१] **आ०** आकुटी जाणीने **सी०** सीतल पाणी **र०** सचित्तरजे ठाम खरड्यो व्हे **ह०** हाथे करी अथवा **म०** मात्र

ते भाजने करी **द०** डोयले चाटुये **भा०** भाजने करी **अ०** अन्न १ **पा०** पाणी २ **खा०** मेवानी जाति ३ **सा०** मुखवासनी जाति **प०** ग्रहीने लेइने **भुं०** भोगवे तो **स०** सबलो २१.

**ए०** एम **ख०** निश्चे **थे०** थविर **भ०** भगवंते अतिशय ज्ञानीये **ए०** एकवीस **स०** सबला **प०** कह्या. **त्ति०** श्रीसुधर्मास्वामी जंबूप्रते कहे. इति बीयज्झयणं २.

## [तृतीयदशा आशातनाध्ययनम्]

पूर्वे सबला टालवा कह्या. ते तो आशातनाने टालवे हुइ ते भणी तीजे अध्ययने आशातना कहीये छे.

[बा.७] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् शिष्य ! **भ०** भगवंते **ए०** एम **म०** आख्यासो(तो)-कह्यो – **इ०** ए जिनशासनने विषे **ख०** निश्चे **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेतीस **आ०** आशातनावां **प०** परूपी. आ कहतां समस्तप्रकारे सम्यक्त्वज्ञानादिकना लाभनी सातना कहतां खंडना करे ते माटे आशातना कहिये.

[बा.८-९] **क०** कोण **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेत्रीस **आ०** आशातनावां **प०** परूपी कही ? सुधर्मा स्वामी कहे छे – **इ०** ए आगल कहस्ये **ता०** ते **ख०** निश्चे **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेतीस **आ०** आशातनावां **प०** परूपी कही, **तं०** ते कहे छे –

[१] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने तथा दीक्षाये वडेरा साधुने **पु०** आगे **गं०** जातो-चालतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १.

[२] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने बराबर **गं०** चालतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २.

[३] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **आ०** नजीक **गं०** चालतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ३.

[४] **ए०** एम **ए०** एणे प्रकारे **अ०** अलावे करी इण रीते **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **पु०** आगले **चि०** ऊभो रहतो व्हे तो **आ०** आशातना **शि०** शिष्यने ४.

[५] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **स०** बराबर **चि०** ऊभो रहतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ५.

[६] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **आ०** नजीक **चि०** ऊभो रहतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ६.

[७] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **पु०** आगल **णि०** बेसतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ७.

[८] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **स०** बराबर **णि०** बेसतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ८.

[९] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **आ०** नजीक **णि०** बेसतो **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ९.

[१०] **से०** शिष्य **रा०** गुरूने **स०** साथे **ब०** बाहिर **वि०**कायचिंताने अर्थे **णि०** गयां थकां **त०** तिहां **पु०** पहिला ज **से०** शिष्य **आ०** शोच लेवे **प०** पछे **रा०** गुरु शोच लेवे तो ए दशमी **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १०.

**अ०** पर्याय लिखिये छे – पुव्वतरागं० एतले कोइक प्रस्तावे गुरु शिष्य भेला थंडले ऊठ्या छे अने बाहिरला पांणीनो एक ज भाजन होय तिवारे जो गुरु पहिला शिष्य **आ०** आचमननो पांणी ल्ये तो आशातना, जे भणी गुरु ऊभा ज थइ रह्या अने शिष्य आगलथी आचमननो पांणी लेइ गयो. गुरुनो मुलायजो न राख्यो ते माटे आशातना एटले बाहिर जाइने साधूने आचमन लेवो तिण ऊपरे वली बीजी वारे शाखि ते ए प्रथम ठाणांगे १ दशमे ठाणांगे १० असज्झाइमध्ये चोथे बोले *असुइसामंतो [स्था. १०-७१४]* असज्झाइ उच्चार १ व्यवहारे सातमे

उद्देसे १ सूत्रमे नो कप्पइ निग्गंथाणं वा असज्झाइ छले सज्झाय करवो२ अप्पणो० पोतानी असज्झाइ छते पिण सज्झाय न करवो ३ आचारांगे हस्तादिक न धोवो ते मध्ये उच्चारनो ठाम वावर्यो नही ४ दशाश्रुते अध्ययन सातमे *णण्णत्थ [दशा. ७-८७]* हस्तादिक धोवर्या लेवालेवे **ण०** असज्झाइनो लेप धोवो कह्यो ५ सुयगडांगे नवमे अध्ययने उच्चारं पासवणं हरिएसु ण करे मुणी इत्यादिक ६ निसीथे उच्चारने वर्तावीने प्रथम पूछे लूहे ७ पिण काष्ठलो अंगुलीइं न लूहे ८ आयाम हाथ पांणी ल्ये ९ पिण उच्चारमांहे पाणी न ल्ये अर्थात् उच्चार ऊपर पाणी न ल्ये १० अने वेगलो जइ न ल्ये ११ त्रण नावा खोवला सूधी ल्ये १२ ए बारे शाखे आयाम लेवा इति.

[११] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **स०** साथे **ब०** बाहिर **वि०** कायचिंताभणी **णि०** गये थके **त०** तिहां **पु०** पहिला ज **से०** शिष्यने आगले **आ०** आलोवे **प०** पछे **रा०** गुरुने पासे आलोवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ११.

[१२] **के०** कोइ **रा०** गुरुने पहिला पूछ्यो जे कोइ बोलचाल प्रश्नादिक पूछवा योग्य **सि०** कदाचित् **तं०** ते प्रश्नप्रते पहिला ज **से०** शिष्य लघुतर साधु स्वयमेव **आ०** बोले उत्तर देवे **प०** पछे **रा०** गुरु देवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १२.

[१३] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने कदाचित् **रा०** रात्रि समे तथा **वि०** विकाले **वा०** बोलावे तथा बोलावता थका इम कहे '**अ०** हे आर्यो ! **के०** कोण सूता अने **के०** कोण **जा०** जागो छो ?' **त०** तिहां **से०** शिष्य **जा०** जागतो थको **रा०** गुरुना वचनने **अ०** अणअंगीकार करतो उत्तर अणदेतो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने १३.

[१४] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **अ०** आहार-पाणी-मेवानी जाति-मुखवासनी जातिप्रते **प०** ग्रहीने **तं०** ते **पु०** पहिला **से०** शिष्यने आगले **आ०** आलोवे **प०** पछे **रा०** गुरुने पासे आलोवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १४.

[१५] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने **अ०** च्यार प्रकारनो आहार-पाणी-मेवा-मुखवासप्रते **प०** ग्रहीने वहरीने **तं०** ते **पु०** पहिला ज **से०** शिष्यने **प०** देखाडे **प०** पछे **रा०** गुरुने देखाडे ते **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १५.

[१६] **से०** शिष्य ते **आ०** आहारादिक ४ **प०** ग्रहीने **तं०** ते **पु०** पहिला ज **से०** शिष्य लघुतरने **उ०** आमंत्रे कहे **प०** पछे **रा०** गुरुने आमंत्रे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १६.

[१७] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने **स०** साथे **अ०** अशनादिक ४ आहारप्रते **प०** वहिरीने **तं०** ते **रा०** गुरुने **अ०** अणपूछिये **ज०** जेहने जेहने **इ०** वांछे **त०** तेहने तेहने सह्यो (?) **खं०** घणो घणो **तं०** ते **द०** देवे आपे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने १७.

[१८] **से०** शिष्य **रा०** गुरूने **स०** साथे **अ०** अशनादिक ४ आहारप्रते **आ०** करतो थको **त०** तिहां **से०** शिष्य **खं०** घणो घणो उतावलो उतावलो **डा०** सातणा सातणा **र०** रससहित रससहित **उ०** वर्ण-गंध-रससहित **म०** मनने इष्ट ते मनोज्ञ मनोज्ञ **म०** मनने रीझवे ते मणाम कहिये **णि०** स्निग्ध स्निग्ध **लु०** लूखो लूखो पापडादिक **आ०** आहार कर्तो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने १८.

[१९] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुये **वा०** बोलावतां थकां **अ०** सांभल्यो अणसांभल्यो **भ०** कर्तो हूवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने १९.

[२०] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरूये **वा०** बोलावतां थकां **त०** तिहां **ग०** रह्युं ज **प०** सांभले कहे 'स्यूं कहो' एम कर्तो **भ०** हूवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २०.

[२१] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने '**किं०** स्यूं' **ति०** इति इम ज कहणहार **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २१.

[२२] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने तुंकारानो कहणहार **भ०** होवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २२.

[२३] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने **खं०** उतावलो उतावलो कर्कश निठुर वचननो कहणहार **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २३.

[२४] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने कहे 'जे काइ तुमे स्थविरांनी वेयावच करो लाभ छे' तव **त०** तेणे वचने करीने कहे 'स्वामिन् ! तुम्हेने' इम **प०** प्रकर्षे वचन हणे एम कहणहार **भ०** व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २४.

[२५] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने **क०** धर्मकथाप्रते **क०** कहतां थकां '**इ०** ए **ए०** इम ज छे हूं कहूं तिम, तुम्हे कहो जिम नथी' एम कहतो **भ०** हुवे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २५.

[२६] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **क०** कथाप्रते **क०** कहतां थकांने एम कहे 'ए वात ए बोल तुम्हने **नो०** संभारतो याद आवतो नथी' इम कहणहार **भ०** होवे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने २६.

[२७] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **क०** धर्मकथाप्रते कहतां थकांने णो **सु०** सुमन ते भलो मन न होये एतले गुरूनो उपदेश प्रशंसे नही गुरुनो वचन अनुमोदे नही 'अहो केहवी वाणी करी शोभन कथा कहे छे' इत्यादिरूप सराहे नही **आ०** आसातना **से०** शिष्यने २७.

[२८] **से०** शिष्य ते **रा०** गुरुने धर्मकथाप्रते कहतां थकांने **प०** पर्षदानो भेदणहार **भ०** व्हे तो 'स्वामी कथा पूरी करी गोचरीनी तुमने ठीक छे किं नथी ? हिवे कितनीक वार कहस्यो' इम शिष्य कहतो व्हे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने २८.

[२९] **से०** शिष्य वली **रा०** रत्नाधिक गुरु आचार्यने **क०** कथा ते धर्म दान-शील-तप-भावरूपनो वर्णव कर्ता थकां **क०** कथाने आछेदे ते जे कथानो रस आच्छेदे एतले श्रोतानो रस-मन भंग करे जे वली 'समयांतरे आवजो सांभलवानो मन होवे तो, हिवडां ऊठो पछे जांणस्ये' एम कहतो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने २९.

[३०] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **क०** धर्मकथा **क०** कहतां थकांने **ती०** तेह **प०** पर्षद **अ०** ऊठी नथी **अ०** भेद पामी नथी सांभलवाने सन्मुख थइ छे **अ०** अवोछिन्न ते मध्येथी ते पिण कोइ ऊठ्यो नथी **अ०** उरही-परही विखरी नथी बेठी तेहवी पर्षदामे **दो०** बिवार **त०** तिन वार **ता०** गुरु कहे तेहवी ज **क०** कथानो कहणहारो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने ३०.

[३१] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **से०** सय्या-संथाराने विषे तथा देह-हाथ-पगादिक ते **पा०** पगे करी **सं०** संघट्टीने **ह०** हाथ-मस्तके चढायां विनां 'माहरो वांक छे' एम न कहे इम **ग०** जावे तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यने ३१.

[३२] **से०** शिष्य **रा०** गुरुने **से०** सय्या-संथाराने विषे **चि०** ऊभो रहे **णि०** बेसे **तु०** सूवतो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने ३२.

[३३] **से०** शिष्य **रा०** गुरूने **उ०** ऊंचे आसने तेहना भेद द्रव्य १ भाव २. ते बहुल सुखकारी अथवा सम आसन ते बराबरि आसन **चि०** ऊभो रहे **णि०** बेसे **तु०** त्वचा रोम वर्तवो सूयवो **भ०** व्हे तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यने ३३.

**ए०** ए कह्या ते **ख०** निश्चे **ता०** तेणे **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते तथा गणधरे **ते०** तेतीस **आ०** आसातना **प०** परूपी कही. **त्ति०** श्रीगुरु सुधर्मा स्वामी शिष्यने कहे छे.

## [चतुर्थदशा गणिसम्पदाध्ययनम्]

तीजे अध्ययने आसातना कही. ते आसातना आचार्य गुरुनी व्हे. ते भणी ४ अध्ययने आचार्यनी ८ संपदा कहे छे.

[बा.१०] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् शिष्य ! **भ०** भगवंते **ए०** एम **म०** आख्यात्यो-कह्यो **इ०** इम **ख०** निश्चे **थे०** थविर **भ०** भगवंते **अ०** आठ प्रकारे **ग०** साधू समुदाय छे तेहने ते गणी आचार्य, तेहनी संपदा **ग०** साधूनो गण ते समुह तेनो नायक गणी कहिये. संपया० द्रव्यसंपदा भलावेला सुशिष्यने परिवार अने भाव संपदा ते अतिहि बहुश्रुत अतिसुंदर सहिज सभाव प्रकृतिवंत यथा व्यवहार सूत्रना तीजा अध्ययनमांहि युगसंपदा कही ते संपदा सहित, परूपी, ते कहे छे.

[बा.११] **क०** कोण **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते गणधरे **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्य तेहनी **सं०** संपदा **प०** परूपी-कही.

[बा.१२] **इ०** ए आगल कहस्ये ते **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनी **सं०** संपदा **प०** परूपी-कही **तं०** ते कहे छे – [१] **आ०** आचार्यनी संपदा आचरिये ते आचार १ [२] **सु०** श्रुत ते ज्ञान तेहनी संपदा ते श्रुतसंपदा २ [३] **स०** सरीर सोभाकारी ते संपदा ३ [४] **व०** वचन मधुर ते वचन संपदा ४ [५] **वा०** सर्व शास्त्रने वंचावे ते वाचना संपदा ५ [६] **म०** भली मति ते मतिसंपदा ६ [७] **प्प०** प्रयोगसंपदा ७ [८] **सं०** संग्रहनी प्रज्ञा नाम आठमी संपदा कही.

[बा.१३] [१] ज्ञान संज्ञाये गुरु शिष्यने कहे अथवा हिवे **किं०** प्रश्ने **तं०** ते शिष्य पूछे छे **आ०** आचार संपदा ते स्युं ? गुरु कहे – तिका **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहे छे – [i] **सं०** संयम ते १७ प्रकाररूप पंचाश्रवद्वारथी विरम करे, पंचेंद्रीनो निग्रह करे, कषाय ४ जीते, मनदंड-वचनदंड-कायदंडथी निवर्ते, एवं १७ प्रकारना संयमने विषे **धु०** निश्चे अवश्य प्रतिलेखणादिक प्रमार्जन सज्झायादिक सहित **भ०** व्हे. [ii] **अ०** असंगृहीतात्मा अभिमानरहित मदरहित एतले 'हूं आचार्य छुं, बहुश्रुत छुं' इत्यादि मानरहित २. [iii] **अ०** निश्चलविहारी वायुवत् एतले उग्रविहारी तथा भिक्षाने नित्य न जावे ३. [iv] **वू०** निश्चल आचारवंत, चंचलस्वभाव नही अथवा मन-वचन-कायाना विकार रहित अथवा वृद्ध ते ग्लानादिक तेहने वेयावच्चकरण-करावणादि ४ स्वभाव छे जेहनो वृद्धसील **वि०** अपि **भ०** व्हे. **से०** तिका आचारसंपदा १.

[बा.१४] [२] एहवा आचारवंतने श्रुत व्हे ते भणी श्रुतसंपदा **से०** ते **किं०** प्रश्न पूछे छे श्रुतनी संपदा ? गुरु कहे – श्रुतनी संपदा ते **च०** च्यार प्रकारे **प०** कही. **तं०** ते कहे छे – [i] **ब०** जे काले जेतलो श्रुत हूये तेहने युक्त सहित जाणे १. [ii] **प०** पोताना नामनी परे सर्वसूत्रनो परिचय कीधो हुई एतले अशंकित आगमना धारक व्हे २. [iii] **वि०** विचित्र श्रुत ते स्वसमय तथा परसमय बि प्रकारना शास्त्रना जाण होवे ३. [iv] **घो०** घोष ते ऊंचो-नीचो-सम उच्चार, तेहनी विशुद्धि **वि०** अपि **भ०** व्हे ४. **से०** ते **सु०** श्रुतनी संपदा २.

[बा.१५] [३] **से०** ते **किं०** प्रश्ने **स०** सरीरबलवंतने ज श्रुत होय ते माटे सरीरसंपदा कहे छे । **स०** सरीर संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहे छे – [i] **आ०** दीर्घपणे **प०** विस्तारपणे **सं०** संपूर्ण अंग एतले सुंदराकारनो धारक **वि०** शब्दे **भ०** व्हे १. [ii] **अ०** सुंदराकार सरीर ते लाजवा योग्य नहीं, हीनांग व्हे तो लज्जा पामे २. [iii] **थि०** दृढ संघयण बलवंत सरीर ३. [iv] **ब०** घणी **प०** प्रतिपूर्ण छे पंचेंद्रिय जेहने ते सरीरसंपदाना धणी ४. **से०** ते **स०** सरीर संपदा.

[बा.१६] [४] **से०** ते **किं०** प्रश्ने कोण ते **व०** वचनसंपदा ? गुरु कहे – ते **व०** वचन संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** कही. **तं०** ते कहे छे – [i] **आ०** आदेज्ज वचन ते सकल जनग्राहक वचन होइ, सांभली वचन प्रमाण करे **वि०** अपि, साधूने देशांतरे विहारनो कहे तो वचन झूठो न करे १. [ii] **म०** मधुर ते इष्ट स्वादुवंत छे अर्थवंत, गंभीरादिक गुणोपेत, श्रोताना मनने आह्लादकारी वचन छे जेहनो **वि०** अपि **भ०** होवे २. [iii] **अ०** राग-द्वेष मेलरहित छे वाणी जेहनी एहवी **वि०** अपि **भ०** व्हे ३. [iv] **फु०** जे बोले ते सहु संदेहरहित समझे ते स्फुटवचन कहिये, ते सगला मनुष्य धारे एहवो **वि०** अपि **भ०** व्हे ४. **से०** ते संपूर्ण **तं०** ते ए वचननी संपदा जांणो ४.

[बा.१७] [५] वचन संपदाना धणी वाचना देवा समर्थ. **से०** ते अथ हिवे **किं०** प्रश्ने कुण **वा०** वाचना संपदा ? गुरु कहे छे – ते **वा०** वाचना संपदा ते **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी कही **तं०** ते कहे छे – [i] **वि०** जांणीने गुणादिक शिष्य जेह तेहवा इ कहे आकृत भणी १. [ii] **वि०** जांणीने यथायोग्य थिर चित्त शास्त्रानुक्रमे करी एम कहे. काचाने दोष संभवे यतः

*आमे घडे निहत्तं जहा जलं तं विणासेइ ।*
*एवं सिद्धंतरहस्सं परं अप्पाणं विणासेइ ॥ [नि.भा.६२४३]*

[iii] **प०** सूत्र ले, वादि शिष्यने सूत्रार्थ देवे, विशेष ग्रहणकाल देखीने शक्तियोग्य सूत्रार्थ देवे, सर्व प्रकारे निर्वाहे अत्यर्थ घणो जणावी ३. [iv] अति घणो निर्वाहे, कर्तव्यव्यापार संबंधे स्वयं जांणतो परने जणाववा भणी **वि०** अपि **भ०** व्हे ४. **से०** ते **वा०** वाचनासंपदा.

[बा.१८] [६] वाचनासंपदा तो मतिवंतने हूइ. ते भणी मतिसंपदा कहे छे. **से०** ते अथवा हिवे **किं०** कोण ते **म०** मतिसंपदा ? **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी-कही. ते कहे छे – [i] **उ०** सामान्य अर्थ ग्रहवो ते अवग्रहमतिनी संपदा १. [ii] **इ०** ते अर्थनो विशेष आलोचवो ते इहा, जिम राजमार्गमे पुर्ष देखीने कहे 'ते स्थाणु क पुर्ष कहीए' एहवो संशय ते इहा २. [iii] **अ०** तेह ज अर्थ स्थाणु निश्चय ते अपाय, 'नही राजमार्गे स्थाणु, पुर्ष एही ज छे' ३. [iv] **धा०** ते अर्थने धारी राखे धारणा कहीये संखकाल असंखकाल लगे होइ मतिसंपदा ४.

[i] से अथ हवे **किं०** कवण ते **उ०** अवग्रहमतिसंपदा ? **उ०** अवग्रहनी मतिसंपदा **छ०** छ प्रकारे **प०** परूपी. **तं०** ते जिम छे तिम कहे छे – [क] **खि०** सीघ्र उच्चारतां वात पूछतां प्रश्न कहे १. [ख] **ब०** एक वार ग्रह्ये अनेराइ पंच-षट् अर्थना शत ग्रहे अवधारे २. [ग] **ब०** बहु प्रकारे ग्रहे, हाथे लिखे, मुखे अनेरो ऊचरे, मनमांहि अनेरो चिंतवे इत्यादिक बहुविध ग्रहे ३. [घ] **ध्रु०** निश्चल काले पण ग्रहे, बहुकाले पिण वीसरे नही ४. [ङ] **अ०** अनिश्रित ते नेश्राये रहित ग्रहे एतले पुस्तकादि बिना धारी राखे तथा अत्यंत असंभारे कोइ पूछे जे, ते कहे छे ५. [च] **अ०** संदेहरहित पिण सूत्रार्थने ग्रहे धारे, अन्यने पिण निःसंदेहपणे कहे ६. **से०** ते ए **उ०** अवग्रहमतिसंपदा १.

[ii] **ए०** इम ज **इ०** इहामति जाणवी २.

[iii] **ए०** इम ज **अ०** अवायमति पिण जाणवी ३.

[iv] **से०** अथ हवे **किं०** कोण ते **धा०** धारणामति ? गुरु कहे – **धा०** धारणामति **छ०** छ प्रकारे **प०** परूपी-कही. **तं०** ते कहे छे – [क] **ब०** एक वार कह्ये घणा शास्त्रादिक **ध०** धारे १. [ख] **ब०** एक वार कह्ये घणा प्रश्नादिक **ध०** धारे २. [ग] **पो०** जीर्ण कालनो जीर्ण धरे जिवारे पूछे तिवारे तिम ज कहे तथा आज भण्युं ते जांणे घणा कालनो भण्यो छे एहवो धारे ते पोराणधर कहिए ३. [घ] **दु०** जे धरतां दोहलो तेहने धारे, नयगमभंगादिक निश्चलपणे ग्रहे, बहुकाले पिण वीसरे नही ४. [ङ] **अ०** अनिश्रित ते नेश्राये रहित ग्रहे एतले पुस्तकादिक विना

धारी राखे तथा अत्यंत असंभारे कोइ पूछे तेहने कहे ५. [च] **अ०** संदेहरहित सूत्रार्थने पिण ग्रहे धारे, अन्यने पिण निसंदेहपणे कहे ६. **से०** ते ए **धा०** धारणामति संपदा. **से०** ते **म०** मतिसंपदा ६.

[बा.१९] [७] **से०** ते अथ हवे **किं०** कोण ते **प्प०** प्रयोगसंपदा ? गुरु कहे – **प्प०** प्रयोगसंपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी – कही. **तं०** ते कहे छे – [i] **आ०** आत्माने विवाद काले 'द्रव्य जीतवा समर्थाइ छे किं वा नथी' ते जेम जाणीने **प०** वादनो कर्णहारो व्हे १. [ii] **प०** पर्षदाने भली-भूंडी आर्य-अनार्य जाण-अजाण एम **वि०** जांणीने **वा०** वाद करे, धर्मकथानो कहणहार व्हे तथा स्वसमय-परसमयनो जाण २. [iii] **खे०** खेत्र आर्य राजानो तथा कोइक कदाग्रह-मतिद्वेषना क्षेत्रनो स्वरूप **वि०** जाणीने **वा०** वादने **प०** प्रजुंजे **भ०** करे ३. [iv] **खे०** क्षेत्रनो राजा तथा वडेराना सरूप जोइ जे भणी जिनमार्ग सदा सर्वदा प्रशंसनीक ही ज छे, निंदनीक जिनवचन नथी तो ही पण तेहना शास्त्रनी शाख देइ जिनमत दीपावे एहवो जोइए ४. [iv] **व०** षट् द्रव्यमध्ये ए कोण वस्तुरूप **वि०** जाणीने **वा०** वादने **प्र०** प्रजुंजे पदार्थनो सरूप कहे, **वि०** एहनो पर्याय **व०** आचार्य वस्तु ते द्रव्य१ क्षेत्र२ काल३ भाव४ च्यारनो जांण जोइ जे तत्र द्रव्य ते षट् द्रव्यनो सरूप ३ भाव ते उदयादिक छ भाव तथा नेगमादिक सात नय तथा परोक्षादिक ४ प्रमाणादिक तथा निश्चय-व्यवहार तथा विशेषां अशेष ५ पांच हेतु-दृष्टांत तथा कार्य-कारण तथा सोलवचनादिक अनेक सिद्धान्तोक्त भाव विचारे इत्यादिक वस्तुनो स्वरूप जाणीने त्रिणस्ये त्रेसठ पाखंडी तथा आजीयमत तथा जमालीप्रमुख सात निह्नव प्रमुखना मतने निराकरीने श्रीजिनमतनी साख दीपावे ते आचार्य तिण ही ज भवे तथा तीजे भवे निश्चे मुक्तपद पामे. ए प्रयोगसंपदा जाणवी ४. **से०** ते ए प्रयोगमतिसंपदा.

[बा.२०] [८] प्रयोगसहितने संग्रहप्रज्ञानो जांणपणो सम्यक् होइ. **से०** अथ हवे **किं०** कवण **तं०** ते प्रयोगमतिनो धारक होइ, तेहने ज संग्रहपरिज्ञा संपदा होइ. ते कुण संग्रह परिज्ञा नाम संपदा ? गुरु कहे – **सं०** संग्रह **प०** परिज्ञा नाम संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहे छे – [i] **ब०** घणा **ज०** ते साधुजन तेहने **पा०** प्रयोगपणे **पा०** पाडिहार्या **पी०** पाट्या **फ०** बाजोट फलक **से०** उपाश्रय **सं०** पाटीओ संथारो ते **वा०** वर्षाकाले **वा०** वसवाने **खे०** क्षेत्र **प०** जोवे, आहारादिक सर्व बोल सहित ग्रामनगरादि बाल-वृद्ध-दुर्बल-ग्लान-तपस्वीयादिकने अर्थे आहार-भिक्षा पामवा योग्य एहवो वर्षानो काल तेहने विषे क्षेत्र ते प्रतिलेखे एतले ग्लानादिकने सुखे संयम एतले एहवो क्षेत्र प्रतिलेखी जोइ-जांणी आज्ञा दे-गवेषे १. [ii] यत्नथी

*चिक्खिल्ल१ पाण२ थंडिल३ वसही४ गोरस५ जणाउल६ वेज्जे७ ।*
*ओसह८ निव९ भद्दयजणा१० पासंडा१२ भिक्ख१२ सज्झाए १३ ॥ [र.सं.३४८]*

ते सूत्रभणी ग्रहण **भ०** व्हे २. [iii] **का०** काले प्रस्तावे **स०** पडिलेहणादिकने विषे सावधान **भ०** व्हे ३. [iv] **अ०** यथागुरु ते जेणे दीक्षा दीधी ते तथा वांद्य गुरुने यथायोग्य **सं०** पूजा करवी, आहार-वस्त्रादिक देवा तथा वंदनादि सर्व सत्य करे ते पूजा ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **सं०** संग्रहपरिज्ञा नाम आठमी संपदा ८.

हिवे आचार्य यती कहीजे कादम थोडो होइ १ पाणी जीव बेइंद्र्यादिक थोडा होइ २ थंडिल जावानो ठाम निर्दोष हुइ ३ गोरस दधि-दुध-छासि ४ वस्ति जिहां व्हे ५ वेद्य जिहां हुई ६ ओषध जिहां मिले ७ धाननो जिहां संचय हूइ ८ जिहां अधिकारी श्रावक हुइ ९ पाखंडीनो जोर नही १० भिक्षा सोहनी ११ सज्झायनी भूमि १२ चीखलादिक रहित १३ ए गुण क्षेत्रना हूइ, तिहां चोमासे रहिवो.

[बा.२१] **आ०** आचार्यने **अं०** समीपे वसे ते शिष्य **इ०** ए आगल कहस्ये ते **च०** च्यार प्रकारे **वि०** विनयनी प्रतिपत्ति, विनयनो अंगीकार कर्वो, ते होइ तो **णि०** रिण रहित, शिष्यने ४ प्रकारनो विनय सीखावे नही तो

शिष्यना रिण्या थावे. **तं०** ते कहे छे – [१] हिवे ते गुरु **आ०** आचार्य विनय सीखावे १. [२] **सु०** श्रुतरूप विनयने सीखाववे करी २, [३] **वि०** प्ररूपणारूप विनयने सीखाववे करी ३, [४] **दो०** दोष ते इष्टानिष्टादिकनी घातना **वि०** विनय करीने ४ **से०** शिष्यने रिणरहित थाय आचार्य.

[बा.२२] [१] **से०** अथ हवे **किं०** कोण ते **आ०** आचार विणय ? आचार विणय **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्युं. **तं०** ते कहे छे. [i] **सं०** १७ भेदे संयम तेहनो **स०** आचरण रूप विनय, ५ सुम(समि)ति-३ गुप्तिरूप सीखावणहार होइ १. [ii] **त०** १२ भेदे तप करवानी विधि ते आचरवो सीखावणहार **वि०** अपि **भ०** व्हे २. [iii] **ग०** साधूनो समूह ते गण, तेहनो वियावचादिक सीखावे, आप करे, अनेरा पासे करावे, ते गणसामाचारी **वि०** अपि **भ०** व्हे ३. [iv] **ए०** एकल विहार अन्यने करावे, आप करे, ते एकलविहार सामाचारी कहिये ४. **से०** ते संपूर्ण ते ए ४ प्रकार **आ०** आचाररूप विनय १.

[बा.२३] [२] **से०** अथ हिवे **किं०** कोण ते **सु०** सूत्रनो विनय ? **सु०** सूत्रनो विनय ते **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूप्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] **सु०** सूत्र **वा०** वाचे-संभलावे १. [ii] **अ०** अर्थ **वा०** वाचे-संभलावे २. [iii] **हि०** हित ते सूत्रार्थनो हितार्थ **वा०** वाचे-कहे ३. [iv] **णि०** योग्य शिष्य देखी सर्व भाव ते वाचे-संभलावे ४. **से०** ते ए **सु०** श्रुतविनय २.

[बा.२४] [३] **से०** अथ हिवे **किं०** कोण ते **वि०** विक्षेपणा विनय ? शुद्धधर्मनो प्रक्षेपवो ते विक्षेपणा कहिये. ते **वि०** विक्षेपणा विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] **अ०** नथी दीठो सम्यक्त्व तेह सीखवे वंचावे तथा अदृष्ट ते जेणे धर्म नथी जांण्यो ते मिथ्यात्वने सम्यक्त्व थापे १. [ii] **दि०** पूर्वे सम्यक्त्व सहित कीधूं छे, तेहने देशव्रतीसहित करे. दृष्टिपूर्वक ते कहिये जे श्रोताइं पूर्वे सांभल्यो होइ ते ही पावे २. [iii] **दि०** जे पूर्वे देशव्रती सहित कीधूं छे तेहने सर्व देशव्रती सहित करे तथा दृष्टिपूर्वक ते जेणे धर्म जाण्यो छे तेहने महाव्रत अंगीकार करावे ३. [iv] **दि०** प्रथम जीव धर्म पामीने पछे भ्रष्ट थाताने वली **ध०** ते ही ज सर्वविरतिधर्मथी डिगतो होइ तेहने अथवा श्रुतधर्म तेहने विषे **ठा०** थापणहार **भ०** व्हे. **त०** ते ही ज **ध०** चारित्रधर्मने जिम **हि०** हित होइ एतले वृद्धि होइ तिम करे **सु०** सुखने अर्थे **ख०** क्षमाने अर्थे **णि०** निश्चय ते कल्याण-मोक्षने काजे **आ०** जे सुख साथे भवने केडे आवे **अ०** आराधवाने अर्थे सावधानपणे ऊठे ४. **से०** ते संपूर्ण **वि०** विक्षेपणा विनय कहिये ३.

[बा.२५] [४] **से०** अथ हवे **किं०** स्यो **तं०** ते **दो०** दोषनिर्घातना विनय ? आगलामांहे ए क्रोधादिक दोष अवगुण होइ ते दोषने टलावे ते **दो०** दोष **णि०** निर्घातना विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूप्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] **कु०** कोइ कारणे ऊपनो जे क्रोध तेहनो क्रोध मृदुवचने करीने **वि०** टालणहार **भ०** व्हे १. [ii] **दु०** दुष्टना दोषने एतले दोषे करी सहित होवे तेहना दोषनो **नि०** नास करिवे एतले टालणहार **भ०** व्हे २. [iii] **कं०** कोइ साधूने अन्नादिक वस्त्रादिक देखीने ऊपनी वांछा तेहने ते दृष्टांते करी तथा देवे करी **कं०** वांछानो **छिं०** छेदणहार **भ०** व्हे अथवा **कं०** प्रश्नना उत्तरनी वांछा ते उत्तरने देवे करीने छेदणहार **भ०** होवे ३. [iv] **आ०** आत्मा सुप्रणिहित जे पोते पूर्वोक्त बोलने विषे प्रवर्ते नही **वि०** अपि **भ०** व्हे तथा पोताना आत्माना योग भली परे वर्तावे तथा प्रश्न पूछवानो अभिलाषी होवे ४. **से०** ते संपूर्ण दोष **णि०** निर्घातना विनय कह्युं ४.

[बा.२६] **त०** तेहवा पूर्वोक्त **गु०** गुणे करीने जे संयुक्त आचार्य जेहनो **अं०** समीपनो वसणहार तेहनो **इ०** ए आगल कहस्ये ते **च०** च्यार प्रकारनी **वि०** विनयनी प्रतिपत्ति ते करवानी विधि **भ०** थाइ तथा अंगीकार करवो पडिवर्जवो **भ०** व्हे. **तं०** [१] ते सीत-आतपे करी सीदाताने **उ०** उपकरे ते, स्थिर करे ते उपकर्ण, तेहनो उपजाववो

ते उपगरणोत्पादना कहिये १. [२] **सा०** गुरुने साहाय्य दे तथा परने साता गुणनो साहाय्य करे २. [३] **व०** गुरुनी प्रशंसा करे, संजलण गुण विस्तारे ३. [४] **भा०** भार देवा योग्य थाइ, गुरुनो भार उतारे, गछनो भार चिंतानो कर्वो ४.

[बा.२७] [१] **से०** अथ हवे **किं०** स्युं **उ०** उपगरणनो उपजाववापणो ? गुरु कहे छे – उपगर्णनो उपजाववापणो **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्युं. **तं०** ते कहे छे – [i] **अ०** ते पूर्वे नथी पाम्या **उ०** ते वस्त्रपात्रादिक ते एषणा सुद्धे उपजावणहार, समर्थ **भ०** व्हे १. [ii] **पो०** पुरातन ते मूल छे अथवा पुरातन ते जीर्ण **उ०** एहवा उपगर्ण वस्त्रादिक **सा०** चोरादिकथी उपाये करी रक्षक **भ०** व्हे, काले भोगवे **सं०** गोपवणहार **भ०** थाइ. [iii] **प०** अनेरा शिष्यकने वस्त्रादिक फाटा जांणीने **प०** सीदातो जांणीने उपगरणे करी उद्धरे एतले साहाय्य द्ये ३. [iv] **अ०** यथायोग्य उपगरणनो संविभाग करे तथा अनुक्रमे वडा-लघूने विहवावणहार **भ०** व्हे ४. **से०** ते ए **उ०** उपगर्णनो उपजाववापणो १.

[बा.२८] [२] **से०** अथ हवे **किं०** ते कोण **सा०** साहाय्यनो करवापणो ? गुरु कहे छे – **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूप्यो-कह्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] गुरु बोलावतां थकां पाछो अनुकूल विनय करीने वचन बोले. [ii] **अ०** सुहावणा गमता गुरुने **का०** कायाइं वेयावच कर्वापणो तथा कायाइं पोतानी रीते पिण अनुकूलपणे प्रवर्ते. [iii] **प०** जेहने जेहवी रुचे तिम विसाम करे पिण वेगारी जिम न करे ३. [iv] **से०** सर्वार्थ-गुरुना कार्यने विषे **अ०** अप्रमादीपणे विचरे तथा गुरु कहे तिम करे ते [अ]प्रतिलोम ४. **से०** ते ए **सा०** साहाय्यनो कर्वापणो २.

[बा.२९] [३] **से०** अथ **किं०** कुण ते **व०** साधर्म्यादिकना गुण वर्णन दीपाववो ? गुरु कहे – गुणकीर्तननो करवो **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] **अ०** यथायोग्य सत्य गुरुना गुण व्हे तेहनो दीपावणहार **भ०** व्हे १. [ii] **अ०** अवर्णवाद गुरु आचार्यना बोले तेहने **प०** शिष्ट करे २. [iii] **व०** गुण बोले तेहने **अ०** मोटो करे, सूत्र-अर्थादिकने देवे करीने **भ०** हूइ ३. [iv] **आ०** चढते वेरागे प्रवर्ते तथा आचार्यनो ते **से०** सेवणहारो **भ०** व्हे ४. **से०** ते ए **व०** गुणस्तुतिनो कर्वापणो ३.

[बा.३०] [४] **से०** अथ हवे **किं०** कोण ते **भा०** गछ भारनी चाल-चिंता निर्वाह कर्वापणो ? गुरु कहे छे – गछ भारनो निर्वाहपणो **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूप्यो. **तं०** ते कहे छे - [i] **अ०** क्रोधे करी गछ बाहिर जाता शिष्यने कोमल वचने करी गछमांहि राखणहार **भ०** व्हे, **प०** शिष्यादिकनी संभाल करे तथा शिष्यादिकने कोइ ग्रहे नही तेहने **सं०** पोते ग्रहे १. [ii] **से०** नव दीक्षित शिष्यने **आ०** आचार-ज्ञानादिक **गो०** गोचरीनी विधि सीखावे तथा डाह्यो थाइ तिम करे २. [iii] **सा०** समान-सरीखो धर्म छे ते साधर्मिक **गि०** ग्लानमान ते रोगादिके करीने असक्ति माटे आहारादिके सीदातो जाणीने **अ०** यथासक्ते **था०** बलवीर्य अणगोपवतो थको **वे०** यथायोग्य वेयावच्च करे, **अ०** ऊठे सावधान थाइ ३. [iv] **सा०** एक समाचारीना धारकने **अ०** अधिकरण-कलह क्रोधादिक विरोध **उ०** उपने थके **त०** तिहां **अ०** निरागपणे रहवो, ते निरागद्वेषपणे नही रह्युं थके **अ०** केहनो पक्षपात पोते ग्रहे नही **म०** मध्यस्थ ते समभाव थको **स०** सम्यक् प्रकारे **व०** व्यवहार ते मर्यादा राखतो थको **त०** तेह **अ०** अधिकरण-कलहने **खा०** खमावाने **वि०** उपसमाववाने विषे **खा०** सदा निरंतर **अ०** उद्यमवंत **भ०** थाइ, **क०** किणपरे तथा शिष्य पूछे – 'स्वामी कांइ वर्जे ?' तदा गुरु कहे – 'एतला बोल वर्जे हे शिष्य !' **अ०** अल्पशब्द ते अभाववाची एतले वचनरूप राड रहित हुवे **अ०** अशुभवचन रहित **अ०** क्लेश रहित **अ०** कषायरहित **अ०** तुंकारारहित अल्पशब्द ते निषेध **सं०** संयम **ब०** घणो १७ प्रकारे **सं०** संवर **ब०** घणो आश्रवरहित **स०** समाधि

स्वस्थपणो घणो **अ०** अप्रमाद-विकथादिकरहित **सं०** १७ भेदे संयम **त०** १२ भेदे तप **अ०** आपणा आत्माने **भा०** तपे संयमे वासता **ए०** एणीपरे **वि०** विचरे. **से०** ते ए **भा०** गछभारनो चाल-चिंतानो कर्वो. ४.

**ए०** ए कही ते **ख०** निश्चे **थे०** थविर गणधरे **भ०** भगवंते तीर्थंकरे **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनी **सं०** संपदा **प०** परूपी. **त्ति०** श्रीसुधर्मास्वामी शिष्यने कहे छे.

## [पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थानाध्ययनम्]

चोथे अध्ययने आचार्यना गुण वर्णव्या. ते चित्तसमाधि जोइये. ते भणी चित्तसमाधि ५मा अध्ययनने विषे कहे छे.

[बा.३१] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** आउखावंत शिष्य ! **भ०** भगवंते **ए०** एम **म०** कह्युं जिनशासनने विषे **इ०** एम **ख०** निश्चे **थे०** थविर गणधरे **भ०** भगवंते तीर्थंकरे **द०** दश **चि०** मननी **स०** समाधिना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या-कह्या.

[बा.३२-३३] **क०** कोण **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **द०** दश **चि०** मननी समाधिना **ठा०** थानक **प०** कह्या ? **इ०** एम आगल कहस्ये **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **द०** दश **चि०** मनने **स०** समाधिना **ठा०** स्थानक **प०** कह्या. **तं०** ते कहे छे – **ते०** तेणे काले उत्सर्पणीना चोथा आराने विषे **ते०** ते समय प्रस्तावने विषे **वा०** वाणियग्राम नामे **ण०** नगर **हो०** हूतो. **ए०** इहां **ण०** नगरनो **व०** वर्णव **भा०** जांणवो. **त०** तेह **वा०** वाणियग्राम **ण०** नगरने **ब०** बाहिर **उ०** उत्तरपूर्वने विचाले एतले इशान कूंणने विषे **दू०** दूतीपलास नामे **चे०** उद्यान **हो०** हूंतो. **व०** उद्याननो वर्णव जाणवो. **जि०** जितशत्रु नामे राजा **त०** तेहने **धा०** रणी नामे **दे०** पट्टरांणी, **ए०** एम सर्व **स०** समोसरणनी विधि **भा०** जांणवी. **जा०** जावत्शब्दे ते वनमध्ये अशोक वृक्ष छे. तेहने तले **पु०** पृथ्वी शिलारूप पट्ट अत्यंत रमणीक, तिहां **सा०** त्रिण भवनना नाथ वर्द्धमान स्वामी **स०** पधार्या. **प०** पर्षदा वांदवा सुणवा आवी. **ध०** धर्म उपदेश सांभली **प०** पर्षदा **प०** पाछी वली.

[बा.३४] **अ०** हे आर्य ! एम कहीने **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीरदेव **स०** भलो मन ते रागद्वेष रहित **णि०** गयो छे ग्रंथ बाह्याभ्यंतररूप जे थकी तेहने आमंत्रीने **ए०** एम **व०** कहतो हूओ.

**इ०** ए लोकने विषे **ख०** निश्चे **अ०** हे आर्यो ! **णि०** साधू-साधवीने **इ०** इर्यासमितिवंतने **भा०** भाषासमितिवंतने **ए०** आहारनी गवेषणावंतने **आ०** ग्रहण करवा **भं०** माटीनो भाजन **म०** मात्रनो भाजन **णि०** मूको एहवा **स०** समितिवंतने **उ०** वडी नीति **पा०** लघु नीति **खे०** बलखो कफ **सिं०** नाकनो श्लेष्म **ज०** सरीरनो मल **पा०** परिठववानी **स०** समितिवंतने **म०** मननी **स०** समितिवंतने **व०** वचननी समितिवंतने **का०** कायानी समितिवंतने **म०** मनगुप्तिवंतने **व०** वचनगुप्तिवंतने **का०** कायगुप्तिवंतने **गु०** गोपव्या छे ५ इंद्रीना विकार जेणे **गु०** नवविध ब्रह्मचर्यनी गुप्तिना धरणहार **आ०** मोक्षना अर्थी ते आत्मार्थी **आ०** आत्माने ३६३ पाखंडी तेहनो वर्जवो ते आत्महितने **आ०** सम्यक्त्वसहित पराक्रमना जोग जेहने **आ०** आत्माने अर्थे **प०** सम्यक्त्वसहित पराक्रम फोरवे तेहने **प०** पक्षिने विषे **पो०** उपवास करे. धर्म पोषे ते पोषध कहिये **सु०** भली **स०** समाधि **प०** प्राप्तने **झि०** धर्मशुक्ल ध्यानना ध्यावणहारने **इ०** ए आगल कहे छे ते **द०** दश **चि०** मननी समाधिना **ठा०** थानक **अ०** अतीतकाले **पु०** पूर्वे जीवने ऊपना नथी एतले पाम्या नथी. **तं०** ते जिम छे, तिम कहे छे –

[बा.३५] [१] **ध०** धर्मनी चिंता जीव-अजीवने सभावनी चिंता 'किं ए नित्य-अनित्य तथा रूपी-अरूपी तथा पाखंडी भूंडा पूर्वापरविरोधीने क्रियावादिक जिनधर्म भलो छे' एम जाणीने धर्मचिंता करे **से०** ते जीवने पूर्वे ऊपनी नही एहवी धर्मचिंता ते **स०** ऊपजे तिवारे **स०** सर्व **ध०** धर्म **जा०** जांणे १.

[२] **जा०** सुमन छे जेहने ते संज्ञा ज्ञान तथा जातिस्मर्णज्ञान **से०** ते साधूने **अ०** पूर्वे ऊपनो नथी ते **स०** ऊपनो **अ०** आपणी जातिने तो इम '**पो०** पाछले भवे कुंण हतो' एम **सु०** संभारे ते जातिस्मर्ण २.

[३] **सु०** सुप्ननो देखवो ते स्वप्न दर्शन तेहवो याथातथ्य **से०** ते साधूने पूर्वे दीठो नथी, ते स्वप्न देखी ऊपजे. **अ०** यथातथ्य सत्य फलदायक **सु०** स्वप्नप्रते **पा०** देखे ३.

[४] **दे०** देवतानो **से०** जे साधूने **अ०** पूर्वे दीठो नही **स०** ते देखे उपजे. **दि०** दिव्य देवतानी ऋद्धि **दि०** दिव्य देवतानी द्युति **दि०** दिव्य देवतानो भाव **पा०** देखे ४.

[५] **ओ०** अवधि **णा०** ज्ञान **वा०** अथवा **से०** ते साधूने, अवधि ते रूपी द्रव्य देखवानी जे मर्यादा तेह विषय जे ज्ञान ते अवधिज्ञान कहिये, ते पूर्वे ऊपनो नथी ते **स०** ऊपजे. **ओ०** अवधिज्ञाने करी **लो०** लोकने **जा०** जांणे ५.

[६] **ओ०** अवधिदर्शन ते सामान्यपणे देखे ते अवधिदर्शन **वा०** अथवा **से०** ते साधूने **अ०** पूर्वे ऊपनो नथी ते **स०** ऊपजे. **ओ०** अवधिज्ञान-दर्शने करी **लो०** लोकने **पा०** देखे ६.

[७] **म०** मनपर्यवज्ञान **वा०** अथवा **से०** ते साधुने **अ०** पूर्वे ऊपनो नथी ते **स०** ऊपजे. **अं०** मांहि **म०** मनुष्यक्षेत्रने विषे **अ०** अढाइद्वीप धातकीखंड १ पुष्करार्द्ध २ एवं लवणसमुद्र १ कालोदधि २ एवं २ द्वीप-समुद्रने विषे **स०** संज्ञी ते मनसहित एहवा पंचेंद्री जीवने **प०** छ प्रज्या (पर्याप्ति) करी सहित **म०** तेहना मनोगतभावने **जा०** जांणे ७.

[८] **के०** केवल **णा०** ज्ञान **वा०** अथवा **से०** तेहने **अ०** पूर्वे ऊपनो नथी ते **स०** ऊपजे. **के०** संपूर्ण **लो०** संख्याता लोकने अलोकने **जा०** जांणे ८.

[९] **के०** केवल **दं०** दर्शन **वा०** अथवा **से०** ते साधूने **अ०** ऊपनो नथी पूर्वे ते **स०** ऊपजे. **के०** केवलज्ञाननी परे **लो०** संपूर्ण लोक-अलोकने **पा०** देखे ९.

[१०] **के०** केवल **म०** मर्ण **वा०** अथवा **से०** ते साधूने **अ०** पूर्वे नथी ऊपनो ते **स०** ऊपजे **स०** सर्व दुःखने **प्प०** क्षयने अर्थे एतले ८ कर्म-जन्म-दुःख टालवा निमित्ते १०.

[बा.३६] **ओ०** राग-द्वेष रहित **चि०** चित्त समूहने सम्यग् प्रकारे ग्रहीने **प्प०** प्रकर्षे ध्यान ते प्रधान एतले धर्मध्यान कर्वानी संज्ञा **स०** उपजे **ध०** धर्मने विषे क्रीडा कर्वाने **ठि०** रह्यां **अ०** जिनवचनने विषे शंकारहित ते **णि०** निर्वाण मोक्ष प्रते **अ०** जाइ १.

**ण०** नही **इ०** ए **चि०** मन-जातिस्मरणादिकने **स०** ग्रहीने **भु०** वली **लो०** लोकने विषे **जा०** उपजे **अ०** पोतानो **उ०** उत्तम **ठा०** स्थानक जे 'हूं परभवे एहवो हुकमने स्थाने हूंतो' **स०** संज्ञा **णा०** ज्ञाने करी **जा०** जांणे जातिस्मरणे करी २.

**अ०** यथातथ्य सत्यफलदायक एहवो **तु०** पुन **सु०** स्वप्न **खि०** शीघ्र **पा०** देखे **सं०** साधू **स०** सर्व ते निर्विषय एहवो **ओ०** ओघ-संसार समुद्र तरे, **दु०** दुःख **दो०** बिंहू शारीरी-मानसिकादिक तेहथी **वि०** मूकाये ३.

**पं०** अंत-प्रांत आहारना सेवणहार साधुने **वि०** स्त्री-पसु-पंडग रहित तथा जीवरहित **स०** स्थानक-पाटलाना सेवणहारने, वली केहवो छे साधू ? **अ०** अल्पाहारी **दं०** इंद्रियना दमणहारने **दे०** देवतानो दर्शन होइ **ता०** छकायना रखपालने ४.

**स०** सर्व **का०** पंचेंद्रीना विषयथी **वि०** निवर्त्याने **ख०** खमे **भ०** देवतादिकना उपसर्ग **भ०** रुद्र दारुण **त०** तिवारे पछे **से०** तेहने **ओ०** अवधिज्ञान व्हे **सं०** संयतीने-संयमवंतने **त०** तपस्वीने-तपयुक्तने ५.

**त०** तपस्या करी **अ०** टाली छे अप्रसस्त त्रिण **ले०** लेश्या जेणे तेहने **द०** दर्शन **प०** अति ही निर्मल, **उ०** ऊद्ध्र्वलोक **अ०** अधोलोक **ति०** त्रिछालोकने देखे **स०** सर्वलोक जीवादिकने सम्यग् प्रकारे सर्वदिशि **प०** देखे ६.

**सु०** भली समाधि, चित्तने विषे भली **ले०** लेश्या छे जेहने **अ०** नथी वितर्क क्रिया-फलनो संदेह **भि०** साधूने **स०** सर्व ते बाह्याभ्यंतररूप परिग्रहथी **वि०** मूकाणाने **आ०** आत्मा-जीव **जा०** जांणे मनपर्यवज्ञाने करी ७.

**ज०** जिवारे **से०** तेहनो **णा०** ज्ञानावरणी कर्म **स०** सर्वप्रकारे **ख०** क्षय गयो हुवे **त०** तिवारे **लो०** लोकने वली **अ०** अलोक **जि०** वीतराग केवली **जा०** जांणे ८.

**ज०** जिवारे **से०** तेहनो **द०** ज्ञानावरणी कर्म **स०** सर्व **ख०** क्षय **ग०** गयो व्हे **त०** तिवारे **लो०** लोक-अलोकप्रते **च०** वली **जि०** वीतराग **पा०** देखे **के०** केवली ९.

**प०** साधूना आचाररूप तथा इहलोक-परलोकने विषे वांछारहित ते प्रतिमा **वि०** विसुद्ध **मो०** मोहनी कर्म **ख०** खय गयो **अ०** सर्व **लो०** लोक-अलोक **च०** पुन **पा०** देखे **सु०** अति ही **स०** समाधिवंत केवली १०.

**ज०** यथा दृष्टांते **म०** मस्तकनी **सु०** सूइ ताडनी **ह०** हणे थके **ह०** हणाइ ते **त०** ताडवृक्ष **ए०** एणी परे ताडने दृष्टांते **क०** कर्मांने **ह०** हणे छे **मो०** मोहनी कर्म **ख०** क्षय गये थके १२.

**सु०** कटकनो नायक **णि०** हण्ये थके **ज०** जिम **से०** शेष कटक **प०** विनास पामे, **ए०** एम **क०** कर्मबीजा सर्व **प०** विनास पामे **मो०** मोहनी कर्म **ख०** क्षय गये थके १२.

**धू०** धूम करी **ही०** रहित **ज०** जिम **अ०** अग्नि **खी०** क्षय पामे **से०** ते **नि०** इंधण रहित **ए०** एम **क०** कर्म शेष **खी०** क्षय पामे छे, **मो०** मोहनीय कर्म **ख०** क्षय गये छते १३.

**सु०** सूकांणो **मू०** मूल **ज०** जिम **रु०** रूख ते वृक्ष **सिं०** जले करी सींची जे तो पिण **ण रो०** वृद्धि न पामे, **ए०** एणीपरे **क०** कर्म वृद्धि **ण रो०** न पामे **मो०** मोहनीय कर्म **ख०** क्षय गये छते १४.

**ज०** जिम **द०** दग्ध ते बल्या बीजना **ण०** न उपजे **दु(पु)०** वली **अं०** अंकुरा, **क०** कर्मरूप बीज **सु०** अति ही **द०** बल्ये थके **ण०** नही **जा०** जन्मे **भ०** गर्भजन्मरूप **अं०** अंकुरा १५.

**चि०** छांडीने **ओ०** उदारिक **बों०** सरीरप्रते **णा०** नामकर्म **गो०** गोत्रकर्म **के०** केवली **आ०** आयुकर्म **वे०** वेदनीकर्म **छि०** टालीने **भ०** होवे **णी०** रजरहित १६.

**ए०** इम **अ०** सम्यग् प्रकारे जांणीने ज्ञाने करी **चि०** राग-द्वेषरहित चित्त समाधिना स्थानक **मा०** ग्रहीने, पछे स्यूं करे ? ते कहे छे – **आ०** हे आउखावंत चिरंजीविन् शिष्य ! सांभलो **से०** भावश्रेणिनी सुद्धि-निर्मलपणो **मु०** पामीने **आ०** आत्मानो सोधि-कर्मरहितपणो निर्मलाताइ **मु०** पामे १७. **त्ति०** श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे. **पं०** पांचमो उद्देसो संपूर्ण हूओ ५.

## [षष्ठदशा उपासकप्रतिमाध्ययनम्]

पूर्वाध्ययने साधूमार्ग समाधि कह्यो. ते सांभली कोइक जीव गृहीधर्मपणो अंगीकार करे. तेणे संबंधे आगली प्रज्ञा ११ गृहधर्मनी कहे छे.

[बा.३७] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् **भ०** भगवंते **ए०** एम **म०** कह्यो – **इ०** ए **ख०** निश्चे **थे०** थविर **भ०** भगवंते जिनशासनने विषे **ए०** इग्यारे **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिज्ञा **प०** कही.

[बा.३८] **क०** कवण **ख०** निश्चे **ता०** ते ए **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ए०** इग्यारे **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिज्ञा **प०** कही ?

[बा.३९] **इ०** ए आगल कहस्युं ते **ख०** निश्चे **ता०** ते ए **थे०** स्थविर **भ०** भगवंते **ए०** इग्यारे **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिज्ञा **प०** कही. **तं०** ते कहे छे – **अ०** इहां प्रथम मिथ्यात्व देखाडे छे, जे भणी मिथ्यात्वनो वेरमण ते सम्यक्त्व अथवा जीवने मिथ्यात्व अनादिकालनो छे ते जाणीने छांडे. ते भणी **आ०** जीवादिकनास्तिकवादी **वि०** अपि **भ०** व्हे, 'नास्ति' इम माने ते अक्रियावादी नियमा कृष्णपक्षीनो लक्षण ए –

*जेसिमवड्ढपुग्गलपरियट्टो सेससंसारो ।*
*ते सुक्कपक्खिया खलु इयरे पुण कण्हपक्खिया ॥ [श्रा.प्र.७२]*

इति वचनात् क्रियावादी नियमा शुक्लपक्षी भव्य होय, सम्यग्दृष्टी अथवा मिथ्यात्वी होय. ते माटे प्रथम अक्रियावादी कहे छे- **णा०** नही हेयोपादेयरूप प्रज्ञा **णा०** नही हितप्रज्ञा **णा०** नही हितदृष्टी एतले मिथ्यात्वदृष्टी **णो०** नही **स०** सम्यग्वादी-सर्व पदार्थनो सत्य सद्दहवो **णो०** न हूइ नित्यवादी-मोक्षनो अर्थ एहवो. **ण०** परलोक नथी स्वर्ग-नरकादिक नथी एम बोलणहार. **ण०** नथी **इ०** इहलोक, ते प्रत्यक्ष दीसे छे. **ण०** नथी परलोकमे सुख-दुःखभोगवणहार. **ण०** नथी **मा०** माता. **ण०** नथी **पि०** पिता. ए सर्व भर्म जंजालरूप. **ण०** नथी **अ०** अरिहंत-तीर्थंकर. **ण०** नथी **च०** चक्रवर्ती-षट्खंडनो भोक्ता. **ण०** नथी **ब०** बलदेव. **ण०** नथी **वा०** वासुदेव-त्रिणखंडनो स्वामी. **ण०** नथी **णि०** नरकावासा. **ण०** नथी सुकृत-पुन्य तथा दुकृत-पापनो फल **वि०** विशेष. **णो०** नथी **सु०** भला **क०** कर्म कीधा **सु०** भला **फ०** फल **भ०** व्हे. **णो०** नही **दु०** हिंसादिक कर्म कीधाना **दु०** भूंडा फल दायक **भ०** व्हे. **अ०** फल नथी **क०** कल्याणधर्मने विषे **पा०** पापने विषे फल नथी. **णो०** नथी **प०** उपजे परभवे **जी०** जीव. **ण०** नथी **नि०** नर्क चशब्दथी तिर्यंच-मनुष्य-देवता पिण. **ण०** नथी सिद्धि-मोक्ष.

[बा.४०] **से०** ते **ए०** ए पूर्वोक्त वादनो कर्णहार, **ए०** एहवी खोटी प्रज्ञानो धणी, **ए०** एहवी दृष्टिनो धणी, **ए०** एम **छं०** अभिप्रायनो स्थापक छे **रा०** राग ते स्नेह तिहां अभिनिविष्ट चित्त छे जेहनो एहवो **भ०** व्हे.

[बा.४१] **से०** ते **भ०** हुवे **म०** मोटी इच्छानो धणी, **म०** मोटा आरंभनो धणी, **म०** मोटो परिग्रह धन-धान्यादिरूप छे जेहने, **अ०** अधर्मा, **अ०** अधर्मने केडे जाइ ते, **अ०** अधर्मनो सेवणहार, **अ०** अधर्म वल्लभ छे जेहने, **अ०** अधर्म **खा०** बोले छे, **अ०** अधर्म ऊपरे राग छे, **अ०** अधर्म करी जोवे देखे, **अ०** अधर्म करी जीवे, **अ०** अधर्ममांहे देदीप्यमान छे, **अ०** अधर्मनो **सी०** आचार सदाइ वर्ते छे जेहने, **अ०** अधर्म करी ही ज **वि०** आजीविका कर्तो **वि०** विचरे कालक्षेपना करे.

[बा.४२] **ह०** दंडादिके हणो. **छिं०** खडगादिके करी छेदो. **भिं०** सूलादिके भेदो. **क०** कापो **वि०** चामडी उतारो, आप करे, कर्ताने अनुमोदे. **लो०** हाथ लोहीये खरड्यां रहे, जीव मारे पापी **चं०** महाक्रोधी **रु०** सूगरहित **खु०** क्षुद्र **सा०** अणविमासी पापना कामनो कर्णहार **उ०** सूलीरोपणादिकने विषे कर्वो **वं०** परने वंचे **मा०** वंचवानी बुद्धि **नि०** घणी माया **कू०** कूडकपट करे, मूंगादिक ग्रहवाने कूडा पापा तथा कूडा नांणा मापा-तोलादिके परने वंचवा वेस पालटे **सा०** अति ही संयोग एहनो **ब०** घणो ते सहित, **दु०** दुष्ट आचार, **दु०** दुष्ट **प०** घणा कालनो परिचित होइ तो कुप्रावचन कहे, **दु०** दुष्टाचार करणी, **दु०** दुष्ट करणीनो **णु०** जांण, **दु०** भूंडा व्रतनो धर्णहार,

**दु०** परने दुखे आनंद पामे.

**नि०** आचार रहित **नि०** सीलव्रत रहित **णि०** क्षमागुण रहित **णि०** कुलमर्यादा रहित **णि०** पचखाण रहित **पो०** पोषध उपवास तेह रहित **अ०** पापकारी माटे असाधू.

[बा.४३] **स०** सर्व लोकने निंदनीक ब्रह्मघातादिक **पा०** सर्व प्राणीना वधथकी **अ०** निवर्त्या नथी, जीवहिंसाने विषे तत्पर छे, **जा०** जां लगे जीवे त्यां लगे. **जा०** जावत् **स०** सर्व **प०** परिग्रहथी नथी निवर्त्या. **ए०**एम **स०** सर्वथी **को०** क्रोध **स०** सर्वथी **मा०** मान **स०** सर्वथी **मा०** माया-कपट **स०** सर्वथी **लो०** लोभ **स०** सर्वथी **पे०** प्रेम राग **स०** सर्वथी **दो०** द्वेष **स०** सर्वथी **क०** कलेस राडरूप **अ०** अछता दोषनो कहवो **पे०** छता दोष प्रगट करे **प०** पारका अवर्णवाद बोले **अ०** मोहनीने उदे अरति-उद्वेग **र०** रति-खुशालपणो **मा०** माया सहित **मो०** मृषा तेहथी **मि०** मिथ्यात्व दर्शनरूप शल्य तेहथी **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावजीव लगे. **स०** सर्व **ण्हा०** स्नान **व०** अबीरगुलाव **क०** कषायद्रव्यविशेष **दं०** दांतणनो **क०** काष्ठ **ण्हा०** स्नान **म०** अंगमर्दन करावो **वि०** विलेपण करावो **स०** शब्द ते गीत **फ०** स्पर्श ८थी नथी निवर्त्या **र०** रस ५थी **रू०** रूप सुंदरादिकथी **गं०** गंध **म०** माला **आ०** आभर्णथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव लगे. **स०** सर्वथी **स०** गाडी-गाडा-रथ **जा०** जानवदल **झु०** जुग पुर्ष उपाडे **गि०** डोली **थि०** ऊंटपलाण हस्तिपलाण **सी०** शिबिका **सं०** ते पालखी तता शिबिकाविशेष **स०** पल्यंकादिक **जा०** नवा **आ०** चोकी **वा०** वेसरादिक **भो०** भोजन ते ओदनादिक **प०** घरविखरो **वि०** विस्तार जे विधि ते प्रकारथी **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावजीव लगे. **अ०** अणविमास्याना करणहार. **स०** सर्व **आ०** घोडा **ह०** हाथी **गो०** बलद **म०** भेंस **ग०** गायां **ए०** छालि बोकडा **दा०** बांदी **दा०** गुलाम **क०** कार्यना करणहारना **पो०** समूह तथा पाला पुर्ष **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावज्जीव लगे. **स०** सर्व **क०** मोल लेवो **वि०** वेचवो **मा०** मास **द्ध०** अर्द्धमास **रू०** नांणा लेवादेवादिकरूप **सं०** व्यापारथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावज्जीव लगे. **स०** सर्व **हि०** अणघड्यो रूपो तथा घड्यो सोनो अणघड्यो सोना **ध०** नाणो गणिमांदिक **ध०** धान्य २४ प्रकार **म०** चिंतामणि **मो०** मोती **सं०** शंख दक्षिणावर्त **सि०** शिला राज्यपट्टादिक तथा **प्प०** अणओप्यो प्रवाल तेहथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावज्जीव लगे. **स०** सर्व **कू०** कूडा **तु०** तुला **कू०** कूडा **मा०** मापला तेहथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावज्जीव लगे. **स०** सर्व आरंभ कर्षणादिक **स०** समारंभ विशेष तेहथी **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावज्जीव लगे. **स०** सर्व करवो पोते करणादि तेह थकी **क०** करावो पोते अन्य पासे करसणादिक तेहथी पिण **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावजीव लगे. **स०** सर्व **प०** पचवाथी **प०** पचाववाथकी पिण **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव लगे. **स०** सगलोइ **कू०** कूटवो **पि०** पीटवो **त०** अंगुली करी तर्जे **ता०** चपेटादिके ताडे **व०** मारवो **बं०** बांधवो **प०** प्राणीने कलेश दुःख देवाथी पिण **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावज्जीव लगे. **जे०** जे वली **अ०** अनेरा **त०** तथाप्रकारे पाछे कह्या एहवा **सा०** सावद्य सपापकारी **अ०** बोधबीजना नसाडणहार **क०** कर्म समारंभ कीजे **प०** परजीवने परितापनाना कर्णहार **क०** कीजे पिण तेहथी **अ०** निवर्त्या नथी. **जा०** जावज्जीव लगे.

[बा.४४] **से०** ते **ज०** यथा दृष्टांते **णा०** नाम संभावनार्थे **के०** कोइ **पु०** पुर्ष **क०** वाटला चिणा **म०** मसूर **ति०** तिल **मु०** मूंग **मा०** उडद **नि०** बालतूयर **कु०** कुलथ **आ०** चवला **प०** काला चिणा **स०** तुयर **जा०** जावत् **ए०** एम **मा०** आदि देइने धान्यने विषे **अ०** अखंतवंत कृपारहित क्रूरदृष्टी **मि०** फोकट दंड **प०** प्रयुंजे. **ए०** एणे प्रकारे **त०** तथाप्रकारे पूर्वोक्त तथा **पु०** पुर्ष जाति {निंदे} **ति०** तीतर **व०** वटेर **ला०** लांबा **क०** कपोत ते पारेवा पक्षी **क०** कपिंजल पक्षी **मि०** मृग **म०** भेंसा **व०** सूयर **गो०** ग्राह-जलचर जीवविशेष **कु०** काछवा **स०** भुजपरिसर्पादिक ए आदिक प्राणीने विषे **अ०** अत्यंत क्रूर निर्दय **मि०** मिथ्या अपराध विना दंडे जीवादिकने मारे.

[बा.४५] **जा०** जे पिण **से०** ते **बा०** बाहिरला **पु०** पुर्ष **भ०** ह्वे **तं०** ते केहा ? ते कहे छे – **दा०** दास-गुलाम **पे०** चाकर मोकल्या जाइ **भ०** मोल जलादिक आंणनहारो **भा०** करसणादिकने विषे भाग लेवे ते **क०** कामना कर्णहार **भो०** भोगपुर्ष ते सूयर विशेष **ते०** तेहने पण **अ०** अनेरो कोइ एक **अ०** यथालघु नाहनो शब्दादिक [न] सांभल्ये थके **अ०** अपराध पामे छते **स०** पोते ही ज **ग०** मोटो दंड **व०** करे. **तं०** ते कहे छे- **इ०** एहने दंडो धन लेवो, **इ०** एहनो शिर मूंडो, **इ०** एहने अंगुली करी तर्जो, **इ०** एहने **ता०** ताडो, **इ०** एहने अपूछे बंधणे बांधो एहवो करो, **इ०** एहने **नि०** बेडीये बांधो एहवो करो, **इ०** एहने **ह०** खोडामांहि घालो, **इ०** एहने **चा०** भाकसीमांहि घालो, **इ०** एहने **नि०** बेडीने जुगले करी **सं०** संकोचो **मो०** मोडणो **क०** करो, **इ०** एहना **ह०** हाथ **छि०** छेदन करो, **इ०** एहना **पा०** पग **छि०** छेदन करो, **इ०** एहना **क०** कान **छि०** छेदन करो, **इ०** एहनो **ण०** नाक **छि०** छेदन करो, **इ०** एहना **ओ०** होठ **छि०** छेदन करो, **इ०** एहनो **सी०** मस्तक **छि०** छेदन करो, **इ०** एहना **मु०** मुख **छि०** छेदन करो, **इ०** एहनो **वे०** वेद **छि०** छेदन **क०** करो, **इ०** एहना जीवता हीयानो मांस उपाडो कापो इम करो, **ए०** इम **ण०** आंख काढो **दं०** दांत पाडो **व०** मुख **जि०** जीभ **उ०** काटो एम करो, **इ०** एम एहने **उ०** उंचो बांधो कूवा-पर्वत-नदीने ऊपर बांधो, **इ०** इम एहने **घ०** घसवो करो, **इ०** एम एहने आंबानी परे घोलो, **इ०** इम एहने सूलीइ पोवो करो एतले सूलीइ आरोपो, **इ०** इम एहने **सू०** सूलीइ **भि०** भेदवो करो, **इ०** इम एहने **खा०** शस्त्रे करी छेदी लूंण लगावो-लूंण पांणीइ सींचवो करो, **इ०** एहनो सरीर **द०** दर्भे करी काटो छेदो करो, **इ०** एहनो सरीर **सी०** सिंघनी पूंछे बांधवो करो, **इ०** एहने **व०** बलदने पूंछे बांधवो करो, **इ०** एहने **द०** दावानल मध्ये **द०** बालो, **इ०** एहने काटीने नागने मंस खवरावो तथा एहनो मांस काटीने एहने ज खवरावो एम करो, **इ०** एहने **भा०** भातपाणीनो **नि०** निरोध करो, **इ०** एहने जावज्जीव लगे बांधी मूको एम करो, **इ०** एहने **अ०** अनेरे कोइ **अ०** असुभ भूंडे **कु०** कुमरणे करी **मा०** मारो.

[बा.४६] **जा०** जे वली पूर्वे कह्या तेहने **से०** तेहना **अ०** अभ्यंतरनी **प०** पर्षदा **भ०** व्हे. **तं०** ते कहे छे- **मा०** माता **पि०** पिता **भा०** भाइ **भ०** पोतानी बहिन **भ०** भार्या ते पोतानी स्त्री **पु०** पुत्रनी पुत्री **धू०** ते पोतानी पुत्री **सु०** ते पुत्रनी वहु एतले लुगाइ **ते०** तेहने पिण **अ०** कोइ अजांणपणे **अ०** नाहनो वचन प्रमुखनो **अ०** अपराध थये छते **स०** पोते ज **ग०** मोटो **दं०** दंड **व०** करे मारे – **सी०** सीतल पाणीइं करी सीतकाले **का०** सरीर पाणीमांहि बोलो एहवा अकार्यनो कर्णहार **भ०** व्हे, **उ०** उन्हाले अत्यंत उन्हे पांणीइं करी **का०** सरीरने **उ०** सींचणहार **भ०** व्हे, **अ०** अग्निइं करी **का०** शरीरने **उ०** बालणहार **भ०** व्हे, **जो०** जोत्रे करी **वे०** वेत्रे करी **णे०** कंबाये करीने **क०** चाबके करीने **छि०** वृक्षनी छालि करीने **ल०** लताये करी **पा०** पसवाडाने विषे **उ०** एतला प्रहारना दायक **भ०** हूवे, **दं०** लाकडीइं करी **अ०** हाडके करी **मु०** मूठीइं करी **ले०** पाषाणने कटके करी, **क०** कोयले करी तथा ठीकरी करी **का०** शरीरनो **आ०** कूटणहार **भ०** व्हे.

[बा.४७] **त०** एहवा प्रकारनो **पु०** पुर्षजाति कुकर्मी तेह संघाते **सं०** वसतां-रहतां थकां **दु०** ते मातादिक दुर्मन होइ एतले मननी असाता पामे. जिम मिनाने दीठीने मूसानो मन दुर्मन थाइ अने ते मूसो जिवारे मार्जार [?]. **त०** एहवा प्रकारनो **पु०** पुर्ष जाति तेहथी **वि०** अलगा रहतां थकां **सु०** भलो मन व्हे.

[बा.४८] **त०** एहवा प्रकारना **पु०** पुर्षजाति **दं०** दंड लेणहार दंड माटे, दंडपासी स्वल्प अपराधे भारी दंड दे तिवारे राजा तेहने दंडे, तिवारे वेगलो जाइ, तिवारे मन हर्षे, एम ते पिण मातादिक संतोष पामे, जिवारे ते किहांइ देशांतर गये थके लोक कहे जे राजाये दंड्यो अथवा दंडपासी एहवो पिण दंड जेहने पासे छे ते दंडपासी कहिये. **दं०** दंडे करीने गुरुक ते दंडगुरु कहे. **दं०** सदाइ दंड **पु०** आगलि कह्यो थको थोडे वांके, **अ०** अहितकारी **अ०**

इहलोकने विषे, **अ०** अहितकारी **प०** परलोकने विषे, **ते०** ते जेणे तेणे उपाये दुख उपजावे **सो०** शोक उपजावे **ए०** एम **जु०** झुरे **ति०** तपे तथा आंसु नांखे **पि०** पीटे **प०** विशेषे तपे. **ते०** ते घणा जीवने **दु०** दुःखकारी **सो०** शोकनो करणहार **जु०** गृही निंदाकारी **ति०** सुखनो टालणहार **पि०** पीडानो करणहार **प०** पश्चात्तापकारी **व०** मारणहार **बं०** बांधवो **प०** मोटा कलेशादिक परने उपजाववाथी **अ०** नथी निवर्त्या **भ०** व्हे.

[बा.४९] **ए०** एणीपरे ते पुर्ष **इ०** स्त्रीना **का०** कामभोगने विषे **मु०** मूर्छा पाम्या **गि०** महाभोगी तथा लंपट **ग०** भोगने विषे आपणपे गृद्ध थया **अ०** अतिलंपट परमासक्त **जा०** जिहां लगे **वा०** वर्ष **च०** च्यार **पं०** पांच **छ०** छ **द०** दश अथवा **अ०** थोडो काल अथवा **भु०** घणा काल लगे **भुं०** भोगवीने **भो०** भोग भोगववा योग्य **प्प०** उपजावीने **वे०** वेरभाव वेरना स्थानक **सं०** संचे करीने तथा एकठा मेलीने **ब०** घणो **पा०** पापकर्म मेलीने **उ०** प्राहे **स०** ते कर्मने संभ्रांत कहतां प्रेर्या भूंडे कर्मे ते दुष्ट **क०** कर्मे करी **से०** ते **ज०** यथा दृष्टांते, नाम संभावनाइं, **अ०** लोहनो गोलो **वा०** अथवा **से०** पाषाणनो गोलो **वा०** अथवा **उ०** पाणीने ऊपरे **प०** प्रक्षेप्यो मूक्यो थको **उ०** पाणीने तले **अ०** जाइने **अ०** हेठे **ध०** धरतीना तलाने **प०** रहवो **भ०** होइ.

[बा.५०] **ए०** एणीपरे **त०** एहवा प्रकारना दुष्ट निर्दय नास्तिकवादी **पु०** पुर्षजाति **व०** वज्रनी परे पाप **ब०** घणा आठ कर्म घणी **धु०** कर्मरूप धूल **ब०** घणो **प०** कर्मकादो **ब०** घणो **वे०** वेर **ब०** घणा जीवसंघाते **दं०** माया परने वंचवो घणो **नि०** वेष-भाषा फेरे एतले द्रोहपणो करे **अ०** अपयश निंदा रूप **ब०** घणो **अ०** अप्रतीतपणो एतले अविस्वासप्रचुर **उ०** ते प्राहि **त०** त्रस **पा०** जीवनो **घा०** मारण **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **ध०** धरतीना तलाने विषे **म०** जइने **अ०** हेठे **ण०** नरकनी तलाने विषे **प०** रहवो **भ०** होवे.

[बा.५१] **ते०** ते **ण०** नरकावासा **अं०** मांहे **व०** वाटला **बा०** बाहिर चोखूंणा **अ०** हेठे क्षुरप्र-पाछणाने आकारे **सं०** रह्या छे. **णि०** सदाइ अंधकार **त०** महा अंधकार छे एतले उद्योतनो अभाव छे. नरकने विषे तीर्थंकरना जन्म १ दीक्षा २ अने केवलज्ञानादिके बि घडी लगे उद्योत होइ ते प्रथम नरकनो सूर्य सरीखो, बीजी नरके सूर्य वादलामध्ये, तीजी नरके चंद्रमा सरीखो, चोथी नरके चंद्र वादलामध्ये, पांचमी नरके ग्रह सरीखो, छट्ठी नरके नक्षत्र सरीखो, सातमी नरके तारा सरीखो. अन्यथा सर्वकाले अंधकार. **व०** रहित **ग्ग०** ग्रह बुधादिक **चं०** चंद्रमा **सू०** सूर्य **ण०** नक्षत्र **जो०** ज्योतिषनी **प०** प्रभा रहित. **मे०** मेद **व०** चरबी **मं०** मांस **रू०** लोही **पू०** राधनो समूह एतलानो **चि०** कादम **ले०** एक वार लिपाइ ते लींपण कहिये, वार-वार लिपाये ते आलिंपण कहिये **त०** भूमीना तला **अ०** अशुचि विष्टा कहिये. **प०** उत्कृष्ट **दु०** भूंडो **गं०** गंध. **का०** कारसनी अग्नि तथा मसाणनी अग्नि धम्या लोहना जे अग्निना जवाला जे वर्ण ते सरीखो आकार **क०** खरखर स्पर्श छे. **दु०** दुःखे सही सके **अ०** भूंडा **ण०** नरक. **अ०** असुभ कर्मकारी नरक जाइ. **अ०** भूंडी **ण०** नरकनी वेदना.

**णो०** नही **ण०** नरकने विषे **ण०** नारकी थोडी **णि०** निद्रा न आवे निमेषमात्र पिण, **प०** घणी निद्रा ते प्रचला न करे **स०** चित्तमे सुख न माने **र०** रति **धि०** चित्तमे विशिष्ट धीर्य नथी **म०** भली बुद्धि **उ०** पामे नही.

[बा.५२] **ते०** नारकी **त०** तिहां **उ०** उज्जल **वि०** विस्तीर्ण **प्प०** गाढी आकरी **क०** कठोर **क०** कडुइ **चं०** रोद्र **दु०** महादुख **दु०** विषम कष्ट ठाम **ति०** घणी तीखी **दु०** दुखे सहतां दोहिली एहवी **ण०** नरकने विषे **णे०** नारकी **ण०** नरकनी **वे०** वेदना **प०** भोगवता थका **वि०** विचरे.

[बा.५३] **से०** ते **ज०** यथा दृष्टांते **णा०** नाम संभावनाइं **रु०** वृक्ष **सि०** कदाचित् **प०** पर्वतने अग्रे **जा०** ऊपनो **मू०** मूलमांहेथी **छि०** छेद्यो **अ०** अग्रे भारी ते वृक्ष जिहां **ज०** जो **नि०** खाड **ज०** जो दिशि दुर्गत गर्तादिक होइ

**ज०** जिहां **वि०** विषम सम नही **त०** तिहां **प०** पडे, **ए०** एणे दृष्टांते **त०** एहवा प्रकारनी दुष्ट कर्मकारी **पु०** पुर्षजाति **ग०** गर्भथी मरी वली गर्भना दुख पामे **ज०** जन्मना दुःख वली-वली पामे **मा०** मर्णथकी वली मर्ण पामे **दु०** दुःखथकी वार वार दुख पामे **द०** दक्षिण दिशिनो जाणहार ते **णे०** नारकी **क०** कृष्णपक्षी ते अर्द्धपुद्गल उपरांत संसारी पणे **आ०** आगले काले दुर्लभबोधिपणो पामे एतले सम्यक्त्व पामी न सके एहवो **भ०** व्हे. **से०** ते **अ०** अक्रियावादी नास्तिकमति मिथ्यादृष्टि **वि०** अपि **भ०** व्हे.

[बा.५४] **से०** ते अथ हवे **किं०** कवण **कि०** क्रियावादी आस्तिकवादी सम्यग्दृष्टी **वि०** अपि **भ०** व्हे. **तं०** ते कहे – **अ०** आस्तिकवादी सर्व पदार्थ छे. **अ०** आस्तिक **दि०** दृष्टि **स०** सर्व सत्य छे एम सम्क्त्ववादी कहणहार. **णि०** नित्य-मोक्ष छे एम कहणहार. **सं०** छे **प०** परलोकने विषे फल करणीनो. **अ०** छे **इ०** इहलोक {कर्मनो क्षय} भव. **अ०** छे **प०** परलोक परभव. **अ०** छे **मा०** माता. **अ०** छे **पि०** पिता बाप. **अ०** छे **अ०** अरिहंत भगवंत. **अ०** छे **च०** चक्रवर्ती. **अ०** छे **ब०** बलदेव. **अ०** छे **वा०** वासुदेव-तीन खंड भोक्ता. **अ०** छे **सु०** भली करणीना फल **दु०** पापना फल ए बेहूं करणीना **फ०** फलविशेष छे सुख-दुःखरूप. **सु०** भला **क०** कर्म ते तप-संयमादि तेहना **सु०** भला फल होइ एतले सुभ कर्मना सुभफल दीसे छे **भ०** हूवे. **दु०** भूंडा आचर्याना **दु०** भूंडा फल दुखरूप **भ०** व्हे. **स०** फलसहित **क०** कल्याण सुखकारी **पा०** पाप दुःखकारी भूंडा. **प०** उपजे छे जीव. **अ०** छे **णे०** गइ छे साता जेहथी तेहने नारकी कहिए अने तेहने विषे उपजे ते नारकी कहिए. **दे०** प्रधान क्रीडा पामे जेह थकी ते देवता कहिए. **सि०** बांध्या अष्ट प्रकारे कर्म शुक्लध्यान तप जाज्वल्यमान अग्नि करी धम्या-खपाव्या जेहने सिद्ध कहिए अने तेहनो जिहां प्रतिष्ठान रहवो लोकभागने विषे तेहने सिद्ध कहिये. **अ०** छे **दे०** देवता. **अ०** छे **सि०** मोक्ष.

[बा.५५] **से०** ते एहवा बोलणहार **ए०** एहवी प्रतिज्ञा छे **ए०** एहवी दृष्टि तत्त्वनी रुचिवंत **ए०** एहवो **छं०** अभिप्राय **रा०** स्नेहने विषे **णि०** थाप्यो छे चित्त एहवो **वि०** अपि **भ०** व्हे.

[बा.५६] **से०** ते **भ०** व्हे **म०** मोटी तृष्णावंत **जा०** जिहां लगे **उ०** उत्तरगामी **णे०** नरकने विषे **सु०** शुक्लपक्षी पिण एतले अर्द्धपुद्गलनी **आ०** आगमिक कालने विषे **सु०** सोहिलो जिनधर्मप्राप्तिवंत **भ०** व्हे. **से०** ते ए क्रियावादी.

[बा.५७] हिवे प्रतिज्ञा अधिकारे प्रथम मिथ्यात्व स्वरूप कही पछे सम्यग्दृष्टी जाणवी हिवे प्रतिज्ञा कहे छे – **स०** सर्व धर्म कर्वानी रुची जाण. आज्ञा ग्रहणने विषे रुचिवंत, सर्व भाव सत्य छे **वि०** अपि **भ०** व्हे.

**त०** तेहने **ब०** घणो **सी०** आचार ५, क्रोधादिकनो त्याग, ते थूल प्राणातिपात वेरमणादिक **गु०** तीन गुणव्रत **प०** पचखाण सहित वसवो **पो०** पोषध उपवास एतला बोलने **नो०** नही **स०** सम्यक् प्रकारे थाप्या नही **पु०** पूर्वे **भ०** व्हे. **ए०** एम एणीपरे **दं०** सम्यक्त्व सहित व्हे **प०** पहिली **उ०** श्रावकनी प्रतिज्ञा-अभिग्रहविसेष निश्चे सम्यक्त्व पालवारूप ते प्रथम संवर सर्वव्रतनो मूल सम्यक्त्व छे १.

[बा.५८] **अ०** हिवे **अ०** अनेरी **दो०** बीजी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा- **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत सर्वपदार्थनी सद्दहणा **वि०** अपि **भ०** व्हे. **त०** तेहने घणो **सी०** अणुव्रत ५ गुणव्रत ३ **वे०** पापथकी निवर्तवो **प०** पचखाण नमुक्कारस्यादि **पो०** पोषध **उ०** उपवास **स०** सम्यक् प्रकारे **प०** स्थाप्यो **भ०** व्हे. **से०** तेहने **सा०** सामायिक **दे०** देशावकाशिक व्रत **णो०** नही **स०** सम्यग् प्रकारे रूडो पालणहार **भ०** व्हे. **दो०** बीजी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा २.

[बा.५९] **अ०** हिवे **अ०** अपर अनेरी **त०** तीजी **उ०** श्रावकनी प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **भ०** व्हे. **त०** तेहने **ब०** घणो **सी०** अणुव्रत ५ **गु०** गुणव्रत ३ **वे०** क्रोधादिकनो त्याग ते वेरमण **प०** पचखाण नमुक्कारस्यादि

**पो०** पोषध **उ०** उपवास **स०** सम्यग् प्रकारे **प०** थाप्यो **भ०** व्हे. **से०** तेहने **सा०** सामायिक **दे०** देशावकाशिक व्रत **स०** सम्यग् प्रकारे रूडीपरे पालणहार **भ०** व्हे. **से०** तेहने **चा०** चउदस आठम **उ०** अमावस **पु०** पुनिम एह पूर्णमासी पूर्ण जिहां मास थायुं ते पूर्णमासी अथवा पूर्ण छे चंद्रमा जेहने विषे ते पूर्णमासी **प०** दिनसहित रात्रि ते प्रतिपूर्ण **पो०** पोषध अने **उ०** उपवासने **णो०** नही **स०** सम्यग् प्रकारे रूडीपरे पालणहार **भ०** व्हे. **त०** त्रीजी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ३.

[बा.६०] **अ०** हिवे अनेरी **च०** चोथी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **भ०** व्हे. **त०** तेहने **ब०** घणो **सी०** अणुव्रत ५ **गु०** गुणव्रत ३ **वे०** क्रोधादिकनो त्याग ते वेरमण **प०** पचखाण नमुक्कारस्यादि **पो०** पोषध **उ०** उपवास **स०** सम्यग् प्रकारे **प०** स्थाप्या **भ०** व्हे. **से०** तेहने **सा०** सामायिक **दे०** देशावकासिक व्रत **स०** सम्यग् प्रकारे रूडीपरे पालणहार **भ०** व्हे. **से०** तेहने **चा०** चउदश पुनम आठम **जा०** जावत् **स०** सम्यग् प्रकारे **अ०** रूडीपरे पालणहार **भ०** व्हे, **से०** तेहने **ए०** एकरात्रनी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा **णो०** नही **स०** सम्यग् प्रकारे रूडीपरे पालणहार **भ०** हूवे. **च०** चोथी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ४.

[बा.६१] **अ०** हिवे **अ०** अपर अनेरी **पं०** पांचमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वपदार्थनी सद्भावनी रुचिवंत **वि०** अपि **भ०** व्हे. **त०** तेहने **ब०** घणो **सी०** अणुव्रत ५ गुणव्रत ३ **जा०** जिहां लगे **स०** सम्यग् प्रकारे रूडीपरे पालणहार **भ०** व्हे. **से०** तेहने **सा०** सामायिक व्रत **त०** तिम ज **ए०** तेहने **चा०** चउदशादि व्रत **त०** तिम ज **ए०** तेहने उपवासने दिने रात्रिने विषे काउसग एक रात्रनी **प०** प्रतिमा **स०** सम्यग् प्रकारे भलीपरे पालणहार **भ०** हूवे. **से०** तेहने **अ०** स्नान रहित **वि०** अप्रकास स्थानके तथा रात्रे न जीमे ते वियडभोजी कहिये, दिने जीमे पिण रात्रे न जीमे, अप्रकाश माटे घणा अवगुण कीटक प्रमुख जीवविराधनापणो उपजे ते माटे रात्रे न जीमे ते विकटभोजी, यतः-

*रयणभोयणंमि जे दोसा अंधयारंमि ।*
*जे चेव अंधयारे ते दोसा संकमुद्दंमि ॥ इति वचनात्.*

**म०** काछन वाले **दि०** दिवसने विषे ब्रह्मचर्य सील पाले **र०** रात्रिनो प्रमाण करे प्रतिज्ञा लगे. **से०** तेहने **ए०** एहवे आचारे **वि०** ते सेववे करीने **वि०** ते पालता **वि०** विचरे. **ज०** जघन्यतो ए प्रतिज्ञा वहे तो **ए०** एक ज दिने करे **दु०** दोइ दिने करे **ति०** त्रिण दिन करे अथवा **उ०** उत्कृष्टो **पं०** पाँच मास लगे **वि०** विचरे पाले. **पं०** पांचमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ५.

[बा.६२] **अ०** हिवे **अ०** अनेरी **छ०** छट्ठी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **भ०** हूवे. **जा०** जिहां लगे **से०** तेहने **ए०** एक रात्रनी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा **स०** सम्यग् प्रकारे भलीपरे **अ०** पालणहार **भ०** हूवे. **से०** तेहने **अ०** स्नान रहित. अप्रकास स्थानके तथा भोजनथकी निवर्तवो, रात्रे न जीमे. **म०** काछल वाले. **दि०** दिने **वा०** अथवा **रा०** रात्रिने विषे **बं०** ब्रह्मचारी सील पाले. **स०** सचित्त आहार **से०** तेहने अजांणपणे जिम **से०** ते **प०** छांड्यो नथी व्हे भोगवणहार **भ०** व्हे. **से०** तेहने **ए०** एहवे आचारे **वि०** विचरतां थकां **ज०** जघन्यतो **ए०** एकदिन **वा०** अथवा **दु०** बि दिन **ति०** तीन दिन **उ०** उत्कृष्टो **छ०** छमास लगे एम **वि०** विचरे पाले. **छ०** छट्ठी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ६.

[बा.६३] **अ०** हिवे **अ०** अनेरी **स०** सातमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी सद्भावना रुचिवंत **भ०** हूवे. **जा०** जिहां लगे **दि०** दिने अथवा **रा०** रात्रे **बं०** ब्रह्मचारी **स०** सचित्त आहारनो **से०** ते **प०** छांडणहारो **भ०**

हुवे. **आ०** आरंभने **से०** ते **अ०** छांड्यो नथी **भ०** हुवे. **से०** तेहने **ए०** एहवे आचारे करी **वि०** विचर्तां थकां **ज०** जघन्य **ए०** एक दिन अथवा **दु०** दोय दिन अथवा **ति०** तीन दिन अथवा उत्कृष्टो **स०** सातमास लगे **वि०** विचरे पाले. **स०** सातमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ७.

[बा.६४] **अ०** अथ हवे **अ०** अपर अनेरी **अ०** आठमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **वि०** अपि **भ०** हूवे. **जा०** जिहां लगे **दि०** दिन अथवा **रा०** रात्रने विषे **बं०** ब्रह्मचारी **स०** सचित्त आहार तेहनो **प०** तजणहार हूइ. **आ०** आरंभ **से०** तेहनो **प०** त्यागी **भ०** हूवे. **पे०** आरंभ आदेस देवो **से०** ते **अ०** तज्यो नथी **भ०** व्हे. **से०** तेहने **ए०** एणेरूपे **वि०** आचारे करी **वि०** विचरतां थकां **जा०** जिहां लगे **ए०** एक दिन अथवा **दु०** बिदिन अथवा **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टो **अ०** आठ मास लगे **वि०** विचरे पाले. **अ०** आठमी **उ०** श्रावकनी **प०** पडिमा ८.

[बा.६५] **अ०** अथ हवे **अ०** अनेरी **ण०** नवमी **उ०** श्रावकनी **प०** पडिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **भ०** हूवे. **जा०** जिहां लगे **दि०** दिन **रा०** रात्रिने विषे **बं०** ब्रह्मचारी **स०** सचित्त **आ०** आहार **से०** तेहनो **प०** त्यागी **भ०** हूवे. **आ०** आरंभ **से०** तेहनो **प०** त्यागी **भ०** व्हे. **पे०** आरंभनो आदेश देवो ते पिण तज्यो **भ०** व्हे. **उ०** तेहने निमित्ते कर्यो हूइ ते उद्देशिक आहार **अ०** छांड्यो नथी **भ०** व्हे. **से०** ते **ए०** एतानरूप **वि०** आचारे करी **वि०** विचरतां थकां **ज०** जघन्यतो **ए०** एक दिन अथवा **दु०** बिदिन अथवा **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टतो **ण०** नव मास लगे **वि०** विचरे. **ण०** नवमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ९.

[बा.६६] **अ०** हिवे **अ०** अनेरी **द०** दशमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा – **स०** सर्वधर्मनी रुचिवंत **भ०** हुवे. **जा०** जिहां लगे **उ०** उद्देशिक आहारनो **से०** ते **प०** त्यागी **भ०** हुवे. **से०** ते **खू०** क्षुरमुंड **वा०** अथवा **छि०** शिखाधारक माथे थोडी चोटी राखे. **ते०** तेहने **अ०** एक वार पूछे अथवा **स०** वारंवार पूछे तिवारे **क०** कल्पे **दु०** बि प्रकारनी **भा०** भाषा **भा०** बोलवी **ज०** जिम **जा०** जांणतो व्हे तो कहे **जा०** जांणुं छुं, **अ०** नथी जाणतो हुवे तो कहे **णो०** नहीं जांणुं छुं. **से०** ते **ए०** इम एणेरूपे **वि०** आचारे करी **वि०** विचरतां थकां **ज०** जघन्यतो **ए०** एक दिन अथवा **दु०** बिदिन अथवा **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टो **द०** दश मास लगे **वि०** विचरे छे. **द०** दशमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा १०.

[बा.६७] **अ०** अथ हवे **अ०** अनेरी **ए०** इग्यारमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ११ – **स०** सर्व धर्मनी रुचिवंत **भ०** हूवे. **जा०** जिहां लगे **उ०** उद्देशिक आहार **से०** तेणे **प०** छांड्यो व्हे. **से०** ते **खू०** क्षुरमुंड करावे **वा०** अथवा **सि०** मस्तके लोच करावे. **ग०** ग्रह्या छे **आ०** आचार पालवाने **भं०** उपकर्ण पात्र-रजोहरण-मुहपत्ति प्रमुख साधूनो **णि०** वेस **जा०** जेहवो **स०** साधूनो **णि०** निर्ग्रंथनो **ध०** धर्म १० विध **प०** परूप्यो कह्यो **तं०** ते केहवो धर्म क्षांत्यादि **स०** सम्यग् प्रकारे **का०** कायाइं करी **फा०** स्पर्शतां थकां **पा०** पालतां थकां **पु०** आगे **जु०** जुग प्रमाण **पे०** देखतो थको पृथ्वीने **द०** देखीने **त०** त्रस **पा०** जीवने **उ०** पगने ऊंचा करीने चाले फणा भरे **सा०** पगने संक्षेपीने **री०** चाले **ति०** त्रिछा **पा०** पगे करीने **री०** चाले. **सं०** छते अनेरे मार्गे चाले प्राक्रम करे अने मार्ग न व्हे तो जलसुं चाले. **सं०** संयती यत्नवंत थको **प०** प्राक्रम करे जाइ. **णो०** नही **ऊ०** सरल पाधरे मार्गे जाइ. **के०** केवल एक **से०** तेहने **णा०** जात माता-पिता-पुत्रादिकने विषे **पे०** प्रेमबंधन **अ०** तूटो नथी **भ०** हुवे. **ए०** एणीपरे **से०** तेहने **क०** कल्पे घटे **णा०** न्यात विधि गोचरी करे आहारने जाइ. **त०** तिहां **से०** तेहने **पु०** आव्यां पहली **पु०** ऊतर्युं छे **चा०** चोखानो **उ०** भात **प०** पछे **उ०** ऊतरी छे **भि०** दाल तो **क०** कल्पे **से०** तेहने **चा०** चावल-दालनो भात **प०** लेवाने, **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **भि०** दाल **प०** लेवी ग्रहवी १. **त०** तिहां **से०**

तेहने **पु०** आव्यां पहली **पु०** पहिली उतारी छे **भि०** दाल **प०** पछे **उ०** उतार्यो **चा०** चावलनो भात तो **क०** कल्पे **से०** तेहने **भि०** दाल **प०** लेवाने, **णो०** नहि **क०** कल्पे **चा०** चावलनो भात **प०** लेवाने २. **त०** तिहां **से०** तेहने **पु०** आव्यां पहिली **दो०** बिहूं वांना पहिला उतार्या तो **क०** कल्पे **से०** तेहने **दो०** बिहूं वांना **प०** लेवा ३. **त०** तिहां **से०** तेहने **पु०** आव्यां पछे **दो०** बिहूं वांना **प०** पछे **उ०** उतार्या तो **नो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **दो०** बिहूं वांना **प०** लेवाने ४. **जे०** जे **त०** तिहां **पु०** आव्या पहिला **पु०** जे उतर्यो **से०** तेहने **क०** कल्पे **प०** लेवो ५. **जे०** जे **से०** तेहने **त०** तिहां **पु०** आव्यां पछे **पु०** जे उतर्युं **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **प०** लेवाने ६. **त०** तेहने **गा०** गृहपतिना **कू०** घरने विषे प्रतिमाधारी ते **पिं०** आहार-पाणीने अर्थे **अ०** पेठा थकाने **क०** कल्पे **ए०** एम **व०** बोलवो '**स०** श्रमण साधूने उपासे सेवे ते श्रमणोपासक, ते केहवो छे ? **प०** प्रतिमा **प०** धारी छे तेहने **भि०** भिक्षा **द०** आपो देवो.' **तं०** ते श्रावक **ए०** एतानरूप **वि०** आचारे करी **वि०** विचरता थकाने **के०** कोइक **पा०** देखीने **व०** एम कहे - '**के०** कुंण आचार पडिवज्यो छे तुमे, **आ०** हे आयुष्मन् ?' **व०** एहवो कहवो **सि०** हुइ - '**स०** श्रावक **प०** प्रतिमा **प०** धारी **अ०** हुं छुं' एहवो कहवो **सि०** हुइ. **से०** ते **ए०** एतानरूपे करी **वि०** विचरतां थकां **ज०** जघन्य **ए०** एक दिन अथवा **दु०** बिदिन अथवा **ति०** तीन दिन **उ०** उत्कृष्टतो **ए०** इग्यार मास लगे **वि०** विचरे. **ए०** इग्यारमी **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा ११.

**ए०** ए कही ते **ख०** निश्चे **ता०** ते **ए०** पूर्वोक्त **थे०** गणधरे **भ०** तीर्थंकरे **ए०** इग्यारे **उ०** श्रावकनी **प०** प्रतिमा **प०** कही. **त्ति०** श्रीसुधर्मा स्वामी कहे छे. **छ०** छट्ठो अध्ययन संपूर्ण ६.

हिवे पहिली १ मासनी श्रावकनी दर्शन प्रतिमा –

*दंसण१वय२सामाइय३पोसह४पडिमा५अ बंभ६सच्चित्ते७ ।*
*आरंभ८पेस९उद्दिट्ठवज्जए१० समणभूए११ अ ॥ [दशा.नि.४६]*

ए गाथा श्रावकनी प्रतिमा विवरासुं लिखिये छे- पहिली दर्शन प्रतिमा ते शंकारहित सम्यक्त्व पाले, मास १ एकांतर [उपवास] करे १. बीजी प्रतिमा बिमासतांइ बारे व्रत अतिचाररहित करे, बिमासताइं उपवास बेले पारणो करे २. इम **त०** तीजी प्रतिमा तीन टंक तीन सामायिक करे, तीन मासतांइ तेले-तेले पार्णो करे ३. [चोथी प्रतिमा आठम-चउदश-अमावस्या-पूर्णिमा तिथिइं पोषध करे, चार मासताइं च्यार-च्यार उपवासे पार्णो करे ४.] पांचमी प्रतिमा आठम-चउदश-अमावस्या-पूर्णिमाकी रात्रिइं काउसग करे, स्नान न करे, रात्रिभोजन न करे, लांगन वाले, दिने शीलव्रत धारे, रात्रे शीलनो प्रमाण करे, कषाय जीपे, पांच मासतांइ पांच-पांच उपवासे पारणो करे ५. छट्ठी प्रतिमा सर्वथा सील पाले, मोहणी जीपे, सूंगार-विभूषा वर्जे, स्त्रीसुं एकांत वात न करे, छ मासतांइ छ-छ उपवासे पारणो करे ६. सातमी प्रतिमा सचित्तनो त्याग करे, अशनादिक सचित्त आहार वर्जे, सात मासतांइ सात-सात उपवासे पारणो करे ७. आठमी प्रतिमा ८ मासनी पोते आरंभ करे नहीं ८. नवमी प्रतिमा अनेरा कन्हे आरंभ करावे नहीं चाकरादि पासे, नव मासतांइ नव-नव उपवासे पारणो करे ९. दशमी प्रतिमा आपणे अर्थे आहार कीधूं व्हे ते न ल्ये, खुरमुंड करी चोटी रखावे, दश मासतांइ दश-दश उपवासे पारणो करे १०. इग्यारमी प्रतिमा लोच करावे अथवा शक्ति न व्हे तो खुरमुंड करावे, रजोहरण लेइ आज्ञा मांगीने जाति बराबर होइ विचरे, आपणा कुटुंबमांहे गोचरी करीने जीमे, इग्यारे मासतांइ इग्यारे-इग्यारे उपवासे पारणो करे ११. श्रावकनी प्रतिमा वर्ष ५ अने मास ६ लागे. एम आनंदादि दशेइ श्रावके वही संसारनो अंत करस्ये, एकावतारी व्हा इति इग्यारह प्रतिमाविचारं समाप्तम् ।

## [सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमाध्ययनम्]

छट्ठे अध्ययने उपासकनी इग्यारे प्रतिज्ञा-अभिग्रहरूप कही. आगले अध्ययने साधूने विशिष्ट अभिग्रहरूप प्रतिज्ञा कहे छे.

[बा.६८] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आयुष्मन् शिष्य ! [**ते०** तेणे] **भ०** भगवंते **ए०** एम **म०** आख्यात्यो कह्यो – **इ०** ए जिनशासनने विषे **ख०** निश्चे **थे०** थविर **भ०** भगवंते **बा०** बारे **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** कही.

[बा.६९] **क०** कोंण **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** स्थविर गणधरे **भ०** भगवंते तीर्थंकरे **बा०** बारे **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** कही ?

[बा.७०] **इ०** ए आगले कहस्ये ते **ख०** निश्चे **ता०** ते **थे०** थविरभगवंते **बा०** बारे **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** कही. **तं०** ते कहे छे – **मा०** आद्यासु सप्तसु जावत् परिमाणमेव प्रतिकर्म तथा वर्षासु न ता प्रतिपद्यन्ते, न च प्रतिकर्म करोति तथा आद्यद्वयं एकत्रैव वर्षे तृतीयचतुर्थे एकैकस्मिन्वर्षे अन्यासां तिसृणाम् अन्यत्र वर्षे प्रतिकर्म अन्यत्र प्रतिमा, नवभिर्वर्षैः आद्याः सप्त समाप्यन्ते वृत्तिमध्ये धुरली सात नव वरसे थाइ एम कह्या १. छ **मा०** तथा पाठमध्ये प्रथम एक मासनी यावत् सातमी सात मासनी एम गणतां तो ५ वरस थाइ. विचमे चोमासा पाँच आवे, तिहां प्रतिज्ञा मूकवी पडे, एम कर्तां पांच वर्ष थाइ १ अने प्रथम महीने पहिली यावत् सातमे महीने सातमी, एम धुरली सात थइने सात मासतांइ, आठमी-नवमी-दशमी ए त्रिणना एकवीस दिन, इग्यारमीना बे दिन, बारमीना त्रिण दिन, एम कर्तां सात मास दिन २६ थाये शेष काले मास आठमध्ये थइ रहे, विचमांहे मूकवा न पडे, ए सूत्रपक्ष बहुश्रुते विचारवो. वलि इहां आशंका जे उपासकनी पडिमाने विषे प्रथम पडिमा एक मासनी, बीजी पडिमा बि मासनी, एम यावत् इग्यारे मासनी एतले तिहां एम कह्युं ते भणी इहां पिण यथा दोमासीया भिक्खूपडिमा इत्यादिक पाठ एतले प्रथम पडिमा कही महिनानी, बीजी प्रतिमा बे महीनानी इम यावत् अथ इम कहीए तिवारे तो आठमी प्रतिमा आठ मासनी जोइये जावत् बारमी पडिमा बारे मासनी जोइये ते भणी अयुक्तो दोमासिया बे मासनी बीजी प्रतिमा एम यावत् सात मासनी सातमी पडिमा इम केतलाइक कहे छे एम कहतां पडिमा बीचमांहि चोमासो आवे तिवारे पडिमा रहे छे जाव विवेकीये विचारवो जे भणी सातमी पडिमासुं उत्कृष्टो बिरात्रि उप्रांत न रहे ते माटे इति. **दो०** बिमासनी **भि०** साधुनी प्रतिमा २ **ति०** तीन मासनी **भि०** साधूनी प्रतिमा ३ **च०** च्यार मासनी **भि०** साधूनी प्रतिमा ४ **पं०** पांच मासनी **भि०** साधुनी प्रतिमा ५ **छ०** छमासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा ६ **स०** सात मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा ७ **प०** पहिली **स०** सात रात्रदिननी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा ८ **दो०** बीजी **स०** सात रात्रदिननी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा ९ **त०** तीजी **स०** सात रात्रदिननी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा १० **अ०** एक अहोरात्रनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा ११ **ए०** एक रात्रप्रमाण **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा १२.

[बा.७१] **मा०** १ मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न ते धरणहार एहवो **अ०** अणगार साधू तेहनो आचार कहे छे. **णि०** सदाइ **वो०** वोसरावी छे **का०** काया सरीरनी शुश्रूषा **चि०** छांड्यो छे जेणे प्रतीकार तज्यो छे देहनो **जे०** जे केइ **उ०** उपसर्ग उपजे छे ते केहा **दि०** देवताना १ **वा०** अथवा **मा०** मनुष्यना २ **ति०** तिर्यंच योनीनी जीवना ते **उ०** ऊपजे तो **स०** सम्यक् प्रकारे **स०** सहे **ख०** खमे क्रोध कीधा कर्मनो फल एम जाणे **ति०** दीनपणा रहित **अ०** चपलपणा रहित अह्वासे.

[बा.७२] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिज्ञा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधुने **क०** कल्पे **ए०** एक **द०** दाति **भो०** भोजननी एतले हाथे तथा भाजने करी देतां जे एक वार साधूना भाजनमध्ये पडे ते दति अने धार खंडाइ अथवा

बीजी वार दाति हिवे मासनी प्रतिज्ञा एक दाति कल्पे **प०** लेवी **ए०** एक दाति **पा०** पाणीनी लेवी **अ०** परिचय रहित **उ०** थोडो थोडो **सु०** दोष रहित **उ०** अन्यने जीमवा आंण्यो अने जेणे ते विशुद्ध **व०** लेपरहित अथवा देतां उछर्यो ते उवहड भिक्षा **ब०** घणा **दु०** मनुष्य-पक्षी **च०** गवादिक **स०** श्रमण शाक्यादिक तापसादिक **मा०** ब्राह्मण जाति **अ०** पर्व उच्छव रहित **कि०** कृपण ते दरिद्री **व०** वणीमग ते भीख मांगे याचक दरिद्रियादिक **क०** कल्पे **से०** ते साधुने **ए०** एकने **भुं०** जीमताने पासे **प०** लेवो, **णो०** नही **दु०** बे जीमता **णो०** नही **ति०** तीन जीमतां **णो०** नही **च०** च्यार जीमतां **णो०** नही **पं०** पांच जणा जीमतां **णो०** निषेधे गुर्विणी ते गर्भवती स्त्रीने हाथे न कल्पे जे भणी गर्भवंतीने हाथे ल्ये तो गर्भने पीडा उपजे ते भणी **णो०** नही बाल अवस्थावतीने हाथे तथा बालकनी माताने अर्थे कह्यु ते **णो०** नही **दा०** बालकने **पे०** चूंगावतीने हाथे **णो०** नही **अं०** मांहि **ए०** उंबराने विषे **दो०** बिहूं **पा०** पग **सा०** एकठा राखीने **द०** देती थकीने हाथे **णो०** नही **बा०** बाहिर **उ(ए)०** उंबराने **दो०** बिहूं **पा०** पग **सा०** एकठा करीने **द०** देतीने हाथे लेवे. **ए०** एक **पा०** पग **अं०** अंतरमांहे **कि०** करीने **ए०** एक **पा०** पग उंबरने **बा०** बाहिर **कि०** करीने **ए०** उंबरने **वि०** आरोहीने **ए०** एम **द०** देवे तो **ए०** एम **से०** तेहने **क०** कल्पे **प०** लेवो. **ए०** एम **से०** ते **णो०** नही **द०** द्ये तो **ए०** एम **से०** तेहने **णो०** न कल्पे ते प्रतिज्ञाधारक साधूने **प०** आहारादिक लेवो.

[बा.७३] **मा०** एक मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** अंगीकार युक्त **अ०** साधूने **त०** तीन **गो०** गोचरीना **का०** काल ते प्रस्ताव **प०** कह्या. **तं०** ते कहे छे – **आ०** पहिलो १ **म०** विचलो २ **च०** छेहलो. गोचरीना बिप्रहर मध्यना तेहना तीन भाग कीजे ते आदि-मध्यम-चरिम. ते मांहे एक भाग काल लगे गोचरी करे. **आ०** पहिले काले **च०** विचरे, **णो०** नही मध्यम कालमे जाइ भिक्षाने, **णो०** नही छेहले काले विचरे ते ल्ये. **म०** मध्यमे **च०** विचरे-मध्य भागे जाइ भिक्षाने, **णो०** नही **आ०** पहिले, **णो०** नही **च०** छेहले **च०** विचरे. **च०** छेहले काले **च०** विचरे तो **णो०** नही **आ०** पहिले **च०** विचरे, **णो०** नही **म०** मध्ये **च०** जाये ते अभिग्रहधारी साधू.

[बा.७४] **मा०** एक मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमाप्रते **प०** प्रतिपन्न एहवा **अ०** साधूने **छ०** छ प्रकारनी गांनी परे चर्या गोचर्या ते गोचरी **प०** परूपी. ते कहे छे – **पे०** पेटी चोखूणी तिम च्यारे पंगत गोचरी करे, पेटीने आकारे करे १. **अ०** बे पंक्ति गोचरी करे २. **गो०** बलदना मात्राने आकारे गोचरी करे ३. **प०** पतंग तीड जिम उडीने आंतरे-आंतरे बेसे तिम ४. **सं०** शंखनो आवर्तन ते बे प्रकारे एक अभ्यंतरथी आवर्तन, बीजो बाह्य आवर्तन. अभ्यंतरथी बाहिर आवे, बाहिर थी वहरतो अभ्यंतर आवे. **सं०** शंखना आवर्तननी परे ५. **गं०** सरल गोचरी कर्तो जाइ, आवतो करे ६.

[बा.७५] **मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न ते प्राप्त हूओ एहवो **अ०** अणगार साधू तेहने **ज०** जिहां **के०** कोइ **जा०** जांणे तो **क०** कल्पे **से०** तेहने **त०** तिहां **ए०** एक रात्र **व०** वसवो रहवो. **ज०** जिहां **के०** कोइ **ण०** न जांणे तो **क०** कल्पे **से०** तेहने **त०** तिहां **ए०** एक रात्रि **वा०** अथवा **दु०** बिरात्रि **व०** वसवो रहवो. **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **ए०** एक रात्रि **वा०** अथवा **दु०** बिरात्रि **प०** उप्रांत वसवो. **जे०** जे **त०** तिहां **ए०** एक रात्रि **वा०** अथवा **दु०** बिरात्रि **प०** उपरांत **व०** वसे तो **से०** तेहने तिहां रहितां माटे **छे०** छेद चारित्रने **प०** परिहार तप पामे.

[बा.७६] **मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमाप्रते **प०** प्राप्त हुओ एहवो **अ०** साधु तेहने **क०** कल्पे **च०** च्यार **भा०** भाषा **भा०** बोलवी. **तं०** ते कहे छे – **जा०** आहारादिक याचवाने मांगे १. **पु०** पुछ्यानो उत्तर देवो (पूछवुं) ते २. **अ०** मल-मूत्र परिठवतां 'अणुजाणह जस्स उग्गह' एहवो भणी आज्ञा मांगवी ३. **पु०** पूछियानो

उत्तर देवो ४.

[बा.७७] **मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा अभिग्रहरूप ते प्रते **प०** प्राप्त हुवो **अ०** साधुने **क०** कल्पे **त०** तीन **उ०** उपाश्रयप्रते **प०** जोववो. **तं०** ते कहे छे – **अ०** हेठे **आ०** बागमांहि घर ते आरामघर कहिये १. **अ०** हेठे-नीचे आस्थान मंडपने विषे २ **अ०** हेठे **रु०** वृक्षने घणो नजीक प्रदेश जे ठाम ते घरने विषे ३.

**मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिज्ञाप्रते **प०** प्राप्त हूवा **अ०** साधुने **क०** कल्पे **त०** तीन **उ०** उपाश्रय पडिलेही पछे **अ०** आज्ञानो मांगवो. **तं०** ते कहे छे – **अ०** हेठे **आ०** बागमांहि घर ते आरामघर कहिये १. **अ०** नीचे आस्थान मंडपने विषे २. **अ०** हेठे **रु०** वृक्षने घणो नजीक प्रदेश जे हेठो ठाम ते घरने विषे ३.

[बा.७८] **मा०** एक मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा अभिग्रहरूप **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधुने **क०** कल्पे **त०** तीन **सं०** संथारा **प०** जोवे दृष्टे करी. **तं०** ते कहे छे – **पु०** पृथ्वी शिला अचित्त ठाम १. **क०** काष्ठनो पाटो ते शिला २. **अ०** जेहवो मूल गोपाटादिक पाथर्युं छे ३.

**मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** घररहित साधूने **क०** कल्पे **त०** तीन **सं०** संथारा **अ०** अंगीकार करवा, आज्ञा मांगवी. **तं०** ते केहा, तेम ज.

**मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** घररहित साधुने **क०** कल्पे **त०** तीन **सं०** संथारा **उ०** अंगीकार कर्वा, **तं०** तिम ज.

[बा.७९] **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूने **इ०** स्त्री अथवा **पु०** पुर्ष मेथुन सेववा निमित्ते **उ०** उपाश्रयमांहि **उ०** आवे **से०** ते **इ०** स्त्री अथवा **पु०** पुर्ष **णो०** न कल्पे **से०** ते साधू प्रतिज्ञाधारीने **तं०** ते **प०** आश्रयीने उपाश्रयथी बाहिर वस्तीथी **नि०** नीकलवो **प्प०** बाहिरथी मांहि पेसवो.

[बा.८०-८१] **मा०** मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** अणगार साधुने **के०** कोइ एक **उ०** उपाश्रयने **अ०** अग्निकाय करीने **झा०** दग्ध करे एतले प्रज्वाले बाले तो **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **तं०** ते अग्निकायने **प०** आश्री **णि०** नीकलवो ते उपाश्रयथकी बाहिर **प्प०** बाहिरथी मांहि पेसवो. **त०** तिहां **के०** कोइ एक **व०** ग्रहीने बारे काढे तो **जा०** जिहां लगे **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **तं०** तेहने **अ०** अवलंबवो आकर्षवो झाली राखवो **प०** वारंवार तेहने अवलंबवो झाली राखवो, **क०** कल्पे **से०** ते साधूने **आ०** यथाईर्यासमितीइं **री०** चालवो.

[बा.८२] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** अणगार साधुने **अ०** हेठे **वा०** पगने विषे **खा०** खीलो अथवा **कं०** कांटो अथवा **ही०** फांस तथा काच अथवा **स०** सकरा पाषाण **अ०** पगमांहे पेसे तो **णो०** नही **से०** ते प्रतिज्ञाधारकने **क०** कल्पे **णी०** निकालवा काढवा **वि०** सर्वथा काढीने विसुद्ध कर्वा, **क०** कल्पे **से०** ते साधूने **आ०** यथाइर्याये चालवो.

[बा.८३] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधुने **अ०** आंखने विषे **पा०** जीव मंसादिक **बी०** बीज तिलादिक **र०** धूल रेत **प०** मांहे पडे तो **णो०** नही **से०** ते साधुने **क०** कल्पे **णी०** निकालवा काढवा **वि०** सर्वथा काढी विसुद्ध कर्वा, **क०** कल्पे **से०** ते साधूने **अ०** यथा ईर्यासमितिइं चालवो.

[बा.८४] **मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधुने **ज०** जिहां वसति प्रदेशे अथवा बाहिरने विषे **सू०** सूर्य आथमे ते चोथे प्रहरे पूरो थाइ **त०** तिहां **ज०** जलने विषे एतले जलशब्दे तीजो प्रहर पूर्ण थाइ एतले सीतलपणो व्यापे अने सूक्ष्म स्नेहकाय पडे माटे चोथे प्रहरे सीतलपणो व्यापे जल कह्युं पिण जलशब्दे

नदी प्रमुखनो जल बोलवो ते भणी उपयोगवंत साधू छे ते आवी जलमध्ये किम रहे एतले सूक्ष्म स्नेहकायरूप तेह ज कहवो ते माटे कह्युं जलंसि, पर पांणी न लेवो, **थ०** थल ते अटवी तिहां **दु०** दुर्गशब्दे गहन स्थानक **नि०** गर्तादिक खाड नीची भोमने विषे **प०** पर्वतने विषे **वि०** एक प्रदेश उंचो एक नीचे ते ठामने विषे **ग०** खाडने विषे **द०** गुफाने विषे **क०** कल्पे **से०** तेहने ते **र०** रात्रिने विषे **त०** तिहां ज **उ०** वसवो रहवो, **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **ए०** एक पगमात्र पिण आगे जावाने, **क०** कल्पे **से०** ते साधुने **क०** काल्हे **पा०** प्रकास थये रात्रि गइ बीहामणी **जा०** जां लगे **ज०** जाज्वल्यमान सूर्य ऊगे थके **पा०** पूर्व दिशि साहमो चाले **प०** पछिम दिशि साहमो चाले **दा०** दक्षिण दिशिने साहमो चाले **उ०** उत्तर दिशिने साहमो चाले **अ०** यथाइर्यासमिति **री०** चाले.

[बा.८५] **मा०** मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिज्ञाने प्रतिपन्न **अ०** साधुने **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **अं०** अंतररहित ते **स०** सचित्त **पु०** पृथ्वीने विषे **नि०** निद्रा करवी नही **प०** प्रचला ते घणी निद्रा न करे. **के०** केवली **बू०** कहे **आ०** ए आदान कर्म बंधननो ठाम छे. **से०** ते साधूने विहार कर्तां थकां **नि०** निद्रा कर्तां थकां **प०** घणी निद्रा कर्तां थकां **ह०** हाथे करी **भू०** धरतीने **प०** स्पर्शे संघट्टे मर्दे नही. तो हिवे स्यूं करे ? ते कहे छे – **अ०** यथाविधि ते निर्दोष **ठा०** थानके **ठा०** रहवो अंगीकार करवो **णि०** नीकली जाइवो. **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीते करी **उ०** पीड्यो तिवारे **णो०** नही **से०** ते साधुने कल्पे **उ०** बाधा राखवी रोगोत्पत्तित्वात्, तो स्यूं करे ते कहे छे – **क०** कल्पे **से०** ते साधुने **पु०** पूर्वे जे **प०** प्रतिलेख्यो एतले दृष्टि करी जोयो छे **थं०** थंडिल तेहने विषे **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीत **प०** परठे परिठवीने **त०** तेहज **उ०** उपाश्रयप्रते आवीने पूंजीने **अ०** यथाकाउसगादिके रह्यो तिम ज रहे.

[बा.८६] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमाप्रते **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूने **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **स०** सचित्त रज खरडी **का०** कायाइं **गा०** गृहस्थना कुलघरने विषे **भ०** भातने अर्थे **पा०** पाणीने अर्थे **णि०** स्थानकथी नीकलवाने **प०** पेसवाने. **अ०** अथ हवे **पु०** वली **ए०** एम **जा०** जांणे **स०** सचित्त रज **से०** ते **अ०** प्रसेवे करी **ज०** सामान्य मेल **म०** कठिण मेल हाथ घस्ये उतरे ते **पं०** ते ही ज मेल प्रसेवे करी ढीलो थाइ ते पंक **वि०** विनास पामे सचित्त रजे **से०** ते साधूने कल्पे **गा०** गृहस्थना **कु०** घरने विषे **भ०** भातपाणीने अर्थे **पा०** पाणीने अर्थे **नि०** नीकलवो **प्प०** पेसवो.

[बा.८७] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूने **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **सी०** सीतल **वि०** अचित्त पाणी करी **उ०** उन्हो पाणी अचित्त तेणे करी **ह०** हाथ अथवा **पा०** पग अथवा **दं०** दांत अथवा **मु०** मुख **उ०** छांटे नही **प०** धोवे नहि **ण०** एतलो विशेष अशुचि लेप धोतां डावो हाथ धोवाइ, ए विना न धोवो तथा असज्झाइने लेपे ते खरड्यो देहने धोयवो पूर्वोक्त जले करी **णं०** अलंकारे **वा०** वली **भ०** भोजने खरड्यो **आ०** मुख धोइ, ए बिहूं उपरांत नही इत्यर्थः इत्यादिक तथा आचारांगे कह्युं जे असझाइथी डील खरडाणो होय ते काकरादिके लूहे अने पछे धोवे. आ पाठथी धोवो जांणवो पिण तेतलो ज अवयव धोयवो. अथ वली लेवालेवणनो पर्याय कहिये छे- असझाइ पणीय टाले वाटे ऊपरे तेरे शाखे उच्चारपासवणं गाथा सुयगडांगे १ ठाणांगे असझाइ कही २ व्यवहारे असझाइ सझाइ न कर्वो ३ पोतानी अथवा असझाइपणे सझाय न कर्वो ४ आचारांगे हस्तादिक धोवा, अपाननी ना कही ५ अत्र हस्तादिक ५ पांच धोवानी ना कही अने असझाइनो लेप पाणीइं धोवो कह्यो ६ वली दशासुतखंध तीजे {उद्देशे} अध्ययने पुव्वामेव आयामइ गुरु पहिला शिष्य आचमन लेइने जाय ७ हिवे निशीथनी शाखे उच्चारने जे प्रथम काकरादिके लूहे ८ पिण काष्ठ खीले न लूहे ९ पछे आचमन ल्ये १० उच्चार ऊपर न ल्ये ११ वेगलो जइने ल्ये १२ त्रणे नाना खोवला ऊपरे न ल्ये १३ लिये

त्रिण नावा सूधी ल्ये, मूलथी न ल्ये तो पायछित्त. ए १३ साखे असझाइ टालवानी कही तथा करपात्री महाबलिष्ठ होइ उचार निवारी पछे खोवले मात्रे लेइने टाले. मात्रो राखवानी शक्ति होय तो ही करपात्रीपणो अंगीकार करे पिण अशुचि टालो ए सूत्रनी शाखे प्रथम आज्ञा प्रमाण पछे अभिग्रह आगम प्रमाण जाणवो, ए अनुमान प्रमाण सुद्ध. **भ०** आहार **मा०** करीने पात्र धोता धोवाइं.

[बा.८८] **मा०** मासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूने **नो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **आ०** घोडा अथवा **ह०** हाथी **गो०** बलद **म०** भैंसो **को०** वाराह सूंअर प्रसिद्ध **सु०** कूंतरो **वा०** वाघ एतला **दु०** दुष्ट सकोप **आ०** आवते थके वधने अर्थे **पा०** एक पगमात्र पिण **प०** पाछो उसरवो नही- पाछो देवो नही. **अ०** अदुष्ट थको जो कोइ एमांहिलो सूखो जीव आवतो होइ तो **क०** कल्पे **जु०** धूसर प्रमाण **प०** पाछो उसरवो ते जीवदया माटे.

[बा.८९] **मा०** एक मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधुने **णो०** नही **से०** तेहने **क०** कल्पे **छा०** ए छाया 'ताढी लागे छे' एम जांणी **णो०** नही **उ०** तावडे जावो. **उ०** उष्णे करी पीडातो **णो०** न जाये **छा०** छाहमा. **ज०** जे **ज०** जिहां **ज०** जिवारे **भ०** व्हे **त०** ते सीतादिक **त०** तिहां **त०** तिवारे ते **अ०** अह्वासे.

[बा.९०] **ए०** एणीपरे **ख०** निश्चे **ए०** एहवी **मा०** मासनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **अ०** जिम **सु०** सिद्धांत **अ०** जिम कल्पे ते प्रज्ञाने आचारने अलोपवे ते यथाकल्प **अ०** जिम जिनमार्ग **अ०** यथातथ्य ते सत्य **स०** भले प्रकारे कायाइं करी **फा०** फर्सिने **पा०** पालीने **सो०** अतीचार टालीने **ती०** पार पहूंचाडीने **कि०** कीर्तन करीने **आ०** आराधीने **अ०** आज्ञाइं रुडीपरे पालवो **भ०** हूवे १.

[बा.९१] **दो०** बिमासनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमाप्रते **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूने **णि०** सदाइ **वो०** वोसरावी कायाने **जा०** जिहां लगे **दो०** बि दति भातपाणीनी २. **ति०** तीन मासनी प्रतिज्ञाइ तीन पाणीनी दाति, तीन भातनी दाति, ३. **च०** च्यार मासनी प्रतिज्ञाइ **च०** च्यार **द०** दति [भात] पाणीनी ४. **पं०** पांच मासनी प्रतिज्ञा **पं०** पांच दति भातपाणीनी ५. **छ०** छ मासनी प्रतिज्ञाइ **छ०** छ दाति भातपाणीनी ६. **सा०** सात मासनी प्रतिज्ञाइं **स०** सात दति भातपांणीनी. **जे०** जे प्रतिज्ञा जेतला **मा०** मासनी एक बे त्रिण च्यार पांच [छ] सात इम ज दाति पिण वधती लेवी **ते०** तेतली दाति पिण जांणवी.

[बा.९२] **प०** पहिली **स०** सात रात्रदिननी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिज्ञा **प०** प्रतिपन्न **अ०** अणगारने **णि०** सदाइ **वो०** वोसरावी **का०** काया **जा०** जिहां लगे पहिली प्रतिज्ञाये कही ते सर्व उपाश्रय अह्वासे. **क०** कल्पे **से०** ते साधूने **च०** चउथ भक्त ते १ उपवास **अ०** पाणीरहित **बा०** बाहिर **गा०** ग्राम ते कांटानी वाड चोफेर होइ ते अथवा बुद्ध्यादिक गुणने ग्रसे ते ग्राम कहिये, नगर ते जेणे कोट होइ च्यार पोल होइ ते नगर, खेड ते जे एके पासे नदी बीजे पासे डूंगर ए विचे ग्राम ते खेड कहिये **जा०** जिहां लगे **रा०** राजधानीथी बाहिर रहिवो **उ०** चित्ता सूइवो ते एक आसने **पा०** पसवाडे सूताने **ने०** बेठाने चेष्टा रहितने **ठा०** स्थानकने **ठा०** ठावीने **त०** तिहां **दि०** देवता संबंधी **मा०** मनुष्य संबंधी **ति०** तिर्यंच ते घूघु प्रमुखना **उ०** उपसर्ग **स०** ऊपजे. **ते०** ते **उ०** उपसर्गथी **प०** प्रतिमाधारी ते थानकथी चले **प०** हेठो पडे. **नो०** नही **से०** ते साधूने **क०** कल्पे **प०** मने करी चलिवो **प०** हेठो पडवो. **त०** तिहां **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीतनी **उ०** बाधा उपजे तो **णो०** नही **से०** ते साधुने **क०** कल्पे **उ०** वडी नीत **पा०** लघुनीतने **उ०** अवग्रह लेइने तिहां परिठवो न कल्पे. **क०** कल्पे **से०** ते साधुने **पु०** पहिली **प०** प्रतिलेख्या जोया छे ते **थ०** थंडिलने विषे **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीत **प०** परिठविवो सर्वथा त्यजवो. **अ०** यथाविधि ते पोतानो पडिलेह्यो ठाम छे तेहने विषे **ठा०** काउसग करे ठावे. **ए०** इम ज ए प्रथम सातरात्रि कही तिम ज बीजी

पिण सात रात्रनी परे **स०** सात रात्रदिननी **भि०** साधुनी प्रतिज्ञा कही एतले मूल विवक्षाइं आठमी प्रतिमा सात रात्रनी छे ते मध्ये **अ०** जिम **सु०** आठमांहे तिम **जा०** जिहां लगे **आ०** आगममांहे जिम **आ०** तीर्थंकरनी आज्ञा छे ते **अ०** सम्यक् प्रकारे **पा०** पाली **भ०** व्हे.

[बा.९३] **ए०** ए प्रथम सात रात्रीनी कही तिम ज **दो०** बीजी पिण **स०** सात रात्रनी परे **ण०** एतलो विशेष **दं०** दंडानी परे प्रलंब दीर्घ रहे **ल०** लांबा लामूडानी परे सूइने **उ०** ऊकडू आसने **ठा०** थानकने **ठा०** ठावीने **से०** शेष सर्व **तं०** तिम ज **जा०** ज्यां लगे **आ०** आज्ञानो पालणहारो **भ०** व्हे.

[बा.९४] **ए०** एम **त०** तीजी **स०** सात रात्रीनी एतले मूल अपेक्षाइं दशमी **भ०** व्हे परं **ण०** एतलो विशेष **गो०** गोदोहवाने आसणे **वी०** वीरासणे **अं०** अंबकुबजनी परे वांके आसणे **ठा०** थानक थापीने करवाने माथो पग भूमी लगाडे बीजो सरीर लंबो रहे **से०** बीजी सर्व **तं०** तिम ज **जा०** जिहां लगे **अ०** आज्ञानो पालणहारो व्हे.

[बा.९५] **ए०** एम **अ०** अहोरात्र दिननी **वि०** पिण **ण०** एतलो विसेष **छ०** छट्ठ भक्त ते बि उपवास **अ०** पाणीरहित एतले चउविहार **ब०** बाहिर **गा०** ग्रामने **जा०** जिहां लगे **रा०** राजधानीने विषे **इ०** थोडा सा **दो०** दोनु पग **सा०** एकठा करीने **व०** लांबी करी छे भुजा जेणे ऊभा काउसग करी **ठा०** थानक **ठा०** ठावे **से०** बीजो सर्व **तं०** तिम ज **जा०** जिहां लगे **अ०** आज्ञानो पालणहारो **भ०** व्हे.

[बा.९६] **ए०** एक रात्रिनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** अणगार साधुने **णि०** सदाइ **वो०** वोसिरावी काया **जा०** जिहां लगे आपणी कमाइ भोगवे एम अह्वासे. **क०** कल्पे **से०** ते साधूने **अ०** तीन उपवास करवा ते पिण **अ०** पाणीरहित **ब०** बाहिर **गा०** ग्राम ते कांटानी वाड करी सहित ते **जा०** जिहां लगे **रा०** राजधानीथी **इ०** थोडी सी कायाने नमाडवे करी **ए०** एक **पो०** पुद्गल ऊपरे **दि०** दृष्टि राखी **अ०** आखनी पलक चलावे नही, मेषोन्मेष टमकारे नही. **अ०** यथास्थित **गा०** गात्र तेणे **स०** सर्व इंद्रिय करी गुप्तिवंत **दो०** बिहूं **पा०** पग **सा०** एकठा करीने **व०** भुजा लांबी करीने ऊभो काउसग करी **ठा०** स्थानकने **ठा०** ठावे. **त०** तिहां **से०** ते साधूने **दे०** देवता **म०** मनुष्य **ति०** तिर्यंचना कीधा उपसर्ग ऊपजे ते परीसह-उपसर्ग सहीने **अ०** यथाविधि काउसगमांहि **ठा०** रहीने.

[बा.९७] **ए०** एक रात्रनी **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **अ०** भले प्रकारे **अ०** अणपालताने **अ०** साधुने **इ०** ए आगल कहस्ये ते **त०** तीन **ठा०** ठाम **अ०** अहितकारी **अ०** अशुभकारी **अ०** अयोग्यपणाने काजे **अ०** मोक्ष अणपामवाने काजे **अ०** निरंतर अशुभ **भ०** व्हे. **तं०** ते कहे छे - **उ०** उन्मादनो लाभ व्हे, **दी०** घणा कालनी थितिनो **रो०** रोग आतंक ते शीघ्रघाती सूलादिक ते **पा०** पामे, ते पाम्या थकी चलतो **के०** केवली **प०** परूप्या **ध०** धर्म थकी **भ०** भ्रष्ट थाइ.

[बा.९८] **ए०** एक रात्रनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमाप्रते **स०** सम्यग् प्रकारे **अ०** पालता थकाने **अ०** साधूने **इ०** ए आगल कहस्ये ते **त०** तीन **ठा०** स्थानक **हि०** हितकारी **जा०** जिहां लगे **अ०** निरंतर शुभ **भ०** व्हे. **तं०** ते कहे छे – **ओ०** अवधिज्ञान **वा०** अथवा **से०** ते साधुने **स०** उपजे, **म०** मनपर्यव **णा०** ज्ञान **वा०** अथवा **से०** ते साधूने **स०** ऊपजे, **के०** केवल **णा०** ज्ञान **वा०** अथवा **से०** ते साधूने पूर्वे ऊपनो नही ते **स०** ऊपजे.

[बा.९९] **ए०** इम **ख०** निश्चे **ए०** एहवी **ए०** एक रात्रनी **भि०** साधूनी **प०** प्रतिमा **अ०** यथा सूत्रोक्त विधि **अ०** यथा **क०** आचार एहवो तिम **अ०** यथा **म०** मार्ग ज्ञानरूप **अ०** यथातथ्य सत्य **स०** सम्यक् प्रकारे **का०** सरीरे करी **फा०** फरसीने **पा०** पालीने **सो०** अतीचार रहित **ती०** पार पहूचाडीने **कि०** कीर्तन करीने **आ०** भली प्रकारे आराधीने **आ०** तीर्थंकरनी आज्ञाने पिण परंपरासुद्ध पालणहारो **भ०** व्हे.

**ए०** ए कही ते **ख०** निश्चे **ता०** तिका **थे०** स्थविर **भ०** गणधरे **बा०** बारे **भि०** साधुनी **प०** प्रतिमा **प०** कही. **त्ति०** श्रीसुधर्मा स्वामी कहे छे 'हुं इम कहूं छुं.' **स०** सातमो अध्ययन सम्पूर्ण ७.

## [अष्टमदशा पर्युषणाकल्पाध्ययनम्]

सातमे अध्ययने प्रतिज्ञाधारी कह्युं. ते प्रतिमाधारी अप्रतिबंधविहारी व्हे. ते तो आठ मास लगे परे पछे पज्जुसणा कल्प एक ठाम करे ते देखाडे छे.

[बा.१००-३८९] **ते०** ते काल चोथो आरो **णं** वा० **ते०** ते समय प्रस्तावने विषे **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** महावीरना **पं०** पांच बोल उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रनो चंद्रमा साथे योग आव्यो, ते हस्तोत्तरानो एह अर्थ – जेह हस्त नक्षत्र थकी उत्तरदिशि वर्ते ते हस्तोत्तरा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र कहतां आगे वर्ते छते पिण उत्तराफाल्गुनी जांणवो ते मांहि हस्तोत्तरा नक्षत्र कहिये. **तं०** ते कहे छे – **ह०** उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रने योगे चंद्रमा आव्यो तिवारे **चू०** च्यवीने **ग०** गर्भपणे अवतर्या, **ह०** उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रने योगे **ग०** गर्भथी साहरीने बीजे ठामे मेल्या देवताइं, **ह०** उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रने योगे **जा०** जनम्या, **ह०** उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रने योगे मुंड भाव थइने **आ०** घर छांडी दशविध मुंड थइ **अ०** साधूनी **प०** दीक्षा आदरी, **ह०** उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रने विषे **अ०** प्रधान **अ०** आंतरारहित **णि०** व्याघातरहित **णि०** आवरण करी रहित **कं०** संपूर्ण **प०** प्रतिपूर्ण ते चंद्रमाना मंडलनी परे एहवो **व०** प्रधान **के०** केवल **णा०** ज्ञान केवल **दं०** दर्शन **स०** ऊपनो, **सा०** स्वाति नक्षत्रे **प०** शीतलीभूत हुवा मुक्ति पहूंता. **भ०** भगवंत **जा०** ए आदि देइ सर्वतीर्थंकरनी चारित्र, थविरावली, साधूसामाचारी, ए सगलो अधिकार लेवो **जा०** जां लगे **ब०** घणा **स०** श्रमण ते साधू **ब०** घणी **स०** श्रमणी साध्वी **ब०** घणा **सा०** श्रावक ते मध्ये **ब०** घणी ते **सा०** श्राविका **ब०** घणा **दे०** देव भवनपत्यादिक **ब०** घणी **दे०** देवांगना **म०** मध्ये **ग०** रह्यां थकां **चे०** पदपूर्णे **ए०** एम **मा०** कहे **ए०** एम **भा०** भाषे **जा०** जिहां लगे **भु०** वारंवार **उ०** उपदेसरूप कहे. **त्ति०** श्रीसुधर्मा स्वामी कहे छे. आठमो पर्युषणाकल्प संपूर्ण.

## [नवमदशा मोहनीयस्थानाध्ययनम्]

ए आचारकल्प सत्य-सरलपणे पालवो. विपरीतपणे मोहनी कर्म बंधाइ. ते नवमा अध्ययनमांहे कहे छे.

[बा.३९०] **ते०** तेणे काले तेणे समे **चं०** चंपा नामे **ण०** नगरी **हो०** हूंती. **व०** ते नगरीनो वर्णव. **पु०** पूर्णभद्र नामे **चे०** चेत्य-बाग, यक्षनो यक्षायतन हतो. **को०** कोणिक नामे **रा०** राजा. **धा०** धारणी नामे राणी. **सा०** भगवंत **स०** पधार्या. **प०** पर्षदा ते नगरीथी नीकलीने वांदवा गइ. **ध०** भगवंते पर्षदा प्रते धर्मोपदेश कह्युं. **प०** पर्षदा **प०** पाछी वली.

[बा.३९१] **अ०** आर्य ! **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देवे **ब०** घणा **णि०** साधू-साधवीने **आ०** बोलावीने **ए०** एम **व०** कहे - **ए०** एम **ख०** निश्चे **अ०** हे साधो ! **जा०** जे केइ **इ०** ए आगल कहस्ये ते **ती०** तीस **मो०** मोहनीना **ठा०** स्थानक-कर्मबंधनो कारण **इ०** स्त्री अथवा **पु०** पुर्ष अथवा **अ०** वारंवार **आ०** एकवार सेवतो आचर्तो थको **स०** वारंवार ते समाचर्तो थको तीव्र भावे **मो०** मिथ्यात मोहनी ते पिण **क०** कर्मप्रते **प०** करे. **तं०** ते कहे छे –

[बा.३९२] **जे०** जे कोइ हांस्यकर्म करी **त०** त्रस प्राणीने स्त्री-पुर्ष-नपुंसकने **वा०** पाणीमांहि पेसारीने घालीने **उ०** पाणीइं कर्म करी **मा०** पगसुं आक्रमीने गोता देइने द्वेष आणीने मारे तो **म०** मोटो मोहनी कर्म कोडाकोड

सागरनी स्थिति प्रमाण करे बांधे १.

[बा.३९३] **पा०** हाथे करीने **आ०** मुख कोइ पापिष्ठ आत्मा प्राणी जीवना **पि०** ढांकीने अनेरा पिण **सो०** श्रोत्र ते मुख-नासिकारूप ते पिण ढांकीने मारे **पा०** प्राणी जीवने **अं०** माहोमांहि गलामांहि **ण०** घुर्घुराट कर्ताने **मा०** मारे ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २.

[बा.३९४] **जा०** जाज्वल्यमान अग्निनी जालानो **स०** आरंभ करीने **ब०** घणा जनने **उ०** वाडादिकमांहि घालीने **अं०** मांहे धूंओ देइने मारे तेणे करी **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३.

[बा.३९५] **सी०** मस्तकने विषे जे मारे खडग-मुद्गरे करी, परं मस्तक केहवो छे ? **उ०** सर्व अंगमांहि उत्तम अंग छे **चे०** अतिमलिन चित्ते करीने **बि०** भेदे **म०** मस्तकप्रते **फा०** फाडे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ४.

[बा.३९६] **सी०** मस्तकने **वे०** मालबंधे करीने **जे०** जे कोइ महापापिष्ठात्मा कोइक स्त्री पुर्ष मस्तकादिक सरीरने वींटे तांणी बांधे **आ०** वारंवार **ति०** तीव्र आकरो **अ०** अशुभ कर्म **स०** समाचर्तो थको **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ५.

[बा.३९७] **पु०** वली वली मायाइं करी जिम वाणियानो वेस पहेरी मार्गादिकने विषे **बा०** बाल अज्ञानी थको हर्षविशेष करीने **उ०** उपहास करे **ज०** जन लोक केणे करीने हणे **फ०** फल बीजोरादिके **अ०** अथवा **दं०** दंडे करीने तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ६.

[बा.३९८] **गू०** गूढ गुप्त छे आचार जेहनो ते गुप्ताचारी पोताना दुष्ट आचारप्रते गोपवे **मा०** अनेरी माया **मा०** आपणी माया करीने **छा०** टांके, जिम पक्षीयानो वधक पक्षीयाने ग्रहीने **अ०** असत्यवादी **णि०** निह्नवे-गोपवे स्वदोष तथा सूत्रना अर्थ गोपवे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ७.

[बा.३९९] **ध०** धसे अवहेले जे असद्भूत कूड दोषे करी अने **अ०** अनेरे अनाचार नथी सेव्यो तेहने आपणे कीधे कर्मने योगे करी होइ **अ०** अथवा **तु०** तुम्हे **म०** ए कर्म कीधो जे एम कहे ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ८.

[बा.४००] **जा०** जांणतो थको दुवियड्ढ थको परमार्थनो अजांण **प०** पर्षदामे बेठो थको **स०** कांइक जूठो कांइक साचो एतले मिश्रवचन **भा०** बोले. जाणतो **अ०** कलेशथकी उपशम्यो नथी ते **पु०** पुर्ष ते झंझापुर्ष ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ९.

[बा.४०१] **अ०** जेहने नायक नही एहवा राजानो **णे०** प्रधान **दा०** स्त्रीने अथवा धन आविवानो उपाय **धं०** रोके. **वि०** विस्तीर्ण समंतादिके भेद पाडीने वली **कि०** करे ते **प०** राजाने अधिकाररहित तथा प्रतिवादी नथी अधिकारी तेहने अधिकारी करीने अथवा स्वयमेव अधिकारी थइने १० **उ०** समीपे आवताने सर्व धन लीधे थके **जं०** दीनस्वरे चाटुया वचन बोले तेहवाने **प०** उपरांठा वचन करीने जेहनो तेहवो जे **भो०** भोग शब्दादिक भोगवतांने **वि०** विनासे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ११.

[बा.४०२] **अ०** बालब्रह्मचारी नथी तथा **अ०** परण्यो छे जे कोइने '**कु०** बालब्रह्मचारी छुं तथा कुमार छुं' एहवो कहे, **इ०** स्त्रीने विषे **गि०** गृद्ध विषय सेवे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १२.

[बा.४०३] **अ०** कुशीलियो अब्रह्मचारी थको जे कोइ '**बं०** ब्रह्मचारी **अ०** हूं छुं' एहवो **व०** कहे, **ग०** गर्दभनी परे गायना टोलामांहे **वि०** विस्वर अमनोज्ञ साधू जिनरूप गायना टोलामांहे खोटो वचन बोले १३ **अ०** आपणा आत्माने **अ०** अहितकारी **बा०** बाल अज्ञानी **मा०** मायासहित **मो०** मृषा **ब०** घणो **भ०** बोले, **इ०** स्त्रीना विषयने

विषे **मो०** लंपट महागृद्धी **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १४.

[बा.४०४] **जं०** जे कोइ पुर्ष **णि०** राजादिकनी नेश्राइं **उ०** निर्वाह आजीविका करे छे **ज०** जेहने प्रतापे करीने लोकमांहि यश **अ०** पामे तथा अभिगमनादिक पासे **त०** ते राजादिकना धनने विषे **ल०** लुब्ध थाइ ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १५.

[बा.४०५] **इ०** इश्वर राजाइं **अ०** अथवा **गा०** गामने लोक समूह भेला थइने कोइ एक पुर्षने **अ०** अणइश्वर असमर्थ हूंतो तेहने समर्थ **क०** कीधूं तथा **त०** तेणे राजादिके **प०** ग्रह्ये थके तेहने प्रासादे करीने **सि०** लक्ष्मी अतुल घणी असाधारणरूप पामीने उपगारी मूलगो ठाकुर तेहने **इ०** इर्षादिक दोषे करीने **आ०** आविष्ट सहित **क०** द्वेष तथा लोभादिक लक्षण सहित पापे करीने मलिन आकुल-व्याकुल व्याप्यो **चे०** चित्त जेहनो **जो०** जो कोइ एहवा उपगारी प्रभूने **अं०** अंतरायप्रते चिंतवे, जेहनी आजीविकानो विछेद करे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १७.

[बा.४०६] **स०** सर्पणी **ज०** जिम पोताना अंडप्रते हणे तिम **भ०** पोताना भर्ता पोषकप्रते **वि०** विशेषे हणे मारे **से०** सेनापती तथा राजाप्रते तथा धर्मशास्त्रनो पाठक तेहने हणे मारे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १८.

[बा.४०७] **जे०** जे कोइ **णा०** नायक **र०** देशनो प्रभू स्वामी तथा **ने०** कार्यने विषे प्रवर्तावे **णि०** वाणियाना समूहने **से०** सेठ नगरनो लक्ष्मी अंकित पट्टबंध तथा **ब०** घणा यशनो धणी एतावता देसने विषे विस्तर्युं छे जश जेहनो एहवाने हणे मारे ते पुर्ष **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे १९.

[बा.४०८] **ब०** घणा **ज०** लोकना **णे०** नायक स्वामीने **दी०** संसार सागर तारिवा भणी द्वीपा समान **पा०** प्राणी जीवने आधार अथवा दीप ते मिथ्यात्व तिमिर टालवाने भव्यजीवने त्राणरूप जे गणधरादिक **ए०** एहवा **ण०** पुर्ष ते साधूप्रमुखने **ह०** हणे मारे ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २०.

[बा.४०९] **उ०** प्रव्रज्याने विषे उठ्यो सावधान थयो छे ते तथा सर्व सावद्यथी निवर्त्यो छे **सं०** संयती भली समाधिनो धणी एहवाप्रते **वि०** विविध प्रकारे करी आक्रमीने बलात्कारे **ध०** केवलीना धर्म थकी **भं०** भ्रष्ट करे ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २१.

[बा.४१०] **त०** तिम ज पूर्वली परे **णा०** अनंत ज्ञानना धणी छे **जि०** वीतराग द्वेषना जीपणहार छे **व०** प्रधान **दं०** दर्शन क्षायक सम्यक्त्वना धणी छे **ते०** तेहना **अ०** अवर्णवाद बोले बाल अज्ञाने करीने **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २२.

[बा.४११] **णे०** न्याय सहित मार्ग ते मोक्षमार्ग तथा न्यायनो पंथ जिहां ते जिनमत मार्गनो एतले सम्यग्दर्शनरूप मार्गनो जे कोइ **दु०** दुष्ट थको माठी बुद्धिनो धणी **अ०** विपरिणमावे फेरवे **ब०** घणा जीव **तं०** ते मार्गप्रते **ति०** निंदाये करीने **भा०** वासना घाले परने तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २३.

[बा.४१२] **आ०** जेणे आचार्य **उ०** उपाध्यायने समीपे **सु०** श्रुत विनय चारित्र **गा०** ग्रह्यो **तं०** ते ही ज आचार्य उपाध्यायप्रते **खिं०** निंदे ते बाल अज्ञाने तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २४.

[बा.४१३] **आ०** आचार्य ते धर्मोपदेशदाता **उ०** उपाध्याय ते द्वादशांगी भणावे **स०** सम्यग् प्रकारे **णो०** नही साचे मने भक्ति करे **अ०** गुरुनी पूजा-सेवा न करे तथा **थ०** अहंकारी ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २५.

[बा.४१४] **अ०** अबहुश्रुत थको **जे०** जे कोइ **सु०** श्रुते करीने आत्माप्रते **प०** श्लाघे 'हुं बहुश्रुती छुं, माहरे बराबर बीजो कोइ नथी' **स०** सज्झायनो वाद **व०** वदे जे 'हुं अनेरे शास्त्रगुणाये जोइये कोण घणो भण्यो' इत्यादिक

सझाय वाद करे अथवा सझायनो वाद वदे, केणे पूछ्यो जे 'बहुश्रुत साधु सांभल्या छे ते तुम्हे ?' तिवारे कहे जे 'हूं' ए सभावनो वदवो ते पिण **म०** महामोहनीय कर्म **प०** बांधे २६.

[बा.४१५] **अ०** तपस्वी नथी जे कोइने **त०** तपे करीने **प०** पोताना आत्माने श्लाघे 'हुं तपस्वी छुं' एम कहे **स०** सर्वलोक थकी उत्कृष्टो चोर भगवंतनो भाव चोर माटे **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २७.

[बा.४१६] **सा०** उपगारने अर्थे **जे०** जे कोइ आचार्यादिकने **गि०** गिलाणपणे तथा रोगविशेषे उपस्थित टूकडो आव्यो ते **प्प०** समर्थ थको उपदेशे करी तथा ओषधादिक आंणी देवे करी **कु०** न करे ग्लाननी वेयावच स्या माटे करे मनमांहे एम जांणे **म०** माहरो **पे०** कार्य न करे तो हूं स्या भणी करुं २८. **स०** धूर्त्त **णि०** मायाने विषे प्रज्ञा चतुराइ छे जेहनी माया करी कहे 'हूं गिलाणनो वेयावच ओषध उपचार करुं छुं' एहवे दुष्ट **क०** कलुष **चे०** चित्ते करीने आकुल-व्याकुल छे **अ०** आपणा आत्माने पिण मिथ्यात उपजावे अबोधिक भवांतरे धर्मनो अर्थ नथी ते **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे २९.

[बा.४१७] **जे०** जे कोइ **क०** कथा अधिकरणना करणहारा अनेक कुशास्त्रादिक ते अनेक प्राणी जीवने उपमर्दनना करणहारा **सं०** प्रयुंजे-विस्तारे **पु०** वली वली **स०** सर्व तीर्थी ते ज्ञान-दर्शन-चारित्र तेहनो भेद ते सर्वतीर्थनो नास तेहने अर्थे **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३०.

[बा.४१८] **जे०** जे कोइ **अ०** आधाकर्मिकादिक **जो०** जोग निमित्त वशीकरणादिक ते **सं०** प्रजुंजे-विस्तारे **पु०** वली वली **स०** श्लाघाने **हे०** हेते-अर्थे सखा मित्रने अर्थे **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३१.

[बा.४१९] **जे०** जे कोइ **मा०** मनुष्य संबंधी **भो०** भोग अथवा **प०** परलोक देवता संबंधी भोगने अर्थे **अ०** अतृप्तो थको **आ०** आस्वादे अभिलाषा करे सेवे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३२.

[बा.४२०] **इ०** ऋद्धि विमानादिकनी **जु०** द्युति सरीर-आभरणादिक **ज०** कीर्ति **व०** वर्ण सरीरनो तेह **दे०** देवताना **ब०** सरीरथी ऊपनी समर्थाइ **वी०** वीर्य तेजथी **ते०** तेह देवतानो अवर्णवाद बोले **बा०** अज्ञानी तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३३.

[बा.४२१] **अ०** देखतो नथी अने जे कहे हूं **प०** देखुं छुं केहने **दे०** देवता ज्योतिषी-वेमानिक तथा यक्ष-व्यंत्र विशेष तथा भवनपती **अ०** अज्ञानी थको **जि०** लोकनी पूजानो अर्थी तथा जिन ते अरिहंतनी पूजानो अर्थी पूजावां छे गोशालानी परे तो **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ३४.

[बा.४२२] **ए०** ए पूर्वोक्त ३० मोहनीना **गु०** स्थानक **वु०** कह्या तीर्थंकरे **क०** कर्मना कारण **चि०** नाना प्रकारना **व०** तेहना वधारणहार **जे०** जे **भि०** साधु वर्जे **च०** विचरे संयम मार्गे आत्माने गवेषतो थको ३५.

**जं०** जे कोइ पिण **जा०** जांणे **उ०** प्रव्रज्या लीधी **पु०** पहिली तथा पूर्वे कह्या ते **कि०** कार्य-अकार्य **ब०** घणे प्रकारे कर्म तथा मूर्खपणे **तं०** ते साहू यथायोग्य कार्य न सेवे यतीनो आचार सेवे **जे०** जेणे करीने **आ०** आचारवंत **सि०** हूइ ३६.

**आ०** आचारे करी गुप्तिवंत **सु०** सुद्ध निर्मल आत्मा **द०** दशविध यतीधर्मने विषे **ठि०** रहीने **अ०** प्रधान **त०** तिवारे पछे **व०** वमे **स०** पोतानो **दो०** दोष **वि०** दृष्टिविषसर्प विष **मा०** अनेराने दीधो ते **ज०** वम्यो ते पाछो लेवो न वांछे तिम ज दूषण तथा कामभोग छांड्या पाछा न वांछे ३७.

**सु०** छांडीने **दो०** दोष हिंसादिक जेणे **सु०** ते सुद्ध आत्मा छे **ध०** श्रुत-चारित्र रूप धर्मनो अर्थी **वि०** जाण्यो

छे **प०** मोक्ष जेणे **इ०** इहलोकने विषे पिण **ल०** पामे **कि०** कीर्ति प्रशंसा **पे०** परलोके ते परभवे **सु०** अतिभली गति **व०** प्रधानने विषे जाइने ऊपजे ३८.

[बा.४२३] **ए०** एणीपरे विधि-गुण-दोषने **अ०** जांणीने **सू०** सूर परीसह सहवाने **प०** पराक्रम तप-संयमने विषे **स०** सर्व मोहनी थानकथकी **वि०** अति हि मुकाणा **जा०** जन्म-मरणना दुःख तेह थकी **मि०** (**म०**) अतिक्रम्या रहित थया ३९.

**त्ति०** श्रीसुधर्मा स्वामी शिष्यने कहे छे. **ण०** नवमो अध्ययन संपूर्ण थयुं ९.

## [दशमदशा निदानस्थानाध्ययनम्]

नवमे अध्ययने मोहनीना स्थानक कह्या. ते मोहथी कोइ भोगथी नियाणो करे. ते ऊपरे दशमे अध्ययने नियाणानो फल कहे छे.

[बा.४२४] **ते०** ते काल चोथा आराने विषे ते समयने विषे **रा०** राजगृह **णा०** नामे **ण०** नगर **हो०** हूंतो. **व०** तेहनो वर्णव जांणवो. **गु०** गुणशिल नामे **चे०** यक्षनो देहरो तथा उद्यान. **रा०** राजगृह **ण०** नगरने विषे **से०** श्रेणिक नामे **रा०** राजा **हो०** हूंतो. **व०** तेहनो वर्णव जाणवो. **ए०** एम **ज०** जिम **उ०** उववाइने विषे कोणिकनो वर्णव कह्यो **जा०** जिहां लगे **चे०** चेलणा रांणीने **स०** संगाथे सुख भोगवतो **वि०** विचरे छे. **त०** तिवारे पछे **से०** ते **से०** श्रेणिक राजा **अ०** एकदा प्रस्तावे **ण्हा०** स्नान कीधूं. **क०** कीधो कुलदेवतानो बलिकर्म प्रसिद्ध **क०** कीधा मस्तके तिलकादिक कोतुक दधि दूर्वा कुंभादि मंगलीक **पा०** स्वप्नादिक टालवाने **सि०** मस्तके **ण्हा०** न्हाइ **कं०** कंठने विषे **मा०** माला पहरी **आ०** पहिर्या **म०** मणि **सु०** सोनाना आभर्ण जेणे **क०** पहिर्या यथायोग्य हार १८ सर्या **अ०** ९ सरनो हार **ति०** तीन सरनो हार **पा०** झूंबणो उत्तरांग **प०** लांबो जहतो थको **क०** कणदोरा कडीना **सु०** भलीपरे कीधा छे **सो०** सोभाइ **पि०** पहिर्या **गे०** कोटना आभर्ण **अं०** अंगुलीना आभर्ण मुद्रिका **जा०** जिहां लगे **क०** कल्पवृक्ष समान **चे०** निश्चे **अ०** मुकुटादि करी अलंकृत थयो **वि०** वस्त्रादिके विभूषित **चे०** निश्चे **ण०** राजा **सको०** कोरंट नामा वृक्षना **म०** फूलनी **दा०** माला तेणे सहित **छ०** छत्र **ध०** धरी जता थका **जा०** जिहां लगे **स०** चंद्रमानी परे **प्पि०** प्रिय वल्लभ छे **दं०** दर्शन जेहनो **ण०** राजा **जे०** जिहां **बा०** बाहिरली **उ०** राजकुल मिलवानी सभा **जे०** जिहां **सी०** सिंघासण छे **ते०** तिहां **उ०** आवे आवीने **सी०** सिंघासण **व०** प्रधानने विषे **पु०** पूर्वदिशि सामुहो मुख करी **णि०** बेसे बेसीने **को०** कामना कर्णहारा पुर्षप्रते **स०** तेडावे तेडावीने **ए०** एम **व०** कहे.

[बा.४२५] **ग०** जावो **तु०** तुम्हे **दे०** हे देवानुप्रिय ! सरलस्वभाविन् ! **जा०** जे केइ **इ०** ए आगल कहस्ये ते **रा०** राजगृह **ण०** नगरने **ब०** बाहिर छे **तं०** ते कहे छे **आ०** रमे स्त्री-पुर्षना घर ते बाग मांहे ते आराम १ **उ०** फूलादिक सहित ते उद्यान २ **आ०** लोहार कुंभारना स्थानक ३ **आ०** यक्षना घर ४ **दे०** शिखरबंध देहरा ५ **स०** राजसभा ६ **प्प०** पाणीना दाननी शाला ७ **प०** क्रियाणानां **गि०** घर शब्दे हाट ८ **प०** क्रियाणानी शाला ९ **जा०** रथनी शाला १० **छु०** चूंन जिहां कमाइये सूधी परे कीजे ११ **वा०** जिहां घणा लोक मिलीने व्यापार करे ते १२ **ए०** इम ज **क०** काष्ठ वेचवाना ठाम काष्ठ जिहां घडीजे १३ **इ०** कोयला कर्वाना ठाम १४ **व०** वण कर्म ते जिहां नीला वृक्ष कपाव्या होइ १५ **द०** दाभ खडक समूह प्रमुखना काम थाइ ते १६ **जे०** जे **त०** तिहां **व०** वनना रखपाल **म०** महर्द्धिक मोटा **अ०** अधिष्ठायकपणे प्रसिद्ध छे ते **चि०** रहे छे **ते०** तेहने **ए०** एम **व०** कहो.

[बा.४२६] **ए०** एम **ख०** निश्चे **दे०** हे देवानुप्रिय सरलस्वभावी ! **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **भे०** भेरी बजाइ ते तथा भंभा वाजिंत्र छे जेहने ते **आ०** एम आज्ञा देवे छे **ज०** जिवारे मोक्षसुखना वांछक **भ०** भगवंत **म०** महावीर

**आ०** स्वसंघनी आदिना करणहार **ति०** ४ प्रकार तीर्थना करणहार **जा०** जिहां लगे **सं०** मोक्षसुखना वांछक **पु०** पूर्वानुपूर्वे केडाकेडे **च०** विचर्ता थका **गा०** एक ग्रामथी बीजे ग्रामे ते अनुग्राम एणे रीते ग्रामथी अनुग्राम **दू०** उलंघता थका **जा०** जिहां लगे १७ भेदे संयम **त०** तप १२ भेदे करी **अ०** आपणा आत्माने भावता थका **इ०** इहां **मा०** आवे **त०** तिवारे **तु०** तुम्हे **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** महावीर **अ०** यथायोग्य **उ०** उपाश्रय सेज्या संथारादिक **अ०** आज्ञा देइजो **अ०** यथायोग्य **उ०** उपाश्रय सेज्या संथारादिक **अ०** आज्ञा देइने **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **भिं०** भेरी वजाडी तथा भंभा वाजिंत्र छे जेहने **ए०** एम अर्थ प्रयोजन **प्पि०** वल्लभपणो **णि०** जणावजो.

[बा.४२७] **त०** तिवारे पछे ते **को०** आज्ञाकारी **पु०** पुर्ष **से०** श्रेणिक राजाइं **भिं०** भिंभसार **ए०** एम **वु०** कह्यो थको सांभलीने **ह०** हर्ष संतोष पाम्यो **जा०** जिहां लगे हियाने मांहे **क०** हाथ जोडीने **जा०** जां लगे **ए०** एम **सा०** हे स्वामिन् ! **त०** तहत्ति प्रमाण **आ०** आज्ञा **वि०** विनय करी **प०** सांभले अंगीकार करे. **ए०** एम **सा०** हे स्वामिन् ! **त०** तहत्ति प्रमाण **आ०** आज्ञा **वि०** विनय करी **प०** सांभले अंगीकार करीने **से०** श्रेणिक **र०** राजाना **अं०** समीप थकी **प०** नीकले नीकलीने **रा०** राजगृह **ण०** नगरने **म०** मध्योमध्य थइ **णि०** नीकले नीकलीने **जा०** जे **इ०** ए आगल कहे ते **रा०** राजगृह **ण०** नगरने **ब०** बाहिर **आ०** आराम नगर टुकडा **जा०** जिहां लगे **जे०** जे **त०** तिहां **म०** अधिकारी रखवाला अधिष्ठाता **आ०** आज्ञाइं **चि०** रहे छे. **ते०** ते प्रते **ए०** एम **व०** कहे बोले **जा०** जिहां लगे **से०** श्रेणिक **र०** राजाना **ए०** ए अर्थ प्रयोजन **प्पि०** वल्लभ **णि०** जणावज्यो **म०** मोटो **प्पि०** प्रिय **भ०** होवो स्वामी तुमने इम **दो०** बीजी वार **ए०** एम **व०** कहे कहीने **जा०** जे दिशथी **पा०** प्रकट थया आव्या हूंता **ता०** ते ही ज **दि०** दिशि **ण०** नगरीने **प०** पाछा गया.

[बा.४२८-४३०] **ते०** तेणे काले तेणे समये **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर **आ०** तीर्थनी आदिना करणहार **ति०** तीर्थना कर्णहार **जा०** जिहां लगे **गा०** ग्रामानुग्रामे **दू०** उलंघता विहार कर्ता **जा०** जिहां लगे **अ०** आपणा आत्माने भावता थका **वि०** विचरे. **त०** तिवारे पछे **रा०** राजगृह **ण०** नगरने विषे **सिं०** तिखूंणा मार्ग **ति०** तीन रथ आवे जावे **च०** अनेक मार्ग एकठा **जा०** जिहां लगे **प०** पर्षदा वांदिवा नीकली **जा०** जावत् **प०** सेवा भक्ति करे छे **त०** तिवारे पछे ते **म०** अधिकारी रखवाला **जे०** जिहां **स०** तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर छे **ते०** तिहां **उ०** आवे आवीने **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीरप्रते **ति०** तिन वार **वं०** स्तुति करे **ण०** नमस्कार करे **वं०** स्तुति करीने **ण०** नमस्कार करीने **णा०** नाम गोत्रप्रते **पु०** पूछे पूछीने **णा०** नामगोत्रप्रते **प०** धारे धारीने **ए०** एकठा मिले **ए०** एकठा मिलीने **ए०** एकांते **अ०** जावे एकांते जइने **ए०** एम **व०** बोल्या. **ज०** जेहनो **दे०** सरलस्वभाविन् ! **से०** श्रेणिक **भिं०** भिंभसार जेहने भेरीनो वाजिंत्र वल्लभ छे **दं०** दर्शन देखवा **कं०** वांछे छे. **ज०** जेहनो **दे०** अहो देवताना वल्लभ **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **दं०** दर्शन देखवाने प्रार्थे छे तथा तेहवा सहायी कन्हे आवे अहो मुजने श्रीमहावीरनो **दं०** दर्शन देखाडो **ज०** जेहनो **दे०** हे सरलस्वभाविन् ! **से०** श्रेणिक राजा **दं०** दर्शन अभिलाषा करे ए अत्यंत रूडो एहवो कहे. **ज०** जेहनो **दे०** हे सरलस्वभावी ! इत्यादिक बोल कह्या. **ज०** जेहनो **दे०** हे देवानुप्रिया ! **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **भिं०** भिंभसार **णा०** नामगोत्र पिण **स०** सांभलीने **ह०** हर्ष **तु०** संतोषवंत **जा०** ज्यां लगे **भ०** व्हे. **से०** तिके **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** महावीर **आ०** स्वतीर्थना आदिकर्ता **ति०** धर्मतीर्थना कर्ता **जा०** जिहां लगे **स०** सर्व जांणे **स०** सर्व **द०** देखे **पु०** अनुक्रमे विहार कर्ता **गा०** एक ग्रामथी बीजे ग्राम ते अनुग्राम ते प्रते **दू०** उलंघता थका **सु०** सुखे सुखे ते संयमने अथवा सरीरनी अबाधारहित **जा०** जिहां लगे **वि०** विचर्ता थका **इ०** इहां राजगृहे आव्या **इ०** इहां गुणशिल चेत्ये प्राप्त हूवा **जा०** जिहां लगे **अ०** आत्माने भावता थका **स०** सम्यक् प्रकारे **वि०** विचरे **तं०** ते माटे **ग०** चालो **दे०** हे सरलस्वभाविन्

! **से०** श्रेणिक **र०** राजाने **ए०** एह अर्थ परमार्थ **प्पि०** वल्लभ **णि०** जणावणो **प्पि०** वल्लभ वार्ता तुमने **भ०** व्हे **त्ति०** एम करीने **ए०** एह अर्थप्रते **अ०** माहोमांहे **प०** अंगीकार करे करीने **जे०** जिहां **रा०** राजगृह नामा **ण०** नगर छे **ते०** तिहां **उ०** आवे आवीने **रा०** राजगृह **ण०** नगरने **म०** मध्योमध्य थइने **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक **र०** राजानो **गि०** घर छे **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक **रा०** राजा छे **से०** तिहां **उ०** आवे आवीने **से०** श्रेणिक **रा०** राजाप्रते **क०** बि हाथ एकठा करी **जा०** जिहां लगे स्वदेशे जय करी **वि०** परदेशे विजय करी एहवे शब्दे **व०** वधावे वधावीने **ए०** एम **व०** बोल्या **ज०** जेहने **सा०** हे सामी **दं०** देखवो **कं०** वांछे छे **जा०** जिहां लगे **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** महावीर देव **गु०** गुणशिल नामा **चे०** चेत्यने विषे **जा०** जां लगे **वि०** विचरे **त०** तिवारे **दे०** हे देवानुप्रिया ! तुमने **प्पि०** वल्लभ वार्ता **णि०** जणावां छां **प्पि०** प्रिय तुमने इष्ट वस्तु **भ०** होवे.

[बा.४३१-४३३] **ते०** तिवारे पछे ते **से०** श्रेणिक राजा **ते०** ते पुरषांने **अं०** समीपे **ए०** एह अर्थप्रते **सो०** सांभलीने **णि०** हृदयमांहे धरीने **ह०** हर्ष **तु०** संतोषवंत **जा०** जिहां लगे **हि०** हृदो विकस्यो **सी०** सिंहासणथी **अ०** ऊठे ऊठीने **ज०** जिम **को०** कोणिक राजानी परे **जा०** ज्यां लगे एम **वं०** वांदे **वं०** वांदीने **ण०** नमस्कार करे करीने **ते०** ते **पु०** पुर्षने **स०** वस्त्रादिके करी पूज्या **स०** वचने करी सन्मान्या **स०** वस्त्रादि करी पूजा करीने **स०** वचने करी सन्मानीने **वि०** विस्तीर्ण **जी०** आजीविका योग्य **पी०** भगवंतने रागे करीने दान **द०** दीधो दान देइने **प०** पाछा वल्या सीख दीधी देइने **ण०** कोटवालप्रते **स०** बोलावे बोलावीने **ए०** एम **व०** कहतो हूओ **खि०** उतावला थाओ **दे०** अहो देवानुप्रिय ! सरलस्वभाविन् ! **रा०** राजगृह **ण०** नगरने **स०** मांहि अने **ब०** बाहिर सहित **आ०** पाणी छांटवे करी सींचो **स०** कचरो टालवे करी पूंजो **उ०** छांणे करी लीपवो **जा०** जावत् एतला वांना करी **प०** पाछी आज्ञा सोंपो. **त०** तिवारे **से०** ते **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **ब०** सेनानो प्रवर्तावक तेहने **स०** तेडे तेडीने **ए०** एम **व०** कहे **खि०** उतावला थाओ **भो दे०** अहो देवानुप्रियाओ ! **ह०** घोडा **ग०** हाथी **र०** रथ अने **जो०** योध ते पाला **क०** ते सहित **चा०** च्यार अंग छे ते सेनाना **से०** ते सेना **स०** सज्ज तयार करो **जा०** जावत् **ते०** ते सेना पिण सज करी **प०** आज्ञा पाछी सोपो. **त०** तिवारे **से०** ते **से०** श्रेणिक राजा **जा०** रथ वहलवान पुर्षने **स०** तेडे तेडीने **ए०** एम **व०** कहे **खि०** उतावला थाओ **भो०** अहो देवानुप्रियाओ ! **ध०** धार्मिक ते शीघ्र चालवानो स्वभाव छे एहवा **जा०** रथ **प्प०** प्रधान **जो०** जोतरीने **उ०** इहां आंणो. **म०** माहरी **ए०** एहवी **मा०** आज्ञा **प०** पाछी आपो. **त०** तिवारे **से०** ते पुर्ष **जा०** रथनी शालानो मालिक **से०** श्रेणिक **र०** राजाइं **ए०** एम **वु०** कह्यां थकां **ह०** हर्ष **तु०** संतोष पाम्या **जा०** जावत् **हि०** हृदये उल्हास पाम्यो **जे०** जिहां **जा०** रथनी शाला छे **ते०** तिहां आवे आवीने **जा०** रथनी शालामे **अ०** प्रवेश करे करीने **जा०** रथांप्रते **प०** ऊंचा नीचा देखे देखीने **जा०** रथांने **प०** ऊपरा ऊपरे हता ते हेठा उतारे उतारीने **जा०** रथने **सं०** पूंजे झाटके रज झाटकीने **जा०** रथांप्रते **णी०** शालाथी बाहिर काढे काढीने **ज०** रथने **सं०** एकठा करे करीने **जा०** रथांने ढक्या हता ते **दू०** वस्त्र **प०** उतारे उतारीने **जा०** रथने सांतरो कीधूं बेसवा योग्य **क०** करे करीने **जा०** रथांने **व०** प्रधान **भं०** आभरणे करी **मं०** मंडित **क०** करे करीने **जे०** जिहां **वा०** बलदांनी **सा०** शाला छे **ते०** तिहां **उ०** आवे आवीने **वा०** बलदांनी शालामांहे **अ०** पेसे पेसीने **वा०** बलदांनी योग्यता **प०** देखे देखीने **वा०** बलदांनो शरीर **सं०** पूंजे पूंजीने **वा०** बलदांने **अ०** मोर थापलवे करीने तेज चढावे तेज चढावीने **वा०** बलदांने शालाथी **णि०** बाहिर काढे काढीने **वा०** बलदांने माछरादिकने काजे **दू०** वस्त्र ओडाव्या छे ते **प्प०** दूरा करे करीने **वा०** बलदांने **स०** तयार करे ते योत्रादिके करे करीने **वा०** बलदांने **व०** प्रधान **मं०** आभर्ण भूषणे करी मंडित **क०** करे करीने **जा०** रथांने **जो०** जोतरे जोतरीने **व०** मार्ग सन्मुख **गा०** स्थापे स्थापीने **प्प०** परांणी लाकडी तथा तालणादिक प्रयोग **धा०** हाथे

लेइने **स०** सम्यक् सज तयार करी रथ ऊपर **आ०** चढे चढीने **अं०** विचाले **स०** रथ ऊभा राखे राखीने **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक **रा०** राजा छे **ते०** तिहां आवे आवीने **त०** तिवारे पछे **क०** हाथ जोडीने **जा०** जावत् **ए०** एम **व०** कहे **जु०** जोतरीने तयार करीने आंण्या **सा०** हे स्वामिन् **ध०** धार्मिक **जा०** रथ **प्प०** प्रधाने **अ०** अति ही आदरवंत **भ०** कल्याणीक वचने करी कह्या.

[बा.४३४-४३५] **त०** तिवारे **से०** ते **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **भं०** भंभसार **जा०** रथवान पुर्षने **अं०** समीपे **ए०** एहवा **म०** अर्थ **सो०** सांभली **नि०** हृदे धारीने **ह०** हर्ष **तु०** संतोष पाम्या **जा०** यावत् **म०** स्नानना घरमे **अ०** प्रवेश करे. **जा०** जावत् **क०** कल्पवृक्ष समान थइने **अ०** अलंकृत **वि०** विभूषित थयुं **ण०** मनुष्यांनो इंद्र **जा०** जावत् **म०** स्नानना घरथकी **प०** नीकले नीकलीने **जे०** जिहां **चि०** चेलणा **दे०** रांणी छे **ते०** तिहां आवे तिहां आवीने **चे०** चेलणा **दे०** रांणीने **ए०** एम **व०** कहे **ए०** एम **ख०** निश्चे **दे०** हे देवानुप्रिय ! **स०** श्रमण भगवंत श्रीमहावीर **आ०** धर्मनी आदिना करणहार **ति०** तीर्थ ४ना कर्ता **जा०** यावत् **पु०** अनुक्रमे **च०** विचरता **जा०** यावत् **सं०** संयम १७ भेदे **त०** तप १२ भेदे करी **अ०** पोतानी आत्माप्रते **भा०** भावता थका **वि०** विचरे छे. **तं०** ते माटे **म०** मोटो फल छे **ख०** निश्चे **दे०** हे देवानुप्रिय ! **त०** तथारूप जेहवा हूवे तेहवा ज **अ०** अरिहंत **जा०** जावत् **तं ग०** ते माटे चाल्यो **दे०** हे देवानुप्रिये ! **स०** श्रमण भगवंत श्रीमहावीरने **वं०** वांदीइं **ण०** नमस्कार करीये **स०** सत्कार ते अभ्युत्थानादि **स०** सन्मान ते वस्त्रादिके **क०** कल्याण हेतु **मं०** दुर्गत उपशम हेतु **दे०** इष्ट देवनी परे **चे०** तेहना चेत्यनी परे **प०** सेवा भक्त करां. **ए०** एतला बोल कर्तां आपणने **इ०** एही ज भवे तथा **प०** परभवे **हि०** हितने काजे **सु०** सुखने काजे **ख०** योग्यताने काजे **नि०** मोक्षने काजे **जा०** जावत् **आ०** भव परंपराने काजे केडाकेडे **भ०** होस्ये.

[बा.४३६-४३८] **त०** तिवारे **सा०** तिका **चि०** चेलणा **दे०** रांणी **से०** श्रेणिक **र०** राजाने **अं०** समीपे **ए०** एहवा **म०** अर्थ **सो०** सांभलीने **नि०** हीये धारीने **ह०** हर्ष **तु०** संतोष पाम्या **जा०** यावत् **प०** वचन अंगीकार करे. करीने **जे०** जिहां **म०** स्नान करवानो **घ०** घर छे **ते०** तिहां आवे. आवीने **ण्हा०** स्नान करीने **क०**कीधा छे बलिकर्म देवपूजादिक **क०**कीधा **को०** कोतुक ते मषी तिलकादि **म०** दधि-दूर्वादि **पा०** माठा स्वप्नफल टालवानो उपाय दानादि **किं ते व०** ते स्यों कहवो ते **व०** प्रधान **पा०** पगने विषे नेउर झांझण **म०** मणिमय मेखला कट्याभर्ण **हा०** हार ९/१८ सर्या ते **र०** रच्यो छे हृदय **उ०** उपचित कीधा छे **क०** कडा कांकण **ए०** एक सर्या कंठाभर्ण **मु०** मावजियाद **ति०** त्रिण सर्या **व०** प्रधान **व०** आभरण **हे०** सोनाना **सु०** सूतणो कणदोरो **कुं०** कर्णे कुंडल **उ०** उद्योत कीधूं छे मुखने विषे **णा०** विविध रत्नना **भू०** आभूषणे करी **भू०** भूषितांग **ची०** चीन देशना अंशुक देशना नीपना **व०** वस्त्र **प्प०** प्रधान ते **प०** पहिर्या **दु०** वृक्षनी वाकना वस्त्र **सु०** सुकुमाल **कं०** कमनीक **र०** मनोहर **उ०** ओढणो **स०** सर्व ऋतुना **सु०** सुगंध **कु०** फूल **सुं०** प्रधान **र०** रच्या छे **प्प०** प्रलंब अति ही लंबायमान **सो०** सोभता **कं०** कोतकारी मनोहर **वि०** विकस्या फूल **चि०** विचित्र प्रकारनी मालाये **व०** प्रधान चंदने करी **च०** चर्च्यो छे अंग जेणे **व०** प्रधान आभरणे करी कीधूं छे विभूषितांग **का०** कृष्णागरादिक **धू०** धूपे करी **धू०** धूप्या थका सुवासित **सि०** लक्ष्मी देवी जेहवो वेस छे जेहनो **ब०** घणी जातिनी **खू०** कुब्जा ते दास्यांना समूह ते **चि०** चिलायत देशनी इत्यादि १८ देसनी दास्यां तेहवा **जा०** यावत् **म०** मोटा वृंद ते समूह तेणे **प०** वींटी थकी **जे०** जिहां **बा०** बाहिरली **उ०** उपस्थान शाला छे **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक राजा भंभसार नामे छे **ते०** तिहां आवे आवीने **त०** तिवारे **से०** ते **से०** श्रेणिक राजा **चि०** चेलणा **दे०** रांणीने **सं०** संघाते **ध०** धार्मिक **जा०** रथ **प्प०** प्रधानप्रते **दु०** चढे चढीने **स०** सकोरंट नामे **म०** वृक्षना **दा०** फूलनी माला पहरीने **छ०** छत्र **ध०** धरीजतां थकां

**उ०** एम जिम उववाइ सूत्रनी परे कहवो **जा०** यावत् **प०** सेवा करे. **ए०** एम **चे०** चेलणा **दे०** रांणी पिण **जा०** जावत् **म०** मोटा मनुष्यांना **वं०** वृंद तेणे **प०** वींट्यो थको **जे०** जिहां **स०** श्रमण भगवंत श्रीमहावीर छे **ते०** तिहां आवे. आवीने **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत पूज्य **म०** श्रीमहावीरने **वं०** वांदे **ण०** नमस्कार करे. **वं०** वांदीने **ण०** नमस्कार करीने **से०** श्रेणिक राजाने **पु०** आगल **का०** करीने **ठि०** ऊभी थकी ज **जा०** जावत् **प०** सेवा करे **त०** तिवारे **से०** ते **स०** श्रमण भगवंत श्रीमहावीर देव **से०** श्रेणिक **र०** राजाने **भिं०** भंभसारने अने **चि०** चेलणा **दे०** रांणीने **ती०** तेहवी ज **म०** मोटी **म०** मोटे विस्तारे करीने **प०** पर्षदामांहे **इ०** ऋषीनी पर्षदामे **ज०** यतीनी **प०** पर्षदामे **दे०** देवतावांनी **प०** पर्षदामे **अ०** घणा ज सइकडा प्रमाणे **जा०** जावत् **ध०** धर्म **क०** भाख्यो. **प०** पर्षदा **प०** पाछी वली **से०** श्रेणिक राजा पिण **प०** पाछो गयो.

[बा.४३९] **त०** तिहां **ए०** केतला एक **णि०** साधुने अने **णि०** साधवीने **से०** श्रेणिक **रा०** राजाने **चि०** चेलणा **दे०** रांणीने **पा०** देखीने **इ०** एहवो एतादृशरूप **अ०** अध्यवसाय मनमे **जा०** जावत् **स०** ऊपनो **अ०** इति खेदवचने **से०** ए श्रेणिक राजा **म०** मोटी ऋद्धिनो धणी **जा०** यावत् **म०** मोटा सुखनो धणी **जे०** जेणे **ण्हा०** स्नान करीने **क०** कीधा बलिकर्म **क०** कीधा **को०** कोतुक **मं०** मंगलीक **पा०** माठा स्वप्नना दान **सं०** सर्वालंकारे करी **वि०** विभूषित कीधो सरीर **चे०** चेलणा **दे०** रांणीने **स०** संघाते **उ०** उदार प्रधान **भो०** मनुष्य संबंधी भोग **भुं०** भोगवतो थको **वि०** विचरे छे.**ण०** नही **दि०** देख्या **मे०** अमे **दे०** देवता **दे०** देवलोकना ए सरीखा **स०** प्रत्यक्ष **ख०** निश्चे **दे०** एही ज देवता **ज०** जो **इ०** ए अम्हारो **त०** तप १२ **णि०** अभिग्रह विशेष **बं०** ब्रह्मचर्यनी गुप्तिना **फ०** फल **वि०** वृत्तिना **वि०** विशेष **अ०** छे तो हिवे **व०** मुजने पिण **आ०** आवते भवे **ए०** एतादृशरूप **उ०** प्रधान **मा०** मनुष्य संबंध्या **का०** काम अने भोग **भुं०** भोगवता थका **वि०** विचरीये. **से०** हवे तेह ज भलो निदान फल थाज्यो.

[बा.४४०] **अ०** आश्चर्यकारी **चि०** ए चेलणा रांणी **म०** मोटी ऋद्धिवंत **जा०** जावत् **म०** मोटा सुखना धणी **जे०** जेणे **ण्हा०** स्नान करीने **क०** कीधा **ब०** बलिकर्म देव पूजा **जा०** यावत् **स०** सर्वालंकारे करी **वि०** विभूषित सरीर करीने **से०** श्रेणिक **रा०** राजाने **सं०** संघाते **उ०** उदार ते प्रधान **जा०** जावत् **मा०** मनुष्य संबंध्या **भो०** भोगप्रते **भो०** भोगवती थकी **वि०** विचरे. **ण०** नही **मे०** मे **दि०** दीठी **दे०** एहवी देव्यां **दे०** देवलोकने विषे. **स०** प्रत्यक्ष देखी **ख०** निश्चे **अ०** एह ज **दे०** देवी. **ज०** जो **इ०** एह **सु०** भला आचरण **त०** तप **णि०** अभिग्रहादि **बं०** ब्रह्मचर्य वसिवो **क०** कल्याणकारी **फ०** फलनी **वि०** वृत्ति **वि०** विशेष जो **अ०** छे तो **व०** अमे पिण **आ०** आगम्ये काले **इ०** एहवा **ए०** एतादृशरूप **उ०** प्रधान **जा०** जावत् **वि०** विचरीये. **से०** अथ ते ए निदान **सा०** साधवीइं कीधूं.

[बा.४४१-४४३] **अ०** हे आर्यो ! इसो संबोधन देइ **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर स्वामी **ते०** ते **ब०** घणा **णि०** साधवांने अने **णि०** साधव्यांने **आ०** आमंत्रण देइ **ए०** एम **व०** कहे **से०** श्रेणिक राजा **चि०** चेलणा **दे०** रांणीने **पा०** देखीने **इ०** एतादृश रूप **अ०** अध्यवसाय चिंता प्रार्थना **जा०** यावत् मनोगत संकल्प **स०** ऊपना **अ०** आश्चर्यकारी **से०** श्रेणिक **रा०** राजा **म०** मोटो ऋद्धिवंत **जा०** यावत् सर्व कहवो **से०** एहवो निदान **सा०** साधुवो कीधू. **अ०** आश्चर्यकारी **चि०** चेलणा **दे०** रांणी **म०** मोटी ऋद्धिवंत **सुं०** सुंदर **जा०** यावत् **से०** अथ ते ए **सा०** साधवीइं निदान कीधूं. **से०** ते **णू०** निश्चे **अ०** हे आर्यो ! **अ०** ए अर्थ समर्थ सत्य छे इसो स्वामी पूछ्ये साधु कहे **हं०** हां स्वामी **अ०** सत्य छे. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** कह्यां **इ०** ए प्रत्यक्ष ही ज **नि०** निर्ग्रंथना **पा०** प्रवचन सिद्धांत ५ समित ३ गुप्तरूप **स०** सत्य अने **अ०** प्रधान **प०** प्रतिपूर्ण **के०** केवल **सं०** दोषरहित **णे०** न्याय मार्ग **स०** मायादि शलनो काटणहार **सि०** सिद्धगतिनो

मार्ग **मु०** निर्लोभनो मार्ग **नि०** जन्म-जराथी नीकलवानो मार्ग **नि०** शीतलीभूत थावानो मार्ग **अ०** सत्य विपरीतपणा रहित **वि०** अति हि निरमल **स०** सर्व **दु०** दुःख **प्प०** खपावानो **म०** मार्ग **इ०** इहां **ठि०** रह्या थका **जी०** जीव **सि०** सिद्ध थाइ **बु०** तत्त्व बूझे **मु०** सर्व कर्मथकी मूकाये **प०** परिनिवृत्ति सीतलीभूत थाइ **स०** सर्व **दु०** दुःखनो **मं०** अंतकरे. **ज०** जे चारित्ररूप **ध०** धर्मने विषे **णि०** साधू **सि०** आसेवन-ग्रहण शिक्षाने विषे एतले ए बिहूं पिण चारित्रनी शिक्षाने विषे **वि०** विचरतां थकां **पु०** आगला भवनी चिंताये **दि०** भूख पीडाने **पु०** आगला भवनी चिंताये **पि०** तृषाइं पीड्यो **पु०** आगला भवनी चिंताये **वा०** ताढ **त०** तापे करी **पु०** फर्स्यो **वि०** नाना प्रकारना **प०** परीसह २२ ते रूप **उ०** उपसर्ग खमतां खमतां **उ०** उदे थयुं **का०** कामकंदर्पनो विकार **जा०** एहवो थयो थको **वि०** विचरे. **से०** ते एहवो थको पिण साधू वली **प०** तप संयमने विषे पराक्रम करे ते **प०** पराक्रम कर्ता **पा०** देखे. **जे०** जे **इ०** ए आगल कहस्ये ते **उ०** उग्रजातना ऊपना **उ०** उग्रपुत्त **म०** मोटा शीलरूपादि सहित तेहनी माता ते महामातृक **भो०** भोग कुलना ऊपना ते **भो०** भोगपुत्र मोटा शीलरूपादि सहित माता जेहनी ते महामातृक **ते०** तेमां कोइ एक **अ०** अनेरो **अ०** बाहिरथी घरे आवतांने **नि०** घरथी बाहिर नीकलतांने तेहने **पु०** आगलि **म०** मोटा **दा०** दास-दासीना वृंद **किं०** 'कांइ करां' इम पूछीने कार्य करे **क०** विनां पूछ्ये कार्यकारक पुर्ष **अं०** पाला पुरुषांनो समूह तेणे **प०** वींट्यो **छ०** केइ छत्र धारे छे **भिं०** केइ पाणीनी झार्यां **ग०** ग्रहीने **णि०** नीकले छे. **त०** तिवारे पछे अनेरा **च०** वली **पु०** मुख आगले **म०** मोटा कोतुल घोडा **आ०** तेमां वली प्रधान घोडा **उ०** बिहूं पासे **से०** तेहने **णा०** हाथी वली **णा०** प्रधान हाथी **पि०** पूठ पाछे **र०** रथ अने **र०** प्रधान रथांनी **सं०** वेल **से०** मस्तके **ध०** धर्युं छे **से०** स्वेत रूपामय आताप टालवाने किरणीओ **अ०** ऊंचा कर्या **भिं०** झार्यांना मुख **प्प०** प्रकर्षे ग्रह्या छे ताडपत्रना वींजणा जेणे **प्प०** वींजे छे वायरो अने **से०** स्वेत वर्णे **चा०** चमरी गायना पूंछना **वा०** केश तेणें **वी०** वींजे छे **अ०** वारं वार **अ०** बाहिरथी मांहे आवे **णि०** मांहीथी बाहिर जाये **स०** प्रभावंत छे **स०** प्रथम प्रहर अने **अ०** पाछले प्रहर वली **ण्हा०** स्नान करे **क०** कीधा बलिकर्म देवपूजादि **जा०** जावत् **स०** सर्व ही **अलं०** सृंगारे करी अलंकृत **वि०** विभूषित थयो छे पछे **म०** मोटी **म०** मोटा विस्तार रूप **कू०** कूटाकार **सा०** शालाने विषे **म०** मोटो **म०** मोटे ज विस्तारवंत **सी०** सिंघासनने विषे **जा०** जावत् **स०** आखी संपूर्ण **रा०** रात्रि **जो०** ज्योति ते विराकां **ज्झि०** बलती थकी **इ०** स्त्रियांना **गु०** समूह तेणे **प०** वींट्यो **म०** मोटे विस्तारे करी **आ०** हण्या थका **ण०** मृदंग ते साथे **ण०** नाचवो नृत्य करवो **गी०** गाववो **वा०** सुरणाइ प्रमुख वाजवे **तं०** सारंगी आदि **त०** कांसीया **ता०** हाथना तालोटा **तु०** छमछमा **घ०** मेघनी ध्वनि तिम जेहना घोष **मु०** मृदंग **म०** मादल **प्प०** मोटा पडह ते ढोल **र०** एतलाना शब्द ते **उ०** प्रधान तेणे करी **मा०** मनुष्यसंबंधी **भो०** ५ इंद्रिय **भो०** भोग ते **भुं०** भोगवता थका **वि०** विचरे. **त०** तेहने **ए०** एक पुर्षने पिण **आ०** प्रयोजन भलाव्ये थके **जा०** जावत् **च०** च्यार **पं०** पांच पुरुष **अ०** अणतेड्या थका ते **अ०** ऊठीने आवे **भ०** कहो **दे०** देवानुप्रिय ! **किं०** कांइ करां ? **किं०** किसी वस्तु आणी आपां ? **किं०** किस्युं **उ०** ल्यावां ? **किं०** किस्युं पहिरस्यां ? **किं०** किसी **भे०** तुमारे **हि०** हीये **इ०** वांछा छे ? **किं०** किस्यो **ते०** आपरा मुखने **स०** सदे छे गमे छे ?

[बा.४४४-४४५] **जं पा०** एहवी परे देखी **णि०** निर्ग्रंथ साधू **णि०** निदान **प०** करे **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप तथा **सं०** संयम तथा **बं०** ब्रह्मचर्ये वस्या तेहनो फल व्हे तो अमने थाज्यो **तं०** इम तिम ज **जा०** जावत् **सा०** भलो **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **णि०** निर्ग्रंथ एहवो **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते स्थानक **अ०** आलोयां विनां **प०** निवर्त्यां विनां **का०** मरणने अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अनेरा ही **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजणहारो **भ०** हूवे. **म०** मोटो ऋद्धिवंत **जा०** जावत् **चि०** घणा कालनी स्थिति लगे. **से०** ते साधु **त०** तिहां **दे०** देवता **भ०** व्हे. **म०** मोटी ऋद्धिनो धणी **जा०** जावत् **चि०** घणा काल

लगे सुख भोगवीने **ता०** ते **दे०** देवलोकथकी **आ०** आउखो पूरो करी **भ०** भव पूरो करी **ठि०** स्थिति पूरी करीने **अ०** आंतरारहित **च०** चवे चवीने **जे०** जे **इ०** इहां **उ०** उग्र कुलना ऊपना **म०** मोटो छे शीलगुण युक्त एहवी जेहनी माता तेहने **भो०** भोग्य कुलना ऊपना एहवी **म०** मोटा शीलगुणोपेत माता **ते०** तेहना **अ०** अनेराइ एक **कु०** कुलने विषे **पु०** पुत्रपणे **प०** ऊपजे **से०** ते **त०** तिहां **दा०** बालक **भ०** हूवे **सु०** सुकुमाल छे **पा०** हाथ-पगना तला जेहना **जा०** यावत् **सु०** भलो रूपवंत. **त०** तिवारे **से०** ते **दा०** बालक **उ०** मूकांणो **बा०** बाल भावथकी **वि०** विज्ञान **प०** परिणम्यो छे जेहने **जो०** जोवन वय अनुक्रमे **प०** पाम्यो **स्स०** पोते ज **पे०** पितानो **दा०** धन संग्रह करीने **प०** अंगीकार करे. **त०** ते बाहिरथी घरमे **अ०** आवताने तथा **नि०** घरथी बाहिर जातांने नीकलतांने **पु०** आगले इत्यादि पूर्वोक्त **जा०** यावत् **म०** मोटा **दा०** दासी दासना वृंद **जा०** जावत् **किं०** किस्यो **ते०** तुमारा **आ०** मुखने **स०** सदे छे **त०** तेहने **त०** तथाप्रकारना **पु०** उग्रकुल-भोगकुलना ऊपना पुर्षनी जातीने **त०** तेहवा ज तथारूप गुणवंत **स०** श्रमण साधू तथा **मा०** श्रावक **उ०** बिहूं काल प्रभाते अने दोपारे **के०** केवली प्ररूप्यो **ध०** धर्म **मा०** कहे सुणावे ? ए प्रश्न. उत्तर-हां **मा०** सुंणावे. **से०** ते पुरुष **प०** सांभले आदर करे ? ए प्रश्न. उत्तर – **णो०** नही ए अर्थ समर्थ. **अ०** अयोग्य छे **से०** तेह पुर्ष **त०** तेह त्याग रूप **ध०** धर्म **स०** सांभलवाने. **से०** ते वली **म०** एम हूइ **म०** मोटी तृष्णा जेहने **म०** मोटो आरंभ छे जेहने **म०** मोटो **प०** परिग्रह छे जेहने **अ०** अधर्मी **जा०** यावत् **दा०** दक्षिण दिशि **ण०** नरकने विषे **णे०** नारकीपणे **उ०** उपजणहार **भ०** व्हे अने **आ०** आगमे काले **दु०** दुर्लभ **बो०** बोधि बीज सम्यक्त्वनो लाभ व्हे. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंत ! **त०** तेह **णि०** निदाननो **इ०** एहवो एतादृशरूप **पा०** पापकारी **फ०** फल **वि०** विपाक लागे **जं०** जे माटे **णो०** नही **सं०** समर्थ **के०** केवली **प०** प्ररूप्या **ध०** धर्म **प०** आदरिवाने १.

[बा.४४६-४४८] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** श्रमण आउखावंत ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **तं०** ते कहे छे **इ०** एह ज प्रत्यक्ष **नि०** निर्ग्रंथना **पा०** प्रवचन **जा०** जावत् **स०** सर्व **दु०** दुःखनो **अं०** अंत **क०** करे. **ज०** जेह **ध०** धर्म **णि०** निर्ग्रंथी साधवी **सि०** आसेवन ग्रहण शिक्षाने विषे **उ०** सावधान थइने **वि०** विचरतां थकां **पु०** पहिला **दि०** भूख तृषा **जा०** जावत् **उ०** सहतां थकां **का०** कामोदय थइ थकी **वि०** विचरे. **सा०** ते निदान कीधू वली **प०** पराक्रम करे **सा०** ते वली **प०** पराक्रम कर्तां थकां **पा०** देखे **से०** ते जेह **इ०** ए प्रत्यक्ष **इ०** स्त्रियां **भ०** हूवे. **ए०** ते आखा घरमे एक ही ज जास पुत्री हूवे **ए०** एक जातिना सोना-रूपा-रत्नना आभर्णे **पि०** ढांकी थकी **ते०** अत्तरना तेलनी **पे०** सीसानी परे **सु०** रूडे यतने राखे **चे०** वस्त्रनी **पे०** पेटीनी परे **सु०** भली परे ग्रहीने राखे छे **र०** रतनना **क०** करंडीया समान **ती०** तेहने **अ०** बाहिरथी घरमे आवतां तथा **णि०** घरथी बाहिर नीकलतां तथा **पु०** आगे **म०** मोटी **दा०** दासी **दा०** दास **जा०** जावत् **किं०** कांइ ते **आ०** तुमारा मुखने **स०** सदे छे ? **जे०** जेहने **पा०** देखीने **णि०** निर्ग्रंथी साधवी **णि०** निदान **प्प०** करे **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **सु०** भला आचार ते **त०** तप **णि०** नियम इत्यादि **जा०** जावत् **भुं०** भोगवती **वि०** विचरुं **से०** ते ए निदान **सा०** साधवीये कीधूं. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **णि०** ते साधवी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते **ठा०** निदानरूप स्थानक **अ०** आलोयां विनां तेहथी **अ०** निवर्त्यां विना **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **अ०** अनेरा ही **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजणहार **भ०** व्हे. ते देव **म०** मोटी ऋद्धिवंत **जा०** जावत् पूर्ववत् **सा०** ते साधवी **त०** तिहां **दे०** देवता **भ०** व्हे **जा०** जावत् **भुं०** देवसंबंधी भोग भोगवती **वि०** विचरे. **सा०** ते साधवी **ता०** तेणे **दे०** देवलोकथकी **आ०** आउखो-भव-स्थिति क्षय करीने **अ०** आंतरा रहित **च०** चवे चवीने **जे०** जे **इ०** ए जगत्रयमे **उ०** उग्र कुलना ऊपना **पु०** पुत्र ते **म०** निकलंक शीलाचारादिक **भो०** भोग कुलना ऊपना **पु०** पुत्र **म०** निकलंक शीलाचारादिके **ए०** एमांहिला **अ०** अनेरा एक **कु०** कुलने विषे **दा०** पुत्रीपणे **प०** उपजे.

**सा०** तेह **त०** तिहां **दा०** बालिका **भ०** हूवे **सु०** सुकुमाल छे **जा०** जावत् **सु०** भली रूपवंत. **त०** तिवारे ते बालिका **अ०** माता पिताये पालतां **उ०** मूकाणी **बा०** बालपणाना भावथी **वि०** विज्ञान **प०** परिणम्ये थके **जो०** जोवनावस्था अनुक्रमे **प०** पाम्ये थके **प०** सरीखा बिहुं कुल योग्य विवाह मेलीने **सु०** दान देइने **प०** प्रतिरूप रूपे करी **प०** एहवो प्रतिरूप **भ०** भर्तार लक्षणोपेतने **भा०** भार्या स्त्रीपणे **द०** देस्ये. **सा०** तिका **त०** तिहां **भा०** भार्या स्त्री **भ०** होस्ये **ए०** एका एकजात शोकना पुर्षरहित **इ०** इष्ट वल्लभ **जा०** यावत् **र०** रत्नना **क०** करंड्या **स०** समान रूडे राखे **ती०** तेहने **जा०** जावत् **अ०** बाहिरथी घरमां आवतांने **नि०** घरथी बाहिर जातां थकांने **पु०** आगले **दा०** घणा दासी-दासना वृंदे करी **जा०** जावत् **किं०** स्यों ते **आ०** तुमारा मुखने **स०** सदे छे. **ती०** तेह **त०** तथा प्रकारनी **इ०** स्त्री जातिने **त०** तथारूप **स०** श्रमण साधु तथा **मा०** 'मत हणो, मत हणो' इसी कहे ते **उ०** बिहूं काले प्रभाते दोपारे **के०** केवलि **प०** प्ररूप्यो **ध०** धर्म **मा०** कहे संभलावे ? ए प्रश्न. उत्तर – **हं०** हां धर्मप्रते **मा०** कहे. **सा०** ते स्त्री **भं०** हे भगवन् ! **प०** ते धर्मप्रते आदरे ? **णो०** नही ए अर्थ समर्थ. **अ०** अयोग्य छे **सा०** ते स्त्री **त०** ते केवली प्ररूप्यो **ध०** धर्म **स०** सांभलवाने. **से०** ते स्त्री **च०** वली **म०** मोटी इच्छा तृष्णा **म०** मोटो आरंभ **म०** मोटो **प०** परिग्रहवंत **जा०** जावत् **दा०** दाक्षिण दिशि **णे०** नर्कने विषे उपजे अने **आ०** आगमे काले **दु०** दोहिलो **बो०** सम्यक्त्वनो पामवो **भ०** हूवे. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **त०** तेहवा **णि०** निदाननो **इ०** एतादृशरूप **पा०** पापरूप **फ०** फलनो **वि०** रस उदे **जं०** जे भणी **णो०** नही **सं०** समर्थ **के०** केवली **प०** प्ररूप्यो **ध०** धर्म **प०** आदरिवाने. ए दूजो निदान२.

[बा.४४९-४५१] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंत ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** कह्युं ते **इ०** ए प्रत्यक्ष **नि०** निर्ग्रंथना **पा०** प्रवचन सिद्धांत **जा०** जावत् **अं०** अंत करे एतला लगे कहवो. **ज०** जेह **ध०** धर्मने विषे **णि०** साधु **सि०** आसेवन शिक्षादिक **उ०** आदरीने **वि०** विचरतां थकां **पु०** पहिला **दि०** भूख तृषादिक परिसह खमवा **जा०** जावत् **से०** ते वली **प०** पराक्रम कर्तां थकां **पा०** देखे **इ०** ए प्रत्यक्ष **इ०** स्त्रियां **भ०** हूवे छे ते **ए०** माता पिताने तथा भर्तारने पिण एक ही ज **जा०** जावत् **किं०** स्यो **ते०** तुमनें **आ०** खावो पीवो **स०** सदे छे. एहवी **जं०** जे **पा०** ते स्त्री देखीने **णि०** निर्ग्रंथ साधु **णि०** एहवो निदान **प०** करे जे **दु०** दुखकारी **ख०** निश्चे **पु०** पुर्षपणो **जे०** जे **इ०** ए प्रत्यक्ष **उ०** उग्रकुलना ऊपना **म०** मोटो शील कुलाचारादिक **भो०** भोग पुत्र ते भोग्य कुलना ऊपना **म०** मोटो शील कुलाचारादिक **ए०** एतलामांहे **अ०** अनेराइ एक कुलमे **उ०** ऊंचने मारे **व०** नीचने मारे **म०** मोटा **स०** संग्रामने विषे **उ०** ऊंच शस्त्र ते भालादि **व०** नीच शस्त्र ते बाणादि **उ०** सांमी छातीये लागे **प०** ते वेदना भोगवे. **तं०** ते **दु०** दुःख कष्ट **ख०** निश्चे **पु०** पुर्षपणाने विषे हूइ ते माटे **इ०** स्त्रीपणो ज **सा०** भलो. **ज०** जो **इ०** ए माहरो **त०** तप **णि०** अभिग्रह **बं०** ब्रह्मचर्ये **वा०** वस्या तेहनो **फ०** फल **वि०** वृत्ति विशेष जो **अ०** छे तो **व०** मुजने पिण **आ०** आवते काले **जा०** जावत् **इ०** एतादृशरूप **उ०** उदार प्रधान **इ०** स्त्री संबंधी ज **भो०** भोग **भुं०** भोगवांता. **से०** भलो अथ ते निदान साधू कीधूं. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंत ! **णि०** जे साधू एहवो **णि०** निदान **कि०** करे **त०** ते **ठा०** स्थानकप्रते **अ०** आलोयां विनां **अ०** निवर्त्या विनां ज **जा०** जावत् **अ०** प्रायश्चित्त लीधां विनां **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **अ०** अनेराइ पूर्वोक्त **जा०** जावत् देवगते जाइ **से०** ते साधू **तं०** तिहां **दे०** देवता **भ०** व्हे. **म०** मोटो ऋद्धिवंत **जा०** जावत् **वि०** विचरे. **से०** ते साधू **ता०** ते **दे०** देवलोकथकी **आ०** आउखो-भव-थिति पूरी करीने **अ०** पूर्वोक्त अनेराइ एक **कु०** कुलमे **दा०** पुत्रीपणे **प०** उपजे **जा०** जावत् **ते०** ते साधुनो जीव **तं०** ते **दा०** बालिकाने **जा०** जावत् **भा०** भार्यापणे माता-पिता **द०** आपस्ये. **सा०** तेहने **त०** ते **भा०** भार्या स्त्री **भ०** व्हे. **ए०** एक ज शोक शालरहित **जा०** जावत् **त०** तिम ज **स०** सर्व पूर्वोक्त **भा०** कहवो. **ती०** तेह **अ०** बाहिरथी घरमांहे आवतां थकां **जा०** जावत् **किं०** स्यो **ते०**

तुमारा **आ०** मुखने **स०** सदे छे इत्यादि. **ती०** तेह **त०** तथा प्रकारनी **इ०** स्त्रीने **त०** तथारूप **त०** साधु अथवा **मा०** श्रावक इत्यादि **जा०** जावत् **सा०** तिका स्त्री धर्मप्रते **प०** आदरे ? ए प्रश्न. उत्तर-**णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **अ०** अयोग्य छे **सा०** ते स्त्री **त०** ते **ध०** केवली प्ररूप्या धर्मप्रते **स०** सांभलवाने. **सा०** ते वली **भ०** व्हे **म०** मोटी तृष्णावंत **जा०** जावत् **दा०** दक्षिण दिशि **णे०** नरकने विषे ऊपजे **आ०** आगमे काले **दु०** दुर्लभ पामतां **बो०** सम्यक्त्वनो लाभ **भ०** इसो हूइ. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** श्रमण आउखावंतो ! **त०** तेह **णि०** निदानना **इ०** एतादृशरूप **पा०** पापरूप **फ०** फलनो **वि०** रस उदे **भ०** हूइ **जं०** जे भणी **णो०** नही सके **के०** केवली **प०** परूप्या **ध०** धर्मप्रते **प०** आदरिवाने ३.

[बा.४५२-४५४] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** श्रुत चारित्ररूप **ध०** धर्म **प०** कह्युं **इ०** ए प्रत्यक्ष **णि०** निर्ग्रंथना प्रवचन **जा०** जावत् **अं०** सर्व दुखनो अंत करे. **ज०** जेहना **ध०** धर्मने विषे **णि०** साधवी **सि०** आसेवन आदि शिक्षाने **उ०** सावधान थइने **वि०** विचरतां थकां **पु०** पहिला **दि०** भूखतृषादिकना **जा०** जावत् परीसह खमतां **उ०** उदयकाम थइ थकी **वि०** विचरे. **सा०** ते वली **प०** पराक्रम फोरवतां विचाले **पा०** देखे **से०** ते जे **इ०** ए प्रत्यक्ष **भ०** व्हे **उ०** उग्रकुलना ऊपना पुत्र **म०** मोटा मात्रिक **भो०** भोग कुलना ऊपना **म०** मोटा मात्रिक **ते०** तेमांहे **अ०** अनेराइ कुलमें ऊपनो थको **अ०** बाहिरथी घरमांहे आवतांने तथा **जा०** एम जावत् **किं०** स्यो **ते०** तुमने **आ०** आहारवो **स०** सदे छे रुचे छे, **जं०** जेहने **पा०** देखीने **णि०** साधवी **णि०** निदान **क०** करे. **दु०** दुखकारी **ख०** निश्चे **इ०** स्त्रीपणो ते **दु०** दुखे हींड्यो जाय **गा०** ग्रामान्तरे **जा०** जावत् **सं०** संनिवेसांतरे **से०** ते **ज०** यथा दृष्टांते **णा०** नाम इसे संभावनाइं **अं०** आंबानी **पे०** कातली तथा **अं०** अंबाडग नामे वनस्पतीना फलनी **पे०** कातली तथा **मा०** बीजोराना फलनी **पे०** कातली तथा **मं०** मांसनी **पे०** कातली तथा **उ०** सेलडीना खंड ते कातली **सिं०** सिंबलना फल तथा ए होवे **ब०** घणा **ज०** मनुष्यने **आ०** आस्वादवा चाखवा योग्य तथा जीवने विस्वासवा योग्य **प०** प्रार्थवा योग्य **पे०** देखवा योग्य **अ०** अभिलाषा कर्वा योग्य. **ए०** एणे दृष्टांते **इ०** स्त्री पिण ते **ब०** घणा **ज०** पुरुषांने **आ०** चाखवा योग्य इत्यादिक **जा०** जावत् **अ०** अभिलाषा करवा योग्य **तं०** ते माटे **दु०** दुखनो कारण छे **ख०** निश्चे **इ०** स्त्रीपणे **पु०** पुर्षपणो ज **सा०** भलो. **ज०** जो **इ०** ए माहरो **त०** तप **णि०** अभिग्रह **बं०** ब्रह्मचर्ये वसिवानो **जा०** जावत् फल **अ०** छे तो **अ०** हूं पिण **आ०** आगम्ये काले **इ०** ए प्रत्यक्ष **ए०** एतादृश रूप **पु०** पुर्षथको ज **भो०** भोगप्रते **भुं०** भोगवतो विचरुं तो **से०** अथ तेह ज **सा०** भलो. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमणो ! आउखावंतो ! **णि०** साधवी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते **ठा०** थानकने **अ०** आलोयां विनां **अ०** निवर्त्यां विनां **जा०** जावत् **अ०** प्रायछित्त लीधां विनां **का०** कालने **मा०** अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अनेरा ही कोइ एक **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवो **भ०** हूवे **से०** ते **त०** तिहां **दे०** देवता **भ०** व्हे **म०** मोटी ऋद्धिना धणी **जा०** जावत् **च०** छांडीने देवभवने **जे०** जे **इ०** एह **उ०** उग्रकुलना ऊपना **त०** तिम ज तिहां **दा०** बालक पुत्रपणे हूवे **जा०** जावत् **किं०** स्यो **ते०** तुमने **आ०** खावो **स०** भावे छे ?

**त०** तेहने **त०** तथाप्रकारना **पु०** पुर्षने **जा०** जावत् साधू धर्म कहे पिण **अ०** अयोग्य **से०** तेहने **त०** ते केवली प्ररूप्यो **ध०** धर्म **स०** सांभलवाने **से०** ते वली **भ०** हूवे **म०** मोटी इच्छा तृष्णा **जा०** जावत् **दा०** दक्षिण दिशानी नर्कने विषे **जा०** यावत् **दु०** दोहिलो वली पामतां **बो०** सम्यक्त्वनो लाभ **भ०** इसो व्हे. **ए०** एम **ख०** निश्चे **जा०** यावत् **प०** आदरिवाने ४.

[बा.४५५-४५७] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंत ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **इ०** ए ही

ज प्रत्यक्ष **णि०** निर्ग्रंथना **पा०** प्रवचन **त०** तथाप्रकारना तिम ज **ज०** जेहने **ध०** धर्मने विषे **णि०** साधु अथवा **णि०** साधवी **सि०** आसेवनादिक शिक्षाने **उ०** सावधान थइ **वि०** विचरतो **पु०** पहिला **दि०** भूख-तृषादि खमतां **जा०** जावत् **उ०** उदय थयो कामभोग एहवो छतो **वि०** विचरे. **से०** ते वली **प०** पराक्रम फोरवे **से०** ते वली **प०** पराक्रम फोरवतां **म०** मनुष्य संबंध्या **का०** कामभोगथकी **नि०** विरक्तभावे **ग०** जाइ. **मा०** मनुष्य संबंध्या **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव **अ०** अनित्य **अ०** असास्वता छे. ते पिण **स०** सडवानो **प०** पडवानो **वि०** विगडवानो **ध०** स्वभाव छे. **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीत **खे०** गलानो बलखो **ज०** शरीरनो मेल **सिं०** नाकनो मेल **वं०** वमन **पि०** पित्त पडे **सु०** वीर्य **सो०** लोही एतलानो **स०** उत्पत्ति स्थानक छे. **दु०** भूंडा **उ०** उंचो लेवो ते उसास **णि०** नीचो मूकवो ते नीसास **दु०** माठी **मु०** मूत्र **पु०** विष्टाये **पु०** भर्या अथवा **वं०** ते वमन श्रवे **पि०** पित्त पडे तथा श्रवे **खे०** गलामांहेला बलखा श्रवे **ज०** सरीरनो मेल श्रवे **प०** पछे अने **पु०** पहिला पिण **अ०** अवस्य **वि०** छांडवा योग्य छे ते माटे. **सं०** छे **उ०** ऊर्ध्वलोके **दे०** देवता **दे०** देवलोकने विषे. **से०** ते देवता **त०** तिहां **अ०** अनेरा **दे०** देवतानी **दे०** देव्यां पिण **अ०** वस्य करी आलिंगन करीने **प०** भोग करे **अ०** आपणपानी ज **अ०** आत्माथी **वि०** वेक्रिय करे करीने **प०** ते भोगवे. **अ०** पोतानी **चि०** साक्षात् **दे०** देवी **अ०** वस्य करे करीने **प०** भोग भोगवे. **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **तं०** तिम ज **स०** सर्व संबंध **भा०** कहवो **जा०** जाव **व०** हूं पिण **आ०** आगम्ये काले **इ०** ए प्रत्यक्ष **ए०** एतादृशरूप देव संबंधी **भो०** भोग ते **भो०** भोगां प्रते **भुं०** भोगवतो **वि०** विचरुं तो **से०** ते ही ज **सा०** भलो. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** श्रमणो ! आउखावंतो ! **णि०** निर्ग्रंथ साधु तथा **णि०** साधवी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** तेह **ठा०** स्थानकथी **अ०** आलोयां विनां **अ०** निवर्त्यां विनां **का०** कालने **मा०** अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अनेराइ एक **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवो **भ०** हूवे. **तं०** ते तिहां **म०** मोटो ऋद्धिवंत **जा०** जावत् **द०** दश दिशिने विषे **उ०** उद्योत कर्तो थको **प्प०** प्रकाश कर्तो थको **से०** तेह **अ०** अनेरा ही **दे०** देवतावांनी **अ०** अनेरी देवी **अ०** वस्य करीने **प०** भोगवे. **अ०** आपणपे ज **अ०** आत्माथकी प्रदेश काढी **वि०** वेक्रिय करी **प०** भोगवे. **अ०** पोतानी जे मूलगी **दे०** देवी तेहने **अ०** वस्य करीने **प०** भोगवे **जा०** जावत् **तं०** तिम ज **पु०** पुर्षपणे **प०** उपजे **जा०** जावत् पूर्ववत् **किं०** स्यो तुमारो **आ०** खावानो **स०** मन छे ? **त०** तेहने **त०** तथाप्रकारना **पु०** पुरुषने **त०** तथारूप **स०** श्रमण साधु तथा **मा०** श्रावक **जा०** जावत् धर्म **प०** आदरे ? इति प्रश्न. **हं०** हां उदे भाव माटे **प०** आदरे. **से०** ते जीव ते धर्मप्रते **स०** सद्दहे **प्प०** प्रतीत करे **रो०** रुचि करे ? ए प्रश्न. उत्तर – **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **अ०** अयोग्य छे **से०** ते जीवने **ध०** केवलीना धर्मनी श्रद्धा प्रतीत रुचि. **से०** ते वली **भ०** होवे **म०** मोटी इच्छावंत **जा०** जावत् **दा०** दक्षिण दिशानी **णे०** नरकने विषे जाइ. **आ०** आगम्ये काले **दु०** दोहिलो पामतां **बो०** सम्यक्त्वनो लाभ **भ०** हुइ. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे आउखावंत साधो ! **त०** तेह **णि०** निदाननो **इ०** एहवो **पा०** पापरूप **फ०** फलविपाक रस **जं०** जे भणी **णो०** नही **सं०** सके **के०** केवली **प०** प्ररूप्यो **ध०** धर्म **स०** सद्दहवाने तथा **प०** प्रतीत करवाने **रो०** रुचि करवाने ५.

[बा.४५८-४६०] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे आउखावंत साधो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **तं०** तिम ज **से०** ते वली **प०** पराक्रम करे **से०** ते **प०** पराक्रम कर्तां थकां **मा०** मनुष्य संबंध्या **का०** काम **भो०** भोगथकी **नि०** निवर्तनभाव **ग०** पामे. **मा०** मनुष्यसंबंध्या **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव **अ०** अनित्य **त०** तिम ज **जा०** जावत् **सं०** छे **उ०** उर्ध्वलोके **दे०** देवता **दे०** देवलोकने विषे **से०** ते **त०** तिहां **णो०** नही **अ०** अनेरा **दे०** देवतावांनी **णो०** नही **अ०** अनेरी काइ देवीप्रते **अ०** वस्य करीने **प०** भोगवे एहवा देवता छे. **अ०** आपणपे ज **अ०** आत्माथकी प्रदेश काढी **वि०** वेक्रिय करी **प०** परिचारणा करे. **अ०** आपणी पोतानी मूलनी **दे०** देवी छे

तेहने **अ०** वस करीने **प०** भोगवे. **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप **णि०** संयमना फल छे तो ए २ विधना भोग भोगवज्यो **तं०** इम तिम ज सर्व **जा०** जावत् **से०** ते केवली प्रणीत धर्म **स०** सद्दहे **प्प०** प्रतीत करे **रो०** रुचि करे ? ए प्रश्न. उत्तर – **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **अ०** अनेरा अन्य तीर्थीनी क्रियानी रुचि हूवे ते पिण रुचिमात्र **से०** ते वली **भ०** हूवे **से०** ते जे **इ०** ए प्रत्यक्ष **आ०** आरण्य वासी तापस कन्दमूल-फल-फूलादिकना खावणहार **आ०** पानना उडुवा करी रहे तथा वृक्षने मूले रहे **गा०** आजीविकानिमित्ते गामादिक बाहिर ढूकडा ज रहे **क०** मंडली बांधी रहे **णो०** नही **ब०** घणा **सं०** संयमनी **णो०** नही **ब०** घणा **प०** निवर्त्यो प्राणी-भूत-जीव-सत्त्वनी हिंसाथकी ते माटे **अ०** आपणपे ज **स०** सत्यमृषा एतले मिश्र भाषाना बोलणहार **ए०** एणीपरे **वि०** बोले छे. **अ०** अम्हने **ण हं०** न हणवा ऋषि माटे **अ०** अनेरा शूद्रादिकने **हं०** हणवा **अ०** अमने **अ०** दुख **न०** नही देवो ऋषि माटे **अ०** अनेराने **अ०** दुख देवो **अ०** अमने **न प०** परताप क्लामना न करवी ऋषि माटे **अ०** अनेराने **प०** परिताप क्लामना करवी **अ०** अमने **न प०** बलात्कारे नही ग्रहवा **अ०** अनेराने **प०** ग्रहिवा **अ०** अमने **न उ०** उपद्रव न करिवो ऋषि माटे **अ०** अनेराने **उ०** उपद्रव करिवा. **ए०** एणीपरे **ते०** ते **इ०** स्त्रीना **का०** कामभोगथकी **मु०** मूर्च्छाणा **गि०** विषयना गृद्धी **ग०** विशेषे गृद्ध थया **अ०** विषयथी एकाग्रचित्त थयुं **जा०** यावत् **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **अ०** अनेरा ही कोइ **आ०** आसुरादिकनी निकायमे तथा **कि०** किल्विषी देवता **ठा०** एहवा स्थानकने विषे **उ०** उपजणहार **भ०** होवे **ते०** ते वली **त०** तिहांथी पिण **वि०** मुकाणा थका **भु०** घणी घणी वार **ए०** बोकडापणे तथा **मू०** मूंगापणे **जा०** यावत् **प०** उपजे **तं०** ते माटे **ए०** इम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **त०** तेह **णि०** निदानना **जा०** जावत् **णो०** नही **सं०** सके **के०** केवलीनो **प०** प्ररूप्यो **ध०** धर्म **स०** सद्दहवा प्रतीत करवा रुचि करवाने ६.

[बा.४६१-४६२] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **जा०** जावत् **मा०** मनुष्य संबंधी **ख०** निश्चे **का०** काम अने भोग **अ०** अध्रुव अनित्य अशाश्वता **त०** तिम ज जावत् **सं०** छे **उ०** ऊर्ध्वलोके **दे०** देवता **दे०** देवलोकने विषे **णो०** नही **अ०** अनेरा **दे०** देवतावांनी **अ०** अनेरी देवीप्रते **अ०** वस्य करीने **प०** भोगवे नही, एहवा देव छे. **णो०** नही **अ०** आपणपे आत्माथी प्रदेश बाहिर काढी **वि०** वेक्रिय देवी करी पिण **प०** भोगवे नही. **अ०** पोतानी ज मूलगी प्रत्यक्ष **दे०** देवी पिण **अ०** वस करीने **प०** भोगवे. **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप **णि०** अभिग्रहादिकना फल छे तो **तं०** तिम ज थाज्यो **जा०** यावत् **ए०** इम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **णि०** साधु अथवा साधवी **नि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते **ठा०** स्थानकने **अ०** आलोयां विनां **तं०** तिम ज **जा०** जावत् **वि०** विचरे वली **से०** ते एणे भवे तथा **अ०** अनेरे भवे **णो०** नही **अ०** अनेरा **दे०** देवनी **णो०** नही **अ०** अनेरी **दे०** देवीप्रते **अ०** वस करीने **प०** परिचारे भोगवे. **णो०** नही **अ०** आपणपे ज **अ०** पोतानी आत्माना प्रदेश काढी **वे०** वेक्रिय करीने **प०** भोगवे नही. **अ०** आपणी पोतानी प्रत्यक्ष मूलगी **दे०** देवी तेहने **अ०** वस करे **प०** भोगवे. **से०** ते वली **ता०** ते **दे०** देवलोकथकी **आ०** आउखो भव स्थित पूरो करी **त०** तिम ज वक्तव्यता कहवी **ण०** एतलो विशेष **हं०** हां केवली प्रणीत धर्म **स०** सद्दहे ३. **से०** ते ५ अणुव्रत गुणव्रत ४ शिक्षाव्रत भला व्रत बती **प०** पचखाण **पो०** पोषध उपवास सहित ते **प०** आदरे ? ए प्रश्न. उत्तर – हे गौतम ! **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **से०** ते केवल एक **दं०** सम्यक्त्वी श्रावक **भ०** व्हे. **अ०** जांणे छे **जी०** जीवनो स्वरूप चैतन्य लक्षण **अ०** अजीवनो स्वरूप अचैतन्यलक्षण **जा०** एम यावत् पुण्य-पाप-आश्रव-संवर-निर्जरा-बंध-मोक्ष **अ०** हाड अने **मिं०** हाडमांहिली मींजी ते **पे०** धर्मना प्रेमने रंगे **अ०** अनुरक्त छे **अ०** एहवो **मा०** अहो आउखावंत ! **णि०** निर्ग्रंथना **प्पा०** प्रवचन **अ०** तेनो अर्थ **अ०** ए ही ज परम अर्थ मोक्षना साधक. **से०** शेष सर्व **अ०** अनर्थनो हेतुभूत जांणे छे. **से०** ते वली **ए०** एतादृशरूप **वि०** विहारे

करी **वि०** विचरताने **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **स०** श्रमणोपासकनी **प०** पर्यायप्रते **पा०** पाले पालीने **का०** कालने **मा०** अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अनेरा ही **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे उपजवो **भ०** हूवे. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंतो ! **त०** तेह **णि०** निदाननो **इ०** एतादृश एहवा **पा०** पापरूप फलना **वि०** विपाक ते रस उदे हूइ **जं०** जेणे करी **णो०** न व्हे **सं०** समर्थ **सी०** शीलव्रत **गु०** गुणव्रत **वे०** वेरमणव्रत **प०** प्रत्याख्यान **पो०** पोषध सहित उपवास **प०** आदरे नही पाले नही ७.

[बा.४६३-४६५] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **तं०** तिम ज **स०** सर्व **जा०** जावत् **से०** ते वली **प०** पराक्रम कर्तां थकां **दे०** देव संबंधी तथा **मा०** मनुष्य संबंधी **का०** कामभोग थकी **नि०** निवर्तन भावप्रते **ग०** पाम्यो. **मा०** मनुष्य संबंध्या **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव **जा०** जावत् **वि०** छांडवा योग्य इम ज **दे०** देवतावांना पिण **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव **अ०** अनित्य **अ०** अशाश्वता **च०** चलाचल **ध०** स्वभाव छे **पु०** वली **आ०** मिलवा योग्य पिण नथी **प०** पछे अने **पु०** पहिला पिण एह **अ०** निश्चे **वि०** छांडवा योग्य होवे छे. **सं०** छे जो **इ०** ए ही ज माहरे **त०** तप अभिग्रहादिकना फल तो **जा०** जावत् **आ०** आगम्ये काले व्रतधारी श्रकावक थाज्यो. **ज०** पछे जे **इ०** एहवा **भ०** व्हे **उ०** उग्रकुलना ऊपना **म०** निर्मल मातृकुल **जा०** तिहां यावत् **पु०** पुर्षपणे **प०** उपजे **त०** तिहां **स०** श्रमणोपासक व्रतधारी श्रावक **भ०** थाओ. **अ०** जांण्या छे जेणे जीवाजीवना स्वरूप **जा०** जावत् **फा०** प्रासुक अचित्त **ए०** ४२ दोष रहित **अ०** अशन पान खादिम स्वादिम **प०** प्रतिलाभतो थको **वि०** विचरुं, **से०** अथ तो **सा०** भलो. **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** अहो श्रमण ! आउखावंत ! **नि०** साधु अथवा साधवी **नि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते **ठा०** स्थानकने **अ०** आलोयां विनां **जा०** जावत् **दे०** अनेराइ देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवो **भ०** हूवे. **से०** तेह **ता०** तेणे **दे०** देवलोकथकी **आ०** आउखो भव स्थिति पूरी करीने **जा०** यावत् किं स्यो **ते०** तुमने **आ०** खावो पीवो **स०** सदे छे ? **त०** तिवारे ते **त०** तथाप्रकारना साधू पासे **पु०** ते पुर्ष जाति **जा०** जावत् **प०** केवलीनो धर्म आदरे ? ए प्रश्न. उत्तर - **हं०** हां गौतम ! **प०** आदरे. **से०** ते मने करी **स०** सद्दहे ? ए प्रश्न. उत्तर – **हं०** हां **स०** सरधे प्रतीत करे रुचि करे. **से०** ते **सी०** शीलव्रत-गुण-वेरमणव्रत **जा०** जावत् **पो०** पोषध उपवास सहित **प०** आदरे ? ए प्रश्न. उत्तर - **हं०** हां **प०** आदरे. **से०** ते १० विध **मुं०** मुंड **भ०** थइने **आ०** घर छांडीने **अ०** अणगारनी **प०** प्रव्रज्या ल्ये ? ए प्रश्न. उत्तर – **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **से०** तेह **स०** श्रमणोपासक ही ज **भ०** हूवे. **अ०** जांण्यो छे जेणे **जी०** जीवाजीवनो स्वरूप जेणे **जा०** जावत् **प०** प्रतिलाभता थका **वि०** विचरे. **से०** तेह **ए०** एतादृशरूपे **वि०** आचारे करी **वि०** विचरतां थकां **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **स०** चारित्रनी **प०** पर्यायप्रते **पा०** पाले पालीने **आ०** अबाधा रोगादिकनी **उ०** ऊपने थके तथा **अ०** अणऊपने थके **ब०** घणा **भ०** भक्तनो **प०** पचखाण करे करीने **ब०** घणा भक्तना **अ०** अनशनप्रते **छे०** छेदे छेदीने **आ०** आलोइने निवर्तीने ते निदानथी **स०** समाधि **प०** पामीने **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **अ०** अनेराइ एक **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवो **भ०** हूइ. **तं०** ते माटे **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंत ! **त०** तेह **णि०** निदाननो **इ०** एहवो एतादृशरूप **पा०** अशुभ कर्मना **फ०** फलनो **वि०** रस उदे थयुं **जं०** जे भणी **णो०** नही **सं०** समर्थ **स०** ५ महाव्रतरूप सर्वव्रत **स०** सम्यग् प्रकारे **मुं०** मुंड **भ०** थइने **आ०** घर छांडीने **अ०** साधुपणानी **प०** प्रव्रज्या लेवाने ८.

[बा.४६६-४६७] **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** अहो श्रमण ! आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** प्ररूप्यो **जा०** यावत् **से०** ते **प०** वली पराक्रम कर्तां थकां **दे०** देव अने **मा०** मनुष्य संबंधी **का०** कामभोग थकी **णि०** निवर्तनभाव

प्रते **ग०** पामे. **मा०** मनुष्य संबंध्या **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव अनित्य **जा०** जावत् **वि०** छांडवा योग्य **दे०** देवतावांना पिण **ख०** निश्चे **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव अनित्य **जा०** जावत् **पु०** वली आदरिवाने अयोग्य छे. **सं०** छे जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप **णि०** अभिग्रहना फल **जा०** जावत् **व०** हू पिण **आ०** आगम्ये काले **जा०** जावत् **इ०** एहवा **कु०** घर **भ०** हूवे **तं०** ते कहे छे **अं०** जघन्य कुल ते शूद्रादिक **पं०** अधर्ममां वली अधिक अधर्म कुल **तु०** जेहने कुटुंब थोडो तेहवे कुले **द०** दरिद्र कुलने विषे **कि०** छतो धन न भोगवे ते कृपण कुलने विषे **भि०** भिक्षा मांगी खाय तेहवा कुलने विषे **मा०** ब्राह्मणना कुलने विषे **ए०** एतला मांहिलो **अ०** अनेराइ कोइ एक कुलने विषे **पु०** पुर्ष पणे **प०** उपजिये तो **ए०** ए **मे०** मांहरी **आ०** आत्मा **प०** दीक्षा लेतां **सु०** सुख **णि०** नीकलवो **भ०** हूवे तो **से०** ते ही ज **सा०** भलो. **ए०** इम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंत ! **णि०** साधू अथवा साधवी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते **ठा०** स्थानकथकी **अ०** आलोयां विनां **अ०** निवर्त्यां विनां **स०** शेष सर्व तिम ज कहवो **से०** अथ ते **मुं०** मुंडित **भ०** थइने **आ०** घर छांडीने **अ०** साधुपणानी **प०** प्रव्रज्या ल्ये ? इति प्रश्न. उत्तर - **हं०** हां **प०** प्रव्रज्या ल्ये. **से०** ते **ते०** तेणे ज भवग्रहणे करी **सि०** सिद्ध थाइ **जा०** जावत् **स०** सर्व **दु०** दुखनो अंत छेहडो करे ? इति प्रश्न. उत्तर – **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **से०** ते एहवो **भ०** व्हे **से०** ते जे एह **अ०** अणगार **भ०** भगवंत **इ०** इर्या समिते समता **जा०** जावत् **बं०** ब्रह्मचारी **ते०** एहवे आचारे करी **वि०** विचरतां थकां **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **सा०** चारित्रनी **प०** पर्यायप्रते **पा०** पाले पालीने **आ०** रोगादिकनी अबाधा **उ०** ऊपने थके अथवा अणउपने थके **जा०** जावत् **भ०** भात पांणी **प०** पचखीने **जा०** जावत् **का०** कालने **मा०** अवसरे काल **कि०** करीने **अ०** अनेराइ कोइ एक **दे०** देवलोकने विषे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवो **भ०** हूवे **तं०** ते भणी **ए०** इम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंतो ! **त०** तेह **णि०** निदानना **इ०** एहवा एतादृशरूप **पा०** पाप कर्मरूप **फ०** फलना **वि०** रस उदे हूयो **जं०** जे भणी **णो०** नही **सं०** समर्थ **ते०** तेणे भवग्रहणे करी **सि०** अष्ट कर्म क्षय करी सिद्ध थाइ **जा०** जावत् **स०** सर्व दुःख शारीरी मानसिकादिक दुखनो **मं०** अंत करे नहीं ९.

[बा.४६८-४७०] **ए०** इम **ख०** निश्चे **स०** श्रमण ! आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** श्रुत चारित्र रूप धर्म **प०** प्ररूप्यो **इ०** ए प्रत्यक्ष **णि०** निर्ग्रंथना **प्पा०** प्रवचन सिद्धांत ५ समित ३ गुप्त इत्यादि **जा०** जावत् **से०** ते **प०** तप संयमने विषे पराक्रम करे. **स०** सर्व **का०** काम ५ इंद्रियनी २३ विषयथी **वि०** निवर्ते **स०** सर्वथा प्रकारे राग द्वेषथी निवर्ते **स०** सर्व स्वजनादिकना संगथी अतीत **स०** सर्व स्नेह माता पितादिकथी अतिक्रम्या **स०** सर्व **चा०** चारित्रनी क्रियाइं **प०** परिचर्या थका **त०** तेह **भ०** भगवंतने महिमावंतने **अ०** प्रधान **णा०** ज्ञान ते केवलज्ञान अने **अ०** प्रधान **दं०** दर्शन ते केवलदर्शने करी **जा०** जावत् **प०** कषाय उपशमाववानो मार्ग तेणे **अ०** पोतानी आत्मा **भा०** भावतां थकां **अ०** अंतर रहित ते अनंत **अ०** प्रधान सर्वज्ञानमे **णि०** स्वप्न निद्रादि व्याघात रहित **णि०** वादल भीतादिकना आवरण रहित **क०** समस्त लोक ते कृत्स्न **प०** प्रतिपूर्ण ते षट् द्रव्ये भर्युं एहवो **के०** केवल **व०** प्रधान **णा०** ज्ञान **दं०** प्रधान केवलदर्शन **स०** उपजे. **त०** तिवारे पछे **से०** ते **भ०** भगवंत **अ०** अरिहंत **भ०** हूवे **जि०** वीतराग **के०** केवली **स०** सर्वपदार्थना **नू०** जाण **स०** सर्वपदार्थना **द०** देखणहार **स०** देवता सहित **म०** मनुष्य **अ०** असुर भुवनपत्यादिक **जा०** जावत् **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **के०** केवलीनी **प०** प्रव्रज्याप्रते **पा०** पाले पालीने **अ०** आपणा **आ०** आउखानो **से०** शेष थाकतो अवसरे **आ०** जांणे शेष आउखो जांणीने **भ०** भातपांणी **प०** पचखे भात पांणी पचखीने **ब०** घणा **भ०** भक्तनो **अ०** अणशण ते प्रते **छे०** छेदे छेदीने **त०** तिवारे पछे **च०** छेवडे **उ०** उस्वास **णी०** निसास लेइने **जा०** जावत् **स०** सर्व शारीरी मानसिकादिक दुखनो अंत **क०** करे. **तं०** ते माटे **ए०** एम **ख०** निश्चे **स०** हे श्रमण ! आउखावंतो ! **त०** तेह **अ०** निदानरहित **इ०** एतादृशरूप पूर्वोक्त

**क०** कल्याणकारी शुभ कर्तव्यरूप **फ०** फलना **वि०** रस **जं०** जे भणी **ते०** तेणे ज **भ०** भवग्रहणे करी **सि०** अष्ट कर्म मूकावी सिद्ध थाय **जा०** जावत् **स०** सर्व शारीरिक मानसिकादिक दुखनो अंत **क०** करे. **त०** तिवारे पछे **से०** ते **ब०** घणा एक **णि०** साधु अने **णि०** साधविया **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** महिमावंतने **म०** श्रीमहावीर स्वामीने **अं०** समीपे **ए०** एहवा निदान-अनिदान फल अर्थ **सो०** सांभलीने **णि०** हृदे धारीने **स०** श्रमण **भ०** भगवंत पूज्य **म०** श्री महावीर देवने **वं०** वांदे स्तुति करे **ण०** नमस्कार करे **वं०** वांदीने **ण०** नमस्कार करीने **त०** तेह **ठा०** स्थानकनी **आ०** आलोयणा करे **प०** पापथकी निवर्ते **जा०** जावत् **अ०** यथायोग्य **पा०** प्रायछित्त **त०** तप कर्मप्रते **प०** अंगीकार करे करीने विचरे. **ते०** तेणे काले चोथो आरो अवसर्पणीनो **ते०** तेणे समे जयवंता विचरे **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्री महावीर देव **रा०** राजगृह नामे **ण०** नगरने विषे **गु०** गुणशिलनामे **चे०** बागने विषे **ब०** घणा एक **स०** श्रमणांना वृंदमे **ब०** घणी **स०** साधवियांना वृंदमांहे **ब०** घणा **सा०** श्रावकांना वृंदमे **ब०** घणी **सा०** श्राविकांना वृंदमांहे **ब०** घणा **दे०** देवतावांना वृंदमे **ब०** घणी **दे०** देव्यांना वृंदमे **सदे०** देवता सहित **म०** मनुष्य **अ०** असुर भवनपत्यादि **प०** पर्षदाने **म०** वृंदने मध्ये बेठां थकां **ए०** एणीपरे **आ०** सामान्यपणाथी कहे **ए०** एणीपरे **भा०** विशेषथी कहे **ए०** एणीपरे **प०** नये करी प्ररूपे **ए०** एणीपरे **प०** हेतूये करी उपदिशे **आ०** उत्तरकाल छे फल वांछानो स्थानक ते आर्य स्थानक नामे **अ०** हे आर्यो ! **अ०** ए अध्ययन **स०** अर्थ सहित **स०** हेतु दृष्टांत तेणे सहित **स०** कारण सहित **स०** सूत्र सहित **च०** पुनः **अ०** अर्थ तेणे सहित **त०** सूत्रार्थ उभय मिली **भु०** वारंवार **उ०** उपदेश द्ये **त्ति०** इसो श्री सुधर्मा जंबूप्रते कह्युं - हे जंबू ! जिम मे श्री भगवंत महावीर देव समीपे सांभल्यो हतो ते ही ज तुजप्रते कहूं छुं परं अपर नथी कहतो. एतले आयातिस्थान नामे दशमो अध्ययन संपूर्ण थयो. एतले आचारदशा नामे दशाश्रुतखंध संपूर्ण थयुं ।

# दशाश्रुतस्कन्ध बालावबोध (२)

ॐ नमः सिद्धम् ॥ श्रीदशाश्रुतस्कंध सूत्रार्थ चिंतविये छै. दशाश्रुतखंधनो स्यो अर्थ ? दश अध्ययन सहित जे श्रुत ते दशाश्रुत. दशाश्रुत रूप जे खंध ते दशाश्रुतखंध. ए सूत्र अनंगप्रविष्ट अने कालिक सूत्र. एहना दश अध्ययन. तिहां वीस समाध्या पामवानै वीस असमाधिना स्थानक वरजवा. ते माटे प्रथम अध्ययने २० असमाधिना स्थानक वर्जवा ते देखाडै छै. ते अध्ययननै आदिसूत्रे गणधरे नमोकार सूत्र कह्युं. ते नमोकार सूत्र मध्ये गणधरे प्रथम अरिहंत तीर्थंकरने नमस्कार कीधो. ते एतावता जे तीर्थकरे साधु प्रमुख च्यार तीर्थ थाप्या प्रकास्या, ते ४ तीर्थ मध्ये वडेरा गणधरा अने वडेरा गणधरांने उपगार तीर्थकरनौ. ते माटे प्रथम तीर्थंकरनै नमस्कार १.

अने तीर्थंकरतौ निश्चै सिद्ध थाय. ते भणि प्रथम तीर्थंकर अने पछै सिद्धनै नमस्कार २.

पछै तीर्थंकरना परूप्या मार्गने आचारज प्रवर्तावै. ते माटे तीजे पदे आचारजनै नमस्कार ३.

अने जिहां आचार्य होय तिहां निश्चै समीपे उपाध्याय होय ते माटे चोथे पदे उपाध्यायनै नमस्कार ४.

ते आचार्य-उपाध्यायनौ परिवार ते साधू. ते माटे पांचमे पदे साधूने नमस्कार कीधो ५.

साधू मध्ये ज्ञान-दर्शन-चारित्र ए ३ अरूपी छै ते माटे अत्र सर्वत्र ज्ञानादिक त्रणनै वंदना जाणवी भावथी यथा *संजयाण च भावओ* कहितां संजतीने भावथी नमस्कार कीधो ५. तथा *अरिहंत सिद्ध पवयणं* ए वीस स्थानक मध्ये प्रथम अरिहंतनौ गुणग्राम विनय पछै सिद्धनै तथा वलि *नमोत्थु णं अरिहंताणं [दशा. ८-११५]* अत्र सर्व वर्तमान अरिहंतनै नमस्कार सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं पद सूधी पछै अत्रथी सिद्धनै तथा चंदपन्नत्ती मध्ये अरिहंतादिक पांचाने नमस्कार कर्यो छै ते ए गाथा

*णमिऊण असुरसुरगरुलभुयगपरिवंदिए गयकिलेसे ।*
*अरिहंत१सिद्धा२यरिय३उवज्झाए४ सव्वसाहू५ य ॥ [चं.प्र.२]*

अत्र नमोकार सूत्र पांच पदे नमस्कार कीधो. ते माटे अत्र प्रथम नमोकार सूत्र गणधर वर्णवे छै. ते सूत्रने अर्थथकी कहियै छै.

## [प्रथमदशा असमाधिस्थानाध्ययनम्]

श्रीजिनाय नमः. **ण०** नमस्कार व्हो **अ०** अरिहंतनै च्यार घनघातिया कर्मरूप वेरीना हणणहार अरिहंत ते तीर्थंकरनै नमस्कार व्हो मोटा उपगारीने १. **ण०** नमस्कार हुओ **सि०** सिद्धनै सर्व कार्य सिद्ध थया ते सिद्धनै २. **ण०** नमस्कार हुओ **आ०** आचार्यने पांच आचार पालै अने पलावै ते आचार्य ३. **ण०** नमस्कार हुओ **उ०** उपाध्यायनै उप-समीपे आवीने भणिइं ते उपाध्यायनै ४. **ण०** नमस्कार हुज्यौ **लो०** लोक ते अढीद्वीपनै विषै **स०** सर्व साधूने मुक्तिपदनै साधै ते साधू ५. सुधर्मा स्वामी जंबूप्रतै कहै छै.

[बा.१] **सु०** सांभल्यौ मे **आ०** हे आउखावंत जंबू **ते०** तेणे **भ०** भगवंत महावीरे **ए०** इम आगल कहस्यै ते कह्यौ **इ०** ए जिन शासननै विषै **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **वी०** वीस **अ०** असमाधीना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या.

[बा.२] **क०** केहा **ख०** निश्चै **ते०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **वी०** वीस असमाधीना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या?

[बा.३] **इ०** ए **ख०** निश्चै ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **वी०** वीस **अ०** असमाधीना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या. **तं०** ते कहै छै.

[१] **द०** उतावलौ उतावलौ चालै ऊठे बेसै सूवै इत्यादि असमाधीना स्थानक वर्जै. उतावलौ उतावलौ चालै तो पृथिव्यादिक जीवनि विराधना थाय १. खाड गर्तादिक मध्यै पडवा लहै २. तिणे आत्मानि परात्मानी विराधना संजमनै खंडना थाइ ३. कांटा प्रमुख भा(वा)गै ४. असज्झाइ चंपायै ५. साहमा आवता स्त्री पुरुषसूं अफलाइं ६. चपलाइपणौ दीसै ७. प्राण भूतनि अनुकंपा ओठी पडै ८. इत्यादिक असमाधीना स्थानक उपजतो जांणि इर्यासमितिइं प्रवर्तै ते इर्यासमिति ते प्रथम समाधि जाणीने प्रवर्तै. इम सर्वत्र जाणवौ १.

[२] **अ०** अणपूंज्ये चालै बेसै सूयै तो असमाधि. अणपूंज्यै चालै तो दयानौ परिणाम घटै १. विछु प्रमुख ऊपरे पगादिक मूकै तो आत्मानि विराधना थाइ २. ते माटे पूंजवौ प्रमार्जवौ ते बीजी समाधि २.

[३] **दु०** अविधे **प्प०** प्रमार्जी पूंजी **चा०** चालै एहवौ **भ०** हुई अजयणाइं पूंजतां उपयोग सून्य हुइ १. उपयोग सून्य साहमूं जीवनी घातनौ करणहार थाइ २. उपगरण टालीने अधिकरण थाइ ३. ते माटे रूडीपरे उपयोग सहित पूंजवौ ते त्रीजी समाधि ३. ए सर्वत्र २० बोले असमाधि वर्जवी समाधि कहवी.

[४] **अ०** मर्यादाथी अधिक **से०** थानक पाट पाटला राखै ते असमाधि. अधिक सेज्यासण ते परिग्रह. ते पलिमंथ. पलिमंथ ते संजमने व्याघातकारी माटे असमाधि पूर्ण ४.

[५] **रा०** गुर्वादिक वडेराने **प०** पीडा उपजावै, साहमो बोलै. गुर्वादिक साहमो बोलवौ ते अविनयपणौ १. अविनीतने गुरुनि समी सीख लेवाय नही २. तेणे करी शिष्यनै ज्ञानादिकनि हाण पडै ३. अज्ञानरूप दल वधै ४. ते असमाधि ५.

[६] **थे०** थविरनी उपघात चिंतवै तथा हीले निंदै. थविरनि घात करै ते हीला करै ते जिनमार्गनि हीला करी कीधी १. तेणे उत्कृष्टौ बंध पडै तो महामोहनि कर्म बांधे २. ए असमाधि ६.

[७] **भू०** एकेंद्रियादिक जीवने हीडतां बोलतां घात करै. भूत एकेंद्रियादिक ऊपर निर्ध्वंस परिणाम आणतो पंचेंद्री ऊपर निर्ध्वंस परिणाम आवै. तेणे दुर्गतिनौ आउखौ बांधे ते असमाधि ७.

[८] **सं०** वार वार कर्वे करी क्रोध उतरे ज नही ते असमाधिओ वलि क्रोधादीके धमधम्यौ रहै. तेणे करी पोताने जीवने अने परजीवने संताप उपार्जै १. तेणे करी अलीक आलपणौ बोलै २. तेणे करी तिर्यंच सर्पादिकनौ आउखौ बांधे ८.

[९] **पि०** पर पूठे अवर्णवाद बोलै. निंद्यानो करणहार होवै. ते असमाधियो. वलि परपूठे निंद्या मर्म उघाडै तो पोते ज अपजस पामै १. मूल पोतानौ करे २. पोतामांहि गुण होइ ते नाश पामै ३. जिहां उपजै तिहां सर्वने निंदनीक हुइ ४. ते ए असमाधि ९.

[१०] **अ०** वार-वार क्षण-क्षणप्रतै **ओ०** अजाणतो थकौ निश्चैकारी भाषा बोलै 'अयं दास अयं चोर' ते असमाधियो **भ०** हुई. अणजाणै निश्चै भाषा बोलतां अजाणपणु होइ १. अविवेकवंत होवै ते अजाणनौ पतियार न मांनै २. आगले ज्ञानपणु न पामै अविसंवादी ३. माटे ए असमाधि १०.

[११] **न०** नवा **अ०** कलेशादिक **अ०** नथी ऊपना तेहने **उ०** उपजावै **भ०** एहवौ हुवै ते असमाधियो. नवा कलेशनै उपजाव्यै घणा जीवानै दुख दाइ हुवै १. तेणे असाता वेदनि कर्म ३० कोडाकोड सागरनौ उत्कृष्टौ बांधे

२. जिहां उपजै तिहां घणि असाता पामै ३. ए असमाधि ११.

[१२] **पो०** पाछला **अ०** कलेशादिक **खा०** खमावीने **वि०** उपसमाव्यो होइ तो **उ०** फेरीने उदीरै तो असमाधियो **भ०** हुई. पाछला किलेसादिक उदीरे तो महादुष्ट परिणाम आवै १. ते वलि मूल अधिकरण वृद्धि पामै २. घणानो नीसासो पामै ३. पत खोहि ४. जिहां उपजै तिहां आसा भंगा थाइ ५. चीकणा कर्म बांधे ६. ए असमाधि १२.

[१३] **अ०** चारे अकाले तथा वीस असज्झाइ मध्ये सज्झायकारी सज्झाय सूत्रपाठ परियट्टणा करै. सवदमांहि वीस असज्झाइ जांणवी ते असमाधियो. अकाले तथा असज्झायमांहे सज्झाय कर्तो थको ग्याननि आसातना करै ते ग्यान न पामै १३.

[१४] **स०** सचित रज खरड्या **पा०** हाथ पगादिक न पूंजे तो पृथिव्यादिक जीवनो हणणहार थाय ते असमाधि १४.

[१५] **स०** घणि रात्रे गाले बोलै. लोक जागै. रात्रे सूता लोक जागनै घणा रातरा आरंभ करै. ए अस. १५.

[१६] **भे०** माहो मांहि भेद पाडै. **झं०** खोटा झगडा करै. वलि भेद करै. झूझ करै. भेद पाडतो जिनमार्गनि हीलना करावै. मार्गथकि मन उपरांठा करै १६.

[१७] **क०** माहो माहै कलेस करै. तिम कलेश करतौ घणाने दावानल लगावै. ए असमाधि १७.

[१८] परनै अने पोताना जीवनै असमाधियो पाप लोभ उपजावै. ते पाप लोभथी आर्तरुद्रध्यान ऊपजै. ए असमाधियो १८.

[१९] **सू०** सूर्य आथमे तिहां सूधी भोजन करै. आथमे तां सूधी जीमता रात्रे तृषा जागै १. विसूचिका पीडा ऊपजै २. निद्रा व्यापै ३. स्वाध्याय ध्यानादिकनै व्याघात थाइ ४. ए असमाधियो १९.

[२०] **ए०** आहारादिकनि गवेषणानै विषै **अ०** समिति रहित थकौ **भ०** प्रवर्तै **ए०** एषणा असमितिवंतनै अनुक्रमे छ कायनि दया न रहै. ए असमाधियो २०.

एह वीस असमाधि वरजी २० समाधिइं प्रवर्तवो. **ए०** एह पूर्वोक्त **ख०** निश्चै **थे०** ते थविर **भ०** भगवंते **वी०** वीस **अ०** असमाधिना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या **त्ति०** इम **बे०** कहु छुं. ए प्रथम अध्ययन संपूर्ण थयो.

## [द्वितीयदशा शबलाध्ययनम्]

एहवी वीस असमाधिना वमणहारानै एकवीस सबला लागवा लहै ते बीजे अध्ययने २१ सबला कहै छै.

[बा.४] **सु०** सांभल्यौ **मे०** मे **आ०** हे आउखावंत **भ०** ते भगवंते **ए०** इम **म०** कह्यौ **इ०** इहां **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ए०** एकवीस सबला मध्ये कोइ एक थोडा दोषना बोल यथा *गणाउ गणे* इत्यादिक. कोइ एक मोटा दोषना बोल यथा *मेहुणं पडिसेवमाणे.* ए सर्वनै सबला कह्या पिण सर्व सबला सरीखा न जाणवा. विशेषाविशेष जाणवा यथा निसीथे मासियं प्रायछित्त सहूने सरीखा नही तिम अत्र सबला इकवीस **प०** कह्या.

[बा.५] **क०** कोण **ख०** निश्चै **ते०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ए०** एकवीस सबला **प०** कह्या ?

[बा.६] **इ०** ए **ख०** निश्चै **ते०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ए०** एकवीस सबला **प०** कह्या **तं०** ते जिम सबला ते चारित्रनै काबरो करै आठ कर्म बल सहित पुष्ट करे ते माटे सबला. ते जिम छै तिम कहै छै.

[१] **ह०** हाथे वेदविकारने प्रवर्तावानै हस्तकर्म कर्तो तथा हाथे करी कोइनै मारवानौ कर्म कर्तो सबलो दोष लागै. जेहवौ व्है तेहवौ इत्यर्थ.

[२] **मे०** मैथुन मननौ १ वचननौ २ कायानौ ३ जेहवौ होय तेहवौ मैथुन सेवतौ थकौ सबलो २.

[३] **रा०** रात्री भोजन **भुं०** करतौ **स०** सबलो ३.

[४] **अ०** आधाकरमी आहारादिक **भुं०** भोगवतो थको सबलो ४.

[५] **रा०** राजानै जीमवानौ बलिष्ठ पिंड तेहवौ पिंड भोगवतौ थकौ सबलो तथा रायपिंड मध्ये जे राज कहितां बलिष्ठ ते राजपिंडनै महाविगय च्यार भोगवै तो सबलो ५.

[६] **की०** उछीनो आण्यौ १ **पा०** मोल आण्यो २ **अ०** उदाली लीधो ३ **अ०** सीरनौ तथा धणिनि आज्ञा विनां ४ **आ०** साहमौ आण्यौ ५ एहवा आहारादिकनै **दि०** देतां थकां **भुं०** भोगवै तो सबलो ६.

[७] **अ०** वार वार **प०** च्यार आहारनौ पचखाण करीनै **भुं०** ते वस्तु भोगवतो थको **स०** सबलो ७.

[८] **अं०** दीक्षा लीधां पछै **छ०** छ मास मांहै **ग०** पोताना संघाडा थकी **ग०** बीजे संघाडे जातो थकौ **स०** सबलो ८.

[९] **अं०** एक मासमांहे **त०** त्रिण वार नदी उतरतो **उ०** उदकलेप एतलै नाभी प्रमाण जल अवगाहै एहवा लेप ३ करै तो सबलो ९.

[१०] **अं०** एक मासमांहे **त०** छल वचन बोलीनि प्रतीत उपजाववी यथा गिलाण **मा०** मासमांहि कोइ कहीजै 'ए आहार तो छै पण तुमनै [न] सदै' पोता खावानि बुद्धे इम कहै ए मायानौ थानक ए ३ मायाथानक कर्तो थको सबलो १०.

[११] **सा०** जेहनै थानके रह्यौ तेहना घरना आहारादिक लेइ **भुं०** भोगवतो थको सबलो ११.

[१२] **आ०** जाणीने **पा०** प्राणातिपातनै **क०** कर्तो थको **स०** सबलो १२.

[१३] **आ०** जाणीने **मु०** मृषावादनै **व०** बोलतो थको **स०** सबलो १३.

[१४] **आ०** जाणीने **अ०** अदत्तादाननै **गि०** लेतो थको सबलो १४.

[१५] **आ०** जाणीने **अ०** आंतरा रहित थकौ **पु०** सचित्त पृथ्वी ऊपर **ठा०** काउसग १ **से०** सूइवो २ **नि०** बैसवो ३ **चे०** ए त्रिण वांना कर्तो थकौ सबलो १५.

[१६] **ए०** इम जाणीने **स०** सचित्त पाणि प्रमुखे स्निग्ध पृथ्वी ऊपरे **ए०** इम **स०** सचित्त जिम मिश्र **पु०** पृथ्वी ऊपरे बेसे सूवे तो सबलो १६.

[१७] **ए०** इम **आ०** जाणी **चि०** सचित्त सिला ऊपरे **चि०** तथा सचित्त पाषाण काकरा **को०** तथा घणा जीवनै **वा०** वसवानौ ठाम एह **दा०** काष्ठ जीवे करी सहित ते ऊपरे **स०** इंडा सहित **स०** बेइंद्रियादिक सहित **स०** बीज सहित **स०** हरि वनस्पति सहित **स०** पाणि मिश्र सहित **स०** भूया कीडि नगरा सहित **प०** पंचवर्णी फूलण **द०** वरसातनो पाणि **म०** माटी **म०** कोलिया वडाना जाल ते सहित **त०** एतला प्रकारना थानक ऊपरे **ठा०** काउसग करै १ **सि०** सूवै २ **नि०** बेसै ३ **चे०** कर्तो थकौ **स०** सबलो १७.

[१८] **आ०** जाणीने **मू०** सचित्त मूलनो भोजन १ **कं०** कंदनो भोजन २ **खं०** खंधनो भोजन ३ **त०** त्वचा छालनो भोजन ४ **प्प०** कूंपलनो भोजन **प०** पत्र सचित्तनो भोजन **पु०** फूलनो भोजन **फ०** फलनो भोजन **बी०** सचित्त बीजनो भोजन **ह०** हरि कायनो भोजन **भुं०** भोगवतो थको **स०** सबलो १८.

[१९] **अं०** एक वर्ष मांहे **द०** दस वार नदी उतरे तो **उ०** उदक लेप नाभि प्रमाण जलावगाहै तो सबलो १९.

[२०] **अं०** एक **सं०** वरसमांहि **द०** दस **मा०** माया थान सेवतो थको **स०** सबलो २०.

[२१] **आ०** जाणीने **सी०** सचित्त पाणि **र०** बिंदु गले **र०** *वग्घारिएण* इत्यादि पाठ **ह०** हाथे करी **म०** माटिने पात्रे **दि०** कडछीए **भा०** भाजनादिके करी **अ०** अन्न१ **पा०** पाणि २ **खा०** खादिम३ **सा०** सादिम ४ **प०** वहिरीने **भुं०** जीमतो थकौ सबलो २१.

**ए०** एह **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ए०** इकवीस **स०** सबला **प०** कह्या **त्ति०** इम **बे०** कहू छुं. **बि०** ए बीजौ अध्ययन समाप्त.

## [तृतीयदशा आशातनाध्ययनम्]

हिवै त्रीजौ अध्ययन प्रारंभिए छै. तेहनो ए संबंध-बीजे अध्ययने सबलाना ठाम देखाड्या. ते सबला आसातनाना करणहारनै जागै ते माटे त्रीजे अध्ययने ३३ आसातना टालिवी ते हि ज देखाडै छै.

[बा.७] **सु०** सांभल्यो **मे०** मे **आ०** हे आउखावंत **ते०** तेणे **भ०** भगवंते **ए०** इम **म०** कह्युं **इ०** ए प्रवचननै विषै **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेतीस **आ०** सम्यक्त्व ग्यानादिकना लाभनि समस्त प्रकारे सातना कहितां खंडना करै ते मांहे ३३ आसातना **प०** परूपी कही.

[बा.८] **क०** कोण **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेतीस **आ०** आसातना **प०** परूपी ?

[बा.९] **इ०** ए **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते प्रथम नव आसातना सूधी गुरुना मूरतवो न राखै तो तेणे अवीनीतपणौ आवै ते माटे नव आसातना जाणवी **ते०** तेतीस आसातना **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै.

[१] **से०** शिष्य **रा०** ग्याने करी वडेरा गुर्वादिकनै **पु०** आगले चालै तो **भ०** व्है आसातना शिष्यनै १.

[२] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **स०** बरोबर चालै तो व्है **आ०** आसातना शिष्यनै २.

[३] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **आ०** ढूकडो अडीनै चालै तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ३.

[४] **ए०** इम **ए०** एणे **अ०** अलावे करी **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **पु०** आगला अविधसू ऊभो रहै तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ४.

[५] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **स०** बरोबर **चि०** ऊभो रहै तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ५.

[६] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **आ०** अडीने **चि०** ऊभो रहै तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ६.

[७] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **पु०** आगले **नि०** पूठ वालीने अविनयसू बेसे तो **भ०** व्है **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ७.

[८] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **स०** बरोबर **नि०** बेसै तो **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै ८.

[९] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **आ०** अडीने **नि०** बेसे तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै ९.

[१०] **ए०** इम **ए०** एणे **अ०** अलावे **से०** शिष्य **रा०** गुरु **स०** संघाते **ब०** बाहिर **वि०** विहार ते बाहिर भूमिकाइ **नि०** गए थके **त०** तिहां **से०** शिष्य ते **पु०** पहिलौ **आ०** आचमन ते हाथ पाणि लेवै **प०** पछै **रा०** गुरु लेवै तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै १०. ए दशमी असातनाना पर्याय लिखीए छै – पुव्वतरागं एतले कोइ एक प्रस्तावे गुरु शिष्य भेला थंडिले ऊठ्या छै अनै बाहिरला पाणीनुं एक ज भाजन हुइ तिवारे ते गुरु पहिला शिष्य आचमननो पाणि लीये तो असातना जे भणि गुरु ऊभा थाइ रह्या अने शिष्य आगलथी आचमननो पाणि लेइ गयौ. गुरुनो मुलायजो न राख्यौ. ते माटे आसातना. एतले बाहिर जइने साधूने आचमन लेवौ. तिण ऊपरे वली बीजी वार शिष्य ते ए प्रथम ठाणांगे १०मे ठाणे १० सज्झाइ मध्ये चोथे बोले *असुइसामंते [स्था. १०-७१४]* असज्झाइ उच्चार १ व्यवहारे सातमे उद्देशे १ सूत्रमे *नो कप्पइ निग्गंथाण वा* २ असज्झाइ छते सज्झाय कर्वो २ अप्पणो पोतानि असज्झाइ छते पण सज्झाय न कर्वो ३ आचारांगे हस्तादिक न धोवो ते मध्ये उचारनो ठाम वार्यो नही ४ दसाश्रुतखंधे अध्ययन सातमे *णणत्थ [दशा. ७-८७]* हस्तादिक धोवा वार्या *लेवालेवेणं* असज्झायनो लेप धोवो कह्यौ ५ सूयगडांग नवमे अध्ययने *उच्चारपासवणं हरिएसु न करेइ मुणि* इत्यादिक ६ निसीथे उच्चारनै वरतावीने प्रथम पूंठे लूहै ७ पिण काष्ठ आंगुलिइं न लूहै ८ आयामा हाथ पाणि लिइ ९ पिण उचार ऊपर पाणि न लीइ १० अने वेगलो जइ न लिइ ११ त्रण नावा खोवला सूधी लीइ १२ ए बारे साखे आयाम लेवा.

[११] **से०** शिष्य **रा०** गुरु वडेरा **स०** संघाते **बा०** बाहिर **वि०** भूमिकाइं **वि०** सझाय भूमिकाइं **नि०** गए थके **त०** तिहां **पु०** पहिलो **से०** शिष्य **आ०** गुरुने पहिला भूमिका बेसवानि इरियावही पडिकमीने बेसे इत्यादि अर्थ **प०** पछै **रा०** गुरु इरियावहि पडिकमीने बेसे तो **आ०** आशातना हुई **से०** शिष्यनै ११.

[१२] **के०** कोइ पुरुष तथा श्रोता **रा०** एहवौ गुरुनै **पु०** पहिली कांइ पूठ पूछै बोल चाल प्रश्नादिक बोलवा योग्य **सि०** कदाचित् **तं०** ते प्रश्नै **पु०** पहिला ज **से०** शिष्य लघुतर साधू स्वयमेव **आ०** बोलै उत्तर देवै **प०** पछै **रा०** गुरु उत्तर द्यै तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै १२.

[१३] **से०** शिष्य **रा०** गुरु वडेरे **रा०** रात्री **वा०** तथा **वि०** आगलेथी पाछल रात्रे **वा०** बोलावता ते इम कहै **अ०** हे आर्यो ! **के०** कुण सूता छै **के०** कुण जागै छै **त०** तिहां **से०** शिष्य **जा०** जागतो थको **रा०** गुर्वादिकना वचन **अ०** अणअंगीकार कर्तो उत्तर अदेतो हुवे तो **आ०** आशातना व्है **से०** शिष्यनै १३.

[१४] **से०** शिष्य **अ०** अन्न **पा०** पाणि **खा०** मेवा **सा०** मुखवास **प०** वहिरीने **तं०** ते आहारादिकनै **पु०** प्रथम **से०** बीजा शिष्य आगले **आ०** आलोवै **प०** पछै **रा०** गुरु आगले आलोवै तो गुरुनो मुलायजो न राख्यौ ते माटे **आ०** आसातना शिष्यनै १४.

[१५] **से०** शिष्य **अ०** जीमण **पा०** पाणि **खा०** मेवा **सा०** मुखवास **प०** वहिरी आवीने **तं०** ते आहारादिक **पु०** पहिला **से०** बीजा शिष्यने **प०** देखाडै **प०** पछै **रा०** गुर्वादिकनै देखाडै तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै १५.

[१६] **से०** शिष्य **अ०** अशनादिक **प०** लेइनै **तं०** ते **पु०** पहिला **से०** शिष्यनै बीजानै **उ०** आमंत्रै **प०** पछै **रा०** गुरुनै आमंत्रै तो **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै १६.

[१७] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिक **स०** संघाते **अ०** असनादिक ४ **प०** लेइ आवीने **तं०** ते आहारादिक **रा०** गुर्वादिकनै **अ०** पूछ्या विना **ज०** जे जे ऊपर मनमांनै **त०** तेहनै **ख०** घणु घणु **तं०** ते दीये तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै १७. ए ४ साहमो बोल्या आश्री शिष्यने.

[१८] **से०** शिष्य **अ०** अन्नादिक **प०** लेइ आवीने **रा०** गुरु **स०** संघाते **भुं०** कोइ समे जीमता थकां **त०** तिहां **से०** शिष्य **खं०** घणुं घणुं **डा०** सालणा सालणा **उ०** वर्ण गंध सहित **र०** सरस सरस **म०** मनने इष्ट ते मनोज्ञ मनोज्ञ **म०** मननै रीजवै ते मणाम मणाम **नि०** चोपड्यौ चोपड्यौ **लु०** लुखौ लुखौ चिणा प्रमुख **आ०** आहार करै गुरु जीमै तिवारे पहिला जीमि जावै **आ०** आसातना लागै **से०** शिष्यनै १८.

[१९] **से०** शिष्य **रा०** गुरुइं **वा०** कार्ये बोलावतां थकां **अ०** गिनकारे नही सांभलै नही तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै १९.

[२०] **से०** शिष्य **रा०** गुरुइं **वा०** बोलावतां थकां **त०** तिहां ज बेठो सांभलै जे जास्यूं तो काम भो(भ)लावस्यै इम करै तो **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै २०.

[२१] **से०** शिष्य **रा०** गुरुनै '**किं०** स्यूं कहौ छौ ?' एम कहै तो **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै २१.

[२२] **से०** शिष्य **रा०** गुरुप्रतै **तु०** तूं तूं कहै तूंकारे बोलावै तो **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै २२.

[२३] **से०** शिष्य **रा०** गुरुप्रतै **खं०** घणुं घणुं कूडुं खरखरो बोलतो हुई **आ०** आसातना लागै **से०** शिष्यनै २३.

[२४] **से०** शिष्य **रा०** गुरुप्रतै '**त०** तुमे ज थविरनि वेयावच करो, तुमनै लाभ थास्यै' एहवो साहमो वचन बोलै **त०** ते गुरुनि वेयावचनै हणै, साहमो वचन बोलै तो **आ०** आशातना लागै **से०** शिष्यनै २४.

[२५] **से०** शिष्य **रा०** गुरुनै **क०** धर्मकथा कोइक बोल आश्री एम कहै जेह बोल विचारी कह्यानो ए भाव छै तिवारे कहै जे विचारसूं तेसूं इम कहै ते पोताना उत्कृष्टपणौ जणावूं **भ०** हुवै **आ०** आशातना **से०** शिष्यनै २५.

[२६] **से०** शिष्य **रा०** गुरुप्रतै **क०** धर्मकथा कहितां कोइ एक बोल संभारवौ पडै तिवारे शिष्य कहै जे '**नो०** नथी संभारतो वीसरी गयो' एतले गुरुनि निभ्रंछना कीधी ए मोटी आसातना **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै २६.

[२७] **से०** शिष्य **रा०** गुरुनै **क०** धर्मकथा कहतां थकां **नो०** सुमन ते भलो मन होवै एतले गुरुनो उपदेश प्रसंसै नही, गुरुनो वचन अनुमोदै नही 'अहो ! केहवी वाणि करी सोभन कथा कहै छै' इत्यादि रूप सरावै नही तो **आ०** आसातना शिष्यने २७.

[२८] **से०** शिष्य **रा०** गुरु **क०** धर्मकथा कहतां थकां **प०** परिषदानै भेद उपजावै 'स्वामि ! कथा पूरी करौ, गोचरीनो अवेलो थाए छै, किहां सूधी कहस्यौ ?' इम कहतो हुइ तो **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै २८.

[२९] **से०** शिष्य **रा०** गुरुनै **क०** धर्मकथा कहितां थकां **क०** कथानै **आ०** छेदि विचमांहि भेंसडुहो [?] करै गमै तिम अप्रस्तावीक वात उदीरी एम करे तो **भ०** हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै २९.

[३०] **से०** शिष्य **रा०** गुरुनै **क०** धर्मकथा कहतां थकां तथा **ती०** कह्यां पछी ते **प०** परषदा **अ०** ऊठी नथी **अ०** भेद पामि नथी **अ०** सांभलवानै वांछै ते मांहिथी एक कोइ उठ्यो नथी **अ०** अरही परही विखरी नही तेहवी पर्षदामै **दो०** बे वार **त०** त्रिण वार **ता०** गुरु कही तेही ज कथानो कहणहारो हुवै तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै ३०.

[३१] हिवै त्रिण सेय्या संथारा आश्री कहै छै. **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकना **सि०** पाटला तृणादिकनै **पा०** पगे **सं०** संघटौ करीने **ह०** हाथ मस्तके चढायां विना **अ०** 'माहरो वांक छै' एम न कहै, इम ज जाइ तो **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै ३१.

[३२] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकनै **से०** सिय्या **सं०** संथारा ऊपरे **चि०** ऊभो रहै **नि०** बेसै **तु०** सूयै **भ०** एम करै

तो हुवै **आ०** आसातना **से०** शिष्यनै ३२.

[३३] **से०** शिष्य **रा०** गुर्वादिकना आसनथी **उ०** ऊंचा आसननै विषै **स०** सरीखा आसननै विषै **चि०** ऊभो रहै **नि०** बेसै **तु०** सूयै **भ०** इम करै तो **आ०** आसातना लागै शिष्यनै ३३.

**ए०** एक ही ते **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **ते०** तेतीस **आ०** आसातना **प०** परूपी **त्ति०** इम हूं कहुं छुं. **इ०** ए त्रीजो अध्ययन संपूर्ण.

## [चतुर्थदशा गणिसम्पदाध्ययनम्]

हिवै चोथो अध्ययन प्रारंभिए छै. तेहनो ए संबंध-हिवै वीस असमाध्या इकवीस सबला ने ३३ आसातना वरजीने निर्मल आचार निर्मल सूत्रादिकनो अभ्यास करै ते आचार्यपणा योग्य हुई ते माटे चोथे अध्ययने आचार्य संपदा कहिए छै.

[बा.१०] **सु०** सांभल्यौ **मे०** में **आ०** हे आउखावंत जंबू ! **भ०** भगवंते **ए०** इम **म०** कह्यौ **इ०** ए जिनशासननै विषै **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनि **सं०** भाव तथा द्रव्य रिधी, साधूनो गण ते समुदाय तेहनो नायक गणि कहिए द्रव्य संपदा चेला चेली सुशिष्यनो परिवार अने भाव संपदा ते अति हि बहूसुरत अति सुंदर सहिज स्वभाव प्रकृतिवंत यथा व्यवहार सूत्रना त्रीजा अध्ययन मांहि युगसंपदा कही ते संपदा सहित **प०** कही.

[बा.११] **क०** कोण **ख०** निश्चै **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनि संपदा **प०** परूपी ?

[बा.१२] **इ०** ए **ख०** निश्चै **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनि संपदा **प०** कही **तं०** ते कहै छै – [१] **आ०** आचार चारित्रनि संपदा १, [२] **सु०** सूत्र सिद्धांत भण्यानि संपदा २, [३] **स०** सुंदराकार थिर संघयणनि संपदा ३, [४] **व०** मधुरवचन सूत्रोक्त संपदा ४, [५] **वा०** यथातथ्य सूत्रनि वाचना प्रमुख देवी ते संपदा ५, [६] **म०** सूत्रानुसारी उत्पातिक्यादि मति ऊपजै ते संपदा ६, [७] **प०** प्रकर्षे सर्व द्रव्य क्षेत्रादि ४ प्रयोग जाण रूप संपदा ७, [८] **सं०** ग्यानादिक संग्रहवानि **प०** परिग्या नाम **अ०** आठमी संपदा ऋद्धि ८.

[बा.१३] **से०** अथ हिवै **किं०** कोण ते ए आठ संपदा मध्ये एकेकी संपदा विस्तारे कहै छै, आचार पूछियो अने बीजानै बीजीनै विषै गुरुनो उत्तर हिवै सुधर्मा स्वामि जंबू प्रतै कहै छै **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै [अ] **सं०** सतर भेदे संजमनै विषै **धु०** निश्चल **जो०** मन-वचन-कायाना जोगे करी जुक्त छै **भ०** होइ ए प्रथम आचार संपदानो प्रथम भेद १. [आ] **अ०** अभिमान न करै, आतमा मोटाइ रहित २. [इ] **अ०** उग्र विहारी, कोइनो आश्रे ग्रहै नही ३. [ई] **वु०** वृद्धना सरीखा भाव चंचलपणा रहित थिर स्वभाव होई ४. **से०** अत्र से शब्द ते समाप्तने अर्थे **तं०** ते **आ०** आचार संपदा १.

[बा.१४] ते तो श्रुतवंतनै हुई ते माटै **से०** अथ हिवै **किं०** कोण ते **सु०** बीजी श्रुतसंपदा ? श्रुतसंपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै- [अ] **ब०** जेतला सूत्र प्रवर्ताया होय तेहना निर्णयनो करणहार १. [आ] **प०** पोताना नामनी परे सर्वसूत्रनो परिचय कीधो हुई, अस्खलित सूत्रवंत २. [इ] **वि०** स्वसमय तथा परसमयना प्रकासनारा, शास्त्रनो जाण **भ०** हुइ ३. [ई] **घो०** घोष ते उदात्त १ अनुदात्त २ सरित ३ त्रिण करी **वि०** सुद्ध उच्चार भणि सुद्ध उच्चार करणहार हुइ ४. **से०** ते ए **सु०** श्रुतसंपदा कही २.

[बा.१५] ते श्रुत शरीरवंतनै हुइ ते माटे शरीर संपदा कहै छै. **से०** अथ हिवे **किं०** कोण ते **स०** शरीर रूप संपदा

? ए प्रश्न. उत्तर – **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै - [अ] **आ०** दीर्घ ऊंचपणो १ **प०** पहुलपणो २ **स०** ए बे बोले करी सहित **भ०** हुइ १. [आ] **अ०** अलजनीक शरीर, शरीर लजामणो नही २. [इ] **थि०** थिर संघयणवंत बलवंत ३. [ई] **ब०** अति हि धारक **प०** पांच इंद्रीनो बल प्रतिपूर्ण हुइ ४. **से०** ए संपूर्ण **स०** शरीर संपदा त्रीजी ३.

[बा.१६] हिवै शरीर संपदाना धणिने पोतेई ज वचनसंपदा होइ ते माटे वचन संपदा कहिए छै. **से०** अथ हिवै **किं०** कोण ते चोथी **व०** वचन रूप संपदा ? ते वचन संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** कही **तं०** ते इम- [अ] **आ०** सकल जननै ग्राह्य हुइ, सहूइ वचन प्रमाण करै १. [आ] **म०** मधुर मीठा गंभीर वचन बोले, श्रोता जननै परम रस साता ऊपजै **भ०** एहवो हुइ २. [इ] **अ०** नेश्रा पक्षपात रहित मध्यस्थ भावे वचननो बोलणहारो **भ०** हुइ ३. [ई] **अ०** संदेह रहित वचननो बोलणहार परूपक **भ०** हुइ, प्रगटपणै हुइ पिण संदेहलु मिश्र वचन न बोलै ४. **से०** ए संपूर्ण **तं०** ते ए चोथी वचन संपदा.

[बा.१७] ते वचन संपदानो धणि वाचना देवा समर्थ ते माटे वाचना संपदा कहै छै. **से०** हिवै **किं०** कोण ते वाचना संपदा ? वाचना संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै- [अ] **वि०** विचारीने शिष्य जोग्य सूत्रनी **उ०** आग्या दीइं. विचले सूत्र जोग्य ते शिष्यनै जे सूत्र भणवा योग्य जाणि प्रज्ञा समझाण सारु ते शिष्यनै जे सूत्र भणवौ **उ०** कहता जे 'तुमे अमुक सूत्र भणो' १. [आ] **वि०** पछै विचारीने वाचणा देणी २. [इ] **प०** सूत्र पाठ परिचित जाणि सर्व प्रकारे विभक्त नेगमादिक सहित **वा०** वांचे ३. [ई] **अ०** पछै अर्थनो जाण करै, तप प्रमाणादिक सूत्रार्थनो निर्वाह करै एहवो **भ०** हुइ ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते पांचमी वाचना संपदा कही.

[बा.१८] ते मतिवंतनै होइ ते माटे **से०** हिवै कोण ते **म०** मति संपदा ? मति संपदा **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै- [अ] **उ०** सामान्य पदे वस्तुनो ग्रहवो ते उग्गहमति संपदा १. [आ] **इ०** पछै विचार्वो 'ए स्यूं छै ?' **म०** एहवी ते इहा मति रूप द्वितीय संपदा २. [इ] **अ०** वस्तुनो निश्चै कर्वो ते अवायमति संपदा ३. [ई] **धा०** ते हीया मांहि धारी राखवी ते धारणा मति संपदा ४. **से०** हिवै **किं०** कोण ते **उ०** उग्रहमति संपदा ? उग्रह मति संपदा **छ०** छ भेदे **प०** कही **तं०** ते कहै छै – [i] **खि०** शीघ्र उचरतां वात पूछतां प्रश्न ग्रहै १. [ii] **ब०** घणा प्रश्न एके वारे ग्रहै २. [iii] **ब०** घणि जातना विविध प्रकारना जुदा जुदा प्रश्नै ग्रहै ३. [iv] **धु०** निश्चलपणै **उ०** ग्रहै ४. [v] **अ०** आगला पाछलानि नेश्राय विनां पोतानी ज प्रतिज्ञाइं ग्रहै ५. [vi] **अ०** ते पण संदेह रहित **उ०** ग्रहै, अन्यनै पिण संदेह रहित करै ६. **से०** संपूर्ण ते **उ०** उग्रह मति संपदा. **ए०** इम हिवै इहामइ संपदाना छ भेद ग्रहैवानि इहां कहिइ यथा एम छ पाठ भणि. **ए०** इम **अ०** अवायमति संपदाना ६ भेद तथा खिप्प अवाय इहां शीघ्र निर्णय करै. हिवै मति संपदानो चोथो भेद कहै छै. **से०** हिवै **किं०** कोण ते धारणा मइ संपदा ? ते धारणा मइ संपदा **छ०** छ प्रकारे **प०** कही **तं०** ते कहै छै - [i] **ब०** एक वार कह्यो घणुं धारी राखै १. [ii] **ब०** एक वार कह्ये घणा प्रकारना प्रश्नादिक धारी राखै २. [iii] **पो०** घणा कालनो [iv] **दु०** तिम ज धारतां दोहिलो ते नय नैगमादिक भांगा **ध०** धरी राखै ४. [v] **अ०** बीजा शिष्यादिकनि नेश्रा विना पोतानि प्रतिज्ञाइं धारी राखै ५. [vi] अंते ते पण संदेह रहित निश्चय करी **ध०** धरी राखै, ए छट्ठो भेद ६. **से०** ते संपूर्ण छ भेदे **धा०** धारणा मति **सं०** संपदा कही.

[बा.१९] ते तो सुद्ध प्रयोगना धणीने हुइ ते माटे **से०** हिवै **किं०** कोण ते प्रकर्षे सुद्ध प्रयोगनि मति संपदा ते उपयोग कहियै ? **च०** ते प्रयोग संपदा च्यारे प्रकारे **प०** कही **तं०** ते कहै छै- [अ] **आ०** पोतानो आत्मा समर्थाइना रूपने पोताना आत्मानि समर्थाइ जोइने वाद करै, छेहडा सूदी निर्वाह करी सकै, नहीतर छेहडो चंपाइ नही अने

आप छेहडो चंपाय **वि०** जाणीने **वा०** परसूं वाद **प०** प्रयूंजै करै **भ०** एहवो हुइ १. [आ] **प०** पछै परषदा जांण तथा अजांण स्वमति परमति प्रमुख परषदा जाणतो वचन वदै. जेहवा मतनि परषदा होइ तेहवा नय संघाते बोलै. जिनमतनै दीपावै **वि०** जाणि जाइनै **वा०** वाद प्रत्युत्तर **प०** प्रयूंजै करै ३. [इ] **खि०** क्षेत्र आर्य राजानो तथा कोइ कदाग्रह मति द्वेषना क्षेत्रनो स्वरूप जाणीने **वा०** वादने **प०** प्रयूंजै **भ०** करै ३. क्षेत्रना राजा तथा वडेरानो स्वरूप जोइ तो ते राजा प्रमुख मार्गनि प्रसंसा करै जे भणि जिनमार्ग प्रसंसनीक छै निंदनीक जिनवचन नथी तो हि पण तेहना शास्त्रनी शाख देइ जिनमत दीपावै एहवो जोइये ३. [ई] **व०** षट् द्रव्य मध्ये ए कोण वस्तु **वि०** जाणीने **वा०** वादनै **प०** प्रजूंजै पदार्थनो स्वरूप **भ०** करै. एहनो पर्याय ४ आचार्य वस्तु ते द्रव्य १ क्षेत्र २ काल ३ भाव ४ च्यारनो जाण जोइने तत्र द्रव्य ते षट् द्रव्यनुं स्वरूप १ क्षेत्र ते ऊर्ध्व अधो त्रीछो तेहनो स्वरूप २ काल ते त्रिण तथा प्रमाणादिक ४ कालनो स्वरूप ३ भाव ते उदयादिक छ भाव तथा नेगमादिक ७ नय तथा परोक्षादिक ४ प्रमाण तथा नामादिक ४ च्यार निक्षेपा तथा मिश्र व्यवहार तथा विशेषावशेष ५ हेतु दृष्टांत तथा कार्य कारण तथा सोल वचनादिक अनेक सिद्धांतोक्त भाव विचारै इत्यादिक वस्तुनो स्वरूप जाणीने ३६३ त्रण से तेसठ पाखंडि तथा आजीव मति तथा जमाली प्रमुख सात निह्नव प्रमुखना मतने निराकरीने श्रीजिनमतनी साख दीपावै ते आचारज तिण ही ज भवे तथा त्रीजे भवे निश्चै मुक्ति पद पामै ए उपसंपदा जाणवी. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **प०** प्रयोगमति संपदा कहिए ७.

[बा.२०] एहवा संग्रहनो धणि होइ ते माटे हिवै संग्रह परिण्णा आठमी संपदा कहै छै. **से०** अथ हिवै **किं०** कोण ते संग्रह परिज्ञा नाम संपदा ? **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै - [अ] **ब०** घणा साधु जनना **पा०** प्रयोगनै अर्थे **वा०** वर्षाने विषै वसवी ते एतले वर्षाकाल चोमासानै विषै **खि०** क्षेत्रनै **प०** जानहारो होई. समुदाय निर्दोष आहार पाणि मिलै एहवो चोमासो रहिवा योग्य क्षेत्र गवेषै ए संग्रह नय १. [आ] **ब०** घणा साधु जनना **प०** प्रयोगनै अर्थे **प०** पडिहार्या **पी०** बाजोट **फ०** पाटिओ पाट **सि०** थानक **सं०** तृणादिक संथारानै **उ०** ग्रहणहारो होइ निर्दोष थानकादिक मिलै तिहां रहै २. [इ] **का०** सज्झाय आवश्यक पडिलेहणादिकना कालनै विषै **सं०** आदर मान दिए. ए छ आवश्यकादि क्रिया अनुष्ठान करै करावै ते सावधानपणै करै इत्यर्थः ३. [ई] **अ०** यथागुरु ते दीक्षागुरु श्रुतगुरु प्रमुख वडेराने **सं०** पूजा श्लाघानो वधारण आदर माननो देणहार. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **सं०** संग्रह परिज्ञानादिक आठमी संपदा ८.

[बा.२१] **आ०** आचार्यना शिष्य पोताना शिष्य हिवै एहवा आचार्य पोताना शिष्यनै च्यार विनय पडिवत्ती सीखवै. ते कहै छै. जे आचार्य ते शिष्यनी संपदा सहित जोइये. हिवै आचार्य पोते **इ०** ए आगल कहिस्यै ते **च०** च्यार प्रकारना **वि०** विनयनि **प०** पडिवत्तीने विषै विनयनि आचरणा तेहना **वि०** सीखणहार **भ०** हुइ **नि०** रिण रहित. शिष्यनै ४ प्रकारनो विनय सीखवै नही तो शिष्यना रणिया थाइ. **तं०** ते ४ विनय कहै छै- [१] **आ०** आचार विनय सीखवै करी रिण रहित थाइ १. [२] **सु०** श्रुतरूप विनय सीखवे करी २. [३] **वि०** विखेवणा ते प्ररूपणा रूप विनय सीखवे करी ३. [४] **दो०** दुष्टादिकना दोष **नि०** टलाववा रूप विनय सीखवे करी आचार्य रिणरहित थाइ ४.

[बा.२२] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **आ०** आचार रूप विनय ? आचार रूप विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यो **तं०** ते कहै छै – [अ] **सं०** सतर भेदे संजम तेहनी **सा०** आचरणा रूप विनय पांच समिति तीन गुप्तिना सीखावणहार हुइ १. [आ] **त०** बारे प्रकारना तप कर्वानि समाचारी. एहनो पर्याय यथा समर्था सारु तप कीधाना लाभ कनकावलि प्रमुखना लाभ निरजरा थाइ *नो इहलोगट्ठयाए [दश. ९-४]* इत्यादिक तपनि समाचारी २. [इ]

**ग०** अहंकार रहित साधूना समुदायनै निर्वाहवो ते मांहि लाभ हुई ३. [ई] **ए०** एकल विहारी, एकल विहारीना ८ गुण ए **स०** समाचारी ते ८ गुणना धणि एकलविहारीपणौ अंगीकार करै तो महालाभ थाइ ते सीखवै ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते च्यार प्रकारे आचार रूप विनय कह्यो १.

[बा.२३] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **सु०** सूत्र विनय ? सूत्र विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यो **तं०** ते कहै छै – [आ] **सु०** सूत्र शुद्ध अस्खलित पाठ **वा०** वांचै, पर्याय सूत्र *संहिता य पदं [अनु.सू.६०५ गा.१३५]* एहवाना सहित सूत्र पाठ सुद्ध भणावै १. [आ] **अ०** शुद्ध सूत्रनो शब्दार्थ वांचन करै पछै *सुत्तत्थो खलु पढमो [वि.भा.५६६]* बीजी वार निर्युक्ति सहित अर्थ कहै २. [इ] **हि०** पछै सुख मना हि सर्व भावार्थ रहससुं वाच कहै. **हि०** परमार्थ बाधा सूत्रनो ए रहस्य एम कहै यथा सर्वनि रक्षा करै ए परमार्थ ३. [ई] **नि०** समस्त हेतु दृष्टांत परस्पर संबंधार्थ मेलवानो संबंध **वा०** वंचावे पदनो समास चालणा प्रसिद्ध उद्देशो इत्यादिक २ गाथा अनुयोगद्वारनि तेहनो सर्व विस्तार ते निर्विशेष समस्त अर्थ ए पर्याय ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **सु०** सूत्र विनय २.

[बा.२४] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **वि०** विखेवणा विनय ? आगलाना कोठा मांहे सूत्र धर्म प्रक्षेप्यौ तो विखेपणा विनय. ते विखेपणा विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्या **तं०** ते कहै छै – [अ] **अ०** नथी दीठो धर्म जेणे एतले मिथ्यात्वीने **दि०** सम्यक्त्वपणानै पमाडै **भ०** एहवो हुई १. [आ] **दि०** पुरुष समकित पाम्या छै तेहवा समकितदृष्टिनि **सा०** चारित्रनै देइनै पोताने साधर्मिकपणौ पमाडै **भ०** साधर्मिका करै २. [इ] **चु०** धर्मथकि डिग्यो होइ तेहनो **ध०** धर्मनै विषै हेतु कारणे करी **ठा०** थिर करै ३. [ई] **त०** सर्वने ते **ध०** श्रुतधर्म तथा चारित्रने **हि०** हित वृद्धि होइ तिम **सु०** सुखने अर्थे **ख०** क्षमा समर्थाइने अर्थे **नि०** मोक्ष ते समर्थाइने अर्थे **अ०** जिहां जाय तिहां सुभ फल केडे आवै इत्यादिक अर्थने कारणे **अ०** सावधान थइने **भ०** प्रवर्तै एतले साधूनै बाछलपणुं प्रवर्तावै तेहनि परूपणा करै ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **वि०** विखेपणा विनय कहिए ३.

[बा.२५] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **दो०** दोषनिर्घातना विनय ? आगलामांहि कोइ एक क्रोधादिक दोष च्यवण होइ ते **दो०** दोष टालिइं ते दोष निर्घातना विनय **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूप्यौ **तं०** ते कहै छै – [अ] **कु०** क्रोधीना क्रोधनै **वि०** टालणहारौ हुइ क्रोधना फल कहै तथा कोमल वचन उचारे १. [आ] **दु०** दुष्ट ते डंकीला माणसनै **दो०** दोषनो टालणहार हुई दुष्टपणाना कोमल वचने फल कहै २. [इ] **कं०** जिनमत ऊपरे **कं०** संका कंखा ऊपनि होय ते संकादिकनै टालै पेटालपुत्रवत् ३. [ई] **आ०** पोतानि आत्मा भली रीते प्रवर्तावै. पूर्व त्रिण छोल कह्या तिम प्रवर्तावै नही एटले परना दोष अने पोताना दोष **सु०** टालै एहवै हुइ ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **दो०** दोषनिर्घातना विनय कह्यौ एतले आचार्यादिक विनयनां बोलवो कह्यौ ते शिष्यनै आचार्य सीखवै ते कह्या.

[बा.२६] हिवै एहवा आचार्यना वडेरा शिष्य आचार्यना तथा आचार्यनो परिवार साधूनो ४ प्रकारे विनयनि प्राप्ति करै ते कहै छै. **त०** पूर्वोक्त गुणवंत सीखव्या **अं०** शिष्यनै **इ०** एह **च०** च्यार प्रकारनि **वि०** विनयनि प्रतिपत्ति आचर्णा कीधी जोइयै ते करै. **तं०** ते कहै छै – [१] **उ०** उपगरण वस्त्र पात्रादिक **उ०** आंणि साधूनै आपवा १. [२] **सा०** साधूनै साहाय्य देवो २. [३] **व०** आचार्यना जिनमार्गना रागी दृढधर्मीना गुण दीपाववा ३. [४] **भा०** भाव भारनो उपाडणहार भाव भारनो निरवाह करै ४.

[बा.२७] **से०** अथ हिवै **किं०** कोण ते **उ०** उपगरणनो **उ०** उपजाववौ ? **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्या **तं०** ते कहै छै – [अ] **अ०** साधूनै जे नथी अने जोइये **उ०** ते उपगरणनै **उ०** गवेषणा शुद्ध विहरी आंणि आपै १. [आ] **पो०** मूल गुणना **उ०** उपगरण भोगवै छै अने नवा न ले तो झूना उपगरणनै **सा०** साचववे करी राखै. कोइ

दिन चोराणुं जाइ, सीववा योग्य न होय **सं०** फाटो वस्त्र होय ते आगले पाछले गोपवीने पहराय जिम शरीर गोपे तिम गोपावे २. [इ] **प०** साधू पासे थोडोइ उपगरणे जो सीदाता जांणीने **प०** पोताना वस्त्र आपै, उपगार करै ३. [ई] **अ०** यथाविध वडा लहुडाइनै वस्त्रादिक विहरी आपै एहवो हुइ ते चोथो भेद ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते ए **उ०** उपगरण उत्पादनता १.

[बा.२८] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **सा०** साहाल्यता ? साहाल्य देवौ ते साहाल्यता. **सा०** ते साहाल्य **च०** च्यार प्रकारे **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै – [अ] **अ०** सहितां सुंहाली **व०** वचन सहित बोलावै बोलाववौ ए वचननी साहाल्य, आगला वचन साता मानै १. [आ] **अ०** अनुक्रमे विसामणादिक क्रिया सेव्यानो करणहारो होइ गुर्वादिकनि २. [इ] **प०** जिम विसामण सहित तिम **का०** कायाने **सं०** फर्स जिम कायाइं विसामण करै ३. [ई] **स०** सर्व गुर्वादिकना कार्य सेवा प्रमुखनै विषै **अ०** वांका धिठापणुं रहित सरणपणुं ४. **से०** संपूर्ण ते **सा०** ४ प्रकारनी त्रिविध साहाय्य देवापणुं कह्युं २.

[बा.२९] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **व०** साधर्मीयादिकना गुण वर्णन दीपाववौ ? ते **व०** वर्णसंजलना गुण दीपाववा **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यां **तं०** ते कहै छै – [अ] **अ०** यथातथ्य आचार्यादिक साधू प्रमुखना **व०** गुणग्रामनो बोलणहारो हुवै १. [आ] **अ०** आचार्यादिक ४ तीर्थना अवर्णवादना बोलणहारनै **प०** मारै संघनै काजे ते एहवो अर्थ नही. अवर्णनि पृष्ट व्याकरण करै, निभ्रंछै, एहवो हुई २. [इ] **व०** आचार्यादिक ४ तीर्थना वर्णवाद गुणग्रामना करणहारना गुण विस्तार पमाडै दीपावै ३. [ई] **आ०** पोताने आत्माइ करी एतले पोते गुणे करी **वु०** साधूनि सेवानो अभिलाषी वेयावचनो करणहार **भ०** हुवै ४. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **व०** वर्ण संजलनता कहियै ३.

[बा.३०] **से०** हिवै **किं०** कोण ते **भा०** यथा राजादिकना अमात्यादिकना भार न्यस्य भोगावभुक्ति तथा आचार्यने अन्यस्य आचार्यस्य गच्छभारो आरुह्वते एवं आचार्यस्य सूत्रार्थ गुण चिंतवतां भार तव शिष्या ए पूर्ववत् कार्य गच्छस्य तत्सर्वं करोति. सा चतुर्धा भारपच्चोरुहणता. भावभारनै उपाडीनै कर्वो अनाथ शिष्यनै **प०** प्रत्यारोपणता भावभारने उपाडीनै निर्वाहना कर्वी. ते **च०** च्यार प्रकारे **प०** कह्यो **तं०** ते कहै छै – [अ] **अ०** असंग्रहित क्रोधादिके गछ तथा संघाडो मूकी जातो होय तथा गुर्वादिके काल कीधो होय एहवाने **सं०** संग्रहणहारो हुइ तेहनै ग्रहीनै सूत्रार्थ भणावै, दृढ करै. [आ] **से०** नव दीक्षित शिष्यनै **आ०** ग्यानादिक पांच आचार तेणे ज्ञान आचार १ दर्शनाचार २ चारित्राचार ३ तपाचार ४ वीर्याचार ५ क्रिया अनुष्ठान गोचरियादिक करै सिखवै २. [इ] **सा०** साधर्मी **गि०** किलामना पामै छै साधर्मिक साधूजीनी **अ०** पोतानि यथाशक्ति वेयावच कर्वानै विषै **अ०** सावधान हुई ३. [ई] **सा०** साधर्मिक साधूनै कोइ प्रकृति स्वभावे तथा कोइक सूत्रार्थ संकारूप **अ०** अधिकरण तिहां **उ०** ऊपजे छते **त०** तिहां **अ०** नेश्रा रहित सिज्यादिक ऊपरे **व०** वसतो थको **अ०** कोइनि पक्षपात रहित थको **म०** मध्यस्थ भाव परिणाम थको **स०** सम्यक् प्रकारे **वि०** व्यवहार श्रुत व्यवहार प्रवर्ततो थको **त०** ते साधर्मिकनै ऊपनौ जे अधिकरण तेहने **खा०** खमाववानै अर्थे **वि०** उपसमाववाने अर्थे **स०** सदा सर्वकाले **अ०** सावधान **भ०** हुइ इ मनमांहि एम चिंतवै **क०** केणी परे **नु०** सुद्ध पक्षे **सा०** साधर्मिक चारित्रियादिक **अ०** विपरीत शब्द बोलवाथी रहित हुइ **अ०** रहित हुइ **झं०** असभ्य वचन बोलवाथी **अ०** रहित हुइ **क०** द्रव्य भाव क्लेशथी रहित **अ०** रहित हुइ **क०** क्रोधादिक कषाय थकी, कष कहिए संसार तेहनो लाभ छै तेहथी **अ०** रहित होय **तु०** स्यूं जाणै एम कहिवा थकि एतला वांना टालीने **सं०** दश प्रकारे संवर छै तेणे पुष्ट थाय **स०** दश चित्तनि समाधि करी **ब०** पुष्ट थाय तिम सूत्रोक्त वचने करी अधिकरण संका कंखादिक टालीने माहोमांहि समाधि ऊपजै **अ०** अप्रमत्त थकौ **सं०** १७ भेदे संजमे करी **त०** १२ भेदे तपे करीने **अ०** जिनवचने आत्माने **भा०** भावतो थकौ **ए०** एम **च०**

पूर्णे **णं०** अलंकारे **वि०** विचरै तिम करै. **से०** संपूर्ण **भा०** ते भारप्रत्यारोहणता कहियै. ४ बोल करवे १६ बोल भेद कह्या २ एवं ३२ गुण आचार्यना १६ शिष्यना विनय पडिवत्ती बे प्रकारे विनय एवं ६४ पण्णत्ती जाणवी.

**ए०** ए **ख०** निश्चै ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **अ०** आठ प्रकारे **ग०** आचार्यनि संपदा **प०** कही ते बत्तीस बोल, सोल सोल एह चोसठ गुण कह्या. **त्ति०** इम हूं **बे०** कहूं छुं. इति श्रीचोथी दसा चोथो अध्ययन संपूर्ण. आचार्यनि संपदानो ए चोथो अध्ययन.

## [पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थानाध्ययनम्]

अथ पांचमो अध्ययन प्रारंभिए छै. तेहनो ए संबंध – चोथे अध्ययने आचार्यना गुण वर्णव्या. ते आचार्य कीर्तिपूर्वक १० चित्त समाधिना उपदेशकहार हुई तथा परूपक हुइ ते माटे पांचमे अध्ययने दश चित्तनि समाधीना स्थानक परूपे छै.

[बा.३१] **न०** नमस्कार होज्यौ **सु०** श्रुतदेवताने भगवंतनी वांणिने. ते वांणि केहवी छै ? **भ०** पूजनीक छै. **सु०** सांभल्यौ **मे०** में **आ०** हे आउखावंत जंबू ! **भ०** ते भगवंते **ए०** सभा मध्ये **ए०** एम **म०** कह्यौ **इ०** ए जिनशासननै विषै **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते ग्यानवंत एहवा श्रीमहावीर देव तेणे **द०** दश **चि०** मननी भाव समाधीना **ठा०** स्थानक **प०** परूप्या.

[बा.३२] **क०** कोण **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंत ग्यानवंते **द०** दस **चि०** मननै **स०** भावसमाधिना **ठा०** थानक **प०** कह्या ?

[बा.३३] हिवै गुरु कहै छै **इ०** इम **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **द०** दश **चि०** मननै भावसमाधीना स्थानक **प०** परूप्या **तं०** ते कहै छै. **ते०** एतले दुषम सुषम आरानै विषै, इहां सप्तमीनो एकवचन ते कालनै विषै अथवा तेणे काले ते काल चोथो आरो तेहनै विषै ए सामान्यपणै कह्यौ जे भणि चोथो आरो १ कोडाकोड सागरोपम ४२ हजार वरस ऊंणौ अने तेहनै विषै तेवीस तीर्थंकर होय. इहां तेणं कालेणं पदनै विषै ते चोथा आरानौ देश भाग देखाडै छै. इहां पण सप्तमीनो एकवचन. **ते०** ते समेने विषै तेणे समें **वा०** वाणिय ग्राम एहवे नामे **ण०** नगर **हो०** हूतो. जे भणि वर्णादिक प्रभावे करी हीयमान अवसर्पणि माटे **ए०** ते भणि ए इहां **न०** नगरनो वर्णव **भा०** कहिवौ. उववाइ मध्ये धुरे ज नगर वर्णन *रिद्धित्थिमियसमिद्धा* जाव *पडिरूवाश्रीक [औप. सू. १]* अत्र कहिवौ. अथ उद्यान वर्णव **त०** ते **णं०** अलंकारे **वा०** वाणिय ग्राम **न०** नगरनै **ब०** बाहिर **उ०** उत्तर अनै पूर्वना दिशि विभागे एतले ईशानकूणनै विषै **दू०** दूतीपलास नामै **चे०** चैत्य व्यंतर देव यक्ष तेहनो आयतन ते थानक एक वन हूंतो. **चे०** चैत्य वर्णन वनराइए जाव दूतिपलासए चेइए श्लोक आसरो पछै वनखंड वर्णन पछै अशोक वृक्ष वर्णन पछै पुढविसिला वर्णन श्लोक **चे०** चैत्य वर्णन **भा०** भणवौ कहिवौ **जि०** राजानौ वर्णन जिहां जितशत्रु राजा **त०** तेहनो धारणि देवी पटराणि रूप वर्णन. **ए०** एम **स०** सर्व समोसरण सूधी **भा०** कहवौ. *तेणं कालेणं* महावीर रूप वर्णन. *तेणं कालेणं समणे भगवं महावीरे आइगरे णं जाव सुहं विहरिज्जमाणे* पछै वाणियगाम नगर पधार्या पछै हिवै समोसरण वर्णन. *तेणं कालेणं तेणं समएणं* बहवे अंतेवासी साधु वर्णन सुधी १२ तप वर्णन पछै ४ प्रकारना देव वर्णन सूधी **जा०** जावत् **पु०** पृथ्वी सिलापट्टनै विषै **सा०** स्वामी समोसर्या. इहां पूर्वोक्त समोसरण संपूर्ण अत्र वर्णननो उववाइ मध्ये छै. **प०** परिषदा **नि०** वांदवा गई. **ध०** धर्मोपदेशनो वर्णन *तए णं समणे भगवं महावीरे [औप. सू. ३४]* इत्यादि श्लोक समझवै कह्यौ. **प०** धर्मोपदेश सांभलीने परिषदा पाछी वली.

[बा.३४] **अ०** हे आर्य ! इम कहीने **स०** श्रमण भगवंत **म०** श्रीमहावीर **स०** श्रमण **नि०** निर्ग्रंथने **नि०** निर्ग्रंथीने **आ०** कोमल आमंत्रण देइने **ए०** इम **व०** बोल्या. **इ०** ए जिनशासननै विषै **ख०** निश्चै **अ०** हे आर्यो ! **नि०** ज्ञानादिके साधू, वा शब्द उत्तरपक्ष भणि तथा समुच्चये **नि०** साधवीने **इ०** ईर्यासमितिवंत १ **भा०** भाषा समिति निर्दोष भाषावंत २ **ए०** एषणा समिति निर्दोष आहारनो लेणहार ३ **आ०** ग्रहवो **भं०** उपगरण **म०** मात्रादिक **नि०** मूंकवा एहवी चोथी समिति करी महायतनावंत ४ **उ०** वडीनीत **पा०** लघुनीत **खे०** बलखो **सिं०** नाकनो मेल **ज०** शरीरनो मेल इत्यादिक **पा०** परठववानि समिति करी समितिवंत एह साधू ५ **म०** शुभ मनो जोगनो प्रवर्तावणहार मने करी समितिवंत ६ **व०** शुभ वचन योगना प्रवर्तावणहार साधू, निर्दोष वचन बोलवे करी वचनसमितिवंत ७ **का०** शुभ काय जोगना प्रवर्तावणहार, चपलपणा रहित कायाइं करी समितिवंत ८ **म०** अशुभ मननो गोपवणहार हुवै ९ **व०** अशुभ वचननो गोपवणहार १० **का०** अशुभ काय जोगनो गोपवणहार हुवै ११ **गु०** गोपव्या छै पंचेंद्रीना विकार जेणे १२ **गु०** नवविध **बं०** ब्रह्मचर्यनि गुप्तिना धरणहार १३ **अ०** आत्माना अर्थना साधणहार १४ **आ०** सर्व आत्माना हितकर १५ **आ०** पोताना आत्मानै वस वर्तै मन वचन कायाना जोग जेहना १६ **आ०** आत्मानै अर्थे **प०** समकित सहित पराक्रमना करणहार १७ **प०** पाक्षिक पोषध चतुर्दशी अष्टमी अमावस पूर्णिमा पाखी **पो०** पोषध ते उपवास कर्वे करी **स०** पामी छै परम भावसमाधि जेणे १८ **झि०** धर्मध्यान शुक्लध्यानना ध्यावणहारा १९ **इ०** एहवा साधूने एहवा **द०** दस **चि०** भाव समाधीना स्थानकनै **अ०** पूर्वे नथी पाम्या एहवा **स०** ऊपजै पामै **पु०** शुभ चारित्र जिन प्रणीत धर्म तिवारे एहवा **तं०** ते ए परूप्यौ विचारणा.

[बा.३५] [१] **ध०** सर्वधर्ममांहि मुक्तिपद पामियै ते धर्म ते कोण हसै एहवी विचारणा तथा धर्म ते सभाव जीवद्रव्यना तथा अजीव द्रव्यनो तेहनै विषै जे चिंता 'ए रूपी वा अरूपी, ए मध्ये निश्चै व्यवहार ते सूं' इत्यादिक विचारणा **से०** अथ **वा०** अवधारणे **अ०** पूर्वे नथी ऊपनि ते धर्मनि चिंता **स०** ऊपजै तिवारे **स०** सर्व धर्मने **जा०** जाणै केवलीवत् जाणै जे तीर्थंकरनि आग्या प्रणीत धर्म ते प्रमाण मुक्तिनो हेतु बाकी सर्व संसार परिभ्रमणनो हेतु १.

[२] **स०** समकित सहित **जा०** जाति स्मर्ण ज बधकारे **वा०** पद पूर्णे सनी ज होइ **अ०** पूर्वे समकित सहित नथी उपनु **स०** समकित सहित तेहवो ऊपजै तेणे करी **अ०** पोतानि 'अहं सरामि' इत्यादि पाठ अमुकोऽहं पूर्वभवे अभवं सुदर्शनादिवत् **पो०** पाछल जात भव **सु०** संभारै उत्कृष्टा संख्याता संभारि ए बीजी समाधि २.

[३] **सु०** समकितवंतनि परे सुपना देखै **वा०** पूर्णे **से०** ते **अ०** पूर्वे मिथ्यातमांहे तेहवो पूर्वनो हेतु दीठो तेहवा **स०** ऊपजै लाधै **अ०** यथातथ्य फलनै पामै वीरवत्, यथातथ्य सुपननै देखै महावीर १० दीठा तथा १४ स्वप्न वली संबुड साधु प्रमुखे ए तीजी समाधि ३.

[४] **दे०** समकित दृष्टि देवतानो दर्शन **से०** ते **अ०** नथी दीठो **पु०** पूर्वे **स०** सोमिल ब्राह्मण १ तेतली प्रधान २ सकडाल पुत्र ३ प्रमुखे दीठो तथा दर्दुरादिक देव समकितवंत देवनुं दर्शन देखै **दि०** प्रधान **दे०** देवनि ऋद्धिने **दि०** देदीप्यमान **दे०** देवना शरीरनि **जु०** कांतिने **दि०** प्रधान **दे०** देवतानो वैक्रियरूप विक्रियारूप महिमानै **पा०** देखै ए चोथी समाधि ४.

[५] **ओ०** अवधिग्यान मिथ्यातमांहे पूर्वे नथी ऊपनौ तेहनै **स०** ऊपजै उत्कृष्टौ अलोक मध्ये असंख्यात खंड लोक प्रमाण लोकनै **ओ०** अवधि करी **लो०** लोकनै **जा०** जाणै आनंदादिवत्. ए ५मी समाधि ५.

[६] **ओ०** अवधि दर्शन सामान्यपणै देखै ते **वा०** पूर्णे **से०** अथ **अ०** पूर्वे नथी ऊपनौ ते **स०** ऊपजै **ओ०** अवधि दर्सने करी लोकने **पा०** देखै. ए छट्ठो समाधिनो स्थानक असोचादिवत् ६.

[७] **म०** मनपर्यवज्ञान **वा०** पुनः **से०** अथ **अ०** नथी ऊपनौ पूर्वे ते **स०** ऊपजै मनुष्य १ सन्नी २ कर्मभूमिना ३ संख्याता वर्षना ४ पर्याप्ता ५ समदृष्टि ६ संजती ७ अप्रमत्त ८ लब्धिवंत ९ एहवा मनुष्यने **अं०** मनुष्यक्षेत्रमांहि छेहडा सूधी **अ०** अढी द्वीपनै विषै **स०** समुद्रनै विषै **स०** सन्नी पंचेंद्री **प०** पर्याप्ताना **म०** मनमांहि चिंतव्या भावनै **जा०** जाणै. ए सातमो समाधिनो स्थानक ७.

[८] **के०** केवलग्यान **वा०** पुनः **से०** अथ **अ०** पूर्वे नथी ऊपना **स०** ते ऊपजै तेणै करी **के०** संपूर्ण **लो०** असंख्याता लोकालोकनै अनंता लोकनै **जा०** जाणियै. ए ८मो समाधीनो स्थानक ८.

[९] **के०** केवलदर्शन बीजे समे होय ते **वा०** पुनः **से०** अथ पूर्वे नथी ऊपनो ते **स०** ऊपजै तेणे करी **के०** संपूर्ण **लो०** लोक अलोक **पा०** देखै. ए ९मो समाधि स्थानक ९.

[१०] **के०** केवलग्यान सहित **म०** मरण **वा०** पूर्णे **से०** अथ **अ०** पूर्वे नथी पाम्या ते **स०** ऊपजै पामै ते **स०** सर्व कर्मथी मूकाववाने अर्थे होय सर्व ८ कर्मथी मूंक्या. ए दशमो थानक समाधिनुं १०.

[बा.३६] ए १० थानक गद्य पाठे कह्या. १७ गाथा करी कहै छै. हिवै ए ही ज वलि श्लोक **ओ०** निरमल चित्तनै **स०** सम्यग् भली परे **आ०** ग्रहीने अंगीकार करीने **प्प०** धर्म ध्याननै करै **ध०** श्रुत सहित चारित्र धर्मने विषै रह्यो थको **अ०** शंका रहित **नि०** उपसम भाव तथा मोक्षनै **अ०** पामै असोचा केवलीनी परे १. ए समकितनो फल.

**ण०** नही ए शब्द बीजूं पद माहो माहि जोडवानुं **इ०** ए पूर्वोक्त **चि०** ज्ञानने **स०** ग्रहीने प्रवर्ततो थको **भु०** वार वार **लो०** संसारने विषै **जा०** ऊपजै नही, इहां नही ए शब्द प्रथम पदनो लीधो **अ०** पोतानो पूर्वभवनो **उ०** संजमादिक **ठा०** थानकनै **स०** जाती स्मरण रूप मति ज्ञाने करी **जा०** सर्व जाणै २.

**अ०** यथातथ्य **तु०** पूर्णे **सु०** स्वप्ननै **खि०** शीघ्र **पा०** देखै **सं०** साधू **स०** सर्व **वा०** पूर्णे **ओ०** संसार समुद्रनै **त०** तिरै **दु०** दुख **दो०** बे शारीरी मानसी दुखथी **वि०** मूकाइं ३.

**पं०** अंत प्रांत आहारनै **भ०** सेवणहार साधु **वि०** पसु पंडग रहित **स०** थानक पाट पाटलाना सेवणहार **अ०** अल्प आहारना करणहारनै **दं०** दमित इंद्रिय एहवी साधूनै **दे०** देवता दर्शन दिइं **ता०** छकायनि रक्षाना करणहारनै ४.

**स०** सर्व कामभोगथी **वि०** निवर्त्या छै **ख०** भय करी बीहामणा परीसहने खमणहार साधूनै **त०** ते माटे **से०** तेहवा साधूनै **ओ०** अवधिज्ञान होइ **सं०** संजमवंत **त०** तपस्वीने उत्कृष्टौ भेद कह्यौ बाकी समकितदृष्टि देशविरतीने पण अवधि ऊपजै ५.

**त०** तपे करी **अ०** अवहट्टु इत्यादि पाठ **ले०** भूंडि लेश्या नियाणा प्रमुख जेणे एहवानै अर्थे अशुभ लेश्या टालीने कृष्णादि **दं०** अवधि दर्सन **प०** अति हि सुद्ध होइ **उ०** ऊर्ध्व **अ०** अधो **ति०** त्रीछी दिसे **च०** पादपूर्णे **स०** सर्व रूपी द्रव्यनै देखै उत्कृष्ट दर्शन ६.

**सु०** अति हि **स०** चित्तने विषै थापीने **ले०** शुक्लादिक लेश्या जेणे **अ०** नथी मननो डमडोलपणौ जेहथी साधूने **स०** सर्व बाह्याभ्यंतर परिग्रह थकि मूंकाणा एहवा साधूनै **आ०** आत्मा **जा०** जाणै **प०** मनना पर्यवनै ७.

**ज०** जिवारे ते साधूने **णा०** ज्ञानावर्ण **स०** सर्व क्षय गयौ होइ **त०** तिवारे **लो०** लोकालोकनै **जि०** जिन **जा०** जाणै **के०** केवली ८.

**ज०** जिवारे **से०** ते साधूनै **दं०** दर्सनावर्णि कर्म **स०** सर्व नव प्रगतरूप **ख०** क्षय पांम्या हुई **त०** तिवारे **लो०**

लोक अलोकनै **जि०** जिन **पा०** देखै **के०** केवली ९.

**प०** बारमी भिक्षुनि प्रतिमा **वि०** निरमल करीने सुध आराधै **मो०** मोहनि कर्म **ख०** क्षय गए छते **अ०** संपूर्ण **लो०** लोक अलोकनै **पा०** समाधिवंत साधू. ए उत्कृष्टो भेद पडिमानो १०.

**ज०** यथा ताड वृक्षना **म०** माथानि ऊपरलि श्रेणिने ऊपरला विभागनै **ह०** छेद्ये थके ताल वृक्ष **ह०** हणइ **ए०** एणे दृष्टांते **क०** कर्म घातिया **ह०** हणाइ **मो०** मोहनि कर्म **ख०** क्षय गए छते ११.

**से०** सेनापति कटकनो नायक हण्ये छते **ज०** जिन **से०** ते कटक **प०** प्रकर्षे **ण०** नास पामे **ए०** अथ भाव दृष्टांत जोडै छै इम सर्वकर्म प्रकर्षे नास पामै **मो०** मोहनी कर्म क्षय गए छते १२.

**धू०** धूमाडा रहित **ज०** जिम **अ०** अग्री **खी०** क्षय पामे **से०** ते अग्नि **नि०** इंधण रहित एणे दृष्टांते **ए०** इम **क०** कर्म घातिया **खी०** क्षय पामै **मो०** मोहनि कर्म क्षय पाम्ये छते १३.

**सु०** सूकौ छै **मू०** मूल जेहनो **रु०** एहवो वृक्ष **सि०** पाणीइं सींचता थकां पण **ण०** ऊगे नही **ए०** इम **क०** कर्म **ण०** प्रगटै नही **मो०** मोहनि कर्म क्षय गए छते १४.

**ज०** जिम **द०** बल्या बीज वाव्या थका **ण०** प्रगटै नहि **पु०** वली फेरीने बल्या बीजनो **अं०** अंकुर तिम **क०** कर्म रूप बीज **द०** ते प्रधान रूप अगन वली छै ते **न०** उपजै नही **भ०** संसार जन्म रूप अंकुरा १५.

**चि०** छांडीने **उ०** उदारीक **बों०** शरीरनै **ना०** नाम कर्म **गो०** गोत्र कर्म उदय वली **के०** केवल ग्यान **आ०** आउखा कर्मने **वे०** वेदनी कर्मने **छि०** वली छेदीने **भ०** होई **णी०** रज रहित सिद्ध होवै १६.

**ए०** इम **अ०** भलि परे जाणीने **चि०** ग्याननै **मा०** ग्रहीने **आ०** हे आउखावंतो ! **से०** भाव नीसरणि ज्ञानादिक रूप **सो०** श्रद्धा निर्मली छै तेहने **उ०** पामीने **आ०** आत्मानि सोधि आत्माना रूप सिद्धपणानै **मु०** देखै. **त्ति०** इम **बे०** हूं कहु छुं १७. पांचमो अध्ययन संपूर्ण ५.

## [षष्ठदशा उपासकप्रतिमाध्ययनम्]

पांचमे अध्ययने समाधि वर्णवी. ते तो समाधि समकित सहित प्रतिमाधारीने हुइ. ते समकित सहित इग्यारे पडिमा श्रावकनि छट्ठे अध्ययने वर्णवै छै. इहां प्रथम अक्रियावादी कह्यौ. तेहनो विशेष लिखीए छै. जे समकितदृष्टि ते क्रियावादी कहिए अने तेहनो प्रतिपक्षी ते अक्रियावादी. ते माटे प्रथम अक्रियावादी ते मिथ्यात्वी प्रथम वर्णवै छै. ते मिथ्यात प्रथम समुचय निह्नव प्रमुख सहूना लक्षण कहै छै.

[बा.३७] **सु०** सांभल्यौ **मे०** में **आ०** हे आउखावंत ! **ते०** तेणे त्रिसलाना अग्र जात तेणै **भ०** भगवंत महावीरि **ए०** एम **म०** कह्यौ अर्थ थकी **इ०** ए जिनशासनने विषै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **इ०** इग्यारे **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिज्ञा अभिग्रह रूप मर्यादा **प०** परूपी श्री तीर्थंकर गणधरादिके.

[बा.३८] **क०** कोण **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंतश्री महावीरि **इ०** इग्यारे **उ०** श्रावकनि प्रतिज्ञा अभिग्रह विशेष मर्यादारूप **प०** परूपी ?

[बा.३९] **इ०** ए आगल कहस्यै ते **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंत श्री महावीरि **इ०** इग्यारे **उ०** श्रावकनि प्रतिमा अभिग्रह विशेष **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै- **अ०** समकित दृष्टीने अक्रियावादीनो स्वरूप ओलख्यौ जोइयै ते ओलखावै छै अक्रियावादी ते मिथ्यात्वदृष्टी एहवो **भ०** हुई **णो०** नथी हितकारीना बोलणहार, नथी हितकारी प्रज्ञा

जेहनि **नो०** नथी हितकारी दृष्टी जेहनि एतले मिथ्यादृष्टी **णो०** नथी यथातथ्य पदार्थनो बोलणहारो समकितवादी नही **णो०** नित्य ते मिथ्यात्व तेहनो परूपक नही, ए पांच विशेषण सर्व मिथ्यात्वीना निह्नव प्रमुखना जाणवा. हिवै नास्तिकवादी मिथ्यात्वीना लक्षण कहै छै. **ण०** नथी छै परलोक परभव एहवा वचननो वादी बोलणहार १ **ण०** नथी **इ०** इहलोक प्रत्यक्ष ए सर्व भ्रम रूप दीसै छै १ **न०** नथी परलोक २ **ण०** नथी माता ३ **ण०** नथी पिता ४ ए सर्व भ्रम झांझवा रूप. **ण०** नथी **अ०** तीर्थकर ५ **ण०** नथी चक्रवर्ती ६ **ण०** नथी बलदेव ७ **ण०** नथी वासुदेव ८ **ण०** नथी नरक ९ **ण०** नथी **ति०** तिर्यंच नारकीयादि ४ गति १० **ण०** नथी **सु०** सुकृत दयादिक **दु०** हिंसादिकना **फ०** फल ते एहनो **वि०** भोगववानो विशेष ११ **णो०** नथी तप संजम करणीना **सु०** भला भोगववा फल **भ०** नही १२ **णो०** नही **दु०** चोरी परदारागमन **क०** एहवा कर्तव्य **दु०** भूंडा माठा फल भोगववा ते नथी १३ **अ०** फल नथी **क०** कल्याण धर्मने विषै **पा०** पापाने विषै फल नथी **णो०** नथी ऊपजै जीव परभवे **ण०** नथी **णि०** नारकी देव नर तिर्यंच १६ **ण०** नथी **सि०** मुक्ति १७.

[बा.४०] **से०** ते एहवा वादनो करणहार **ए०** एहवी खोटी प्रज्ञा **ए०** एहवी खोटी दृष्टीनो धणी **ए०** एहवा **छं०** अभिप्रायने विषै जे **रा०** राग तेहने विषै मति **णि०** थापी छै जेणे एहवो होय ए दर्सनि मिथ्यात्वी वखाण्यौ.

[बा.४१] हिवै गृहस्थ वखाणै छै. अथ इहांथी १४ बोल कहिस्यै. तेह **से०** ते वेषधारी **य०** तेह संबंधी गृहस्थ मिथ्यात्वी एहवो होय ते कहै छै – **म०** मोटी इच्छा संसारनि कर्तो १ **म०** महामोटो आरंभि २ **म०** महापरिग्रहवंत ३ **अ०** अधर्मि ४ **अ०** अधर्म केडे चालै ५ **अ०** अधर्मनो सेवणहार ६ **अ०** अधर्म वाल्हो ७ **अ०** अधर्मनो परूपक ८ **अ०** अधर्मनो रागी ९ **अ०** अधर्मनो **प०** देवणहार १० **अ०** अधर्मे जीवै ११ **अ०** अधर्मने विषै **प०** उद्यमी १२ **अ०** अधर्म स्वभावे हर्षे आचरै १३ **अ०** अधर्मे करी **वि०** आजीविका कर्ता **वि०** विचरै १४.

[बा.४२] हिवै एकलो पापी मिथ्यात्वी वर्णवे छै – **ह०** हणवौ **छिं०** करणादिकनो छेदवौ **भिं०** त्रिसूले भेदवौ तेणे **वि०** कातरणहार **लो०** लोही खरड्या हाथ **पा०** पापी **चं०** दुष्ट **रु०** निर्दय बीहामणो **खु०** माठा कामनो करणहार **अ०** अविचार्या कामनो करणहार **सा०** धीठो **उ०** लांच **वं०** परवंचनना करणहारा **णि०** निवड माया **कू०** धूर्तपणो एतला कर्वानै विषै **सा०** अतिशयपणुं तेणे करी तेहनो **सं०** प्रयूंजवौ तेणे करी **ब०** पुष्ट छै **दु०** माठो आचारी १४ **दु०** भूंडि संगतनो करणहार १५ **दु०** भूंडि आचरणाना **दु०** आचर्णहारा १६ **दु०** दुर्व्रतना धणि १७ दुष्ट भावना धणि १८ भूंडे कामे भलुपणौ मानै, उपकार न मांनै १९ **नि०** अब्रह्मचारी २० **णि०** व्रत रहित २१ **णि०** क्षमादि गुण रहित २२ **णि०** किसीइ मर्यादा नथी **णि०** कोइ पचखाण नही **पो०** पोसो नही उपवास नही, ए त्रिण मिली एक बोल **अ०** भूंडो आचार.

[बा.४३] **स०** सर्व **पा०** जीव घातथी **अ०** निवर्त्यो नथी, किहां सूधी ? **जा०** जावजीव सूधी **जा०** जावत् **स०** सर्व परिग्रहथी नथी निवर्त्या **ए०** इम **स०** सर्व **को०** क्रोधथी **स०** सर्व **मा०** मानथी **स०** सर्व मायाथी **स०** सर्व **लो०** लोभथकी **स०** सर्व **पे०** राग थकी **दो०** द्वेष थकी **क०** कलह थकी **अ०** आल देवा थकि **पे०** चाडी थकि **प०** पारका अवर्णवाद थकी **अ०** अरति रति थकि, अरति धर्मने विषै ऊपजै अधर्मने विषै रति ऊपजै इत्यादिक भावार्थ एतले शुभ कर्तव्यने विषै अरति ऊपजै अने अशुभ कर्तव्यने विषै रति ऊपजै **मा०** मायामृषाथी **मि०** मिथ्यात्व दर्शन शल्य, ए १८ पाप स्थानकथी **मि०** क्रियावादी कुप्रावचनीक नथी लोकोत्तर ए बे मिथ्यात्व नथी निवर्त्यो **अ०** १८ पापस्थानथी तथा आगला २३ बोलमांहि मेलिइं तिवारे समुचय ४१ बोलथी **अ०** निवर्त्यो नथी **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **न्हा०** स्नान **व०** अजीर **व०** गुलाल **क०** रक्त वस्त्र **दं०** दांतणनो काष्ठ **ण्हा०** स्नान **म०** मर्दन **वि०** विलेपन **स०** शब्द **फ०** फर्स **र०** पांच रस रूप **गं०** गंध **मा०** माला **अ०** आभर्ण एतला वांना सर्व

थकि **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **स०** गाडा **र०** रथ **जा०** रथ विशेष **जु०** पुरुष उपाडै ते जुग **गि०** अंबाडि प्रमुख **थि०** खर उपाडै ते **सी०** शिबिका सहस दांडा शिबिका विशेष १ दांडा प्रमुख नांनी **स०** पल्यंकादिक **अ०** सिंघासनादिक **जा०** समुद्रनो वाहन नावा **भा०** जीमण **प०** घर विखराना **वि०** विधिथी **अ०** नथी निवर्ता **जा०** जावजीव सूधी अणविमास्यानो करणहार. **स०** सर्व **आ०** घोडा **ह०** हाथी **गो०** गाय **म०** भेंस **ग०** छाल्यां बोकडा **दा०** दासी दास ते वेचाता लीधा **क०** घरना चिंतागरा **पो०** पाला चाकर ते थकि **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावजीव लगे. **स०** सर्व **क०** लेवो **वि०** वेचवो **मा०** मासो तोल **अ०** अध मासो रूपा सोनाना **सं०** ते व्यापार थकी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **हि०** अणघड्या सोनो **सु०** घाट घडवो सोनो **ध०** धन **ध०** धान्य **म०** चंद्रकांत्यादिक **मो०** मोती मुक्ताफल **सं०** शंख ते दक्षिणावर्त **सि०** बहूमूल्य शिला **प्प०** प्रवाल प्रमुखथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **कू०** कूडा तोल कूडा मापला थकी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **आ०** उपगरण नीपजाववा **स०** ते उपगरण प्रहारादि करवा थकी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **क०** पोते कर्वो **क०** आगला पाहे ३ जोगे करावववौ तेथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **प०** पोते ३ योगे पचवौ एतले रांधवौ **प०** परपाहे पचाववौ रंधाववौ तेथी **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी. **स०** सर्व **कु०** कूटवौ **पि०** पिटवौ **त०** तर्जवौ **ता०** ताडवौ **व०** मारवौ **बं०** बांधवौ **प०** अति हि कलेशादिक थकी **अ०** निवर्त्या नथी **जा०** जावजीव सूधी. **जे०** जे वली एथी अनेरा **त०** तथा प्रकारना **सा०** सावद्य कर्म **अ०** जेणे करी समकित न पामै तेहवा माठा कर्म **क०** करै. **प०** पर जीवने **प०** परितापना ऊपजै तिम **क०** करै. **त०** ते माठा कर्मथी पिण **अ०** नथी निवर्त्या **जा०** जावजीव सूधी.

[बा.४४] अथ वलि तेहना दुष्ट परिणाम विस्तार दृष्टांते करी कहै छै – **से०** ते यथा नाम दृष्टांते **के०** कोइ पुरुष **क०** कलम सालि विशेष **म०** मसूर **ति०** तिल मूंग **मा०** उडद **नि०** झालर **कु०** कुलत्थ **आ०** आलिसंद **ज०** जवजवा **मा०** इत्यादिक ए नव आदि देइ २५ धानने विषै **अ०** अहित थाय **कु०** क्रूर कर्मनो करणहार **मि०** निरर्थक प्रयोजन विना **द०** उपाडी नांखै, अर्थ विना दंडने **प०** प्रयूंजै करै. **ए०** एणे दृष्टांते **त०** तथा प्रकारना **पु०** पुरुष दुष्ट इत्यादिक जीवनै मारै. ते केहवा जीव ? **ति०** तीतर **व०** वटाव **ला०** लावक **क०** पारेवा होला **क०** कपिंजल **मि०** मृग **म०** भेंसा **व०** वराह **गा०** ग्राह **गो०** गोह **कु०** काछवो **स०** सरपादिक जीवनै विषै **आ०** अत्यंत **कू०** क्रूर परिणामे **मि०** मिथ्यादंड **प०** प्रयूंजै मारै.

[बा.४५] **जा०** जे पिण **से०** तेहनि **बा०** बाहिरली **प०** परिषदा **भ०** हुइ **तं०** ते कहै छै - **दा०** दासी तथा दासीपुत्र **पे०** कामकाजे मोकलिइं ते **भ०** जीमाड्यै कामकाज करै **भा०** भागिओ पांतीनो धणि **क०** कामनो करणहार चाकर **भो०** भोग पुरिस भोगववानो **ते०** ते दासादिकमांहि **अ०** अनेरा **अ०** यथार्थ पिंड **ल०** थोडो सो **अ०** अपराध कीधे छते **स०** पोते ऊठीने **गु०** मोटा **दं०** दंडनै **व०** प्रयूंजै करै **तं०** ते कहै छै. **इ०** एहनै **दं०** लूटी ल्यौ **इ०** एहनो **मुं०** मस्तक मूंडौ **इ०** एहने तर्जना करौ **इ०** एहनै ताडौ मारौ **इ०** एहने **इ०** बाहुनो बंधण करो **इ०** एहने **नि०** बेडीनो बंधण करौ **इ०** एहने **ह०** हडिमांहि घालौ **इ०** एहनै **चा०** बंदिखाना मांहि घालौ **इ०** एहनै **नि०** लोहनि बेडीने जुगल जोडले करी **सं०** अंगोपांगनो संकोचवौ **मो०** अंगादिकनो मोडवो **क०** करौ. **इ०** एहना हाथ छेदौ **इ०** एहना **पा०** पग छेदौ **इ०** एहना कान छेदो **इ०** एहना नाक छेदो **इ०** एहना होठ छेदो **इ०** एहना **सी०** मस्तक छेदो **इ०** एहना **मु०** मुख छेदन करो **इ०** एहना **वे०** हृदयनो आकार छेदो **इ०** एहना **हि०** हीयानि चामडि उखाडौ मांहिलो मांस काटो **न०** आंख काटौ **दं०** दांत पाडौ **व०** वदनथी जीभ उपाडि दूर करौ **इ०** एहने **उ०** ऊंचो बांधौ **इ०** एहनै भूमिसों घसौ **इ०** एहनै **घो०** आंबानि घोलौ **इ०** एहनो **सू०** सूलीने विषै आरोपो **इ०**

एहने **सू०** त्रिसूले भेदो **इ०** एहनै **खा०** पाछणे छेदी खार भरो **इ०** एहने **द०** डाभे कापो **इ०** एहनै **सी०** सीहने पूंछडे बांधो **इ०** एहने **व०** वृषभनै पूंछडे बांधो **इ०** एहने **द०** दावाग्नी कांडापरी वींटीने बालो **इ०** एहना **का०** डीलनुं मांस कापी एहने खवरावो **इ०** एहने **भ०** भात पाणि मा आपस्यौ **इ०** एहने **जा०** जावजीव सूधी **बं०** बांधि राखवौ, मूंकवौ नही **इ०** एहने **अ०** अनेरेइ **अ०** अशुभ **कु०** कुमरणे करी **मा०** मारो. ए बाहिरली परिषदा कही.

[बा.४६] अथ अभ्यंतर परिषदा कहै छै – **जा०** जिका वलि तेहनै **अ०** मांहिली परिषदा **भ०** हुइ **तं०** ते कहै छै. **मा०** माता पोतानि **पि०** बाप पोतानो **भा०** भाई पोताना **भ०** बहिन पोतानी **भ०** भार्या स्त्री **धु०** दीकरी **सु०** बेटानि बहु **ते०** तेहनो पण **णं०** अलंकारे **अ०** अनेरे प्रकारे **अ०** यथा **ल०** थोडो सो **अ०** अपराध छते एतले थोडे अपराधे **स०** पोते ज ऊठीने **गु०** मोटा दंडनै **व०** देवरावै **तं०** ते कहै छै. **सी०** थाटौ पाणि **वि०** घणौ तेहने विषै तेहनो **का०** शरीर बोलै एहवो हुवै **उ०** उन्हौ पाणि घणौ तेहने विषै **का०** काया **सिं०** सीचावै एहवो व्है. **अ०** अग्नी ऊंबाडादिके करी कायानै **उ०** जलावै एहवो होय **जो०** जोत्रे करी **वे०** वेत्रे करी **ने०** कबाइ करी **क०** चाबखे करी **छि०** चिवटीए करी **ल०** नीली वेलडीइं करी **पा०** पसवाडे **उ०** प्रहार दीइं एहवो **भ०** हुवै **दं०** लाकडीइं करी **अ०** हाडके करी **मु०** मूठीइं करी **ले०** नांने काकरे करी **क०** ठीकरी करि **का०** कायाने **आ०** मारणहारो व्है.

[बा.४७] **त०** तेहवो **पु०** दुष्ट पुरुष घरमांहि **स०** वसतां थकां **दु०** जिम उंदर वडौ मंजारनै देखी दुख पामै दुखीयो थइ तडफडै तिम स्वजनादिक तेहने देखीने दुःख वेदै तिम दुःख पामै **दु०** मनमांहि दुख वेदवौ होय. **त०** वलि तेहवो **पु०** दुष्ट पुरुष जिवारे **वि०** वेगलो प्रदेशे जाय तिवारे स्वजन **सु०** सुख मांनै एहवो **भ०** हुई.

[बा.४८] **त०** तेहवो पूर्वोक्त दुष्ट पुरुष **दं०** दंडनो **मा०** मृषी **दं०** दंडे करीने गुरुक ते दंडगुरु कहै **दं०** दंडने आगले करी प्रवर्तै छै ते दुष्ट अहित होइ. सगा होइ नवां छै **अ०** इहलोकने विषै दंडाइ अहित थाइ **प०** परलोकने विषै ते दुःखनै पामै. ते स्या माटे दुख परनो दुखादिक उपजावै ते कहै छै. **तं०** ते परने दुख उपजावै **सो०** सोक उपजावै **ए०** इम **जु०** झुरावै **ति०** आंसू नखावै **पि०** पीटावै **प०** परितापना उपजावै. **दु०** ते दुष्ट परने दुख उपजाववाथी **सो०** सोकथी **झू०** झूरावा थकी **ति०** तिपाववा थकी **पि०** पिटाववाथी **प०** तपाववाथी **व०** वध बंधन **प०** किलेसादिक परनै उपजाववाथी **अ०** निवर्त्या नथी **भ०** होइ.

[बा.४९] **ए०** पूर्वोक्त सर्व अवगुण सहित **इ०** दुष्ट ते नर स्त्रीना कामभोगनै विषै **मु०** मूर्छाणा **गि०** गृद्ध थका **ग०** अति हि लंपट **अ०** अतृप्ता थका **जा०** जावत् **वा०** वरस **च०** च्यार **पं०** पांच **छ०** छ **द०** दश वरस **अ०** थोडा काल **भु०** घणुं **का०** काल सूधी **भुं०** भोगवीने **का०** कामभोग **प०** उपार्जीने **वे०** वेरना थानकनै **सं०** एकठा मेलीने **ब०** घणा **पा०** कर्म मेलीने **उ०** प्राहि **सं०** भार कीधा जे कर्म तेणे प्रेरवे करी **से०** हिवै **ज०** कोमलामंत्रणे यथा दृष्टांते **अ०** लोहडानो गोलो **से०** पाषाणनो गोलो **उ०** पाणीने विषै **प०** मूक्यौ थकौ जिम **उ०** पाणीनो तल **म०** उलंघीने **अ०** हेठे **ध०** धरतीने तले **प०** पापरूप कादवे करी खरड्यौ थकौ रहै.

[बा.५०] **ए०** एणे दृष्टांते **त०** ते पूर्वोक्त **पु०** दुष्ट क्रियावादी पण केहवा छै ? ते कहै छै- **व०** पापे करी **ब०** पुष्टौ **धु०** बांध्या जे कर्म तेणे करी पुष्टौ **पं०** पाप रूप कादवे पुष्टौ खरड्यौ **वे०** घणा जीवांने वेरे पुष्टो **दं०** माया **नि०** ए विशेष माया **आ०** तीर्थकरनो मार्ग आघो पाछौ परूपवे करी आसातनाइं पुष्टा जमाली प्रमुखनि परे **अ०** घणा जीवने खंड्या तेहने पापे करी **आ०** साति इत्यपि पाठ दंभ नियडीनुं अतिशयपणुं **ब०** पुष्टौ छै **अ०** अउसी करी **ब०** पुष्टौ अविस्वास ऊपजवे **ब०** पुष्ट छै **उ०** प्राहि **त०** त्रस **पा०** जीवने **घा०** घातनो करणहार

**का०** कालने **मा०** अवसरे काल करीने **ध०** एक हजार जोजन धरनि तल **म०** उलंघीने **अ०** हेठे यथावस्थित नरगनै तले नर्कावासानै विषै **प०** रहिवानो स्थानक **भ०** करै.

[बा.५१-५२] **ते०** अथ नर्कावासनो अधिकार कहै छै. ते नर्कावासा केहवा छै ? **अं०** मांहिला पासा वाटला एतले गोल **बा०** बाहिरले पासे **च०** चोखूणा **अ०** हेठे **खु०** छुर पलाठी खाने **स०** संस्थाने संस्थित छै **नि०** सदाइ अंधकार **त०** महा अंधकार छै एतले उद्योतनो अभाव छै. नरकनै विषै तीर्थंकरना जन्म १ दीक्षा २ अने केवलग्यानादिके बे घडी लगे उद्योत होइ ते प्रथम नर्के सूर्य सरीखौ १ बीजी नर्के सूर्य वादला मध्ये २ तीजी नर्के चंद्रमा सरीखौ ३ चोथी नर्के चंद्रमा बादला मध्ये ४ पांचमी नर्के ग्रह सरीखौ ५ छट्ठी नर्के नक्षत्र सरीखो ६ सातमी नर्के तारा सरीखौ ७ अन्यथा सर्व काले अंधकार छै. **व०** नथी तिहां **ग०** ग्रह बुधादिक **चं०** चंद्रमा **सू०** सूर्य **ण०** नक्षत्र **जो०** तारा ज्योतिषीनी **प०** प्रभा **मे०** मेद **व०** चरबी **मं०** मास **रु०** लोहि **पू०** राधनौ **प०** समूह **चि०** कादव तेणे करी **लि०** लीपाणौ **अ०** विशेषे लीपाणौ **त०** तलौ ६ **अ०** विष्टा **वा०** कूह्लामडाथी **प०** अति ही **दु०** दुर्गंध ७ **का०** कापोत **अ०** अगनीने **व०** वर्णे धरति काली छै जिहां ८ **क०** खरखरो फरस ९ **दु०** दुखे दोहिला अह्लास्या जाइ १० **अ०** एहवा अशुभ नर्कावासा ११ एहवा नर्कावासानै विषै **अ०** अशुभ वेदना खमवी नरकनि. **णो०** निषेध **ण०** नरकनै विषै **णे०** नारकी **णि०** निद्रा न पामै मेषोन्मेष न मिलै **प०** ऊभा बेठा निद्रा आवै ते प्रचला **स०** संभारवौ **र०** रतिपणुं **धि०** धैर्यपणुं **म०** मति उपजवी **उ०** एतला वांना न उपजै. **ते०** ते **त०** तिहां नरकनै विषै **उ०** उज्वल **वि०** सर्व शरीर व्यापी **प्प०** अति हि उत्कृष्ट **क०** खरखरी पाषाणनि परे **क०** गिलोयनि परे **चं०** कडुइ करो **दु०** दुखकारी **दु०** विसम **ति०** तीखी बरछीणी परे घणी **दु०** अहियासता दोहिली **ण०** नरकनै विषै **णे०** नारका **ण०** निरंतर नरकनि **वे०** वेदना **प०** अनुभवता भोगवता थका. अत्र नर्कना दुख प्रश्नव्याकरणे प्रथम आश्रव द्वारे कह्या तेहवा जाणवा **वि०** विचरे.

[बा.५३] **से०** ते यथा दृष्टांते नाम संभावना **रु०** वृक्ष होय **प०** पर्वतने अग्रे **जा०** ऊपनौ **मू०** थूड छेद्यौ मूल खोपरो छै **अ०** ऊपरे **ग०** भारी **ज०** जिहां जिहां **नि०** नीचाणि होई **ज०** जिहां जिहां खाड होइ **ज०** जिहां जिहां विषम भूम होय **त०** तिहां ते रुख **प०** पडै **ए०** एणे दृष्टांते **त०** तथा प्रकारनो ते **पु०** दुष्ट पुरुष १८० क्रियावादी ८४ अक्रियावादी ६७ अन्नाणवादी ३२ विनयवादी ते पुरुष नर्कमांहीथी नीकल्यौ **ग०** गर्भथी गर्भने पामै **ज०** जन्मथी वारंवार जन्म पामै **मा०** मरणथी वली मरण पामै **दु०** दुखथी वारंवार दुख पामै **द०** दक्षिण दिसै ऊपजै **णे०** नारकी ते **क०** मेला पखनो धणि नरकमांहिथी नीकलीने **आ०** आगमिइ काले **दु०** दुर्लभबोधि हुई एहवो होइ एतले समकित दोहिलुं. **से०** संपूर्ण **तं०** ते **अ०** अक्रियावादी एहवो हुइ ते यथातथ्य लक्षण.

[बा.५४] अथ एहनो प्रतिपक्षी ते क्रियावादीनो लक्षण कहै छै – **से०** हिवै कोण ते **कि०** क्रियावादी होय ? केहवा हुइ ? **तं०** ते कहै छै. **आ०** समस्त प्रकारे ग्रह्यौ छै हितकारी वाद जेणे १ **आ०** समस्त प्रकारे ग्रही जेणे हितकारी प्रग्या २ **आ०** हितकारी ग्रही छे भली दृष्टि जेणे ३ **स०** यथातथ्य पदार्थनो बोलणहार ४ **णि०** न्याय मार्ग मोक्षनो परूपकनो संग छै. **सं०** छै परलोक एहवा वाद वचननो बोलणहार. **अ०** छै इहलोक. **अ०** छै परलोक. **अ०** छै माता. **अ०** छै पिता. **अ०** छै **अ०** तीर्थंकर. **अ०** छै चक्रवर्ति **अ०** छै बलदेव. **अ०** छै वासुदेव. **अ०** छै **सु०** सुकृत दुकृत **क०** कर्मनो **फ०** फल भोगववानौ विशेष. **सु०** भली करणीना **सु०** शुभ फल होइ. **दु०** भूंडि करणीना **दु०** भूंडा फल छै एम कहै. **स०** फल सहित **क०** धर्म **पा०** पाप. **प०** ऊपजै छै **जी०** जीव. **अ०** छै **णे०** नारकी. **अ०** छै **दे०** देवता. **अ०** छै सिद्ध.

[बा.५५] **से०** ते एहवा शुद्ध वचननो वादि बोलणहारो **ए०** एहवी **प०** प्रग्या **ए०** एहवी **दि०** दृष्टी **ए०** एहवा शुद्ध अभिप्रायना **रा०** रागने विषै जेणे मति **णि०** थापी **भ०** एहवो हुइ.

[बा.५६] **से०** ते पुरुष **भ०** हुइ **जा०** जावत् मोटी इच्छानो धणि श्रेणिक कृष्णनि परे पूर्व जो मिथ्यातमांहि आउखो बांध्यौ होइ अने पछै सम्यक्त्व पाम्यौ होइ ते पुरुष. जावत् शब्दनो पर्याय कहिए छै – **जा०** जावत् अक्रियावादीमांहि जेतला बोल कह्या महाआरंभीथी मांडिने अविरति माटे मिथ्यात वरजीने सर्व क्रिया पातली सी लागे पण ए मध्ये बावीस बोल प्रमुखनि आचरणा नही. समकितदृष्टी लोक नंदनीक आचरणा नहि. जाव शब्द माटे अक्रियावादीनो सर्व विरद न जाणवौ. अक्रियावादीमांहि जे विरद क्रियावादी समकितदृष्टीने न घटै ते विरद न कहिए यथा भगवती शतक बीजो उद्देशो जाव गुरुलहु पज्जवा सिद्धनै विषै नही तिम आमंत्रण पिण जाणवो अक्रियावादीइ. **उ०** उत्तर **गा०** गामी **णे०** नारकी **सु०** शुक्लपक्षी थको **आ०** आगले भवे उपजै तिहां **सु०** सुलभ बोधिपणै **वि०** अपि **तु०** निश्चै **भ०** हुइ श्रेणिकनि परै. **से०** संपूर्ण ते पूर्वोक्त **कि०** क्रियावादीनो अधिकार.

[बा.५७] **स०** श्रुत चारित्र धर्मनि साचा जिनभाषित धर्मनि रुचि एहवौ पिण पाठ **रु०** रुचि होइ. **त०** तेहनै **णं०** अलंकारे **ब०** घणा **सी०** पांच अणुव्रत **गु०** त्रिण गुणव्रत **वे०** सावद्य जोगनो विरमण ते गुण शब्दस्य भणि कहिए. ५ अणुव्रत ते गुणना कर्ता छै. ते भणि गुणव्रत कहिए. **प०** दिन प्रतै पचखाण ते दशमुं व्रत **पो०** पोषधने विषै वसवौ तथा पोसो ते उपवास सहित एतले जिम पोसो ११मो व्रत नीपजै नही. उपवास सहित पोसो ११मो व्रत एहवो कर्तव्ये ११मो व्रत छै. **नो०** सम्यग् प्रकारे आत्माने विषै **प०** थाप्या न होय पचख्या न होय **पु०** अनुकंपा रूप जीवदया प्रमुख सर्व होय पण पचखाण न होय. सर्व समकित व्यवहार साचवै. समकितना ५ अतीचार टालै. **ए०** इम **दं०** समकितवंत श्रावक जिनवचन सांभलै **प०** प्रथम **उ०** श्रावक **प०** प्रतिमा मर्यादा एतले प्रथम एक मासनि ए अतिचार रहित समकितनै आराधै. ए भाव कह्यौ.

[बा.५८] अथ द्विमासनि बीजी पडिमानै विषै रूडिपरै अतिचाररहित १२ व्रतनो धरणहार हुइ. ए भाव कहै छै. तेहनो ए संबंध – जे समकित शुद्ध आराधै तेह ज शुद्ध व्रतनो आराधक होइ. ते भणि प्रथम पडिमाने विषै शुद्ध समकित सहित हुवै. अने बीजी पडिमाने विषै शुद्ध श्रावकना व्रत पालवा कह्या. एहनो ए संबंध – यथा प्रथमायां यावत् निरतीचारं दर्शनं पालयति द्वितीयो मासो जावत् सम्यग् निरतीचार द्वादशव्रतधारको भवति इति वृत्तौ. पडिमा अंगीकार करै छै. **अ०** हिवै एथी अनेरी **दो०** बीजी **उ०** श्रावकनि प्रतिमा कहियै छै. **स०** पूर्वोक्त सर्व समकित धर्मनि रुचि **भ०** हुई. एतले प्रथम पडिमानै विषै जे बोल कह्या ते बोल सहित बीजी बे मासनी **त०** तेहनै पडिमाधारीनै **णं०** अलंकारे **ब०** घणुं **सी०** पांच अणुव्रत ५ **गु०** त्रिण गुणव्रत दिशि व्रत उवभोग आठमो अनर्थदंड वेरमण सावद्य जोगनो वेरमण **वे०** सामायिक वेरमण. अथ ४ शिक्षाव्रतना भेद कहै छै. शिक्षाव्रतना कहतां पूर्वोक्त ८ व्रतनो शिखरे मुगट समान एतले ८ व्रतना शोभन कर्ता **प०** दिनप्रतै पचखाणनो कर्वो ते देशावगासिक १० **पो०** पोसहने विषै उपवसवौ तथा पोषध उपवास सहित पोषध व्रत **स०** भली परे **प०** आत्मानै विषै स्थाप्या **भ०** छै एहवो होय पण एतलो विशेष **से०** ते **णं०** पूरणे **स०** सामाइक व्रत नवमो व्रत **दे०** देशावगासिक दसमो व्रत निश्चै जे **नो०** एतले नो शब्द देशवाची निषेध जांणवा **स०** सम्यक् प्रकारे दिनप्रतै **अ०** पाली न सकै करी न सकै, किवारै के थाइ किवारै न थाइ पिण इत्यर्थ **दो०** ए बीजी **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा कही.

[बा.५९] **अ०** हिवै अनेरी **त०** त्रीजी **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा. **स०** तेहनै पूर्वोक्त सर्व धर्मनि **रु०** रुचि **भ०** होय **त०** तेहने **ब०** घणुं **सी०** पांच अणुव्रत **गु०** त्रिण गुणव्रत **वे०** सामाइक व्रत **प०** देशावगासिक **पो०** पोषधोपवास

अष्टम्यादिने विषै **स०** भलीपरे **प०** अंगीकार कीधा छै. **से०** ते **णं०** पदपूर्णे **सा०** सामाइक उभयकाल अने बीजी वेला निवरो होइ ते वेलाइ **दे०** देसावगासिक **स०** सम्यक् पालै **अ०** निश्चल करै अने एहवो **भ०** हुइ. **से०** ते बीजी पडिमानो धणि **णं०** अलंकारे **चा०** चउदस **अ०** आठम अमावस **पु०** पूनिम ए च्यार विसामादिकने विषै **प०** दिन सहित रात ते प्रतिपूर्ण **पो०** पोषधोपवासनै **नो०** नही सम्यक् प्रकारे रूडी परे **अ०** पालणहार हुवै. **त०** त्रिजी **उ०** उपासकनि **प०** प्रतिमा ३.

[बा.६०] **अ०** हिवै अनेरी **च०** चोथी **उ०** उपासकनि **प०** प्रतिमा **स०** पूर्वोक्त सर्व धर्मनि **रु०** रुचि हुइ १. **त०** तेहने **ब०** घणुं **सी०** पांच अणुव्रतादिक **जा०** जावत् **स०** भली परे **प०** आराध्या **भ०** हुइ २. **से०** ते **णं०** अलंकारे **सा०** सामाइक **दे०** देसावकासिकनो **स०** भली परे **अ०** पालनहारो **भ०** हुइ ३. **से०** ते **णं०** अलंकारे **चा०** चउदस आठमादिक अमावस पूनिम ए ४ विसामादिकने विषै **स०** भली परे **अ०** संपूर्ण पोषध पालीने **भ०** एहवो हुइ. **से०** ते **णं०** अलंकारे **ए०** एक रात्रि ४ प्रहर **उ०** उपासगनि **प०** प्रतिमा **नो०** सम्यक् प्रकारे **अ०** करी पाली न सकै. **च०** ए चोथी **उ०** उपासगनि **प०** प्रतिमा ४.

[बा.६१] **अ०** हिवै अनेरी **पं०** पांचमी **उ०** उपासकनि प्रतिमा. **स०** सर्वधर्मनि **रु०** रुचि **भ०** हुइ. **त०** तेहनै **णं०** वाक्यालंकारे **ब०** घणुं **सी०** पांच अणुव्रतादिक सर्व **स०** भली परे **प०** आदर्या हुई. **से०** ते **णं०** अलंकारे **सा०** सामाइक देसावकासिक **त०** तिम ज **से०** तेहने **चा०** चतुर्दश्यादिक व्रत **त०** तिम ही ज ते पोसानि रात्रि ४ पोहरनो **ए०** एग रात्रनो **उ०** उपासकनी **प०** प्रतिमा **स०** भली परे **अ०** आराधै, ४ प्रहरनो काउसग करै १. **से०** ते **णं०** पदपूर्णे **अ०** स्नान न करै पंच मास लगे २. **वि०** दिवसे जीमै रात्रै न जीमै ३. **म०** काछडि न चालै ४. **दि०** दिवसे ब्रह्मचर्य पालै **र०** रात्रै **प०** मर्यादा धारै ५. **से०** ते **ए०** एहवे **वि०** आचारे **वि०** विचर्तो थको **ज०** जघन्य **ए०** एक दिन, एक दिनथी मांडि अने ते दिन काल करै ते आश्री एक दिन ज पालै. आगले एम ही ज **दु०** बेदिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टो तो **पं०** पांचमास सूधी **वि०** विचरै. **पं०** समवायांगे पांचमी प्रतिमा दिया बंभयारी रत्तिं परिमाणकडे एक ज बोल कह्यौ छै अने छठीए असिणाणए १ वियडभोई २ मउलियकडे ३ दिया वा राओ वा बंभयारी ४ बोल छै पण एगराओ पडिमाए पाठ नथी. ए जघन्य मध्यम उत्कृष्टौ भेद जाणिए छै.

[बा.६२] **अ०** अनेरी **छ०** छठी **उ०** उपासगनि **प०** पडिमा. **स०** सर्वधर्मरुचि इत्यादिक धुरलि पांच पडिमा सूधी **से०** ते एक रात्रना काउसगनि **उ०** उपासगनि प्रतिमा **अ०** भलि परै पालै १. **से०** ते स्नान न करै २. **वि०** रात्रे जीमै नही ३. **म०** काछडी न चालै ४. **दि०** दिवसे अने **रा०** रात्रे **बं०** ब्रह्मचारी ५. **स०** पण सचित्त आहार **से०** ते **अ०** पचख्यौ नही तो पछै छठी नीपजै. **से०** ते **ए०** एहवे **वि०** आचारे **वि०** विचर्तो **ज०** जघन्यतो **ए०** एक दिन **दु०** बि दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टौ **छ०** छ मास सूधी **वि०** विचरै. **छ०** ए छट्ठी **उ०** उपासकनि प्रतिमा ६.

[बा.६३] **अ०** हिवै अनेरी **स०** सातमी **उ०** श्रावकनि प्रतिमा. **स०** सर्व धर्म रुचि छै **जा०** जावत् **रा०** प्रथमथी मांडीने छट्ठी सूधी दिन रात्रे **बं०** ब्रह्मचारी **स०** सचित्त आहार निश्चै जीमै. **से०** ते पचख्यौ छै एतलो अधिक विशेष सातमीइं पण आरंभ पोते करवा आश्री अणपचख्यौ हुई ते **णं०** अलंकारे **ए०** एहवे **वि०** आचारे **वि०** विचरतो थको **ज०** जघन्य **ए०** एक दिन **दु०** बे दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टौ **स०** सात मास सूधी **वि०** विचरै **स०** सातमी **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा ७.

[बा.६४] **अ०** हिवै अनेरी **अ०** आठमी **उ०** उपासगनि **प०** प्रतिमा. **स०** सर्वधर्मनि रुचि मांडीने **जा०** जिहां सूधी

रात्रि दिन **बं०** ब्रह्मचारी **स०** सचित्त आहार निश्चै **से०** ते **प०** पचख्यौ हुवै **आ०** आरंभ पोते **से०** ते **प०** पचख्यौ हुई. **पे०** पर पाहे आरंभ करावववौ पण **अ०** अणपचख्यौ हुई. **से०** ते **णं०** अलंकारे **ए०** ए ४ प्रतिग्याना आचारे **वि०** विचर्तो थको **जा०** जावत् जघन्य **ए०** एक दिन **दु०** बे दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टौ **अ०** आठ मास सूधी **वि०** विचरै. **आ०** ए आठमि **उ०** उपासकनि **प०** प्रतिमा ८.

[बा.६५] **अ०** हिवै अनेरी **न०** नवमी **उ०** श्रावकनि प्रतिमा. **स०** श्रुत चारित्र धर्मनि **रु०** रुचि **भ०** हुई. **जा०** जावत् **दि०** दिन **रा०** रात्रीने विषै **बं०** ब्रह्मचर्य पालै. **स०** सचित्त आहारे **से०** ते **प०** पचख्यौ हुई. **आ०** पोते आरंभ कर्वो ते **प०** पचख्यौ होई. **पे०** पर पाहे आरंभ करावववो ते पण **प०** पचख्यौ हुई. **उ०** तेहने अर्थे आहारादिक नीपायो हुई **से०** ते **अ०** अणपचख्यौ हुई. **से०** ते **णं०** अलंकारे **ए०** एणे **वि०** नव पडिमाने आचारे करी **वि०** विचर्तो थको **ज०** जघन्य **ए०** एक दिन **दु०** बे दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टौ **न०** नव मास लगे **वि०** विचरै. **न०** ए नवमी **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा ९.

[बा.६६] **अ०** अथ हिवै अनेरी **द०** दसमि **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा. **स०** सर्वधर्मनि रुचिवंत **भ०** हुवै. **जा०** जावत् **उ०** उद्देसिक आहारनो **से०** ते **प०** त्यागी **भ०** हुवै. **से०** ते **खु०** क्षुरमुंड अथवा **सि०** शिखा धारक माथे थोडी चौटी राखै. **त०** तेहनै **अ०** एकवार पूछै अथवा **स०** वारंवार पूछै तिवारे **क०** कल्पै **दु०** बे प्रकारनि भाषा **भा०** बोलवी **ज०** जिम **जा०** जाणतो हुवै तो कहै जाणुं छुं १ **अ०** नथी जाणतो हुवै तो कहै **नो०** नही जाणुं छुं २. **से०** ते **ए०** एणे रूपे **वि०** आचारे करी **वि०** विचर्तो थकौ **ज०** जघन्यतो **ए०** १ दिन अथवा **दु०** बि दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टो तो **द०** दस मास सूधी **वि०** विचरै. **द०** दसमि **उ०** उपासगनि **प०** पडिमा १०.

[बा.६७] **अ०** अनेरी **ए०** इग्यारमि **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा. **स०** सर्व धर्मनि रुचि श्रुत चारित्र रुचि निश्चै **भ०** हुई. **जा०** जावत् **उ०** उद्दिट्ठ भक्त आहार इत्यादिक १० मास सूधी **से०** ते **प०** पचख्या **भ०** हुई. **से०** ते **णं०** अलंकारे **खु०** क्षुर मुंड करावै १ तथा **लु०** लोच करावै २ **ग०** ग्रह्यो छै **आ०** आचार भंडोपगरण **ने०** साधूनो वेष **ज०** जे **इ०** ए **स०** श्रमण साधू **नि०** निर्ग्रंथनो तीर्थंकरादिके **ध०** धर्म **प०** कह्यो **तं०** ते कहै छै **स०** सम्यक् प्रकारे **का०** कायाइं **फा०** फर्सतो थकौ **पा०** पालतो थकौ **पु०** आगले झूसरा प्रमाण भूमिकाने **पे०** जोता चालतां कदाचित् जीव देखै तो किम चालै ते कहै छै **पे०** जोतो थको **द०** देखीने **त०** त्रस **पा०** जीवने **उ०** पगनै ऊंचो करीने **री०** चालै **ति०** तथा त्रीछो पगनै करीने **री०** चालै. **सं०** छते अनेरे मार्गे **से०** जतना सहित **प०** साधूनि परे चालै. **नो०** न जाइ. अथ जेतलो पेज्ज बंध छै ते कहै छै. **के०** एक ते प्रतिमाधारीने **से०** तेहने **णा०** न्यातिनो **पे०** प्रेम रूप बंधन **अ०** दूरो नथी. स्या भणि ? घरमांहि पाछो आववानि आसा माटे **इ०** इम **से०** ते कल्पै **ना०** न्यातिना घरनि न्यातिना घर प्रमुखे गोचरी करै तो प्रतिमानो भंग नही, **वि०** पंगतने विषै वर्ति छै **त०** तिहां तेहने **पु०** आगमनात् पूर्व इति पूर्वागमन **पु०** आव्या थकि पहिला उतर्या छै **चा०** चावलरूप ओदन ते चोखा **प०** पछे उतर्या **भि०** भेलण **सू०** दाल कठोर पडिमावे छै **क०** कल्पै **से०** तेहने **चा०** चाउल कूर **प०** लेवा कल्पै पण **णो०** तेहनै न कल्पै **भि०** भिलण दाल कठोर प्रमुख **प०** लेवा १. **त०** तिहां **णं०** अलंकारे **से०** तेहने आव्या पहिला **पु०** पहिलो ऊतर्यौ छै **भि०** कठोल **प०** पछै ऊतर्यौ छै **चा०** चोखा चाउल प्रमुखनो ओदन **क०** कल्पै **से०** तेहने **भि०** भेलण कठोल दाल प्रमुख **प०** लेवो **नो०** नही तेहनै **क०** कल्पै **चा०** चाउलोदन **प०** लेवो २. **त०** तिहां **से०** तेहनै **पु०** आव्या पहिला **दो०** बिन्हे **पु०** पहिला ऊतर्या छै तो **क०** कल्पै **से०** तेहनै **दो०** बे **प०** लेवा ३. **त०** तिहां तेहने **प०** आव्या पछी **दो०** बिन्हे पछै ऊतर्या छै **णो०** तेहने पडिमावंतने न कल्पै **दो०** बिन्हे **प०** लेवा ए चोभंगी ४. **जे०** जे तेहने **त०** तिहां **पु०** आव्या पहिलो **पु०** पूर्व ऊतर्यौ होय **से०** ते **क०** कल्पै

**प०** लेवो. **जे०** जे **त०** तेहने **पु०** तिहां आव्या **प०** पछै ऊतर्यौ होइ **णो०** ते न कल्पै **प०** लेवो. **त०** तेहने **णं०** अलंकारे **गा०** गृहस्थना **कु०** घरनै विषै **पिं०** आहारने अर्थे **अ०** पेठा थका **क०** कल्पै **ए०** एहवो **व०** बोलवौ **स०** साधूनै सेवै ते श्रमणोपासक **प०** इग्यारे प्रतिमा **प०** पाम्यौ एहवा मुजनै **भि०** भिक्षा **द०** देवौ. **तं०** तेहनै **ए०** एहवे आचारे **वि०** विचर्तो थको **के०** कोइक **पा०** देखीने **व०** पूछै **के०** कोण छौ **आ०** हे आउखावंत **तु०** तुमे ? **व०** तिवारे ते इम कहै. अथ हिवै गृहस्थ प्रतिमाधारी प्रतै पूछै तिवारे प्रतिमाधारी गृहस्थप्रतै इम कहै **स०** श्रमणोपासक **प०** इग्यारमि प्रतिमा अंगीकार करी **अ०** हू छुं ए माहरो स्वरूप छै. **से०** ते **णं०** अलंकारे **ए०** एणे एहवे **वि०** आचारे **वि०** विचर्तो थको **ज०** जघन्य इति प्राग्वत् **ए०** एक दिन **दु०** बि दिन **ति०** त्रिण दिन **उ०** उत्कृष्टो **ए०** इग्यारे **मा०** मास सूधी **वि०** विचरै. **ए०** इग्यारमि ११ मासनि **उ०** श्रावकनि प्रतिमा कही ११.

अथ सुगमपणा माटे धुरनि पडिमाथी मांडीने विगत लिखीए छै –

*दंसण१वय२सामाइय३पोसह४काउसगादिक५अबंभ६सचित्ते७ ।*
*आरंभ८पेस९उद्दिट्ठ१०वज्जए समणभूए११ य ॥ [दशा.नि.४६]*

इति वचनात्. अस्य अर्थव्याख्या-समकित शुद्ध पालवौ, अतिचारादिक दोष न लगाडवौ १. एणी परे अणुव्रतादिकने विषै दोष न लगाडवौ २. उभय कालना आवश्यक कर्वा ३. च्यार पर्वना पोसा कर्वा ४. काउसग कर्वो एकरात्रिनो इत्यादिक ५ बोल ५. रात्र दिवसने विषै ब्रह्मचारी ६. सचित्तनो त्याग ७. पोते आरंभ न करै ८. पर पाहे आरंभ न करावै ९. उद्देशिक आरंभ वर्जे १०. जहा समणभूए ११. अथ एहनि गणित कहै छै. एक मासनि प्रथम १ बीजी बे मासनि २ तीजी ३ मासनि ३ चोथी ४ पांचमी ५ छट्ठी ६ सातमी ७ आठमी ८ नवमी ९ दशमी १० इग्यारमि ११ मासनि सर्व मिली ६६ मास थया.

अथ उपसंहारमाह – **ए०** ए **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंत श्रीमहावीरे **इ०** इग्यारे **उ०** श्रावकनि **प०** प्रतिमा **प०** कही. **त्ति०** इम **बे०** हूं कहुं छुं. ए छट्ठो अध्ययन समाप्त ६.

## [सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमाध्ययनम्]

छट्ठे अध्ययने श्रावकनि इग्यारे पडिमा कही. हिवै सातमे अध्ययने क्रियावादी साधूनि १२ प्रतिमा कहै छै.

[बा.६८] **सु०** सांभल्यौ में **आ०** हे आउखावंत ! **ते०** तेणे **भ०** भगवंते **ए०** इम **म०** कह्युं **इ०** ए जिनशासनने विषै **ख०** निश्चै **थे०** थविर **भ०** भगवंते **बा०** बारे **भि०** साधूनि **प०** प्रतिमा अभिग्रह विशेष **प०** परूपी कही.

[बा.६९] **क०** कोण ते १२ साधूनि प्रतिमा **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **बा०** बारे **भि०** साधूनि प्रतिमा **प०** परूपी ?

[बा.७०] **इ०** ए **ख०** निश्चै **ता०** ते साधूनि १२ प्रतिमा **थे०** थविर **भ०** भगवंते **बा०** बारे **भि०** साधूनि प्रतिमा **प०** परूपी **तं०** ते कहै छै. [१] **मा०** एक मासनि **भि०** भिक्षू साधूनि प्रतिमा प्रतिज्ञा पहिली कही १. [२] **दो०** बीजी एक मासनि बीजे मासे नीपजै ते दो मासि **भि०** भिक्षु पडिमा २. [३] **ति०** त्रीजे मासे नीपजै ते धुरनि अपेक्षाये त्रीजी एक मासनि **भि०** भिक्षूनि प्रतिमा, त्रीजी साधू प्रतिज्ञा अभिग्रह विशेष ३. [४] **च०** चोथे मासे नीपजै ते चोमासिया चोथी **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा अभिग्रह विशेष एतले एक मासनि चोथी प्रतिमा कही ४. [५] **पं०** पांचमे मासे नीपजै ते पांच मासिया पांचमी १ मासनि पांचमी **भि०** साधूनि प्रतिमा. भिक्षु शब्द स्यौ अर्थ ? कर्मने भेदे ते भिक्षु निश्चै ५. [६] **छ०** छट्ठी एक मासनि छट्ठे मासे नीपजै ते छमासिया **भि०** छट्ठि. अथ साधू

शब्दनो स्यौ अर्थ ? मोक्ष पथ ग्यानादिक तेहनै साधै ते साधू प्रतिमा ६. [७] **स०** सातमी एक मासनि सातमे मासे नीपजै ते सातमासिया **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा अभिग्रह विशेष एतले इहां सूधी एकेक मासनि पडिमा कही ७. अथ एक मासथी ओछी कहै छै **प०** पहिली एतले आठमी **स०** सात रात्रीनी **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा ते आठमी ८. [९] **दो०** बीजी ते पण **स०** सात रात्रीनी **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा ते नवमी ९. [१०] **त०** तीजी एतले दशमी ते पण **स०** सात रात्रीनि **भि०** भिक्षु प्रतिमा १०. [११] **अ०** अहोरात्री ते एक दिन रात्रीनी **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा इग्यारमी ११. [१२] **ए०** एक रात्री ते च्यार पोहरनि **भि०** बारमी भिक्षुनि प्रतिमा कही १२. ए सामान्यपणै नाम वाचक बारे पडिमा कही.

आद्यासु सप्तसु जावत् परिमाणमेव प्रतिकर्म तथा वर्षासु न ताः प्रतिपद्यन्ते न च प्रतिकर्म करोति तथा आद्यद्वयं एकत्रैव वर्षे तृतीयचतुर्थे एकैकस्मिन् वर्षे अन्यासां तिसृणां अन्यत्र वर्षे प्रतिकर्म अन्यत्र प्रतिमा, नवभिर्वर्षैः आद्याः सप्त समाप्यन्ते, वृत्तिमध्ये धुरली सात नव वर्षे थाइं एम कह्यौ १. **छ मा०** तथा पाठ मध्ये प्रथम एक मासनि जावत् सातमि सात मासनि एम गणतां तो ५ वर्ष थाइं. विचमां चोमासा पांच आवै. तिहां प्रतिग्या मूकवी पडै. एम करतां पांच वर्ष थाइ १. अने प्रथम महिने पहिली यावत् सातमे महीने सातमी एम गिणतां धुरली ७ थइने सात मास थाइं, आठमि नवमी दशमी ए त्रणना एकवीस दिन, इग्यारमीना बे दिन बारमीना त्रण दिन, एम कर्ता ७ मास दिन २६ थायै. शेष काले मास आठ मध्ये थइ रहै, विचमांहे मूकवी न पडै, ए सूत्र पक्ष बहुश्रुते विचार्वो. वलि इहां आसंका जे उपसाकनि पडिमाने विषै प्रथम पडिमा एक मासनि, बीजी पडिमा बे मासनि इम जाव इग्यारमि प्रतिमा ११ मासनि एतले तिहां एम कह्यु ते भणि इहां पण यथा दोमासिया भिक्खूपडिमा इत्यादिक पाठ एतले प्रथम पडिमा कही एक महीनानि, बीजी पडिमा बे महीनानि इम जावत्. अथ इम कहीए तिवारे तो आठमी प्रतिमा ८ मासनि जोइयै जावत् १२मि पडिमा १२ मासनि जोइयै ते भणि अयुक्त दोमासिया बे मासनि बीजी प्रतिमा एम जावत् सात मासनि ७मि पडिमा इम केतलाएक कहै छै. इम कहितां पडिमा विधिमांहे चोमासो आवै तिवारे पडिमा रहै. जाव विवेकीये विचार्वो जे भणि सातमी पडिमासुं उत्कृष्टो बे रात्री उपरांत न रहै ते माटै.

[बा.७१] हिवै विशेष थकी बारे पडिमानै विषै कहै छै. **मा०** मास एक संबंधि **णं०** अलंकारे **भि०** भिक्षु प्रतिमाने **प०** अंगीकरणना करणहार **अ०** साधूने **नि०** सदाइं वोसरावी छै शरीरनि सुश्रूषा **चि०** त्यजी छै ममता आश्री देह तेहने **जे०** जे **के०** केइ **उ०** उपसर्ग **उ०** ऊपजै **तं०** ते कहै छै. **दि०** देवता संबंधी अथवा **म०** मनुष्य संबंधी **ति०** तिर्यंच संबंधी ए त्रिण जातना परीसह **ते०** ते **उ०** ऊपने छते **स०** भली परे **स०** सहै, मुखरो रंग फेरवै नही **ख०** खमै, क्रोध न करै **ति०** दीनपणौ न आणै **अ०** अहियासै भाव थकी कर्मनुं निर्मलतापणुं द्रव्यथी काया हलावै नही, चपलपणौ न करै १.

[बा.७२] **मा०** मासनि **भि०** भिक्षु प्रतिमा **प०** अंगीकारना करणहार **अ०** साधूनै **क०** कल्पै **ए०** एक वार आपै ते एक दति **भो०** आहारनि **प०** लेवी कल्पै **ए०** एक दति **पा०** पाणीनी लेवी कल्पै **अ०** ते पण अज्ञात कुले, अज्ञात कुल जे घरने विषै न जाणै अवश्यमेव आज साधु आवस्यै ते घरने विषै जावो ते अज्ञात कुलनि गोचरी कहीयै. एहवा कुलने विषै साधू जावै **उ०** ते नगरनो **सु०** ते निर्दोष **अ०** अन्यनै अर्थे निपायौ छै, साधूनै अर्थे नही **नि०** टालीने अंतराय दोषनि, केहवी अंतराय ? अथ केहने अर्थे ? कहै छै. **ब०** घणा **दु०** मनुष्य तथा पक्षी **च०** चतुष्पदनै **स०** तापसादिकनै **मा०** ब्राह्मणनै **अ०** जेहनि तिथि नही **कि०** कृपणनै **व०** भिखारीनी अंतराय **नि०** वली टालीने **क०** कल्पै वली **से०** तेहनै **ए०** एकनै **भुं०** जीमतां तथा एकनै अर्थे रांध्यौ हुइ तेहनौ आहार लेवो **प०** कल्पै पण **णो०** न कल्पै बिना मांहिथी लेवो **णो०** न कल्पै त्रिणना भोजनमांहिथी **णो०** न कल्पै ४ना

भोजन मांहिथी लेवौ **णो०** न कल्पै पांचना भोजनमांथी लेवौ **नो०** गर्भवतीनो आहार न कल्पै **नो०** बालकनै **पे०** चूंगावती हुइ तेहना हाथनो न कल्पै **णो०** ऊंबराने मांहिले पासे **दो०** बे **पा०** पगनै **सा०** संकोचीने **द०** देती थकी तेहना हाथनो न कल्पै **नो०** न कल्पै **बा०** बाहिर **ए०** ऊंबराने **दो०** बे पग **सा०** संकोचीने **द०** देती तेहनो हाथनो न कल्पै. किम कल्पै ? ते कहै छै. **ए०** एग **पा०** पग ऊंबरामांहि **कि०** राखीने **ए०** एक पग ऊंबरा बाहिर **कि०** राखीने **ए०** ऊंबराने **वि०** विचमांहि आरोहीने **ए०** एणी परे **द०** दीइं तो **ए०** इम **से०** ते पडिमावंतने **क०** कल्पै **प०** लेवौ **ए०** एणी परे **से०** तेह **नो०** न दीइं तो **ए०** इम **णो०** न कल्पै **प०** लेवौ २.

[बा.७३] **मा०** एक मासनि **भि०** साधुनि प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूनै **त०** त्रिण **गो०** गोचरीना **का०** काल **प०** परूप्या. **तं०** ते कहै छै. **आ०** दिवसना त्रिण भाग कल्पियै ते मांहेला आदि भाग १ **म०** मध्यभाग २ **च०** चरम छेहलौ भाग ३. हिवै त्रिण भागनै विषै गोचरी करै किं वा बे भागनै विषै गोचरी करै किं वा एक भागनै विषै गोचरी करै ? ते कहै छै. **आ०** जे आदि भागे प्रथम भागे आहार गोचरी करै **णो०** ते मध्य भागे गोचरी न करै **णो०** चरिम छेहले भागे पण गोचरी न ऊठै १. **म०** जे मध्य भागे गोचरी ऊठै ते **नो०** ते आदि प्रथम भागे गोचरी न ऊठै **णो०** ते पाछले भागे ऊठै नही २. **च०** जे पडिमाधारी दिवसनै पाछले भागे गोचरी ऊठै **णो०** ते साधू **आ०** प्रथम भागे न ऊठै **णो०** मध्य भागे ते पण गोचरी न ऊठै ३.

[बा.७४] **मा०** मासनि **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूनै **छ०** छ प्रकारनि **गो०** गोचरी कर्वी **प०** कही **तं०** ते कहै छै. **पे०** पेटी चोखूणी जिम च्यारे पंगत ते गोचरी करै पेटिने आकारे करै १. **अ०** बे पंक्ति २ **गो०** बलदना मात्रानै आकारे गोचरी करै ३. **प०** पतंग तीड जिम उडीने आंतरे आंतरे बेसै तिम ४. **सं०** शंखनो आवर्तन ते बे प्रकारे एक अभ्यंतरथी आवर्तन १ बीजौ बाह्य आवर्तन २ अभ्यंतरथी बाहिर आवै, बाहिरथी विहर्तो अभ्यंतर आवै, शंखना आवर्तननी परे ५. **गं०** जइनै पाछौ चलतो गोचरी करै ६. ४.

[बा.७५] अथ हिवै जे एहवो प्रतिमाधारी ते ऊपरे गृहस्थनै विसेसाविसेस राग ऊपजै तिवारे प्रतिमाधारी पण जाणै. ए प्रतिमाधारी पिण साधु छै. तिवारे पडिमाधारीनो अभिग्रह पण जाणै अने अभिग्रह जणाववौ नथी. ते भणि कहै छै **मा०** मासनि प्रतिमा **प०** आदरणहार साधूनै **ज०** जिहां **णं०** अलंकारे **को०** कोइ **जा०** जाणै तिहां **क०** कल्पै **से०** तेहनै **त०** तिहां **ए०** एक दिन **व०** वसवौ. **ज०** जिहां **णं०** अलंकारे **के०** कोइ न जाणै तिहां **क०** कल्पै **ते०** तेहनै **त०** तिहां **ए०** एक दिन तथा **दु०** बे दिन **व०** वसवौ पण **नो०** नहि तेहनै **क०** कल्पै **ए०** एक रात्रि तथा **दु०** बि रात्रि **प०** उपरांत **व०** रहिवौ. अथ हिवै पडिमाधारी अधिक रहै तेहनै प्रायछित कहै छै. **जं०** जे **त०** तिहां **ए०** एक रात्रीथी **दु०** बि रात्रीथी उपरांत **प०** रहै तो **से०** तेहनै आंतरा रहित रहै तेतला दिननो **छे०** छेद **प०** प्रायछित ५.

[बा.७६] एहवो जे साधू तेहनै अवश्यमेव भाषा बोलवी पडै. ते भणि छट्ठे बोले भाषानि विधि कहै छै. **मा०** मासनि भिक्षुनि प्रतिमा **प०** धारी साधूनै **क०** कल्पै **च०** च्यार भाषा **भा०** बोलवी **तं०** ते कहै छै. **जा०** आहारादिक जाचवानि १ **पु०** प्रश्न संदेह पूछवौ २ **अ०** थानकनि आग्या मांगवी ३ **पु०** पूछ्यानो उत्तर कहिवौ ४.६.

[बा.७७] अथ हिवै थानक रहिवानि विध कहै छै. **मा०** मासनि **भि०** साधूनि प्रतिमा **प०** प्रतिपन्नने **क०** कल्पै **त०** त्रिण **उ०** उपाश्रा **प०** दृष्टे जोइवा **तं०** ते कहै छै. **अ०** आराम रूप घरनै हेठे **गि०** आराम घरे १ **अ०** चोफेर उघाडुं ऊपरे टांक्यौ **गि०** छउडी प्रमुखनै हेठे २ **अ०** रूखना तलानै हेठे तथा रूखने तलै **गि०** यक्षना घरनै विषै ३.७. ए सातमा बोलनै विषै ए प्रतिलेखणा कही.

हिवै तेहनै विषै जाचवौ कहै छै. **मा०** मासिक साधूनै **क०** कल्पै **त०** त्रिण **उ०** उपाश्रय पडिलेह्या पछी **अ०** आग्या मांगवी **तं०** ते ए **अ०** आराम रूप घरनै हेठे **गि०** आराम घर १ **अ०** चोफेर उघाडौ ऊपर टाक्यौ छउडी प्रमुखनै २ **अ०** वृक्षना तलानै हेठे तथा रूख तले **गि०** वृक्षना गृहनै विषै ३.८.

अथ हिवै उपाश्रानै विषै रहिवौ कहै छै. **मा०** मासिकनै **भि०** साधूने **प०** पडिमाधारीनै **क०** कल्पै **त०** त्रिण उपाश्रये **उ०** रहिवौ **तं०** तिम ज पूर्वनि परे कहिवौ यथा अहे आरामंसि वा इत्यादिक ते कह्या ३.९.

[बा.७८] अथ अनुक्रमे संथारानि विधि कहै छै. तिहां प्रथम संथारो प्रतिलेखवानि विधि कहै छै.**मा०** मासिकनै **भि०** भिक्षु प्रतिमाधारीने **क०** कल्पै **त०** त्रिण **सं०** सूवा बेसवाना ठाम **प०** दृष्टि जोवा निर्दोष **तं०** ते कहै छै. **पु०** पृथ्वीनि शिला १ **क०** मोटा काष्ठनि शिला २ **अ०** जेहवो मूलगो पाटादिक पाथरी मूक्यौ छै ३.१०.

अथ प्रथम पडिमाना इग्यारमा बोलनै विषै संथारो जाचवानि विधि कहै छै.**मा०** मासिक **भि०** साधूनै **क०** कल्पै **त०** त्रिण संथारा **अ०** जाचवा **तं०** तेह ज कह्या यथा पुढविसिला इत्यादि ११. **मा०** मासिक भिक्षुनै **क०** कल्पै **त०** त्रिण संथारा **उ०** अंगीकार कर्वा **तं०** तेह ज पूर्ववत् १२.

[बा.७९] **मा०** मासिक भिक्षुने **इ०** अत्र स्त्री कहिवी पुरुष पण जाणवौ, स्त्री पुरुष **उ०** उपाश्रामांहि कदाचित् **उ०** आवै. **से०** ते स्त्री तथा **पु०** पुरुष आव्या जाणि **णो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **तं०** ते स्त्री पुरुष माटे **नि०** उपाश्रयथी बाहिर नीकलवौ **प०** बाहिरथी मांहि पेसवो. **त०** तिहां **के०** कोइ आर्या ते स्त्री पुरुष घरमांहि माटे तथा अनेरो कोइ थानक मूकाववा निमित्ते साधूने **बा०** बाहा **ग०** ग्रहीने **आ०** ताणे तो **णो०** नही ते पडिमाधारीने कल्पै **तं०** ते ताणनहारनै **अ०** साही राखवौ **प०** वारंवार झाली राखवौ न कल्पै. **क०** कल्पै **से०** तेह साधूनै **आ०** यथा इर्यासमितिनी रीते **रि०** चालवौ, उतावलो नहि १३.

[बा.८०-८१] **मा०** मासिक **भि०** भिक्षु पडिमाधारीने **के०** कोई अनार्य **उ०** उपाश्रयनै **अ०** अग्निकाय करी **झा०** बालै. **णो०** तेहने नही **क०** कल्पै **तं०** ते बाल्या माटे **णि०** थानक थकी बाहिर नीकलवौ **प०** तथा बाहिरथी मांहि पेसवौ. **त०** तिहां कोई आर्य मांहिथी कोइ अनेरो थानक मूकाववा निमित्त **बा०** बाहा **ग०** ग्रहीने **आ०** ताणै तो **णो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **तं०** ते ताणनहारनै बाहाथी साहि राखवौ **प०** वारंवार झाली राखवौ न कल्पै. **क०** कल्पै **से०** ते प्रतिमाधारीने **अ०** यथा ईर्यासमितिनी रीते चालवौ, उतावलो नही १४.

[बा.८२] **मा०** मासनि **भि०** भिक्षुनि प्रतिमाधारी साधूनै **पा०** पगनै विषै **खा०** कंठो करडो **कं०** कांटो **ही०** पूणी सहित कांकरा **स०** कांकरा **अ०** पेसै **नो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **नी०** काडवौ **वि०** विशेषे सुद्ध कर्वो न कल्पै. **क०** कल्पै **से०** ते पडिमाधारीने **अ०** यथा ईर्यासमितिनी रीते प्रवर्तवौ १५.

[बा.८३] **मा०** मासिक **भि०** भिक्षू साधूने **अ०** आंखनै विषै **पा०** नान्हा जीव **बी०** नान्हो बीज **र०** रज **प०** पडी दीसै **नो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **नी०** काटवौ **वि०** विशेषे सुद्ध कर्वो. **क०** कल्पै **से०** तेहनै **आ०** यथा ईर्याइं **री०** चालवौ १६.

[बा.८४] **मा०** मासिक **भि०** भिक्षूने **ज०** जे दिसे सूर्य आथमै एतलै पछिम दिसे सूर्य आथमता बिंब दीसतां सूधी **त०** तिहां सूर्य सीतल छते तथा सूर्य जाज्वल्यमान प्रभात छतइ **ज०** जलंसिनो अर्थ पाणिमांहे रहिवानो कहै छै. ते अशुद्ध अर्थ. एहनी चूर्णी मध्ये पण पांणिमांहि नथी कह्युं. एम कह्युं छै जल शब्दे तीजो पोहर पूर्ण थाय एटले शीतलपणौ व्यापी अने सूखम स्नेहकाय पडै. ते माटे चोथे पोहरे शीतलपणौ व्यापी तेह जल कहिए, पण नदी प्रमुखनो जल नथी कह्युं. साधू जल पांणिमांहे न रहै. शुद्ध अर्थ ए जलंसि जाज्वल्यमान सूर्य छै एतलै सूर्य जल

रहित जाला दीप्तौ इति भावः जलमिव जलं तस्मिन् जलनि परे शीतल प्रातःना सूर्यनि परे एतले सूर्य तेज रहित अने सीतल छते रहै ए सूत्रार्थ सुध पर्याय अर्थ कह्यौ. चूर्णि – *जत्थ व त्ति० वसंतए जलं* ए वात चोथे पोहरे *पत्तो सूरो अत्थं च भवति जलं अब्भगवासितं उसं पडति [दशा. चू. पृ. ७७]* इत्यादिक चूर्णिनो पाठ छै. **थ०** अटवीने विषै **दु०** गहन थानकने विषै **नि०** नीचा नगरने विषै **प०** परबतने विषै **वि०** एक प्रदेश ऊंचौ एक नीचो तिहां **ग०** खाडने विषै **द०** गुफाने विषै **क०** कल्पै **से०** तेहनै **तं०** ते रात्री **त०** तिहां ज **उ०** वसवौ रहिवौ. **नो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **प०** पगमात्र **ग०** आघो जावो. **क०** कल्पै **से०** ते पडिमाधारीने **तं०** ते रात्रि **त०** तिहां ज **उ०** वसिवौ रहिवौ. **क०** कल्पै ते पडिमाधारीने **क०** प्रभाते प्रगट **र०** रजनी गए छते **जा०** जावत् जाज्वल्यमान सूर्य उग्ये छते **पा०** पूर्व साहमूं **दा०** दक्षिण दिसि साहमुं **प०** पश्चिम दिसि साहमुं **उ०** उत्तर दिसि साहमुं **आ०** यथा ईर्यासमितिइं **री०** चालवौ १७.

[बा.८५] **मा०** मासिक **भि०** भिक्षुनै **णो०** तेहनै नही कल्पै **अ०** सचित्त पृथ्वी ऊपरे **नि०** थोडी निद्रा न कर्वी **प०** घणी निद्रा न कर्वी. **के०** केवलग्यानी **बू०** बोल्या जे **आ०** कर्मबंधनो कारण जे एह **से०** ते **त०** तहां **नि०** निद्रा करतो थको **प०** प्रचला विशेष निद्रा करतो थको **ह०** हाथे करी **भू०** पृथ्वीने मर्दे ए दोष माटे सचित्त पृथ्वी ऊपरे न रहै, किहां रहै ? **अ०** यथाविधि ते निर्दोष **ए०** एम **ठा०** थानकनै विषै **ठा०** अंगीकार करै **नि०** नीकलै जाइ. **त०** तिहां **उ०** वडिनीत **पा०** लघुनीत मात्राइं **उ०** बाधा ऊपजै प्रयोग ऊपजै तो **णो०** ते प्रतिमाधारीने न कल्पै **उ०** बाधा राखवी रोगोत्पत्तित्वात् रोग उपजवाथी. तो स्यूं करै ? **क०** कल्पै **से०** ते पडिमाधारीने **पु०** पूर्वे जे पडिलेह्युं छै **थ०** उघारादिकनो थानक छै तिहां जइने **उ०** वडिनीत **पा०** लघुनीत **प०** परठवे छै पिण रह्यौ छै तिहां न परठवै, अदत्त लागै. परठवीने पछै **त०** तेह ज **उ०** उपाश्रय प्रतै **आ०** आवीने **आ०** यथा काउसगादिके रह्यौ तो तिम **ठा०** रहै १८.

[बा.८६] **मा०** मासनि पडिमाधारी **भि०** साधूने **णो०** न कल्पै **स०** सचित्त रज खरड्ये पगे तथा **का०** शरीरे **गा०** गृहस्थनै **कु०** घरे **भ०** आहार **पा०** पाणीनै अर्थे **नि०** नीकलवौ **प०** पेसवो न कल्पै. **अ०** हिवै **पु०** वली **ए०** एम **जा०** जाणै **स०** सचित्त रज **अ०** परसेवे भीज गई **ज०** कठिन परसेवे परणमी **म०** हाथे चोल्यौ उतरे एम परणमै **पं०** तेह ज मेल परसेवे ढीलौ थाइ **वि०** सचित्त रज विद्धंस पाम्यौ तिवारे **से०** तेहने **क०** कल्पै **गा०** गृहस्थनै **कु०** घरे **भ०** भातने अर्थे **पा०** पाणीने अर्थे **नि०** नीकलवौ **प०** पेसवो एम कल्पै १९.

[बा.८७] **मा०** मासनि पडिमाना भिक्षुने **णो०** न कल्पै **सी०** सीतल चोखा प्रमुखनो प्रासुक पाणि **उ०** उन्हौ अचित्त पाणी करी **ह०** हाथ पग प्राकृत माटे नपुंसकलिंगे बाकी पुरुषलिंगे हाथ पग दांत, हाथ न धोइ **दं०** दांत न धोवै **अ०** आंख **मु०** मुख **उ०** एक वार न धोवै **प०** वारंवार न धोई. **ण०** एतलो विशेष जिवारे **ले०** अशुचनो लेप लागौ हुइ तिवारे पाणीने लेपे करी टालै **आ०** जे मुखनै आलेपे पाणीने लेपे धोइ चलु करै तथा असझाइने लेपे ते खरड्यो देहनै धोइ पूर्वोक्त जले करी **णं०** अलंकारे **वा०** वली **भत्त०** भोजने खरड्यौ **आस०** मुख धोइ. ए बे उपरांत नही इत्यर्थ. तथा आचारांगे कह्युं जे असझाइए डील खरडांणौ हुए ते काकरादिके लूहै अने पछै धोवै. आ पाठथी धोवो जाणवो पण तेतलो ज अवयव धोयवो. अथ वलि लेवेणं नो पर्याय कहीइं छै. लेव० असझाइ पण टालै वाटै ऊपरे तेरे साखे उच्चारपासवणं० गाथा सूयगडांगे १ ठाणांगे असझाइ कही २ व्यवहारे असझाइं सझाय न कर्वो ३ पोताना अथवा असझायपणै सझाय न कर्वो ४ आचारांगे हस्तादिकनै धोवा, अपाननी ना कही ५ अत्र हस्तादिक ५ धोवानि ना कही अनै असझाइंनो लेप पाणीइं धोइवो कह्यौ ६ वली दशाश्रुतखंध त्रीजे अध्ययने *पुव्वामेव आयामेइ [दशा ३-९-१०]* गुरु पहिला शिष्य आचमन लेइने जाय ७ हवे निशीथनी

६ साखे उच्चारनै जे प्रथम काकरादिके लूहै ८ पण कागद खीले न लूहै ९ पछै आचमन लियै १० उचार ऊपर न लियै ११ वेगलो जइने लियै १२ त्रिण नावा खोवला ऊपर न लियै १३ लियै त्रण नावा सुधी लियै मूलथी न लियै तो प्रायछित. १३ साखे असझाइ टालवानि कही तथा करपात्र महाबलिष्ठ होइ उचार निवारी जे पछै खोवले मात्रे लेइने टालै, मात्रो राखवा निसंग न होय तो हि ज करपात्रीपणुं अंगीकार करै पण अशुचि टालै. ए सूत्रनि साखे प्रथम आग्या प्रमाण पछै अभिग्रह आगम प्रमाण जाणवौ. ए अनुमान प्रमाण जाणवौ.

[बा.८८] **मा०** मासिक पडिमाना भिक्षुनै **आ०** न कल्पै घोडौ **ह०** हाथी **गो०** बलद **म०** भेंस **को०** सुअर **सु०** स्वान इत्यादिक बीजा वाघादिक **दु०** दुष्ट जीव **आ०** साहमो आवतां थकां तेहनि मारवानि विहिके **प०** पगमात्र ए **प०** पाछौ न ऊसरै. **अ०** जे कोइ माहरो सुहालो जीव **आ०** साहमो आवतो होय तो **क०** कल्पै जयणा जांणीने झुसरा प्रमाण **प०** पाछौ ऊसरवौ ते जीवनि दया माटे २१.

[बा.८९] **मा०** मासनि पडिमाना भिक्षुने **णो०** न कल्पै **छा०** छायाइं **सी०** ताढ लागै एम जाणीनै **नो०** तावडै नावै. **उ०** तावडेथी **उ०** उष्णपणौ जाणि **नो०** छाहडी नावै. **जं०** जे जिहां जिवारे सीताप हुई **तं०** ते **त०** तिहां **अ०** सहै अहियासै २२.

[बा.९०] **ए०** इम **ख०** निश्चै **ए०** ए **मा०** मास संबंधि **भि०** भिक्षू प्रतिमा **अ०** सूत्रनै अतिक्रमवौ नथी यथासूत्र **अ०** जिम सूत्रे कही तिम **अ०** जेहवौ आचार छै तेहवौ तिम **अ०** जिम एहनो मार्ग छै तिम **अ०** यथातथ्यनै **स०** भली परे **का०** कायाइं **फा०** आदरीने **पा०** सेवीने **सो०** अतीचार टालीने **ती०** मर्यादा सूधी **कि०** गुणग्राम करीने **आ०** जिनवचन आराधीने **आ०** आग्याइं **अ०** पालणहारो हुई. प्रथम एक मासनि संपूर्ण ।।१।।

[बा.९१] हिवै बीजी पडिमा एक मास संबंधि कहै छै. **दो०** दो मासिकनि बिजि **णं०** अलंकारे **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा **नि०** नित्य वोसरावी छै काय **जा०** प्रथम पडिमाना आचार सरीखो एतले प्रथम पडिमानी परे बीस बोल सहित बे दति जाणवी ।।२।। **ति०** त्रिमासिक प्रतै **ति०** तीजी मासिक संबंधी भिक्षु प्रतिमानै विषै **ति०** तीन दति, शेष प्रथम प्रतिमावत् ।।३।।

**चा०** चोथी मास संबंधी भिक्षु प्रतिमा ४ नै विषै **च०** चोमासिक च्यार दति जाणवी ।।४।।

**पं०** पांचमी पांच मासनि भिक्षु प्रतिमानै विषै **पं०** पांच दति लियै, शेष पूर्ववत् ।।५।।

**छ०** छ मासकी छट्ठी छ मास संबंधी भिक्षु पडिमानै विषै ६ दति लिइं, शेष पूर्ववत् ।।६।।

**स०** सात मासकी सातमी सात मास संबंधी भिक्षु पडिमाने विषै सात दति लीइं, पूर्ववत् ।।७।। **जे०** जे **ज०** जेतला मासिया पडिमा ते पडिमाने विषै **ते०** तेतली दति लियै छै.

[बा.९२] **प०** इहां आठमी छै. आठमी सात रात्रनी **भि०** भिक्षुनि **प०** पडिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** साधूनै **नि०** नित्य **वो०** वोसरावी काया **जा०** पूर्व बोल कह्या ते इहां पण जाणवा. जे परीसह ऊपजै ते खमें. **क०** कल्पै **से०** ते पडिमाधारीने **च०** चउत्थ भक्त चोवीहारे रहिवौ **ब०** बाहिर **गा०** गामने **जा०** जावत् **रा०** नगर खेड कवड इत्यादिक राजधानी **उ०** नीचे बाहिर रहिवो तो सूइं ते आसननै १ **पा०** एके पसवाडे २ **नि०** पलाठी वालीने बेसै ३ **ठा०** ए त्रण काउसगे रहै **ठा०** मर्यादा धरै तिहां सूधी रहै. **त०** तिहां **दि०** देवताना **मा०** मनुष्यना **ति०** तिर्यंचना **उ०** उपसर्ग परीसह **स०** ऊपजै. **ते०** ते **उ०** उपसर्ग ते पडिमाधारीने **प०** प्रकर्षे चलावै **प०** काउसगादिकथी पाडै तो हि पिण **नो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै **प०** मने करी चालवै **प०** मने करी पाडवौ. **त०** तिहां **उ०** वडी नीत **पा०**

लघु नीत **उ०** बाधा उपजै तो **णो०** ते पडिमाधारीने न कल्पै, स्यूं न कल्पै ? ते कहै छै. **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीत ए राखवौ न कल्पै अने रह्यौ छै तिहां पण परिठववौ न कल्पै. तो स्यूं करै ? ते कहै छै. **क०** कल्पै **से०** तेहनै **पु०** पूर्वे **प०** पडिलेही मूकी छै **थं०** ते थंडिलनै विषै **उ०** वडी नीत **पा०** लघुनीतनै **प०** परिठववौ **अ०** पछै यथाविधि काउसग मध्ये **ठा०** जे काउसग रहितो हतो तिम **ठा०** रहै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **ए०** ए **प०** पहिली एतले आठमी **स०** सात रात्रनि **भि०** भिक्षुनि **प०** प्रतिमा **अ०** सूत्रोक्त **जा०** पालणहार हुई ।।८।।

[बा.९३] **ए०** इम **दो०** बीजी ते नवमी ते पण **स०** सात रात्रनि. एणीपरे पण **ण०** एतलो विशेष **दं०** दांडानि परे लांबो थइ सूयै १ **ल०** लकडानै आकारे आसण २ **उ०** ऊकडू आसणे ३ **ठा०** काउसग ठाही रहै. **से०** शेष सर्व **तं०** पाछली परे **जा०** जावत् **अ०** आज्ञाइं पालणहारो हुवै ।।९।।

[बा.९४] **ए०** एणीपरे **त०** त्रीजी एतले दशमी ते पण **स०** सात रात्रनि हुई **ण०** एतलो विशेष **गो०** गोदूहियासण १ **वी०** वीरासण २ **अं०** आंबानि परे कूबडौ आसण ३ **ठा०** काउसग ठाहै करै, शेष सर्व पूर्ववत् **तं०** पाछली आठमीनी परे **जा०** जावत् **अ०** आग्याये पालणहारो **भ०** हुवै ।।१०।।

[बा.९५] **ए०** इम ही ज **अ०** अहोरात्रिनि आठ पोहरनि इग्यारमी पण छै **न०** एतलो विशेष **छ०** छट्ठ भक्त **अ०** चोविहारे नीपजै. **ब०** बाहिर **गा०** ग्रामनै **जा०** जावत् **रा०** राजधानीने बाहिर **इ०** थोडा सा **दो०** बे पगनै **सा०** संकोचीने **व०** लांबा करिवै हाथनै **ठा०** काउसग **वा०** पदपूर्णे तथा समुचये **ठा०** ठाहै करै **से०** शेष दसमी पडिमानि परे **जा०** जावत् **अ०** आग्याये पालणहारो **भ०** हुवै ।।११।।

[बा.९६] **ए०** एक रात्र च्यार प्रहरनि **भि०** भिक्षूनि **प०** प्रतिमा **प०** प्रतिपन्न **अ०** अणगारनै **नि०** नित्य **वो०** वोसरावी छै काया **जा०** जावत् **अ०** परीसह खमै. **क०** कल्पै **से०** तेहनै **णं०** अलंकारे **अ०** अट्ठम भक्त **अ०** चोवीहार पचखवे करी **ब०** बाहिर **गा०** ग्रामनै **जा०** जावत् **रा०** राजधानीनै बाहिरे **इ०** थोडी सी नमाडी **का०** कायाइ एतले **ए०** एक पुद्गल **दि०** दृष्टी जेणे **अ०** टमकावै नही **न०** नेत्र एहवो **अ०** यथास्थित निश्चल गात्रे करी **स०** पंचेन्द्रीए करी **दो०** पगनै **सा०** संकोचीने **व०** लांबा मूक्या छै बे हस्त जेणे एहवो **ठा०** काउसग करै. **त०** तिहां **दि०** देवना **मा०** मनुष्यना **ति०** तिर्यंच संबंधी जे परीसह ऊपजै ते **अ०** सर्व खमै अहियासै **जा०** जावत् **से०** ते **णं०** अलंकारे **उ०** वडीनीत **पा०** लघुनीतनि **उ०** बाधा उपजै तो **नो०** तेहनै न कल्पै **उ०** वडीनीत **पा०** लघु नीत **उ०** राखवी **गि०** जिहां रह्यौ छै तिहां पण परिठवौ न कल्पै. **क०** कल्पै **से०** तेहनै **पु०** पूर्वे पडिलेही मूक्यौ छै **थं०** थंडिलने विषै **उ०** वडीनीत **पा०** लघुनीत **प०** परिठववौ **अ०** यथाविधि **मे०** इम **ठा०** काउसग करै.

[बा.९७] **ए०** एक रात्रनि **णं०** अलंकारे **भि०** भिक्षु प्रतिमा **अ०** प्रतिपन्ननो धणि रूडिपरे न पालै, परीसहथी चालै तो एहवा अणगारनै प्रतिमा प्रतिपन्नै **इ०** ए आगल कहिस्यै ते **त०** त्रिण थानक **अ०** अहितनै अर्थे हुइ **अ०** असुखने अर्थे हुई **अ०** असमर्थपणानै अर्थे, खमानै अर्थे नही **अ०** आगम्ये काले एतला वांना **भ०** हुइ. **तं०** ते कहै छै- **उ०** उन्मादपणानै **ल०** पामै १ **दी०** घणा काल लगे **रो०** ज्वरादिक **आ०** आतंक ते सूलादिक **पा०** पामै २ **के०** केवलीना **प०** परूप्या **ध०** धर्म थकी **भं०** भ्रष्ट थाय तो परीसहथी चलै तो ३.

[बा.९८] अनै **ए०** एक रात्रनि **भि०** भिक्षुनि **प०** प्रतिमा **स०** सम्यक् प्रकारे रूडीपरे पालणहारा **अ०** साधूनै **इ०** ए आगल कहस्यै ते **त०** त्रिण थानक **हि०** हितनै अर्थे **सु०** सुखने अर्थे **ख०** समर्थपणानै अर्थे खमवानै अर्थे हुई **नि०** कल्याणनै अर्थे **अ०** आगम्ये काले एतला वांना **भ०** हुइ. **तं०** ते ए-**ओ०** अवधिज्ञान **वा०** समुचये **से०** ते प्रतिमाधारी परीसहना खमणहारनै **स०** ऊपजै १ **म०** मनपर्यवज्ञान **वा०** अथवा **स०** ऊपजै २ **के०** केवल ग्यान

**अ०** ते प्रतिमाधारी परीसहना खमणहारनै पूर्वे नथी ऊपनौ ते ऊपजै गजसुकुमालवत् ३.

[बा.९९] **ए०** इम **ख०** निश्चै **ए०** ए कही ते **ए०** एक रात्रनि **भि०** भिक्षुनि प्रतिमा **अ०** जिम सूत्रमध्ये कही तिम १ **अ०** जिम पडिमानो आचार छै तिम २ **अ०** जिम मोक्षनो मार्ग तिम ३ **अ०** यथातथ्य बोल्यौ तिम ४ **स०** भली परे **का०** कायाइं **फा०** फरसीने **पा०** पालीने **सो०** सोधीने **ती०** पार पोचाडीने **कि०** तेहनि कीर्ति करीने **आ०** ग्यान आराधीने **आ०** जिनाज्ञाइं **अ०** परंपराइं सुध पालणहार **भ०** हुई. ए भिक्षुनि बारमी प्रतिमा ।।१२।।

**ए०** ए **ख०** निश्चै **ता०** ते **थे०** थविर **भ०** भगवंते **बा०** बारे **भि०** भिक्षुनि साधूनि **प०** प्रतिमा **प०** कही. **त्ति०** इम **बे०** कहुं छुं. सातमो अध्ययन संपूर्ण थयौ ७.

## [अष्टमदशा पर्युषणाकल्पाध्ययनम्]

[बा.१००-३८९] हिवै आठमो अध्ययन कहै छै. **ते०** तेणे काले चोथे आरे **णं०** अलंकारे **ते०** तेवीसमा जिन मुक्त गया पछी **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीरनै **पं०** पांच पदार्थ **ह०** उत्तराफाल्गुनि नक्षत्र चंद्रमा साथे योग छै. **तं०** ते कहै छै. **ह०** उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रे **चु०** चव्या चवीने **ग०** गर्भे अवतर्या १ **ह०** वली उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रे **ग०** देवानंदाना गर्भथी गर्भ साहर्यो त्रिसलानि कूखे मूंक्यौ २ **ह०** वली उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रे **जा०** जन्म हुऔ ३ **ह०** वलि उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रे **मुं०** भावथी मुंड पांच इंद्री च्यार कषाय अने द्रव्य थकि एक लोच, १० प्रकारे मुंड थइनै **अ०** गृहवास छंड्या थकी **अ०** अणगारपणौ **प०** अंगीकार कर्यौ ४ **ह०** वलि उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रे **अ०** नथी अंत जेहनो **अ०** सर्व थकी उत्तर **नि०** गयौ छै पर्वतादिकनो व्याघातपणौ **नि०** नथी बादल रूप ४ घनघातीया आवर्ण **क०** द्रव्य गुण पर्यवना जाणपणाथी **प०** संपूर्ण पूनमना चंद्रमंडलवत् **के०** एहवो केवल एक **व०** प्रधान **ना०** ज्ञान **द०** केवलदर्शन **स०** ऊपनौ प्रदेश निर्मल थया ५ **सा०** स्वाति नक्षत्रे **प०** शीतलीभूत हूवा मुगते पहुंता **भ०** भगवंत ६. **जा०** जावत् शब्दे आचारांगना बीजे श्रुतखंधे पनरमे अध्ययने कह्युं तिम **जा०** जावत् शब्द थकी आचारांगनो ए पाठ *साइणा परिनिव्वुए भगवं.* हिवै एहथी आगले *समणे भगवं महावीरे इमाए उस्सप्पिणीए सुसमसुसमाए* इत्यादिकथी मांडीने पांचमी भावनानो छेहलो पाठ *आणाए आराहिए यावि भवइ* एतले पनरमुं अध्ययन संपूर्ण जाव मध्ये भुज्जो भुज्जो हत्थोत्तरानो विस्तार कह्यौ. ते जाणवौ. ते पण अत्र पनरमे अध्ययने कह्यौ ते भुज्जो भुज्जो जाणवौ. अथ हिवै पज्जोसवणा कप्पए एहवा अध्ययननो नाम ते स्या माटै ? ते कहै छै. परि-अति हि उसणा-रहिवौ कप्प-तेहनि विधि आचारांगे ते किहां महावीर वस्या १ पछै शेष मास त्रिसलानि कूखे २ पछै जन्म थयौ पछै तीस वर्ष गृहवास ३ पछै दीक्षाइं बारे वर्ष छ मास छद्मस्थपणै ४ पछै केवलग्याने ३० वर्ष वस्या ५ छेहडे मुगते वस्या ते साइणा परिनिव्वुए ६ ए पज्जोसवणा एतले आठमो अध्ययन संपूर्ण हुओ. ए आठमो दशाश्रुतस्कंध संपूर्ण ८.

## [नवमदशा मोहनीयस्थानाध्ययनम्]

[बा.३९०] हिवै नवमो अध्ययन कहै छै. तेहनो ए संबंध – जीव मिथ्यात मोहनीनी उत्कृष्टा स्थिति करै सितर कोडाकोड सागरनि अने एहवा श्रीमहावीर देव पर जीवना उपगारी. ते तो एहवा मिथ्यात मोहनीना टलावणहार. ते भणि ते मिथ्यात मोहनी बांधवाना त्रीस स्थानक ओलखावै छै. ते त्रीस स्थानक ओलखीइं. एहवा भाव नवमा अध्ययननै विषै कहै छै. एहनो संबंध – **ते०** ते काल चोथे आरे **ते०** ते समयनै विषै **चं०** चंपा नामे **न०** नगरी **हो०** हूंती. **व०** नगरी प्रमुखनो वर्णन धर्मकथा सूधी जाणवौ *रिद्धित्थमियसमिद्धा [औप.सू.१]* इत्यादि सर्व जाणवो. **पु०** तिहां पूर्णभद्र नामे **चे०** व्यंतर देव स्थानक. **को०** कोणिक राजा **धा०** धारणि नामे पटराणि

**सा०** चंपाइं सामी समोसढे श्रीमहावीर देव साधू साधवीना परिवार सहित सपरिवार समोसर्या. **प०** परिषदा नगरीथी नीकली वांदवा आवी. **ध०** भगवंते धर्मोपदेश कह्यौ *अत्थि जीवे [औप. सू. 34]* इत्यादिक. **प०** परिषदा उपदेश सांभलीने **प०** पाछी वली.

[बा.३९१] **अ०** हे आर्य ! इम कहीने **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **ब०** घणा **नि०** साधु **नि०** साधवीने **आ०** कोमल वचने आमंत्रीने **ए०** इम **व०** बोल्या. **ए०** इम **ख०** निश्चै **अ०** अहो आर्य साधो ! **ती०** तीस **मो०** महामोहनि महापाप मिथ्यात्व उपार्जवाना **ठा०** थानक **जा०** जे ए ३० थानक **इ०** स्त्री तथा **पु०** पुरुष **अ०** क्षण ते काल, ते क्षण क्षण प्रतै आचरिनै **आ०** ते तीस थानक एक वार आचरतो थको **स०** वारंवार आचरतो थको **मो०** ते मिथ्यात मोहनी ते महापाप चीकणा **क०** कर्म **प०** बंधण करै. **तं०** ते ए गाथाए करी कहै छै.

[बा.३९२] **जे०** जे कोइ **त०** त्रस जीवनै स्त्री पुरुष नपुंसकनै **वा०** पाणिमांहि **व०** बोलीने **उ०** उदक रूप शस्त्रे करी **क०** पगे करी दापीने **मा०** कुमरणे मारै **म०** महामोहनि कर्म उत्कृष्टी ७० कोडाकोड सागरोपमनि स्थिति **म०** महामोहनि कर्म ते भवने केडे लाख लगे असाता वेदनि ७० कोडाकोड सागर लगी १.

[बा.३९३] **पा०** हाथे करी **पि०** ढांकीने **सो०** मुख नाक कानना विवर **आ०** रूंधीने **पा०** जीवनै **अं०** गलामांहि **ण०** घुरघुराट शब्द करंता **मा०** मारै ते **म०** महामोहनि कर्म उपार्जै. ए बीजो बोल २.

[बा.३९४] **जा०** अगन करी **स०** प्रजालीने **ब०** घणा जीवनै लोकने **उ०** वाडादिकनै विषै रोकीने **अं०** घरादिकमांहि धूमाडे करी कुल करीने मारै ते **म०** महामोहनि कर्म बांधे ३.

[बा.३९५] **सी०** मस्तकने विषै **जो०** जे कोइ दुष्ट खड्गादिके मारै **उ०** सर्व अंग मध्ये उत्तम छै एहवा मस्तकने विषै **चे०** अति मेघवे करी **वि०** भिन्न करै भांगै **म०** मस्तकनै **फा०** फोडै फोडीने **म०** महामोहनी कर्म **प०** बांधे ४.

[बा.३९६] **सी०** सीर्ष वेष्टन ते चामडाने वाधे वाधरे करी **वे०** वींटै **जे०** जे कोइ दुष्टादिक **आ०** मस्तकादिक शरीरनै वींटी तांणि बांधै **अ०** वार वार बांधे **ति०** तीव्र परिणामे करी **अ०** असुभ कदर्थ **स०** आचर्तो थको मारै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै ५.

[बा.३९७] **पु०** वलि वलि कपटे करी जिम पाटपाडा वांणियानै वेष करीने मार्गादिकनै विषै अग्यानि जन **ह०** लोकनै मारी **उ०** आनंद पामै हसै **फ०** बीजोरादिक फले तथा फल ते तरवारादिक अथवा **दं०** दंडे करीने मारै ते **म०** महामोहनि कर्म उपार्जै ६.

[बा.३९८] **गू०** गूढ गुप्त छै आचार कपट जेहवो थको पोतानो दुष्ट आचार **नि०** गोपवै **मा०** परनि मायाप्रतै पोतानि माया करी **छा०** ढांकै जिम पंखीनो ग्रहणहारौ चिडीमार कपटे करी पोतानो दिल गोपवीने पंखीने ग्रहै छै तिम **अ०** उत्सूत्रनो परूपक असत्यवादी **णि०** सूत्रार्थनै गोपवै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै ७.

[बा.३९९] **धं०** आगलाना जसादिकनै भ्रंसै करै **जो०** जे कोइ **अ०** अछते दोषे करी **अ०** पोते अनेक कर्म कीधा हुई तेणे करी **अ०** अणकर्णहारनै माथै नाखै पोतानो अग्यान **अ०** अथवा ए चोर बालघातादिक **तु०** तुम कीधो, अछतो आल दीइं तो **म०** महामोहनि कर्म उपार्जै अछतो दोष दीधा माटे ८.

[बा.४००] **जा०** जाणतो थकौ तथा दुविय थकौ परमार्थनो अजाण नाम धरावतो थकौ **स०** कांइक साचूं कांइक मृषा एतले मिश्र वचनने **भा०** बोलै सहूनै भूंडो मनाववा वलि **अ०** ते न कहिइं उल्हवनाराइं **झं०** कलेशवौ ते **पु०** पुरुष द्रव्य भावना झगडानो वधारणहार कहिए ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै, सिद्धांतनै आघो पाछो

बोल्या माटे ९.

[बा.४०१] **अ०** नथी **णा०** न्यायक जेहने माथे पोते ज सहूनौ नायक राजा तेहने **ण०** प्रधाननै **त०** ते राजानि स्त्रीने तथा **दा०** लक्ष्मी आववाना ठामनै **धं०** विणसाडै. सूं करीने ? **वि०** घणा मंडलीक राजाने **वि०** फेरवीने राजा ऊपरथी मन फेरवीने राजाने राजकार्यथी **प०** बाहिर **कि०** करीने १० **उ०** राजा पोतानि वीनती करवा मोकलै तेहवा राजपुरुषनै, पोताने पासे आवता रागी पुरुषनै **झं०** मायाइ करी विप्रतारीने उघाला करै **प०** कठोर वचने करीने साहमि हुलासा एम करी राजाना **भो०** प्रधान कामभोगनै **वि०** टालै एतलै राज बाहिर करै एतले राजानो विस्वासघाती ते **म०** महामोहनी कर्म बांधे ११.

[बा.४०२] **अ०** नथी कुमार थका ब्रह्मचारी एतले परण्या थका, नथी कुमार सरीखो छुं **जे०** जे कोइ अने कुमार ब्रह्मचारी **हं०** हूं छुं **इ०** एम **वं०** कहै **इ०** स्त्री संबंधी कामभोगने विषै **गे०** गृद्ध छै ते जीव **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै, एम करी घणा लोकना विप्रतार माटै १२.

[बा.४०३] **अ०** अब्रह्मचारी थकौ **जे०** जे कोई **बं०** ब्रह्मचारी **अ०** हूं छुं **व०** एम बोले **ग०** गर्दभनि परे गर्दभ जिम **ग०** गायना टोलामांहि **वि०** अलखामणौ **ण०** शब्दने **ण०** भूकै अलखामणौ लागै तिम ते जाणवा १३ **अ०** पोताना आत्माने **अ०** अहितनो **बा०** ते अग्यानी करणहारा घणा जीवनि घात करै **मा०** माया मिथ्या एह अवगुण जे घणा धरमी ऊपरे लोकनै अविस्वास ऊपजै ए कारण माया सहित मृषाने **ब०** घणो घणो **भ०** बोलै **इ०** स्त्रीना कामभोगने विषै गृद्ध थकौ **म०** ते महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै १४.

[बा.४०४] **जं०** जे राजा व्यवहारी वा प्रमुखना **णि०** आश्रे थको तेहनि नेश्राइं **उ०** आजीविका करै **ज०** राजादिकना प्रताप करी तथा **अ०** तेहनी चाकरीए करी **त०** ते राजा प्रमुखना धननै विषै **लु०** लुब्ध होइ पोते चोर तथा चोर पाहे कढावी पोते लियै चिलातिवत् **म०** ते महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै १५.

[बा.४०५] **इ०** ठाकुरे अथवा **गा०** गामने लोके मिलीने **अ०** कोइक अनीस्वर हतो ते कोइ काम कार्यमांहि वडेरो **क०** कीधो होय **त०** ते दरिद्रीने **सं०** मोटे माणसे बाहि ग्रह्या माटे तेहनो **सि०** लक्ष्मी **अ०** घणी आवी दोलत पाम्या १६ **इ०** पछै ते उपगारी पुरुषनै **इ०** मछर द्वेषे **आ०** सहित थकौ मनमांहि मोटाइं आणतो **क०** द्वेष लोभादिक रूप पापे करी **आ०** मेलू **चे०** चित्त तेणे करी **जे०** ते दुष्ट उपगारीयांनी अंतराय **चे०** पाडै धन आववानि घणि हरकत करै **म०** ते महामोहनि कर्म करै १७.

[बा.४०६] **स०** सर्पणि **ज०** जिम **अं०** पोताना इंडानै समोहनै हणै तिम **अं०** अंड ते पुत्र तो मोटो थाइं तिवारे मा वित्रनो भरण पोषण करै पुत्र ते निधान माटे अत्र अखंडनि उपमा दीधी **भ०** घरमांहिला पोषणहाराप्रतै **जो०** जे **हिं०** हणै मारै वलि **से०** सेनापतिने **प०** प्रधाननै **प०** प्रसस्त ते कलाचार्यने धर्मशास्त्रना पाठकनै हणै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै, ते मर्ये घणा लोक दुखी थाइ ते माटे १८.

[बा.४०७] **जे०** जे दुष्ट **णा०** देशना नायक राजाने वलि हणै **ने०** वाणियाना वृंदनो न्यायनो प्रवर्ताव करै वली **से०** नगर सेठ ए त्रिण केहवा छै **ब०** घणा **र०** जसना धणि छै. एह त्रणप्रतै जे **ह०** हणै मारै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै १९.

[बा.४०८] **ब०** घणा जननो नायक पोषक तेहनै **दी०** तथा संसार समुद्रमांहि बूडता **पा०** जीवनै **दी०** दीवा समान ग्यानवंतनै **ए०** एहवा नरनै जे कोइ **ह०** हणै ए बे उपगारी हणै ते माटे **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २०.

[बा.४०९] **उ०** प्रव्रज्या लेवा सावधान थयो छै जेहनै दीक्षा लेवानो मन भांगे **प०** वलि संसार निवर्त्यौ **सं०** साधू थयौ अति हि समाधिवंत छै एहवा बिंहूनै **वि०** विप्रतारी तथा बलात्कारे **ध०** धर्मथी **भं०** भ्रष्ट करी मन फेरवै तो घणा लोकनै विषै संका आवै ते माटे **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २१.

[बा.४१०] **त०** तिम ही ज **अ०** अनंतग्यानी विरुद्धपणे घणा लोकांनो मिथ्यात टालै ते माटे उत्कृष्टौ महाग्यानि **जि०** जिन केवली **व०** प्रधान **दं०** दरसणना धरणहारा तीर्थंकर केवली एहवा ते जिनना अवर्णवाद बोलै, द्रव्यथी परदर्सनि गुणना अजाणमाटे भावथी निन्हवादिक गुण जाणै विरुद्ध परूपणा ते अग्यानपणै तथा कदाग्रह **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २२.

[बा.४११] **ने०** ए नास्तिकादिना मत आश्री जाणवा तिर्थंकरनो परूप्यौ यथा ग्यान सहित मोक्षमार्ग तेहनो **दु०** दुष्ट द्वेषी छतो घणा लोकनै **अ०** फेरवै भूंडो मार्ग भाखै **तं०** ते मार्गनि निंदा द्वेष कर्तो थकौ **भा०** निंदा करै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २३.

[बा.४१२] **आ०** आचार्य उपाध्याय तथा गुरुनै **सु०** सूत्रनै सूत्रार्थनै **वि०** विनय ते चारित्र ग्यानादिकनो विनय **च०** वली **गा०** ग्रहिराव्यौ भणाव्यौ **तं०** ते आचार्यादिक गुरुनै **बा०** जे बाल अग्यानी कुशिष्य **खिं०** हीले निंदे **म०** ते महामोहनि कर्म **म०** उपार्जै २४.

[बा.४१३] **आ०** आचार्य **उ०** उपाध्याय तथा गुरुनै **स०** भली परे आराधै नही, सेवा न करै **अ०** भक्ति तथा सेवानो अणकरणहार हुइ **अ०** अहंकारी **म०** महामोहनि कर्म उपार्जै, अपवाद बोलवाथी ऊपरथी मन उतारै ते माटै २५.

[बा.४१४] **अ०** अबहुश्रुत थकौ जे कोई **सु०** श्रुत शास्त्र करी **प०** पोतानि श्लाघा करै **स०** सझायनो वाद **व०** वदै 'हू सुध शास्त्रनो पाठक छुं' लोकने घणि खोटी सद्दहणा करै ते माटे **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २६.

[बा.४१५] **अ०** अतपस्वी थकौ **जे०** जे कोइ **त०** 'हूं तपस्वी छुं' एम करीने पोतानि श्लाघा कहै सर्व लोकनै विषै ते माटे **स०** सर्व लोकथी मोटा **ते०** चोर वीतरागना चोर ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २७.

[बा.४१६] **सा०** उपगारने अर्थे **जे०** जे कोइ **गि०** गुर्वादिकनै वृद्धावस्था आव्ये छते तथा **उ०** रोगादिक आव्ये छते पोते **प०** समर्थ थकौ **ण०** वेयावच न करै. स्या माटे ? **म०** माहरी पिण सेवा पूर्वे **से०** ए **ण०** कर्तो न हतो तो हूं स्या माटे करुं २८. **स०** धूर्त **नि०** माया कर्वाने विषै निपुण **क०** कलुष द्वेष करी **आ०** मेलो चित्त जेहनो एहवो **अ०** पोताना आत्मानै **य०** पदपूर्ण तथा समुचये **अ०** मिथ्यातनो उपजावणहार दुष्ट परिणाम माटे अनुकंपा रहित माटे **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै २९.

[बा.४१७] **जं०** जे कोइ **अ०** अधिकरण तथा हस्याकारी **अ०** अधिकरण रूप शस्त्रनै **सं०** प्रयूंजै परूपै **पु०** वारंवार **स०** सर्व तीर्थ ते ग्यानादिक च्यार मार्ग **भे०** भेद नासनै अर्थे होइ ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै ३०.

[बा.४१८] **जे०** जे कोइ **अ०** अधर्मी **जो०** योग ते निमित्त वसीकरणने **सं०** प्रयूंजै कहै **पु०** वारंवार **स०** हेतुने तथा मित्रपणाने अर्थे आगलासू मित्राइ कर्वाने अर्थे **म०** महामोहनि कर्म उपार्जै ३१.

[बा.४१९] **जे०** जे कोइ **मा०** मनुष्य संबंधि भोगनै **अ०** अथवा **प०** परलोक देव संबंधि भोगनै **अ०** अतृप्तो थको **ते०** ते भोगनै **आ०** वांछै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै निदान कर्वा माटे ३२.

[बा.४२०] **इ०** विमानादिकनि ऋद्धि **जु०** शरीराभरणनि जोति **ज०** जस **व०** कनक वर्ण देह **दे०** देवताना एतला

वांना **ब०** शरीरनो बल वीर्य पराक्रम चिंतव्यौ करै **ते०** एहवो देवतानो अवर्णवाद बोलै **बा०** बाल अग्यानी 'स्या देवता ? स्यो तप संवरनो फल ? ए सर्व पाप लागै छै' एम बोलै ते **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै ३३.

[बा.४२१] **अ०** 'देवतानै देखूं छुं' इत्यादिक प्रतीत उपजावीने पछै जे पाखंड चलावनार थाइ तेहवा पाखंड चलावै गोसालानि परे, अणदेखतो थको इम कहै जे '**प०** देखूं छुं **दे०** वैमानिक देवनै **ज०** जक्ष **गु०** गुह्यक ए व्यंतर देवने' **अ०** अग्यानी थको **जि०** लोकमांहि **पू०** पूजावानो अर्थी गोसालानि परे **म०** महामोहनि कर्म **प०** उपार्जै ३४.

[बा.४२२] **ए०** ए तीस बोल **मो०** मोहनि कर्मना फलना उपजावणहारा **वु०** कह्या **क०** अंत छेहडे माठा कर्मना फलना देवणहार **चि०** मेला कर्मना वधारणहार **जे०** जे **भि०** साधू होय ते ए ३० बोलनै **वि०** वर्जीने **च०** संवेगवंत थको तथा तीर्थंकर प्रणीत वचननो **ग०** गवेषणहारो ३५.

**जं०** जे साधू **जा०** इम जाणै संजम लीधां **पु०** पहिलो कीधो **कि०** लोकिक पख करवा योग्य पारांदिक वली **कि०** चोरी प्रमुख अकार्य **ब०** घणुं ते मे **ज०** त्यजुं **तं०** ते बेहूं वांनाने **वं०** त्यजीने **ता०** ते जिन भाख्या वचनानै आदरै सेवै **जे०** जे इण आदरवे सेववे करी **आ०** आचारवंत गुण पात्र **सि०** हुइ ३६.

**आ०** आचार पालवे करी **गु०** गोपव्यौ छै आत्मा असुभ पदार्थ थको **सु०** ते माटे सुद्ध छै आत्मा जेहनी **अ०** वली प्रधान **ध०** धर्मे १०विध यतीना धर्मने विषै **ट्ठि०** रहीने **त०** ते संजमनै विषै रह्यानै **स०** पोताना **दो०** अवगुणने **वि०** जिम आसीविष विषने त्यजीनै पाछौ न लीयै तिम साधू पिण वम्यौ भोग पाछौ न लियै ३७.

**सु०** अति हि छांड्या **दो०** अवगुण जेणे एहवो **सु०** शुद्ध आत्मा जे साधू **ध०** श्रुत चारित्र धर्मनो अर्थी **वि०** जांण्या छै संपूर्ण मोक्ष जेणे पाम्यौ ते साधू **इ०** इहलोकमांहे **ल०** पामै **कि०** कीर्ति **पे०** आगले भवे **व०** प्रधान **सु०** मुक्त तथा देवलोक पांमै ३८.

[बा.४२३] **ए०** इम **अ०** सुद्ध मार्गनो जाणीने **सू०** सूरवीर **द०** दृढ पराक्रमना धणि धैर्यवंत **स०** आठ कर्मथी **वि०** विशेष थकी मूकाणा **जा०** जन्म मरणने **म०** अतिक्रमीने उलंघीने निवर्त्या रह्या मुक्तिनै विषै ३९. **त्ति०** इम हूं कहूं छुं. ते ३० महामोहनीना स्थानक संपूर्ण. ए दशाश्रुतखंधनो नवमूं अध्ययन संपूर्णम् ९.

## [दशमदशा निदानस्थानाध्ययनम्]

व्याख्यातं नवममध्ययनम्. साम्प्रतं दशममारभ्यते. अस्यायमभिसम्बन्धः – अनन्तराध्ययने मोहनीयस्थानानि प्रतिपादितानि. तद्वशादेव तपः कुर्वन् निदानानि करोति भोगाभिलाषित्वात्. तानि चात्र विभागेन दर्शयिष्यन्ते. यद्वाऽनन्तराध्ययने मोहनीयस्थानानि वर्जनीयानि प्रतिपादितानि. साम्प्रतं तद्विशेषभूतानि निदानान्यपि वर्जनीयानि इत्यनेन सम्बन्धः. अथ हिवै १०मो अध्ययन प्रारंभिए छै. तेहनो संबंध – नवमा अध्ययनने विषै ३० महामोहनीना स्थानक वर्जवा कह्या अने एहवो जे मोहनीनो वर्जणहार ते नव निदाननो पण वर्जणहार हुइ. तिम नव निदान वर्जवा. ते माटे दशमे अध्ययने ९ निदाननो अधिकार कहै छै. एहनो ए संबंध कह्यो. आदिसूत्र –

[बा.४२४] **ते०** ते **णं०** अलंकारे **का०** कालनै चोथा आराने विषै, इदं सप्तमी शेषार्थ प्रागुक्त **ते०** ते समयने विषै जे समय भगवंत विराजमान छै ते समयने विषै **रा०** राजगृह एहवे नामे नगर **हो०** हूतो अतीतवत्. **व०** वर्णव उववाइथी जाणवौ. **गु०** गुणशिल नामे **चे०** चेत्य व्यंतर देवनो स्थानक छै, न तु अरिहंतायतनं **ते०** ते राजगृह नगरने विषै **से०** श्रेणिक नामे **रा०** राजा हूंतो. **रा०** राजानो वर्णन **ए०** इम **ज०** जिम **उ०** उववाइ नाम सूत्रने

विषै वर्णव छै तिम जाणवौ नगरनो १ वननो २ चेत्यनो ३. राजा श्रेणिक **चे०** चेलणा **स०** साथे **वि०** विचरै. **त०** तिवारै **से०** श्रेणिक राजा **अ०** एकदा कोइक प्रस्तावे **ण्हा०** स्नान कीधो **क०** कीधा छै कौतुकादिक त्रण बोल ते, जे देशने विषै जेणे कुले जे हूंतो होय ते कुलधर्म १. अनिरिट्ठ धर्म गणिका कठियारा प्रमुखे ए कीधो छै ते माटे कौतुकादिक ३ बोल, एवं ४ श्रुतधर्म अने चारित्रधर्म मध्ये नावै. **कोउय०** कोतुक ते आगलानै विस्मय बल वधे एहवा कर्म कर्तव्य जेणे **क०** वलि कीधो छै कोतुकमंगल जेणे **पा०** प्रायछित देशाचार ए देशनो धर्म सभाव पण श्रुत चारित्र धर्म न जाणवौ. **सि०** मस्तके न्हाया **कं०** कंठने विषै माला पहरी **आ०** हिर्या **म०** मणि बहुमूल्य सिला **क०** सुवर्ण जेणे ठामे जे सोभै ते **क०** रच्यौ पहिर्यौ **हा०** हार अर्धहार **ति०** वलि त्रिण सरो हार **पा०** झूंमणौ **प०** पालूलहिकतो पहिर्युं जेणे **क०** कंदोरो रत्ने करी जडित बांधवे करी **सु०** रूडी कीधी छै सोभा जेणे **पि०** पहिर्या छै **गे०** ग्रीवना आभर्ण **अ०** अंगुलीने विषै जगजगायमान **क०** कल्पवृक्षनि परे शोभायमान **अ०** अलंकार शृंगार तेणे करीने अलंकृतो मुगटादि **वि०** विभूषित वस्त्रादिभिरिति विभूषाइं सहित **ण०** नर मनुष्यांनो इंद्र जे राजा **स०** सकोरंट नामा वृक्षना फूलनि माला **छ०** छत्रने विषै **ध०** धरावतो थको **जा०** जावत् करणात् *सेयवरचामराहिं मंगलजयसद्दकरे लोए अणेगगणनायग* इत्यादि जाव *धवलमहामेहनिगते गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणमज्झे [औप.सू.३१]* **जा०** जावत् **स०** चंद्रमानि परे **पि०** प्रीतकारी छै **दं०** दर्सन जेहनो **ण०** नरपति राजा **जे०** जिहां **बा०** बाहिरली एतले अभ्यंतरनि अपेक्षाइं **उ०** उपस्थान शाला एतले सभामंडप राजाने बेसवानौ **जे०** जिहां **सी०** सीहने आकारे आसन सिंहासन छै **ते०** तिहां ते जइने ते आसननै विषै **उ०** आवै. आवीनै **सी०** सिंहासन **व०** प्रधानने विषै **पु०** पूर्वाभिमुखे पूर्व साहमो मुख करी **नि०** बेठौ. राजा **नि०** बेसीने **को०** आग्याकारी सेवक पुरुषने **स०** तेडावै. तेडावीने **ए०** वक्षमाण वचन इम कहै.

[बा.४२५] **ग०** जावौ **णं०** अलंकारे **तु०** तुमे **दे०** देवानुप्रिया ए आमंत्रण **जा०** जे **इ०** ए आगल कहिस्यै ते **रा०** राजगृह **ण०** नगरनै **ब०** बाहिर **तं०** ते कहै छै **आ०** जेहनै विषै माधवी लता छै ते आराम कहिइं, एहवा आराम पण कहिइं ग्रह पण कहिइं, आराम प्राकृतत्वात् नपुंसकत्वं १ **उ०** जेहनै विषै फूलना वृक्ष घणा छै बहुजन भोग्यानि २ **आ०** आसेवन जेहने विषै लोक आवीने वसै ३ तथा कुंभकारस्थानानि तथा लोहकारस्थानानि ४ **दे०** देवकुल पासे ओरडा प्रमुख धर्म साजा देव कुलघर ते देवकुल एतले जक्षादिकना सून्य देहरा ५ **स०** सभा ते आस्थान मंडप एतले घणा जिहां लोक मिलै छै ६ **प०** पाणीनि शाला ते पर्ब ७ **प०** जेहने विषै क्रियाणा एतले जिहां क्रियाणा वेचाये ८ **प०** प्रणीतशाला ते पंख शाला एतले जिहां क्रियाणा वेचाइं ए पाटण ९ **क०** आपापणा कर्म कर्ता विचरै छै, तेहनै कहै जो यदा भगवंत एणे स्थानके आवै छै १० **छु०** सुधा जिहां सुधानो परिकर्म समारवौ करै एतले जिहां छूनो कमाय छै ११ **वा०** वाणिज्य जिहां व्यापारने अर्थे घणा लोक मिलै १२ **क०** काष्ठ कर्म ते जिहां काष्ठ वेचाता होय १३ **इं०** इंगाला जिहां वेचाता होय अथवा कर्ता होय १४ **व०** वनकर्म ते खेतीवाडि वृक्ष छेदन करै अथवा वर्णकर्म पंच वर्ण रंग चितराम ठाम १५ **द०** दर्भ ते डाभ खंडा घास मूंज प्रमुखना काम थाइ ते दर्भकर्म कहिए १६ **जे०** जे पूर्वे थानक कह्या **त०** तेहना जे महत्तर अधिपत्यपणे जे प्रसिद्ध **अ०** अन्यदा अधिपति **चि०** रहै छै **ते०** ते महत्तरप्रतै **ए०** इम वली **व०** कहौ.

[बा.४२६] **ए०** एम **ख०** निश्चै **दे०** अहो देवानुप्रियाओ ए कोमल आमंत्रण वचन **भिंभसारइ०** श्रेणिक राजानै प्रश्रेणिक राजाइं भेरी आपी अने बीजा कुमारनै आभरण अलंकारादिक आप्या तिवारे श्रेणिक कुमारे भेरी निरंतरपणै वजाडी तिवारे प्रश्रेणिक राजाइं श्रेणिक कुमारनो भिंभसार एहवो नाम दीधो. ते भणि भिंभसार एहवो नाम कहिइं. अथ वृत्तौ भिंभसारे त्ति भिंभा भेरी सैव सारा प्रधानं यस्य सः भिंभसारः तदाख्यानमेवं –

कुमारभावे णिययघरे पलिते रमणयं भिंभिं घेत्तूण निग्गतो, अवसेसा कुमारा आभर्णगादि, पिउणा पुच्छिया, सव्वेहिं कहियं जेहिं जं णीणियं, सेणिएण भणियं-मए भिंभि णीणिया, पसेणइणा भणिओ – तुज्झ किं एस सारो ? तेण भणियं-आमंति, ततो से रन्ना भिंभसारो नामं कतं, भिंभसार एहवे नामे जे भणि **से०** श्रेणिक राजा, पण केहवो ? **भिं०** भिंभसार एहवो तेणे **आ०** आग्या दीधी छै **ज०** जिवारे **णं०** वाक्यालंकारे **स०** श्रमण भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **आ०** पोताना तीर्थनि आदिना कर्ता **जा०** जावत् **सं०** मोक्षाभिलाषी **पु०** अनुक्रमे आनुपूर्वी विचरता थका **गा०** एक ग्रामथी बीजे ग्रामे **दू०** जाता थका एतले अंतर रहित ग्रामानुग्राम जाता थका एतले अप्रतिबंध विहार कह्यौ **सु०** सुखे समाधे एतले द्रव्यथी शरीरनि खेद विना, भावथी संजम रूपी बाधानो अभाव **वि०** स्थानात् स्थानान्तरं वा गच्छन् ग्रामादिषु वा तिष्ठन् **सं०** सतरे भेदे संजमे करी **त०** १२ भेदे तपस्याइं करी **अ०** पोतानि आत्माने **भा०** भावता थका **इ०** इहां **मा०** आवै. **ज०** यथा अनुक्रमे **भा०** आत्माने भावता थका **वि०** इहां आवी विचरै **त०** तिवारे **णं तु०** तुमे **भ०** भगवंत समस्तैश्वर्यवंत **म०** श्रीमहावीर देवने **अ०** यथाजोग्य प्रतिरूप साधूने योग्य **उ०** अवग्रह ते अनुग्या **अ०** देज्यौ. **अ०** यथायोग्य अवग्रह देइने **से०** श्रेणिक राजा **भं०** भंभसार एहवे नामे तेहप्रतै **ए०** ए भगवंत आगमन रूप प्रिय अर्थ **णि०** कहिज्यौ.

[बा.४२७] **त०** तिवारे ते **णं०** अलंकारे **को०** कोटुंबिक पुरुष **से०** श्रेणिक राजा **भं०** भंभसार **ए०** इम पूर्वोक्त प्रकारे **वु०** बोल्ये थको **ह०** विस्मय पाम्यौ जे 'अहो ! भगवंतना आगमनि वार्ता अमने कहै छै' **तु०** संतोष पाम्या **जा०** जावत् शब्द थकी *चित्तमानंदिए* इत्यादिक **हि०** हिये हर्ष पाम्यौ **जा०** जावत् '**सा०** अहो स्वामी ! एम जिम तुम कहौ छौ तिम ज पण अन्यथा नही' एम प्रमाण कही **आ०** एम श्रेणिकनी आग्या **वि०** विनय युक्त करी **प०** सांभलै. सांभलीने **ते०** ते सेवक पुरुष **से०** श्रेणिक राजाना **अं०** समीप थकी **प०** नीकल्या. नीकलीने **रा०** राजगृह नगरना **म०** मध्यो मध्य भागे थई सुखे **णि०** नीकलै. नीकलीने **जा० इ०** एहवा स्थानक हुइ, केहवा हुइ ? ते कहै छै **रा०** राजगृह नगरने **ब०** बाहिर **आ०** आरामने विषै **च०** शब्द समुच्चये तथा उत्तरपख भणि ए सघलाइ पदनो अर्थ पूर्वे कह्यौ **जा०** जावत् दब्भकम्मत्ताए ए सूधी पूर्वे कह्यौ छै ते सघलाइ स्थानक जाणवा **जे०** जे ते स्थानकने विषै **म०** महत्तर छै **अ०** श्रेणिक राजानि आग्याइं रहै छै. **ते०** ते प्रतै **ए०** एम **व०** बोल्या **जा०** जावत् जिवारै श्री भगवंत महावीर देव समोसरै तिवारे तुमे **से०** श्रेणिक राजाने **ए०** ए पूर्वोक्त भगवंत आगम रूप अर्थ **प्पि०** ए प्रिय वार्ता **नि०** आवीने कहजौ **प्पि०** प्रिय हे स्वामी ! **भ०** तुमनै हुवै **दो०** बीजी वार पिण **ए०** एम **व०** बोल्या. **ए०** इम बोलीने **जे०** जे पूर्वे कही ते दिश थकी राजगृह नगरथी **पा०** प्रगट हुओ एतले आव्या हता **ता०** तेह ज दिशे नगर भणि **प०** राजा पासे आव्या.

[बा.४२८-४३०] अथ हिवै अनंतर स्यूं हूवौ ? ते कहै छै. **ते०** तेणे काले **ते०** तेणे समे, शेषार्थ प्रागुक्त तदवसेयं **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **आ०** ते केहवा छै ? श्रुत चारित्र रूप धर्मनि आदिना करणहार **ति०** साधू साधवी श्रावक श्राविका ए च्यार तीर्थना करणहार **जा०** जावत् नमोत्थु णं नो सर्व अर्थ वर्णव जाणवौ. **गा०** एक ग्रामथी बीजे ग्रामे **दू०** विचरता थका **जा०** जावत् सुखे संजमे तपे करी **अ०** आत्माने **णं०** अलंकारे **भा०** भावता थका **वि०** राजगृह नगरने विषै विचरै. **त०** तिवारे ते अवसरे **णं०** अलंकारे **रा०** राजगृह नामा नगरने विषै **सिं०** सिंघोडा फलने आकारे **ति०** त्रिवट जिहां त्रिण वाट मिलै **च०** चोवटौ **च०** चचर **जा०** जावत् इत्यादिकने विषै वारंवार कहै श्रमण भगवंत श्रीमहावीर देव पधार्या **प०** परिषदा वांदवा नीकली पंचाभिगम साचवीने मन वचन कायाइं करी **प०** सेवा कर्ता हुवा ? ते अवसरे स्यूं थयो ? ते कहै छै. **त०** तिवारे **णं०** वाक्यालंकारे ते आरामादिकना **म०** महत्तरग ते पूर्वे श्रेणिक राजाइं कहि मूक्या छै ते भणि **ज०** जिहां **स०** श्रमण

भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव छै **ते०** तिहां **उ०** आव्या. आवीने **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देवने **ति०** त्रिण वार **वं०** वांद्या गुण ग्राम कर्या **ण०** नमस्कार कर्यौ. **वं०** वांदीने **ण०** मस्तक नमाडीने **णा०** नाम ते वर्धमान स्वामी गोत्र ते काश्यप **पु०** पूछ्यौ. जे श्रेणिक राजाइं कह्या हता ते पुरुष ते निरधार करवा भणि नामगोत्र पूछीने **ना०** नामगोत्रनै **प०** प्रकर्षे धार्या. जे भणि श्रेणिक राजाने कहवौ छै ते भणि प्रकर्षे हीयाने विषै धारीने निरधार करीने स्यूं कर्ता हुवौ ? ते कहै छै. **ए०** एकठा सर्व महत्तर मिल्या. **ए०** एकठा मिलीने **ए०** एकांते कोइक जायगाने विषै **म०** अतिक्रम्या गया. **ए०** एकांते अतिक्रमीने जइने स्यूं कर्ता हुवा ? ते कहै छै. **ए०** इम अन्योन्य मांहोमांहि बोलता हुवा. स्यूं बोल्या ? ते कहै छै. **ज०** जेहनो **दे०** हे देवानुप्रिया ! **से०** श्रेणिक राजा **भिं०** भिंभसार एहवे नामे **दं०** दर्शन पामीनै **कं०** विलोकवो वांछै **ज०** जेहनो **दे०** हे देवानुप्रिय ! **से०** श्रेणिक राजा **दं०** दर्शन **पी०** अणपाम्यौ पामवौ वांछै **ज०** जेहनो **दे०** हे देवानुप्रिया ! **से०** श्रेणिक राजा **दं०** दर्शन **प०** प्रार्थै छै सखाइ जन समीपे याचै छै **ज०** जेहनो **दे०** अहो देवानुप्रिया ! **से०** श्रेणिक राजा **दं०** दर्सन **जा०** जावत् **अ०** सन्मुखे अतिकमनीय रूप एहवो मानै छै जे अभिलसै **ज०** जेहनो **दे०** अहो देवानुप्रिया ! **से०** श्रेणिक राजा **णा०** नामगोत्र सांभल्या थकी **ह०** हर्षित हर्ष पामस्यै **तु०** संतोषवंत **जा०** जावत् चित्तमाणंदिए इत्यादिक कहो पछै **से०** ते ही ज **णं०** वाक्यालंकारे **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **आ०** धर्मनि आदिना करणहार **ति०** चतुर्विध संघ रूप तीर्थना करणहार प्रवर्तावणहार जाव सयंसंबुद्धाण इत्यादिक **स०** सर्वज्ञ सर्व जाणै ते सर्व वस्तुना देखाडणहार **पु०** पूर्वानुपूर्वे एतले अनुक्रमे विचरता थका **गा०** ग्रामानुग्रामे एतले एक ग्रामथी बीजे ग्रामे **दू०** विचरता थका विहार करता थका **सु०** सुखे समाधे सुखे ते संयमने विषै अथवा शरीरे अबाधा रहित **वि०** विचरता थका **इ०** इहां आव्या छै **इ०** इहां समोसर्या छै **इ०** इहां राजगृही नगरीइं गुणशिल नामा चैत्यने विषे **सं०** प्राप्त थया **जा०** जावत् शब्दे पूर्व वर्णन लेवौ **अ०** संजमे तपे करी आत्मानै **भा०** भावता थका **स०** भलीपरे **वि०** विचरै छै. **तं०** ते माटे आपणे जास्या **णं०** अलंकारे **दे०** हे देवानुप्रिय ! **से०** श्रेणिक **रा०** राजाने **ए०** ए पूर्वोक्त महावीरनो आगमन रूप अर्थ आपणे **नि०** कहिस्यै '**पि०** भगवंतनो आगमन रूप प्रिय ए वार्ता **भे०** तमने **भ०** होज्यौ' **त्ति०** इम कही **ए०** ए अर्थ ए वार्ता **अ०** अन्योन्य परस्पर मांहोमांहि **व०** वचननै **प०** सांभलता हुवां. सांभलीने **जे०** जिहां **रा०** राजगृह नामा नगर छै **ते०** तिहां **उ०** आव्या. तिहां आवीने, किम आव्या ? ते कहै छै. **रा०** राजगृह **ण०** नगरनै **म०** मध्योमध्य थइने **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक राजानो **गि०** घर छै **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक राजा छै **ते०** तिहां **उ०** आव्या. आवीने स्यूं करता हुआ ? ते कहै छै. **से०** श्रेणिक राजानै **क०** हाथना तला **प०** एकठा करीनै **जा०** जावत् तिहां **ज०** सामान्य विघ्ननो नास **वि०** विशेष सिष्ट रूप ते करी एहवे वचने करी **व०** वधाव्या. वधावीने **ए०** इम बोलता हुवा, स्यूं बोलता हुवा ? ते कहै छै. **ज०** जेहनो **सा०** हे स्वामी ! **दं०** दर्शन **कं०** वांछो छौ **जा०** जावत् शब्दे दर्शन प्रार्थो इत्यादिक **से०** ते ही ज **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर **गु०** गुणशिल चैत्य यक्षनो आयतन तिहां **जा०** जावत् संजमे तपे करी आत्मानै भावता विचरै छै ते आव्या छै. **ते०** ते भगवंतनो आगमन रूप **दे०** अहो देवानुप्रिय ! तुमनै **पि०** प्रिय प्रेमकारी वार्ता **नि०** निवेदां कहां छां अमे **पि०** प्रेम रक्त तुमने **भ०** हुओ.

[बा.४३१] **त०** तिवारे ते **से०** श्रेणिक राजा **ते०** ते सेवक **पु०** पुरुषनै **अं०** समीपे **ए०** ए अर्थ श्रीमहावीर आगमन रूप **सो०** सांभलीने **नि०** हीये धारीने **ह०** हर्षवंत थया **जा०** जावत् शब्द थकि चित्तमाणंदिए इत्यादिक **हि०** हीये हर्ष थयौ. हर्षवंत थइने स्यूं कर्ता हुवा ? ते कहै छै. **सी०** सिंहासन थकी **अ०** ऊठै. ऊठीने **जा०** जावत् शब्दे इहां ग्रंथना गौरवपणा माटे प्रथम उववाइ सूत्र थकी भलावै छै. **ज०** जिम कोणिक कह्यौ तिम एक

साडि उत्तरासंग करीने सात पगला सन्मुख जइने इत्यादिक कोणिक तिम **जा०** जावत् **वं०** वांद्या स्तवनाए करी गुणग्राम कर्या. एम श्रीमहावीर देवने वांदीनै **ण०** णमस्कार करीने **तं०** ते पुरुषने **स०** सत्कार कीधो वस्त्रादिके करी **स०** सन्मान ते वचने करी आदर दीधो. सन्मानीने **वि०** विस्तीर्ण घणो धन आपीनै **जी०** जीवै तिहां लगे ते जीवता हर्ष कहिइं **पी०** प्रीतिदान एतले प्रकारे **द०** आप्यूं दीधूं. देइने **प०** विदा कीधो एतले ते पुरुषने पोताने स्थानके जावानि आग्या दीधी. तदनंतर श्रेणिक राजा स्यूं कीधो ? ते कहै छै. **ण०** नगरनो गुप्ति जे कोटवाल तेहनै **स०** तेडाव्यौ. तेडावीने **ए०** इम **व०** बोल्या **खि०** क्षिप्र शीघ्र विलंब रहित **भो०** अहो देवानुप्रिय ! **रा०** राजगृह नगरने विषै **स०** मांहे अने **बा०** बाहिर **आ०** पांणि छांटौ जे भणि रज न उडै **स०** कचराने सोधवे एतले वासी दो काढौ. **उ०** छांणे करी लीपौ. लीपीने **जा०** जावत् शब्द थकी नगरनो शृंगारादिक सर्व कार्य करीने **प०** ए आग्या पाछी सूंपौ.

[बा.४३२-४३३] **त०** तिवारै पछी **णं०** अलंकारे **से०** ते श्रेणिक राजा **ब०** चतुरंगणि सेनानो दरोगो तेहनो **जा०** जान ते गाडला प्रमुख सिबिकादिक तेहने साला ते जाणसाला अने तेहनो अधिकारी ते जाणसाली पुरुषने **स०** तेडावै. तेडावीने **ए०** इम कहै **खि०** शिघ्रपणै **ए०** ए आगल कहिस्यै तिम आमंत्रण **भो०** अहो देवानुप्रिय ! **ह०** घोडा १ **ग०** हाथी २ **र०** रथ ३ **जो०** जोध ४ **क०** सहित **चा०** चतुरंगणी **से०** सेना **स०** तयार करो **जा०** जावत् शब्द थकी श्रेणिक राजाइं कह्यौ तिम **से०** ते जाणसालीइ सर्व कार्य करीने **प०** आग्या पाछी सूंपी. **त०** तिवारे पछी **से०** ते श्रेणिक राजा **जा०** वाहनना अधिकारीने **स०** तेडावै. **जा०** ते जाणसालियाने **स०** तेडावीने **ए०** इम **व०** कही. **खि०** उतालवो थाऔ **भो०** अहो देवानुप्रिय ! **ध०** धार्मिक उतावलो चालवानो स्वभाव छै जेहनो ते **जा०** रथ **प्प०** प्रधान ते प्रतै **जु०** जोतरीने माहरे समीपे **उ०** थापौ. थापीनै **म०** माहरी **ए०** एह कही ते आग्या **प०** पाछी सूंपौ. **त०** इम कहौ तिवारे ते **जा०** जानसालिक **से०** श्रेणिक राजाइं **ए०** इम कह्ये थके **ह०** हर्षवंत जावत् शब्द थकी **तु०** संतोषवंत हियाने विषै **जे०** जिहां **जा०** रथनि शाला छै **ते०** तिहां **उ०** आव्यौ. आवीने **जा०** जानसालाने विषै **अ०** पेसै. पेसीने **जा०** रथने **प०** प्रत्येक जोवै. जोइनै **जा०** रथनै **प०** ऊंचा कर्या हता ते नीचा उतारै. उतारीने **जा०** रथनै **सं०** विरला करी प्रमार्जे. प्रमार्जीने **जा०** जानसाला थकी रथनै **णी०** बीडीने एकठा पासै करै. करीनै **जा०** रथनै **दू०** वस्त्रे करी **पि०** ढांक्या. ढांकीनै **से०** ते रथनै **स०** शृंगार्या. रथने शृंगारीनै **जा०** रथनै **व०** प्रधान आभर्णे करी **मं०** मंडित विभूसित **क०** कर्या. विभूषित करीने **जे०** जिहां **वा०** वाहन ते बलद तेहनि साला छै **ते०** तिहां **उ०** आवै. आवीनै **वा०** बलदनी साला प्रतै **आ०** प्रवेश करै. करीने **वा०** वाहननै **प०** प्रत्येक प्रत्येक थानक थकि छोड्या. छोडीने **वा०** बलदनै **स०** प्रमार्जे झाटकै. झाटकीनै **वा०** बलदनै **अ०** घसीनै ऊजला कर्या. करीने **वा०** बलदनै **णी०** साला थकि बाहिर काढ्या. काढीने **दू०** वस्त्रे करी **प्प०** ढांक्या. ढांकीने **वा०** बलदनै **सा०** अलंकार सहित कर्या. करीने **वा०** बलदने **व०** प्रधान **भं०** आभर्णे करी **मं०** मंडित भूषित **क०** कर्या. करीने **जा०** रथ संघाते जोतर्या एतले रथ संघाते संबंध कर्यौ. जोतरीने **व०** मार्गने ग्रहीने एतले रथ जोतरी मार्गे थाप्या. एम मार्गने विषै थापीने **प०** प्रयोग लष्टी ते पिराणी रूप लकुटी **प०** ते पिराणी रूप लष्टी **ध०** हाथने विषै धरी लीधी. **स०** एक काज रथना खेडणहार **आ०** बेठा. बेसीने **अं०** मध्ये **स०** श्रमपदे घरनी पंक्तीने विचे मार्ग ते मार्गने विषै थइनै **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक राजा छै **ते०** तिहां **उ०** आव्यौ. आवीने **त०** ते आव्यानंतर **क०** बेहुं हाथ जोडीने **जा०** जावत् शब्द थकी जएणं विजएणं इत्यादिक पाठ जाणवौ **ए०** एम **व०** बोल्या. **जु०** जोतर्यौ **ते०** तुमारौ **सा०** अहो स्वामि ! **ध०** धार्मिक उतावलो चालवानो स्वभाव छै **प्प०** बीजा रथमांहे प्रधान **आ०** सर्वथा **इ०** इष्ट छै जे रथनो वर्ण एतावता तुमने कह्यौ ते रथ पण स्वामी ते

रथनै विषै बेसतां **भ०** भद्र कल्याण होवो तुमने **व०** ए वचन **ग०** ग्राह्या.

[बा.४३४] **त०** तिवारे पछी **से०** ते **से०** श्रेणिक राजा **भिं०** भिंभसार एहवे नामे **जा०** जाणसालि पुरुषना **अं०** समीप ते पासा थकी **ए०** ए अर्थ **सो०** सांभलीने **नि०** अवधारीने **ह०** हर्षवंत थया **तु०** संतोष पाम्या **जा०** जावत् शब्दे *उट्ठाए उट्ठेइ* इत्यादिक पाठ **म०** मरदन करवाना घरमां **अ०** पेठा. पेसीने **जा०** जावत् शब्द थकी मर्दन करीने स्नान पड्ये स्नान कर्यौ इत्यादिक **जा०** जावत् वस्त्र आभर्णादिक पहिर्या *अप्पमहग्घा* इत्यादिक जे उपमाइ करी कहै छै. **क०** कल्पवृक्षनि परे शोभायमान **अ०** अलंकार शृंगार कर्या **वि०** विभूषित सुंदर **ण०** नर मनुष्यनो इंद्र ते राजा **जा०** जावत् शब्दे दासी दासना परिवार सहित **म०** मज्जन घर थकि **प०** नीकल्या. नीकलीने **जे०** जिहां **चे०** चेलणा **दे०** पटराणी छै **ते०** तिहां **उ०** आव्या. आवीने **चे०** चेलणा **दे०** राणीप्रतै **ए०** इम **व०** बोल्या.

[बा.४३५] **ए०** इम **ख०** निश्चै **दे०** अहो देवानुप्रिय ! **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **आ०** श्रुत चारित्र रूप धर्मनि आदिना करणहार **भि०** साधू १ साधवी २ श्रावक ३ श्राविका ४ रूप तीर्थना करणहार **जा०** जावत् शब्द थकी नमोत्थु णं नो वर्णन जाणवौ. **पु०** पूर्वानुपूर्वीइं अनुक्रमे **च०** विचरता थका **जा०** जावत् शब्द थकी *गामानुगामं दूइज्जमाणे जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छइ* इत्यादिक पाठ ते गुणसिल नामा चैत्यने विषै **सं०** १७ भेदे संजमे **त०** १२ भेदे तप रूप तेणे करी **अ०** पोताना आत्मानै **भा०** भावता थका **वि०** विचरै छै एतले आव्या छै. **तं०** ते **म०** मोटो फल **दे०** हे देवानुप्रिये ! **त०** तथारूप एतले भाव निक्षेपा सहित **अ०** तेह अरहंत वांदवाना **जा०** जावत् शब्द थकी *भगवंताणं नामगोयस्स सवणयाए* इत्यादिक पाठ. **तं०** ते माटे **ग०** जावा वांदवा आपणे **दे०** हे देवानुप्रिया ! **स०** श्रमण **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देवप्रतै **वं०** आपणे वांदियै गुणग्राम करियै **ण०** नमस्कार करियै प्रणमियै **स०** सत्कार करियै **स०** सन्मान करियै. अथ फल कहै छै. **क०** कल्याण ते मोक्षना हेतु **मं०** विघ्न उपसमे ते मंगलीक **दे०** देवदर्शन थकी, पण देव केहवा छै ? **चे०** ग्यानवंत छै तथा मन प्रसन्नना करणहार **मो०** आपणा **ए०** एहवा महावीरनी सेवा करियै. **ए०** ए भगवंत ग्यानवंत वंदनादिके आपणनै **इ०** आ भवने विषै **प०** परभवने विषै **हि०** हित सुखनो कारण सुखनै अर्थे हुस्यै **ख०** क्षमानै अर्थे हुस्यै **नि०** मोक्षनै अर्थे हुस्यै **जा०** जावत् **अ०** अनुगामीक ते भवनि परंपराइ सुख सोभानो कारण **भ०** हुस्यै.

[बा.४३६-४३७] **त०** तिवारे पछी **सा०** ते **चे०** चेलणा रांणी **से०** श्रेणिक नामा **रा०** राजाना **अं०** समीप थकी **ए०** ए पूर्वोक्त अर्थ ते **सो०** सांभलीने **णि०** अवधारीने **ह०** हर्षवंत थइने **तु०** संतोष पाम्या **जा०** जावत् शब्द थकी चित्त आणंद पामी पछै श्रेणिक राजानो वचन सांभल्यौ. सांभलीने स्यूं कर्ता हुवा ? ते कहै छै. **जे०** जिहां **म०** मर्दन कर्वानो न्हावानो घर छै **ते०** तिहां आवी चेलणा रांणी. ते आवीने **ण्हा०** स्नान कर्या **क०** कीधा **ब०** बल वधै एहवा **क०** कर्तव्य **क०** कोतक कीधा टीका टबका परनै विस्मय ऊपजै ते कोतक कीधा **मं०** मंगलीक भणि विघन उपसमावै **पा०** पायछित पाछली अवस्था छेदीने **किं०** घणौ कहीयै **व०** प्रधान **पा०** पगे पहिर्या छै **ने०** नेउर **म०** मणि मेखला जे कडिनो आभर्ण **हा०** हार आभर्ण करी **र०** रचित छै **उ०** उपचित कर्या छै **क०** कडा अंगुलीना आभर्ण **ए०** एकालि **कं०** कंठने विषै आभर्ण सहित **ति०** त्रि सरौ **व०** प्रधान **व०** वलय आभर्ण विशेष **हे०** सुवर्ण कडि कंदोरो **कुं०** कुंडल काननो आभर्ण तेणे करी **उ०** उद्योत थयौ छै **वि०** आनन ते मुख चेलणानुं **भू०** रत्नना भूषण आभर्णे करी भूषित छै रचित छै अंग जेहनो **ची०** चीन देशनो उत्पन्न **अं०** अंसुक वस्त्र एहवो वस्त्र **प०** पहिर्यौ चेलणाइं **दु०** पट्ट कूल वृक्षना फूल विशेषथी ऊपनौ वस्त्र ते दुकूल कहिइं **सु०** सुकुमाल छै **कं०** ते कांतकारी छै **र०** मनोहर छै **उ०** मस्तके उजली पछेवडी **स०** सर्व ऋतु तेहना

**सु०** सुगंध **कु०** फूल **सु०** सुंदर **र०** रचि छै **प०** अति ही दीर्घ लांबी प्रलंबमान सोभती अगर **वि०** विकसित ते विलास करती **चि०** आश्चर्यकारी **मा०** प्रधान माला छै जेहनि **व०** प्रधान **चं०** चंदने करी **च०** चरचित छै शरीर **व०** प्रधान आभर्ण तेणे **भू०** विभूषितवंत छै **अं०** अंग जेहनो **का०** कृष्णागर अगर **धू०** तेणे धूमे **धू०** धूपे छै वालादिक शरीर **सि०** लक्ष्मी समान रूप वेस छै जेहनो **ब०** घणी **खु०** कुब्जा वांकी जंघानी दासी जे साथे **चि०** चिलात देशनी ऊपनी जे दासी **जा०** जावत् शब्द थकी बीजा १६ देशनी जाणवी. सर्व मिली १८ देसनी दासी **म०** पोता थकी महातकनै **वि०** वृंद ते समूहे **प०** परिक्षिप्त तेणे परीवरी थकी **जे०** जिहां **बा०** बाहिरली **उ०** श्रेणिक राजानि उपस्थान शाला एतले सभामंडप छै **जे०** जिहां **से०** श्रेणिक राजा छै **ते०** तेह समीपे **उ०** चेलणा आवी. चेलणा आवीने **त०** तिवारे पछै **से०** ते **से०** श्रेणिक नामे राजा **चि०** चेलणा नामा **दे०** पटराणीने **स०** साथे **ध०** धर्मिक ते रथ प्रधान छै तेणै **दु०** आरूढ थयौ बेठा **स०** कोरंट नामा वृक्षना फूलनि माला **दा०** गूंथी **छ०** छत्रने विषै लगाडीने **ध०** एहवो छत्र मस्तके धरावतो थको **ज०** ए सर्व अधिकार निरगमनो उववाइथी **णे०** जाणवौ. **जा०** जावत् शब्द थकी श्रीभगवंत देवनै वांद्या. वांदीनै **प०** पर्युपासना सेवा करै ३ जोग करी. **ए०** एणे प्रकारे **चे०** चेलणा **दे०** रांणि **जा०** १८ देशनि दासी अने महतरग तेणे **प०** परिवरी थकी **जे०** जिहां **स०** श्रमण भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव छै **ते०** तिहां समीपे आवै. आवीने **स०** श्रमण भगवंत **म०** श्रीमहावीरने **वं०** वांदै **ण०** नमस्कार करै. करीनै **से०** श्रेणिक राजाने **पु०** आगले **का०** करीने **ठि०** ऊभी थकी **जा०** जावत् **प०** सेवा करै.

[बा.४३८] **त०** तिवारे पछै ते **स०** श्रमण तपस्वी भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **से०** श्रेणिक राजा **भं०** भंभसार एहवे नामे ते प्रतै **चे०** चेलणा नामे **दे०** पटरांणी प्रतै **ता०** ते **म०** मोटी मोटे विस्तारे छै एहवी जे **प०** परिषदा मध्ये **इ०** यती साधू तेहनि परिषदा **म०** मनुष्यनि परिषदा **दे०** देव भवनपत्यादिक तेहनि परिषदा **अ०** अनेक सय संख्याइं प्रमाण छै जेहनो **जा०** जावत् **ध०** धर्म ते श्रुतधर्म उपदेशनो देवो अने चारित्र धर्म ते पण उपदेस्यौ. श्रुत चारित्र रूप धर्म सांभलीने **प०** परिषदा **प०** पाछी वली. **से०** श्रेणिक राजा पण पोताने नगरे **प०** गयो.

[बा.४३९] **त०** तिहां समोसरण मध्ये एकेक **नि०** निर्ग्रंथ साधु **नि०** साधवीने **से०** श्रेणिक राजानै अने **चि०** चेलणा नामा रांणीनै **पा०** देखी **इ०** आगले कहिस्यै तेहवो **अ०** आत्माने विषै **जा०** जावत् संकल्प विचारणा **स०** ऊपनी. किसी ऊपनी ? ते कहै छै. **अ०** आश्चर्य **से०** श्रेणिक नामा राजा **म०** मोटी ऋद्धिनो धणि **जा०** जावत् **म०** सुख छै जेहनै **जे०** जे ते एतले जे भणि **ण्हा०** स्नान करीने **क०** कीधा छै **ब०** बल वधै जेहवा कर्म कर्तव्य जेणे कीधा छै अने **क०** कोतक जेणे **मं०** मंगलीक **पा०** पाछली अवस्था जेणे **स०** सर्व अलंकार ग्रहणे करी शरीर भूषण तेणे करी **वि०** विभूषित छै सोभित छै एहवो श्रेणिक राजा **चि०** चेलणा नामा **दे०** पटरांणि **स०** साथे **उ०** उदार प्रधान **मा०** मनुष्य तेहने योग्य ते मानुष्यी कहिइं एतले मनुष्य संबंधी **भो०** भोगववा योग्य शब्दादिक ते भोग कहिइं **भुं०** एहवा कामभोग भोगवतो श्रेणिक राजा **वि०** विचरै छै. **न०** मे नथी दीठा **दे०** देवता **दे०** देवलोकने विषै. **स०** साक्षात् प्रत्यक्ष निश्चै **अ०** एह ज श्रेणिक राजा **दे०** देव जे भणि एहवी संपदा सहित. **ज०** जे **इ०** ए प्रत्यक्ष अंगीकार कर्या छै **त०** जे तप **नि०** जे पचखाण **बं०** ब्रह्मचर्य **गु०** गुप्त सील एतलानो **फ०** फल वृत्ति विशेष छै एतले कष्ट अनुष्ठान करवा ते **अ०** अस्ति सफल छै तो **व०** आपणने पण **आ०** आगले भवे हुस्यै **इ०** एह तेहवे रूपे **उ०** उदार प्रधान **ए०** एहवा जेहवा राजाने छै तेहवा **मा०** मनुष्य संबंधी **भो०** भोग भोगववा योग्य ते **भुं०** भोग भोगवता थका **वि०** आपणे विचरिइं **से०** ते **सा०** सांभल्यूं ते ए साधू आश्री कह्यौ.

[बा.४४०] अथ हिवै साधवी आश्री कहै छै. **अ०** अहो इत्याश्चर्ये **णं०** अलंकारे **चि०** चेलणा नामे रांणी **म०**

मोटी ऋद्धिनि धरणहारी **जा०** जावत् शब्दे बीजा पद लेवा. **म०** मोटा सुख **जे०** जेह **ण्हा०** स्नान कीधो **क०** कीधा **ब०** बलिकर्म **जा०** जावत् **क०** कीधा कोतुक मषी तिलकादिक **मं०** मंगलीक **पा०** पाछली अवस्था छेदी जेणे **पा०** प्रायछित्त सुखना विनाश हेतु **जा०** जावत् **स०** सर्वथा यथास्थानक योग्य **अ०** अलंकार तेणे **वि०** विभूषित तथा **से०** श्रेणिक राजा **स०** साथे **उ०** उदार ते प्रधान पुन्यवंतनै योग्य **जा०** जावत् **मा०** मनुष्य संबंधी **भो०** भोग शब्द १ रूप २ रस ३ गंध ४ फर्स ५ ए ५ प्रकारना विषय सुख **भो०** भोगवती थकि **वि०** विचरै छै. **ण०** निषेध **मे०** मे **दि०** दीठी **दे०** देवांगना **दे०** देवलोकने विषै **स०** पण साक्षात् **ख०** निश्चै **अ०** ए चेलणा नाम पटरांणी देवांगना एतादृश ऋद्धि करी युक्त माटे **जे०** जे ए अमे अंगीकार कर्यौ छै **सु०** भला आचरण रूप ए प्रत्यक्ष **त०** १२ भेदे तपना **नि०** नियम **बं०** ब्रह्मचर्य १८ सहस सीलंग रूप तेहनो **क०** कल्याणकारी **फ०** फल विशेष एतले घणे कष्टे कष्ट करी ए छै, जो ए सफल छै तो **अ०** अस्ति **व०** अमे पिण **आ०** आगले भव **इ०** एह मनुष्यणी **ए०** एहवी जेहवी चेलणा रांणी **उ०** उदार प्रधान एहवा भोग भोगवे छै **जा०** जावत् शब्दे एहवा भोग भोगवियै तो वारु एतले एहवा भोग भोगवता अमे विचरियै. **से०** ते ए **सा०** सोभनीक भलुं साचू. ए साधवी आश्री कह्यौ.

[बा.४४१] हिवै तीर्थंकर कहै छै. **अ०** अहो आर्य ! इत्यामंत्रण देइ **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देव **ते०** ते **ब०** चित चलित घणा **नि०** निर्ग्रंथ साधूने **नि०** निर्ग्रंथी साधवीने **आ०** आमंत्रण देइने तेडीने **ए०** इम **व०** बोल्या. **से०** श्रेणिक राजा अने **चि०** चेलणा **दे०** रांणीने **पा०** देखीने **इ०** आगल कहिस्यै एतादृश रूप एहवो **अ०** आत्माने विषै संकल्प विचार **जा०** जावत् शब्दे सर्वलोक **स०** एहवो तुमनै ऊपनौ. **अ०** अहो इत्याश्चर्ये **णं०** अलंकारे **से०** श्रेणिक राजा **म०** मोटी ऋद्धिनो धणि **जा०** जावत् शब्दे सर्व पाठ लेवो. **व०** एहवो अमे पिण **भुं०** भोगवियै **से०** ते **सा०** भलुं. **अ०** आश्चर्ये **चि०** चेलणा नामा रांणी **म०** महर्द्धिक मोटी ऋद्धीनी धरणहार **सु०** सुंदर भलुं रूप छै **जा०** जावत् **अ०** अम्हे पण एहवा सुख भोगविइं **से०** ते **सा०** वारु. इम साधू साधवीइं चिंतव्यौ. तिवारे पछै स्यूं थयौ ? ते भगवंत अनंत ग्यानी अंतरंग भावना जाण ए विधि जिवारे जाण्यौ तिवारे साधू साध्वीने जे कह्या ते कहै छै. **से०** ते केहवो ? ते कहै छै. निश्चै **अ०** हे आर्यो ! **अ०** ए अर्थ समर्थ तुमे चिंतव्यौ ? ते हिवै साधू साधवी बोल्या **हं०** हां स्वामि ! अस्ति ते साचो.

[बा.४४२-४४३] श्रीभगवंत पर उपगारी तेह निदान टालवाने इम कहिवा लाग्या. ते कहै छै. हिवै तीर्थंकर बोल्या **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** हे आउखावंत साधो ! साधवीओ ! समुचये आगल कहिस्यै ते **म०** में अने अनेरे तीर्थंकरे **ध०** धर्म **प०** परूप्यो, ते केहवो ? ते कहै छै. **इ०** एह ज प्रत्यक्ष पांमिइं ते **नि०** निर्ग्रंथ साधू तेहनो **पा०** प्रवचन द्वादशांगी रूप गणिपिटक कहै छै **स०** सत्य भलौ **अ०** अनुत्तर एहथी बीजो उत्तम नथी **प०** मोक्ष पामवाना गुणे करी पूर्ण **के०** केवल एहवो बीजो नथी तथा केवलग्यान माटै **सं०** सम्यग् प्रकारे सुध **णे०** न्याये करी सहित **स०** सिद्धि ते हितार्थनो पांमवो तेहनो मार्ग ते सिद्धिमार्ग **मु०** कर्मथी मूंकाववौ ते मुक्त तेहनो मार्ग पांमवौ **नि०** संसारनो छेहडो जे मोक्ष तेहनो मार्ग ते नियानमार्ग अनुमोदवौ पांमवौ **नि०** तेहनै निर्वाण तेहनो मार्ग **अ०** अवितथ एतले सत्य **म०** असंदिग्ध ते अव्यवछिन्न एतले क्षय नथी **स०** सर्व **दु०** दुख थकी **प्प०** प्रक्षीण ते मोक्षनो मार्ग एतले सर्व दुखनो क्षयकारी मार्ग **इ०** इहां निर्ग्रंथ प्रवचनने विषै **ठि०** रह्या थका **जी०** जीव **सि०** सिद्धि पामै **बु०** बूझीने एतले केवली थइने **मु०** सकल कर्मथी मूंकाइं **प०** समस्त प्रकारे **स०** सर्व शारीरी मानसीक दुख तेहनो अंत विनाश **क०** करै. **ज०** जे **णं०** अलंकारे **ध०** धर्मने अर्थे **नि०** निर्ग्रंथ ते साधू जन **सि०** ज्ञान शिक्षा १ अने चारित्र शिक्षा २ एतले ग्रहण आचरण रूप ए बेहुं प्रकारनि शिष्यने विषै **उ०** ऊठ्यौ उद्यमवंत थयौ **वि०**

विचर्तो थको **पु०** आगल करवाथी पूर्व दिगंछा शब्दे भूख कहिइं ते संजमना मंगतीक थको आहाराभिलाष थकि निवर्त्यौ **पु०** इम ज ते **पि०** तृषा पिपासा खमै **पु०** पूर्वो **वा०** वायरो **आ०** आताप तडकौ **पु०** पूर्वे **पु०** फर्स्यो **वि०** विरूपरूप विविध प्रकारना तथा अतिरौद्र **प०** एहवा परीसह उपसर्ग ते परीसह उपसर्गे करीने **उ०** उदय प्राप्त थयौ **का०** कामनो **जा०** जावत् प्रकार उदीर्णकामजात **वि०** ते एहवा विचरिइं. **से०** ते साधू तप संजमने विषै **प०** पराक्रम कर्ता मार्गने विषै **से०** ते साधू मार्गने विषै **प०** चालता थका एतले संजमरूप मार्गने विषै चालतां देखै. केहने देखै ? ते कहै छै. **जे०** जे **इ०** ए **उ०** उग्र राजाना पुत्र **म०** मोटा साहुकार एतले पोताना पिता थकि पिण महास्वादु भोगवणहार एतले मोटा भोग रूप स्वाद तेहना आस्वादनहार छै जे तेहनै देखै. महामाउया एहवो पिण पाठ छै. शोभादिक गुणे युक्त मोटी माता छै जेहनी ते महामातृका कहिइं शीलादिक गुण युक्त **भो०** भोग पुत्र एतले भोग कुल जे आदिनाथे गुरु वंशपणे थाप्या तेहवा भोगपुत्र **म०** महामायावि उखा कहिये महास्वादुकार तथा महामातृका **ते०** ते उग्रपुत्र अथवा भोगपुत्रादिक मध्ये **अ०** अन्यतर ते मध्ये कोइ नथी आंतराने विषै **नि०** पोताना घर देश थकी बाहिर प्रदेशे नीकली ते उग्रपुत्रादिकनै **पु०** आगले बेहुं पासे **म०** मोटा दासी दास, वेचाता लीये ते दास **किं०** जे पूछी करे ते किंकर **क०** बीजायना कामना करनारा **पु०** प्यादा ते पायक पुरुष तेहने समूहे करीने **प०** परिक्षिप्त परिवर्यौ छै **छ०** छत्र ते राज्य चिह्न **भिं०** झारी भेरी ते **ग०** ग्रहीने **नि०** घर थकी नीकलै साथे **त०** तिवारे **च०** पुनः **णं०** अलंकारे **पु०** आगले **म०** मोटा **आ०** अश्व घोडा **आ०** अस्वमे **व०** प्रधान **उ०** बे पासे ते उग्रादिक पुत्रने **ना०** नाग हस्ती **ना०** नागमांहे प्रधान हस्ती **पि०** ते उग्रादिक पुत्र पुठे **र०** जोतर्या ते रथ **र०** रथ मध्ये प्रधान रथ **सं०** रथनो समुदाय. **से०** ते उग्रपुत्रादिकनै **उ०** ऊंचा कर्या छै, स्यूं ? ते कहै छै. **से०** ऊजलौ निर्मल **छ०** छत्र जेणे **अ०** अभ्युगत ते सन्मुख करी पाम्यौ छै **भिं०** भृंगार एतले पांणीनो झारौ **प०** प्रकर्षे ग्रह्यौ छै **ता०** ताल वृक्षनो वीजणौ जे प्रतै **से०** स्वेत ऊजलो **चा०** चामर चमरी गायना वालनो एहवो स्वेत चामर रूप **वा०** वाल वींजणो तेणे करी **अ०** वारंवार **अ०** बाहिर थकि घरे प्रवेश कर्ता थकां **नि०** घर थकी बाहिर नीकलतां थकां **स०** प्रभा कांति छै जेहनि **स०** पूर्वे करवा योग्य स्नानादिक **अ०** पछै करवा योग्य भोजनादिक ते अपर कहिए, ते संघाते वरते ते पूर्वापर वर्ण एतले जिवारे जे वस्तुनो अभिलाष करै तिवारे ते संपजै. **ण्हा०** स्नान कर्यौ **क०** कीधा छै बल वधै एहवा कर्तव्य कर्म **जा०** जावत् शब्द थकी *कयकोउयमंगलपायछित्ता* इत्यादिक पाठ लेवौ. **स०** सर्व अलंकारे करी **वि०** विभूषित थयौ **म०** मोटी अति विस्तीर्ण **कू०** कूट ते पर्वतनो शिखर तेहनै आकारे जे शाला ते कूटाकारशाला कहिए **म०** मोटी **म०** महालय ते एहवो विस्तीर्ण **सी०** सिंहासन तेहने विषै **जा०** जावत् **स०** सर्व रात्रिक ज्योतिषी रूप दीप तेणे **जो०** ज्योते करी **झि०** ध्यायमान जे जाज्वल्यमान करीने एतले देदीप्यमान. वलि केहवो ? ते कहै छै. **इ०** स्त्री जन तेहनो **गु०** समोह ते संघाते **प०** परिवर्यौ थको ते तथा पुत्रादिक **म०** मोटे मोटे शब्दे करी **ह०** वजाड्या **न०** नाटक **गी०** गीत **वा०** वादित्र जिहां **तं०** वीणा **त०** हस्तना तालोटा **ता०** कांसीना ताल **तु०** वांजित्र विशेष **घ०** घन मेघ सरीखी ध्वनि वाजै **म०** मादल **प०** वजाड्या छै पूर्वोक्त वांजित्र जेहनै विषै **र०** रव ते शब्दे करी **उ०** उदार प्रधान **मा०** मनुष्य संबंधिया **भो०** भोगववा योग्य शब्दादिक ते भोग कहिइं **भो०** एहवा भोग **भुं०** भोगवता थका **वि०** विचरै छै.

**त०** ते उग्रपुत्रादिक **णं०** अलंकारे **ए०** एक पुरुषनै **आ०** आदिशता थका 'जेहनो ए कार्य' एम कहे थके एम एकनै बोलाव्ये थके केतला बोलै ? ते कहै छै. **जा०** जावत् **च०** एक बे त्रण च्यार पांच **अ०** अणबोलाव्या थकां **चे०** ए ते लोकीक समुचय भाषाइं पांच कह्या वलि अधिकापणौ जाणवौ. **अ०** ऊभा थाइ, थइने स्यूं ? कहै छै. **भ०** कहै **दे०** अहो देवानुप्रिय ! हे स्वामी ! **किं०** स्यूं कार्य करां अमे ? **किं०** स्यूं तुमारे कांइ आंणिइं ?

स्यो आहार करस्यौ ? **किं०** स्यौ वचन क्रिया रूप स्यूं कहौ छौ ? **किं०** ते स्यूं तुमारे इच्छा होइ ? ते कहौ. तिम अमे रहिइं. **किं०** स्यूं तुमे हिये **इ०** वांछौ छौ ? **किं०** किं स्यूं **ते०** तुमे **आ०** मुख तेहनै स्यौ **स०** स्वाद भावै छै ? ते कहौ.

[बा.४४४] **जं०** जे पूर्वोक्त प्रकारे पुरुष **पा०** देखीने **नि०** बाह्याभ्यंतर रूप परिग्रह थकी मूंकाणा ते निर्ग्रंथ कहिइं. **नि०** तेणे निदान वांछा **क०** करै. सी रीते कर्ता हुवा ? ते कहै छै. **ज०** जो ए प्रत्यक्ष करी छै **त०** १२ भेदे तप रूप **नि०** नियम ते अभिग्रह रूप **बं०** सील व्रत रूप ब्रह्मचर्यनो **वा०** पालवौ तेहनो फल भोगवै छै एतले उग्रपुत्रादिक जिम ऋधि सहित तिम आपण पण भोग पांमीइं तो वारु **जा०** पूर्ववत् **सा०** ते भलुं. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! अहो साधो ! **नि०** निर्ग्रंथ एहवो **नि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते निदान रूप थानकनै **अ०** गुरु समीपे अतीचार अणआलोइ **अ०** अपडिकमी 'वारंवार नही करुं' एहवो पण कह्यु नही **का०** काल मरणने अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अन्यतर १२ देवलोक नव ग्रैवेयक ते मध्ये **दे०** देवतानो जे लोक ते देवलोकने विषै **दे०** देवतापणै **उ०** ऊपजै उपजणहार **भ०** हुइ. **म०** मोटी ऋद्धिना धणि देवता तेहने विषै **जा०** जावत् **चि०** घणा कालनि स्थितिना **से०** ते **त०** तिहां **दे०** देवता एहवो **भ०** हुई.

**ता०** तिवारे पछै ते देवलोक थकी **आ०** आउखाने क्षये **भ०** भवने क्षये **ट्ठि०** स्थितिने क्षय थये थके **अ०** अन्यतर देवभव संबंधि जे शरीर **च०** त्यजीने **जे०** जे **इ०** ए **उ०** उग्रपुत्र भोगपुत्रादिक **म०** महामातृका मोटी जेहनि माता ते महामातृका **भो०** भोगपुत्र **म०** वलि मोटी छै जेहनि माता **ते०** ते उग्रपुत्रादिक मध्ये **अ०** अनेरा ते नर **कु०** कुलने विषै **पु०** पुत्रपणै **प०** प्रसवै आवै जे भणि पूर्वे निदान होई. **से०** ते **णं०** अलंकारे **त०** तिहां **दा०** दारक नान्हो बालक **भ०** हुइ. पण ते केहवो हुइ ? ते कहै छै. **सु०** सुकुमाल जेहना **पा०** हाथ पग **जा०** जावत् **सु०** सुरूप होई. **त०** तिवारे ते **दा०** पूर्वोक्त बालक **उ०** मूकाणो **बा०** बालभावपणा थकी **वि०** विग्याननै **प०** परिणमित **मा०** मात्र कलादिकने विषै **जो०** जोबन ग्रह **अ०** अनुप्राप्त पांमै **स०** स्वयमेव **पे०** पितानो दीधो ते धन **प०** अंगीकार करीने **त०** तेहने पोताने घरे **अ०** पेसतां थकां बाहिर भाग थकि **वा०** समुचये **नि०** पोताना घर थकी बाहिर नीकलतां थकां **पु०** आगले **जा०** जावत् **दा०** दासी दास **जा०** जावत् शब्दे पूर्वोक्त प्रकारे कह्यौ ते लेवौ. **किं०** स्यूं **ते०** तुमारा मुखनै **स०** सदै छै रुचै छै.

[बा.४४५] **त०** तेहने **त०** तथा प्रकारे **पु०** पुरुष जातनै **त०** तथा रूप जेहवो कह्यौ तेहवो **स०** श्रमण तपस्वी **मा०** म हणो एहवौ उपदेश छै जेहनै **उ०** बेहुं काल ते प्रथम प्रहरे अने चोथे प्रहरे ए बेहुं काल **के०** केवलीनो परूप्यो धर्म **मा०** कहे ? एहवो प्रश्न शिष्य किये थके भगवंत कहे **हं०** ते हां बोलता हुवा **आ०** कहे. **से०** ते स्वामि ! धर्म **प०** भलौ सद्दहै ? गुरु कहै - **णो०** नही ए अर्थ समर्थ. **अ०** अयोग्य अभविए **से०** ते मनुष्य **त०** ते **ध०** धर्म **स०** सांभलवाने **से०** ते होय एतले साधूनो धर्म सांभलवाने अयोग्य.

केवलग्यान१ केवलदर्शन२ ए बे विना बीजा पदार्थने विषै जघन्य१ मध्यम२ उत्कृष्ट३ ए ३ भेद लाभे अने केवलग्यान केवलदर्शन मध्ये जघन्य ते द्रूपदी प्रमुख दीक्षापणौ पामी वली ए भलौ निरधार मध्यम ए २ भाव न लाभै ते माटे निदानना ए ३ भेदे अभवि. ए ३ प्रकारना नियाणा जघन्य१ मध्यम२ उत्कृष्टौ३. पांच निदान धुरना अत्र उत्कृष्टाना जो निदान उदय आव्यां पहिला ते समकित न पामै. निश्चै तेणे करी धर्म सांभलवो न पामै. मिथ्यात्वी ज रहै. अने जघन्य मध्यम रसना निदानना धणीना निदान उदय आव्या भोगव्या पछी कृष्णजी प्रमुख समकित पाम्या अनुदय आव्या पछी जघन्य मध्यम रसनै पामवो लहै. **म०** मोटी इच्छानो धणि **म०** मोटा आरंभनो धणि **म०** मोटा परिग्रहनो धणि **अ०** धर्म वर्जित धर्मनो अणकरणहार **जा०** जावत् शब्दे काल करीने

**दा०** दक्षिणगामी **णे०** नारकीपणे उपजै. **आ०** आगम्ये काले **दु०** दुर्लभबोधिपणौ पामे **दु०** दुखे करी पांमै लाभै **बो०** जे सम्यक्त्व एहवो **भ०** हुइ. **ए०** ए पूर्वोक्त **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण ! साधो ! संजम रूप आउखावंत **त०** ते **णि०** निदाननो **इ०** एहवा प्रकारनो **पा०** पाप रूप **फ०** फल **वि०** विपाक **जं०** जे माटे **नो०** नही होय **सं०** समर्थ सक्तिवंत **के०** केवलीनो परूप्यौ **ध०** धर्म **सु०** सांभलवा एतले धर्म रूप श्रुतग्यान न पांमै १.

[बा.४४६] अथ बीजौ भेद कहै छै. **ए०** इम वली **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** परूप्यो **तं०** ते कहै छै **इ०** इम ज **नि०** निर्ग्रंथ **पा०** प्रवचन ते द्वादशांगी रूप **स०** सत्य **जा०** जावत् शब्दे अनुत्तर केवल प्रतिपूर्ण इत्यादि पाठ सर्व लेवौ. **स०** सर्व दुखनो अंत करै. **ज०** जे **णं०** अलंकारे **ध०** धर्मने अर्थे **नि०** निर्ग्रंथी साध्वी **सि०** सिक्षा ते ग्रहण रूप अने आसेवन रूप ए बे शिक्षाने विषै **उ०** उद्यमवंत थकी **वि०** विचरती थकी **पु०** पूर्वे **दि०** क्षुधा मोहनीना **उ०** उदय थकी थाइं **जा०** एहवी थकी **वि०** विचरै. **सा०** ते साधवी **प०** पराक्रम करै तप संजमने विषै वांछा सहित. **सा०** ते साधवी **प०** पराक्रम करती थकी **पा०** देखै **से०** ते आगले कहस्यै ते स्त्री जन **इ०** स्त्रीनो रूप तेणे करी सहित **भ०** हुइ **ए०** एकली **ए०** भाव थकी पण एकली एतले सोक वर्जित **ए०** एक जातना आभर्ण सुवर्णादिक छै जेहने **पि०** भला वस्त्र छै जेहना **ते०** तेलपेला ते पेटी सोरठ देश प्रसिद्ध माटीनो भाजन ते भांगवाने भये करी तथा ढुलवाने भये करी संघाते राखै तिम पुत्रीने **सु०** भली परे गोपवी राखै **चे०** चेल ते वस्त्र **पे०** पेला ते पेटी जिम यतने करी राखै भले प्रकारे राखै **सु०** तिम भली परे पुत्रीने संपरिग्रहीता साहि राखै **र०** रत्नांनो करंडियौ पेटी जिम रूडीपरे राखै तेहनि परे वलभ छै **ती०** ते पुत्री **अ०** पोताने घरे बाहिर थकी प्रवेश करती थकी **नि०** पोताना घर थकि बाहिर नीकलती थकी **पु०** आगले पाछले **म०** घणा **दा०** दासी दास **जा०** जावत् शब्दे सर्व अधिकार लेवौ इम कहै **किं०** स्यौ **ते०** ताहरा **आ०** मुखनै **स०** सदै छै रुचै छै. **जं०** जे एहवी स्त्रीने **पा०** देखीने **नि०** निर्ग्रंथ **नि०** निदान नीयाणुं करै. **सं०** छतो विद्यमान **इ०** ए प्रत्यक्ष **सु०** भलुं आचरे छै करिये छै **त०** १२ भेदे तप **नि०** अभिग्रह **बं०** ब्रह्मचर्यनो फल जो छै तो अमे पण **जा०** जावत् शब्द थकी आगल भवने विषै एहवी स्त्री थइ ते **भुं०** एहवा सुख भोगवती थकी **वि०** विचरुं. **से०** ते ए **सा०** सुंदर भलौ वारु.

[बा.४४७] **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **नि०** निर्ग्रंथी **नि०** निदान करीने **त०** ते निदान रूप **ठा०** थानकनै **अ०** गुरु समीपे अणआलोइने **अ०** अप्रतिक्रांत ते अणपडिकमीने **का०** मरणने अवसरे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर ते १२ देवलोक तथा नव ग्रेवेयके पण **दे०** देवतापणै **उ०** उपजणहार **भ०** हुइ **म०** ते पण महर्द्धिकने विषै **जा०** जावत् शब्दे सर्व पूर्वोक्त लेवौ **से०** ते **त०** तिहां **दे०** देवता **भ०** व्है. **जा०** जावत् देवलोकना सुख भोगवतो थको **वि०** विचरै. **त०** ते साधवी निदानवती **ता०** ते देवलोक थकी **आ०** आउखाने क्षये **भ०** देवतानो भव क्षय थए थके **अ०** आंतरा रहित देवलोक थकी **च०** चवे ते शरीर त्यजीने **जे०** जे **इ०** एहवा **भ०** हुइ **उ०** उग्रपुत्र **म०** मोटी माता छै जेहनि **भो०** भोगपुत्र **म०** मोटी **मा०** मातृका छै जेहनि **ए०** एहने विषै **अ०** अनेरो एतले पूर्वोक्त मांहिलुं एक **दा०** बालिका बेटीपणे **प०** प्रसवे आवे अवतरे. **से०** ते **त०** तिहां **दा०** बालिका **भ०** हुइ एतले पुत्री थइ **जा०** जावत् शब्द थकि **सु०** सुकुमाल छै हाथ पग जेहना **सु०** भलौ रूपवंत. **त०** तिवारे ते **दा०** बालिकानै **अ०** माता पिता **उ०** मूंकाणौ **बा०** बालभावथकी **वि०** विज्ञान परिणमै ते जांणीनै **जो०** जोबन **म०** पांमी **प०** कन्या सरीखौ रूप **प०** सोक रहित **सु०** सुल्क विवाह मेलवा रूप दान एतले सर्वने पहिरावणि करीने **प०** प्रतिरूप जे भर्तार स्त्रीनो पोषक तेहने **भा०** स्त्रीपणै **द०** आपै एतले पांणिग्रहण करावै. **सा०** ते पुत्री **त०** तेहनि **भा०** भार्या **भ०** हुई. **ए०** एक रूप थकी **ए०** सोक रहित **इ०** इष्ट वलभ **क०**

क्रांतकारी **जा०** जावत् प्रियकारी इत्यादिक पाठ **र०** रत्न करंडिया समान एतले रत्ननै करंडिओ जिम जालवै तिम जालवै. **ती०** ते पण बालका जे स्त्री परणावी **जा०** जावत् सर्व पूर्वोक्त बोल सर्व इहां लेवा **अ०** बाहिर थकी घरमांहि पेसता **नि०** पोताना घर थकी बाहिर प्रदेश नीकलतां थकां **पु०** आगल थकी **म०** मोटा **दा०** दासी दास **जा०** जावत् शब्द थकि अनेक किंकर वगेरे पुरुष ते सर्व आवीने इम कहै. ते स्यूं कहै छै ? **किं०** स्यूं तुमारा मुखने **स०** सदै छै रुचै छै ?

[बा.४४८] **ती०** ते वलि तेहने **त०** तथा प्रकारनि **इ०** ते स्त्रीने **त०** तथा रूप जेहवा कह्या तेहवा **स०** श्रमण साधू **मा०** 'मा हणो मा हणो' एहवो उपदेश छै जेहनो ते माहण कहिए **उ०** पहिले पोहरे अने पाछले पोहरे ए बे काले **के०** केवलीनो **प०** परूप्यौ **ध०** धर्म श्रुत चारित्र रूप **आ०** कहै ? ए शिष्यनो वचन. हिवै गुरु कहै छै **हं०** हां **मा०** कहै. वलि शिष्य पूछै छै **सा०** ते **भ०** हे स्वामी ! **प०** सांभलै ? हिवै गुरु उत्तर कहै छै **णो०** नही ए अर्थ समर्थ. **अ०** अयोग्य **सा०** ते स्त्री पूर्व भवे निदाननी करणहारी **ध०** ते केवलीनो परूप्यो धर्म **स०** सांभलवाने एतले साधूनो उपदेश सांभलवा अयोग्य. **सा०** ते स्त्री होय पण केहवी होय? ते कहै छै. **म०** मोटी इछानी कारक **म०** मोटो आरंभ **म०** मोटा परिग्रहनि धारक. एहनो फल कहै छै **जा०** जावत् शब्दे काल करीने **दा०** दक्षिणगामी **णे०** नारकीपणै उपजै एतले कृष्णपक्षपणै ऊपजै **आ०** आगले काले एतले आगले भवे भवनि परंपराइं दुखे करी **दु०** दोहिलो पामै समकित **या०** सर्वथा पिण ते होय. अथ उपसंहारमाह – **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण ! साधो ! आउखावंतो ! **त०** ते **णि०** निदाननो **इ०** एहवो **पा०** पाप कर्मना फलनो विपाक ते रसरूप **जं०** जेणे करीने **णो०** सक्तिवंत न होय, स्या भणि न होय ? ते कहै छै. **के०** केवलीनो **प०** परूप्यौ **ध०** धर्म दुर्गतिप्रवृत्तान् जीवान् धारयतीति धर्म **प०** अहिं सांभलवाने २. ए बीजुं निदान.

[बा.४४९] हिवै त्रीजो निदान कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! एतले श्रीतीर्थंकरे आमंत्रण दीधो **म०** मे **ध०** धर्म **प०** परूप्यो तिम अनेरे तिर्थंकरे पण परूप्यौ ए धर्म कह्यौ. तेहनो फल कहै छै **नि०** निर्ग्रंथनो **पा०** प्रवचन जे सिद्धांत **स०** सत्य छै अनुत्तर **जा०** इत्यादिक **अं०** संसारनो अंत करै. **ज०** जे **ध०** धर्मने अर्थे **नि०** बाह्य अभ्यंतर परिग्रह थकी मूंकाणा ते निर्ग्रंथ **सि०** ग्रहण शिक्षा१ अने आसेवन शिक्षा२ ए बे शिक्षाने विषै **उ०** उद्यमवंत सावधान थका **पु०** पूर्व **दि०** क्षुधा जीपवा समर्थ एम तृषा खमता **जा०** जावत् पूर्वोक्त सर्व बोल लेवा. **से०** ते साधू **प०** संजमने विषै पराक्रम फोरवता थका पण **पा०** देखै **इ०** ए स्त्री **का०** केहवी **भ०** हुइ ? ते कहै छै. **ए०** एक स्त्रीने रूपे **ए०** सोक रहित **जा०** जावत् **किं०** तेलना भाजननी परे यतनाइं करे स्यूं ते स्त्रीने वलि दास दासी इम कहै तुमारा मुखने स्यूं रुचै छै ? **जं०** तेहवी स्त्रीने **पा०** देखीने **नि०** निर्ग्रंथ साधू **नि०** निदान **क०** करै. ते कहै छै **दु०** दोहिलो **ख०** निश्चै **पु०** पुरुषपणो **जे०** जे **इ०** ए प्रत्यक्षपणै **उ०** उग्रना पुत्र **म०** ते महामातृका पण महास्वादुकार **भो०** भोगना पुत्र **म०** महामातृका पण महास्वादुकार **ए०** एहने **अ०** अन्यतर ते एक कोइक **उ०** मोटे पुरुषे नांख्या **अ०** नीचे पुरुषे नांख्या **म०** एहवा मोटा समर संग्रामने विषै **उ०** ऊंच मोटा **अ०** नीचा नान्हा एहवा **स०** शस्त्र **उ०** वक्षस्थल ते हृदयने विषै **चे०** शेष अंगने विषै पण **प०** समस्त प्रकारे वेदै. **तं०** ते माटे **दु०** दुख छै **ख०** निश्चै **पु०** पुरुषपणै ते माटे **इ०** स्त्रीपणुं **सा०** भलुं वारु. **सं०** ते माटे जो छै **त०** तप **नि०** अभिग्रह **बं०** ब्रह्मचर्यने विषै **वा०** वसवो रहवो **फ०** फल वृत्ति विशेष एतले जो ए सफल छै तो **व०** अमे पण **आ०** आगले काले भवांतरे **जा०** जावत् शब्दे पूर्वोक्त प्रकारे **इ०** ए एहवा रूप **उ०** उदार प्रधान माटे **इ०** स्त्रीना भोग **भुं०** भोगवस्यां अमे. **से०** ते **सा०** भलो.

[बा.४५०] **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण साधो आउखावंतो ! **नि०** निर्ग्रंथ पुरुष थइ **नि०** स्त्रीनो निदान

करीने **त०** ते निदान थानकने **अ०** गुरवादिक समीपे आलोयां विनां **अ०** अणपडिकम्यां **जा०** जावत् **अ०** प्रायछित अंगीकार न करै **का०** मरणने अवसरे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर ते १२ देवलोक तथा नव ग्रीवेयक एमांहि एक स्थानकने विषै **दे०** देवलोकमांहे **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवौ **भ०** हुइ. **जा०** जावत् **से०** ते **त०** तिहां **दे०** देवता **भ०** थाय **म०** मोटि ऋद्धिवंत **जा०** जावत् सुख भोगवतौ **वि०** विचरै. **से०** ते जीव ते देवलोक थकी **आ०** आउखो क्षय थए थके **जा०** जावत् ट्ठिइखएणं भवखएणं इत्यादिक **अ०** आंतरा विनां तिहांथी **च०** चवीने शरीर त्यजीने **अ०** अन्यतर ते उग्रपुत्रादिक तेहना कुलने विषै **दा०** पुत्रिपणै **प०** ऊपजै अवतरै. **जा०** जावत् शब्दे ते दारिका सुकुमाल हुई उन्मुक्तबालभाव जाणीने माता पिता तेहनै योग्य भर्तार जोइनै **द०** ते पुत्रीने जावत् **भा०** भार्यापणै एतले स्त्रीपणै द्यै आपै. **सा०** ते कन्या **णं०** अलंकारे **त०** ते भर्तारनि **भा०** भार्या हुइ **ए०** एक ते स्वरूपथी **ए०** एक जात बीजी शोक विना जे भणि दुख न ऊपजै ते माटे **जा०** जावत् शब्दे तेलना भाजननी परे इत्यादि **त०** तिम ज सर्व अधिकार लेवौ. **ती०** ते कन्याने **अ०** बाहिर प्रदेशथी पोताने घरे पेसतां **जा०** जावत् शब्दे पोताना घर थकी बाहिर प्रदेसे नीकलतां आगले पाछले मोटा दासी दास इत्यादिक जावत् **किं०** स्यो **ते०** तुमारा **आ०** मुखनै **स०** रुचै छै.

[बा.४५१] अथ शिष्य गुरुप्रतै पूछै छै. **ती०** ते निदानना करणहारनो **त०** तथा प्रकारनि जे पूर्वोक्त निदान कृत **इ०** स्त्रीने काजे एतले पुरुषपणे स्त्रीनो निदान कर्यौ ते तो पछै भवांतरे स्त्रीवेदपणुं पांम्यौ, पुरुषपणौ छांड्यौ एहवी जे स्त्री जातनै इत्थिकाय कहिए ते स्त्री प्रतै अहो स्वामी **त०** तथा रूप एतले तत्त्वना जाण एतादृश रूप **स०** श्रमनो करणहार श्रमण **मा०** मा हणौ एहवो उपदेश छै जेहनो ते माहण **ध०** धर्म **मा०** कहै ? हिवै गुरु शिष्य प्रतै कहै छै **हं०** हां तथा रूप श्रमण तेहने धर्म कहै. **जा०** जावत् **किं०** स्यौ **अं०** साधू समीपे **जा०** जावत् **प०** धर्म सांभलै एतले कर्ण द्वारे सांभलीने अंतःकरणने विषै सेवै भक्तिवंत थको ? हिवै गुरु कहै छै **णो०** ए अर्थ समर्थ नही एतले सांभलवाने विषै **अ०** अजोग्य छै **सा०** ते निदाननी कर्णहारी स्त्री **त०** ते केवलीनो परूप्यौ धर्म तेहने **स०** सांभलवानै. अथ केहवी होय ? ते कहै छै **सा०** ते होय **म०** मोटी इच्छावंत **जा०** जावत् शब्दे महापरिग्रहवंत हुइ पछै कालमासे काल करीने **दा०** दक्षिणगामी **णे०** नारकी मध्ये ऊपजै **आ०** आगले काले भवनि परंपराइं **दु०** दोहिलौ पांमै बोध समकित **भ०** होय ते एहवो. अथ उपसंहारमाह-**तं०** ते **ए०** एम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **त०** ते निदानीय पुरुषनै स्त्रीनी वांछा करी तेहनो **इ०** एतादृश रूप एहवो **पा०** पाप कर्म कहिए जे ए दुर्गति नीच पडे तेहनो फल विपाक जे भोगववौ **भ०** हुई **जं०** जे **णो०** नहि होइ **सं०** शक्तिवंत एतले समर्थ न होय. ते कहै छै. **के०** केवली **प०** परूप्यो तेह **ध०** धर्मने **प०** सांभलवाने. ए त्रीजो निदान कह्यौ. एहने विषै पुरुषपणुं पांमै अने स्त्रीपणुं वांछै ए भाव कह्यौ.

[बा.४५२] हिवै चोथो निदान कहै छै. तेहनै विषै स्त्रीपणुं पांमीने पुरुषपणानो अभिलाष करै एहवो भाव कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! ए आमंत्रण **म०** मे अने अन्य तीर्थंकर **ध०** धर्म **प०** परूप्यो **इ०** एह ज प्रत्यक्ष सेवमान **नि०** निर्ग्रंथनो **पा०** प्रवचन जे सिद्धांत **स०** सत्य **से०** शेष बोल अनुत्तर केवलीइं कह्यौ प्रतिपूर्ण सिद्धिमग्गे पूर्व कहै तिम पूर्वोक्त प्रकारे **अ०** कर्मनो अंत करै **जा०** जावत् पूर्वे कह्यौ तिम. **ज०** जे **णं०** अलंकारे **नि०** साधवी **ध०** धर्मने विषै **सि०** ग्रहण आसेवन रूप शिक्षाने विषै **उ०** उद्यमवंत थइ थकी **वि०** विचरती थकी **पु०** पूर्वे **दि०** दिगंछा क्षुधा **जा०** जावत् पूर्वोक्त प्रकारे **उ०** उदर्यौ **का०** काम थकी काम वांछा ऊपनी एहवी थकी **वि०** विचरै. **सा०** ते साधवी **प०** पराक्रम करती थकी **पा०** देखै **से०** ते जे **इ०** ए होइ भोगने विषै **उ०** उग्रना पुत्र **म०** महामातृका **भो०** भोगना पुत्र **म०** महामातृका **ती०** तेहने **अ०** अन्यतर **अ०** पोताना घर

थकी बाहिर नीसरता **जा०** जावत् पूर्वोक्त सर्व अधिकार लेवा. **किं०** स्यूं **ते०** तुमारा **आ०** मुखनै **स०** सदै छै ? **जं०** जे उग्रादिक पुत्रने **पा०** देखीने **णि०** निर्ग्रंथी साधवी **णि०** निदान करै. स्यूं निदान करै ? ते कहै छै **दु०** दुख दोहिलो छै **ख०** निश्चै **इ०** स्त्रीपणानै एतले स्त्रीपणै **दु०** दुखे संचरी सकीइ एतले स्त्रीपणे विचरवो ते दोहिलो, किहां किहां ? ते कहै छै **गा०** गाम नगरांतर **जा०** जावत् शब्दे खेट कर्बटादिक **स०** सन्निवेसांतरने विषै. **से०** ते यथा नाम संभावनाइं **अं०** आंबानी **पे०** पेसी ते कातलीनी परे परिपक्व **अं०** अंबाडगनी **पे०** कातली **मा०** बीजोरानि **पे०** कातली **मं०** मांसनि **पे०** पेसी ते मंसखंड **उ०** सेलडीनो **खं०** खंड एतले खंडे करी **सं०** संबलि वृक्ष तेहनो फल **ब०** ते घणा जन मनुष्यने **आ०** आस्वादनीक होइ **पे०** देखवा योग्य **पी०** सखीजन पासे याचनीक एतावता विशेषे प्रार्थना योग्य विशेषे प्रार्थना करै वांछा करै. **अ०** अभिलाष योग्य सन्मुख कमनीय **ए०** एणे दृष्टांते **इ०** स्त्री पण इम जाणवी पेसीवत् **ब०** घणा **ज०** मनुष्यनै **आ०** आस्वादनीक होइ **जा०** जावत् आंबादिकवत् **अ०** अभिलाषनीय होइ अभिलाष करै. **तं०** ते माटे **दु०** दुख दोहिलो **ख०** निश्चै **इ०** स्त्रीपणुं एतले स्त्रीपणुं वारु नही ते भणि **पु०** पुरुषपणुं **सा०** भलुं. **ज०** जो **इ०** ए प्रत्यक्ष छता **त०** तप **नि०** नियम अभिग्रह **जा०** जावत् **अ०** ब्रह्मचर्यनो फल होय तो **अ०** हूं पण **आ०** आगम्ये काले आगला भवने विषै **इ०** ए एहवा **पु०** पुरुषना **भो०** भोगववा योग्य भोग **भुं०** भोगवंता **सा०** भलुं.

[बा.४५३-४५४] **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण साधो ! **णि०** निर्ग्रंथी **णि०** निदान करीने **त०** तेह **ठा०** स्थानकने **अ०** गुरु समीपे अणालोए थके **अ०** अणपडिकम्ये एतले अणनिवर्त्ये **जा०** जावत् **अ०** प्रायछित अणपडिवज्ये **का०** कालने अवसरे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर **दे०** देवलोकने विषै **दे०** देवतापणै **उ०** उपजवो हुवै एतले देवता हुवै. **से०** ते **त०** तिहां देवता **भ०** हुइ क्रीडा करै पण ते केहवा हुइ ? ते कहै छै **म०** मोटी ऋधिनो धणि **जा०** जावत् शब्दे आउखएणं इत्यादिक तिहांथी चवीने किहां ऊपजै ? ते कहै छै **जे०** जे **इ०** ए **उ०** उग्रपुत्र **त०** तिम ज एतले तेहना कुलने विषै **जा०** जावत् **दा०** बालक पुत्र **भ०** हुइ **जा०** जावत् दासी दास तेहने कहै छै **किं०** स्यूं **ते०** ताहरा **आ०** मुखनै **स०** सदै छै रुचै छै **ज०** जे **त०** तथा प्रकारनो जे पूर्वोक्त कह्यौ ते प्रकारना ने **पु०** तेह ज पुरुष जातने **जा०** जावत् तथा प्रकारनो श्रमण माहणनो उपदेश दीइं पण ते धर्म सांभलवाने विषै **अ०** अयोग्य ते कहै छै **से०** ते पुरुष **त०** ते केवलीनो परूप्यौ धर्म **स०** सांभलवौ. वली ते केहवो हुई ? ते कहै छै **से०** ते पुरुष **भ०** हुइ **म०** मोटी इछानो धणि **जा०** जावत् कालने अवसरे काल करीने **दा०** दक्षिणगामी नारकी मध्ये अवतार पांमी नारकी थाइं **जा०** जावत् भवनि परंपराइं दुख दोहिलो **ल०** पांमै **बो०** समकित अपितु एहवो हुइ. **ए०** इम **ख०** निश्चै **जा०** जावत् ते निदाननो ए पाप फल विपाक **प०** जे भणि केवलीनो परूप्यो धर्म सांभली न सकै ४. एह चोथो निदान कह्यौ. एहनै विषै पुरुषपणानो निदान कह्युं छै.

[बा.४५५] अथ पांचमो निदान कहै छै. तेहने विषै मनुष्यपणौ पांमिने देवपणानो अभिलाष करै एहवो भाव कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **म०** में **ध०** धर्म **प०** परूप्यौ **इ०** इम ज **नि०** निर्ग्रंथ संबंधी **पा०** प्रवचन ते द्वादशांगी रूप **स०** सत्य **जा०** जावत् **त०** तिम ज पूर्वोक्त प्रकारे **ज०** जे **ध०** धर्मने अर्थे **नि०** निर्ग्रंथ साधू **नि०** निर्ग्रंथी साध्वी **सि०** ग्रहण आसेवन रूप शिक्षाने विषै **उ०** उद्यमवंत **वि०** विचरता थका **पु०** पूर्व **दि०** क्षुधादिक पामता **जा०** जावत् **उ०** उदीरणा भोगनि इच्छा करतो थको **वि०** विचरै. **से०** ते **प०** पराक्रम करै. **से०** ते पराक्रम कर्तो थको **मा०** मनुष्य संबंध्या **का०** कामभोग ते थकि **वि०** विचरतो थको **नि०** वैराग्य भाव तेहने **ग०** पांमै. किम पांमै ? ते कहै छै. **मा०** मनुष्य संबंधीया **ख०** निश्चै **का०** कामभोग एतले पांच इंद्रीइं अभिलाष ते **अ०** अध्रुव एतले चल **अ०** अनित्य अनेक स्वरूप छै जेहनो **अ०** क्षण क्षण प्रतै पलटाइ ते भणि

असास्वता **स०** सडवानो **प०** पडवानो **वि०** विध्वंसवानो **ध०** स्वभाव छै **उ०** वडी नीत **पा०** लघु नीत **खे०** वली खेल वलखो **ज०** मेल **सिं०** नांकनो मेल **वं०** वमन **पि०** पित्त **सु०** वीर्य **सो०** रुधिर **स०** ते थकी ऊपना **दु०** पाडुया एहवा **उ०** उसास **नी०** नीसास **दु०** पाडुया मूत्र **पु०** विष्टाइं करी **पु०** पूर्ण **वं०** वात निश्रवे ते वंताश्रव **पि०** पित्त निश्रवे ते पित्ताश्रव **खे०** इम खेलनै आश्रवै **प०** पछै मरण समय **पु०** अन्यतर जरा आव्या पहिलु **अ०** अवश्य भावे **वि०** त्यजवा योग्य. **सं०** छै ते **उ०** उंचा **दे०** देवता देवलोकने विषै **ते०** ते **त०** तिहां **अ०** अन्य देवता **अ०** अन्य देवीने **अ०** वसी करीने वसी करीने **प०** भोगवै १. **अ०** पोते ज **चे०** निश्चै **अ०** आत्माने **वि०** वैक्रिय करीने **प०** परिचारणा करै भोग करै २. **अ०** पोतानि **जि०** जेतली ज **दे०** देवांगना छै **अ०** तेहने आगले करीने **प०** भोगवै छै ३. **ज०** छै जो **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** १२ प्रकारे तप **नि०** अभिग्रह तेहनो **जा०** जावत् शब्द थकी ब्रह्मचर्य कष्ट अनुष्ठान करिये छै तेहनो वृत्ति विशेष छै तो **तं०** तिम ज **स०** सर्व **भा०** जाणवौ **जा०** जावत् **अ०** अमे पण **आ०** आगले भवांतरे **इ०** एहवा कह्या तेहवा **ए०** एतादृश **दि०** देवता संबंधि **भो०** भोगववा योग्य ते भोग शब्दादिक **भुं०** भोगवता थका **वि०** अमे पण विचरां एतले देवपणां पांमौ. **से०** ते **सा०** भलौ वारु.

[बा.४५६-४५७] अथ भगवंत उपदेश कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण साधो आउखावंतो ! **नि०** साधु **नि०** अथवा साधवी **नि०** निदान **कि०** करीनै **त०** ते निदान रूप थानकनै **अ०** गुर्वादिक समीपे ते अणालोए थके **अ०** अपडिकम्ये थके एतले निवर्त्यो नही **का०** मरणनै समे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर **दे०** देवलोकने विषै **दे०** देवतापणे **उ०** उपजवौ हुवै एतले देवता हुइ पिण ते केहवौ हुइ ? **तं०** ते कहै छै. **म०** मोटी ऋद्धिना देवताने विषै **म०** मोटी ज्योतिने विषै **जा०** जावत् महाबले इत्यादिक प्राग्वत् **प्प०** प्रभा सर्व दिशे उद्योत कर्वा थकी **ते०** तेह निदान कृत देवता तेह ज **अ०** अन्य देव **अ०** अन्य देवीपणै पण भोगवै. **तं०** तिम ज **जा०** जावत् पोतानी देवी पोते ज वैक्रिय रूप करै देवीना रूप करीने **प०** भोगवै. **से०** वलि ते देव ते देवलोक थकी **आ०** आउ क्षय थए **तं०** तिम ज पूर्वोक्त प्रकारे **जा०** जावत् स्थितिने क्षये अन्यतर त्यजीने **पु०** पुरुषपणै **प०** आवै. **जा०** जावत् दासी दास आवी इम कहै **किं०** स्यूं तुमारा मुखनै **स०** सदै रुचै छै. **त०** तेहनै **त०** तथा रूप ते निदानना करणहारने **पु०** ते पुरुषजातने **त०** तथा रूप तेहवो धर्मवंत **स०** श्रमण तपस्वी **मा०** माहण जे दयाना पालणहार **जा०** जावत् शब्द थकी केवलीनो परूप्यौ धर्म उपदेशै ते पुरुष धर्म सांभलै ? गुरु कहै **हं०** हां सांभलै. शिष्य प्रश्न **से०** ते निदान कृत पुरुष **स०** धर्म सद्दहै **प०** प्रतीत पामै **रो०** अभ्यंतर रुचि हुइ ? गुरु कहै **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. **अ०** अयोग्य **से०** ते पुरुष **त०** ते केवलीना परूप्या धर्मनी **स०** सद्दहणा जे भगवंतना वचन ते सत्य. वली ते पुरुष केहवौ हुइ ? ते कहै छै **से०** ते पुरुष **भ०** हुइ **म०** मोटि इच्छानो धणि **जा०** जावत् **दा०** दक्षिणगामी नारकीपणै ऊपजै **आ०** आवता भवनी परंपरा रूप आगले काले **दु०** दुख पांमै **बो०** बोध जे समकित **भ०** एहवो हुइ. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो साधो आउखावंतो ! **त०** ते निदाननो **इ०** एतादृश रूप **पा०** पाप फल तेहनो भोगववो ते विपाक **ज०** जे **णो०** न हुवै **सं०** समर्थ **के०** केवलीनो **प०** परूप्यौ **ध०** धर्म **स०** सद्दहवौ **प०** प्रतीत आणवाने **रो०** रोचववा ३. ए पांचमो निदान कह्यौ. एह पण देवपणानो निदान कह्यौ. ते अन्य देव अन्यनी देवी साथे पण काम भोगवै. पोतानि वैक्रिय करीने पण भोगवै. एहवा भाव कह्या ५.

[बा.४५८] अथ छट्ठो निदान कहै छै. तेहने विषै अन्य देव अन्य देवी साथे भोग न भोगवै अने पोतानि वैक्रिय करी भोगवै एहवा भाव कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** परूप्यौ **तं०** तिम ज सर्व अधिकार पूर्वोक्त सर्व लेवौ जे सत्य अनुत्तर केवलीक प्रतिपूर्ण इत्यादिक सर्व बोल लेवा. ग्रन्थगौरवभयान्न लिख्यते. **से०** ते साधू **प०** पराक्रम करतो थको **मा०** मनुष्य संबंधी पांच इंद्रीना **का०**

कामभोगने विषै **नि०** निर्वेद ते निवर्तवौ एतले वैराग्यने **ग०** पामै. स्यूं जाणि वैराग्य पांमै ? ते कहै छै. **मा०** मनुष्य संबंधिया **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव छै **अ०** अनित्य छै **त०** तिम ज पूर्वोक्त प्रकारे सर्व बोल लेवा **जा०** जावत् शब्दे असासया सडणपडणविधंसणधम्मा उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाण इत्यादिक बोल सर्व लेवा. **सं०** छै **उ०** ऊर्ध्व देवलोके **दे०** देवता **ते०** ते देवता **त०** तिहां **णो०** नही अन्य देव **णो०** नही **अ०** अन्य देवांगनाने **अ०** आलिंगन करीने **प०** परिचारणा ते भोग भोगवै. **अ०** आत्मा पोते ज **अ०** पोताना आत्मा थकी **वि०** देव देवी वैक्रिय करीने **प०** परिचारणा करै भोगवै.

[बा.४५९-४६०] **ज०** जे **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** १२ प्रकारे तपनो **नि०** अभिग्रह **तं०** तिम ज सर्व **जा०** जावत् शब्द थकी ब्रह्मचर्यनो जे फल छै तो अमे पण देवता थाउं पछै मरणने अवसरे आलोयां विना काल करीने थाय पछै ते देवतानो आउखो क्षय करीने मनुष्य उग्रपुत्रादिकने विषै ऊपजै. तिहां दासी इम कहै जे स्यूं तुमारा मुखने सदै छै इत्यादिक पूर्वोक्त सर्व बोल लेवा. पछै ते प्रते केवलीनो परूप्यौ धर्म उपदेसै श्रमण माहण ? ए शिष्यनि पूछा. हिवै गुरु कहै छै हां उपदिसै इत्यादिक सर्व बोल लेवा. अथ शिष्य पूछै छै **से०** ते पुरुष केवलीनो परूप्यौ धर्म **स०** सद्दहै **प०** प्रतीत आस्था आवै **रो०** रुचि ऊपजै ? **णो०** गुरु कहै ए अर्थ समर्थ नही. तो स्यानि रुचि ऊपजै ? ते कहै छै **अ०** केवलीना धर्मथी अनेरा धर्म ते अन्यत्र कहिइं **रु०** ते अन्यत्र धर्मनि रुचि ऊपजै. **रु०** रुचि भाव एतले सद्दहणा मात्र रुचि ऊपजै. **से०** ते पुरुष **भ०** हुइ एहवो वलि ते पुरुष केहवो हुई ? ते कहै छै. **से०** ते **जे०** आगले कहस्यै ते **आ०** अटवीने विषै रहै कंदमूलनो आहार करै ते आरण्णिया **आ०** तापसना आश्रमने विषै ज रहै वसै ते आवसथिका **गा०** ग्रामने अंते समीपे वसै ते ग्रामणिअंतिया **क०** कोइ कार्ये मंडल देश प्रदेश करवाने छांनो कार्य करै संजमवंत नही **णो०** नही एतले सर्वने विषै दया घणौ एतले त्रसनो विरमण अने एकेंद्रियादिकनो आरंभ तेणे बहुसंजता कहिइं **णो०** नो शब्द निषेधवाची सर्व व्रतने विषै वर्तता नथी एतले एक कोइक व्रतने विषै प्रवर्तै **स०** सर्व प्राणभूत **जी०** जीव **स०** सत्वने विषै एतले आरणिकादिक जीवने विषै सर्व थकी पोते निवर्त्यौ नथी एतले पाखंडी जन **अ०** आपणपे पोते **स०** सत्यामृषा बोलै अथवा देखाडै ते आगले कहै छै वली वचने करी सत्यामृषा **प०** प्रयूंजै **अ०** हूं ब्राह्मणपणा माटे **ण०** दंडादिके न हणवौ एतले मुद्गरे न मारवौ **अ०** अनेरा शूद्रादिकने हणवा **अ०** मुजनै दंडादिके **न०** ताडवौ नही **अ०** अनेरा जीवनै **अ०** हणवा **अ०** मुजनै **न०** पीडा न करवी ब्राह्मणपणा माटे **अ०** अनेरा शूद्रादिकनै पीडा करवी **अ०** मुजनै **न०** ग्रही न राखवौ ब्राह्मणपणा माटे **अ०** अनेरा शूद्रादिकनै ग्रही राखवा **अ०** मुजनै जीव थकी चूकवौ नही **अ०** अनेराने प्राण थकी चूकवा एतले ते अग्याननै माटे परजीवनै पीडाकारी वचनना उपदेश देवा माटे मूढपणै असंबंधनो बोलणहार. वली ते केहवो होय ? ते कहै छै **ए०** ए पूर्वोक्त प्रकारे **इ०** स्त्री रूप जे काम अथवा स्त्रीने विषै कामने विषै **मु०** मूर्छावंत **ग०** गृध **गि०** विशेषे गृध **अ०** अतृप्ता थका स्त्रीना संग थकी अवश्य शब्दादिक विषयनि आसक्ति हुइ ते माटे स्त्रीना कामभोग कर्या **जा०** जावत् पांच छ वर्षनि अवधि पालीने **का०** मरणने अवसरे काल करीने **अ०** अन्यतर एक स्थानके **आ०** असुर काय देव मध्ये **कि०** किल्बिषियादिक देव ते मध्ये **ठा०** तेह स्थानके **उ०** उपजवौ **भ०** हुवै एतले देवता थाइ. **ते०** तेह **त०** ते किल्बिषियाथी **वि०** मूंकाणो थको एतले आउखापणाने वर्तता थका पाप घणा थकी **भु०** वारंवार **ए०** बोकडापणे **मू०** ते पण मूंगापणै तथा मनुष्य मूंगापणै **प०** ऊपजै जन्म पांमै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **त०** ते **णि०** निदाननो **जा०** जावत् शब्दे ए पाप फल विपाक **णो०** न हुई **सं०** सक्तिवंत **के०** केवलीनो परूप्यौ **ध०** धर्म **स०** सद्दहै नही प्रतीत पण न ऊपजै ३. ए छट्ठो निदान कह्यौ. ए छट्ठा निदानने विषै देवतानो निदान कह्यौ. तिहां अन्य देवी न भोगवै. पोतानी देवी भोगवै तथा वैक्रिय करी पण भोगवै ६.

[बा.४६१] हिवै सातमो निदान पण देवतानो कहै छै पण एतलो विशेष जे अन्य देवी पण न भोगवै अने बीजे बोले वैक्रिय करी पण न भोगवै. एक पोतानि मूलगी देवी भोगवै. एहनो ए विशेष **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण साधो ! **म०** में **ध०** धर्म **प०** परूप्यौ **जा०** जावत् शब्दे सत्य अनुत्तरादिक धर्मने अर्थे उद्यमवंत थको **मा०** मनुष्यना **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव छै **त०** तिम ज पूर्वोक्त प्रकारे **सं०** छै **उ०** ऊंचा **दे०** देवता **दे०** देवलोकने विषै **णो०** नही अन्य देव **अ०** अन्य देवीने **अ०** वस करीने वस करीने **प०** भोगवै नही १. **णो०** नही **अ०** आपणे **अ०** आत्माने **वि०** वैक्रिय करीने **प०** भोग भोगवै २. **अ०** पोतानी ज **दे०** देवांगनाने **अ०** वस करीने **प०** भोग भोगवै ३. एतले एहवा देवताना भोग प्रसंसीने अथ पोते निदान करै **ज०** जो छै ए प्रत्यक्ष **त०** तप **नि०** अभिग्रह **तं०** ते सर्व फल हूं पण देवता थाउं एहवो अर्थ लेवौ **जा०** जावत् पूर्वोक्त प्रकारे **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो साधो आउखावंतो ! **नि०** निर्ग्रंथ साधू अथवा **नि०** साधवी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते निदान रूप **ठा०** थानकनै **अ०** गुर्वादिक समीपे आलोयां विनां **अ०** अणप्रतिक्रम्या **तं०** तिम ज **जा०** जावत् काल करी देवता थइ **वि०** विचरै.

[बा.४६२] **से०** ते **त०** तिहां **अ०** अनेरो देव **णो०** नही अनेरानि देवी **अ०** वस करीने वस करीने **प०** भोगवै एतले अन्य देव अन्य देवीने न भोगवै. **नो०** नही पोतानि आत्माने **वि०** वैक्रिय करीने एतले स्त्री पुरुष करीने **प०** भोगवै नही. **अ०** पोतानी ज देवांगना ते **अ०** वश करीने वश करीने **प०** भोग भोगवै. **से०** ते देव **त०** ते देवलोक थकि एतले ऊपना पछी तिहां थकी **आ०** आउखादिकनै क्षय थये थके **त०** तिम ज मनुष्यपणै ऊपजै ऋद्धि पांमै इत्यादि सर्व अधिकार कहिवौ. **ण०** एतलो विशेष केवलीनो परूप्यौ धर्म साधू साखै सांभलै अने सांभलीने सद्दहै ? ए शिष्य वचन. गुरु कहै **हं०** हां सद्दहै **प०** प्रतीत ऊपजै **रो०** रुचै. वलि शिष्य प्रश्न **से०** ते **सी०** सीलव्रत **गु०** गुणव्रत **वे०** विरमवौ **प०** पचखाण **पो०** पोषधव्रत उपवास सहित एतले श्रावकना व्रत कह्या **प०** ते अंगीकार करै ? हिवै गुरु कहै छै **णो०** नही अर्थ समर्थ **से०** ते **दं०** दर्सन श्रावक **भ०** होय एतले समकित पांमे पिण एतलो विशेष जे व्रत पचखाण न पांमै. ए उत्कृष्ट रसनो निदान जाणवौ. वली ते दंसण श्रावक केहवो हुइ ? ते कहै छै **अ०** अभिगत सन्मुखपणे **जी०** जांण्या जीव अजीवने **जा०** जावत् शब्दे उवलब्ध पुन्य पाप आश्रव संवर निर्जरा बंध मोक्ष ए ९ पदार्थ सम्यक् प्रकारे जांण्या छै एहने विषै कुशल छै अथवा एहने विषै द्रव्यार्थपणै जांण्या हुइ ते कामनुं नही ते भणि निश्चै भावार्थपणै जाणवा जोइयै. ते भणि भावार्थनो स्वरूप कहै छै. **अ०** आठ रुचक प्रदेशादिक असंख्याता प्रदेशने विषै **अट्ठि०** हाड मिं० ते मांहिली मीजी धातु रूप ते अस्थिमिंज कहिए. पेमा० भगवंत तीर्थंकरना वचन ऊपरे प्रतीत लक्षण राग रंग तेणे करी रंग्यानि परे रंग्या राता. ए अर्थ वृत्ति मध्ये फलाव्यौ छै. एतले शरीरनी जे धातु तेहने विषै जे आत्माना प्रदेश लोलीभूत थइ रह्या छै ते भणि अस्थिपेमाणुरागरक्त कहियै पण एहनो विशेष जे आत्माना ज प्रदेशने विषै प्रेमानुरागरक्त कहिए पण अस्थिमिंजाने विषै प्रेमानुरागरक्त न कहिए जे भणि अस्थिमिंजा अजीव जड छै. ते भणि आत्मानो अभ्यंतर भाव देखाडी प्रेम अनुरागे रक्त छै. एतावता आत्माना प्रदेश धर्म उपदेश प्रेम रागे करी रंगाणा छै **जा०** जावत् **अ०** ए जिन धर्म ते अर्थ **से०** शेष पुत्रादिक तथा कुधर्म ते **अ०** अनर्थ. **से०** ते जीव **ए०** एहवे प्रकारे **वि०** सद्दहणा रूप विहारने विषै **वि०** विचरता थका **ब०** घणा **वा०** वरसने **स०** श्रमण साधू तेहनो उपदेश सेवै ते श्रमणोपासक कहियै **प०** दंसण श्रावक रूप पर्यायनो पण घणो काल **पा०** पालै. घणा वरष लगे पालीने **का०** मरणने समे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर **दे०** देवलोकने विषै **दे०** देवतापणै **उ०** उपजवौ **भ०** हुइ. अथ उपसंहारमाह- **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो साधो आउखावंतो ! **त०** ते **णि०** निदाननो **इ०** एतादृश रूप **पा०** पाप **फ०** फल विपाक **जं०** जे भणि **णो०** न करी सकै, स्यूं न करी सकै ? ते कहै छै. **सी०** शीलव्रत **गु०** गुणव्रत वेरमण **प०** पचखाण अने पोषधव्रत उपवास **प०**

अंगीकार करवा एतले अंगीकार करी न सकै. एतले एह सातमो निदान कह्युं. एहने विषै देवतानो निदान कह्युं. एतले नियाणा नव, ते मध्ये ४ मनुष्यना कामभोगना अने तीन देवताना कामभोगना. ते मध्ये पांचमां नियाणाना देवता पोतानी १ पारकी २ वैक्रिय ३ ए त्रिण नियाणा भोगवै छै. छट्ठा नियाणानो धणि पोतानी १ वैक्रिय २ भोगवै, एक पारकी वर्जी. अने सातमा नियाणानो धणि एक पोतानि लुगाइ भोगवै, पारकी १ अने वैक्रिय २ ए बे वरजी. केतलाएक परमत मध्ये पाठांतर फेर छै पण ए विशेष एम जाणवौ.

[बा.४६३-४६४] अथ हिवै आठमो निदान कहै छै. तेहनै विषै श्रावकपणानी अभिलाषनो निदान कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **म०** मे **ध०** धर्म **प०** परूप्यौ **तं०** ते पूर्वोक्त सर्व अधिकार लेवौ **जा०** जावत् **से०** ते पुरुष **प०** पराक्रम कर्तो थको **दे०** देव संबंधिया अने **मा०** मनुष्य संबंधिया **का०** कामभोग थकी **नि०** वैराग्य **ग०** पामै. स्यूं जांणि वैराग्य पांमै ? ते कहै छै **मा०** मनुष्य संबंधीया **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव चल छै **जा०** जावत् **वि०** अवस्य त्यजवा योग्य छै. **दे०** देवताना पिण **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव चल छै **अ०** अनित्य नित्य नही **अ०** अशास्वत थोडो काल रहै **च०** चालै स्वप्ने (?) **च०** सडवानौ **ध०** स्वभाव छै **पु०** वली आविवो तिहांथी **प०** पछै **पु०** पहिला **अ०** अवश्यमेव **वि०** त्यजवा योग्य छै ते भणि **सं०** छै **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप **नि०** अभिग्रह व्रत मर्यादा **जा०** जावत् **आ०** आगले भवे **ज०** जे **इ०** ए **भ०** हुआ **उ०** उग्रपुत्र **म०** महामातृका **जा०** जावत् भोगपुत्रादिकने कुले **पु०** पुत्रपणै **प०** ऊपजै. **त०** तिहां **स०** श्रमणोपासक **भ०** थाउं. केहवो थाउं ? ते कहे छै. **अ०** जाण्या छै जेणे **जी०** जीव अजीव पदार्थ **उ०** जाण्या छै **पु०** सुख **पा०** दुख **जा०** जावत् **फा०** प्रासुक ------ गयौ छै प्राण भूत सत्त्व **ए०** एषणीक साधूने लेवा योग्य **अ०** अन्न **पा०** पांणि **खा०** खादिम **सा०** सादिमे करीने **प०** पडिलाभतो थकौ **वि०** विचरुं. **से०** ते व्हे **सा०** भलुं एतलै माहरा तपनो फल हुई तो हुं श्रावक हुज्यौ.

[बा.४६५] **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **नि०** निर्ग्रंथ साधु **नि०** निर्ग्रंथी साध्वी **नि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते निदानरूप थानकनै **अ०** गुर्वादिकनै समीपे अणकह्ये थके **जा०** जावत् **दे०** देवलोकने विषै **दे०** देवतापणै **उ०** ऊपजवौ **भ०** हुवै. **से०** पछै ते देवता **दे०** देवलोक थकी **आ०** आउखाने क्षये **जा०** जावत् शब्दे मनुष्यपणै ऊपजे. दास दासी कहै स्यूं तुमारा मुखने सदै छै ? **त०** तेहनै **त०** तथा प्रकारना **पु०** पुरुषजातनै **जा०** जावत् शब्दे उपदेशप्रतै **प०** सांभलै ? ए शिष्यनो प्रश्न. हिवै गुरु कहै छै **हं०** हां **प०** सांभलै. हिवै शिष्य प्रश्न **से०** ते **स०** सद्दहै **जा०** जावत् **हं०** हां सद्दहै. **से०** ते **सी०** शीलव्रत **जा०** जावत् **पो०** पोषध उपवास **प०** अंगीकार करै ? ए शिष्यनो वचन. **हं०** हां **प०** अंगीकार करै, ए गुरुनो उत्तर. हिवै शिष्य प्रश्न **से०** तेह **मुं०** द्रव्य भावे मुंड थइने **आ०** आगारपणो त्यजीने **अ०** अणगारपणौ साधूपणौ **प०** अंगीकार करै. हिवै गुरु वचन कहै छै **णो०** नही ए अर्थ समर्थ **से०** ते श्रमणोपासक कहिइ श्रावकपणौ **भ०** पांमै पण साधूपणौ न पांमै. हिवै श्रावक केहवो हुइ ? ते कहै छै **अ०** जांण्या छै **जी०** जीव अजीव पदार्थ जेणे **जा०** जावत् शब्दे जाण्या छै पुन्य पाप जेणे एहवा श्रावक निर्ग्रंथनै निर्ग्रंथीने असनादिक ४ आहार इत्यादिक जावत् साधूने असनादिक **प०** प्रतिलाभतो थको **वि०** विचरै. **से०** ते **ए०** श्रावक एतादृश रूप व्रत पालन धर्म रूप **वि०** आराधनाइं **वि०** विचर्तो थको **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **स०** श्रावकना व्रत रूप **प०** पर्याय **पा०** पालै. पालीनै वली शिष्य प्रश्न **आ०** अहो स्वामी संथाराने विषै अबाधा **उ०** ऊपने थके **अ०** अबाधा उपसर्ग परीसहादिक सहै ? रोगादिक अणऊपने थके **ब०** घणा **भ०** भक्तनै **प०** पचखै ? एतलै संथारो करै ? ए पूछा शिष्यनि. **हं०** हां पचखै संथारो करै ए गुरु वचन. **ब०** घणा **भ०** भक्तनो **अ०** अनसन **छे०** छेदे ? गुरु कहै हां छेदै. छेदीने घणा भक्तनो अनशन पालीने **आ०** आलोइ **प०**

पडिकमीने **स०** समाधि भाव रूप तेहने पांम्यौ थकौ **का०** मरणने अवसरे **का०** काल **कि०** करीने **अ०** अन्यतर जे कोइ एक **दे०** देवलोकनै विषै **दे०** देवतापणै **उ०** उपजवौ **भ०** हुइ एतले देवता थाइ. अथ उपसंहारमाह – **तं०** ते **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **त०** ते **नि०** निदाननो **इ०** एहवा प्रकारनो **पा०** पाप फल विपाक स्यो ? ते कहै छै **जं०** जे भणि निदाननो करणहारो **णो०** नही समर्थ **स०** सर्वथी **स०** सर्वथा प्रकारे **मुं०** मुंड **भ०** थइने **आ०** आगार ते गृहस्थाश्रम थकी **अ०** अणगारपणौ साधूपणौ **प०** पडिवर्जवौ अंगीकार करवो. ते निषेध ए आठमो निदान कह्यौ.

[बा.४६६] हिवै नवमो निदान कहै छै. आठमा निदानने विषै श्रावकपणानौ निदान कह्यौ अनै नवमा नियाणाने विषै साधूपणानौ निदान कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **म०** में **ध०** धर्म **प०** परूप्यौ **जा०** जावत् शब्दे सत्य अनुत्तर इत्यादिक पद समुदाय लेवा. **जा०** जावत् ते धर्मने विषै **से०** ते जीव **प०** पराक्रम कर्तो थकौ **दे०** देव संबंधी **मा०** मनुष्य संबंधि **का०** कामभोग पंचेंद्रीनो अभिलाष ते थकी **नि०** वैराग्य **ग०** पांम्यौ. **मा०** मनुष्य संबंधि **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव छै चल छै **अ०** अशास्वता **जा०** जावत् सडवा पडवानो स्वभाव छै ते माटे **वि०** अवस्यमेव त्याजवा. **दे०** वलि देवता संबंधी पण **ख०** निश्चै **का०** कामभोग **अ०** अध्रुव छै **जा०** जावत् **पु०** वलि आवि अवतार लेवौ ते पुनरागमन. **सं०** जो छै **इ०** ए प्रत्यक्ष **त०** तप **नि०** अभिग्रह **जा०** जावत् तेहनौ फल हुइ तो **व०** अमे पण **आ०** आगले काले **जा०** जे ए मनुष्य लोकनै विषै **भ०** हुइ **अं०** जघन्य कुल अंत वर्णवा उत्प्रेक्षा भणि **पं०** प्रांत कुल जे अधर्म कुल **वा०** अथवा **तु०** अल्प कुटुंब अल्प धन **द०** सर्वथा निर्धन **कि०** कृपण ते द्रव्ये रांक **भि०** भिक्षावृत्तिइ जीवै ते भिक्षाकुलनै विषै **ए०** ए कह्या ते कुल मध्ये **अ०** अन्यतर ते एक **कु०** कुलने विषै **पु०** पुत्रपणै **प०** अवतरै. ते भणि **ए०** एह **मे०** माहरी **आ०** आत्मा **प०** दीक्षा लेवाने **सु०** बंधन कोइ न करै एतलै सुखे नीकली सकिइं **भ०** एहवो हुइ. **से०** ते तो **सा०** भलुं एतले साधूपणौ अंगीकार करवौ ते वारु. एह निदान.

[बा.४६७] **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **नि०** निर्ग्रंथ साधू साध्वी **णि०** निदान **कि०** करीने **त०** ते निदान रूप **ठा०** स्थानक **अ०** गुर्वादिक समीपे अणआलोइ **अ०** अणपडिकम्यां निवर्त्यां विनां **से०** शेष सर्व अधिकार पूर्वलि परे. हिवै शिष्य प्रश्न **से०** ते **मुं०** मुंड **भ०** थइने **आ०** गृहस्थपणा थकी **अ०** अणगारपणौ **प०** अंगीकार करै ? गुरु बोल्या **हं०** हां **प०** अंगीकार करे. **से०** तेह ज भवग्रहण एतले तेह ज भवने विषै **सि०** सिद्धि पांमै ? **जा०** जावत् शब्दे बुज्झेज्जा इत्यादिक **स०** सर्व दुःखनो अंत करै ? हिवै गुरु बोल्या **णो०** ए अर्थ समर्थ नही. अथ ते अणगार केहवो हुइ ? ते कहै छै. **से०** ते एहवौ **भ०** हुइ **से०** ते जे **अ०** आगार घर जेहने नथी ते अणगार **भ०** भगवंत **इ०** इर्या कहिइं जोवो, तिहां जे समिति जेणे सहित जे इर्या समिति **भा०** भाषा बोलवानै विषै भली मति छै जेहनि ते भाषासमिति **जा०** जावत् शब्दे अणगारनो सर्व वर्णन लेवौ. **बं०** ब्रह्मचारी **ते०** ते ए **वि०** अणगारपणौ आराधतो थको **ब०** घणा **वा०** वर्ष लगे **सा०** चारित्र **प०** प्रव्रज्या साधूपणानो भाव **पा०** पालीने **आ०** वली संथाराने विषै अबाधा **उ०** ऊपने थके अथवा अणऊपने थके **जा०** जावत् शब्दे पूर्वोक्त सर्व अधिकार **भ०** भक्त ते अन्नादिक पचखै ? ए शिष्य प्रश्न. **हं०** उत्तर हां **प०** पचखै. **ब०** घणा **भ०** भक्तनो **अ०** अणसण **छे०** छेदै ? ए प्रश्न. उत्तर **हं०** हां छेदै. **आ०** आलोइने **प०** पडिकमीने **स०** समाधिने पांमे **का०** कालने **मा०** अवसरे **का०** काल करीने **अ०** अन्यतर कोइक **दे०** देवलोकने विषै **दे०** देवतापणै **उ०** उपजवौ **भ०** हुवै. अथ उपसंहारमाह- **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **त०** तेह **णि०** निदाननो **इ०** एतादृश रूप **पा०** पाप फल विपाक. किसौ विपाक ? ते कहै छै. **जं०** जे भणि **णो०** नहि समर्थ **ते०** तेणे ज

भवग्रहणै एतलै ते ही ज भवनै विषै **सि०** सिद्ध थया **जा०** जावत् शब्दे बुद्ध थया, मूंकाणा **स०** सर्व दुःख ते शारीरी मानसीक तेहनो अंत करै. एतावता अंत न करै. ए नवमो निदान कह्यौ एतले नव निदानना विपाक कह्या एतले जीव निदानने करै ते जीव दुखी थाइ.

[बा.४६८] हिवै अनिदानना फल कहै छै. **ए०** इम **ख०** निश्चै **स०** हे श्रमण आउखावंतो ! **म०** में **ध०** धर्म **प०** परूप्या **इ०** एह ज कह्यौ अथवा कहिस्यै ते **नि०** निर्ग्रंथनो **पा०** प्रवचन द्वादशांगी रूप **जा०** जावत् **से०** पूर्वोक्त ते साधू **प०** संजमने विषै पराक्रम करै. **स०** सर्व कामथी विरक्त **स०** सर्व रागथी **वि०** वेगलौ **स०** सर्व संगथी **वि०** वेगलौ **स०** सर्व आश्रव **स०** सर्व स्नेह थकी **अ०** अतिक्रांत वेगलो **स०** सर्व धर्मानुष्ठान तेणे **प०** परिवृत सहित **त०** तेह **भ०** भगवंतने **अ०** अनुत्तर ते प्रधान **ना०** ज्ञान ते मतिग्यानादिक तेणे करी **अ०** अनुत्तर प्रधान **दं०** दर्शने करी **जा०** जावत् शब्दे **अ०** अनुत्तर चारित्रे करी **प०** प्रधान परिनिर्वाण मार्ग कषायादिक सकल उपसमावै ते निर्वाण मार्ग **अ०** आत्मानै **भा०** भावता थका वासता थका **अ०** अंत नथी अनंत वस्तुनो ज्ञेय भावनै पांमै **अ०** प्रधान **नि०** व्याघात रहित **नि०** आवर्ण रहित क्षाइकपणा माटे **क०** सकल अर्थनो ग्राहक **प०** प्रतिपूर्ण ते सकल अंसे रहित **के०** केवल ते सहाइया रहित एहवो **व०** प्रधान **ना०** ज्ञान **दं०** दर्शन **स०** ऊपजै एतले आवर्ण क्षय थाइं. **त०** ज्ञान दर्शन प्रगट थाइं तिवारे ते **भ०** भगवंत ग्यानवंत **अ०** अरिहंत योग्य हुइ **जि०** जिन **के०** केवली **स०** सर्वज्ञ थाइं सर्व जांणै **स०** सर्व दरसी हुइ सर्व देखै **स०** देव संघाते मनुष्य **सु०** सुरनि परषदा **जा०** जावत् शब्दे सर्व जीवनि गति थीति जीवनि उपपात आवी कर्म रहै कर्म सर्व जीवना जाण तथा देखता थका विचरै. विचरीने **ब०** घणा **वा०** वर्ष **के०** केवलीनी परे **प०** पर्याय **पा०** पालै. पालीने **आ०** आत्मा संबंधी आउखुरु **से०** शेष **आ०** केवलग्यान देखै. देखीनै **भ०** भातनै **प०** पचखै. पचखीने **ब०** घणा **भ०** भगतनो **अ०** अनशन **छे०** छेदै. छेदीने **त०** तिवारे पछी **च०** छेहलौ **उ०** उसास **नि०** निसासे **सि०** सिद्धि पांमै **जा०** जावत् शब्दे बुज्झेज्जा इत्यादिक **स०** सर्व दुखनो अंत करै. **तं०** ते इम **ख०** निश्चै **स०** अहो श्रमण आउखावंतो ! **त०** तेह **अ०** नही जे निदान ते अनिदाननो **इ०** एहवौ प्रत्यक्ष रूप **क०** कल्याणनो **फ०** मुक्तिरूप फल **वि०** विपाक जे सिद्धना सुखनो भोगववौ **जे०** जे भणि **भ०** भव ते अनीक्षनी अगार तेणे ज भवग्रहणे **सि०** सिझै **जा०** जावत् पूर्वोक्त सर्व लेवौ आगले **स०** सर्व दुख ते अष्ट प्रकारे कर्म तेहनो अंत नास **क०** करै.

[बा.४६९] **त०** ए निदान कर्तव्याना फल कह्या. तिवारे पछी ते सांभलीने साधु साध्वी स्यूं कर्ता हुवा ? ते कहै छै. **ब०** घणा **णि०** निर्ग्रंथ साधु **नि०** निर्ग्रंथी साध्वी **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत अतिशयवंत ज्ञानवंत **म०** श्रीमहावीरनै **अं०** समीपे ते पासे **ए०** ए अर्थ **सो०** सांभलीने **णि०** अवधारीने **स०** श्रमण तपस्वी **भ०** भगवंत **म०** श्रीमहावीर देवनै **वं०** वांदै **ण०** नमस्कार करै. करीने **त०** ते निदान रूप थानकनै **आ०** आलोइने **प०** पडिकमी तेथी निवर्तीनै **जा०** जावत् पूर्वोक्त सर्व **अ०** यथायोग्य **पा०** प्रायछित **त०** तप कर्म ए तप रूप प्रायछित ते **प०** अंगीकार करै.

[बा.४७०] **ते०** ते काल जे चोथे आरे **ते०** ते समे प्रस्तावे जे प्रस्तावे **स०** समण तपस्वी **भ०** भगवंत अतिशयवंत **म०** श्रीमहावीर देव **रा०** राजगृही नामा नगर मगध देशनि राजधानी **गु०** तिहां गुणशिल नामा चैत्य यक्षनो आयतन तिहां भगवंत व्याख्यान कर्ता हूवा. **ब०** घणा **स०** श्रमण **ब०** घणी साधवी तेहनि परषदा मध्ये **ब०** घणा **सा०** श्रावक जे तीर्थंकरना वचनना सांभलणहार **ब०** घणि **सा०** श्राविका तेहनि सभा मध्ये **ब०** घणा **दे०** देव भवनपति व्यंतर ज्योतिषी वैमानिक ते मध्ये **ब०** घणी **दे०** देवी भवनपतिनि आदि छै देवांगना ते मध्ये **स०** देवता संघाते **म०** मनुष्य **सु०** सुर एव देवता प्रमुखनि **प०** परिषदा **म०** मध्ये **ग०** रह्या थका **चे०** समुचे **ए०** इम

**आ०** अर्धमागधी भाषाइं करी कहिता हुवा. **ए०** इम **प०** धर्मनौ मुक्तिरूप फल तेहनौ विस्तार कर्ता हुवा **ए०** इम धर्मनो स्वरूप विस्तारे करी परूपता हुवा **आ०** उत्काल तेहने पद एहवौ आयातिस्थान एहवे नामे **अ०** हे आर्यो ! साधो ! **अ०** अध्ययन **स०** अर्थ सहित प्रयोग सहित ए अध्ययन केहवी रीते कह्यौ ? ते कहै छै. **स०** हेतु सहित **स०** कारण ते अपवाद ते संघनि वर्तन करण **स०** पूछ्या अणपूछ्यानो कहवौ ते व्याकर्ण कहियै **जा०** जावत् अत्र जावत् शब्द छै पण बीजा कोइ अधिकारनै भलाव्यौ नथी तिम ८मा पजूसवणा कल्प अध्ययन मध्ये जाव कह्यौ. इम ए पण जाणवौ तथा जाव मध्ये आचारांग जीव वक्तव्य कला जाणवी **त०** सूत्र ते पाठ रूप ते सहित **स०** से केणट्ठेणं ए प्रश्न रूप ते अर्थ सहित **त०** वली सूत्र अर्थ बे बोले करी सहित **भु०** वार वार भगवंत तीर्थंकर देवे **उ०** उपदेस्यौ कह्यौ. **त्ति०** ए अधिकार वर्णवी कह्यौ छै. ए आयातिठाण नामा दसम अध्ययन लेस मात्र अर्थ पूरो थयो ।१०। ए लेस मात्र अर्थ आचार पालवानौ छै. १० अध्ययन कह्या इति दशाश्रुतखंध संपूर्णम्.

सं. १९३६रा माघ कृष्ण द्वितीयायां लींबोडी पडतसुं लीखाई छै । संवत १९८९रा मिती भाद्रवा बदी ५ अदीतवार नागोरमध्ये । श्रीरस्तु । सेठजी श्रीहजारीमलजी मंगलचंदजी मालु बीकानेर ॥

# श्रीदशाश्रुतस्कन्ध टबार्थ (३)

श्रीजिनाय नमः ।

श्रीवर्द्धमानं जिनं नत्वा तत्सूत्रार्पितचेतसा ।
दशाकल्पाख्यसूत्रस्य टबार्थः कश्चिदुच्यते ॥

इहां शास्त्रनें आदि प्रथम श्रीवीरवर्धमानस्वामीनइ नमस्कार करीनइ दशाश्रुतस्कंध सूत्रनो टबामात्र अर्थ करइ छइ । हिवइ 'दशाश्रुतस्कंध' एहनो शब्दार्थ कुण ? ते कहइ छइ, दश अध्ययने युक्त ग्रंथ ते दशा, दशा ते हि ज श्रुतस्कंध तेह दशाश्रुतस्कंध । दशाकल्प एहवो पिण पर्याय [छइ] । एह ग्रंथ असमाधिस्थानादिक पदार्थ दशा नामथकी शास्त्र कहियइ । एह शास्त्र प्रत्याख्यानपूर्वथकी उद्धरीनइ मंदमतिना धणीनइ अनुग्रहनइ अर्थइ स्थविरभगवंतइ दशाध्ययनपणइ पृथक प्ररूप्यउ ।

एहवे दश अध्ययने दशाधिकार ते कहइ छइ –

असमाहि१-सबलत्तं२ आसायणा३ गणिगुणा४ मणसमाही५ ।
स्वा(साव)ग६-भिक्खूपडिमा७ कप्पो८ मोहो९ नियाणं१० च ॥ *[दशा. नि. 7]*

ए दश अध्ययनना नाम जाणिवा । हिवइ अस्खलतादि गुणलक्षणोपेत सूत्र उचारियइ छइ ।

नमस्कार होवो अरिहंतनइ । अरि कहतां आठ कर्म, तेहनइ हणइ तिण वासतइ अरिहंत कहीजइ । आठ महाप्रातिहार्य तेणइ करी सोभायमान, ते अरिहंत । एहवा अरिहंत भगवंत चतुःषष्टि इंद्रतणा पूजनीक, ते अरिहंत प्रतै नमो कहतां नमस्कार होवउ ।

नमस्कार होवो सिद्धांप्रतै । सिद्ध कहतां बाळ्या कहतां दग्ध कीधा कर्म इंधण जिणइ, ते सिद्ध । अथवा सिद्ध ते निष्ठितार्थ थया । ते सिद्धप्रतइ माहरो नमस्कार सदाई होज्यो ।

नमस्कार होवो आचार्यप्रतइ । आ-मर्यादायइ जे सदा जिनशासननी उन्नतिना करणहार, ते आचार्य कहियइ अथवा पंचविधि(ध) ज्ञानाचारादि पालइ । एहवा आचार्यनइं नमस्कार होवउ ।

नमो कहतां नमस्कार होवउ उपाध्यायनइ । उपेत्य कहतां समीपि आवी अध्ययन करीयइ, ते उपाध्याय । तिहां प्रति नमस्कार हुवउ ।

नमस्कार हो सर्वसाधुनइ । ज्ञानादिक शक्ति मोक्ष, तेहनइ साधइ ते साधु अथवा सर्वजीवनें राखइ, ते साधु । थविरकल्पी जिनकल्पी अढीद्वीपमाहे वर्त्तइ, ते सर्वसाधुजननइ माहरो नमस्कार होवो ।

## [प्रथमदशा असमाधिस्थानाध्ययनम्]

[ट.१] सुयं मे कहतां सांभल्यो अवधार्यो, आयुष्मन् कहतां आऊखुं छइ जेहनइ पोते आऊखावंत शिष्य तेहनइ ए आमंत्रण सुधर्मा स्वामी जंबूप्रतिं कहै छइ । तेणइ भगवंतइ इम कह्यउ-इम जिनशासननइ विषइ भगवंतइ वीस असमाधिस्थानक कह्या । जिणइ करी आपरी अनइ परती आत्मानइ असमाधि ऊपजइ, ते असमाधि कहियइ ।

[ट.२] जंबूस्वामी पूछइ – किसा तिके, खलु निश्चयइ, थविर भगवंतइ वीस असमाधिना स्थान कह्या छइ ?

[ट.३] इम पूछ्यइ सुधर्मा स्वामी कहइ – इमे-ए खलु-निश्चयइ थविर भगवंतइ वीस असमाधिना स्थानक

कह्या, ते कहइ छइ –

१. उतावलो मार्ग चालतो प्रथम असमाधिस्थानक थाइ ।

२. अणपूंज्यइ स्थानक उपगरणादिक मेलइ अथवा चालै, ए बीजो असमाधिस्थानक ।

३. जउ न प्रमार्जइ तो दोष लागै एतलै अविध(धि)इ अजयणासुं पूंजइ नही, ए अ. ।

४. अतिभारी शय्याआसन ते घणा उपगरण विछावणा प्रमुख, तिहां बइसइ, ए अ. ।

५. रत्न जे ज्ञानादिक, तेणइं करी अधिक जे आचार्यादिक, तेनो जात्यादिकपदै करी पराभव करै ।

६. थविरवृद्धगुर्वादिकनो उपघाती ।

७. जीवनो उपघाती एतलइ पापी ।

८. सदा क्रोधकारी क्रोधवंत, ए आठमो ।

९. पर पूठै अवर्णवादनो बोलणहार ।

१०. वार-वार इम कहै निस्संकपणै 'तूं दास तूं चोर' एहवो कहै तो असमाधिस्थानक थाय ।

११. नवा अधिकरण कहतां कलह, कदे ऊपना नथी एहवा क्लेश, तेहनो उपार्जनहार होइ, ए ११मो असमाधिस्थानक ।

१२. जूना जे कलह पूर्वमहापुरुषे खपाव्या होय, ते कलह प्रति पुनरपि वार-वार उदीरणहार हूयइ, ए असमा. ।

१३. अकालै अप्रस्तावै जे आचारांगादि शास्त्र प्रथमपोरसी टालीनइ संध्यानै विषइ भणै एतले अकाले स्वाध्याय करै ।

१४. सचित्त जे पृथिव्यादिक तिहां बइसइ, हाथ पगसुं पृथ्वी खणै ।

१५. सर्व सूतां पछै शब्द करै ।

१६. जिणें करी गच्छनो भेद थाए, तिम करै ।

१७. जिणें करी गच्छमै यतीनै क्रोध थाए, तिम करै ।

१८. क्रोधनो करणहार ।

१९. सूर्यना उदयथकी अस्तंगततांई खाय ।

२०. एषणा ते आहारना भेदनै विषइ असमित थाय ।

ए पूर्वोक्त थविर भगवंते वीस असमाधिना स्थानक कह्या, इम कहुं छुं । प्रथम उपदेश समाप्त ।

## [द्वितीयदशा शबलाध्ययनम्]

[ट.४-६] पूर्वलै अध्ययनइं सांभल्यउ म0 इं-हे आयुष्मन् जंबू ! तिणइं भगवंतइ इम कह्यउ, ए जिनशासननै विषइ निश्चयइ थविर भगवंतइ इकवीस शबला कह्या । जिम कपडो मसिने संयोगे कालो थाय, तिम चारित्रनै किसा ते २१ सबला कह्या ? हे जंबू ! ते ए निश्चय[इ] थविर भगंवतइ इकवीस सबला कह्या, ते कहै छइ –

१. हस्तकर्म चेष्टाविशेष करतो सबल ।

२. मैथुन प्रतिसेवतो सबल ।

३. रात्रिभोजन खातो थको सबल ।

४. आधाकर्मा असन उपासरो वस्त्र पात्र एवं प्रमादपणै असूझतो ल्यै खातो थको सबल ।

५. राजानें निमित्तइ हूयउ, ते राजपिंड, ते खातो थको सबल ।

६. मोल आण्यो, उधारी आण्यो, अर्गला दिण्यो उघाडी आपइ, आज्ञा विणा अण.[1], अन्य ग्रामथी सन्मुख आण्ये छै एतले अशनादि साधुनइं अर्थइ आणी आपै, ते भोगवतो सबल ।

७. वारं वार 'माहरइ पच्चक्खाण छइ' एहवो कही अनइ वली-वली वार-वार ल्यै अथवा भोगवै तो सबल ।

८. मास एक मध्ये तओ कहतां तीन पाणीनो लेप करै, ते सबल । लेप ते नाभिप्रमाण जल अवगाहै, एहवा ३ लेप ।

९. एक(छ)मासमाहे साधुना समुदायनइ मूंकीनइं अन्य गच्छइ जाय सूत्रार्थादिक [कारण] विना ।

१०. मासमाहे तीन वार मायानइं स्थानकनइ सेवइ तो सबल, माया-कपट करीनइ आलोचइ नही ।

११. सय्यातर वसहीनो दातार, तेहनो आहार लै तो सबल ।

१२. आउट्टि कहतां जाणीनइं प्राणातिपात करै, ते सबल ।

१३. जाणीनइं मृषावाद बोलै, ते सबल ।

१४. जाणीनइं अदत्तादान ग्रहै लेवै, ते सबल । अणदीधी वस्तुनो ग्रहिवउ ।

१५. जाणिनइ सचित्त पृथवीयइ स्थानक करइ निषीधिका ते बइसइ अनइ अवस्थान करै अनै कायोत्सर्गादिक करइ तो सबल ।

१६. इम जाणीनइ स्निग्ध पृथवीयै सचित्तरज सहित पृथवीयै स्थानादि करतो सबल ।

१७. इम आकुट्टित जाणीनइ सचित्त एहवी जे शिला, चित्तवंत जे लोष्ट पाषाण, कोला कहियइ जीव तेहनो आवास ते कोलावास एहवो दारु काष्ठ एतलै मुलायो काष्ठ जीवै करी सहित, अंडे करी सहित, कीडी प्रमुख प्राणी बेइंद्रियादिक सहित, बीजसहित, हरितकायइ करी सहित व्याप्त, ओसे करी सहित व्याप्त, उत्तिंग घर करे धरतीमध्ये वाटला गोल ते उत्तिंग कहियइ, पणग पंचवर्णा फूलण, पाणी, माटी सहित, कोलियावडाना जालै व्याप्त एतलइं बोलइं करी सहित जे थानक, तिहां निषिद्या कहतां बैसवुं सूवुं, ए पूर्वोक्तप्रकार करतो थको सबल ।

१८. जांणीनइ मूल ते प्रसिद्ध तेहनो भोजन करै, उत्पलादिक जे कंद तेहनो भोजन करइ, बाह्य विभाग ते खंध तेहनो भोजन करै, पींपलादिकनी जे छालि ते खाय, करीर प्रमुख ते प्रवाल भोजन खाय, नागरवेलना पत्र ते खाय, करीर प्रमुखना फूल तेहनो भक्षण, फलनो भक्षण, बीजनइ खायवो, हरीनउ खायवो, ए पूर्वोक्त वस्तुनो भक्षण करतो सबल ।

१९. संवच्छरमाहे दस वेला पाणीनऊ लेप करइ तो सबल । नाभिप्रमाण जल अवगाहइ, ते लेप ।

२०. संवच्छरमाहे दस वेला माया करइ तो सबलउ । सबलो माया-कपट करी आलोचै नही ।

---

1 अनिसृष्टम् इत्यर्थः ।

२१. जाणीनइं सचित्तपाणी गलतउ होय, तेहनइं बिंदु करी सहित एहवै हस्तइ करी मात्रइं करी थाली प्रमुख कुडछी तेणइ भाजन करीनइं असन ते दानादि, पाणी, मेवा ते खादिम, फंछण लवंगादि ते स्वादिम, ए पूर्वोक्त वस्तु लेईनइ भोजन करइ तो सबल । एतलै सचित्त पाणी लागतइ ।

ए निश्चय थविर भगवंते इकवीस सबला प्ररूप्या कह्या, इम कहुं छुं । बीजो अध्ययन पूरो थयो ।

## [तृतीयदशा आशातनाध्ययनम्]

[ट.७-९] बीजइ अध्ययने २१ सबला कह्या । ते सबला तो आशातनाशीलनइं होय, ते माटे एणइं अवसानइं आशातना नामाध्ययन ते कहियइ छइ – सांभल्यो मइ हे जंबू ! तिण भगवंतइ इम कह्यउ – इण जिनशासननै विषै निश्चय थविर भगवंतइ तेत्रीस आशातना कही । सम्यक्त्वादि वस्तुनइं आशातना करै ते माटै आशातना । ते यथाक्रमै कहै छइ –

१. शिष्य ते अल्प पर्यायनो धणी, रत्नाधिक ते गुर्वादिक, ज्ञान-दर्शन-चारित्र रत्न कहियइ, इणइं करी अधिक रत्नाधिक, तेह आगलि चाले ते प्रथम आशातना ।

२. इम जे शिष्य रत्नाधिक गुर्वादिक पासै बरोबरि चालइ, ते २ आशातना शिष्यनइ ।

३. शिष्य रत्नाधिक जे वडेरा तियारैं बरोबर बइसइ, [पुठलि पग चांपतो हीडइ] ए ३ आशातना शिष्यनइ ।

४. एणइं प्रकारइ शिष्य वृद्धादिक आगलि चिट्ठित्ता कहतां उभउ रहइ, ते आशातना ४ शिष्यनइ ।

५. शिष्य रत्नाधिक जे ज्येष्ठ तेहसुं बरोबरि खांधओ जोडी उभउ रहइ, ते आशातना ।

६. शिष्य रत्नाधिकनइ आसनते पूठलि पग चांपतउ उभउ रहइ ।

७. वलि शिष्य रत्नाधिक वडां आगलि बइसइ, ए आशातना शिष्यनइ ।

८. शिष्य रत्नाधिक वडांनइ बिहुं पासइ खंध जोडीनइ बइसइ, आशातना शिष्यनइ ।

९. शिष्य आपथी जे वडा तियानइ आसणइ बइसतओ आशातना शिष्यनइ ।

१०. शिष्य रत्नाधिक जे वडा तियां संघातइ बाहिर विहारभूमि शरीरचिंतानइ अर्थइ गयां थकां तिहां पहिला आप पाणी ल्यइ पछइ आचार्यभणी धामइ तउ आशातना शिष्यनइ ।

११. शिष्य रत्नाधिक संघातइ बाहिर विहारभूमि नीकल्यां थकां तिहां पूर्वइ उतावलो थको आलोचइ इरियावहिया प्रमुख पछइ रत्नाधिक गुरु आलोचइ तो आशातना शिष्यनइ ।

१२. शिष्य रत्नाधिक गुरुनइ प्रथम बोलाव्यां थकां आव्यइ थकइ प्रथम आप बोली उठइ तउ आशातना शिष्यनइ ।

१३. शिष्य रत्नाधिक गुरु रजनीसमइ विकालइ इम बोलाव्यइ हूतइ 'हे आर्य ! कुण लोक सूता, कुण लोक जागइ छइ' इम पूछ्यां थकां शिष्य जागतउ थकओ पिण रत्नाधिककनइ बोलइ नही, गिनारइ नही, सांभल्यो अणसांभल्यो करइ तओ आशातना शिष्यनइ ।

१४. शिष्य असन पान खादिम स्वादिम लेईनइ ते पूर्वइ उतावलो गृहस्थ आगलि आलोवइ अनइ पछइ गुरुनइ समीप आवी आलोवइ, ते आशा. ।

१५. शिष्य असनादि ४ लेईनइं ते पूर्वइ गृहस्थनइ देखाडइ पछइ गुरुनइ देखाडतो आशा. ।

१६. शिष्य असनादि ४ लेईनइं पूर्व पहिला उतावलउ अनेरानइ निमंत्रइ पछ[इ] गुरुनइ निमंत्रइ, तउ आ. ।

१७. शिष्य रत्नाधिक संघाते असनि(ना)दि ४ लेईनइ ते गुरुनई वडेरानइ अणपूछ्यां थकां जेह जेहनइ देवा वांछइ रागइ करी तेह तेहनइ प्रचुर-प्रचुर घणो-घणो द्यइ तउ आ. ।

१८. शिष्य रत्नाधिक संघाते असनादि ४ आहार करतां तत्र शिष्य ते घणो-घणो पत्र-शाक-पानडा सर्पिघृतादि रसोपेत रसवस्तु मनोज्ञ-मनोज्ञ मनगमतो स्निग्ध-स्निग्ध लूखो-लूखो ए आ[हा]र एहवी वस्तु लंपट थको खाय तो आसातना ।

१९. शिष्य रत्नाधिक जे गुरु बोलावतां थका ते वचन सांभली अणसांभल्यउ करइ तउ आशातना।

२०. शिष्य आचार्ये बोलाव्यो थको तिहां ज बइठउ थकउ सुणइ, उठइ नही आसनसेती, तिहां ज बैठउ रहइ, जाणइ जउ गुरुकनइ जाइसि तो काइ कांम भलावसी, इम जाणइ तो आशा. ।

२१. शिष्य गुरु बोलाव्यां थकां 'मस्तकेन वंदामि' इम कह्यां थका 'स्यु कहइ छइ' इम कहइ अनेरा गुरुनी कीर्त्तिनइ त्यजइ, गुरुना गुण न कहइ, आसा. ।

२२. शिष्यनइ आचार्य कहै 'ए काम तू करि' तिवारे शिष्य कहइ 'तूं ही ज कर' अथवा गुरुनइ तुंकारो दे निंदे तो आसा. ।

२३. शिष्य गुरुनइ समीपइ घणो बोलइ तो आसातना ।

२४. शिष्य ते आचार्यनइ लज्जावचन बोलइ अनइ वली इम कहै 'तुम्ह ज कहो छो' इम कहइ अथवा जिसो गुरु वचन कहै तेहवो अपूठो कहइ तो आशा. ।

२५. शिष्य रत्नाधिक वृद्ध व्याख्यान करतां थकां शिष्य कहइ ए सर्व झूठउ तउ आसा. ।

२६. शिष्य गुरुनइं धर्मकथा कहतां शिष्य कहै 'ए तुम्हनइं नथी संभरतउ' तउ आसा. ।

२७. आचार्यादिक कथा कहतां शिष्य भलो मन न करइ एतलइ गुरुनउ उपदेश प्रशंसइ नही तउ आसा. ।

२८. शिष्य गुरुप्रतिं कथा कहतां विचइ भंग पाडइ जे भणी 'गोचरीनी वेला टलि गई, स्युं कीधउ ?' इम कहइ तउ आशातना शिष्यनइ ।

२९. शिष्य गुरुनइ कथा कहतां कथानइ आछेदइ एतलइ श्रोतानउ मन भांजइ, ए पिण आशातना शिष्यनइ ।

३०. शिष्य गुरुनइ कहतां छतां, तिका परिषदा केहवी छइ ? ऊठी नहीं, भेदी नथी सांभलिवा सन्मुख छइ, मांहिथी कोइ विच्छेद पाम्यो नथी एतलै ऊठो कोइ नथी, माहिथी कोई वात पिण न करै छै सांभलिवानो राग छै, ऊठी नथी एहवी पूर्वोक्त छतां आगई जे गुरु वार्ता कहै ते हि ज वली-वली फरी-फरीनइ वार्ता कहइ परषदा आगै तो आशातना शिष्यनइ ।

३१. शिष्य आचार्यनो शय्या-संथारक पगइ करी संघटै एतलै गुरुनें विछांवणे पग लावइ, हाथइ संट्टइ छूंदइं हाथ करी उलोलइ तो आशा. ।

३२. वली शिष्य गुरुनइ शय्या-संथारइ ऊभो रहइ, बइसइ, गुरुना विछांवणा ऊपरी चालइ सूयइ तउ आसा. ।

३३. शिष्य आचार्य थकी ऊंचइ आसणइ समइ आसणइ ऊभो रहइ, बइसइ, सूयइ तउ ते आशातना शिष्यनइं ।

ए निश्चयसुं थविर भगवंतइ तेतीस आसातना कही, तिम हु कहु छुं । तृतीयाध्ययन ।

## [चतुर्थदशा गणिसम्पदध्ययनम्]

[ट.१०] पूर्वले अध्ययनै ३३ आसातना कही । ते आसातना गुरुनइं आचार्यनइ वडेरानइं होइ । आ गुरु आचार्य ८ संपदा करी सहित होइ, ते मेलि ८ संपदा आठ आचार्य गुरुनी कहइ छइ । ते सांभल्यउ मइं – हे आयुष्मन् जंबू ! तिणे भगवंतइ इम कह्यउ – ए जिनशासनने विषै निश्चयसुं थविर भगवंतें ८ प्रकारनी आचार्यनी संपदा कही ।

[ट.११] तिवारइ जंबू कहइ-किसी तिके निश्चय थविर भगवंतइ आठ प्रकारनी आचार्यनी संपदा कही ?

[ट.१२] तिवारइं सुधर्मा स्वामी गुरु कहइ – ए निश्चय थविर भगवंतइ आठ प्रकारनी आचार्यनी संपदा कही, ते कहइ छइ – प्रथम आचारसंपदा १, श्रुत-शास्त्र तेहनी संपदा २, शरीरनी-कायानी संपदा ३, वचननी संपदा ४, वाचना-भणावनी संपदा ५, मतिनी संपदा ६, प्रयोगमतिनी संपदा ७, संग्रहपरिज्ञा नाम तेहनी संपदा ८ ।

[ट.१३] शिष्य पूछै – किसी तिका आचारसंपदा ? तिवारइ गुरु कहइ – आचारसंपदा च्यार प्रकारनी, ते कहइ छइ – १७ सतर भेद संयम, तेहनइ विषइ निश्चल थकउ संयुक्त थकउ रहइ १, अभिमानइं करी रहित जे 'हुं तपस्वी' इम न २ अनियतवृत्ति छै जेहनी उग्रविहारी विचरै ३, वृद्धशील हुवइ वडा तियांनो वैयावच्च करइ ४ ते आचारसंपदा ४ प्रकारनी कही ।

[ट.१४] ते श्रुतवंतनइ होइ, ते मेलि श्रुतनी संपदा कहइ छइ – ते श्रुतसंपदा ४ प्रकारनी कही छै, ते कहइ छइ – बहु-घणा शास्त्र तेहनो जाण होइ १, विचित्रश्रुत ते स्वसमय-परसमयनो जाण हुयइ २, परिचितसूत्रनो जाण एतलइ सूत्रार्थनउ जाण गमानो जाण ३, घोषविशुद्ध उदात्त-अनुदात्तादिक तेहनी शुद्धिनउ जाण एतलइ स्पष्टाक्षर-प्रकटाक्षरनउ उच्चारणहार होय ४, ते श्रुतसंपदा कहीजै ।

[ट.१५] ते श्रुतसंपदा शरीरबलवंतनें होइ, ते मेलि शरीरसंपदा कहइ छइ – ते शरीरसंपदा ४ प्रकारनी कही, ते कहइ छइ – दीर्घपणो-पिहुसपणो ए बिहुं बोलइ युक्त होइ एतलै सुंदराकृति, *यत्राऽऽकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति* इति वचनात् १, बलवंत होय एतलै सर्वार्थनो साधक होय २, थिरसंघयणनो धारक ३, बहुप्रतिपूर्ण इंद्रियनो धारक एतलै प्रतिपूर्ण इंद्री पामइ ४ ते शरीरसंपदा ।

[ट.१६] शरीरसंपदायें करी संयुक्तने वचनसंपदा हूयइ, ते माटइ वचनसंपदा [कहइ छइ] – ते वचनसंपदा ४ प्रकारनी कही, ते कहइ छइ – आदेयवचन ते सर्वनइ ग्राह्यवचन हूयइ, ते सांभलीनइं सर्वजन वचन प्रमाण करै १, मधुरवक्ता होइ एतलइ सर्वजननइं आह्लादकारी वचन कहइ २, अनिसृत ते रागद्वेषादि वचनरहित एतलइ कलुषभाव करी रहित उज्वल वचन बोलइ ३, स्फुट-प्रगट वचन बोलै एतलै जे बोलइ, ते सगला मनुष्य संदेह रहित ४ ते वचनसंपदाना ४ भेद ।

[ट.१७] वचनसंपदावंत एहवो वाचना देवानइ समर्थ होय, ते वासते वाचना कहियइ छइ । ते वाचनासंपदाना ४ प्रकार कह्या, ते कहइ छइ – विदित ते जाणे उदेशै एतलइ शिष्यनइ पारिणामि गुणोपेत जाणी उदेशइ १, जाणीनइं वाएति उपदेश करइ २, सर्वप्रकारइ निर्वापयति कहतां सीखवइ ३, अर्थ सूत्राभिधेय निर्वाहण हेतु पूर्वापरसं[गति मलतुं निर्यापइ तो निर्यापक कहीयइ], ते वाचनासंपदा ।

[ट.१८] ते वाचनासंपदा मतिवंतनइ होय, ते माटै मतिसंपदा कहै छइ । ते मतिसंपदा ४ प्रकारनी कही, ते कहै छइ – अवग्रह मतिसंपदा ते सामान्यपणै अर्थनउ ग्रहिवओ १, ईहा ते विचारीनइ जाणै 'एह पुरुष होइ किंवा न

होइ' इत्यादि २, अपाय ते आलोचीनइ निश्चय करिवो जे 'राजमारगै ए पुरुष छै, परं स्थाणु नथी' ३, अविसारवउ ते धारणामति ४ ।

जे अवग्रहमति छ प्रकारइ कही, ते कहै छइ – तत्काल शिष्य पूछीतइ बोलै [अ]थवा परवादी ए [पूछ्युं अने तत्काल ज ते ग्रहइ, ते क्षिप्र अवग्रह कहीयइ १, एकवार कह्यां अने पंच षट ग्रंथना शत अवग्रह धारइ २], घणे प्रकारे ग्रहवइ, बहुविधइ मुखइ अन्य उच्चरइ, मनमै अन्य चिंतवइ ३, ध्रुव निश्चलपणै ग्रहै, बहुकालै पिण वीसरै नही ४, अनिसृत ते निश्रारहित ग्रंथ ग्रहइ पुस्तकादि विना [धारइ] ५, असंदिग्ध ते निस्संदेह संदेहरहित धारइ, अन्यनइ पिण निस्संदेह करइ ६, ते अवग्रहमति ।

एवं पूर्वोक्त प्रकारइ ईहामतिना पिण ६ भेद इणे ज प्रकार जाणवा, निश्चयमति पिण ।

ते धारणामति ? धारणामति ६ प्रकार[इ] कही, ते कहै छइ – घणउ धारइ १, घणइ प्रकारइ धारइ २, पुराण तत्काल धारइ ३, धारतां दोहिलो ते धारइ ४, पुस्तकादि रहित धारइ ५, संदेहरहित धारइ ६, एतलइ करी मतिसंपदा पूरी कही ।

[ट.१९] ते कुण प्रयोगसंपदा ? ते प्रयोगसंपदा च्यारे प्रकारे कहि[यइ] – पोताना आत्मानइ विषइ जाणिनइ वाद प्रतइ जोडइ, इम जाणै 'एहनें हूं वादे जीपीस्स' १, परिषदा जाणीनइ वाद कहइ जे 'एकलो छै किंवा एहनें कोइ सहाइ छइ' इम जाणी वाद करइ २, पुरुष-क्षेत्र जाणइ, जे 'क्षेत्र माया-कपट सहित छइ, किं साधुनो परिचय छइ' इम जाणीनइ वाद करइ पोतानी शक्तिइं करी ३, वस्तु ते घणा साधुजन ते 'हूं तीए सभा राजानी किंवा अमात्यनी अथवा पुरुष दारुण छै किंवा' अथवा द्रव्य क्षेत्र काल भाव जाणी वाद करइ ४, ते प्रयोगमतिसंपदा ।

[ट.२०] प्रयोगमतिना धरणहार हूयइ, तेहनइ ज संग्रहपरिज्ञातपद हूयइ । कुण ते ? संग्रहपरिज्ञात नाम संपदा च्यार प्रकार कही, ते कहै छइ – घणो जन ते साधुजन होय, ते योग्य बाल-वृद्ध-तपस्वी-ग्लानादिकनइ अर्थइ आहार, वर्षाकालनइ विषइ क्षेत्रप्रतिलेखन एतलइ ग्लानादिकनइ एहवो क्षेत्र योग्य ते प्रतिलेखी विचारी आज्ञादायक १, बहु घणा साधुजननइ पाडिहारु शय्या-संथारक-पाटीयउ-बाजोट प्रमुखनउ दायक होइ एतलइ ग्लानादिकनइ आणी आपइ २, काल ते यथोक्त प्रस्तावइ संध्यायइ [प्र]तिलेखनादिक सन्माननउ कारक होय ३, पोतइ आचार्यपद पाम्यो छै तो पिण त(य)थागुरुनी पूजा-वैयावच्चादि करइ ४, ते संग्रहपरिज्ञा ।

[ट.२१] हिवइ एहवा आचार्यना शिष्य इम आगालि कहीस्यइ ते च्यार प्रकार विनयना अंगीकारक विनयना शीखणहार हूयइ । जिवारइं कोई शिष्य आचार्यपद योग्य हूयइ, ते गुरु तेहनइ आचार्यपद देइ रणरहित कहतां गच्छ [चिंता रहित हुइ । हिवइ ते गुरु विनय सीखावइ -] - आचार विनय १, श्रुतज्ञान तिह विनय करी [सी]खावइ २, विक्षेपणादि विनय करी सीखावइ ३, दोषनो निर्घातन जे विनय तेणइ करी सीखावइ ४ ।

[ट.२२] ते प्रथम आचारविनय कतरे भेदे ? च्यार प्रकारै कह्यउ, ते कहै छइ – १७ सत्तर भेदे संयम, तेहनउ समाचारिवउ, जे अप्रतिलेख्य-अप्रमार्जित सचित्तनो संघट इत्यादि न करिवउ १, १२ भेदे तपनउ समाचरिवो सीखवै २, गच्छनी समाचारी सीखवै ३, एकल्लविहारीनी जे समाचारी ते सीखवइ ४, ते आचारविनय ।

[ट.२३] ते श्रुतविनय कतरे भेदे ? श्रुतविनय च्यार प्रकारे कह्यउ, ते कहै छै – सूत्रनउ पाठ वंचावइ १, सूत्रनो अर्थ वंचावइ २, हित ते इहलोक परदारादि विरमण त्याग, ते वंचावइ ३, समस्त सूत्रार्थ वंचावइ ४, ते श्रुतविनय ।

[ट.२४] कुण ते विक्षेपणाविनय ? विक्षेपणाविनय च्यार प्रकारे कह्यउ, ते कहै छै – जेणइ धर्म नथी जाण्यो

जे मिथ्यात्वी, तेहनइ सम्यक्त्वै आणै १, जिणइ धर्म पूर्वइ जाण्यो छइ, तेहनइ वली सीखवइ २, जिणइ धर्म जाण्यो छइ साधर्मिक तेहनें महाव्रतादि विनयनउ सीखावणहार हूयइ ३, धर्म हूंती जे कठोर हूयइ तेहनइ वली धर्मनइ विषइ पावणहार हूयइ, तिण ही ज धर्मनउ हित वृद्धि होय, सुख होय, क्षेमनइ अर्थइ, मोक्षनइ अर्थइ, परभवसुखनइ अर्थइ धर्मवंत होय इत्यादि बोलनइ अर्थइ उद्यम[वंत होइ] ४, ते विक्षेपणाविनय ।

[ट.२५] ते कुण दोषनिर्घात विनय ? दोष टालिवउ ते दोषनिर्घात विनय च्यार प्रकारे कह्वउ, ते कहै छइ – क्रोध उपनो छै जेहनइ एहवा पुरुषना क्रोधनो विनय करी टालणहार हूयइ १, दुष्ट कहतां कषाय-विषयादि तेहनो टालणहार हूयइ २, कांक्षित जे परशास्त्रनउ अभिलाष, तेहना कांक्षितनउ छेदणहार हूयइ ३, आत्मा सुप्रणिधित कहतां पूर्वइ कह्वा जे स्थानक तेहनइ विषै प्रवर्तावणहार हूयइ ४, ते दोषनिर्घात विनय ।

[ट.२६] जेहनइ ए कह्वा तेहनइ तीज गुणें करी सहित जे शिष्य तेहनइ ए आगलि कहिस्यै ते विनयप्रतिपत्ति कहतां विनयनउ अंगीकार करिवउ, आचार्यनउ विनय अंगीकार करइ, ते च्यार प्रकारे कह्वउ, ते कहै छइ – शीत करी सीदातानइ उपकरइ-स्थिर करइ, ते उपगरण, तेहनो उपार्जणहार हूयइं १, साहायकारी हूयै २, वर्णसंज्वलन सद्भूत गुणोत्कीर्तन करै ३, भार ते गच्छनो भार तेहनो आरोपवो ते भारपच्चोरुहणता ४ ।

[ट.२७] कुण ते उपकरणोत्पादन ? च्यार प्रकारे कह्वउ, ते कहै छइ – अनुत्पन्न पूर्वै नथी पाम्या एहवा उपकरणनो उत्पादक होय जे भणी वडेंरानें आण दैणाइ १, जूना वस्तु तेहनउ चौरादिकथकी रक्षक होय, व्याख्यान समय चोलपट्टादिकनो गोपवणहार हूयइ २, अल्पोपधिनो धारक जे साधु तेहनइं सीदातो जाणी उपगार करी उद्धरइ साहाय्य देवइ ३, यथाविधिनो भक्त होय एतलइ गुरुना वचननइ विषइ अशुद्धता न होय ४, ते उपकरणोत्पादन संपदा ।

[ट.२८] कुण ते साहायसंपदा ? च्यार प्रकार कहीयइ, ते कहै छइ – अनुलोम ते जिम गुरु कहै तिम कहइ १, अनुलोम क्रियानो करणहार एतलै विश्रामणादि सुख थाय तिम करै २, प्रतिरूप कार्यसंस्पर्शना एतलै जेतलो गुरुनइं रुचइ तेतली विश्रामण करै३, गुरु तियां कही जे वार्ता ते आदरै ४, ते साहाय्यता ।

[ट.२९] कुण ते वर्णसंज्वलनता ? च्यारे प्रकारे कही, ते कहै छइ – जे आचार्यनइं ज्ञानादि गुण छै तेहनो कथक होय १, जे आचार्यनो अवर्णवाद बोलै तेहना वचननो हणणहार हूयइ २, जे आचार्यनी प्रशंसानो कारक होय तेहनइ हर्षनउ उपजावणहार होय ३, आत्मा जे वृद्ध आचार्य तेहनो सेवा कारक होय ४, ते वर्णसंज्वलनता ।

[ट.३०] कुण ते भारप्रत्यारोपणता ? गुरु कहै – च्यार प्रकारे कही, ते कहै छइ – असंग्रहीत जे परजन क्रोधादिकइं करी गच्छमाहिथी नींकल्यो तेहने वली गच्छमाहे अणावै १, तथा शिष्यनइं जे आचारगोचर तेहनो शिक्षापक होय जे भणी इम कार्य काम कीजै २, साधर्मिक जे रोगादिकइं करी ग्लान पामता एहवा जे साधु आप सरीखा तियांरी छतै बल वेयावच्च सेवा करै एतलै जे कोई रोगी साधु होय तेहनइ औषध-वस्त्र-आहार आणी आपै ३, आप सरीखा जे साधु ते साधर्मिक कहियै, तियांने विरोध वचन उपनइं थकइ तिहां अनिश्रितोपाश्रित एतलै मनमइ बुरो न मानै, अपक्षग्राही होय, मध्यस्थ भाव तिणे करी सहित होय, सम्यग् प्रकारै विहार करतउ जे ऊपनो क्रोधादिक तेहनइ क्षमावानइ अर्थइ उपसमावानइ अर्थइ सदा उद्यमवंत होय ४, हिवइ केणइ प्रकारै उपार्जइ साधर्मिकपणो ? ते कहै छइ – अल्प शब्द अभावार्थ प्रवेदित करइ, क्रोध न करै – अशुभ वचन न कहै, कलह न करै, तुंकार वचने रहित, १७ भेदे संयम तेणें सहित, संवरबहुल, समाधिबहुल, अप्रमत्त, संयमे करी तपै करी आत्मानइं भावता थका विचरइ एहवो चिंतवइं, ते भारप्रत्यारोपणता ।

ए पूर्वोक्त प्रकारै खलु-निश्चै थविर भगवंते आठ प्रकारनी गण(णि) संपदा कही । चउथी दशा समाप्ता ।

## [पञ्चमदशा चित्तसमाधिस्थानाध्ययनम्]

[ट.३१] सांभल्यो मइं हे आयुष्मन् ! तिण भगवंतइ इम कह्यो – इण जिनशासनइ [विषइ] थविर भगवंते दश चित्तनइं जिणें करी समाधि ऊपजइ तेहना स्थानक कह्या ।

[ट.३२] किसा खलु थविर भगवंते दस समाधिना स्थानक कह्या ?

[ट.३३] ए निश्चइ थविर भगवंते चित्तसमाधिना स्थानक कह्या, ते कहै छइ – तिणइ कालै तिणइ समय वाणियग्राम नामा नगर हूयउ । इहां नगरनो वर्णक जाणिवो । तिण वाणियग्राम नगरनइं बाहिर उत्तरनइ पूर्व विचै ईशानकूण तिहां दूतिपलाश नामा चैत्य हूयउ । वर्णन । जितशत्रु राजा, तेहनइं धारणी नामइं पट्टराणी यावत् भगवंतनउ आगमन-समवसरण जाणिवो जिम उववाईमै कह्यउ तिम । जिहां अशोकवृक्ष छै, पृथविमय शिलापट्ट छइ, तिण अशोकवृक्ष हेठै तिहां स्वामी समोसर्या । परिषदा १२ आवी, धर्म कह्यउ । १२ परिषदा जिम आवी तिम परही गई ।

[ट.३४] अहो आर्यो ! श्रमण भगवंत महावीर सर्व श्रमण निर्ग्रंथ-निर्ग्रंथी आमंत्रीनइ इम कहै – इहां जिनशासननें विषै निश्चयसुं अहो आर्यो ! निर्ग्रंथनइ निर्ग्रंथीनइ ईर्यासमतानइं भाषासमतानइं एषणासमतानइं, भांडा प्रमुखनउ जे लेईनइं मेलिवउ तिहां समतानइं, पुरीष-मूत्र-श्लेष्म-मल-नासिकामल ते परठवतांणि समतानइ, मनसमतानइं वचनसमतानइं कायसमतानइं मनोगुप्तनइं वचनगुप्तिनइं कायगुप्तिनइं गुप्तीन्द्रियानइं, नव वाडि पालै ते गुप्तब्रह्मचारीनइ, आत्मार्थीनइ, आत्मानइं हित वांछइ तेहनइं, मन-वचन-कायाना योग ते आत्मयोग, आत्मानइं पराक्रम छै जेहनो ते आत्मपराक्रमनइं, पाक्षिक जे पौषध ते छइ ते पाक्षिकपोषध तिहां जे समाधि पाम्या छै अथवा पक्ष ते दिन जिवारै उपवास करै ते दिन, धर्मध्यान-शुक्लध्यान ते ध्यावतानइं एहवानइं आगलि कहिस्यइं ते दश चित्तसमाधिना स्थानक पूर्वइं कदे ऊपजौ नहीं ते ऊपजइ, ते कहै छइ –

१. धर्म चिंता {ऊपनां थकां विषय कहतां देषिवुं} पूर्वइं न ऊपनो ते जिवारइं ऊपजै सर्वधर्म ते वादीना पूर्वापरविरुद्ध जाणी करीनइं कुसमय परवादीना मत छांडी श्रीजिनधर्म अंगीकार करै ।

२. श्रीजिनधर्म मोक्ष हेतु सम्यक् प्रकारै जाणै ते संज्ञी ज्ञान कहियइं अथवा जातिस्मरण ज्ञान ते पूर्वइ ऊपनो नथी ते सम्यक् प्रकारै ऊपजै 'हूं पूर्वभवै ए हुंतो' इम समरै ।

३. स्वप्नदर्शन जिम भगवतीमै कह्यो तिम यथातथ्य असमुत्पन्न पूर्वइ ऊपना नथी ते ऊपजइ, श्रीमहावीरनी परइ १० स्वप्न भगवंतै देख्या, यथातथ्य स्वप्न देखइ जेहवो देखइ तेहवउ फलइ, ते यथातथ्य स्वप्न देखीनइ जातिस्मरण पूर्वइं ऊपनो न होय ते ऊपजइ, पोतानी पूर्वली जाति समरइ ।

४. देवनउ जे दर्शन पूर्वइ देख्यो नथी ते देखइ, दिव्य जे देवनी ऋद्धि,दिव्य जे देवनी द्युति, दिव्य जे देवतानो अनुभव ते देखइ ।

५. अवधिज्ञान विषइ पूर्वइ न ऊपनो ते ऊपजइ, अवधिज्ञानइं लोक ज्ञेयवस्तु देखइ जाणइ ।

६. सामान्यपणै देखै ते अवधिदर्शन विषय, पूर्वइ जे ऊपनो नही ते ऊपजइ, अवधिदर्शनइं करी लोक देखइ ।

७. मनना पर्यायनउ देखिवउ ते ज्ञानै करी मन पर्यायज्ञान विषय पूर्वइ ऊपनो नही ते ऊपजै, अढाईद्वीप जंबूद्वीप-धातकीखंड-पुष्करार्ध एवं २$\frac{१}{२}$, दोय समुद्र लवण-कालोदधिसमुद्र संज्ञीया पंचेंद्रि पर्याप्ता तियांरा मनोगत भावा जाणइ ।

८. केवलज्ञान विषय पूर्वइ ऊपनो नही ते ऊपजइ, केवलकल्प लोकालोकनो भाव जाणइ ।

९. केवल सामान्य प्रकारइं देखवो ते केवलदर्शन पूर्वइ ऊपनो नही ते ऊपजै, केवलकल्प लोकालोक देखइ ।

१०. केवलज्ञान सहित मरवुं ते केवलमरण कहीयै, पूर्वइ ऊपनो नही ते ऊपजै, सर्व दुःख प्रक्षीण थाय कर्मक्षय रूप दुःख टालिवानइ अर्थइ ।

[ट.३६] राग-द्वेष रहित ते शुद्ध चित्त, ते ओजचित्तै ग्रहीनइं प्रधान[1] जे धर्मध्यान स.[2] करइ, धर्मनइ विषइ रह्यो थको अदीनमन थको मोक्षनइं विषै जाय ॥१॥

ण शब्द निषेधइ, चित्त-ज्ञान समुदाय-ग्रहीनइं, स्यउ ? ते ज्ञान वार-वार लोकने विषै जाय, पोतानउ जे उत्तम स्थानक जे 'हूं परभवै ए हूंतउ' ते भलउ ज्ञानी जातिस्मरणइं करी जाणइ ॥२॥

यथातथ्य ते स्वप्न साचो तुरत देखइ संवरद्वारनो धणी सर्व संसार रूप समुद्रइ [तरइ] दुःख हूंती मूंकाइं ॥३॥

प्रांत आहारप्रति भजइ, विविक्त ते पशुपंडकरहित सयनासन सेवइ, अल्पाहारी छै दांत कहतां क्षमावंत छै एहवानइं देवता वैमानिकवासी यथास्वरूप आत्मा देखाडै ॥४॥

सर्वकाम विषयादिकथी निवर्त्यानइ भैरव रौद्र जे भय ते क्षमतानइ तिवारइं तेहनइं अवधिज्ञान हूंयइ, संयतनइं तपस्वी तेहनइं ॥५॥

तपइं करी हणी छइ तृष्णादि जेणइं तेहनइं अवधिदर्शन सूजै, ऊर्ध्व अध तिरछी दिशइं सर्ववस्तु देखइ ॥६॥

भलै प्रकारइ समाहृत चित्त छइ लेश्या जिणइं, वितर्कइ करी रहित जे साधु सर्व संसार थकी मूंकाणानइं, आत्मा जे जीव ज्ञानें करी मनपर्याय इम जाणइ ॥७॥

जिवारइं तेहनइं ज्ञानावरणी कर्म सर्व क्षय गयो होय, तिवारइं लोकालोक जिन जाणइ केवली ॥८॥

जिवारइं दर्शनावरणी कर्म सर्व क्षय गयो होय तिवारइं १४ राजलोक अनइ अलोक ते प्रतइ वीतराग जाणइ केवलज्ञानी थको ॥७॥

भिक्षुनी १२ बारह प्रतिमा विशुद्ध थकै मोहनीकर्म क्षय गयइ हूंयइ समस्त लोकालोक देखइ समाधिवंत थको ॥१०॥

यथा दृष्टांतइ, मस्तकइ सूची हणी थकी हणाइ तालवृक्ष, इण दृष्टांतइ ८ कर्म हणै दुर्जय मोहनीकर्म क्षय जाय तिवारै सर्वकर्म खपै ॥११॥

सेनापति कटकनो धणी नाठइ थकइ जिम तेनी सेना पिण न्हासै, इण दृष्टांतइ कर्मसेना न्हासइ मोहनीकर्म क्षय गइ हूतइ ॥१२॥

धूम्रइ करी रहित जे अग्नि एहवी जाज्वलमांन इंधण प्रति ज्वालइ, इम ७ कर्म ते क्षय पामइं जिवारइ मोहनी कर्म क्षय जाय ॥१३॥

सूको छै मूल जेहनउ एहवो जे वृक्ष ते सींची जै पर वले न ऊगइ, इम ७ शेष वली कर्म प्रगट न होय जीवारै मोहनी कर्म खपइ ॥१४॥

---

1. अत्र टबार्थकारेण 'पज्झाणं' इति पाठः स्वीकृतः ।

2. 'समणुपस्सति' इत्यत्र सूत्रपाठः भवेत् ।

जिम दग्ध बीज सेक्यउ चिणा प्रमुख ते वायो थको वली अंकूरित न होय, इम कर्म रूप बीज गयै थकै वलि संसारमै जन्मरूप अंकूर प्रगटै नहीं ॥१५॥

छांडीनइं औदारिक शरीर प्रति नामकर्म-गोत्रकर्म प्रति केवली आउखाकर्म वेदनीकर्मप्रति, ए ४ कर्म छेदीनइं होय पापरहित ॥१६॥

इम सम्यक् जाणीनइ चित्तसमाधि हे आयुष्मन् ! मोक्षश्रेणिनी सोधि पामीनइ आत्मासमाधि देखइ ॥१७॥ इम कहूं छुं । पंचमाध्ययन समाप्त ।

## [षष्ठदशा उपासकप्रतिमाध्ययनम्]

[ट.३७-४०] पूर्वाध्ययनइं साधुमार्ग समाधिरूप कह्यो । हिवइ प्रतिमाधिकारः सांभल्यो मे हे आयुष्मन् ! तेणइं भगवंतइ इम कह्यउ इहां थविर भगवंतइ इग्यारइ श्रावकनी प्रतिमा अभिग्रहरूप परूपी । किसी तिके ? ए निश्चइ थविर भगवंतइ इग्यारइ श्रावकनी प्रतिमा कही, ते कहइ छइ –

तिहां पहली प्रतिमा दर्शनप्रतिमा कहियइ । ते दर्शन तउ मिथ्यात्वघातक, ते वास्तइ मिथ्यात्वनउ हेतु कारण कहै – अक्रियावादी थाइ, नास्ति भाव मानइ ते अक्रियावादी कहियै । हितनउ वक्ता न होय, हितनउ ज्ञान न होय, हितनउ देखक न होय, सम्यक्त्वनो वादी न होय, ते मोक्षनउ पिण वक्ता नथी, ते छता देवलोक तियांनो वक्ता नथी, इहलोक नथी, परलोक नथी, माता नथी, पिता नथी, तीर्थंकर नथी, नथी चक्रवर्ती, नथी बलदेव, नथी वासुदेव, नथी नरक, नथी तिर्यंच, पुण्य ते सुकृत पाप ते दुकृत तेहनो भलउ भूंडो फल नथी, सुचीर्ण शुभकर्म तेहनो भोगववो नथी, पुण्य-पाप ए फलता नथी सदा फलवर्जित छइ, जीव वली मरीनइं पुनः ऊपजइ नही, नारकी नथी, सिद्ध-मोक्ष नथी, ते मिथ्यात्व एहवी वातनो वक्ता, ए पूर्वोक्त प्रज्ञा, इम देखक, छंद ते अभिप्राय राग-स्नेहादि तिहां अभिनिविष्ट-थाप्यउ छइ चित्त जेणइ ।

[ट.४१-४२] ते होय महाइच्छा-कर्मबंधनो चिंतक, महाआरंभी, महापरिग्रहनो धारक, धर्मनइ अनु-पूठै न रहइ ते अधर्मानुग कहियइ, अधर्मसेवक, अधर्मार्थी, अधर्मनउ कथक, अधर्मनो देखक होय, अधर्मे करी जे आजीविका करै, अधर्मनउ उद्यम करै ते अधर्मप्रज्वलन कहियइ, अधर्मनो स्वभाव छै जेहनो, अधर्मनउ समुदाय छै जेहनइ, अधर्मे करी आजीविका करता विचरइ । जीव हणइ, छैदइ, भेदइ, अंत करइ, लोहियइं खरड्या हाथ, चंड, रोद्र, क्षुद्रकारक, अणविमास्या पापकर्म कारक, उत्कर्ष, वंचन द्रोहकारी, माया-नियडी कहतां ठगनी वृत्ति, कूडकपटकारी, वस्तु भेलसेली करै, ते संप्रयोग कहियइ इत्यादि कर्मकारी, दुष्ट स्वभावनो धणी, दुष्टाचार, दुष्टविचारणा, दुष्टव्रतधारक, केहनो कीधउ उपकार ते लेखवै नही, परस्त्रीगमन करै, निर्गुण, मर्यादा करी रहित, पच्चक्खाणइं करी वर्जित, पोषधोपवासे करी रहित ते असाधु ।

[ट.४३] सर्व प्राणातिपातहूती विरम्या नथी जावजीवतांई, मृषावादादि ४ थी विरम्या नथी, सर्व क्रोधथी, सर्वमानथी, सर्वमायाथी, सर्वलोभथी, सर्वप्रेमरागथी, सर्वद्वेषथी, कलहथी, अछता दोषनो कहिवउ, पैसुन्य ते छाना दोष प्रगटिवा, परनिंद्या, अरतिरतिथी, माया सहित जे मृषावाद ते [माया]मृषा कहियइ, मिथ्यातदर्शन सल्यथी इत्यादिक जे १८ अठारह पापस्थानकहूंती निवर्त्या नथी जावजीवतांई । सर्वकषायथी, दंतधावनथी, स्नानथी, मर्दन-विलेपन-शब्द-स्पर्श-रस-रूप-गंध-माल्य-अलंकारथी विरम्या नथी जावजीवतांई । सगला सकट-रथ-यान, पुरुष उपाडै ते युग डोली, गिलि-थिलि, पालखी-शिबिका, स्पंदमाणी-शिबिकाविशेष, शयन-पल्यंकादि, आसन-गादी प्रमुख, वाहन-वेसरादि, भोजन-ओदनादि, घणा भाजनथी विरम्या नथी जावजीव लगि । अणविमास्या

कार्यना कारक । सर्व अस्व-हस्ती-गाय-भइसि-घोडा-दासी-दास-कर्मकर-चाकरपाल इत्यादिक वस्तुथी विरम्या नथी जावजीव लगि । सर्व क्रय मोल लेवो, विक्रय वेचवउ, मास-अर्द्धमास तेहना व्यवहारथी निवर्त्या नथी सर्व(जावजीव लगि) । सर्व हिरण्य-सुवर्ण, धन ते गणिमादि, धान २४, मोती-संख-शिला-प्रवाल तेहथी विरम्या नथी जावजीव लगि । सर्व-सगला कूडा तोला, कूडा माणा तेहथी विरम्या नथी । सर्वथा आरंभ ते घातनइं अर्थइ यष्टि, समारंभ ते घातनक(इ) अर्थइ प्रहार, ते हूंती विरम्या नथी । सगला पचन-पाचनथी विरम्या नथी । सर्व करण-करावणहुंती । सर्व कूटण-पीटण-तर्जवाथी ताडवाथी वध-बंधन-परिक्लेशथी मूंकाणा नथी जावजीव लगि । जे, अपिशब्द संभावनायइ, तथाप्रकारना अनेरा पिण सावद्य सहित वर्तइ ते सावद्य जाणइ नही, कर्म करइ, परप्राणीना जे परितापन कार्य करइ, तेहथकी पिण विरम्या नथी जावजीव लगइ ।

[ट.४४] जिम दृष्टांतइ, कोइ पुरुष चिणा-मसूर-तिल-मूंग-उडद-निप्फाव-कुलत्थ-अलसी इत्यादि २४ धान तेहनइ प्रयत्नइ करी क्रूर थकउ ते मिथ्यादंड प्रयुंजइ, निरपराधी जीव मारइ, एणइ दृष्टांतइं तथाप्रकारना जै पुरुष ते एहवा निरपराधी जीवनइं हणइं तीतर-वटेर-लावा-हाल-मृग-भैसा-सूवर-गाय-गोह-कूर्म-सरीसृप साप आदि देईनइ अयत थकओ क्रूर दंड करइ, मिथ्यादंड ते निरपराध जीव हणइ ।

[ट.४५] जेतली तेहनइ बाहिरली परिषदा होय 'जेहवउ राजा तेहवी प्रजा' दृष्टांतइ करी जिम छै तिम कहै छइ, ते कहइ छइ – दास, दासी, पुत्र, प्रेक्ष ते चाकर, जीमणमइं वडो कार्य करै, भाग ते छट्ठउ, सातमउ व्यापारमइं कर्म करइ ते प्रसिद्ध, भोगपुरुष दासादिक-तेहनइ पिण अन्यतर-प्रस्तावनइ विषइ यथालघु-अल्पापराध कीधइ थकइ ते ऊपर आपणपइ पोतइ जे मोटो दंड प्रयुंजइ । ते कहइ छइ – एहनइं दंडउ, एहनइं मुंडन करो, एहनइं तर्जना करउ, कांवइं करी ताडउ, एहनइं बाहुबंधन करउ, एहनइ बेडी बंधन करउ, खोडामाहि घालउ, एहनइं बंदीखानामइ भाखसीमें नांखउ, एहनइ नउलना जे युगल तेहमइ संकोचित-मोडित करवो, एहनइ हस्त छिन्न करउ, पगछेद करउ, एहनउ कर्णछेद करउ, एहनउ नाक छेदो, एहनो होठ छेदो, एहनउ सीस छेदो, एहनउ मुख छेदो, एहनइ ब्रह्मसूत्राकार छेदउ एतलइ जनोईनइ आकार छेदो, एहनउ हृदयमध्य कापो, एहनो नयण-दांत-वदन-जीभ एतला वांना उपाडि नांखउ, उलंबित कूया-नदीप्रमुखमइ लांबो करो, एहनइ घसउ छगणादिकइ, आंबांनी परै घोलो मथो, एहनइ शूलीयइ परोवउ, एहनइ सूलीयइ भेदउ, एहनइ शस्त्रइ छेदीनइ क्षार द्यो चोरनी वृत्ति करो, एहनइं शूलीयइं दर्भवृत्ति करउ डाभइ करीनइं कापो, एहनइं सीहनइं पूंछइ बांधो, एहनइं वृषभनइं पूंछइं बांधो, इणप्रतइं कडिइं अग्नि बांधी बालो, ए दासादिकनइं काकनो मांस खवाडउ, एहनइं भातपाणीनो निरोध करो भूखां मारो, एहनइं जावजीव लगि बांध्यो राखो, एहनइं अन्यतर ते मनमानइं ते अशुभ कुमारण करी मारो ।

[ट.४६] जे वली सर्व कहुँ तेहनइ वली अभ्यंतरनी परषदा, ते पिण क्रूरकर्मनी करणहार हुयइ, ते कहै – पोतानी माता, पिता अथवा बहिन, भार्या, पुत्री, बेटानी वहू, ते संघातै वसतां ते मध्ये किणहेक अन्यतर कोइक जीवनो यथालघु तथा मोटो अपराध कियां थकां ते पोतइ ज ते मातादिकनइ अपराध आव्यां थकां दंड द्यइ, ते कहइ छइ – ताढा पाणीमैं एह मातादिकनी काया बोलउ, उष्णोदक ते उण्हु पाणी तेणइं करी शरीर उसिंचित्ता कहतां छांटउ, अग्नि करी ते मातानी कायादिकनो बालणहार हुयइ, जोत्रइं करी, वेत्रइं करी, वे(ने)त्र करी, कसा ते ताजणे करी, राढु करी, लता ते कंब तेणें करी, पसवाडानइ विषइ एतले वस्तु करी प्रहारनो देणहार हुयइं, लाकडीयइं करी, हाडइं करी, मूंठीयइं करी, नांन्हा काकराए करी, घडानइं ठीकरइ करीनइं, इणे करीनइं शरीरनो मारणहार हूयइं ।

[ट.४७] इम ते तथाप्रकारनो पुरुष मातापितादि संघातइं इम वसतां ते दुर्मन थायें एतलै मननी असात पामै जिम [मां]जारनै देखी मूषक दुर्मन थायै अनइं ते मांजारनो साथी मांजार जिम वेगलो जाय तिवारइ मूषक मनमइं हर्ष

पामइ इम ते पिण मातादिक संतोष पामै जिवारइ ते किहाई देशंतर गयइ थकइ ।

[ट.४८] ए पूर्वोक्त प्रकारइं पुरुष दंडगुरु दंड जे आगलि कह्यो छइं ते दंड प्राणीनइं अहित ए लोकनइं विषइ, अहित परलोकनइं विषइ, ते दुक्ख उपजावै, शोक उपजावै, अवयव पीडइ, तृप्यति तापै, ताडइ, परतपावै । ते झूरवै करी तृपवै करी पीटवै करी परितापन-वध-बंधन करिनइ क्लेशइं करीनइं ते अप्रतिविरता होइं विरमइ नही ।

[ट.४९-५०] इम पूर्वोक्त प्रकारै बाहिरली अभ्यंतरनी परषदाना गुरुदंडनो करणहार कामनइ विषइ मोहित मूर्च्छित मूढ थको अतृपता थको यावत् वर्ष च्यार पंच अथवा मास, छ दश मास-वर्षनी संख्यायइं थोडो काल अथवा घणो काल भोगवीनइं कामभोग, उपार्जीनइं वैरना आयतन स्थानक सम्यक् प्रकारइ घणा मेलीनइ घणा पापकर्म प्राहइं, संभारकृत कहतां प्रेर्यइ थकइ ते, यथा दृष्टांतइ, लोह तेहनो गोलो पथरनो जे गोलो पाणीमइं घाल्यां थका धरतीनइं नीचै जायनें बइठइ, इणइ दृष्टांतइं ते पूर्वोक्त पुरुष वज्रनी परै पापै करीनइं भारी, पूर्वइ बांध्या जे कर्म ते घणा छइ, पापकर्दमइं करी बहुल, वैरइं करी भारी, कपट माया आसातनायइ करी बहुल, अप्रतीत-अविश्वास तेणइं करी बहुल, प्राहइं प्रमादइं करी त्रसजीवनो घातक, एहवो पापी कालमासइं काल करीनइं धरती नीचै अतिवत्तिता कहतां योजनसहस्र मूंकीनइ रत्नप्रभादिक नरक पृथवीये तिहांनइं ऊपजवो होय छइ ।

[ट.५१-५२] तिहां नरकावास छै । ते केहा छइ ? मांहि वाटला छइ, बाहिर चउरंस छइ नीचली पृथ्वी पाछणा सरीखी तिहां रह्या छइ, नित्य-सदाई अंधकारइं करी व्याप्त छइ, गया छइ ग्रह-चंद्र-सूर्य-नक्षत्र-जोतिषीनी प्रभा जिहां, मेद-वसा-मंस-लोही-कुह्वत मांस एहवइ कर्दमइं करी लेपाणा छइ, अशुद्ध वास छइ, महादुर्गंध अहिमडेति वा गोमडेति वा धमती अग्नि ते सरीखो वर्ण छइ, महाकर्कस फरस छे, सहतां दोहिला भूंडा नरकावासा छइ । भूंडी नरकनइ विषइ वेदना । नही तिहां नरकइं नारकीनइ निद्रा, नही प्रचला पिण नहीं, जे बइठां निद्रा आवै ते प्रचला, नही श्रुति, नही संतोष, नही धृति, एतला वांना ते न पामइ । ते नारकीनइ तिहां उज्जल विस्तीर्ण उत्कृष्टी कर्कश कटुक दुक्ख दुर्ग तीव्र सहता दोहिली इसी वेदना नरकनइ विषइ नारकी तिके महावेदना दोहरी सहता विचरइ ।

[ट.५३] ते, यथा दृष्टांतइ, वृक्ष होय पर्वतनइ अग्रभागइ ऊपनो, मूल जेहनो पोलो छै अथवा छेदो अग्र-आगै ते ऊपरी शाखा-प्रतिशाखा थाइ, ते भारी थको जे दिशि नीचो ते दिशि दुर्गत गर्तादि बहू पइखइ, ते दिशइ विषम होय ते दिशइं पडइ नीचो, इणइ दृष्टांतइ पूर्वोक्त पुरुष ऊपनो थको मरी नारकीमइं पडै । तिहांथी नींकली गर्भ थकी गर्भ पामै, जन्मथकी वली जन्म पामइ, मरणथकी मरण पामै, दुःखथकी दुःख पामै, दक्षिणदिशिगामी नारकी होय क्रूरकर्मकारी थको कृष्णपक्षिक ते अर्द्धपुद्गल उपरांत संसारी आगमियइ कालइ नारकीथकी नींकली दुर्लभबोधिपणो पामै एतलै सम्यक्त्व पामी न सकै । ए पूर्वोक्त अवगुणे करी सहित ते अक्रियावादी कहियइ ।

[ट.५४-५६] हिवइ क्रियावादीनो लक्षण कहै [छै] – ए पूर्वोक्तथी विपरीत लक्षण हेयोपादेय वस्तुनो वक्ता आहितप्रज्ञान ते हेयोपादेय तेहनो वादी कथको, दर्शी, सत्यवक्ता, नित्यमोक्षनो वक्ता, छता परलोकनो वक्ता, छइ इहलोक छइ परलोक छइ पिता छइ माता छइ भगवंत छइ चक्रवर्ति बलदेव छइ वासुदेव, छइ पुन्य-पापनो फलवृत्तिविशेष पुण्य सुखदाता पाप दुखदाता, सुचीर्ण कर्मनउ सुचीर्ण फल होय एतले भला पुन्यथी भलुं थायइ, भूंडा कर्म भूंडा फलना दायक होय, सफल पुन्य अफल पाप, जीव गत्यागति जाय आवै, नारकी छइ देवता छइ मुक्तिसिला छइ । ते क्रियावादी इम वार्ता वक्ता, इम तेहनी प्रज्ञा, इम दर्शी, अतिधर्मरागइ थाप्यो छै चित्त जिणइ, वली ते होय मोटी इच्छानो धणी, यावत् ते उत्तरगामी नारकी होय एतलै अर्द्धपुद्गली ते शुक्लपक्षी, तिहांथी नींकलीनइ आगमियै कालै सुलभ सम्यक्त्व तेहनइं हूयइ, एह गुणे सहित ते क्रियावादी ।

[ट.५७] सत्यधर्म वीतरागनो तेहनइ विषइ जेहनी रुचि छै ते पुरुषनइ घणो शिलव्रत गुणवेरमण रागादिकथी प्रत्याख्यान जेहवा छइ पोषध उपवास ए शीलादि निस्संक सम्यक् प्रकारइ तेहवा प्रस्थापित न होय एतलै सम्यक्त्व राखइ धरै परं शीलादि धरै नही । ते पहिली प्रतिमा श्रावकनी ॥१॥

[ट.५८] हिवइ बीजी प्रतिमा कहै, प्रतिज्ञारूप ते कहियइ, ते बीजी प्रतिमा कहै छइ- सत्यधर्म भगवंतनो तेहनइ विषइ रुचि होय, तेहनइ शीलव्रत-गुणव्रत-विरमण-रागादिकथी प्रत्याख्यान-पोषध-उपवास सम्यक् प्रकारइ प्रस्थाप्या हूयइ एतलै ते करै छै अनइं सामाइक जे समता भाव १४ चवदह नियमनो करिवो ते देशावगासिक, तेहनो सम्यक् प्रकारइ पालक न होय एतलै ते न आदरै, ते बीजी श्रावकनी प्रतिमा ॥२॥

[ट.५९] हिवइ त्रीजी – जीवादि नवतत्त्वनइ विषइ ते रुचि होइ, तेहनइ शीलव्रत-गुणव्रत-वेरमण-पोषधोपवास ते सम्यक् प्रकारइ आदरइ, धरइ, ते सामाइक देशावगासिक ते पिण सम्यक् प्रकारइ पालै, ते गृहस्थ चउदस-आठम-पूनिम-अमावास्यायइ ए ४ तिथिनइ विषइ प्रतिपूर्ण पोषध तेहनो पालक न होय एतलइ ए तिथिइ पोसो न करइ, ते त्रीजी श्रावकनी प्रतिमा ॥३॥

[ट.६०] हिवइ चउथी श्रावकनी प्रतिमा कहइ छइ – भगवंतरा धर्मनी रुचि हूयइ, तेहनइ शीलव्रत-गुणव्रत यावत् सम्यक् थाप्या हूयइ, ते सामाइक-देशावगासिक प्रतिं सम्यक्पणइ पालक होय, ते चउदिशइ-आठिम-अमावस्या-पूर्णमासीयइ पूरो पोषध ते आठ प्रहर सम्यक्प्रकारइ धरइ पालइ, ते श्रावक जे दिवसइ उपवास कर्यउ होइ ते दिवस रात्रिइ प्रतिमा करइ ते अहोरात्रिनउ काउसग्ग सम्यक्प्रकारइ पालै नहीं एतलै पूर्वोक्त सर्व वस्तु करइ पर अहोरात्रिनो काउसग न करइ, ते चउथी श्रावकनी प्रतिमा ॥४॥

[ट.६१] हिवइ श्रावकनी पंचमी प्रतिमा कहइ छइ – जिनधर्म नवतत्वनी रुचि हूयइ, तेहनइ शीलव्रतादि सम्यक्प्रकारइ प्रतिलेख्या होय एतलइ अंगीकार कर्या होय, ते श्रावक सामाइकपोषधादिकनउ पिण पालक होय, ते चतुर्दशी प्रमुख ४ तिथिनइ विषइ पोषध पिण करइ अनइ ए विशेष एकरात्रिकी प्रतिमा जे जिण दिन उपवास कीधो होय तिण दिन अनइ रात्रिइ काउस्सग्ग लेइ ऊभो रहइ अभिग्रह पालइ । ते श्रावक वली स्नान न करइ, विकृतभोजी प्रासुक अन्न खाइ, रात्रिभोजन टालइ, आगलि-पाछलि माउलि-काछडी ते वालइ अथवा काछ न द्ये, पांच मास लगि दिनइ ब्रह्मचर्य पालइ, रात्रिइ मैथुननी मर्यादा करइ एक १, २ अथवा ३ वार । ते श्रावक ए पूर्वोक्त विहार ते सेविवइ करीनइ विचरतो थकउ जघन्य एकदिवस बिदिवस लगि तीनदिवस लगि असक्त थकउ अनइ उत्किसटो पांचमासताइ विचरइ, ते पांचमी श्रावकनी प्रतिमा ॥५॥

[ट.६२] हिवइ छट्ठी श्रावकनी प्रतिमा – सत्यधर्मनी रुचि होय अथवा सर्वभगवंतनइ धर्म रुचइ । ते पूर्वोक्त लक्षण एकरात्रिकी प्रतिमा सम्यक्पणइ पालइ । ते श्रावक स्नान-मज्जन न करइ, प्रासुक अन्न खाय, काछडी न वालइ । ए विशेष रात्रि-दिवस ब्रह्मचर्य पालइ, अभिग्रहतांइ । सचित्त आहार जिणइ पचख्यउ न होय ते श्रावक इसइं आचारइ विचरतउ थकउ एगदिवस बिदिवस तीनदिवस यावत् उत्कृष्टो छ मासतांइ विचरइ । छट्ठी प्रतिमा ॥६॥

[ट.६३] हिवइ सातमि श्रावकनी प्रतिमा – सत्यधर्मनी रुचि होय यावत् रात्रि-दिवस नववाडि सहित ब्रह्मचर्य पालइ । सचित्त आहार जिणइ छांड्यो छइ । आरंभ ते पोतइ तज्यउ नथी, ते श्रावक इसइ आचारइ विचरतउ थको अशक्त होय तउ एकदिवस बिदिवस लगि यावत् उत्किसटो सात मासतांइ विचरइ । ए सातमी प्रतिमा ॥७॥

[ट.६४] हिवइ आठमी प्रतिमा – सत्यधर्मनी रुचि होय यावत् अहोरात्रि ब्रह्मचारी । सचित्ताहार जिणइ त्यज्यो छइ, छांड्यो छइ । ए विशेष – पोतइ आरंभ न करइ एतलइ अन्य पसवाडइ कार्य करावइ । ते श्रावक ए पूर्वोक्त

आचारइ विचरतउ थकउ एकदिवस बिदिवस यावत् उत्किसटो आठ मासतांइ विचरइ, ते आठमी प्रतिमा ॥८॥

[ट.६५] हिवइ नवमी प्रतिमा श्रावकनी – सत्यधर्मनी रुचि होय यावत् लगिं अहोरात्र ब्रह्मचारी, आरंभ जिणइ त्यज्यउ छइ । अन्य पासइ जे करावो ते प्रत्याख्यान हूयइ एतलइ न करावइ । उद्दिष्ट ते जे तेहनइ ज निमित्त कर्यउ हूयइ, ते भक्त अपरिज्ञात, ते खाय, तजइ नहीं । ते श्रावक इसइ आचारइ विचरतउ थकउ एकदिवस बिदिवस लगि उतकिसटो नव मासलगि विचरइ, ते नवमी प्रतिमा ॥९॥

[ट.६६] हिवइ दशमी श्रावकनी प्रतिमा – सत्यधर्मनी रुचि होय यावत् पोतानइ अर्थइ कीधउ अन्न ते न ल्यइ, ते पाछणइ करी मुंडावइ अथवा शिखा धारक होय, चोटी राखइ । तेहनइ आ-ईषत् भट्टस्स ते देशी वचनइ संभाष्यै पूछइ थकइ कल्पइ तेहनइ बि भाषा एतलइ प्रत्युत्तर देवउ भाखवी कहवी, जउ जांणइ तउ कहइ जांणूं छउ, जउ न जांणै तो कहइ नथी जाणतउ । ते श्रावक ए पूर्वोक्त विचारइ करी विचरतउ थकउ जघन्य एक दिन, बि दिन, उतकिसटो दसमासतांइ विचरइ । दशमी प्रतिमा ॥१०॥

[ट.६७] हिवइ इग्यारमी श्रावकनी प्रतिमा – सत्यधर्मनी रुचि होय, जिनधर्मनी रुचि होय यावत् पूर्वलउ अधिकार जाणवो, उद्दिष्ट भक्त ते जाणीनइ त्यज्यउ होय, ते क्षुरमुंडन करावइ अथवा शक्ति होय तउ लोच करावै, ग्रह्या छइ आचार पालवा भणी पात्रा-रजौहरण प्रमुख साधु वेष, साधुनउ निर्ग्रंथनउ धर्म आचार ते १० विध यतिधर्म सम्यक्प्रकारइ कायाइ करी स्पर्शन करतउ थको पालतो थको, मात्राशब्द ते प्रमाणवाची, झूसरा प्रमाण धरती सोझतो थकउ देखतो थको, देखीनइ त्रसप्राण जीव, उधृत ते आगलो विभाग धरइ नां लगाडीनें जाय, संकोची पगनइ मूंकइ जाय, तिरछा पग करीनइ जाय, छतइ पराक्रम जाय साधु चालइ तिण रीतइ चालइ, ऋजु-सरलपणै चालै एतलै नमी जायइ । केवल तेहनइ जातिनउ प्रेमरूप बंधन ते त्रूटउ नथी जेहनइ, इम तेहनइ कल्पइ, तिहां ज्ञात गोत्रीना घरनइ विषइ तेह श्रावकनइं आयां थकउ पहिला उतर्या छै चाउलरूप ओदन धान अनइ आव्या पछइ उतर्या छै भेलण दाल तउ कल्पइ तेहनइ चाउल धान लेवा, न कल्पइ तेहनइ भिलंगसूप ते दालि लेवी । तत्र तेहनइ पूर्वइ आया थकां पहिला उतरी छइ दाल अनइ पछै उतर्या छै चाउल तउ कल्पइ तेह श्रावकनइ दालि लेवी, न कल्पइ पछइ उतर्या जे चाउल लेवा न कल्पइ । तिहां ते श्रावक आयां पहिला जउ दोइ चावलदालि उतर्या होइ तउ कल्पइ दोऊ लेवा । तिहां ते श्रावक पहिला आव्यां होइ ते बेइ पछइ उतार्या होय तउ न कल्पइ बेइ वहिरवा लेवा । तिहां श्रावकनइं आगमनथी पूर्वइ उतार्या होय तो कल्पइ लेवा, जे तिहां आयां पछै हूया होय ते न कल्पइ तेहनइ लेवा ।

तेह श्रावकनइ गृहपतिना कुल ते घरनइ विषइ पिंड-आहार तेहनइ अर्थइ पैठां थकां कल्पइ एहवो बोलिवो-हुं श्रमण-साधुनउ उपासक-सेवक छुं वली प्रतिमाप्रतिपन्न छुं, एहवा थकानइ मोनइ भिक्षा द्यो । ते श्रावक इसा विहार विचरतानइं कोई एक पुरुष देखीनइ कहइ – कुण हे आयुष्मन् ! किसइ आचारइ प्रवर्तइ छइ ? तइ किसो आचार लीधो छै ? तिवारइ ते कहइ – हुं प्रतिमाधारी, हुं अमकडो श्रावक छुं, इग्यारमी प्रतिमा वहुं छुं । इम तेहनइ उत्तर आपइ । ते श्रावक इसइ आचारइ प्रवर्ततउ थको जघन्य १ दिवस, बिदिवस, तीन दिवस, उत्किसटो इग्यारह मास विचरइ । ते इग्यारमी श्रावकनी प्रतिमा ॥११॥

ए निश्चयसुं थविर भगवंतइ इग्यारह श्रावकनी प्रतिमा कही, इम कहुं छुं । छठउ अध्ययन संपूर्ण ।

## [सप्तमदशा भिक्षुप्रतिमाध्ययनम्]

[ट.६८-७०] पूर्वले अध्ययन ११ श्रावकनी प्रतिमा कही । हिवइ आगिलइ अध्ययनइं १२ साधुनी प्रतिमा कहइ

छइ । हे आयुष्मन् ! तिणइ भगवंतइ इम कह्यउ – ए जिनशासनइ थविर भगवंतइ १२ बारह साधुनी प्रतिमा कही । किसी तिके १२ बारह साधुनी प्रतिमा कही ? ते कहइ छइ – एकमासकी साधुनी प्रतिमा १, द्विमासनी साधुनी प्रतिमा २, तीजी मासिकी साधुनी प्रतिमा ३, च्यार मासकी साधुनी प्रतिमा ४, पंचमासकी प्रतिमा ५, छमासकी प्रतिमा ६, सात मासनी प्रतिमा ७, प्रथम ते आठमी सातरात्रिदिननी प्रतिमा ८, आठमी नवमी दशमी ए त्रिण संख्या दिवसनी छै ते माटइ आठमी प्रथम कही ते प्रथम ७ रात्रिनी, बीजी सात रात्रिकी भिक्षुप्रतिमा अनइं मूल संख्या नवमी जाणवी ९, त्रीजी सात रात्रिकी मूल संख्यायइं दशमी जाणिवी १०, एकादशमी अहोरात्रिनी प्रतिमा ११, एकरात्रिकी प्रतिमा १२ ।

[ट.७१-७२] मासनी साधुप्रतिमायइं प्रतिपन्न जे साधु चारित्रियउ केहवो छै – नित्यइं वोसरावी छइ काया त्यक्तदेह, एहवा थकानइं जे केई उपसर्ग ऊपजइ ते कहै – देवताना कीधा, मनुष्यना कीधा, तिर्यंचना कीधा उपसर्ग, ते उपसर्ग उदय आव्यां थकां सम्यग् प्रकारइं कायाइ करी सहै, खमइ क्रोधना अभावथी, तितिक्षै दैन्यपणाना अभावथी, अहियासइ । मासकी जे साधुप्रतिमा तेहनइ प्रतिपन्न एहवा जे साधु तेहनइं कल्पइ एक दाति भोजननी एतलै अन्न एक ज वेला लेवउ कल्पइ, तिम ज पाणी एक ज पाणीनी दाति । अज्ञात कुल गृहस्थ जीमता रह्यो जे अन्न ते अन्यनइ भोजननइ अर्थइ [आण्यउ निवर्त्या होइ भिक्षा लेईनइ, जे भणी अंतराय नथी] घणा द्विपद ते मनुष्य, चतुष्पद-गोप्रमुख, श्रमण-तापसादि, ब्राह्मण, अतिथि ते प्राहुणो, कृपण, वनीमग एतलानै अंतराय न होय तिम ल्यइ । कल्पइ एक जणो जीमतो होइ तो लेवो । दोय जणा जीमता होय तो न लेवो । तीन जणा जीमता तो न लेवो । इम च्यार, इम ज पांच जीमता होय तो । गर्भवंती स्त्रीनो दीधो न कल्पै, थोडा दिननी जे प्रसूत स्त्री तेहनो दीधो पिण न ल्यइ । बालकनइं धवरावती होय तेहनो दीधो पिण न कल्पइ । नो निषेध, अंतर्मध्ये, एलुक ते उंबरनइ माहिले पासै दो पग संकोचीनइ राखीनइं जउ द्यै तै पिण न ल्यइ । जउ एक पग उंबरमाहि राखइ, बीजो पग उंबरनइ बाहिर करी थापीनइं जउ द्यइ आहारनो, इम तेहनइं लेवो कल्पइ । इम जो ते न द्यइ तो ते साधुनइं लेवो न कल्पइ ।

[ट.७३] वली मासनी साधुनी प्रतिमा प्रतिपन्न एहवउ अणगार साधू तेहनइं त्रिण गोचरीना काल प्रस्ताव कह्या । ते कहै छइ – आदि मध्यम चरम । जिवारइ भिक्षावेलायइ भिक्षानइं अर्थइ भिक्षाचर न जाय तो साधु तिहां प्रथम भागै जाय, परं भिक्षानइ मध्यम भागइ न जाय, छेहडलइ भागै पिण न जाय । भिक्षाचर पहिला पिण जाय, पछै पिण जाय तो साधु मध्य भागै जाय, पहिला पिण न जाय, छेहडइ पिण न जाय, ते मध्य कालइ जाय । भिक्षावेलायइ भिक्षाचर पहिला पिण जाइ, मध्य भागै पिण जाय छै तो साधु छेहडै जाय अभिग्रहधारी ते वासतइ ।

[ट.७४] एक मासनी भिक्षु प्रतिमानइ आचरी छै एहवा अणगारनइ छ प्रकारनी गोचरी कही । गायनी परै चरै ते गोचरी । ते कहै छइ – [१] पेटी करंडियानी परि चउखूणाइं ल्यइ तिण परि ग्रहै एतलै पेटीनइं आकारइ, [२] वली पेटीना अर्द्धनइ आकारइ, [३] बलदना मूत्रनइ आकारइ, [४] पतंगियानी परि, ते जिम उडी पडै तिम साधु पिण गृहांतर मूकीनइं भिक्षा ल्यै ते पतंगवीथिका, [५] शंखनी परै ते शंबूकावर्त, बि प्रकार- एक बाह्य एक अभ्यंतर, बाह्य ते जे अभ्यंतर थकी बाहिर आवै अनइ अभ्यंतर ते जे बाह्य विहरता माहि आवे, [६] पाधरे मार्गइ जाय पिण पाछो न वलै ते गंतुप्रत्यागता.

[ट.७५] मास एकनी प्रतिमा प्रतिपन्न अणगार साधु अणगारनइं जिहां कोई जांणइ ए साधु प्रतिमा वहै छइ इम जांणै तो तिहां कल्पइ एक रात्रि एक दिवस वसिवउ । जिहां कोई न जांणै तो तिहां तेहनइं कल्पइ एक रात्रि एक दिवस पिण बि रात्रि बि दिवस पिण वसिवउ कल्पइ, न कल्पइ एक रात्रि अनइ बि रात्रि उपरांत वसिवउ

। जे तिहां एक रात्रि बि रात्रिथी उपरांत वसइ तउ तेहनइं छेद कहतां लघु करइ, परिहार तप भंग रूप ते आवै ।

[ट.७६] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कल्पइ च्यार भाषा बोलवी । ते कहै छइ – [१] याचनी ते जइनें गृहस्थ पासे याचै, [२] संदेह भणी पूछै ते पृच्छना, [३] अनुज्ञापना ते आज्ञा मांगै, [४] पूछ्यानो उत्तर आपवउ ।

[ट.७७] एक मासनी प्रतिमा प्रतिपन्न जे साधु तेहनइं कल्पइ तीन उपाश्रय वसति प्रतिलेखना एतलै दृष्टि करी जोवो । ते कहै छइ – [१] आरामनै हेठलि ते अध आराम रूप जे घर ते अध आराम घर कहियइ [२] विकट गृहनइं हेठइं, ग्रामथी [बाहिर वृक्षनइ] आसन ते विकट कहियै, तिहां उपाश्रय [३] वृक्षनइ मूल हेठे जे उपाश्रय ते प्रतिलेखइ जोवइ ।

मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइ कल्पइ तीन उपाश्रय प्रतिलेख्या पछी आज्ञा मांगवी गृहस्थनी – [१] आराम रूप घरनी [२] विकट घरनी [३] वृक्ष मूल घरनी ।

मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कल्पइ उपाश्रय अंगीकार करिवा तेह ज ।

[ट.७८] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कल्पइ तीन संथारा पडिलेहवा । ते कहै छइ – [१] पृथ्वी शिलापट्ट रूप [२] काष्ठ शिला काष्ठपिंड [३] बाजोट फलक पाट रूप ।

मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कल्पइ तीन संथारानी आज्ञा मांगवी – तेह ज ।

मासकी० साधुनइ कल्पइ तीन संथारा अंगीकार करिवा – तेह ज ।

[ट.७९] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कल्पइ जेह उपाश्रय स्त्री शीघ्र आवै, ते स्त्री अथवा पुरुष ते उपाश्रय आवै तो न कल्पइ ते स्त्री पुरुष प्रतीत्य कहतां साथे नीकलिवउ पइसिवो ।

[ट.८०-८१] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं कोई एक अनार्य ते उपाश्रय अग्नि करी प्रज्वालै बालइ तउ न कल्पइ ते उपाश्रय बाहिर नीकलवो पइसिवउ । तिहां तेहनइं कोई अनार्य साधुनइं वाधिवा भणी ग्रहिवा भणी आवइ तउ यावत् न कल्पइ तेहनइं अवलंबिवो झाली राखिवो, वार वार तेहनइं झाली राखिवो । अनइ कल्पइ तेहनइ यथा ईर्यायइं चालवो एतलै छेदै तो पिण शीघ्र न चालै ।

[ट.८२] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइ यावत् पगनै विषइ खांपउ, कांटो, तीखा काकरा विशेष, काकरो पइसइ पग वींधइ तउ तिवारै न कल्पइ तेह साधुनइं काढिवुं विसोधिवुं । कल्पइ तेहनइं ईर्यायइं चालिवो ।

[ट.८३] मासनी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं आंखिनइं विषइ प्राणी जीव पडै ते मसलिवउ नही, बीज ते खसखस दाणा प्रमुख, रज ते सूक्ष्म [धूल] ए वस्तु जो आंखिनै पडै तो न कल्पइ निकासिवउ विसोधिवो, ईर्यासमिति सोधतो चालै ।

[ट.८४] मासकी प्रतिमा यावत् जिहां वसती अथवा अरन्यइं जो सूर्य आथमइ तिहां जलनइ विषइ अथवा जल ते त्रीजो प्रहर, थल ते अटवी, दुर्गनइं विषइ, निम्न ते खाई प्रमुख, पर्वतनइं विषइ, विषम ते एक प्रदेशइं उंच एक प्रदेशे नीच, गर्तादिक खाड, गुफानइ विषइ कल्पइ तेहनइं ते रजनी तिहां ज पूरी करवी । न कल्पइ रात्रि पड्या पग पण जाइवउ । कल्पइ प्रभाते रजनी गयां सूर्य ऊगां थकां यावत् दीपतो पूर्व दिशि सामुहो दक्षिण दिशि सामुहउ पश्चिम दिशि सन्मुखइं उत्तर दिशि सामुहउ ईर्यायइं चालिवो ।

[ट.८५] मासकी प्रतिमा० साधुनइं न कल्पइ सचित्त पृथवियइं शयन करिवउ, नींद करवी नही, प्रचला ते त्रीजी

नींद ते पिण न करवी । केवलज्ञानी इम कहइ कर्मबंधनो कारण ए आचार । साधु तिहां निद्रा करतो अथवा प्रचला करतानइं हाथ करीनइं पृथ्वी मर्यादायइं । तउ हिवइ स्युं करै ? यथाविधि स्थान करै नीकलै जे एतलइ जाय । उच्चार ते वडीनीति प्रश्रवण ते लघु नीति तिणइ करी पीडायइ अथवा आबाधा थाइ तउ न कल्पइ तिहां परठविवउ । तउ स्युं करइ ? ते कहै छइ – कल्पइ पूर्वइं प्रतिलेख्यो होय जे थंडिल तिहां वृद्धनीत लघुनीत परठवइ । तेह ज उपाश्रय स्थानक यथाविधि करइ ।

[ट.८६] १ मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइ न कल्पइ सचित्त रजइं करी खरड्या जे पग तेणइं करी गृहस्थना घरने विषै भातनैं अर्थइ पाणीनइं अर्थइ जायवो नीकलवउ पइसिवउ । अथ वले इम जांणै ते रज स्वेद परसेवइ करी विलय जाय, जल ते मूत्रइं करी, मलइं करी, पंक तेह जल प्रस्वेदादिकइ करी ताढो थाइ विद्धंस पामइ एतलै शरीरइ लागइ तो कल्पइ गृहस्थनइ घरे भात पाणीनइं अर्थइ निकलिवउ पइसिवो ।

[ट.८७] मासकी प्रतिमा० न कल्पइ प्रासुक जे शीतल जल तिणइं करी उष्णोदकइं करीनइं हाथ पग, बहुवचन ते प्राकृत भाषायइ, दांत आंख मुख क्षालिवउ धोविवउ । ए विशेष जिवारइ शरीरइ अशुचि होइ तो लेप करिवो भक्तइं करी हस्त धोवै एतलै चलू करै ।

[ट.८८] मासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइं न कल्पइ घोडो आवतो होय तो, बलद आवतो होय तो, भइसउ सूयर कुतरउ दुष्ट ते मनुष्यादि व्याघ्र इत्यादिक जीव आवतां थकां पद मात्र एतलै एक पग पिण टलइ नही अनइ अदुष्ट ते अश्वादिक ते आवइ तउ कल्पइ झूसर प्रमाण ते च्यार हाथ मार्गथी टलिवउ ।

[ट.८९] १ मासनी साधुनइ न कल्पइ ए छायाइ शीत छइ ताढउ इम जांणीनइ तडकइ जावइ, ए ताप उन्हो इम जाणी छायाइं जावइ । जे जिहां शीत ताप हूयइ ते तिहां अहियासइ एतलै छायाथी तावडै न आवइ, तावडाथी छायाइं न आवै ।

[ट.९०] इम निश्चएसुं १ मासनी साधुनी प्रतिमा जिम सूत्रमांहे कही, जिम प्रतिज्ञा कही तिम, आचार लोप न थाइ ते यथामार्ग, तत्त्वनइ अतिक्रमइ नही, सम्यक् प्रकारइ कायायइ करी फरसीनइ पालीनइ अतीचार रूप मल टालीनइ तीर पमाडीनइ कीत्तीनइ आराधीनइ आज्ञायइ करीनइ पाली हूयइ ।

[ट.९१] बिमासकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधुनइ नित्य प्रति वोसिरावी छइ काया जिणइ, इहां पिण प्रथम [प्रतिमानो अधिकार], विशेषइ दोय दाति ल्यै । तीजी प्रतिमायइं तीन दाति ल्यै, बीजो अधिकार पूर्ववत् । चोथी प्रतिमा मास ४नी, ते पिण प्रथम सरीखी, इहां ४ दाति लेवी । पांच मासनी प्रतिमा तेहनी पांच दाति जांणवी । छट्ठी छमासनी तेहनी छ दाति । सातमी ७ मासनी ते आचार पूर्ववत्, सात दात जांणवी । जे प्रतिमा जेती मासनी तिहां तेती दात जांणवी ।

[ट.९२] प्रथम ७ रात्रिनी संख्या माटइ अनइ त्रिण सरीखी एतलै ८,९,१० ए सात रात्रिनी मध्ये प्रथम एतलै मूल संख्यायइ आठमी एहवी प्रतिमा प्रतिपन्न जे साधु अणगार नित्य वोसरावी छइ काया जिणइ, अधिकार सर्व पूठिलो यावत् सर्व उपसर्ग अहियासइ सहइ । कल्पइ तेहनइं चउत्थ भक्त ते एक उपवास पाणीयइ रहित एहवानइं ग्राम बाहिर, नगर बाहिर, एक णकांनी नदी एक णका ग्राम ते खेट, सगलै डूंगर ते कब्बड यावत् राजधानीयइ उत्तानक ते जे सखो सूयइ, इम सूतानै पसवाडै सूयइ तेहनइं, निषद्या ते [बइठा] रहतानइ थानक थापे एतलै बाहिर रहै । तिहां देवता संबंधी, मनुष्य संबंधी, तिर्यंच योनि संबंधी इत्यादिक उपसर्ग ऊपजइ । ते उपसर्ग प्रकर्षइ वली प्रतिमाइ चलइ पडइ तउ न कल्पै पडिवउ । तिहां तेहनइ उच्चार प्रश्रवण पीडइ तउ न कल्पइ तेहनइं उच्चार प्रश्रवण

परठविवउ बीजा ठामइ । कल्पइ तेहनइं पूर्व प्रतिलेखित जे थंडिल तिहां उच्चार प्रश्रवण परठविवउ, यथाविधि तिहां स्थानकइं कायोत्सर्ग रूपइ ठावइ करइ स्थापइ । ए प्रथम प्रतिमा सप्त रात्रिनी एतलइ मूल संख्यायइं आठमी साधु प्रतिमा यथासूत्रइं यथाकल्पै यावत् आज्ञायइ जिम छइ तिम पालक होइ ८ ।

[ट.९३] इम बीजी सप्त रात्रिकी प्रतिमा नवमी, ए विशेष - दंडनी परइ, लकुट ते काष्ठ तेहनी परइ, ऊकडू जे आसन इसइ थानकइ थान थापइ, बीजो अधिकार पूर्वली परइ यावत् पालणहार हूयइ ९ ।

[ट.९४] इम त्रीजी सात रात्रिनी प्रतिमा हूयइ तिम ज, ए विशेष - गोदुहासन करै, वीरासन करै बीजो, तिम ही ज अंबनी परइ कुब्ज आसन ते अंबखुज्ज, इम थानकइ थान थापइ तिम ज यावत् तेहनो पालक हूयइ १० ।

[ट.९५] इम १ अहोरात्रिकी प्रतिमा इग्यारमी, ए विशेष – बि उपवास पाणी रहितइं करी ग्राम बाहिर, नगर बाहिर यावत् राजधानी बाहिरइ, ईषत् थोडा दोन्युं पग संकोचीनइ, लंबित लांबा हाथ करीनइ काउसग्ग करै, शेष तिम ही ज यावत् आज्ञा पालक होय ११ ।

[ट.९६] एक रात्रिकी भिक्षु प्रतिमा प्रतिपन्न एहवो जे अणगार साधु तेहनइं नित्य वोसराव्यो छै शरीर जेणइ यावत् उपसर्ग अहियासइ । कल्पइ तेहनइ तीन उपवास पाणी रहित बाहिर ग्रामनइं नगरनइ यावत् राजधानी बाहिरइ, ईषत् नमावी छै कांईक काया जिणइ, एक पुद्गल ऊपरि राखी छै दृष्टि जियइं, आंखि मिटकारइ नहीं, यथास्थित गात्र संकोचीनइ, इंद्रियें करी गुप्त होय, बिहुं पग संकोचीनइं, लांबा मेल्या छै हाथ जिहां, इसउ काउसग्ग करइ यावत् पूर्वनी परै यथास्थित थान थापइ ।

[ट.९७] एक रात्रिकी भिक्षु प्रतिमा प्रतिपन्ननइं आज्ञायइं करी पालता थकानइं अणगारनइ ए त्रिण थानक अहित भणी अशुभनइं अर्थइ अक्षमानइ अर्थइ अकल्याणनइं अर्थइ अनानुगमानइ अर्थइ होय । ते कहै छइ – [१] उन्माद ते चित्तनें विपर्यास पामइ [२] दीर्घकालिक रोग ते पामै, दीर्घ ज्वरादि आतंक ते पामइ [३] केवली प्रणीत धर्मथी भ्रंसना पामइ ।

[ट.९८] एक रात्रिकी भिक्षु प्रतिमा ते साधु सम्यक् प्रकारइं पालतो थको एहवो जे अणगार तेहनइ ए ३ थानक हित भणी यावत् मोक्ष भणी होय । ते कहै – [१] अवधिज्ञान ते सम्यक् प्रकारइं ऊपजइ [२] मनपर्यवज्ञान सम्यक् प्रकारइं ऊपजइ [३] केवलज्ञान तेहनइ पूर्वइ ऊपनो नथी ते ऊपजइ ।

[ट.९९] इम निश्चयसुं एक रात्रिकी भिक्षु प्रतिमा जिम सूत्रमइं कही तिम यथाचार यथामार्गइं, यथातथ्य ते जिम छइ तिम, सम्यक् कायाइं फरसीनइं पालीनइं, सोधी ते अतीचार रूप मल टालीनइ, तीर ते पार पोहचाडीनै, कीर्तीनइ आराधीनइं आज्ञा पूर्वक पालणहार हूयइ । ए पूर्वोक्त निश्चयसूं तिके थविर भगवंते बारह साधु प्रतिमा कही, तिम हुं कहुं छउं । ए सातमो अध्ययन ७ ।

## [अष्टमदशा पर्युषणाकल्पाध्ययनम्]

[ट.१००-३८९] पूर्वलइ अध्ययनइ १२ साधुनी प्रतिमा कही । [तेहनउ कथक] श्रीमहावीर । ते मेलि आगइ श्रीमहावीरनो अध्ययन ते कहै – तिणइ कालइ तिणइ समइ श्रमण भगवंत महावीरनइं पांच कल्याणक उत्तरा फाल्गुनीयइं हूइ । ते कहै छै – उत्तराफाल्गुनीयइं चव्या चवीनइ गर्भइ ऊपना १ उत्तराफाल्गुनीयइं गर्भहुंती गर्भइ संचर्या एतलै गर्भापहार २ उत्तराफाल्गुनीयइं जन्म्या ३ उत्तराफाल्गुनीयइं मूंड थईनइं गृहवासहूंती अणगार साधुपणो अंगीकार कर्यो ४ उत्तरफाल्गुनीयइं अनंत वीर्यथी उत्तम प्रधान निर्व्याघात निरावरण समस्त प्रतिपूर्ण एहवउ केवल

वर प्रधान ज्ञान अनइ दर्शन ऊपनउ ५ स्वाति नक्षत्रे मोक्ष पहोता ६ । ए आदि देई सर्व तीर्थंकरना चरित्र १ थविरावली २ समाचारी ३ [लेवा यावत्] घणा श्रमण साधु घणी श्रमणी साध्वी घणा श्रावक घणी श्राविका घणा देवतानइ घणी देवीनइ मध्ये रह्या थका भगवंत इम कहइ इम भाषइ यावत् वार वार उपदिशइ । इति शब्द समाप्त्यर्थं । ए आठमो अध्ययन ८ ।

## [नवमदशा मोहनीयस्थानाध्ययनम्]

[ट.३९०] तिण कालइ तिण समइ चंपा नामइं नयरी हूई, वर्णक उववाईथी । पूर्णभद्र नामा व्यंतरनो स्थानक, वर्णक । कोणिक राजा, धारणी पट्टदेवी । श्रीमहावीर स्वामी समोसर्या । १२ पर्षदा आवी । धर्म कह्यउ । पर्षदा जिम आवी तिम गई ।

[ट.३९१] अहो आर्यो ! इम कही श्रमण भगवंत महावीर घणा निर्ग्रंथ निर्ग्रंथी साध्वी आमंत्रीनइ इम कहता हुया – इम निश्चयसुं अहो आर्यो ! मोहनीना ३० तीस स्थानक स्त्री अथवा पुरुष वार वार आचरतां थकां घणी वार समाचरता थका मिथ्यात्व मोहनीय कर्म बांधइ ।

[ट.३९२] ते कहै – जे केई त्रस बेइंद्रियादि जीव पाणीमांहे पइसीनइ उदक रूप जे शस्त्र तेणइं कर्मइ करी मारइ तो स्त्री पुरुष अथवा नपुंसक महामोहनी कर्म करइ बांधइ १ ।

[ट.३९६] [1]शीर्ष वेढवइ करी एतलै जे कोइ चर्मसुं धमायो बांधै त्रस प्राणी जीवनइ वार वार वीटइ चर्मइं करी तीव्र पणइ करी मारतो थको अशुभ समाचरतो महामोहनी कर्म करइं २ ।

[ट.३९३] हस्त दीर्घ करीनइ ढाकइ पांणीना श्रोत्र ते मुख नासिका रूप ते रुंधीनइ अंतर्मध्ये घुर्घुर शब्द करता थकानइं मारइ ते महामोहनी कर्म करै ३ ।

[ट.३९४] जाततेज ते अग्निकाय ते प्रज्वालीनइं घणा उरभ ते वाडा मंडप प्रमुखमांहि प्रक्षेपीनइ अंतर्धूम्र करीनइ एतलै धूमाडो ते अग्निनो चिह्न तेणइं करी मारइ ते महामोहनीनो ठाम ४ ।

[ट.३९५] मस्तकनइ विषइ जेह खडगइ करी उत्तमांग ते माथो वाढै भूंडइ मन करी मस्तकनइं काष्ठनी परि फाडै ते माहमोहनी ५ ।

[ट.३९७] वार वार माया कपटाइये करी विश्वास उपजावीनइ हणीनइं ए बहू हास्य करै 'अहो माहरी चतुराई' जन मनुष्यनइं पाटीयइं करी अथवा दंडइ करी हणइ ते महामोहनी ६ ।

[ट.३९८] ते गुप्ताचार थकी पोताना दुष्टाचार ढांकइ, मायाइं करीनइं परनी माया छादइ जिम पंखी माया करीनइं पंखीनइ मारइ, असत्यवादी निह्नव ते पिण भगवंत वचननो उत्थापक ते पिण महामोहनी कर्म ७ ।

[ट.३९९] यशवंत छइ तेहनउ यश उडाह करीनइ ढाकइ, आत्मकृत जे पाप ते करीनइ न कहै अथवा ए पापनो कारक 'ए पाप तइं कीधो' इम कहै ते पिण महा० ८ ।

[ट.४००] जाणतो थको ते असत्य छै परषदा ते मनुष्य समूह मध्ये सत्यमृषा बोलै एतलै कांई सत्य कांई मृषा इम मिश्र बोलै, जेहनो कलह पूरउ थयो नथी ते पिण महा० ९ ।

[ट.४०१] नही नायक ते अनायक राजा विना प्रधान नीति मार्गना धावक, दारा ते राजानी स्त्री तेहनइं धंसै,

1. टबार्थकारेण 'सीसावेढेण' इत्यादि गाथासूत्रं पूर्वं व्याख्यातम् ।

सामंतादिकनइं विक्षोभ पमाडीनइं अंधकार रहित पोतै राज्य करइ १०. उप समीपइ आवता पुरुषनइ अनुलोम प्रतिलोम वचन कहीनइ भोगना भोग्य राज्यादिथी विप्रतारइ एतलइ राजद्रोह करइ, ते पिण महामोह० ११ ।

[ट.४०२] अकुमार थकउ जे कोइ कपटी एतलइ परण्यो छइ 'हूं कुमारउ छउं, माहरउ स्त्रीनउ प्रसंग नथी' इम कहइ, परस्त्रीनइ विषइ गृद्ध अथवा वसवर्ती ते पिण महामोह० १२ ।

[ट.४०३] अब्रह्मचारी थकउ जे कोइ 'हूं ब्रह्मचारी' इम कहइ, परं गर्दभनी परइ गायना व्रजमाहइ असार कामाकुल वचन बोलइ ते महा० १३ । आत्मानइ अहित मूर्ख मायावी मृषा घणी वार कहइ, स्त्रीनइ विषइ गृध ते महामोह कर्म १४ ।

[ट.४०४] जेहनी निश्रायइ करी राजानी अथवा प्रधाननी वृत्ति आजीविका ते यशइ करी अथवा सेवायइ करी तेहनी पूर्वली वृत्ति लोपइ ते पिण महामोह करइ १५ ।

[ट.४०५] धनवंत मनुष्यनइ अथवा ग्रामीण लोकइ पूर्वइ अणीश्वरथी ईश्वर ते धनवंत कर्यउ होय पछै तेहनी ते वार्ता लक्ष्मीयइ करी ढाकइ लक्ष्मी ते अतुल जिम हूइ तिम पामइ १६. जिवारइ श्री घणी आवी तिवारै [प्रभुनें उपगार करिवानइ इर्ष्यानइ दोषइ आइष्ट थकउ एतलइं जिवारइं प्रभूत संपदा पामइ तिवारइ प्रभूनो कार्य करिवानइ इर्ष्याइ करइ] ते केहवउ ? कलुषइ करी व्याकुल छइ चित्त जेहनो जे एहवउ थकउ अंतराय करइ ते पिण महामोह कर्म करइ १७ ।

[ट.४०६] सापणी जिम पोताना इंडानइ विणासइ, इम जे पुरुष पोताना भिरतार पोषणहार तेहनइ विणासइ, सेनापतिनै अथवा गुरुनइ अथवा सेठनइ ते महामोह कर्म० १८ ।

[ट.४०७] देशनउ नायक ठाकुर रक्षक छै वसतीनो तेहनइ अथवा श्रेष्ठिनइ घणो यश छइ जेहनउ तेहने हणइ महामोह० १९ ।

[ट.४०८] घणा मनुष्यनो पोषणहार, द्वीप जिम सागरमइ बूडतां त्राण भूत तिम ते पिण नर त्राणभूत एहवउ मनुष्य गणधरादि तेहनइ हणइ ते महामोह० २० ।

[ट.४०९] प्रवज्या भणी जे ऊठ्या छै संसारथी विरतउ छै संयत सुसमाधिवंत साधुनइ एहवा प्रतै उपक्रम्य ते आक्रमीनइ बलात्कारइ धर्म थकी भ्रष्ट करइ महा० २१ ।

[ट.४१०] तिम ही ज जे अनंतज्ञानी तेहनइ जिननइ प्रधान दर्शनना धणीनइ ते भगवंतना जे अवर्णवाद बोलै मूर्ख ते महामोहनो स्थानक २२ ।

[ट.४११] न्याय सहित जे मोक्षनउ मार्ग तेहनइ दुष्ट थकउ घणी विपरीत मति करइ, ते माटइ निंदायइ करी आगलाना मन अशुद्ध करइ ते पिण महामोह० २३ ।

[ट.४१२] आचार्य उपाध्याय जिए श्रुत अनइ विनय सीखाव्या होय तेह ज आचार्य उपाध्यायनइ निंदइ ते महा० २४ ।

[ट.४१३] आचार्य उपाध्यायनइ सम्यक्पणइ आराधइ नही, अप्रतिपूजा ते गुरुनी पूजा न करै स्तब्ध अहंकारी ते पिण म० २५ ।

[ट.४१४] अबहुश्रुत थका जे केइक श्रुतइ करी श्लाघा करइ 'जे हुं बहुश्रुत छउ' सब्भायवाद करइ जे भणी

अन्यनइ कनइ देखां शास्त्र गुण जोवा कुण घणो भण्यो ? ए स्वाध्यायवाद ते पिण महा० २६ ।

[ट.४१५] अतपस्वी थकउ जे कोइ एक तपइ करी आत्मानइ स्लाघइ, ते सर्व लोकमइ प्रकृष्ट चोर ते पिण महामोह० २७ ।

[ट.४१६] उपगारनइ अर्थइ जे कोइ ग्लान आचार्यादिकनइ रोग आव्यइ थकइ समर्थ थको न करइ कृत्य कार्य जे भणी इण माहरउ पिण कार्य नथी कीधो तउ कर्या स्यूं थाइ २८. शब्द ते कपट तिहां प्रज्ञा छै जेहनी कलुषइं करी व्याकुल चित्त छइ पोताना आत्मानइ अबोधि उपजावइ ते पिण महा० २९ ।

[ट.४१७] जे केई कथा रूप अधिकरण एतलै प्राणघातनी कथा वार वार प्रयुंजइ, सर्व तीर्थनो जे भेद तेहनइं अर्थइ, ज्ञान दर्शन चारित्र ए तिर्थ कहीये, महा० ३० ।

[ट.४१८] जे कोई आधर्मिक योग ते वसीकरणादि वार वार प्रयुंजइ, श्लाघा तिणनइ अर्थइ अथवा सखा मित्रानइ अर्थइ ते पिण महामोह० ३१ ।

[ट.४१९] जे कोई मनुष्य संबंधी कामभोग अथवा परलोक देवताना ते अतृपतो थको आस्वादै भोगवै ते पिण महामोहनी कर्म उपार्जै ३२ ।

[ट.४२०] ऋद्धि द्युति जस वर्ण देव ते सम्यग्दृष्टी बल वीर्य ए बोलै करी युक्त छै तेहनो अवर्णवाद बोलै महामोहनीकर्म उपार्जइ ३३ ।

[ट.४२१] अणदेखतो थको कहै 'हुं प्रत्यक्ष देखुं छुं' देवताना विमान, यक्षना, गुह्य ते भवनपतिना अज्ञानी थको जे जिन तीर्थंकरनी पूजानो अर्थी गोसालावत् ते महामोहनी कर्म बांधइ ३४ ।

[ट.४२२] ए पूर्वोक्त मोहनीना गुण कह्या, कर्मना वधारणहार क्लेशना वधारणहार जे ए साधु विशेषें वर्जइ, विचरइ आत्मानइं हित गवेषता ३५ ।

जे इम जांणै जे मै पूर्व गृहस्थावासै कृत्य ते माता पिता पुत्रादिकना पोषक कहियै, अकृत ते चोर बंधादिनइ घणा कर्म जढ ते कीधा अथवा बहु संबंध छांड्या वमीने **ता०** यथायोग्य कार्य न सेवै, सेवे थके आचारवंत होय सदा ३६ ।

आचारे करी गुप्त छै, आत्मा जेहनो शुद्ध छै, धर्मनइं विषै रही **अनु०** कहतां प्रधान, तिण वास्तै दोष ते विषय कषायादि तेहनइ वर्जइ, जिम आशीविष सर्प विष वमीने पाछो अंगीकार न करै तिम ए पिण ३७ ।

भले प्रकारे छांड्या छै दोष जियें, शुद्ध आत्मा धर्मार्थी, जांण्यो छै परम पद मोक्ष जिणइं ते साधु इहलोकनइ विषइ कीर्ति लाभै, आगलै भवै पिण भली गति ते पामइ ३८ ।

[ट.४२३] इम पूर्वोक्त जांणीनइं सूर वीर दृढपराक्रमी सर्व मोह ते कर्म तेहथी मूंकाणा, जन्म मरण थकी ते अतिक्रम्या इम कहुं छुं ३९ । इति नवम अध्ययन समाप्त ९ ।

## [दशमदशा पापनिदानस्थानाध्ययनम्]

[ट.४२४-४२७] तिण काले तिण समइ राजगृह नामा नगर होय, वर्णक । गुणसिल इसै नामै व्यंतरायतन । ते राजगृह नगरनइ विषइ श्रेणिक नाम राजा हुंतो, राजानो वर्णक इम जिम उववाईथी जांणिवो यावत् चेलणा रांणी संघाते भोगवतो विचरै । तिवार पछी ते श्रेणिक राजा एकदा प्रस्तावै कीधा छै आपणा घरनी देवपूजा,

कीधा कोतिक ते मषतिलकादिक प्रायचित्त ते पादूआ स्वप्न दूर करवानइं अर्थइं पूजादिक, सिर मस्तकै कंठइ माला पहिरी छइ, अबद्ध मणि सुवर्ण पहिर्या छइ जिणइ, रच्या छै हार १८ सरीया अर्द्धहार ते ९ सरीया ३ लडीयो हार, पालंब ते झूमका पलंब ते लांबा कणदोरो, ते कणदोरइ करी सोभइ छइ, पहिर्या छइ ग्रीवाना आभरण, आंगुलीयें मुंदडी पहिरी यावत् शब्दे कल्पवृक्षनी परइ अलंकृत विभूषित राजवी छै । जिहां बाहिरली सभा मंडप छै जिहां सिंहासन छै तिहां राजा आवै । आवीनइं सिंहासन प्रधान उपरि पूर्व दिसइ सन्मुख बइसइ । बइसीनइ कोटवालनै तेडावै । तेडावीनइ इम कहै – जावो तुम्हे अहो देवानुप्रियो ! जावउ एह आगलि कहीस्यै राजगृह नगरनें बाहिर, ते कहै छइ-आराम ते जिहां माधवी लता, उद्यान ते जिहां फूलना वृक्ष, आवेस ते जिहां घणा लोक आवै, आयतन ते स्थान जे देवकुल पासै ओरडा देवताना घर, आस्थान मंडप, पर्व ते अन्नदानसाला, क्रियाणाना जे हाट, प्रणितशाला ते घंघसाला, सुधाकमांत जे सुधा जेहनउ समारिवउ, जिहां व्यापारनइ अर्थइ घणा लोक मिलै, जिहां काष्ठ वेचाता होय, जागणा वेचाइ तिहां, वनस्पति भाजी तिहां वेचायै, दर्भ डाभ मुंज प्रमुखना काम होय, जे तिहां अधिपति धणी रखवाला आज्ञानी अधिपति रहै छइ, ते प्रतिं जई इम कहउ – इम निश्चइ देवानुप्रिय ! कहइ श्रेणिक राजा, भंभा भेरी वजाई ते वास्तै भंभसार कहांणउ नाम ते कहइ छइ । जिवारइ श्रमण भगवंत श्रीमहावीर आदिकर्ता तीर्थना कर्ता यावत् मोक्षाभिलाषी पूर्वानुपूर्वीइं विचरइ एक गामथी दूजै गाम, सतरे भेदे संयम बारह भेदे तपस्या तिणइं करी आत्मा भावता विचरइ । तिवार पछै देवानुप्रिय ! तुम्हे भगवंत श्रीमहावीरनइं यथाप्रतिरूप अवग्रह ते अनुज्ञा जांणउ । तिवारइं श्रेणिक राजायइं भंभसारइ इम कह्या थकां हर्ष संतोष पाम्युं, हीयामांहि खुसी हुई यावत् इम कहइ ते आज्ञा विनय करी सांभलै राजानो इम तेह श्रेणिक राजानइ पासाथी नींकलइ । नींकलीनइ राजगृह नगरनइ माहोमाहि नींकलै । नींकलीनइ जे एहवो आगलि कहिस्यइ राजगृह नगरनइं बाहिर आराम ते पूर्वोक्त यावत् शब्दे तिहां जे पूर्वइं कह्या ते तिहां रहै छै तिहां आवीनइ इम कहइ छइ यावत् श्रेणिक राजानो ए अर्थ सांभलीनइ जे भणी भगवंतनइं तुम्हे प्रिय वचन कहिजउ दोय वार तीन वार इम कहीनइ जिण दिसेंथी आव्या हुंता तिण दिसे राजा श्रेणिक आया ।

[ट.४२८] तिणइ कालइ तिणइ समय श्रमण भगवंत महावीर धर्मनी आदिना करणहार यावत् शब्दै ग्रामथी बीजै गाम विचरै यावत् आत्मानइ भावता विचरइ छइ । तिवार पछै राजगृह नगरनइ विषइ सिंघाडानै आकार मार्ग छइ त्रिक मार्गइ चउक मार्गइ चाचरैक इत्यादिक यावत् शब्दें १२ परषदा वांदवानइं आवी यावत् सेवा करै । तिवार पछै जिहां आराममांहि वडेरा छै पूर्वइं जे कह्या छइ जिहां श्रीमहावीर स्वामी छै तिहां आवै । आवीनइ श्रमण भगवंत महावीरनइं वांदइ नमस्कार करइ । वांदीनइ नमस्कार करीनइं नाम ते वर्धमान स्वामी गोत्र ते काश्यप पूछीनइ नामगोत्र मनमइं धारै । धारीनइं एकठा मिलइ । मिलीनइं इम कहै छइ ।

[ट.४२९] जेहनउ देवानुप्रिय ! सेणिक राजा भंभसार दर्शन वांछइ छइ, जेहनउ हे देवानुप्रिय ! दर्शन वांछइ छइ, जेहनउ हे देवानुप्रिय ! श्रेणिक राजा दर्शन प्रार्थइ, जेहनउ हे देवानुप्रिय ! श्रेणिक राजा दर्शननो अभिलाष करै छइ, जेहनउ देवानुप्रिय ! श्रेणिक राजा नाम गोत्र ते पिण सांभल्यां थकां हर्षवंत संतोषवंत होय, तेह श्रमण भगवंत श्रीमहावीर आदिनो कर्ता तीर्थनो कर्ता यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी पूर्वानुपूर्वीयें विचरता थका एक गामथी दूजै गामइ सुखै समाधि विचरतां थकां इहां आया इहां संप्राप्त इहां समोसर्या यावत् आत्मानइ भावता विचरइ छइ । ते वास्तै जावो अहो देवानुप्रिय ! श्रेणिक राजानइ ए अर्थ ए वात कहां – तुम्हनइं प्रिय होज्यो इम कहां । इसो विचार करीनइ माहोमांहि वचन सांभलइ । सांभलीनइ जिहां राजगृही नगरी छइ तिहां आवे । आवीनइ राजगृह नगर माहोमांहि [थइ जिहां श्रेणिक राजानउ घर, जिहां श्रेणिक राजा छइ, तिहां आवइ । आवीनइ श्रेणिक

राजा प्रति करतलवेइ हाथ जोडीनइ जय विजय करी वधावीनइ इम कहइ –

[ट.४३०] जेहनउ अहो सामी ! तुम्हे दर्शन वांछउ यावत् ते श्रमण भगवंत श्री महावीर गुणसैल चैत्यनइं विषइं यावत् विचरइं । ते भगवंतनउ आगम रूप अहो देवानुप्रिय ! तुम्हनइ प्रिय वार्ता निवेदां छां । प्रिय वस्तु भे-तुम्हनइं होवउ ।

[ट.४३१] तदनंतरं श्रेणिक राजा ते कारणीक पुरुषनइं समीपइं ए वार्ता सांभलीनइं हृदय धारीनइं सम्यक्पणइं हर्ष संतोष ऊपनउ हीयानइं विषइं सिंघासनथकी उठइ । ऊठीनइ जिम उववाइमांहि कोणिक राजायै भगवंतनइ वांद्या तिम श्रेणिक वांदइ । वांदीनइ नमस्कार करीनइं ते पुरुष प्रति वस्त्रादिकइं सत्कार्या सन्मान्या । सन्मानीनइं विपुल-विस्तीर्ण जीवइ तां लगइ खाइ एहवउ प्रीतिदान ते भगवंतनी प्रीतवास्तइं एहवउ दान देई प्रतिविसर्जइ । तिवार पछै कोटवालने सद्दावेइत्ता इम कहइं – उतावलो भो देवानुप्रियो ! राजगृह नगरमांहि अनइं बाहिर आसक्त ते पाणीयै छंटावउ, कचरानउ काढिवो, छांणइ करी लिंपावउ इत्यादि सर्व कार्य करीनइं ए आज्ञा पाछी आणी आपउ ।

[ट.४३२] तिवारइ ते श्रेणिक राजा यान रथ तेहनी शाला तेहना अधिकारी पुरुषनइ सद्दावइ । सद्दावीनइ इम कहइ – सीघ्र अहो ! देवानुप्रियो ! धर्मनइं अर्थइं जाइवुं जेणइ ते धर्मरथ कहीए एतलै संग्रामनउ रथ नथी एहवउ प्रधान रथ जोतरउ । जोतरीनइं माहरी आज्ञा आदेस पाछउ सूंपउ ।

[ट.४३३] तिवारइ ते जानशालानउ प्रमुख श्रेणिक राजायै इम कहइ थकइ हर्षवंत संतोष हृदय थया जिहां यान रथ तेहनी साला तिहां आवइ । आवीनइ रथसाला प्रवेश करइ । करीनइं रथ ऊंचा मेल्या हूंता नीचा ऊतारइ रथनइं प्रमार्जइं । प्रमार्जीनइ रथ शाला थकी काढइ, वस्त्रइं करी ढांकइ । ढांकीनइं जिहां बलदनी शाला तिहां आवइ । आवीनइं वाहणनी शालामइं प्रवेश करइ । करीनइ बलदनइं थानक थकी छोड्या । वाहननइ झाटकइ । झाटकीनइं वाहननइ घसीनइं उज्वल कर्या । शाला थकी बाहर काढइ । काढीनइ वस्त्रइ करी ढांक्या । ढांकीनइं बलदांनइ अलंकार सहित कीधा । बलदांनइ सोभायमान करइ । करीनइं रथइं जोतर्या । जोतरीनइ एतलइ रथ जोडी मार्गइ थाप्यो । थापीनइ परुणा रूप दंड हाथमइं धरइ । धरीनइं सगडीनइं आकारइ । आकरीनइं अंतरा मध्ये प्रथम पद ते घरनी पंक्ति विचइ मार्ग जे थाइ जिहां श्रेणिक राजा तिहां आवइ । आवीनइं तिवारइ बे हाथ जोडी यावत् इम कहइ – जोतर्यां छइं स्वामी धर्मरथ प्रवर प्रधान आदिष्ट जे तुम्हे कह्यो । ते रथनइ विषइ भद्र कल्याण होवउ ।

[ट.४३४-४३५] तिवारइ ते श्रेणिक राजा भंभसार ते जानसालकनइ समीपइं सांभली ए अर्थ अवधारीनइ हर्ष तोष यावत् मर्दन घरमै पइसइ राजा यावत् कल्पवृक्षनी परइ अलंकृत सोभायमान विभूषित राजा यावत् मर्दन घरथी नीकलइ । नीकलीनइ जिहां चेलणा रांणी छइ, तिहां आवइ । आवीनइ चेलणा देवी प्रतइ इम कहइ – इम निश्चै हे देवानुप्रिय ! श्रमण भगवंत श्रीमहावीर आदिना कर्ता तीर्थ कर्ता यावत्पूर्वानुपूर्वीये विचरता यावत् संजमइ करी तपै करी आपणो आत्मा भावता विचरइ । ते वास्ते मोटो फल देवानुप्रिय ! श्रमण भगवंत महावीर वांदीनइ नमस्कार करीनइ सत्कारीनइं सन्मानीनइ कल्याणनइ हेतुइ दुरित टलइ मंगल देव छइ चित्त प्रसन्न हेतु चैत्य कहीयै एहवा वीरनी सेवा करां । ए भगवंतनइ वांद्यां थकां इहभव परभवइ हित भणी सुख भणी क्षेम भणी मोक्षनइं अर्थइ यावत् भवांतरनै विषै सुख भणी होय ।

[ट.४३६] तिवार पछी ते चेलणा रांणी श्रेणिक राजानइ पासइ ए वार्ता सांभली अवधारीनइं हर्ष संतोष पामीनइं

सांभलीनइं जिहां मज्जन करवानो घर तिहां आवइ । आवीनइ स्नान कीधा बल कर्म, कीधा दुःस्वप्न टालिवा भणि तिलक कौतुक कीधा । घणुं स्युं कहियइ ? प्रधान ते नेउर पगें पहिर्या छइ मणि मेखला ते कटिमेखला हार आभरण रच्या छै उपचित कहतां कर्या छइ कडा वलि हार आंगुलीयें वलि कंठे मुरग आभरण विशेष त्रिसरीयो प्रधान वलय सिद्ध हेमसूत्र ते कडिदोरो कुंडल करी उद्योत थयो ते रतने करी आनन मुख जेहनउ, रतन ते भूषण करी अलंकृत छै अंग जेहना, चीनसुख ते वस्त्र पहिर्या छै जिणे चेलणा रांणी, दुकूल, सर्व ऋतुना ऊपना जे फूल प्रधान तिणइ करी रची छै लांबी विकसती सोभायमान आश्चर्यकारी माला फूलनी गलामांहे, प्रधान चंदनइं करी चर्चित छै, प्रधान भूषणे करी भूषितांगी, कृष्णागर धूपणै करी धूपित छइ वाल प्रमुख श्री लक्ष्मी सरीखो वेस, घणी कुब्ज कूबडी दास चिलात देसनी इसी जे दासी मोटी छोटी दासीनइ परिवारइ [परिवरी छइ] जिहां बाहिरली [उपस्थानशाला] छइ जिहां श्रेणिक राजा छै तिहां आवइ ।

[ट.४३७-४३८] तिवार पछी ते श्रेणिक राजा चेलणा रांणी संघातइ धार्मिक जे रथ प्रधान तिहां बइठा । कोरंट वृक्षना फूलनी माला छइ जिहां इसइ छत्र धरावतां थकां उवाइ सूत्रमइ छै तिम जाणिवउ यावत् शब्दइ सेवा करइ । तिवार पछै श्रमण भगवंत महावीर श्रेणिक राजा भंभसारनइ चेलणा रांणीनइ ते मोटी महाविस्तारवंत कथा कही परषदा मांहिइ जती साधवी तेहनी परषदा मनुष्यनी पर्षदा छै देवतानी परषदा छै अनेक संख्यायइं तेह आगलि धर्म कह्वउ । परषदा वांदीनइ पाछी वली । श्रेणिक राजा पिण वल्यउ ।

[ट.४३९] तिणें समोसरणमइ निग्रंथ साधु निग्रंथ आर्या श्रेणिक राजानी चेलणा रांणीने देखीनइ एहवो रूप अध्यवसाय आगलि कहिस्यइ ते ऊपनो – अहो आश्चर्य ! श्रेणिक राजा मोहटी ऋद्धिनो धणी महा सुखनो धणी जेह स्नान करीनइ बलि करीनइ, कीधो कोतिक भणि मंगलीक प्रायछित जेणइ सर्व अलंकार विभूषित चेलणा रांणि संघातइ प्रधान भोगविवा योग्य ते भोगवतो विचरइ । अम्हे नही देख्या देवलोकना सुख । इम निश्चै परं साक्षात एही ज श्रेणिक राजा देवता । जउ ए तप नियम ब्रह्मचर्यनो फल वृत्ति विशेष छइ तो आवतइ भवइ आवीनइ एतला रूप मनुष्य संबंधीया कामभोग ते भोगवता विचरजो । इम साधुइं चींतव्यउ ।

[ट.४४०] हिवइ साधवी चिंतवइ छइ – अहो आश्चर्य ! चेलणा रांणीनइ कहइ, मोटी ऋद्धि यावत् महासौख्यां यावत् स्नान, कीधा बलि कर्म पोताना देव पूजा, कीधा कौतुक मष तिलकादि दुःस्वप्न टालिवा नीमित्त प्रायछित्त यावत् सर्वालंकार विभूषित थकी श्रेणिक राजा साथइ प्रधान सुख यावत् मनुष्य संबंधीया कामभोग भिक्ष्णं प्रति भोगवती विचरइ । नही दीठा सुख अम्हे देवलोकै देवांगना परं साक्षात एह दीठी होइ । जो ए अम्है आदर्यो छइ तप नियम ब्रह्मचर्य कल्याणकारी फल वृत्ति विशेषइ छइ तो अम्हे पिण आवतइ भवइ एतो रूप चेलणा रांणी समान भोग उदार प्रधान [पामज्यो]। ए साधवी चिंतव्यो ।

[ट.४४१] तिवारै भगवंत अहो आर्यो ! इम आमंत्रीनइ घणा निर्ग्रंथ ते साधु निर्ग्रंथी ते आर्या आमंत्रीनइ इम कहइ-श्रेणिक राजा चेलणा रांणी देखीनइ एहवउ अध्यवसाय जावत् शब्दे ऊपनो अहो आश्चर्य ! श्रेणिक राजा महर्द्धिक पूर्वलउ पाठ लेवउ अम्हे पिण भोग भोगवां, इम साधु तिणें चींतव्यउ । अहो आश्चर्य ! चेलणा रांणी महर्द्धिक सुंदराकार एहवा सुख अम्हे भोगवीइं तउ भलउ जावत् इमा साधवी तिणें करी चिंतव्यउ । से शब्द निपाते, अहो आर्यो ! ए वार्ता साची ? तिवारइ साधु साधवी कह्वउ-ए साची ।

[ट.४४२] इम निश्चै अहो साधु ! मइ वक्षमाण धर्म कह्वउ एही ज साधु प्रवचन ते द्वादशांगी ते साच अनुत्तर प्रधान प्रतिपूर्ण केवलीनौ भाख्यउ ते सुद्ध न्याये करी सहित, सल्य ते मायादिक तेहनइ कर्तन करइ, सिद्धि ते हितार्थ तेहनउ मार्ग, मुक्तिनउ मार्ग निर्याण ते मोक्ष तेहनो मार्ग, निवृत्ति निर्वाण तेहनो मार्ग, साचो मार्ग, अविसंध

ते आविवउ अविच्छिन्न, सर्व दुक्ख क्षय करिवा भणी मार्ग, इणि निग्रंथ धर्मइ रह्या जे जीव ते सिद्धि पामइ, बूझइ, मूंकायै, परि समस्त प्रकारइं मूंकायइ सर्व दुःखनउ अंत करइ । जेह धर्मनइं विषइ निग्रंथ ते साधु भिक्षा ते ग्रहिवा भणी सावधान होई विचरइ पूर्वइ भूंख थकी निवृत्त्या पूर्वइ तृषां हूंती पूर्वइ आतप हूंती पूर्वइ फरस्यउ विरूप ते अतिरौद्र परीसह उपसर्गइ करी उदय ते उदय प्राप्त थयौ कामनउ जात प्रकार ते उदीर्णकाम करी विचरइ ।

[ट.४४३] ते साधु तप संजमने विषे पराक्रमवंत थकां पासेज्जा तुम्हे देखउ जे इहां उग्रसेन राजवीना पुत्र आपणा पिता थकी पिण महास्वादुना भोगवणहार भोगपुरुष महास्वादुकारी ते मांहि अन्यतर कोइक अतिमान ते बाहिर प्रदेश थकी घरां मांहि पइसवउ अथवा जातो थको ते आगइ दास दासी चाकर कर्मकर ते कार्यकर एहवे पुरुषे करी परवर्यउ छइ, छत्र ते राज्य चिन्ह, भिंगार ते झारी भरी ते ग्रहीनइ साथइ नीकलइ । तिवार पछै ते मोटा आगै मोटा अश्व अश्वमांहे प्रधान बिहुं पासइ तेहनइ हाथी प्रधान छइ पूठइ रथमांहै प्रधान संगिला ते रथनो समुदाय । ते ऊद्धर्यो छइ स्वेत नीर्मल छत्र जेणइ अभ्युद्गत सन्मुखइ उपाड्यो छइ भृंगार नीर पांणी, ग्रह्या छै ताल वृंद वीजणो जे प्रतिदासादि, वींजाई जता छइ श्वेत चामर जिहां चामर रूप बाल वींजणउ, बार बार घर प्रवेश करती थकी नींकलती छै प्रभा कांति जेहनी, पूर्वइं करिवा योग्य ते स्नानादि पछइ करवा योग्य भोजनादि तइ पूर्वापरइ वर्तता स्नान,बलिकर्म कीधउ यावत् सर्वांलकार करी विभूषित, महामोटे विस्तीर्ण एहवी जे कूडागार सालानें विषै कूट ते पर्वतनें सिखर तेहनइ आकार ते कूडागार, मोटो मोटै विस्तीर्ण एहवइ सिंहासननइ विषै यावत् सर्वरात्रिक जे ज्योतिषीनी ज्योति करी ध्यायमान ते जाज्वल्यमान स्त्रीनो समूह तेणइं करी परिवर्यो, मोटे शब्दै करी वजाड्या छै नाटक गीत वजाड्या छै वीणा हस्त ताली ताल जे वाजा तुडित ते वाजिंत्र विशेष घण मेघ सरीखी ध्वनिना जै ते मादल पटु ते दक्ष पुरुषे वजाड्यो छै पूर्वोक्त वाजिंत्र तेहवइं रथइं करी प्रधान जे मनुष्य संबंधीया भोग भोगवतो विचरइ ।

तेह पुरुष प्रयोग ऊपनइ एक पुरुषनें आज्ञा देता थका च्यार तथा पांच घणा पुरुष अणकह्या ऊठी आवीनइ इम कहै - अहो देवानुप्रियो ! कहो अम्है स्युं करियइं ? स्युं अम्है आहार आणी पचन रूप क्रिया करां ? स्युं तुम्हने इछा होय ते करियइं ? स्युं तुम्हेनै रुचै छइ ? किं स्युं तुम्हनइ वांछित ? स्युं वस्तु तुम्हारा मनमै भावै छइ ? ते कहो ।

[ट.४४४] पूर्वोक्त प्रकारना उग्र पुत्र देखीनइं साधु नियाणो करीनइ ते नियाणो अणपडिकमीनइं अणआलोईनइं काल प्रस्तावइं काल करीनइ अन्यतर १२ देवलोक ९ ग्रैवेयक ते मांहि देवलोकनइ विषइ ऊपजिवउ मोटी ऋद्धिना धणी छै यावत् चिर स्थितइ । तेह देवता होय । ते केहवो ? महर्द्धिक स्थिर स्थिति । ते देवलोकहुंती आयुनइं क्षयइं स्थितिनइ क्षयइ देवता संबंधी शरीर छोडीनइं जे उग्रपुत्र होय माहामातृक ते मांहे अन्यतर कोई कुलपुत्र आवै ते भणि पूर्वकृत नियाणो होय । ते तिहां बालक होय, सुकुमाल छै हाथ पग जेहनो, भलो रूप । तिवार पछै ते बालक ऊन्मुक्तबालक भाव, विज्ञान कहतां ते मात्र कला विज्ञक, योवनावस्थायइ आव्या तेह आपणो ज पितानो दीधउ जे दाइजाउ अंगीकारइ । तेहनइं घरे पइसतां अथवा नींकलतां थकां ते आगलि दास दासीना वृंद पूर्वोक्त सर्व लेवउ, ते कहइ-स्वामी तुम्हारा मनमइं रुचइ ते जीमउ ।

[ट.४४५] तेहनइं तथाप्रकारइ पूर्वोक्त पुर्ष जातनइ मोटो रूप कोई साधु तपस्वी ब्राह्मण ते बिहुं कालै प्रथम पहुरे चोथै पहुरे केवली प्रज्ञप्त धर्म कहइ, तिवारइ भगवंत बोल्या हुवइ । ते धर्म सांभलि प्रतिपूर्ण सद्दहइ ? ए अर्थ समर्थ नहीं । ते अभव्य अयोग्य धर्म सांभलवानइ । नहीं तेहनइं धर्म संभलाविवौ योग्य । ते होय महा इच्छानो

धणी, महा आरंभनो धणी, महापरिग्रहनो धारी, अधर्मिक यावत् आगलै भव तेहनइ दुर्लभबोधि सम्यक्त्व होइ । तेह इम निश्चै अहो साधु ! तेह नियाणउ इतादृश रूप फल विपाक जे भणी सक्तिवंत न होइ केवली प्रज्ञप्त धर्म सांभलीवा भणी । प्रथम निदाननौ साधु ॥

[ट.४४६] इम निश्चइ अहो साधु श्रमण ! मइ धर्म प्ररूप्यउ, ते कहै छै – इम ज निग्रंथ संबंधी प्रवचन ते द्वादशांगी रूप सत्य सर्व दुःखनो अंत करइ, पूर्वला बोल लेवा । जेह धर्मनइ निर्ग्रंथी आर्या सेविवा भणी उद्यमवंत होइनै विचरइ पूर्वइ क्षुधायै करी उदीर्ण काम तेहवी होइ विचरै, पूर्वला बोल सर्व लेवा । साधवी पराकर्म करइ देखउ तप संजमनै विषै ते साधवी पराक्रम करती ते ए स्त्रीजन होइ एक, ते सरूप थकी अधिक, एक जातिना आभरण पहिर्या, तेलनी पेला पेटी सोरठ देस प्रसिद्ध माटीना भाजन ते भागवाना भयइ जतन करी राखइ ते जिम ते पुत्रिनइ पिण संगोपी राखइ । चेल ते वस्त्र तेहनी पेटीनी परइ पुत्री पिण भलीपरि राखइ । रत्न करंड समान ते पुत्री वल्लभ, तेह पुत्रीनइ घरमांहि प्रवेस करती घरथी नींकलती ते आगै घणा दासी दास चालतां आवै पूछइ – हे स्वामिनी ! तोनै मनमइ स्युं भावै छइ ? पूर्वै पुरुषनो अधिकार कह्यो ते इहां पिण सर्व कहिवउ । एहवी स्त्री देखीनइ आर्या नियाणो करइ । जो ए धर्म छइ तप नियम ब्रह्मचर्य तो आवतइ भवइ भोगवती विचरज्यो, तउ साधु सुंदर ।

[ट.४४७] इम निश्चइ अहो साधो ! आर्या नियाणो करीनइ तेह नीयाणो आलोयो नहीं पडिकम्यो नहीं काल समें काल करीनइ अन्यतर ते १२ देवलोक ९ ग्रैवेयक तिहां देवतापणे ऊपजिवउ होइ, मोटी ऋद्धिनो धणी तिहां देवता होइ यावत् शब्दइ भोग भोगवती विचरइ । ते आर्या ते देवलोकथी आयुनै क्षयइ भव क्षय होइ स्थितिक्षय करी आंतरा रहित देवलोकथी शरीर तजीनइ जे एहवा होइ उग्रकुलनी पुत्री मोटा परिवारना धणी भोगपुत्री मोटी माता जेहनी ए मांहि कोइक कुलनै विषै दारिका बेटीपणइ ऊपजइ । ते तिहां दारिका बालिका होइ सुकुमाल रूपवंत छइ । तिवार पछी ते बालिका माता पिताने वल्लभ उन्मुक्त बाल भावइ विज्ञान परिनयै आवै योवनाग्रनें अनुप्राप्त प्रतिरूप सोकरहित शुक्ति विवाह मेलिवा दान एतलै सर्वनइं पहिरावणी प्रतिरूप जे भर्तार तेहनइं भार्यपणै परणावै । तेह तेहनी भार्या स्त्री होय एक स्वरूप छै इष्ट वल्लभ कांत रत्न करंड समान सरीखी छै । ते स्त्री घरमांहि पैसती हुंती घर बाहिर नींकलती थकी ते आगै घणा दासी दास ते पूर्वलो पाठ सर्व लेवउ । ताहरा मुखनें किं सुं भावै ?

[ट.४४८] ते स्त्रीनइ तथारूप जेहवा कह्या तेहवा सुख भोगवै तथा रूप श्रमण साधु ब्राह्मण बिहुं कालै केवली प्रज्ञप्त धर्म कोई कहै ? 'होय' इम कहइ । तेह धर्म सांभलै ? एह अर्थ समर्थ ते सत्य नहीं । अभव्य ते अयोग्य तेह साधुनो धर्म सांभलिवा भणी न होय । मोटी इच्छा धारक महा आरंभना धणी छै, महा परिग्रहना धणी यावत् शब्दे दक्षिणगामी नारकीयै ऊपजइ एतलै कृष्णपणै ऊपजै । आवतै भवइ ते दुर्लभ सम्यक्त्व पामै । इम निश्चै अहो साधु ! तेह नियाणउ एतादृशरूप पाप कर्मनउ जे फल विपाक जे भणी धर्मइ शक्तिवंत न होय केवली प्रज्ञप्त धर्म ते सांभलिवा भणी । ए बीजउ नियाणउ ॥

[ट.४४९] इम निश्चइ अहो साधो ! मइं धर्म प्ररूप्यउ इण ही ज निग्रंथ प्रवचन सत्य छै पूर्वलउ अधिकार लेवउ । तेह निश्चइ जेह धर्म छै साधुनो सीखवा भणी उठ्यो छै विचरतो थको पूर्वे दिगंछा भूख यावत् शब्दे ते धर्मनइं विषइ पराक्रम देवो, एहवी स्त्री होय एकजाति ते शोकरहित ताहरा मुखनइं स्युं गमै ? स्युं भावइ ? ते स्त्री देखीनें नियाणो करै – दुःख छै पुरुषपणै जेह एह उग्रपुत्र महास्वादना जांण भोगकुलनी पुत्री मोटी माता छै जियांनी एमांहिलो कोई एक पुरुष उच्च मोटै पुरुष नांख्या ते नींचै पुरुषइ ते उच्च एहवा संग्रामनइं विषइ ऊंच नींच जे शस्त्र तियें करी वक्षस्थल विछेदइ । ते वास्तै दुक्ख छै पुरुषपणै । स्त्रीपणुं ते साधु भलो । छै जो एह तप नियमना

ब्रह्मचर्यनो फल विपाक छइ एतलै जो ए सत्य छै तउ अम्हे पिण आवतै भवइ स्त्री होय यावत् शब्दै एह भलो ।

[ट.४५०] इम अहो साधु ! ते नियांणो करीनइ तेह स्थानकइ अणालोया अणपडिकम्या थकां काल समइ काल करीनइं १२ देवलोक तथा नव ग्रैवेयकनइ विषै देवतापणै ऊपजिवो होय । तेह तिहां देवता होय महर्द्धिक यावत् विचरइ । ते देवता तिणे देवलोकथी आयुखानइ क्षयइ यावत् आंतरा रहित चवीनइं आंतरा रहित कुलें ऊपना बालिकापणै ऊपजइ यावत् ते बालिकापणइ यावत् भार्यापणइ होय । तेह ते भार्या स्त्री होय सउकि रहित यावत् [सर्व पूर्वलउ अधिकार लेवउ । ते कन्या घर बाहिर नीकलती यावत् दासादिक पूछइं-ताहरा मुखनइं स्यूं भावइ छइ ?

[ट.४५१] ते तथारूप पूर्व सरीखी स्त्री एतारूप एहवीनइं श्रमण ब्राह्मण साधु जे धर्म कहइं ? होवइ, ते कहइ । यावत् स्यूं सांभलइ ? अंगीकार करइ ? ए अर्थ समर्थ नही । अभव्य अयोग्य ते पिण धर्मनइं सांभलवा भणी ते हुवइं । मोटी इच्छा छइ जेहनी यावत् दक्षिणगामी नारकीयइं जाइ, आवतइ भवइ दुर्लभबोधि बीज तेहनइं हुयइं । इम निश्चइ अहो साधो ! ते नियाणानउ एतारूप पूर्वोक्त पापकर्म तेहनउ फल विपाक हुवइं जे भणी शक्तिवंत न हुवइं केवली प्रज्ञप्त धर्म सांभलवा धारवा भणी ॥

[ट.४५२] इम निश्चइ अहो साधु आयुषवंतो ! मइ धर्म प्ररूप्यउ, बीजे पिण तीर्थंकरइ इम कह्यउ निर्ग्रंथनउ प्रवचन ते द्वादशांगी सत्य शेष पूर्ववत् जे धर्म केवलीभाषितनइ धर्मनइं साधवी भिक्षा भणी आचरिवा भणी ऊठी थकी विचरतां थकां पूर्वइ दिगंछा यावत् उदीर्ण कामथकी संजमनइ विषइ ते साधवी जे उग्रनी पुत्री महास्वादुकी भोग्यपुत्री महामातृका यावत् शब्दइं दासादिक पूछइ – ताहरा मुखनइ स्यूं रुचइ छइ ? जे एहवी देखीनइं निग्रंथी साधवी नियाणउ करइ दुख निश्चयइसु स्त्रीपणइं छइ, दुखइ संचारीयइं सकाइं विचारीयै ग्रामांतरनइ विषइ जायइ जाव शब्दइं नगर खेड कर्बटनइ विषइ ।

ते यथा दृष्टांतइ कहइ – अंबेडानी कातली परिपक्व, आंबेडानी कातली, बीजोरानी पेसी कातली ते जिम, सेलडीना खंडनी परि, मांसनी कातली, साल्म वृक्षनउ फूल, एहवी घणा मनुष्यानइं आस्वादनीक प्रार्थनीक वांछिवा योग्य अभि सन्मुखइ करिवा योग्य, इम दृष्टांतइ स्त्री पिण घणा मनुष्यनइं आस्वादनीक यावत् अभिलषवा योग्य, ते माटइ दुख घणउ स्त्रीनइं, पुरुषपणुं साधु भलउ । जउ ए तप नियम ब्रह्मचर्यनउ फल छइ तउ आवतइ भवइ यावत् साधु ।

[ट.४५३-४५४] इम निश्चयइ श्रमण आयुष्मतो ! निग्रंथी साधवी नियाणउ करीनइ ते थानक अणालोच्यां थकां अप्रतिक्रम्यां थकां काल मासइ काल करीनइं अन्यतर ते देवलोकनइं विषइं देवतापणइ ऊपजिवउ होई । ते तिहां देवता होई महर्द्धक यावत् देव छांडीनइ ते उग्रकुलनइ विषइ बालकपणइ ऊपजइ यावत् ते पूछइ-ताहरा मुखनइ स्यूं भावइ ? तेह तथाप्रकारना पुरुषनइं कोइक श्रमण कहइं धर्मनी वार्ता परं ते सद्दहइ नही । अभव्य ते धर्म सांभलवा भणी । ते हुवइं मोटी इच्छानउ धणी, ते मरी दक्षिणगामी नारकीयइ जायइ यावत् भवनी परंपरायइं दुर्लभ बोधिपणुं पामइ । इम] निश्चै ते धर्म सांभलिवां भणी उद्यमवंत न होय ॥

[ट.४५५] इम निश्चै अहो श्रमण साधो ! मइं धर्म कह्यउ इण ज निग्रंथ संबंधी प्रवचन यावत् पूर्वली परइ जे धर्मनइं निग्रंथ साधु अथवा आर्या सीखिवा भणी ऊठ्या थकां विचरमाण थकां पूर्वे दिगंछा यावत् उदीर्या काम भोगनी इच्छा ते होय विचरइ । ते पराक्रम करै । ते पराक्रम करता थका मनुष्य संबंधीया कामभोग ते निर्वेद वैराग्य भाव तेहनइ पामइ । मनुष्य संबंधीया निश्चै कामभोग अध्रुव ते निश्चल नही, अनित्य ते अनेक दुःख रूप,

असास्वतो, सडवानो पडिवानो विध्वंसवानो धर्म स्वभाव छै जियांनो, पुरीषइं मूत्र खेल नासिकानो मल वात पित्तनो करणहार शुक्र मासथी ऊपना, दुरूप ते पाडु आस्वास निसास, दुरुत मूत्रइं करी पुरीषइं करी पूर्ण, वातनें आश्रवै ते वाताश्रव, पित्तनें आश्रवै ते पित्ताश्रव, खेलाश्रव, पछी मरण आव्यै थकै पूर्वइ ते जरा आव्या थकै अवस्य छोडिवा योग्य छइ।

देवताना देवलोकनइ विषइ तत्र देवलोकनइं विषै अन्य देव अन्य देवीनइं अभि कहता वसी करीनइ भोगवै । भोग करै पोतै ज पोतानो रूप वैक्रिय करीनै पोतानी देवांगना भोगवै । आपणी देवांगनानइ आलिंगन करीनइ भोगवै देवता । जउ ए छता तप नियम ब्रह्मचर्यनो फल छइ, एही ज सर्व कहिवउ, अम्हे पिण आवतइ भवइ इम तादृश रूप पूर्वोक्त दिव्य देवताना भोग भोगवता इच्छायै विचरइ, ते साधु कहितां भलो ।

[ट.४५६-४५७] इम निश्चै श्रमण आयुष्यवंतो ! निग्रंथ ते साधु निग्रंथी आर्या नियाणो करीनइं तेह स्थानकनै आलोयां विना पडिकम्या विना काल समें काल करीनइं अन्यतर १२ देवलोक ९ ग्रैवेयक तिहां ऊपजिवौ । ते कहै छै – महर्द्धिक महाद्युति छै, पूर्वोक्त लेवो, प्रभा समान ते उद्योत करिवौ । देव नियाणा कृत अन्य देवी पोतइ वैक्रिय करीनइ देवता देवीनो रूप करी भोगवइ । तेह देवता देवलोकथी आऊनइ क्षयें करी पूर्ववत् जावत् शब्दइ पुरुषपणइ आवइ, दासादिक पूछइ स्युं ताहरा मननइं भावइ ? तेहनइ तथाप्रकारना पुरुषनइ छइ तथाप्रकारना श्रमण साधु माहण इम कहै तेहनइं धर्म संभलावइ ? हुंवइ संभलावइ । तेह सद्दहइ ? धर्म प्रतइं रुचइ ? ए अर्थ समर्थ नही । अभव्य ते अयोग्य केवली प्ररूपित जे धर्म सद्दहिवानइं । ते होय मोटी इच्छानो धणी दक्षिणगामि नारकीयइं जाय । आगलै भवइ दुर्लभ बोधि बीज तेह होय । इम निश्चइ अहो श्रमणो ! आयुष्मंतो ! तेह नियाणानो एतादृश रूप पूर्वोक्त पापकर्मनउं फल विपाक जे भणी शक्तिवंत न होय केवली प्रज्ञप्त धर्म सद्दहिवा । ए पांचमो नियाणो ॥

[ट.४५८-४६०] इम निश्चइ अहो श्रमण साधो ! मइं धर्म प्ररूप्यउ तिम ज पूर्वलउ अधिकार लेवउ । तिहां पराक्रम करता मनुष्य संबंधीया कामभोगनइ विषइ निर्वेद ते वेराग्यपणु पामइ । मनुष्य संबंधीया निश्चइसुं काम भोग अध्रुव निश्चल नही, अनित्य छइ, तिम ज । छइ ऊर्ध्वलोकइं देवता देवलोकनइ विषइ । तेह देवता अन्य देव नहीं अन्य एतलइ अपर देवांगना वश करीनइ नो निषेधइ भोग नही भोगवै । आत्मा ते पोतें पोतानइ आत्मा थकी वैक्रिय करी भोगवै । आत्मा थकी ते जे पोतानी मूल देवी छै तेहनइं वश्य करीनइं आलिंगन द्यइ । जो ए तप नियम ब्रह्मचर्यनउ तिम ज वली ते मनुष्य होय तिवारइ सद्दहइ, धर्म ऊपरि प्रतीत आणै, रुचि आणै ? ए अर्थ समर्थ नही । अन्यत्र ते जिन धर्म अन्यत्र रुचि मात्र एतलै सद्दहइ मात्रइ होइ जे ए आगलि कहिस्यइ । ते आरण्यक वननइ विषइ वसइ । तिके तापसना आश्रमइ रहै ते आवसथिक । ग्राम समीपै रहै ते ग्रामांतिक । प्रच्छन्न कार्यना करणहार ते रहसीया । नहीं बहुपणै संजत एतलइ त्रसादिकना आरंभथी नहीं विरता सर्व प्राण भूत जीव सत्त्व नहीं । आत्मायइं करी सत्यमृषा भाषा कहै । ते कहइ छइ-मुझनइं दंडादिकइ हणिवउ नही, अनेरा जीवने हणवा । मुझनइ दंडादिकइ ताडिवउ नहीं, अनेरानइ ताडिवो । मुझनै उपद्रव न करिवो, अनेरानें उपद्रव करिवा । इम ते पाखंडी स्त्रीना कामभोगनै विषै स्त्रीना संगम अवश्य शब्दादि विषयनी आशक्ति होइ ते वास्तै स्त्री कामनो ग्रहण कर्यो, मूर्छाणा, गृद्ध हूआ, गूंथाणा, अतृप्त थका काल समइं काल करीनइं अन्यतर एक स्थानकइ असुरकुमार मांहै किल्विषीया स्थानकइ उपजिवउ होइ । ते तिहां थकी चव्या थकी वार वार एल ऊरणो गूंगापणै जन्म पामइ । इम निश्चै अहो श्रमण ! साधु ! मइ धर्म कहो तिम बीजा पिण तिर्थंकरै कह्यउ जावत् ते शक्तिवंत न होइ धर्म सद्दहवा भणी । ए छट्ठो नियाण ॥

[ट.४६१-४६२] इम निश्चै अहो श्रमण ! मइं धर्म कह्यउ यावत् शब्दै मनुष्यना कामभोग निश्चैसु निश्चल नहीं तिम ज । छइ ऊर्ध्वलोकइ देवलोकइ अन्य देवता अन्य देवांगना प्रति वसी करीनइं भोगवइ नही पिण पोतानइ आत्मानै आत्मा पोतै जे वैक्रिय करी भोगवइ । ए जो छइ तप नियमनो फल छइ यावत् इम निश्चै साधुनइं आर्यानइ नियाणौ करीनइ अनालोचे अप्रतिक्रांत निवर्त्या नहीं विचरइ । ते तिहां अनेरा देवता, णो निषेधै, अनेरानी देवीनइ वशि करीनइ भोगवै नहीं देवता आपणी आत्मा करी भोगवइ वैक्रिय करीनइ एतलै स्त्री पुरुष करी प्रचारै । ते देवता देवलोक थकी आउनइ क्षयइं तिम ज मनुष्यपणो पामइ । ए विशेष – धर्म ते सद्दहइ, प्रतीत ऊपजइ, रुचइ । तेह सीलव्रत गुणव्रत वेरमण विरम्यउ पच्चक्खाण पोषध उपवास ते अंगीकार करइ ? गुरु कहै – ए अर्थ समर्थ नही । ते दर्शनी श्रावक होइ, एतलै अविरति श्रावक होइ, जाण्यो छै जीव अजीव जावत् शब्दै अस्थि हाड मींजी ते प्रेमानुराग रक्त छइ । ए अर्थ साचो । बीजो अर्थ खोटो । ते श्रावक एतादृश रूप विचरइ । विचरमाण थका घणा वरसताइ श्रमण साधुनो सेवकनी पर्याय पालीनइ काल प्रस्तावइं काल करीनइ अनुत्तर देवलोकनइ विषइ देवतापणइ होइ । ते इम निश्चै श्रमण साधु तेह नियाणौ एतादृश रूप पाप कर्म फल विपाक होइ जे भणी सक्तिवंत नही होइ सीलव्रत गुणव्रत वेरमण प्रत्याख्यान पोषध उपवास अंगीकार करिवा भणी होइ ॥

[ट.४६३-४६४] इम निश्चै अहो श्रमण साधो ! मइं धर्म कह्यो सर्व ते पूर्वोक्त लेवो । ते पराक्रम करता देवता मनुष्य संबंधी कामभोग थकी ते निर्वेद ते वैराग्य पामइ । मनुष्यना निश्चै कामभोग अनित्य जावत् शब्दै तजिवा जोग्य । देवताना पिण निश्चै कामभोग ध्रुव नही, अनित्य छै, असासता, चल, तजवानो धर्म स्वभाव छइ पछइ अने पहिला अवस्य तजिववा योग्य छइ । छइ एह तप नियम ब्रह्मचर्यना फल तो आवतइ भवै जो एहवो होइ उग्रना पुत्र महामातृका जावत् पुरुषपणइ हुं आवुं । तिहां श्रमणोवासग श्रावक होइ परं केहवो ? जाण्यो छइ जीव अजीव, प्रासुक एषणीय कीधउ अन्न पाणी खादिम लवंगादि तिणे करी साधुनै प्रतिलाभतौ विचरइ । तौ साधु कहता भलउ ।

[ट.४६५] इम निश्चै अहो साधो ! साधु आर्या नियाणौ करीनइ तेह थानकनइ आलोयो नही देवलोकनइ विषइ देवतापणै ऊपजिवौ होइ । ते तिणइ देवलोकथी चवी आयुनइ क्षयइ काल करी मनुष्य होइ । तेहनइं दासादिक इम कहइ तुम्हारा मनमै स्युं भावै छै ? तेह तथाप्रकारना पुरुष जातनइ धर्म कहइ जावत् शब्दै ते सद्दहइ । तेह सीलव्रत जावत् शब्दै पोषध उपवास ते पिण अंगीकार करै ? ते अंगीकार करइ । ते दीक्षा लेइनइ आगार गृहपणाथी साधुपणौ अंगीकार करइ ? ए अर्थ समर्थ नही । तेह समणोपासक श्रावक होइ, जाण्या छै जीव अजीव जावत् प्रतिलाभतौ विचरइ । ते श्रावक एतादृशरूप विहारे विचरतौ थकौ घणा वरसतांइ श्रमणोपासकनी पर्याय पालीनइ आबाधा ऊपजइ थकै, अणऊपजइ घणा भक्त जे अनसणा छेदीनइ अणआलोइ पडिकमी समाधि भाव रूप तेहनें पाम्यउ थकउ काल समै काल करीनइ अन्यतर देवलोकनै विषै देवतापणै ऊपजिवौ होइ । इम निश्चै श्रमणो ! साधो ! तेह निदाण रूप स्थानक एतादृशरूप पाप कर्मनो फल विपाक जे भणी शक्तिवंत न होइ द्रव्य भाव दीक्षा लेइ आगारहूंती अणगारपणो अंगीकार करवुं । ए आठमो नियाणौ कह्यउ ॥

[ट.४६६-४६७] मइ धर्म कह्यउ जावत् ते पराक्रम करता देवता मनुष्य संबंधी कामभोग विषइ निर्वेद वैराग्य पामइ । मनुष्यना निश्चैसुं कामभोग तेह निश्चल नही असासता तजिवानौ स्वभाव छइ । देवतारा पिण निश्चैसुं काम अध्रुव जावत् शब्दै तिहांथी चविवुं । छइ जउ एहवा तप नियम ब्रह्मचर्य फल आवतइ भवइ अम्हे जे एहवा वक्षमाण कुल होइ अंतकुल ते अंत्य वर्णना जघन्य कुल १ प्रांत कुल जे ते अधममांहे अधम २ तुच्छ ते अल्प कुटुंबना धणी २ दरिद्री ४ कृपण कुल ५ भिक्षा वृत्तें जीवइ ते भिक्षाचारी कुल ६ कुलमांहै अन्यतर कुलनै विषइ तेह पुत्रपणइ

जन्मइ । जे भणी ए कुलनै विषै माहरा आत्मानै दीक्षा लेवानै बंधन कोइ न करै एतलै सुखइ नीकलीइ सकीयइ ते भलउ तेह साधु । इम निश्चै अहो श्रमण साधो ! साधु आर्या ते नियाणो करीनइ तेह थानकनै आलोया विणा पडिकम्या विना सर्व अधिकार लेवउ । ते मुंड होइ आगारहूंती अणगारपणो अंगीकार करइ प्रव्रज्या ल्यै । ते तिण ही ज भवग्रहणै सिद्दि पामै जावत् शब्दै सर्व दुखनो अंत करइ ? ए अर्थ समर्थ नही । तेह होइ जे ते अणगार होइ इर्या समिति सौधता भाषायइ समिता यावत् ब्रह्मचारी । तिके विचरता विहार करता घणा वरसतांइ श्रामण्य पर्याय पालीनइ आबाधा उपनें थके यावत् शब्दइ भक्त पच्चक्खीइ ? हुवइ पच्चक्खइ । घणा भक्तानौ असन छोडइ छेदइ ? हुवइ छेदइ । आलोईनइ पडिक्कमीनैं समाधिप्राप्त होइ काल समै काल करीनइ अन्यतर देवलोकनइ विषै देवतापणइ ऊपजिवौ होइ । इम निश्चइ अहो साधो ! तेह नियाणानौ एतादृश रूप पाप फल विपाक जे भणी शक्ति न होइ तिण ही ज भवग्रहणै करी सिद्धि पामइ, प्रतिबूधइ यावत् शब्दै सर्व दुखनौ अंत करै ॥

[ट.४६८] इम निश्चै अहो साधो ! मइ धर्म कह्यउ ए ही साधुनो प्रवचन द्वादशांगी रूप ते संजमइ पराक्रम करिवउ, सर्व कामथी विरक्त, सर्व संगथी अतीत, सर्व आस्रवथी, सर्व स्नेहथी अतिक्रांत, सर्व धर्मनौ अनुष्ठान ते पिण प्रतिष्ठित तेह भगवंतनइ तेह अनुत्तर प्रधान ज्ञानैं करी, प्रधान दर्शन करी, प्रधान चारित्रइं करी, जे निर्वाण मार्ग कषाय दाह उपसमाविनइ आत्मानैं भावता थका अनंत प्रधान निर्व्याघात आवरण रहित समस्त प्रतिपूर्ण केवलज्ञान प्रधान दर्शन ते ऊपजइ । तिवार पछै भगवंत अर्हन ते योग्य होइ जिन ते केवली सर्वज्ञ सर्वदर्शी देवता संघात मनुष्यनी परषदा सहित घणा वरस सीम केवली पर्याय पालीनइ आपणो आत्मा संबंधीया आऊखा शेष आभोगइ केवलज्ञानी देखीनइ घणा भक्त अणसणे छेदीनै तिवार पछै चरम छेहलै ऊसास नीसास करइ सिद्धि पामै जावत् शब्दै सर्व दुखनो अंत करइ ।

इम निश्चइ अहो आयुष्मंत ! तेह अनियाणरूप तादृश एहवउ रूपइ कल्याण फल विपाक जे भणि ते अनीयाणा तिण ही ज भव सीझइ यावत् सर्व दुखनौ अंत करइ ।

[ट.४६९] तिवार पछी घणा साधु श्रमण निग्रंथी आर्या श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामीनइ समीपें ए अर्थ विशेष सांभलीनइ अवधारीनइं श्रमण भगवंत महावीरनइ वंदइ नमस्कार करइ । वंदन नमस्कार करीनइ ते नियाणा रूप स्थानकनइ भगवंतनैं समीपै आलोवइ पडिकमइ, आराधक होइ, प्रायछित्त तप योग ते अंगीकार करइ ।

[ट.४७०] तिणइं कालै तिणै समइ श्रमण भगवंत महावीर राजगृही नगरीनइ गुणसिल नाम चैत्य छइ । घणा श्रमण घणी श्रमणी आर्या घणा श्रावकनै परिवार घणी श्राविका छइ । घणा देवतानइं घणी देवांगनानै देव संघाति मनुष्यनी परिषदा ते सदेवमनुष्यपरिषदा मांहे प्राप्त हूवे इम कहइ इम भाषइ इम प्रज्ञप्तइ इम प्ररूपइं आयाति ते उत्तर काल तेहनइ स्थान तेह आयातिस्थानक नामा ए अध्ययन अर्थ सहित हेतु सहित कारण वादे सहित सूत्र ते पाठ सहित अर्थ सहित 'से केणट्ठेण भंते' इत्यादि पूछइ ते योग्य वागरण वार वार उपदिसै इति ब्रवीमी १० ॥ एतलै दशाश्रुतस्कंधनौ सूत्र अर्थ समाप्तमिदं ॥ सूत्रार्थ मिली ग्रंथाग्र १५६१ छइ संख्या । श्री श्री ॥

# परिशिष्टानि

# प्रथमं परिशिष्टम्

# मूलसूत्रान्तर्गतगाथानामकारादिसूचिः


| गाथानामाद्यपदम् | सूत्राङ्कः/गाथाङ्कः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| अकुमारभूते जे केइ | 402/55 | 216 |
| अणायगस्स नयवं | 401/53 | 216 |
| अतवस्सिते य जे केइ | 415/70 | 219 |
| अधातच्चं तु सुविणं | 36/3 | 43 |
| अपस्समाणे पस्सामि | 421/77 | 221 |
| अप्पणो अहिये बाले | 403/57 | 216 |
| अबंभचारी जे केइ | 403/56 | 216 |
| अबहुस्सुते वि जे केइ | 414/69 | 219 |
| आय़रियउवज्झाएहिं | 412/67 | 219 |
| आयरियउवज्झायाणं | 413/68 | 219 |
| आयारगुत्ते सुद्धप्पा | 422/80 | 221 |
| इड्ढी जुत्ती जसो वण्णो | 420/76 | 220 |
| इसिगुत्ते सिरिगुत्ते | 308/26 | 183 |
| इसिगोत्तियऽत्थ पढमं | 313/33 | 184 |
| इस्सरेण अदुवा गामेण | 405/59 | 217 |
| इस्सादोसेण आइट्ठे | 405/60 | 217 |
| उच्चानागरी विज्जाहरी | 314/34 | 185 |
| उवट्ठियं पडिविरयं | 409/64 | 218 |
| उव्वकसंतंपि झंपेत्ता | 401/54 | 216 |
| एए चोद्दस सुमिणे | 146/20 | 118 |
| एते मोहगुणा वुत्ता | 422/78 | 221 |
| एवं अभिसमागम्म | 36/17 | 45 |
| एवं अभिसमागम्म | 423/82 | 222 |
| ओयं चित्तं समादाय | 36/1 | 43 |
| गणियं मेहिय कामड्ढियं | 312/32 | 184 |
| गयवसहसीह | 104/18 | 82 |

| गाथानामाद्यपदम् | सूत्राङ्कः/गाथाङ्कः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| गयवसहसीह | 132/19 | 107 |
| गूढाचारी णिगूहिज्जा | 398/50 | 215 |
| गोयमगोत्तमभारं | 321/39 | 187 |
| चिच्चा ओरालितं | 36/16 | 45 |
| जं णिस्सितो उव्वहती | 404/58 | 217 |
| जंपि जाणे इतो पुव्वं | 422/79 | 221 |
| जक्खा य जक्खदिन्ना | 306/24 | 183 |
| जता से णाणावरणं | 36/8 | 44 |
| जधा दड्ढाण बीयाण | 36/15 | 44 |
| जया से दरिसणावरणं | 36/9 | 44 |
| जहा य मत्थए सूयी | 36/11 | 44 |
| जाणमाणो परिसाए | 400/52 | 215 |
| जायतेयं समारब्भ | 394/46 | 214 |
| जे कहाधिकरणाइं | 417/73 | 220 |
| जे केइ तसे पाणे | 392/44 | 214 |
| जे नायगं च रट्ठस्स | 407/62 | 217 |
| जे य आहम्मिए जोए | 418/74 | 220 |
| जे य माणुस्सए भोगे | 419/75 | 220 |
| ण इमं चित्तं समादाय | 36/2 | 43 |
| णेयाउयस्स मग्गस्स | 411/66 | 218 |
| तं वंदिऊण सिरसा | 321/37 | 187 |
| तवसा अवहडच्चिस्स | 36/6 | 44 |
| तहेवाणंतणाणीणं | 410/65 | 218 |
| थेरे त्थ अज्जरोहण | 308/25 | 183 |
| थेरे य थूलभद्दे | 306/23 | 183 |
| धंसति जो अभूतेणं | 399/51 | 215 |
| धूमहीणे जधा अग्गी | 36/13 | 44 |
| नंदणभद्दे उवनंद | 306/22 | 182 |
| पंचमगं नंदिज्जं पुण | 309/28 | 183 |
| पंचमगं मालिज्जं छट्ठं | 310/30 | 184 |

| गाथानामाद्यपदम् | सूत्राङ्कः/गाथाङ्कः | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|
| पंताइं भयमाणस्स | 36/4 | 44 |
| पडिमाए विसुद्धाए | 36/10 | 44 |
| पढमं च नागभूयं | 309/27 | 183 |
| पढमेत्थ बंभलिज्जं | 314/35 | 185 |
| पढमेत्थ वत्थलिज्जं | 310/29 | 184 |
| पाणिणा संपिहित्ताणं | 393/45 | 214 |
| पुणो पुणो पणिहीए | 397/49 | 215 |
| बहुजणस्स नेतारं | 408/63 | 218 |
| भद्दजसियं तह भद्दगुत्तियं | 311/31 | 184 |
| वंदामि अज्जधम्मं च | 321/41 | 187 |
| वंदामि अज्जनागं च | 321/38 | 187 |
| वंदामि अज्जहत्थिं च | 321/40 | 187 |
| वंदामि फग्गुमित्तं च | 321/36 | 187 |
| सढे नियडिपण्णाणे | 416/72 | 219 |
| सप्पी जहा अंडउडं | 406/61 | 217 |
| सव्वकामविरत्तस्स | 36/5 | 44 |
| साहारणट्ठा जे केइ | 416/71 | 219 |
| सीसम्मि जो पहणति | 395/47 | 214 |
| सीसावेढेण जे केइ | 396/48 | 215 |
| सुक्कमूले जधा रुक्खे | 36/14 | 44 |
| सुत्तत्थरयणभरिए | 321/43 | 187 |
| सुभे य अज्जघोसे य | 254/21 | 169 |
| सुवंतदोसे सुद्धप्पा | 422/81 | 221 |
| सुसमाहडलेसस्स | 36/7 | 44 |
| सेणावतिम्मि णिहते | 36/12 | 44 |
| हत्थं कासवगोत्तं | 321/42 | 187 |

# द्वितीयं परिशिष्टम्

## टीकान्तर्गतोद्धरणानामकारादिसूचिः


| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः | उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|---|
| अंगुलिज्जगललियकयाभरणे [दशा. 8-160] | 225 | असमाही1 सबलत्तं2 [दशा. नि. 7] | 4 |
| अंतरघणसामलो भयवं | 160 | असहायसहायत्तं [आ. नि. 1005] | 7 |
| अंतरा वि य से [दशा. 8-329] | 211 | अहीणपडिपुन्नपंचिंदिय [दशा. 8-107] | 242 |
| अंतो पुग्गलपरियट्टस्स | 49 | अहोहीय त्ति [दशा. चू. पृ. 100] | 149 |
| अकलेवरसेणिसुस्सिआ [उत्त. 10-35] | 47 | आगारो च्चिय मइसद्दवत्थु [वि. भा. 64] | 98 |
| अजवृषमृगाङ्गना [ना. जै. ज्यो. प्र.] | 137 | आचेलुक्कुद्देसिय [बृ. भा. 6364] | 188 |
| अट्ठविहंपि य कम्मं [आ. नि. 920] | 5 | आणाइ जिणिंदाणं [बृ. भा. 5377] | 168 |
| अणुत्तरोववाइया देवा | 165 | आमे घडे [नि. भा. 6243] | 25 |
| अण्णारद्धेव अण्णेसु [व्यव. भा. 3841] | 69 | आमे घडे निहत्तं [नि. भा. 6243] | 9 |
| अतिभणिय अभणिए [नि. भा. 2788] | 12 | आयरियअणुकंपाए | 106 |
| अत्थं भासइ अरहा [आ. नि. 92] | 25 | आयरियभत्तिराएण | 9 |
| अत्थं भासइ अरहा [आ. नि. 92] | 211 | आलइयमालमउडो [आचा. 2-3-402] | 150 |
| अत्थं भासेइ आयरियो [आ. नि. 92] | 191 | आविब्भावतिरोभाव [वि. भा. 67] | 98 |
| अत्थि णं भंते ! सदा समितं [व्या. प्र. 1-6-228] | 73 | आसाढपुण्णिमाए ठियाए [दशा. नि. 71 चूर्णिः] | 190 |
| अत्थि लोए [औप. सू. 34] | 40 | इक् स्मरणे [पा. धा. अदादि 37] | 6 |
| अत्थेगइया आयरिया [दशा. चू. पृ. 102] | 191 | इङ् अध्ययने [पा. धा. अदादि 36] | 6 |
| अथ प्रक्रियाप्रश्ना | 238 | इण् गतौ [पा. धा. अदादि 35] | 6 |
| अथ स्त्रीं वा पुरुषं वा [व्या. प्र. 16-6-18] | 43 | इतेः स्वरात्तश्च द्विः [सि. हे. 8-1-42] | 212 |
| अनुरक्तः शुचिर्दक्षो | 203 | इमा णं पुढवी | 79 |
| अप्पग्गंथमहत्थं [आ. नि. 860] | 5 | इय सत्तरी जहण्णा [दशा. नि. 72] | 189 |
| अभाविया परिसा [स्था. सू. 777 गा. 175] | 160 | इह गए पासइ मे [दशा. 8-115] | 230 |
| अभिधेयवत् लिङ्गवचनानि | 25 | इहभविए वि णाणे | 34 |
| अमानोनाः प्रतिषेधे | 8 | उखनखणखवख [सि. हे. धा. 63-90] | 4 |
| अयं घयकुंभे भविस्सइ [अनु. सू. 18] | 96 | उच्चार्हति [सि. हे. 8-2-111] | 115 |
| अयसिहरिमंथतिउड [दश. नि. 253] | 134 | उच्चोपे [सि. हे. 8-1-173] | 117 |
| अरहंति वंदणनमंसणाणि [आ. नि. 921] | 5 | उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् [त. 5-29] | 99 |
| अलाहि निवारणे | 193 | उप्पलदलसुकुमालो | 115 |
| अष्टशतं षण्णवतिः | 85 | उवलद्धपुण्णपावे [औप. सू. 41] | 250 |

| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| ऋतुभेदात्पुनस्तस्या | 113 |
| एए देवनिकाया [आचा. 2-3-402] | 148 |
| एक एव हि भूतात्मा | 92 |
| एकमेवाद्वितीयं | 92 |
| एगा हिरण्णकोडी [आचा. 2-3-402] | 149 |
| एगावलीपिणद्धे [राजप्र. 137] | 126 |
| एजृ कम्पने [सि. हे. धा. 148] | 134 |
| एत्थ उ पणगं पणगं [दशा. नि. 71] | 189 |
| एवं च कारणेणं | 167 |
| एवण्हं थोऊणं काऊण | 81 |
| एसो पंच णमोक्कारो | 7 |
| ऐश्यर्यस्य समग्रस्य | 8 |
| ओरालियतेयाकम्माइं [उत्त. 29-72] | 47 |
| ओहबले महब्बले [औप. सू. 34] | 236 |
| कयरे आगच्छइ [उत्त. 12-6] | 40 |
| करणानामसामर्थ्यं [सां. कौ. 72] | 87 |
| कर्मणोऽण् [सि. हे. 5-3-14] | 90 |
| काऊण मासकप्पं [दशा. नि. 73] | 190 |
| कारणविऊ कयाई [उव. 95] | 36 |
| कार्तिके त्वेकादश | 113 |
| किं एत्तो पावयरं | 9 |
| कुच परिस्पन्दे | 205 |
| कृत्यल्युटो बहुलम् [पा. व्या. 3-3-113] | 116 |
| कै गै रै शब्दे [पा. धा. भ्वादि 941-942-943] | 210 |
| खिद दैन्ये [पा. धा. दिवादि 64] | 124 |
| गंगापुलिणवालुया [दशा. 8-131] | 241 |
| गणिमं जाईपुप्फफलाइ | 133 |
| गणिमं जाईफलपूग | 53 |
| गम्लृसृपृ गतौ | 222 |
| गामे एगराइं नगरे पंचराइं [दशा. 8-217] | 26 |
| गामे एगराइयं [दशा. 8-217] | 156 |
| गुञ्जात्रयेण वल्लः स्यात् | 85 |
| गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः [पा. व्या. 5-1-124] | 32 |
| गुणि गोपनकुत्सनयोः [सि. हे. धा. 763] | 151 |
| गुणिनि गुणज्ञो रमते | 37 |
| गुणिनि गुणज्ञो रमते | 37 |
| गुणेहिं साहू [दश. 9-3-11] | 222 |
| घञ्वृद्धेर्वा [सि. हे. 8-1-68] | 122 |
| घटोऽयमिति नामैतत् | 99 |
| चउपत्थमाढयं तह | 85 |
| चतुर्दश पुनर्ज्येष्ठे | 113 |
| चत्तकलहो वि ण पढति [बृ. भा. 2711, नि. भा. 2790] | 12 |
| चत्तारि अवायणिज्जा पन्नत्ता [स्था. 4-3-326] | 25 |
| चत्तारि विगईनिज्जूहियाइं | 204 |
| छट्ठसत्तमीसु णं | 59 |
| छट्ठेण उ भत्तेण [आचा. 2-3-402] | 150 |
| छद्मस्थस्य हि बुद्धिः | 212 |
| जं अज्जियं चरित्तं [बृ. भा. 2715] | 208 |
| जं अज्जियं समीखल्लएहिं | 12 |
| जं अज्जियं समीपत्तएहिं | 208 |
| जं अन्नाणी कम्मं खवेइ [बृ. भा. 1170] | 4 |
| जं च कामसुहं लोए [बृ. सं 169] | 165 |
| जं जं जे जे भावे [आ. नि. 795] | 159 |
| जं समयं नाणं | 164 |
| जणवूहेइ वा जणकलकलेति वा [औप. सू. 27] | 228 |
| जण्णं समणस्स [आचा. 2-3-15-774] | 160 |
| जति अण्णे भिक्खायरा [दशा. चू. पृ. 76] | 69 |
| जत्थ य जं जाणिज्जा [अनु. सू. 8] | 97 |
| जलदोणमद्धभारं | 86 |
| जहाहि अग्गी जलणं [दश. 9-1-11] | 10 |
| जाणिया अजाणिया [नं. सू. 7(2)] | 30 |
| जावइया जस्स गणा | 180 |

| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः | उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|---|
| जीए सुयमहिट्ठिअं | 39 | तिथिपर्वोत्सवाः | 68 |
| जे भिक्खू हत्थकम्मं [नि. 1-1] | 209 | तिन्नेव य कोडिसया [आचा. 2-3-402] | 149 |
| जे से हेमंताणं पढमे मासे [आचा. 2-3-402] | 149 | तेणं कालेणं तेण समएणं [दशा. 10-470] | 3 |
| जेणेव वाणियग्गामे | 40 | तेणेव उवागच्छति [दशा. 8-160] | 232 |
| जेसिमवड्ढो पुग्गल [श्रा. प्र. 72] | 49 | दंसणेणं चरित्तेणं [दशा. 8-218] | 254 |
| जो जाणइ जस्स | 37 | दक्षो विज्ञातशास्त्रार्थो | 203 |
| ज्ञानिनो धर्मतीर्थस्य | 9 | दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं [त. का. 8] | 5 |
| ज्ञानिनो धर्मतीर्थस्य | 161 | दव्वपरिणामा मोत्तुं [वि. भा. 66] | 98 |
| टुनदु समृद्धौ [सि. हे. धा. 312] | 83 | दस अच्छेरगा पन्नत्ता [स्था. 10-777] | 101 |
| टुनदु समृद्धौ [सि.हे.धा. 312] | 227 | दिवा-दिनाहर्दिवस [अभि. 97] | 113 |
| डहरो अकुलीणो त्ति [बृ. भा. 772] | 11 | दिव्वो मणुस्सघोसो [आचा. 2-3-15-767] | 154 |
| डुभृङ् धारणपोषणयोः | 90 | दिहींक् लेपे [सि. हे. धा. 1128] | 146 |
| ण य कोइवि परिसाए [आ. नि. 1021] | 7 | देवा दैवीं नरा नारीं | 8 |
| णाणस्स होइ भागी [वि. भा. 3459] | 9 | दो असईओ पसइ | 85 |
| णामगोयस्सवि सवणयाए [औप. सू. 27] | 233 | द्रव्यं च भव्ये | 145 |
| तं गब्भं नातिसीतेहिं [दशा. 8-190] | 168 | द्रव्यं पर्यायवियुतं | 159 |
| तं च कहं वेइज्जइ [आ. नि. 183] | 2 | द्रु गतौ [पा. धा. भ्वादि 969] | 10 |
| तं मंगलमाईए [वि. भा. 13] | 3 | धन्नाइं चउव्वीसं [दश. नि. 252] | 133 |
| तं वाएइ जिणिंदो | 81 | धुवलोओ उ जिणाणं [दशा. नि. 89] | 206 |
| तए णं समणे भगवं [आचा. 2-3-15-775] | 160 | धूवं दाऊण जिणवराणं | 99 |
| तओ णं समणस्स [आचा. 2-3-15-769] | 154 | ध्मातं सितं येन पुराणकर्म | 6 |
| तओ णं समणे भगवं [आचा. 2-3-15-776] | 160 | न पराणुमयं वत्थुं [वि. भा. 65] | 98 |
| तच्च नामादिरूपेण | 97 | न वि किंचि अणुन्नायं [बृ. भा. 3330] | 15 |
| ततवितत घणझुसिरं [आचा. 2-3-402] | 151 | नत्थि चरित्तं सम्मत्तवज्जियं [उत्त. 28-29] | 61 |
| तते णं तस्स सेणियस्स [औप. सू. 31] | 235 | नव गणा एक्कारस [दशा. 8-299] | 211 |
| तत्थ उज्जुयं गंतूण [उत्त. 30-19 वृत्तिः] | 70 | नाणं भावुज्जोओ [आ. नि. 1060] | 162 |
| तत्थ कुलं विन्नेयं | 186 | नाणस्स होइ भागी [वि. भा. 3459] | 203 |
| तत्रापि नाम नाकार | 99 | नाणी वयंति अदुवावि एगे [आचा. 1-4-2-135] | 164 |
| तवनियमसुट्ठियाणं | 166 | नामादिभेयसद्दत्थ [वि. भा. 73] | 99 |
| तस्सेव य थिज्जत्थं [वि. भा. 14] | 3 | नाम्नां प्राग्बहुत्वे | 196 |
| तावो भेदो अयसो [बृ. भा. 2708, नि. भा. 2787] | 12 | निद्दाविगहापरिवज्जिएहिं [आ. नि. 707] | 10 |

| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः | उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|---|
| नेरइयदेवतित्थंकरा [नं. सू. 29 गा. 54] | 149 | बंभंमि य कप्पंमि [आचा. 2-3-402] | 148 |
| नैषा द्वादशाङ्गी कदाचिन्नासीत् (नं. सू. 118) | 2 | बालगपुच्छाईहिं [व्यव. भा. 2479] | 199 |
| नो विअ पारिवज्जं | 81 | बाहिं णितस्स [दशा. चू. पृ. 107] | 206 |
| नो सुत्ते सुमिणं पासइ [व्या. प्र. 16-6-2] | 82 | भगवंताणं आइगराणं [दशा. 8-115] | 230 |
| पंच उत्तरासाढे [जं. प्र. सू. 85] | 175 | भगोऽर्कज्ञानमाहात्म्य | 93 |
| पंचहिं ठाणेहिं जीवा [स्था. 5-2-426] | 221 | भयङ्करे तु डमर | 116 |
| पंचासइ आयामा [आ. नि. भा. 93] | 151 | भावत्थंतरभूयं किं [वि. भा. 69] | 99 |
| पंचेव य सिप्पाइं [आ. नि. 207] | 178 | भासासमिया एसणासमिया [दशा. 8-215] | 253 |
| पक्खियं पक्खियमेव [दशा. चू. पृ. 43] | 41 | भासेर्भिस [सि. हे. 8-4-203] | 126 |
| पञ्चाश्रवाद्विरमणं [प्र. र. 172] | 26 | भिषक् द्रव्याण्युपस्थाता | 203 |
| पञ्चाश्रवाद्विरमणं [प्र. र. 172] | 155 | मंगिज्जएहिगम्मइ [वि. भा. 22] | 4 |
| पट्टनं शकटैर्गम्यं | 70 | मङ्गलं द्विधा | 3 |
| पडिवज्जित्तु चरित्तं [आचा. 2-3-15-768] | 154 | मच्छं वा मंसं वा [आचा. 2-1-1-9-393] | 192 |
| पढमचरिमा उ सिसिरे [बृ. भा. 521] | 73 | मणैर्दशभिरेका च | 85 |
| परिसुट्ठियाण पासे | 10 | मणोगयं वक्कगयं [उत्त. 1-43] | 36 |
| पाउयाओ ओमुयति [औप. सू. 12] | 230 | मतिरप्राप्तविषया | 84 |
| पाएणं अगारीणं [दशा. 8-323] | 211 | मध्यस्थो बुद्धिमान्न्यायी | 24 |
| पुरओ सुरा वहंती [आचा. 2-3-402] | 150 | मयूराण्डरसे यद्वद् | 99 |
| पुरत्थाभिमुहे सीहासणे [आचा. 2-3-15-766] | 154 | मलमल्ल धारणे [पा. धा. 489-490] | 140 |
| पुरुषप्रामाण्यमेव | 9 | महयाहिमवंतमहंत [औप. सू. 6] | 224 |
| पुव्वं वा चरती तेसिं [व्यव. भा. 3840] | 69 | माणसपीइमाणो | 127 |
| पुव्वरुहिते य समीहिते [व्यव. भा. 2478] | 198 | माल्यम्लानिः कल्पवृक्ष | 82 |
| पुव्वाऊत्तारुहिअं [व्यव. भा. 2477] | 198 | मिण गोणसंगुलीहिं [उव. 94] | 36 |
| पुव्विं उक्खित्ता [आचा. 2-3-402] | 150 | मूलमेयमहम्मस्स [दश. 6-17] | 57 |
| पूर्णो मासो यस्यां | 112 | मूलमेयमहम्मस्स [दश. 6-17] | 249 |
| पूर्वमेव हि सम्बन्धः | 2 | मेरुगिरी रययमओ | 114 |
| पोष एव परं मासि | 113 | मोक्षे भवे च सर्वत्र | 100 |
| प्रतिकर्तुमशक्तिष्ठा | 52 | य एव गत्यर्थास्त | 45 |
| प्रधानास्तित्वमेकत्व [सां. कौ. 72] | 87 | यतो नाम विना नास्ति | 97 |
| प्रमाणमिदमेवार्थस्या | 98 | यत्र तत्र रतिर्नाम [वीत. स्तो. 12-4] | 146 |
| फुल्लुप्पलकमल [अनु. सू. 20] | 73 | यत्राकृतिस्तत्र | 27 |

| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः | उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|---|
| यथा नामादि नाऽऽकारं | 98 | श्रेयांसि बहुविघ्नानि | 3 |
| यद्व्याख्या वस्तुतत्त्वस्य | 97 | षट्कर्णो भिद्यते मन्त्रः | 199 |
| यावच्छङ्कं तदाचरेद् | 39 | षिड्गोरादिभ्यश्च [पा. व्या. 4-1-41] | 32 |
| योगक्षेमकृन्नाथः | 93 | षिधु गतौ [पा. धा. भ्वादि 47] | 5 |
| राजहंसेऽपि कलहंस [वि. लो. को. सान्तवर्गे 48] | 115 | षिधु संराद्धौ [पा. धा. दिवादि 86] | 6 |
| रिद्धित्थिमियसमिद्धे [औप. सू. 1] | 40 | षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च [पा. धा. भ्वादि 48] | 6 |
| लषी कान्तौ [सि. हे. धा. 927] | 109 | संघट्टित्ता काएणं [दश. 9-2-18] | 22 |
| लिङ्गं व्यभिचार्यपि | 90 | संपुण्णमेवं तु भवे गणित्तं | 34 |
| लिङ्गं व्यभिचार्यपि | 237 | संबुक्का दुविहा [उत्त. 30-19 वृत्तिः] | 70 |
| वक्ता हर्षभयादिभि | 83 | संवच्छरं वा वि परं [दश. चूलिका 2-11] | 207 |
| वणसंडं च कुसुमियं [आचा. 2-3-402] | 150 | संवच्छरेणं होही [आचा. 2-3-402] | 149 |
| वनान्तकपोलपाली | 114 | संविन्निष्टैव सर्वापि | 99 |
| वयःशक्तिशीले [सि. हे. 5-2-24] | 116 | संसयविवज्जओ वा [वि. भा. 62] | 98 |
| वरपडहभेरिझल्लरि [आचा. 2-3-402] | 151 | संहिता1 च पदं2 चैव [अनु. सू. 605 गा. 135] | 5 |
| वरवरिया घोसिज्जइ [आ. नि. 219] | 149 | सज्झायझाणतवोसहेसु [आ. नि. 1506] | 96 |
| वाग्रूपता चेद्बोधस्य [वाक्य. 1-125] | 97 | समणस्स भगवतो महावीरस्स [आचा. 2-3-401] | 147 |
| वातलैश्च भवेद्गर्भः | 136 | समणे भगवं महावीरे [सम. सू. 70] | 189 |
| विद् ज्ञाने [पा. धा. अदादि 54] | 30 | समराशौ चन्द्रतीक्ष्णांश्वोः | 137 |
| विनयो हीन्द्रियजय | 146 | समुई रागदोसरहियया | 145 |
| विहारो जिनसद्मनि | 203 | सम्यग्भावपरिज्ञानाद् | 3 |
| वीतरागकथावाद | 165 | सम्यग्विवेच्यमानोऽत्र | 98 |
| वीरजिणकेवलाओ | 166 | सर्वेष्वपि तपोयोगः | 42 |
| वीरस्स सिद्धिगमणाओ | 166 | सवीसइराए मासे [दशा. 8-322] | 211 |
| वुच्छिंदि सिणेहमप्पणो [उत्त. 10-27] | 162 | सव्वभावे जाणमाणे [दशा. 8-219] | 254 |
| वेसमणकुण्डलधरा | 148 | सव्वाओ लद्धीओ | 96 |
| शत्रानश [सि. हे. 8-3-181] | 137 | सव्वेसिं पि नयाणं [आ. नि. 1055] | 255 |
| शूद्रं व्यापाद्य प्राणायामं | 248 | सव्वेसु कालपव्वेसु | 42 |
| शूरवीर विक्रान्तौ [पा. धा. चुरादि 370-371] | 91 | साधुशास्त्रोपदेशेन | 2 |
| शेषवृत्तिरकर्तृत्वं [सां. कौ. 72] | 87 | सामन्नमणुचरंतस्स [दश. नि. 302] | 208 |
| श्रमूच् खेदतपसोः [सि. हे. धा. 1233] | 145 | सारस्सयमाइच्चा [आ. नि. 214] | 148 |
| श्रुत्वा शास्त्रस्य सर्वस्वं | 2 | सालिवाहणेण रन्ना | 167 |

| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः | उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|---|---|
| सिंघाडगतिगचउक्क [दशा. 8-195] | 230 | सो होइ साइजोगो [सू. चू. 2-2-160] | 51 |
| सिद्धत्थवणं व जहा [आचा. 2-3-402] | 151 | सोलसमे काऊणं | 112 |
| सिबियाइ मज्झयारे [आचा. 2-3-402] | 150 | स्वदस्वर्द आस्वादने [पा. धा. भ्वादि 18-19] | 19 |
| सीया उवणीया [आचा. 2-3-402] | 150 | स्वराणां स्वरा | 112 |
| सीहासणे निविट्ठो [आचा. 2-3-402] | 150 | स्वार्थिके णो वा | 192 |
| सुकुमालपाणिपाया [औप. सू. 7] | 224 | हत्थेण व मत्तेण व [व्यव. भा. 3790] | 68 |
| सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो | 6 | हन् हिंसागत्योः [पा. धा. अदादि 2] | 46 |
| से केणट्ठेणं [दशा. 8-300] | 211 | हरी णं भंते ! णेगमेसी [व्या. प्र. 5-4-12-13] | 104 |
| से तेणट्ठेणं [दशा. 8-300] | 211 | | |

# तृतीयं परिशिष्टम्

## बालावबोधान्तर्गतोद्धरणानामकारादिसूचिः


| उद्धरणम् | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| अत्थि जीवे [औप. सू. 34] | 338 |
| अरिहंत१ सिद्ध२ पवयण | 259, 307 |
| अरिहंति वंदणणमंसणाणि [आ. नि. 921] | 259 |
| असमाहि१ सबलत्तं२ [दशा. नि. 7] | 362 |
| असुइसामंतो [स्था. 10-714] | 264, 312 |
| आमे घडे निहत्तं [नि. भा. 6243] | 268 |
| उच्चारपासवणं | 312 |
| कायाण छक्कजोगंमि | 260 |
| चिक्खिल्ल१ पाण२ थंडिल३ [र. सं. 348] | 269 |
| जत्थ व त्ति. [दशा. चू. पृ. 77] | 334 |
| जेसिमवड्ढपुग्गल [श्रा. प्र. 72] | 275 |
| णण्णत्थ [दशा. 7-87] | 265, 312 |
| णमिऊण असुरसुरगरुल [चं. प्र. 2] | 259, 307 |
| तए णं समणे भगवं [औप. सू. 34] | 319 |
| तेणं कालेणं समणे भगवं | 319 |
| दंसण१ वय२ सामाइय३ [दशा. नि. 46] | 282, 330 |
| नो इहलोगट्ठयाए [दश. 9-4] | 316 |
| पंचविहं आयारं [आ. नि. 994] | 259 |
| पुव्वामेव आयामेइ [दशा. 3-9-10] | 334 |
| रयणभोयणंमि जे | 280 |
| रिद्धित्थिमियसमिद्धा [औप. सू. 1] | 319, 337 |
| वयछक्कमिंदियाणं च | 260 |
| संजयाणं च भावओ | 259, 307 |
| संहिता य पदं [अनु. सू. 605 गा. 135] | 317 |
| सुत्तत्थो खलु पढमो [वि. भा. 566] | 317 |
| सेयवरचामराहिं [औप. सू. 31] | 342 |

# चतुर्थं परिशिष्टम्

## टीकान्तर्गतविशेषनाम्नामकारादिसूचिः


| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| अंगविद्या प्रकीर्णक | 128 |
| अनुयोगद्वार सूत्र | 96, 97, 317 |
| अभयकुमार | 51, 166 |
| असोचा केवली | 320, 321 |
| आचारांग टीका | 192 |
| आचारांग सूत्र (प्रथमांग/आचार) | 4, 12, 25, 93, 106, 147, 149, 151, 154, 160, 181, 192, 262, 265, 286, 312, 334, 337, 361, 363 |
| आजीविक मत | 269, 316 |
| आदिनाथ | 349 |
| आनंद श्रावक | 282, 320 |
| आवश्यक चूर्णि | 42, 128 |
| आवश्यक निर्युक्ति | 236, 170 |
| आवश्यक सूत्र | 7, 8 |
| आषाढभूति | 51 |
| उग्रसेन राजा | 386 |
| उत्तराध्ययन बृहद्वृत्ति | 13, 41 |
| उत्तराध्ययन सूत्र | 4 |
| उत्तराध्ययनवृत्ति | 13 |
| औपपातिक सूत्र (उववाई) | 40, 213, 224, 226, 228, 235, 236, 293, 297, 319, 341, 344, 347, 370, 381, 383, 385, 386 |
| कल्पसूत्र (बारसासूत्र) | 79 |
| कल्पसूत्रमूलटीका (किरणावली ?) | 147 |
| कालोदधिसमुद्र | 273 |
| कृष्ण | 327, 350 |
| कोणिक राजा | 235, 289, 293, 295, 337, 344, 345, 381, 385 |
| कौटिल्य शास्त्र | 220 |

| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| गजसुकुमाल | 337 |
| गन्धमालिनी ग्रन्थ | 117 |
| गुणशिलक उद्यान (गुणशिल/गुणशिलय) | 229, 293, 294, 295, 306, 341, 344, 346, 360, 383, 392 |
| गोशालक | 292, 341, 383 |
| चंडपिंगलाचार्य | 260 |
| चंडप्रद्योत | 51 |
| चन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्र (चंदपन्नत्ती) | 259, 307 |
| चम्पा नगरी | 213, 289, 337, 338, 381 |
| चिलाति | 339 |
| चिलायत (देश) | 296, 347 |
| चीन (देश) | 296, 346 |
| चेलणा | 224, 293, 296, 297, 342, 346, 347, 348, 383, 385, 386 |
| छेदसूत्रटीका | 15, 192 |
| जंबूद्वीप | 43 |
| जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र | 138, 175, 179 |
| जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्ति | 175 |
| जंबूस्वामी | 8, 260, 262, 264, 306, 307, 314, 319, 362, 363, 365, 367 |
| जमाली | 269, 316 |
| जयमंगला टीका | 177 |
| जितशत्रु राजा | 40, 272, 319, 370 |
| जिनभद्रगणिक्षमाश्रमण (पूज्य) | 97, 98, 164 |
| तत्त्वकौमुदी (सांख्यतत्त्वकौमुदी) | 87 |
| तेतली | 320 |
| त्रिदंडी | 260 |
| त्रिशला | 322, 337 |

| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| दर्दुर | 320 |
| दशवैकालिक सूत्र | 12, 262 |
| दशाश्रुतस्कन्ध | 265, 286, 312, 334, 362 |
| दशाश्रुतस्कन्धचूर्णि | 41, 145, 149, 163, 190, 191, 206 |
| दशाश्रुतस्कन्धचूर्णिकार | 1, 2, 42, 118 |
| दशाश्रुतस्कन्धनिर्युक्ति | 189 |
| दूतिपलाश चैत्य | 40, 272, 319, 370 |
| देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण | 167 |
| देवानंदा | 337 |
| द्रौपदी | 350 |
| धातकीखंड | 43, 273 |
| धारिणी देवी | 40, 272, 289, 319, 337, 370, 381 |
| निशीथसूत्र | 207, 262, 265, 286, 309, 312 |
| पाणिनि ऋषि | 90, 237 |
| पार्श्वचरित | 170 |
| पार्श्वनाथ (तेवीसमा जिन) | 337 |
| पुष्करद्वीप (पुष्करार्द्ध) | 43, 273 |
| पूर्णभद्र चैत्य | 289, 337, 381 |
| पेटालपुत्र | 317 |
| प्रत्याख्यान पूर्व | 3, 362 |
| प्रश्नव्याकरण सूत्र | 326 |
| प्रसेनजित् राजा (पसेणइ/प्रश्रेणिक) | 226, 342, 343 |
| प्राकृतलक्षण (व्याकरण) | 90, 237 |
| बृहत्कल्पवृत्ति | 12 |
| बृहत्कल्पसूत्र | 31 |
| भगवतीसूत्र (प्रज्ञप्ति/पंचमांग/व्याख्या प्रज्ञप्ति) | 43, 73, 89, 104, 164, 327, 370 |
| भद्रबाहु स्वामी | 79, 118, 167, 182, 212, 255 |
| भरुकच्छ (नगर) | 70 |

| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| भर्तृहरि | 97 |
| मगध (देश) | 360 |
| मलधारगच्छ | 186 |
| मलयगिरिसूरि | 212, 112 |
| महाराष्ट्र (देश) | 196 |
| महावीर स्वामी (वर्धमान/चरमतीर्थकर/वीरवर्धमान) | 8, 43, 45, 260, 272, 289, 293, 294, 295, 296, 297, 306, 307, 319, 320, 322, 330, 337, 338, 343, 344, 345, 346, 347, 348, 360, 362, 370, 381, 384, 385, 392 |
| मागध भाषा | 40 |
| राजगृह (नगर) | 229, 235, 293, 294, 295, 306, 341, 342, 343, 344, 345, 360, 383, 384, 385, 392 |
| राजप्रश्नीय सूत्र | 126 |
| लवणसमद्र | 273 |
| लाट (देश) | 53 |
| वाग्भट | 136 |
| वाणिज्य ग्राम (वाणियग्राम) | 40, 272, 319, 370 |
| वात्स्यायनकामसूत्र | 177 |
| विश्वलोचन कोश | 115 |
| वैशेषिक (दर्शन) | 96, 186 |
| व्यवहार सूत्र | 264, 267, 286, 312, 314, 334 |
| शकटालपुत्र | 320 |
| शब्दप्राभृत | 145 |
| शान्तिसूरि (वादिवेताल) | 168 |
| शालिवाहन राजा | 168 |
| श्रेणिक राजा (भिंभसार) | 235, 293, 294, 295, 296, 297, 327, 341, 342, 343, 344, 345, 346, 347, 348, 383, 384, 385, 386 |
| संबुड साधु | 320 |

| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| सप्ततिशतस्थानक ग्रन्थ | 147 |
| समवायांग सूत्र | 189, 328 |
| सम्मतितर्क | 4, 202 |
| सिंहल (देश) | 70 |
| सिद्धसेनदिवाकरसूरि | 164 |
| सीमंतक (नरकावास) | 49, 58 |
| सुदर्शन | 43, 320 |
| सुधर्मा स्वामी | 8, 82, 189, 260, 264, 266, 272, 367, 274, 282, 289, 293, 306, 307, 314, 362 |

| विशेषनाम | पृष्ठाङ्कः |
|---|---|
| सूत्रकृतांग सूत्र (सुयगडांग) | 265, 286, 312, 334 |
| सूत्रकृतांगचूर्णिकार | 51 |
| सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्र | 4, 161 |
| सोमिल | 320 |
| सौराष्ट्र (देश) | 243, 351, 386 |
| स्थानांग सूत्र (ठाणांग) | 25, 170, 264, 286, 312, 334 |
| हरिवंश पुराण | 128 |
| हुंडक यक्ष | 260 |